## खेती की बुरी दशा।

खेती को जो लोग नीच पेशा समझते हैं वे मानो अपनी बुद्धि की न्यूनता का प्रमाण देते हैं। खेती का पेशा सबसे उच्च समझा जाना चाहिए। यदि खेती न की जाय तो और सारे पेशे मिट्टी में मिल जायँ। पेशों की तो बात ही नहीं, बिना खेती के मनुष्य अपने प्राणों से भी हाथ धो बैठे। अधिकांश पशु भी मर जायँ। राज्य उलट-पुलट जायँ। देश में सर्वत्र हाहाकार मच जाय। यह तो खेती की उपयोगिता की बात हुई। शास्त्र-दृष्टि से भी खेती का महत्त्व बहुत अधिक है। कृषि शास्त्र बहुत व्यापक शास्त्र है। और शास्त्र अपने ही सिद्धान्तों की भित्ति पर अवलम्बित करते हैं। पर, कृषि-शास्त्र को और भी कितने ही शास्त्रों का अवलम्ब ग्रहण करना पड़ता है। अनेक शास्त्रों का थोड़ा-बहुत ज्ञान-सम्पादन किये बिना कोई आदमी कृषिशास्त्रज्ञ नहीं हो सकता। ऐसे अनेक शास्त्र हैं जिनके नियमों का ज्ञान प्राप्त करना कृषि-शास्त्रज्ञों के लिए अनिवार्य्य है। शास्त्रज्ञों की बात जाने दीजिए। मामूली काश्तकारों के लिए भी कृषिसम्बन्धिनी कितनी ही बातों के जानने की ज़रूरत है। देखिए—

खेती की आधार भूमि है। अतएव काश्तकार के लिए सबसे पहले भूमि सम्बन्धिनी बातें जानना चाहिए। भूमि किन वस्तुओं से बनी है। उसकी कितनी किस्में हैं। किस तरह की भूमि में कौन फ़सल अच्छी हो सकती है। किस भूमि में किस प्रकार के रेचों की ज़रूरत पड़ती है। कितने दिनों बाद उस ज़मीन में बीज बोना चाहिए। उस बीज को पूर्ण करने के लिए कौन कौन उपाय किये जाने चाहिए। किस तरह खेत तैयार करने में कैसी सिंचाई करनी है। कृषि के लिए कौन कौन से औज़ार उपयोगी हैं। इत्यादि, इस तरह की सबसे पहले हमारे किसान और कृषक बनने

और मूर्ख चमार, रद्दू और भगोले अहीर का क... हैं? अपनी वर्तमान स्थिति में ये बेचारे भला इ... बातों का ज्ञान क्या प्राप्त करेंगे? हाँ, कुछ पढ़-लिख जाते तो शायद जान भी जाते। तथापि इन्हीं पालिसियों और मोनियों की कृपा से बड़े बड़े प्रकाण्ड पण्डितों, कुलीन कनकजियों और धन-कुबेर सेठों... पेट में दाना पड़ता है। जिनसे हम इतनी घृणा करते हैं—जिन्हें हम अस्पृश्य समझते हैं—उन्हीं... कृपा कटाक्ष से हम जीते हैं! ये खेती करना छोड़ दें तो पोथी-पत्रों और लोहे के सन्दूकों के भीतर से गेहूँ-चना और ज्वार-बाजरा थोड़े ही निकल पड़ेगा।

खेती के लिए भूगर्भ-शास्त्र के ज्ञान के रसायनशास्त्र के ज्ञान की भी आवश्यकता है। में, पौधों में और खाद आदि में जो रसायनें हैं उन्हें जानने और उनसे लाभ उठाने के लिए शास्त्र को जाने बिना कोई अच्छा कृषक नहीं सकता। सैकड़ों-हज़ारों कीड़े ऐसे हैं जिनके लाखों बीघे खेती बात की बात में नष्ट हो है। जिनकी यह इच्छा हो कि उनकी फ़ांप इन के आक्रमण से बची रहे, या आक्रमण होने उससे उसकी रक्षा हो, उन्हें कीट-पतङ्ग शास्त्र भी मोटी मोटी बातें जान लेना चाहिए। की राय अब तो यहाँ तक है कि कृषक के कीटाणु शास्त्र की ज्ञान-प्राप्ति भी आवश्यक है। के आकार, खेतों की मेड़ों तथा खाइयों, नालों, बन्धों और बाँधों की रचना के लिए दरी के स्थूल नियम जान लेने की भी है। पशु-शास्त्र में पारंगत हुए नहीं अब देखा है। कृषि कृषि

इसे सर्वोपयोगी शास्त्र की जितनी अवहेलना इस देश में हो रही है उतनी शायद ही और किसी सभ्य देश में हुई हो या आज कल होती हो। हमने अपने अपढ़, दरिद्रग्रस्त और दुर्बल काश्तकारों, कोरियों और कुरमियों को इन सब शास्त्रों का ज्ञाता सा समझ रक्खा है। इसी से शायद खेती का काम हमने उन्हीं के लिए छोड़ दिया है और हम डाक्टरी, बारिस्टरी और झूकी में मस्त हैं!

अधिकांश देश में ज़मीन के ठेकेदार राजे, महाराजे, तअल्लुकेदार और ज़मींदार हैं। गवर्नमेंट ने ज़मीन उन्हीं को दे रक्खी है। बदले में यह उनसे मालगुज़ारी लेती है। ये ठेकेदार मनमाने लगान पर ज़मीन दूसरों को जोतने-बोने के लिए देते हैं। चाहिए था कि भू-स्वामी होने के कारण कृषि शास्त्र के ये ज्ञाता होते। अनेक प्रकार से खेती की उन्नति करते। इस तरह ये स्वयं भी लाभ उठाते और काश्तकारों को भी लाभ उठाने का मार्ग बताते। परन्तु इनमें से अधिकांश यही नहीं जानते कि कृषि का भी कोई शास्त्र है। ये जानते हैं सिर्फ़ रुपये पीछे बारह आने तक इज़ाफ़ा करना! कितने ही तअल्लुकों और ज़मींदारियों में लाखों बीघे परती और बञ्जर ज़मीन पड़ी हुई है। उसे आबाद करने का ये स्वप्न में भी कोई उपाय नहीं करते। योरप और अमेरिका की बनी हुई कलें ईजाद करना तो दूर रहा, कानपुर के बने हुए हल और पम्प तक ये नहीं मँगाते। महकमे ज़िराअत से जो सूचनायें समय समय पर निकलती हैं उनकी इन्हें ख़बर ही नहीं। इस दशा में खेती बेचारी की कहिए कैसे उन्नति हो। क्यों न किसानों को एक दफ़े दिन भर में मुश्किल से दो एक रूखी रोटियाँ मिलें!

इन ज़मींदारों का ज़मीन पर क्या हक़ है, कुछ समझ में नहीं आता! बीच में इन्हें डाल कर क्यों गवर्नमेंट इनका घर भरती और काश्तकारों का मुआफ़ा कम करती है! जो काश्तकार जेठ की प्रचण्ड धूप और सावन-भादों की निरन्तर झड़ी में खेतों में परिश्रम करते हैं वे उन खेतों से होनेवाले नफ़े के मुस्तहक़ हैं या आराम-कुरसी पर लेटने और मोटरकार पर सदर की दौड़ लगानेवाले ज़मींदार? हाँ, यदि ये लोग अपनी ज़मींदारी या तअल्लुक़े के काश्तकारों के फ़ायदे का ख़याल रक्खें—उनके लिए कुएँ बनवायें, तालाब खुदायें, नहरें निकालें, बाँध बनायें, उन्हें उन्नत रीति से खेती करना सिखायें—तो अलबत्ते उनकी ठेकेदारी काश्तकारों के लिए किसी हद तक लाभदायक भी समझी जा सके। परन्तु जो स्वयं ही अपनी 'सीर' का सुप्रबन्ध नहीं कर सकते—जो स्वयं ही अपने निज के खेतों में अच्छी फ़सल नहीं पैदा कर सकते—वे दूसरों को क्या लाभ पहुँचावेंगे? इससे तो यही बेहतर होगा जो काश्तकारों को लगान सीधे गवर्नमेंट को देना पड़ता।

समय समय पर बन्दोबस्त होना और समय समय पर लगान में इज़ाफ़ा होना भी खेती की उन्नति में बहुत बाधक हो रहा है। कल्पना कीजिए कि किसी के पास दस बीघे ज़मीन है। वह पढ़ा लिखा है। ख़र्च भी कर सकता है। अगर वह वैज्ञानिक रीति से खाद तैयार करके, कल के हलों से खेत जोत कर, मिश्र की कपास का बीज उसमें बोये और पम्प लगा कर आबपाशी करे तो उसकी आमदनी बहुत बढ़ जाय। पर वह क्यों अपना रुपया ख़तरे में डाले? दूसरा ही साल ज़मींदार साहब उसे बेदख़ल कर दें अथवा लगान में इज़ाफ़ा करने दौड़ें तो वह क्या करे? ऐसी दुरवस्था में कहाँ खेती की उन्नति हो सकती है।

खेती बहुत ही पुराना पेशा है। पता नहीं कब इसका आग़ाज़ हुआ। लाखों वर्ष के पुराने पत्थर के हथियार ज़मीन के भीतर गड़े हुए पाये गये हैं। विद्वानों का मत है कि सभ्यता की पूर्ववर्ती दशा में मनुष्य शिकार करके ही अपना पेट पालता है। जब ज्ञानवृद्धि के साथ साथ सभ्यता का अङ्कुर मनुष्य के हृदय में उत्पन्न होता है तब पहले पहल वह खेती ही करता है। अतएव खेती का पेशा हमारे

# खेती की बुरी दशा।

खेती को जो लोग नीच पेशा समझते हैं वे मानो अपनी बुद्धि की न्यूनता का प्रमाण देते हैं। खेती का पेशा सबसे उच्च समझा जाना चाहिए। यदि खेती न की जाय तो और सारे पेशे मिट्टी में मिल जायँ। पेशों की तो बात ही नहीं, बिना खेती के मनुष्य अपने प्राणों से भी हाथ धो बैठे। अधिकांश पशु भी मर जायँ। राज्य उलट-पुलट जायँ। देश में सर्वत्र हाहाकार मच जाय। यह तो खेती की उपयोगिता की बात हुई। शास्त्र-दृष्टि से भी खेती का महत्त्व बहुत अधिक है। कृषि-शास्त्र बहुत व्यापक शास्त्र है। और शास्त्र अपने ही सिद्धान्तों की भित्ति पर अवलम्बन करते हैं। पर, कृषि-शास्त्र को और भी कितने ही शास्त्रों का अवलम्ब ग्रहण करना पड़ता है। अनेक शास्त्रों का थोड़ा-बहुत ज्ञान-सम्पादन किये बिना कोई आदमी कृषिशास्त्रज्ञ नहीं हो सकता। ऐसे अनेक शास्त्र हैं जिनके नियमों का ज्ञान प्राप्त करना कृषि-शास्त्रज्ञों के लिए अनिवार्य है। [illegible] ों की बात जाने दीजिए। मामूली [illegible] के लिए भी कृषिसम्बन्धिनी कितनी [illegible] नने की ज़रू-रत है। देखिए:—

खेती की आधार — काश्तकार
सबसे पह[illegible] — जानना
भूमि [illegible] । उसकी
[illegible] क्रॉप
किस
तने
स
ये

और गूथन चमार, रम्मू और भगोले अहीर का क[illegible] है? अपनी वर्तमान स्थिति में ये बेचारे भला बातों का ज्ञान क्या प्राप्त करेंगे? हाँ, कुछ पढ़-लि[illegible] जाते तो शायद जान भी जाते। तथापि [illegible] पासियों और मोचियों की कृपा से बड़े बड़े प्रकाण्ड पण्डितों, कुलीन कनवजियों और धन-कुबेर सेठों [illegible] पेट में दाना पड़ता है। जिनसे हम इतनी नफ़रत करते हैं—जिन्हें हम अस्पृश्य समझते हैं—उन्हीं की कृपा कटाक्ष से हम जीते हैं! ये खेती करना छोड़ दें तो पोथी-पत्रों और लोहे के सन्दूकों के भीतर से गेहूँ-चना और ज्वार-बाजरा थोड़े ही निकल पड़ेगा।

खेती के लिए भूगर्भ-शास्त्र के ज्ञान के रसायनशास्त्र के ज्ञान की भी आवश्यकता है। भ[illegible] में, पौधों में और खाद आदि में जो रसायनें [illegible] हैं उन्हें जानने और उनसे लाभ उठाने के लिए शास्त्र को जाने बिना कोई अच्छा कृषक नहीं [illegible] सकता। सैकड़ों-हज़ारों कीड़े ऐसे हैं जिनके लाखों बीघे खेती बात की बात में नष्ट हो स[illegible] है। जिनकी यह इच्छा हो कि उनकी फ़सल इन [illegible] के आक्रमण से बची रहे, या आक्रमण होने [illegible] उससे उसकी रक्षा हो, उन्हें कीट-पतङ्ग शास्त्र [illegible] भी मोटी मोटी बातें जान लेना चाहिए। वि[illegible] की राय अब तो यहाँ तक है कि कृषक के [illegible] कीटाणु-शास्त्र की ज्ञान-प्राप्ति भी आवश्यक है। [illegible] के आकार, खेतों की मेंड़ों तथा खाइयों, पानी [illegible] नलों, बम्बों और बाँधों की रचना के लिए यां[illegible] यरी के स्थूल नियम जान लेने की भी आवश्य[illegible] है। पशु-पालन और वनस्पति-शास्त्र के सिद्धा[illegible] से परिचित हुए बिना भी अच्छे कृषक का [illegible] नहीं चल सकता।

देखा आपने कृषि-शास्त्र कितना व्यापक है। कृषि-शास्त्र को इंजिनियरी, पशुपालन-विद्या, कीटपतङ्ग-शास्त्र, रसायन-शास्त्र, भूगर्भ-शास्त्र कितने ही शास्त्रों के सिद्धान्तों के ज्ञान का स[illegible] कहना चाहिए। ऐसे व्यापक, ऐसे महत्त्वपूर्ण

# खेती की बुरी दशा।

खेती को जो लोग नीच पेशा समझते हैं वे मानों अपनी बुद्धि की न्यूनता का प्रमाण देते हैं। खेती का पेशा सबसे उच्च समझा जाना चाहिए। यदि खेती न की जाय तो और सारे पेशे मिट्टी में मिल जायँ। पेशों की तो बात ही नहीं, बिना खेती के मनुष्य अपने प्राणों से भी हाथ धो बैठे। अधिकांश पशु भी मर जायँ। राज्य उलट-पुलट जायँ। देश में सर्वत्र हाहाकार मच जाय। यह तो खेती की उपयोगिता की बात हुई। शास्त्र-दृष्टि से भी खेती का महत्त्व बहुत अधिक है। कृषि शास्त्र बहुत व्यापक शास्त्र है। और शास्त्र अपने ही सिद्धान्तों की भित्ति पर अवलम्बन करते हैं। पर, कृषि-शास्त्र को और भी कितने ही शास्त्रों का अवलम्ब ग्रहण करना पड़ता है। अनेक शास्त्रों का थोड़ा-बहुत ज्ञान-सम्पादन किये बिना कोई आदमी कृषिशास्त्रज्ञ नहीं हो सकता। ऐसे अनेक शास्त्र हैं जिनके नियमों का ज्ञान प्राप्त करना कृषि-शास्त्रज्ञों के लिए अनिवार्य है। शास्त्रज्ञों की बात जाने दीजिए। साधारण कारबारियों के लिए भी कृषिसम्बन्धिनी कितनी ही बातों के जानने की ज़रूरत है। देखिए—

खेती की आधार भूमि है। अतएव कारबारी के लिए सबसे पहले भूमि सम्बन्धिनी बातें जानना चाहिए। भूमि कितने प्रकारों की होती है। उसकी कितनी किस्में हैं। किस तरह की भूमि में कौन पैदावार पैदा हो सकती है। किस भूमि में किस प्रकार के पौधों की पैदाइश अच्छी रहती है। कितने प्रकार की पैदाइश के लिए कौन कौन प्रकार की भूमि है। इन सब बातों का पूर्ण ज्ञान होने के लिए कौन कौन प्रकार के परीक्षण करने चाहिए। किस तरह की भूमि के लिए कौन कौन प्रकार के खाद उपयोगी होते हैं। कृषि के लिए कौन कौन से यन्त्र उपयोगी हैं। बीज, इनके कौन कौन प्रकार होते हैं और कौन कौन बीज किस प्रकार के खेत के लिए उपयोगी हैं, और और बीज चमार, रम्मू और भगोले अहीर का है? अपनी वर्तमान स्थिति में वे बेचारे भला इ बातों का ज्ञान क्या प्राप्त करेंगे? हाँ, कुछ पढ़-लि जाते तो शायद जान भी जाते। तथापि इन पासियों और मोचियों की कृपा से बड़े बड़े प्रकाण पण्डितों, कुलीन कनवजियों और धन-कुबेर सेठों पेट में दाना पड़ता है। जिनसे हम इतनी नफ़र करते हैं—जिन्हें हम अस्पृश्य समझते हैं—उन्हीं क कृपा कटाक्ष से हम जीते हैं। वे खेती करना छोड़ दें तो पोथी-पत्रों और लोहे के सन्दूकों के भीतर से गेहूँ-चना और ज्वार-बाजरा थोड़े ही निकल पड़ेगा।

खेती के लिए भूगर्भ-शास्त्र के ज्ञान के सिवा रसायनशास्त्र के ज्ञान की भी आवश्यकता है। भूमि में, पौधों में और खाद आदि में जो रसायनें रहती हैं उन्हें जानने और उनसे लाभ उठाने के लिए इस शास्त्र को जाने बिना कोई अच्छा कृषक नहीं हो सकता। सैकड़ों-हज़ारों कीड़े ऐसे हैं जिनके कारण लाखों बीघे खेती बात की बात में नष्ट हो सकती है। जिनकी यह इच्छा हो कि उनकी फ़सल इन कीड़ों के आक्रमण से बची रहे, या आक्रमण होने पर उससे उसकी रक्षा हो, उन्हें कीट-पतङ्ग शास्त्र की भी मोटी मोटी बातें जान लेना चाहिए। विद्वानों की राय अब तो यहाँ तक है कि कृषक के लिए कीटाणु शास्त्र की ज्ञान-प्राप्ति भी आवश्यक है। खेतों के आकार, खेतों की मेड़ों तथा क्यारियों, पानी के नलों, कुओं और बाँधों की रचना के लिए यांत्रिक विद्या के स्थूल नियम जान लेने की भी आवश्यकता है। पशु-पालन और वनस्पति शास्त्र के सिद्धान्तों से परिचित हुए बिना भी अच्छे कृषक का काम नहीं चल सकता।

देखा आपने कृषि शास्त्र कितना व्यापक शास्त्र है। इसके ज्ञान को एकत्रित करो, पशु-पालन विद्या [illegible] रसायन-शास्त्र, भूगर्भ-शास्त्र आदि [illegible] के ज्ञान का समूह [illegible]

ऐसे सर्वोपयोगी शास्त्र की जितनी अवहेलना इस देश में हो रही है उतनी शायद ही और किसी सभ्य देश में हुई हो या आज कल होती हो। हमने अपने अपढ़, दरिद्रग्रस्त और दुर्बल काश्तकारों, कोरियों और कुरमियों को इन सब शास्त्रों का ज्ञाता सा समझ रक्खा है। इसी से शायद खेती का काम हमने उन्हीं के लिए छोड़ दिया है और हम डाक्टरी, बारिस्टरी और झूकी में मस्त हैं!

अधिकांश देश में ज़मीन के ठेकेदार राजे, महाराजे, तअल्लुकेदार और ज़मींदार हैं। गवर्नमेंट ने ज़मीन उन्हीं को दे रक्खी है। बदले में वह उनसे मालगुज़ारी लेती है। ये ठेकेदार मनमाने लगान पर ज़मीन दूसरों को जोतने-बोने के लिए देते हैं। चाहिए था कि भू-स्वामी होने के कारण कृषि शास्त्र के ये ज्ञाता होते। अनेक प्रकार से खेती की उन्नति करते। इस तरह वे स्वयं भी लाभ उठाते और काश्तकारों को भी लाभ उठाने का मार्ग बताते। परन्तु इनमें से अधिकांश यही नहीं जानते कि कृषि का भी कोई शास्त्र है। ये जानते हैं सिर्फ़ रुपये पीछे बारह आने तक इज़ाफ़ा करना! कितने ही तअल्लुकों और ज़मींदारियों में लाखों बीघे परती और बञ्जर ज़मीन पड़ी हुई है। उसे आबाद करने का ये स्वप्न में भी कोई उपाय नहीं करते। योरप और अमेरिका की बनी हुई कलें ईजाद करना तो दूर रहा, कानपुर के बने हुए हल और फावड़े तक ये नहीं मँगाते। महकमे ज़िराअत से जो सूचनायें समय समय पर निकलती हैं उनकी इन्हें ख़बर ही नहीं। इस दशा में खेती बेचारी की कहिए कैसे उन्नति हो। क्यों न किसानों को एक दफ़े दिन भर में मुश्किल से दो एक रूखी रोटियाँ मिलें!

इन ज़मींदारों का ज़मीन पर क्या हक़ है, कुछ समझ में नहीं आता! बीच में इन्हें डाल कर क्यों गवर्नमेंट इनका घर भरती और काश्तकारों का इज़ाफ़ा कम करती है! जो काश्तकार जेठ की चण्ड धूप और सावन-भादों की निरन्तर झड़ी में खेतों में परिश्रम करते हैं वे उन खेतों से होनेवाले नफ़े के मुस्तहक़ हैं या आराम-कुरसी पर लेटने और मोटरकार पर सदर की दौड़ लगानेवाले ज़मींदार? हाँ, यदि ये लोग अपनी ज़मींदारी या तअल्लुके के काश्तकारों के फ़ायदे का ख़याल रक्खें—उनके लिए कुयें बनवावें, तालाब खुदावें, नहरें निकालें, बाँध बनावें, उन्हें उन्नत रीति से खेती करना सिखावें—तो अलबत्ते उनकी ठेकेदारी काश्तकारों के लिए किसी हद तक लाभदायक भी समझी जा सके। परन्तु जो स्वयं ही अपनी 'सीर' का सुप्रबन्ध नहीं कर सकते—जो स्वयं ही अपने निज के खेतों में अच्छी फ़सल नहीं पैदा कर सकते—वे दूसरों को क्या लाभ पहुँचावेंगे? इससे तो यही बेहतर होगा जो काश्तकारों को लगान सीधे गवर्नमेंट को देना पड़ता।

समय समय पर बन्दोबस्त होना और समय समय पर लगान में इज़ाफ़ा होना भी खेती की उन्नति में बहुत बाधक हो रहा है। कल्पना कीजिए कि किसी के पास दस बीघे ज़मीन है। वह पढ़ा लिखा है। ख़र्च भी कर सकता है। अगर वह वैज्ञानिक रीति से खाद तैयार करके, कल के हलों से खेत जोत कर, मिस्र की कपास का बीज उसमें बोये और पम्प लगा कर आबपाशी करे तो उसकी आमदनी बहुत बढ़ जाय। पर वह क्यों अपना रुपया ख़तरे में डाले? दूसरे ही साल ज़मींदार साहब उसे बेदख़ल कर दें अथवा लगान में इज़ाफ़ा करने दौड़ें तो वह क्या करे? ऐसी दुरवस्था में कहीं खेती की उन्नति हो सकती है।

खेती बहुत ही पुराना पेशा है। पता नहीं कबसे इसका आरम्भ हुआ। लाखों वर्ष के पुराने पत्थर के हथियार ज़मीन के भीतर गड़े हुए पाये गये हैं। विद्वानों की राय है कि सभ्यता की पूर्वावस्था में मनुष्य शिकार करके ही अपना पेट पालता है। जब ज्ञानवृद्धि के साथ साथ सभ्यता का अङ्कुर मनुष्य के हृदय में उत्पन्न होता है तब पहले पहल वह खेती ही करता है। अतएव खेती का पेशा हमारे

देश में प्राचीनतम है। वेदों तक में इसका उल्लेख है। वेदों में जिन ऋषियों के नाम आये हैं वे प्रायः सभी खेतिहर थे। खेती का आरम्भ होने पर ही पशु-पालन की विशेष आवश्यकता होती है। हल, फाल, हसुवे, खुरपे आदि का आविष्कार भी तभी होता है।

नहीं मालूम, हमारे ऋषि-मुनियों के हल कैसे थे। पुरानी पुस्तकों में उनके यन्त्र तन्त्र जो वर्णन मिलते हैं उनसे तो यही सूचित होता है कि हमारा वर्तमान हल प्रायः वैसा ही है जैसा उनका हल था। यदि उसमें कुछ परिवर्तन हुआ है तो बहुत ही थोड़ा। इसीसे यह हल अब यथेष्ट उपयोगी नहीं। हज़ारों वर्ष पहले थोड़ा भी जोत कर ज़मीन में बीज डाल देने से अच्छी फ़सल होती थी, क्योंकि जमीन में उस समय यथेष्ट उर्वरा-शक्ति थी। उसका धीरे धीरे ह्रास होता गया है। अतएव उसकी उत्पादन-शक्ति को बढ़ाने और गहरा जोतने की ज़रूरत है। पर इस ज़रूरत के समझनेवाले कहाँ? गज्जू गड़रिया इसे नहीं समझ सकता। ज़मींदार जरिबन्धनसिंह को इसकी परवा नहीं। शिक्षा में गज्जू और जरिबन्धन दोनों ही तुल्य हैं। इसीसे दिवाली पर काश्तकारों के ज़ोर ज़ोर चिल्लाने पर भी "धरती माता" नहीं जागती। वह सदा के लिए सो सी गई है।

खेती की उन्नति में सबसे बड़ी बाधक अविद्या या निरक्षरता है। हमने एक आदमी को बुलाया। उसे मूँगफली और हल्दी बोने की तरकीब बताई, उससे होनेवाले लाभ समझाये। मूँगफली-विषयक सरकारी किताब भी पढ़ कर सुनाई। पूछा—भाई! अपने खेत में इस साल मूँगफली बोओगे। जवाब मिला, नहीं बो सकते। कुछ न पैदा हो तो लगान किसके घर से देंगे? लगान माफ़ करा दो तो बोयें। अथवा यह शर्त करा दो कि यदि कुछ घाटा रहे तो कम से कम उतना लगान न लिया जाय। यह शर्त करे कौन? कोर्ट आव् वार्ड्स के ज़िलेदार या नबल्लुकेदार साहब! शिव शिव! नबल्लुकेदार और ज़मींदार यदि ऐसे होते तो फिर यह रोना क्यों रोना पड़ता। ये यदि परीक्षा के तौर पर खेत के नये नये काम करते और अपने नज़दीक के काश्तकारों को फ़ायदा उठाने का मौक़ा देते तो इन बेचारों की यह दुर्दशा न होती जो आज कल हो रही है।

ज़मीन की उर्वरा-शक्ति बनी रखने, उसे बढ़ाने और घोर हुई शक्ति की पूर्ति करने के लिए खाद ही सबसे अधिक महत्त्व की वस्तु है। पृथ्वी से रस के रूप में जो चीज़ पौधे अपनी जड़ों से खाते या पीते हैं उसमें अनेक रासायनिक पदार्थों का मिश्रण रहता है। ये सब पदार्थ पौधों का जीवन बना रखने के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। उनमें कमी होने से पौधों की बाढ़ और उनकी उत्पादक शक्ति कम हो जाती है। एक बात और है। कुछ पौधों के लिए विशेष प्रकार की ख़ूराक, रस के रूप में, दरकार होती है। उसमें न्यूनाधिकता हो जाने से वे या तो कमज़ोर हो जाते हैं या जीते ही नहीं। इस न्यूनाधिकता का ज्ञान होना किसानों के लिए अत्यावश्यक है। पर इस ज्ञान की प्राप्ति क्या गवर्नमेंट उन्हें कराती है? नहीं। क्या ज़मींदार साहब कराते हैं? नहीं। क्या ज़िलेदार साहब कराते हैं? नहीं। क्या उनके शिक्षित देशबन्धु कराते हैं? अजी, उनसे इन बातों से क्या मतलब। ऐसे गन्दे काम का तो नाम सुनते ही शायद उन्हें नाक में रूमाल लगाना पड़े। उन्हें तो इस गन्दगी की बदौलत उत्पन्न हुए सिर्फ़ गेहूँ और बादशाह-पसन्द चावल से काम। पशुओं के गोबर और मूत्र का अधिकांश, जो पौधों के लिए सञ्जीवनी है, व्यर्थ जाता है। गोबर के कण्डे और उपले हो जाते हैं। मूत्र जगह का जगह पर ही सूख जाता है। जो गोबर और कूड़ा करकट बाहर धूर में जमा होता है वह दिन भर सूर्य की गरमी सहता है और वर्षा में जलवृष्टि की धारा का सम्पात। इस तरह उसका प्रायः सारा सार नष्ट हो जाता है। जो अल्पांश रह जाता है वह खेतों में पहुँचता है। क्या आश्चर्य

जो सोलह मन फी बीघे के बदले चार ही मन अनाज पैदा हो। जो लोग मामूली गोबर की खाद नहीं बनाना जानते वे भला विशेष प्रकार की खादों का उपयोग क्या जानेंगे। किस फ़सल के लिए कौन सा खाद चाहिए, उसे किस प्रकार तैयार करना चाहिए और कितनी ज़मीन में कितना डालना चाहिए—यह जानना तो बुद्धू धानुक के लिए इस समय वैसा ही असम्भव है जैसा आसमान के तारों की ठीक संख्या का जानना। देहात में एक आदमी ने अपने बाग़ीचे के कुछ फ़लमी पेड़ों की जड़ के आस पास ज़मीन के भीतर हड्डियों के छोटे छोटे टुकड़े गाड़ दिये, जिसमें घुल घुल कर उन हड्डियों का सार पेड़ों की ख़ूराक में मिश्रित होता रहे। कुलीन कान्यकुब्जों ने जो यह सुना तो गाँव में तहलका सा मच गया—"सार पानी पिये का पात्र नाहीं आय। बिरवन के तरे हाड गाड़ेसे है"। सो हड्डियाँ चूसना तो यहाँ जायज़ हैं। पर हड्डियों की खाद जायज नहीं! इसीसे करोड़ों मन हड्डियाँ मशीनों से पिस पिस कर विदेश जाती हैं। वहाँ ये चुक़न्दर और गन्ना पैदा करने के काम आती हैं। इसी चुक़न्दर और गन्ने की शकर जब यहाँ आती है तब हम उसे प्रसन्नतापूर्वक ठाकुरजी के भोग में रखते हैं!

अच्छा तो यह दुर्गति और यह अज्ञान दूर किस तरह हो। इसको दूर करने का सबसे बड़ा साधन शिक्षा है। साधारण शिक्षा के विस्तार से यह बहुत कुछ दूर हो सकता है। पर इसका तिरोभाव कृषि-विज्ञान की शिक्षा से ही हो सकता है। बड़े दुःख की बात है, इस शिक्षा का देहात में तो क्या शहरों में भी प्रायः कुछ भी प्रबन्ध नहीं। यद्यपि कुछ समय से गवर्नमेंट का ध्यान इस तरफ़ गया है, तथापि इस शिक्षा की उपयोगिता का वर्णन विशेष करके काग़ज़ पत्रों ही में पाया जाता है। कार्य्य के रूप में इस शिक्षा के दर्शन प्राप्त नहीं। हिन्दी-उर्दू की रीडरों में लड़के पढ़ते हैं—मातादीन किसान हल जोत रहा है। इस हल जोतने, खेत सींचने और ज्वार काटने के उल्लेख से खेती की महत्ता और तत्सम्बन्धिनी शिक्षा का ज्ञान बच्चे नहीं प्राप्त कर सकते। भारत जैसे कृषि-प्रधान देश के बच्चों के लिए साधारण शिक्षा के साथ ही साथ कृषि की विशेष शिक्षा दी जाने का पूरा पूरा प्रबन्ध होना चाहिए। नासमझी के कारण कृषि जैसे व्यापक और सर्वोपयोगी व्यवसाय को जो लोगों ने नीच व्यवसाय समझ रक्खा है, इसकी असारता सब लोगों के हृत्पटल पर अङ्कित करना चाहिए। फिर, कृषि-विज्ञान की शिक्षा सुलभ कर देना चाहिए। प्रत्येक देहाती मदरसे में कृषि-विषयक पुस्तकें जारी होना चाहिए। बच्चों को कृषि की स्थूल प्रक्रियायें सिखाने के साथ ही सब बातों की प्रत्यक्ष शिक्षा देनी चाहिए। उन्हें सब काम करके दिखाना चाहिए। इस देश में कृषि के जो दो चार कालेज और स्कूल हैं उनसे निकले हुए छात्रों ने अपनी कर्तव्यशीलता के प्रमाण नहीं दिये। वे 'बाबू' बन कर ही स्कूलों और कालेजों से निकले हैं, कृषक बन कर नहीं। इस बात को गवर्नमेंट जानती है। इसी से उसने कानपुर के कृषि-कालेज के नियमों में बहुत कुछ परिवर्तन किया है। अब तक तो उसे काफ़ी छात्र ही नहीं मिलते रहे। खेती के सदृश नीच पेशे के लिए छात्र मिलें भी तो कैसे!

जिन देशों में आमदनी के अनेक द्वार हैं—जिन देशों में लोग सैकड़ों प्रकार के भिन्न भिन्न व्यवसाय करते हैं—वे भी कृषि शिक्षा की ओर विशेष ध्यान देते हैं। पर, जिस अभागे भारत में कृषि ही प्रधान पेशा है वहाँ यह हेय दृष्टि से देखी जाती है। डेनमार्क बहुत ही छोटा देश है। पर कृषि ही की बदौलत वह मालामाल हो रहा है। नेलसन के साइक्लोपीडिया के अनुसार सबसे पहले, अर्थात् १८५९ ईसवी में, वहाँ कृषि-कालेज खुला। इस समय कृषि-शिक्षा देनेवाले ४७ हाई स्कूल और कोई १८ स्कूल हैं। आस्ट्रिया और जर्मनी में सैकड़ों स्कूल और न मालूम कितने कालेज हैं। इंगलैंड, अमेरिका, जापान, फ्रांस, इटली

भी कृषि-विज्ञान की शिक्षा का यथेष्ट प्रबन्ध है। अगर कहीं नहीं है तो इस हिन्दुस्तान में।

जो व्यवसाय अन्य सभी व्यवसायों की जड़ है, जिस व्यवसाय की कृपा से मनुष्य की प्राण-रक्षा होती है, जिस व्यवसाय को अन्य देश वाले बड़े ही आदर की दृष्टि से देखते हैं उसे नीच काम समझने वाले भारत को भगवान् सुबुद्धि दे।

---

## उपनिषद्-शब्द की व्याख्या।

स्वामी शङ्कराचार्य्य के मत में उपनिषद्, संसार के कारण अविद्या को और जन्म-जरा-रोग आदि क्लेशों का नाश करते हैं, अथवा परब्रह्म की प्राप्ति कराते हैं। इसी लिए उनका नाम उपनिषद् है। शङ्कराचार्य्य अपने मुण्डकोपनिषद्-भाष्य की भूमिका में उपनिषद्-शब्द की व्याख्या इस तरह करते हैं—

"य इमां ब्रह्मविद्यामुपनिषत्प्रसादेन श्रद्धाभक्तिपुरःसराः सन्तस्तेषां गर्भजन्मजरारोगाद्यनर्थबीजं निशातयति परं वा ब्रह्म गमयत्यविद्यादिसंसारकारणं चात्यन्तमवसादयति विनाशयतीत्युपनिषत्। उपनि पूर्वोऽयं सदेर्धात्वर्थमाहात्म्यात्। पदञ्च विद्याफलप्रतिपादनेन इति प्रसंगः"।

की कड़ी आज्ञा दे रक्खी थी कि वे उनके उपदेशों और विचारों को गुप्त रक्खें और अयोग्य मनुष्यों तथा सर्वसाधारण के सामने उन्हें न प्रकट करें। यूनान का प्रसिद्ध तत्त्ववेत्ता पाइथागोरस अपने शिष्यों को मौनव्रत धारण करने की शिक्षा देता था। पहेली लिखने की विद्या के खिलाफ़ इसलिए था कि उससे गूढ़ और गम्भीर बातें अयोग्य मनुष्यों के हाथ में पड़ कर अर्थ का अनर्थ करती हैं। जर्मनी का दर्शन-शास्त्री शापेनहार अपने पाठकों से इस बात की आशा रखता है कि वे काण्ट के दर्शन को पढ़ चुकने के बाद उसके दर्शन को पढ़ेंगे—अर्थात् वह यह नहीं चाहता कि अयोग्य और कम बुद्धि वाले लोग उसके दर्शन को पढ़ कर अर्थ का अनर्थ करें। यही मतलब उपनिषदों के उन वचनों का भी है जिनमें अयोग्य विद्यार्थियों और मनुष्यों को उपनिषद्-विद्या का उपदेश न देने की बार बार ताकीद की गई है। उपनिषद् के इस तरह के कुछ वाक्य नीचे दिये जाते हैं।

छान्दोग्योपनिषत् ३-११-५ में अयोग्य को उपदेश न देने के विषय में लिखा है—"इदं तत्तपोदानमज्जवमहिंसा सत्यवचनमिति तास्ता अस्यातिशयेन पुत्राय शिष्याय ब्रह्मचारिणे ब्रूयात् प्राणाय्याय वान्तेवासिने नान्यस्मै कस्मैचन [illegible]

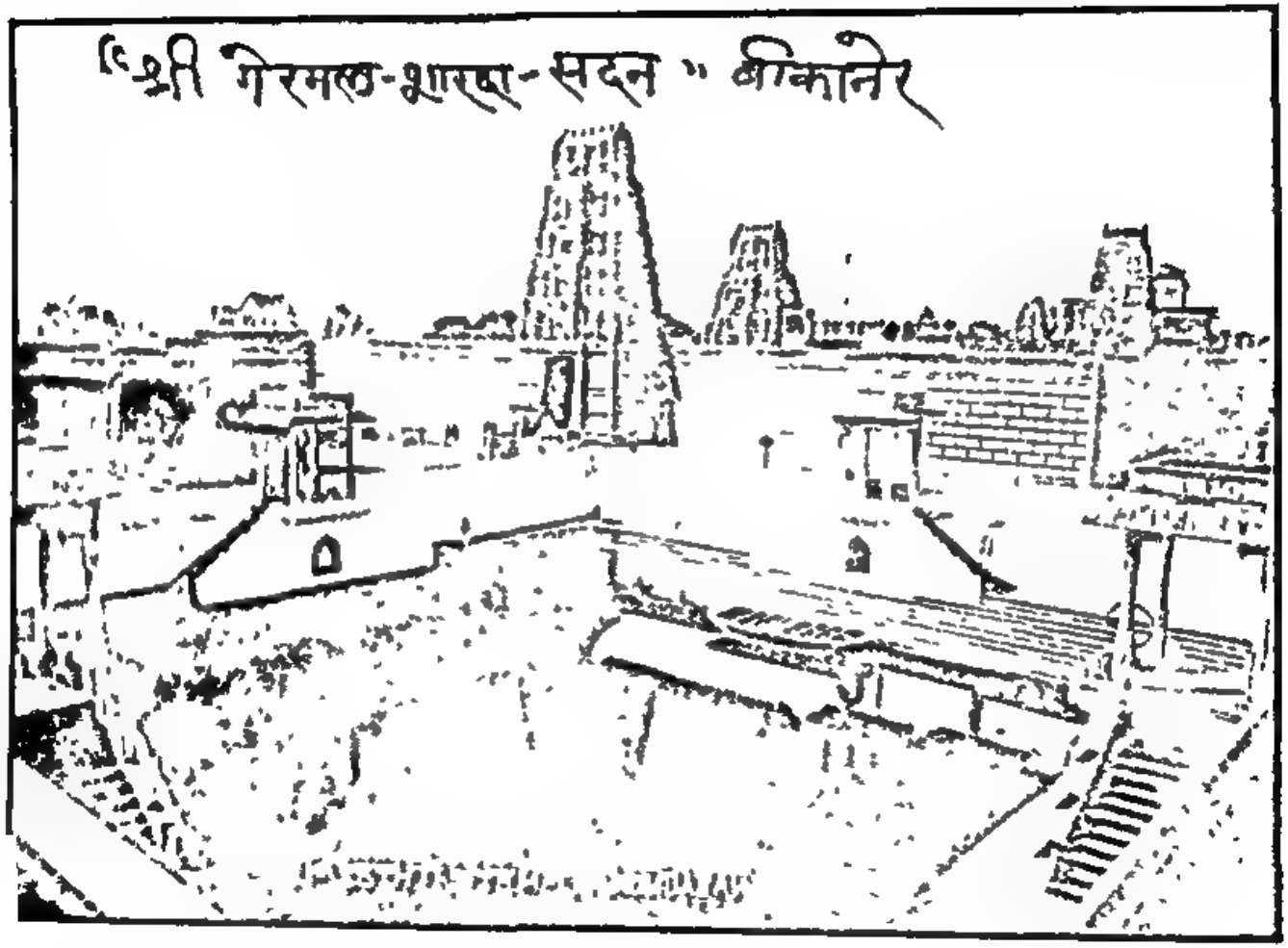


सेठजी का मन्दिर, वृन्दावन ।

रूप प्रेस, प्रयाग ।

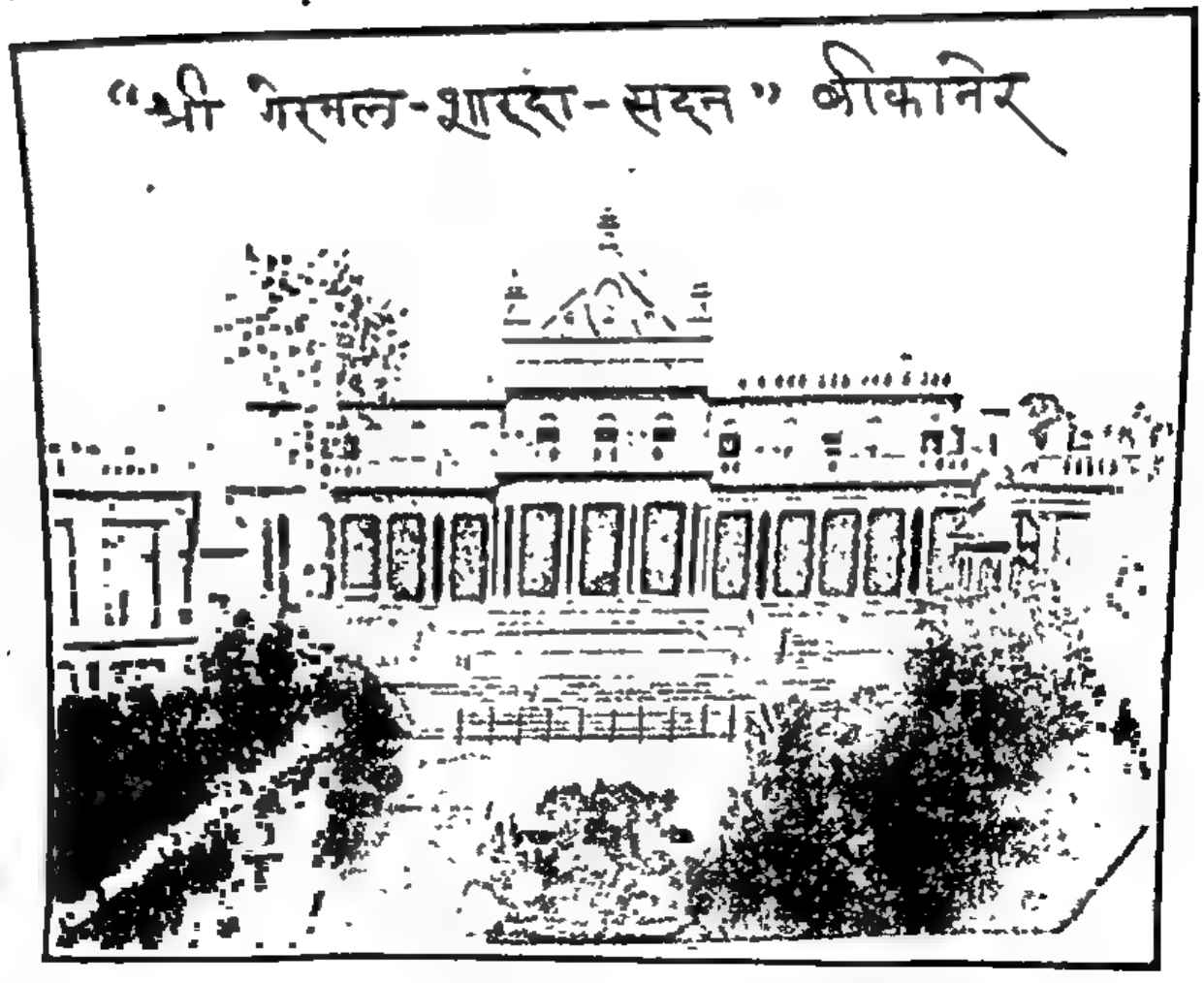


शाहजी का मन्दिर, वृन्दावन।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

हपूर्वनापनीयोपनिषत् १–३—"सावित्रीं लक्ष्मीं प्रणवं यदि जानीयात् स्त्री-शूद्रः ■ मृतोऽधो गच्छति, त् सर्वदा नाऽऽचष्टे, यथाचष्टे स आचार्यस्तेनैव मृतोऽधो ति"।

उपनिषदों में हमें अनेकों कथायें ऐसी मिलती जेनमें आचार्य्य या किसी विद्या का ज्ञाना, उस ग्र को सीखने के लिए नये आये हुए विद्यार्थी शिक्षा देना अस्वीकार करता है, टाले हवाले ता है, या अधूरा उपदेश देता है। आचार्य्य रको उपनिषद्-विद्या का सच्चा ज्ञान तभी कराता जब वह बहुत खुशामद, गुरुसेवा धैर धैर्य, या सहनशीलता के बाद अपने को यह विद्या हण करने योग्य साबित कर देता है। इस तरह : उदाहरण कौशीतकी-उपनिषद् में इन्द्र धैर तर्दन का संवाद, छान्दोग्योपनिषद् में रैक्व धैर नश्रुति का संवाद, सत्यकाम धैर उपकोशल ा संवाद, प्रवाहण धैर आरुणि का संवाद, राजपति इन्द्र धैर वैरोचन का संवाद, धैर हदारण्यक में याज्ञवल्क्य धैर जनक का संवाद हैं। अयोग्य के हाथ में उपनिषद्-विद्या न पड़ जाय अथवा सर्वसाधारण में उसका प्रचार न हो जाय, इसी कारण से आचार्य्य उपदेश ग्रहण करने के लिए आये हुए नवीन शिष्य को उपदेश देने से इनकार करता था या टाला हवाला करता था। इन सब बातों से सिद्ध होता है कि प्राचीन समय में संसार के प्रायः सभी देशों में, धैर ख़ास कर भारतवर्ष के उपनिषत्काल में, लोग अपने ज्ञान धैर अपनी विद्या को अयोग्य मनुष्यों तथा सर्व-साधारण से बहुत ही गुप्त रखते थे धैर बहुत लाचारी से दूसरों को उसका उपदेश देते थे। किन्तु उपनिषद्-शब्द का अर्थ "रहस्य" कैसे हो गया, यह ज़रा विचारणीय है।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है स्वामी शङ्कराचार्य्य उपनिषद् शब्द को "षदॢ विशरण-गत्यवसादनेषु"—इस धातु से सिद्ध करते हैं धैर उसका अर्थ "अज्ञान का नाश करने वाला" अथवा "परब्रह्म की प्राप्ति कराने वाला" करते हैं। उप-निषद् के इस अर्थ को गत्यर्थक या अवसा-दनार्थक 'षद्' धातु से सिद्ध करने में शङ्कर-स्वामी का तात्पर्य अपना अद्वैत वेदान्त सिद्ध करना है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उप-निषद् का अन्तिम लक्ष्य 'अविद्या का नाश करना' या "ब्रह्मप्राप्ति कराना" है। तथापि शङ्कर-स्वामी की इस व्याख्या से "गूढ उपदेश", "रहस्य", "गुह्यादेश", "परम गुह्य" इत्यादि पद जो उपनिषद् के लिए व्यवहार किये गये हैं उनका अर्थ या भाव नहीं निकलता। यदि उपनिषद्-शब्द 'उप नि' पूर्वक 'उपवेशनार्थक सद्' धातु से सिद्ध किया जाय तो रहस्य या गुह्य उपदेश का अर्थ निकल सकता है। सद् धातु से क्विप् प्रत्यय करने से जो संज्ञा बनती है उसके अर्थ होते हैं—बैठना या बैठक—धैर समीपार्थक 'उप'—उपसर्ग उसके पहले लगने से उपनिषद् का अर्थ परिषद् या संसद् (सभा या समूह अर्थात् मनुष्यों की प्राकाद्य बैठक) के बिलकुल उलटा "गुरु के समीप गुह्य उपदेश ग्रहण करने के लिए गुप्त बैठक" हो जाता है। उपनिषद्-शब्द जो पहले "गुप्त बैठक" के लिए व्यवहार किया जाता था, कुछ समय के बाद, जिस बात के लिए गुप्त बैठक होती थी उसका अर्थात् "गुह्य उपदेश" अथवा "उपनिषद्-विद्या" का अर्थ देने लगा।

उपनिषदों में ऐसे अनेक वाक्य मिलते हैं जिनमें क्षत्रिय लोग सच्चे धार्मिक ज्ञान के सिखलाने वाले लिखे गये हैं। उपनिषद् विद्या का ज्ञान, जिसे पहले किसी ब्राह्मण ने नहीं प्राप्त किया था, इस सृष्टि में पहले पहल केवल क्षत्रियों ही को था। जब ब्राह्मण लोग क्रिया संस्कारों धैर यज्ञों में फँसे हुए थे तब विचारवान् मनुष्य यह सोचने लगे कि क्या धर्म केवल इन क्रिया-संस्कारों धैर विधियों में ही सीमाबद्ध है। विद्वान् क्षत्रिय यद्यपि अब तक ब्राह्मणों के बनाये हुए क्रिया-संस्कारों को करते थे, तथापि उन्होंने कदाचित् पुर विचार

प्रचलित किये और आत्मा और ईश्वर के विषय में नई नई खोज की। ये नये नये विचार ऐसे पुष्ट और दृढ़ थे कि ब्राह्मणों ने, जो अपने ही विचार से अपने को बुद्धिमान् समझते थे, अन्त को हार मानी और क्षत्रियों के पास यह नया ज्ञान सीखने के लिए गये। क्षत्रिय उपनिषद् के ज्ञान को ब्राह्मणों से छिपाते थे। ये क्षत्रियों के एक छोटे और खास समुदाय में इसका प्रचार करते थे। इस गुप्त और खास समुदाय के बाहर वालों के लिए यह ज्ञान बहुत ही गुप्त रहस्य था। अतएव उपनिषद् "रहस्य" या "गुप्त उपदेश" कहलाने लगा। यहाँ पर कुछ थोड़े से उदाहरण दिये जाते हैं जिनसे पता लगेगा कि क्षत्रियों ही ने उपनिषद्-विद्या की खोज की और उन्हीं से ब्राह्मणों ने इस ज्ञान को सीखा, और यह भी मालूम हो जायगा कि किस तरह क्षत्रिय लोग अपने इस ज्ञान को ब्राह्मणों से गुप्त रखते थे, जिससे उपनिषद् 'रहस्य' या 'गुप्त उपदेश' कहे जाने लगे।

शतपथ ब्राह्मण (११-४-४) में लिखा है—

विदेह जनक की भेंट कुछ ब्राह्मणों से हुई। वे [illegible] पूछा कि 'आप अग्निहोत्र कैसे करते हैं?' [illegible] दिया, पर किसी का उत्तर ठीक न था। याज्ञवल्क्य का [illegible] ठीक न था। अन्त में उसने [illegible] दिया और [illegible] था का उत्तर। याज्ञवल्क्य ने [illegible] ने इन लोगों का अपमान किया'। याज्ञवल्क्य [illegible] था का राज्य के [illegible] आया। [illegible]

छान्दोग्य-उपनिषद् (५-३-१०) में लिखा है:—

[illegible] के [illegible] ब्राह्मणों में से एक, अर्थात् [illegible] शालावत्य, [illegible] की [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] किये, जिनका [illegible] [illegible] [illegible]

उन सब वस्तुओं का, जिनका तुमने वर्णन किया है, कर्त्ता है, जिसकी यह सब माया है, केवल उसी का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। तब बालाकि समिधापाणि होकर यह कहता हुआ आया कि क्या मैं आपके निकट शिष्य की तरह आऊँ? अजातशत्रु ने उससे कहा—मैं इसे अनुचित समझता हूँ कि कोई क्षत्रिय किसी ब्राह्मण को शिष्य बनावे। आओ, मैं तुम्हें सब रहस्य बताये देता हूँ।

यह कथा तथा श्वेतकेतु आरुणेय और क्षत्रिय राजा प्रवाहण जैवलि की कथा बृहदारण्यक-उपनिषद् में भी दी हुई है। जितना हम ऊपर लिख आये हैं वह यह दिखाने के लिए काफ़ी है कि उपनिषद् का ज्ञान पहले किसी ब्राह्मण ने नहीं प्राप्त किया था। यह प्रथम केवल क्षत्रियों ही का था। इसे ये बहुत ही गुप्त रखते थे, जिससे उपनिषद् विद्या "रहस्य" या "गुह्योदेश" कहलाने लगी।

ब्राह्मणों से तथा सर्वसाधारण से उपनिषद्-ज्ञान को गुप्त रखने के लिए उपनिषद्-विद्या के ज्ञाता इस नवीन ज्ञान को थोड़े से गुप्त शब्दों में प्रकट करते थे, जिसे केवल आचार्य और शिष्य ही समझ सकते थे। इस तरह के शब्द "तद्वनम्", "तज्जलान्", "सत्यस्य सत्यम्", "संयद्वाम", "वामनी", "भामनी" इत्यादि हैं। दूसरे लोग इन गुप्त शब्दों को नहीं समझ सकते थे। अतएव ये गुप्त शब्द भी "उपनिषद्" या "रहस्य" कहलाते थे। इन गुप्त शब्दों की व्याख्या आचार्य अपने शिष्यों से ज़बानी करते थे। यह व्याख्या भी गुप्त रक्खी जाती थी। इन्हीं व्याख्यानों से उन ग्रन्थों का जन्म हुआ जो उपनिषद् के नाम से पुकारे जाते हैं।

जितने प्रमाण ऊपर दिये गये हैं उनसे यह पूर्णतया सिद्ध होता है कि यद्यपि उपनिषदों का अन्तिम उद्देश शङ्कराचार्य के अनुसार "अविद्या का नाश करना" अथवा "परब्रह्म की प्राप्ति कराना" है, तथापि उपनिषद् का शब्दार्थ या भावार्थ "रहस्य", "गुह्य उपदेश", या "गुप्तविद्या" ही है।

जनार्दन भट्ट।

---

# कृषक-कथा।

## समर्पण।

होते हैं सैकड़ों निछावर एक "वोट" पर जिसके।
फहराते विजय केतु हैं मान-कोट पर जिस के।
राजा और प्रजा दोनों का जिसका मुख दर्पण है,
उन्हीं "आनरेबुल" पदवी को कृषक-कथा अर्पण है

## उपक्रम।

१—यद्यपि हम हैं सिद्ध न मुनी, ध्यानी न योगी,
पर किस अघ से हुए हाय! ऐसे दुख-भोगी?
क्यों हैं हम यों विवश, अकिञ्चन, दुर्बल, रोगी?
दयाधाम हे राम! दया क्या इधर न होगी?

२—देव! तुम्हारे सिवा आज हम किसे पुकारें?
तुम्हीं बता दो हमें कि कैसे धीरज धारें।
किस प्रकार अब और मरे मन को हम मारें?
अब तो रुकती नहीं आंसुओं की ये धारें॥

३—ले लेकर अवतार ससुर तुमने हैं मारे,
निष्ठुर बन फिर छोड़ दिये क्यों बिना विचारे!
इनके हाथों आज देख लो हाल हमारे—
हम क्या कोई नहीं दयामय! हाय! तुम्हारे!

४—पाया हमने प्रभो! कौन सा ग्रास नहीं है?
क्या अब भी परिपूर्ण हमारा हास नहीं है?
मिला हमें क्या यही नरक का वास नहीं है?
विष खाने को हाय! टका भी पास नहीं है!

५—नहीं जानते पूर्व समय क्या पाप किया है,
जिसका फल यह आज दैव ने हमें दिया है।
अब भी फटता नहीं वज्र का बना हिया है,
इसी लिए क्या हाय! जगत् में जन्म लिया है!

६—हम पापी ही सही किन्तु तुम हमें उबारो,
दीनबन्धु हो, दया करो अब और न मारो।
करके अपना कोप शान्त करुणा कर तारो,
अपने गुण से देव! हमारे दोष बिसारो॥

७—हमें तुम्हीं ने कृषक-वंश में उपजाया है,
किसका वश है, यहां तुम्हारी ही माया है।
जो कुछ तुमने दिया वही हमने पाया है,
पर विभुवर! क्यों यही दान तुमको भाया है?

८—कृषक वंश को छोड़ न था क्या और ठिकाना ?
नरक-योग्य भी नाथ ! न तुमने हमको माना !
पाते हैं पशु-पक्षि आदि भी चारा-दाना,
और अधिक क्या कहें, तुम्हारा है सब जाना ॥

९—कृषि ही थी तो विभो ! बैल ही हम को करते,
करके दिन भर काम शाम को चारा चरते।
कुत्ते भी हैं किसी भांति दग्धोदर भरते,
करके अन्नोत्पन्न हमीं हैं भूखों मरते !

१०—कृषि-निन्दक मर जाय अभी यदि हो यह जीता—
पर यह गौरव-समय कभी का है अब बीता।
कृषि से ही थी हुई जगज्जननी श्रीसीता,
गाते अब भी मनुज यहां जिनकी गुण-गीता ॥

११—एक समय था, कृषक आर्य्य थे समझे जाते,
भारत में थे हमीं अन्नदाता-पद पाते।
जनक-सदृश राजर्षि यहां हल रहे चलाते,
स्वयं रमेशरमण हलायुध थे कहलाते ॥

१२—लीलामय श्रीकृष्ण जहां गोपाल हुए हैं,
समय फेर से वहां और ही हाल हुए हैं।
हा ! गुजरात भी आज दुरन्त दुकाल हुए है,
थे जो लाखोंपाल अधम कंगाल हुए हैं !

१३—जिन गौओं से मनुज मात्र अब भी जीते हैं,
उनके वत्सों हमीं यहां आंसू पीते हैं !
हा का शब्द के सदृश चारा रहने दीते हैं,
खाने हैं निस्सार हाय ! हम दिन बीते हैं ॥

१४—हम से ही सब सभ्य सभ्य बन कर रहते हैं,
तो भी हम को निरा नीच ही वे कहते हैं !
कृषिवल होकर हम न और का दुख सहते हैं ?
जिसका उनको कष्ट कष्ट से ही करते हैं !

१५—जिस कृषि से सब जन्म कष्ट भी हरा गया है,
उसने हमसे हाय ! हमारा हरण किया है।
कृषि ने देकर जिन्हें खेत का कष्ट दिया है,
हम कृषकों के लिए वही बस दुख बना है !

१६—कहीं एक में अधिक अन्न से अन्न है जमता,
उसी अन्न का किन्तु दूसरा दीन बिकता।
कहीं एक को किन्तु अन्न का दुख अति सकता !
अन्न अन्न कह अन्न, अन्न दुख में हम सकते ॥

१७—वर्षा का सब सलिल खुले सिर पर है झड़ता,
विकट शीत से अस्थिजाल तक आप अकड़ता।
है बैलों के साथ बैल भी बनना पड़ता,
जलता तो भी उदर, अहो ! जीवन की जड़ता !

१८—कृषक वंश में जन्म यहां जो हम पाते हैं,
तो खाने के नाम नित्य हा हा खाते हैं।
मरने के ही लिए यहां क्या हम आते हैं ?
जीवन के सब दिवस दुःख में ही जाते हैं !

१९—देव ! हमारी दशा तुम्हारी है सब जानी।
नहीं मानती किन्तु आज यह व्याकुल बानी।
सुन लो अपने दीन जनों की राम-कहानी,
दया करोगे आप हुए यदि पानी पानी ॥

२०—तुम भी वाचक वृन्द ! तनिक सहृदय हो जाओ।
अपने दुर्विध बन्धु जनों को यों न भुलाओ।
यही समय है कि जो कर सको कर दिखलाओ,
बन्धु नहीं तो मनुज जान कर ही अपनाओ ॥

## कथारम्भ।

१—जब कुछ होश सँभाला, मैंने अपने को वन में पा
हरी भूमि पर कहीं धूप थी और कहीं गहरी छाया।
एक भैंस दो गायें लेकर दिन भर उन्हें चराता था,
पर आकर, ब्यालू में, मां से एक पात्र पय पाता था।

२—सुख भी नहीं छिपाऊँगा मैं पाया है मैंने जितना,
कभी कभी घी भी मिलता था यद्यपि वह था ही कितना।
माता पिता दोष लेकर ही मुदित महेरी करते थे,
भैंस और गायों का देना घी दे देकर भरते थे ॥

३—देख किसी का ठाट न हमको ईर्ष्या कभी सताती थी
और न अपनी दीन दशा पर आंखों में कुछ आती।
आवश्यकता यहां थोड़ी है, और वही है बहुत यहीं,
जो कुछ जो जितना आता है पाता है वह सदा वहीं।

४—जो हो, मैं निश्चिन्त अन्न से या तन में सुख ही पा
किसी तरह खेती-बारी से था गुजारा चला जाता।
सुख सचमुच मेरी आंखों का बन ही अन्तर्यामी था,
उसी की कृपा-दृष्टि की छाया में चित्त विश्रामी था।

५—सुख से हरा भरा जीवन था, सब दिन का संचय करने
हाथ-पैर थे खूब चलते, मन था उत्साह भरा।

मन निर्मल था, तन पर जो कुछ आवरण मैला करते,
गुणशालिन करते कानन को जब कि हर्ष हेला करते॥
ऊपर नील वितान तना था, नीचे था मैदान हरा,
शून्य-मार्ग में विमल वायु का बहना था उल्लास भरा।
कभी दौड़ने लग जाते हम रह जाते फिर मुग्ध खड़े,
उड़ने की इच्छा होती थी उड़ते देख विहग बड़े॥
बन्दर-सम पेड़ों पर चढ़ते, डालें कभी हिलाते थे,
एक एक फल तोड़ परस्पर खाते और खिलाते थे।
जल-विहंगों से पशुओं को चलते समय बुलाते थे,
कान उठा कर, पर चलने को वे भी दौड़े आते थे॥
पत्तों पर मोती से हिमकण प्रातःकाल चमकते थे,
सन्ध्या को जुगनू तारे कैसे दिव्य दमकते थे।
आते जाते समय हमारा मानस-हंस मोद पाता,
हरा भरा आगार प्रकृति का ग्लानि और श्रम मिट जाता॥

बढ़ने को हम कभी पहाड़ों पर चढ़ते,
नदी सरों के पानी में आगे बढ़ते।
वर्षा ऋतु ही फिरती हमें गोद में लिये हुए,
वह मनुजता तीनों के गुण दिये हुए॥
घन से, मेघ मृदङ्ग बजाते थे,
मिल होकर चञ्चुल चातक गाते थे।
गगन भी नीचे उतरा आता था,
दृश्य का परदा उठता जाता था॥
कौन भी किस आशा से बची रही!
किन्तु तनक जब कि शून्य हो चुकी मही!
हाय मेरा बीता समय वही,
आह, है जीने का बल यही॥
अब, चला गया सो चला गया;
एक बार ही छला गया।
की इच्छा

पीतल क्यों पीतल ही रहता, सोना क्यों बनता है धन,
अच्छा, धन ही क्या है जिसने छीनी है इतनी उलझन?
१५—धन मन का माना ही धन है, पीतल भी तो पीला है,
धन तो साया नहीं न जाता, जग की कैसी लीला है!
धन जो हो, परन्तु क्यों उस पर मानव ऐसे मरते हैं?
क्यों वे उसके लिए निरन्तर पाप-पुण्य सब करते हैं!
१६—धन को धनता मिली हमीं से और हमीं उस पर फूले,
अपने से भी बढ़ कर उसकी चिन्ता में पड़ कर भूले।
अपने ऊपर आप चढ़ाया हमने क्या पागलपन है,
सब से पशु-पक्षी ही अच्छे, जिन्हें न धन का बन्धन है॥
१७—जन से धन बढ़ गया कि जिसमें जन ही जन को मार रहा,
महाजनों को हम लोगों का है कब कष्ट-विचार अहा!
प्रभुवर! धन के लिए किसी का मैं न कभी अपकार करूँ,
धन ही मिले मुझे तो उससे जनता का उपकार करूँ॥
१८—पाठक खिन्न न हों कि दीन यह पागल सा क्या बकता है,
नहीं गँवार किसान तत्त्व का अनुशीलन कर सकता है।
एक अपढ़ जड़ जन के ऊपर समुचित ऐसा रोष नहीं,
आप खिन्न हों, किन्तु दास का इसमें कुछ भी दोष नहीं।
१९—जो हो, सोच रहा था मन में मैं यों कितनी ही बातें,
वे कैसी ही हों, पर उनमें थीं न दूसरों की घातें।
बड़ी देर हो गई सोचते पर न समझ में कुछ आया,
आखिर अपनी वंशी लेकर एक गीत मैंने गाया—
२०—'अरी जसोदा, तेरे सुत ने सब को आज सनाथ किया,
हृद अथाह अगम जमुना में काली को है नाथ लिया।'
× × × ×
जब तक पूरा करूँ गीत मैं—एक विकट चीत्कार नया—
मानों मेरे कान फोड़ कर, तान तोड़ कर गूँज गया।
२१—चौंक उठा मैं और शीघ्र ही डण्डा ले बाहर आया,
भीत भाव से सब पशुओं को इधर उधर भगते पाया।
सन सन पवन शून्य में चलती, धरा धूप से जलती थी,
किन्तु प्रकृति के रोम रोम से ध्वनि बस वही निकलती थी॥
२२—चारों ओर जहाँ पर मैंने तीक्ष्ण दृष्टि जो दौड़ाई,
नदी किनारे एक बालिका केवल चिल्लाती पाई।
उसके पशु भी भाग रहे थे पानी पीना छोड़ अहा!
देखा और कि एक तेंदुआ उसी ओर है झपट रहा॥—
२३—सर्वनाश! भय से खड़ही ने आंखों को था
दौड़ा मैं, या उसी दृश्य ने मुझे आप ही

८—कृषक वंश को छोड़ न था क्या और ठिकाना ?
नरक-योग्य भी नाथ ! न तुमने हमको माना !
पाते हैं पशु-पक्षि आदि भी चारा-दाना,
और अधिक क्या कहें, तुम्हारा है सब जाना ॥

९—कृषि ही थी तो विभो ! बैल ही हम को करते,
करके दिन भर काम शाम को चारा चरते।
कुत्ते भी हैं किसी भांति दग्धोदर भरते,
करके अन्नोत्पन्न हमीं हैं भूखों मरते !

१०—कृषि-निन्दक मर जाय अभी यदि हो वह जीता—
पर वह गौरव समय कभी का है अब बीता।
कृषि से ही थी हुई जगज्जननी श्रीसीता,
गाते अब भी मनुज यहां जिनकी गुण-गीता ॥

११—एक समय था, कृषक आर्य्य थे समझे जाते,
भारत में थे हमीं अन्नदाता-पद पाते।
जनक-सदृश राजर्षि यहां हल रहे चलाते,
स्वयं रेवतीरमण हलायुध थे कहलाते ॥

१२—लीलामय श्रीकृष्ण जहां गोपाल हुए हैं,
समय फेर से वहां और ही हाल हुए हैं।
हा ! सुकाल भी आज दुरन्त दुकाल हुए है,
थे जो मालामाल अधम कंगाल हुए हैं !

१३—जिस खेती से मनुज मात्र अब भी जीते हैं,
उसके कर्त्ता हमीं यहां आंसू पीते हैं !
भर कर सब के उदर आप रहते रीते हैं,
मरते हैं निरुपाय हाय ! दुख दिन बीते हैं ॥

१४—हम से ही सब सभ्य सभ्य बन कर रहते हैं,
तो भी हम को निरे नीच ही वे कहते हैं !
कृषिकर होकर हम न कौन सा दुख सहते हैं ?
निराधार मंझधार बीच कब से बहते हैं !

१५—जिस कृषि से सब जगत आज भी हरा भरा है,
क्यों उसमें इस भांति हमारा हृदय डरा है ?
कृषि ने होकर विवश कहां कर आज धरा है,
हम कृषकों के लिए सदा सब शून्य धरा है !

१६—घड़ी पूस में तीक्ष्ण तार से तनु है जकड़ा,
पानी बन कर नित्य हमारा रुधिर निकलता।
तदपि हमारे लिए कहां कब सुख फल फलता !
रहता सदा अभाव, नहीं कुछ भी बस चलता ॥

१७—वर्षा का सब सलिल खुले सिर पर है झड़ता,
विकट शीत से अस्थिजाल तक आप अकड़ता।
है बैलों के साथ बैल भी बनना पड़ता,
जलता तो भी उदर, अहो ! जीवन की जड़ता !

१८—कृषक वंश में जन्म यहां जो हम पाते हैं,
तो खाने के नाम नित्य हा हा खाते हैं।
मरने के ही लिए यहां क्या हम आते हैं ?
जीवन के सब दिवस दुःख में ही जाते हैं !

१९—देव ! हमारी दशा तुम्हारी है सब जानी,
नहीं मानती किन्तु आज यह व्याकुल वाणी।
सुन लो अपने दीन जनों की राम-कहानी,
दया करोगे आप हुए यदि पानी पानी ॥

२०—तुम भी वाचक वृन्द ! तनिक सहृदय हो जाओ,
अपने दुर्विध बन्धु जनों को यों न भुलाओ।
यही समय है कि जो कर सको कर दिखलाओ,
बन्धु नहीं तो मनुज जान कर ही अपनाओ ॥

## कथारम्भ।

१—जब कुछ होश सँभाला, मैंने अपने को वन में पाया,
हरी भूमि पर कहीं धूप थी और कहीं गहरी छाया।
एक भैंस दो गायें लेकर दिन भर उन्हें चराता था,
घर आकर, प्यालू में, मां से एक पाव पय पाता था ॥

२—सुख भी नहीं छिपाऊँगा मैं पाया है मैंने जितना,
कभी कभी घी भी मिलता था यद्यपि वह था ही कितना।
माता पिता छांछ लेकर ही मुदित महेरी करते थे,
भैंस और गायों का देना घी दे देकर भरते थे ॥

३—देख किसी का ठाट न हमको ईर्ष्या कभी सताती थी,
और न अपनी दीन दशा पर लज्जा ही कुछ आती थी।
मानों उन्हें यही थोड़ा है, और हमें है बहुत यही,
जो कुछ जो लिखता लाता है पाता है वह सदा वही ॥

४—जो हो, मैं निश्चिन्त भाव से था मन में सुख ही पाता,
किसी तरह खेती पाती से था संसार चला जाता।
मुझ पवन मेरे भाई का वन में स्वेद सुखाती थी,
घनी घनी छाया पेड़ों की गोदी में बिठलाती थी ॥

५—मुझ से ही मेरे साथी थे, सब
हरियाली पर कभी लेटते, कभी

वेदान्त-सूत्रों पर शङ्कराचार्य का रचा हुआ
। है। उसके चतुर्थ अध्याय के तृतीय पाद के
वें सूत्र और दूसरे अध्याय के चतुर्थ पाद के
३ सूत्र के भाष्य में बलवर्मा का उल्लेख है।
यथा—

"गच्छ खमितो बलवर्माणं ततो जयसिंहं ततः कृष्ण-
मिति" ४।३।५।

"सादृश्ये हि सम्युपमानं स्यात्। यथा सिंहस्या बल-
ते" २।४।१।

परन्तु यह निश्चय नहीं कि यह बलवर्मा कौन
सम्भव है कि कड़ब * के शक-संवत् ७३५ के
ट्रकूट राजा गोविन्दराज (तृतीय) के दानपत्र में
त बलवर्मा का कथन है वही बलवर्मा शङ्करा-
र्य का समकालीन हो। क्योंकि शङ्कराचार्य के
ाष्य सर्वज्ञात्मा ने अपने रचे हुए संक्षिप्त शारीरक
ष्य के अन्त में लिखा है—मैंने यह ग्रन्थ आदित्य
राज्य-समय में लिखा। उसका वंश क्षत्रिय है।
मनु के वंश में उत्पन्न हुआ है:—

श्रीदेवेश्वरपादपङ्कजरजःसम्पर्कपूताशयः
सर्वज्ञात्मगिराङ्कितो मुनिवरः संक्षेपशारीरकम्।
चक्रे सज्जनबुद्धिवर्धनमिदं राजन्यवंशे नृपे
श्रीमत्यत्तशासने मनुकुलादित्ये भुवं शासति॥

इस पद्य में सर्वज्ञात्मा के गुरु सुरेश्वर का नाम
रेश्वर लिखा है। यह छन्दोनुरोध से वैसा लिखा
या है। क्योंकि देव और सुर पर्यायवाची शब्द हैं।
यह आदित्य चालुक्य विमलादित्य होना चाहिए,
कि ग्रन्थकर्ता ने उक्त आदित्य का गोत्र मनु-
रसम्भूत मानव्य लिखा है, और चालुक्यों का
मानव्य है। यह बात दूसरे शिलालेखों से
है। ग्रन्थकर्ता ने तो अपने समकालीन राजा
नाम आदित्य लिखा है और शिलालेख में विम-
ाद्य नाम है। परन्तु "नामैकदेशे नामग्रहणम्"
याय से आदित्य और विमलादित्य एक ही
चाहिए। आदित्य—यह पूरा नाम नहीं, किन्तु
नाम का एक अंश है। और नाम का एक देश या
एक अंश लिखने और कहने की प्रथा बहुत पुरानी
है। जैसे—भीमसेन का भीम और परशुराम का
राम। भीमसेन—नाम में पूर्व-पद 'भीम'—इस एक
देश का ग्रहण है और परशुराम—नाम में उत्तर-पद
'राम'—इस एक देश का ग्रहण है। इसी तरह
विमलादित्य नाम में उत्तर-पद 'आदित्य' भी एक
देश का ग्रहण है।

चालुक्य विमलादित्य के कड़बवाले शिलालेख में उसके पितामह बलवर्मा का निर्देश है। शङ्कराचार्य ने भी अपने भाष्य में बलवर्मा का उल्लेख किया है। यह चालुक्य ही होना चाहिए। क्योंकि बलवर्मा और शङ्कराचार्य दोनों का देश और समय मिलता है। देश तो दक्षिण प्रकट ही है, और समय दोनों की वंशावली से स्पष्ट है। जैसे:—

१ शङ्कराचार्य.
२ सुरेश्वर (नं० १ का शिष्य).
३ सर्वज्ञात्मा (नं० २ का शिष्य).
१ बलवर्मा.
२ यशोवर्मा (नं० १ का पुत्र).
३ विमलादित्य (नं० २ का पुत्र)

सर्वज्ञात्मा के गुरु सुरेश्वर ने बृहदारण्यक-उपनिषद् का भाष्य बनाया था। उसने भाष्य की "इतिश्री" में अपने को शङ्कराचार्य का शिष्य लिखा है:—

"इतिश्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमत्पुंकरभगवत्पूज्य-
पादशिष्यश्रीमत्सुरेश्वराचार्यकृतौ बृहदारण्यकोपनिषद्भाष्य-
वार्तिकग्रन्थाने पञ्चोऽध्यायः"॥

सर्वज्ञात्मा ने संक्षिप्त शारीरिक भाष्य बनाया। उस समय उक्त विमलादित्य को राज्य करते १० वर्ष व्यतीत हो चुके हों तो १० वर्ष शेष रहे। क्योंकि इतिहासवेत्ता सौ वर्षों में पाँच पुरुष होना मानते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार शक-संवत् ७३५ से विमलादित्य के १० वर्ष गये तो ७२५ रहे, उसमें यशोवर्मा के २० वर्ष गये तो ७०५ शेष रहे। इस हिसाब से बलवर्मा का समय शक-संवत् ६०५ से ७०५ (ईसवी सन् ७८३ से ८८३) के

* देखो, इंडियन् एंटिक्वेरी, जिल्द १२, पृष्ठ १३
† एपिग्राफिया इंडिका, जिल्द ४, पृष्ठ २४०

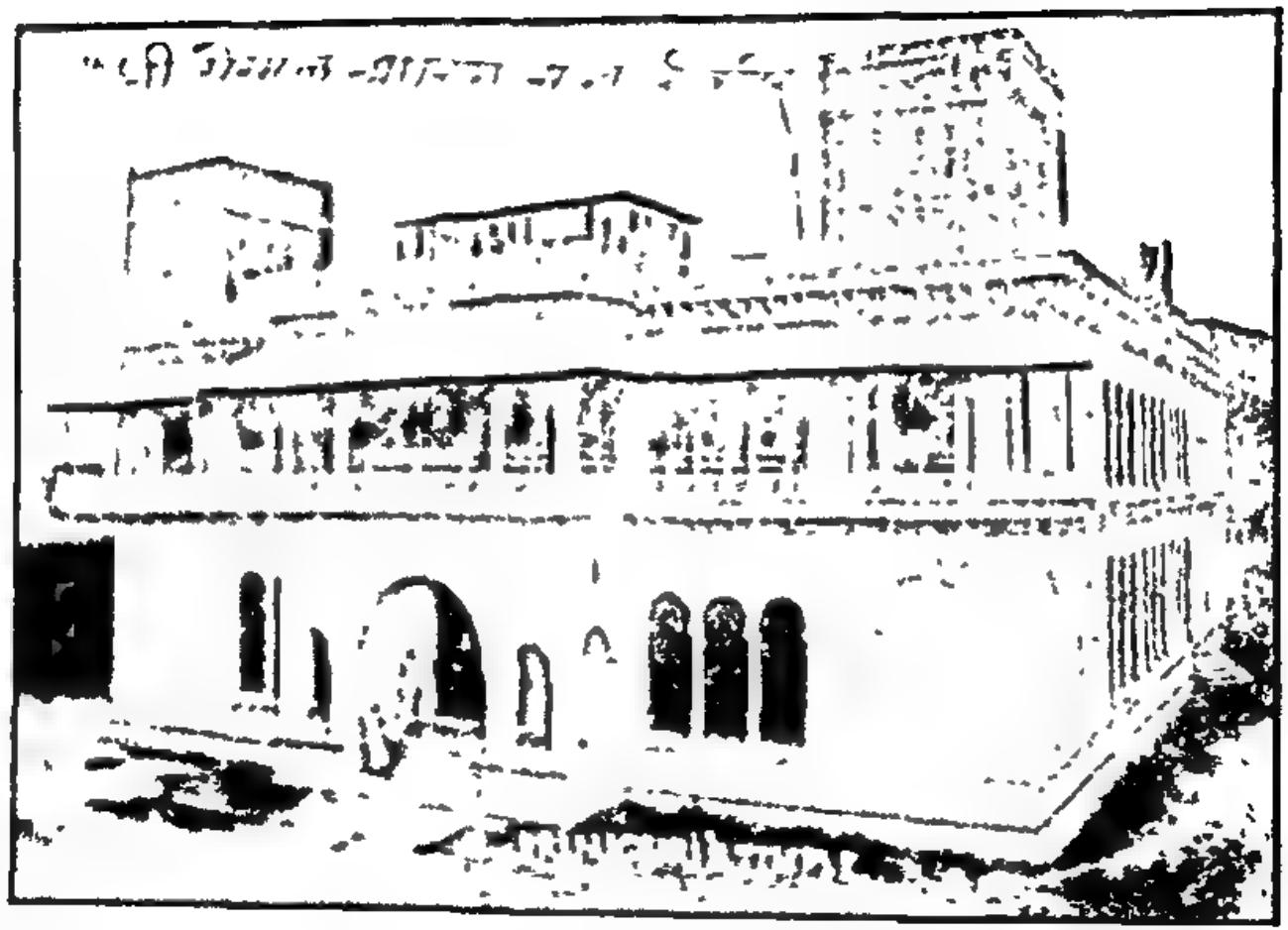

मदनमोहन का मन्दिर, वृन्दावन।

होता है। इसी समय के आस पास शङ्कराचार्य का समय होना चाहिए। इसकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि कुमारिल भट्ट का समय ईसा की आठवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध सिद्ध हो चुका है और शङ्कराचार्य ने उनके सिद्धान्त का खण्डन किया है। इससे शङ्कराचार्य का कुमारिल भट्ट के अनन्तर प्रकट होना सिद्ध होता है। बलधर्मा का समय ईसा की आठवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध है। अतएव शङ्कराचार्य का समय भी ईसा की आठवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध सिद्ध होता है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने शङ्कराचार्य को हुए २२०० वर्ष बताया है। उन्होंने आचार्य को ईसवी सन् से भी ३०० वर्ष पहले पहुँचा दिया है। यह ठीक नहीं। यह तो मौर्य अशोक का समय था। यह समय बौद्ध धर्म की उन्नति का था, अवनति का नहीं। उस समय शङ्कराचार्य का होना कैसे माना जा सकता है।*

रामकर्ण
(जोधपुर)

---

## श्रीवृन्दावन।

वृन्दारण्ये वर वरण हे परम वृन्दावनश्री,
जिह्वे वृन्दावन-गुणगणान् कीर्तय, श्रोत्र शृणु।
वृन्दाख्या भज परिमलं घ्राण, गात्र स्वमस्मिन
वृन्दारण्ये मुद पुलकितं कृष्णकेलि-स्थलेऽस्मिन्॥
श्रीवृन्दावन शतकम

## आदि-काल।

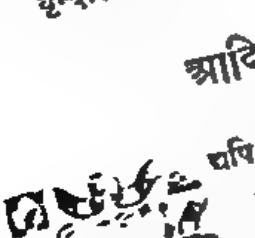

यद्यपि ब्रज-धाम की परिक्रमा चौरासी कोस की है, तथापि ब्रजभाषा की व्यापकता हज़ारों कोस में है। यहाँ तक कि शौरसेनी भाषा का प्रसार अपने समय में जितने भूभाग में फैला हुआ था, ब्रजभाषा उससे कहीं अधिक भूभाग में फैली हुई है। इसी ब्रज में पुनीत श्रीवृन्दावन-धाम है। इसका ज़िला मथुरा और कमिश्नरी आगरा है।

यद्यपि यह देश मथुरा और शूरसेन-जनपद के अन्तर्गत प्राचीन समय में ज्ञात था, तथापि अत्यन्त गौओं और उनके पालकों (गोपालों) के कारण इसके कुछ भूभाग का नाम कुछ पड़ गया और इसी ब्रज का गुरुटमणि, परम पावन, श्रीवृन्दावन-धाम है।

कोई कोई ऐसा कहते हैं कि वृन्दावन का प्रादुर्भाव श्रीकृष्ण के समय से है। किन्तु इसका नामकरण उससे बहुत पहले हुआ था। तथापि यह ठीक है कि इसकी शोभा और महिमा की प्रख्याति श्रीकृष्ण के समय से ही हुई।

वृन्दावन के नामकरण के प्रसङ्ग में ब्रह्मवैवर्तपुराण में जो कथा है उसका अति संक्षिप्त सार हम यहाँ पर इस लिए देते हैं जिससे लोग वृन्दावन के नाम की प्राचीनता को अच्छी तरह समझ जायँ।

सत्ययुग में केदार नामक एक राजा था, जो अंगीरा ऋषि के उपदेश से अपने पुत्र को राज्य देकर वन को गया। वहाँ तपस्या करके उसने गोलोक को प्राप्त किया। उसी राजा की "वृन्दा" नाम की एक कन्या थी, जो तुलसी के अंश से उत्पन्न हुई थी। अनेक बार पिता और भ्राता के अनुरोध करने पर भी उस कन्या ने अपना विवाह न किया। उसने चिर-कौमार-व्रत अवलम्बन करके तपोवनों वन में घोर तप किया। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर श्रीकृष्ण ने उससे कहा—"वरं ब्रूहि"। तब वृन्दा ने पुलकित और प्रसन्न होकर कहा—"आप मेरे पति हों!" तब "तथास्तु" कह कर श्रीकृष्ण उसे निज धाम को ले गये और जिस वन में उस राधा ने तप किया था उसका नाम "वृन्दावन" पड़ा।

यही वृन्दावन का प्राचीन इतिहास है। इससे पाया जाता है कि अति प्राचीन काल से लोग वृन्दावन को जानते थे। मथुरा नगरी के उस पार (यमुना-पार) गोकुल का एक ग्राम है। प्राचीन समय में अनेक आदिक गोप वहीं रहते थे। वहीं उन लोगों की गौवें भी रहती थीं और उन गौवों के चरने के वृहद्वन (महावन) था, जो गोकुल ही के पास श्रीकृष्ण के प्रकट होने पर वसुदेवजी के उस पार (यमुना-पार) गोकुल में

---

* शङ्कराचार्य दो हुए हैं—एक आदि-शङ्कराचार्य, जिन्होंने शारीरिक भाष्य बनाया है। सम्पादक,

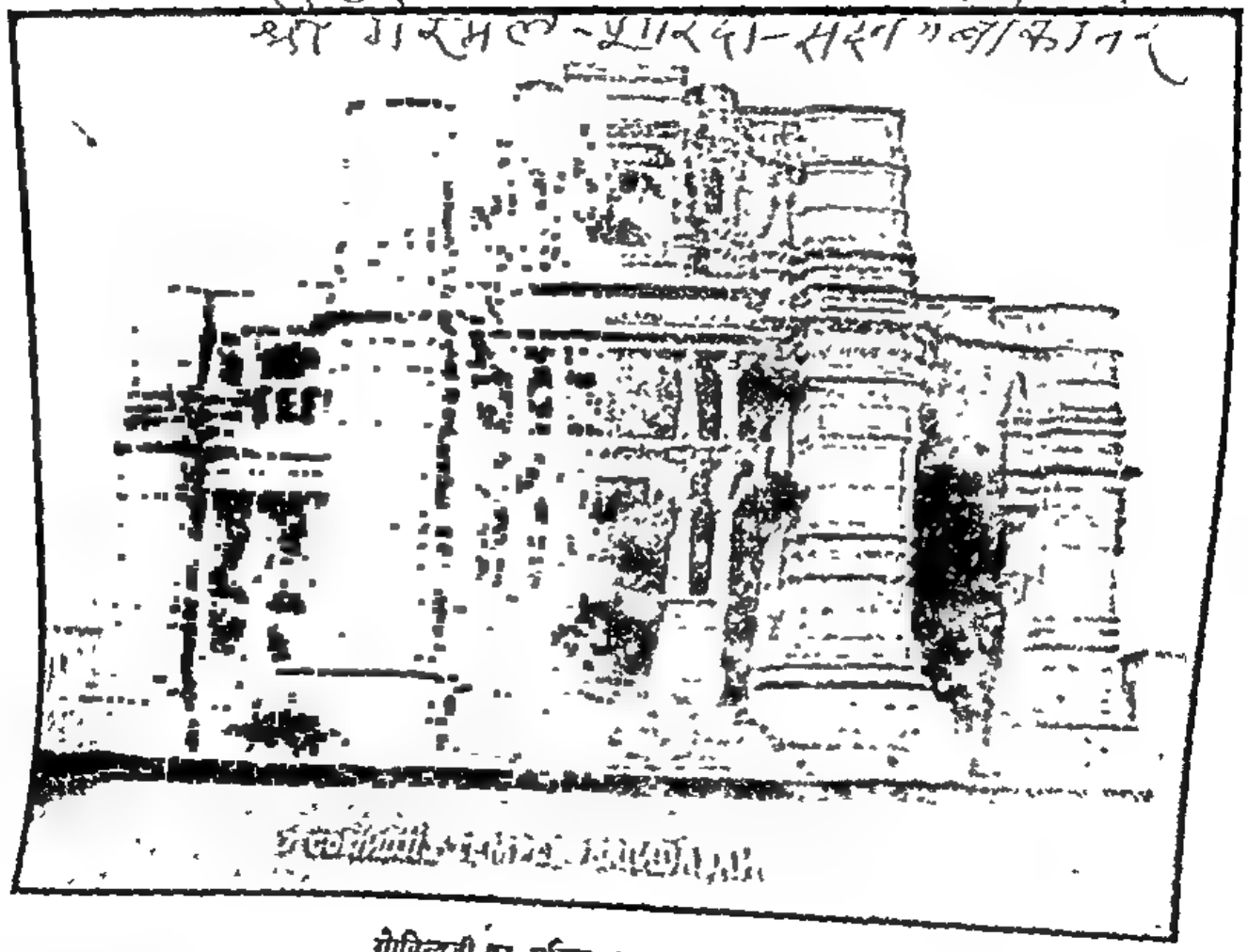

गोविन्दजी का मन्दिर, वृन्दावन।

(इंडियन प्रेस, प्रयाग।

वा दिया। किन्तु जब गोकुल में कंस के भेजे हुए दैत्यों उपात दिन दिन बढ़ने लगे तब घबरा कर नन्दादिक वृद्ध गोपों ने आपस में सलाह करके गोकुल से वृन्दावन जाकर अपनी बस्ती कायम की। यही बात श्रीमद्भागवत लेखती है।*

जब नन्दादिक गोप गोकुल छोड़ कर वृन्दावन आये श्रीकृष्ण और श्रीबलराम की अवस्था पाँच वर्ष के लगभग थी। इस समय ये दोनों बालक इतने सज्ञान हो । थे कि इन्होंने वृन्दावन, गोवर्धन और यमुना-पुलिन देख कर अत्यन्त प्रसन्नता लाभ की थी।†

ऊपर कही गई बातों से यह निष्कर्ष निकलता है कि न्दावन के अति समीप गोवर्द्धन था। यह बात भागवत सिद्ध है। लिखा है कि श्रीकृष्ण गोवर्द्धन की तलहटी प्रायः गायें चराया करते थे और जब गोवर्द्धन के पूजन । इन्द्र ने कुपित होकर व्रज को बहा देने के लिए घोर र्थ प्रारम्भ की तब गोपों को अत्यन्त भयभीत देख श्रीकृष्ण । व्रज के समस्त जीवधारियों को गोवर्द्धन के समीप ले

---

* गोपवृद्धा महोत्पातानुभूय बृहदुने।
नन्दादयः समागम्य व्रजकार्यममन्त्रयन्॥
× × × ×
उत्पातपञ्चमिसोऽस्माभिर्दृष्टस्य हिंसिभिः।
आयान्यत्र महोत्पाता बालानां नाशनेनव॥
× × × ×
वनं वृन्दावनं नाम पशव्यं नवकाननम्।
गोपगोपीगवां सेव्यं पुण्याद्रिनदिसङ्कटम्॥
तत्रात्मवर्ग गोपाम शकटान् युङ्क्त मा चिरम्॥
× × × ×
तत्र यूयं वयं गोपा वास्तु सम्पादिनं वलम्।
ततोऽद्य स्वान् स्वान् पुरुषत्य यदु कदर्थीकृतान्॥
× × × ×
वृन्दावनं सम्प्रविश्य सर्वकालसुखावहम्।
तत्र चक्रुर्व्रजावासं शकटैरर्द्धचन्द्रवत्॥
(श्रीमद्भागवत—दशम स्कन्ध)

† वृन्दावनं गोवर्द्धनं यमुनापुलिनानि च।
वीक्ष्यासीत्तत्र रामोऽपि रन्तुं लोकमनुव्रतः॥
(श्रीमद्भागवत—दशम स्कन्ध)

जाकर और उसे धारण कर गोकुल की रक्षा की। सो, यदि गोवर्द्धन वृन्दावन के समीप न होता तो वैसे दुर्दिन में वृन्दावन से गोवर्द्धन तक गोप गोपी ग्वालबालों और गौवों का पहुँचना असम्भव हो जाता। इससे यह निश्चित है कि श्रीकृष्ण के समय में वृन्दावन गोवर्द्धन तक विस्तृत था और यमुना भी गोवर्द्धन के पास ही बहती थी। उस समय जहां पर यमुना बहती थी उसको गांव अब तक प्रसिद्ध है और बहुत बूढ़े लोग, जो अभी वर्त्तमान हैं, वहां पर यमुना का होना बतलाते हैं। परन्तु आज कल वृन्दावन का कलेवर बहुत ही सङ्कुचित हो गया है और यमुना की तो यह अवस्था है कि गोवर्द्धन की बात तो दूर रहे, इसने कालीदह से लेकर केशी घाट तक दो तिहाई वृन्दावन को छोड़ दिया है। इस वर्ष तो इसने केशी घाट को भी छोड़ दिया है। यदि यमुना का यही क्रम बराबर जारी रहा तो यह यदि कुछ दिनों में सारे वृन्दावन को छोड़ दे तो कोई आश्चर्य नहीं। अयोध्या के महाराज दशरथ साहब ने तीन लाख रुपये खर्च करके और कोसों बाँध बँधा कर यमुना की धारा को घुमा कर वृन्दावन से दो कोस दूर से प्रवाह लाने और कार्त्तिक से सब मासों में स्नान जारी करने का बड़ा इन्तज़ाम किया था; किन्तु उनके परलोक सिधारते ही सब कुछ बात की बात में नष्ट हो गई।

अस्तु। यह निश्चित है कि पूर्वकाल में वृन्दावन गोवर्द्धन तक फैला हुआ था, परन्तु अब तो गोवर्द्धन वृन्दावन से बाहर अच्छी दूर हो गया है।

कैसी आश्चर्य की बात है कि पैगम्बरी होना अब वृन्दावन में है। जहां श्रीकृष्ण की कोई विशेष लीला हुई है वहां एक मन्दिर या बड़ी इमारत बन गई है और उसके अधिष्ठाता देवता के नाम का नाम वृन्दावन रख गया है।

स्कन्द पुराण में लिखा है कि वृन्दावन वह है जहां गोवर्द्धन मानस गिरि है। बृहद्गौतमीय तन्त्र में वृन्दावन के विस्तार का निरूपण किया गया है। वहां यह श्लोक है—यदु वैकल्प। अर्थात् जब यह बात

* यत्र गोवर्द्धनो नाम्ना मानसो गिरिरुत्तमः।
(स्कन्दपुराण)

† यत्र गोवर्द्धनो नाम्ना मानसो गिरिरुत्तमः।

विस्तृत वृन्दावन हमारा स्वरूप है, जहाँ पर सुपुण्याख्या अमृतवाहिनी यमुना बहती है"। *

वृन्दावन की प्राचीनता और विस्तृति के विषय में एक और भी प्राचीन ऐतिहासिक कथा है। वह यह कि श्रीकृष्ण के समय में अरुण ऋषि के पुत्र एक नैष्ठिक ब्रह्मचारी महर्षि आरुणि थे। जब तक नन्दादिक गोप गोकुल (बृहद्वन = महावन) में थे तब तक महर्षि आरुणि भी वहीं पर समीप ही एक निम्ब (नीम) के वन में रह कर तपस्या करते थे। यह स्थान अब भी निम्बग्राम के नाम से प्रख्यात है। जब नन्दादिक गोप गोकुल से वृन्दावन चले आये तब महर्षि आरुणि भी निम्बग्राम को छोड़ कर नन्दादि गोपों के साथ चले आये और गोवर्द्धन के समीप एक निम्ब के वन में, जो वृन्दावन में ही था और जहाँ पर उस समय यमुना प्रवाहित थी, तपस्या करने लगे। महर्षि आरुणि का यह निम्बवन भी आज कल निम्बग्राम के नाम से प्रख्यात है। इस प्रकार अब में दो निम्बग्राम हैं और ये दोनों ही महर्षि आरुणि की तपोभूमि होने के कारण अद्यावधि अत्यन्त पूज्य और प्रसिद्ध हैं। महर्षि आरुणि कोई सामान्य ऋषि न थे। वे साक्षात् सुदर्शनावतार थे। इनका उल्लेख देवर्षि नारदजी ने अपने रचे हुए 'भक्तिसूत्र' में किया है। इस सूत्र ग्रन्थ के भाष्यकार महर्षि औदुम्बराचार्य्य ने आरुणि और पूर्वोक्त दोनों निम्बग्रामों के विषय में जो कुछ लिखा है उसी का सार हमने ऊपर लिख दिया है†।

ऊपर कहे गये प्रमाणों से सिद्ध है कि प्राचीन अर्थात् श्रीकृष्ण के समय, में वृन्दावन बहुत विस्तृत था आज कल भी, गोवर्द्धन और निम्बग्राम के कई कोस जाने पर भी, नन्दघाट और चीरघाट नाम के दो घाट यमुना पर वर्त्तमान हैं, जो वर्त्तमान वृन्दावन से कई कोस हैं।

यहाँ पर एक बात और भी समझ लेने की है और वह यह है कि जब वृन्दावन के विस्तृत भूभाग में गौओं का गुज़ारा न हुआ तब उनमें से नन्दादिक ने नन्दगाँव, वृषभानु आदि ने बरसाने में अपनी अपनी छावनी कायम की। गौओं की चराई का स्थान वृन्दावन और गोवर्द्धन ही रहा।

वर्त्तमान वृन्दावन मथुरा से केवल ६ मील है। इक्का या गाड़ी पहुँचने में अधिक से अधिक एक घण्टे समय लगता है। परन्तु प्राचीन समय में मथुरा से वृन्दावन आने या वृन्दावन से मथुरा जाने में कितना समय लगता था, यह बात भागवत से ज्ञात हो सकती है।

जब कंस के भेजे हुए दैत्यों का संहार श्रीकृष्ण ने गोकुल और वृन्दावन में कर डाला और गोपों का गोकुल से भाग कर वृन्दावन में आकर रहना कंस से छिपा न रहा तब उसने कूटनीति की मन्त्रणा कर अक्रूरजी को कृष्ण बलदेव को ले आने के लिए वृन्दावन भेजा। अक्रूरजी प्रातःकाल कंस के रथ पर सवार होकर वृन्दावन चले। उस समय वे भगवत्प्रेमलक्षणा भक्ति के सागर में हिलोरें ले रहे थे। इससे प्रातःकाल के चले सन्ध्या-समय नन्दजी के स्थान पर वृन्दावन में पहुँचे*। इसी प्रकार कृष्ण बलदेव को लेकर अक्रूरजी वृन्दावन से भी प्रातःकाल ही मथुरा को चले †। बीच में अक्रूरजी ने पुनः यमुना में विधिवत् स्नानादिक किया। अनन्तर वे श्रीराम-कृष्ण

---

* पशुपेाऽजनमेवास्ति वने मे देहरूपकम्।
कालिन्दीयं सुपुण्याख्या परमामृतवाहिनी॥
(बृहद्गौतमी-तन्त्र)

† इत्येवं वदन्ति जन-जल्प-निर्भया एकमताः कुमार-व्यास-शुक-शाण्डिल्य-गर्ग-विष्णु-कौण्डिन्य-शेषोद्धवारुणि-बलि-हनुमद्विभीषणादयो भगवदाचार्याः (श्रीनारदसूत्रम्)।

इस नारदसूत्र के भाषाभाष्य में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने लिखा है—"आरुणि—इन्हीं का नामान्तर निम्बार्क है। ये सनकादिकों के मत के प्रवर्त्तक हैं। इनके जो दश श्लोक मिलते हैं उनमें युगल-स्वरूप की भक्ति का सिद्धान्त है। ये बड़े प्राचीन हैं, क्योंकि श्रीमद्भागवत की वेदस्तुति में इनका मत कहा गया है। जहाँ राजा परीक्षित से मिलने के हेतु ऋषिगण आये हैं वहाँ भी इनका नाम है। यथा—राजर्षिवर्यो अत्रेत्यादय। इत्यादि।

---

* अक्रूरोऽपि च तां रात्रिं मधुपुर्यां महामतिः।
उषित्वा रथमास्थाय प्रययौ नन्दगोकुलम्॥
× × × ×
इति सञ्चिन्तयन् कृष्णं अक्रूरकनतेोऽध्वनि।
रथेन गोकुलं प्राप्तः सूर्यश्चास्तगिरिं गत॥
(श्रीमद्भागवत—दशम स्कन्ध)

† श्रीरामेण वदन्त्येनामुदिते सविनर्यंथ।
अक्रूरोऽदयामास कृष्णं
× ×

य सन्ध्या समय मथुरा पहुँचे*। नन्दादिक गोप, तथा रथ के न होने पर भी, सामान्य रथ के द्वारा ही कूरजी से पहले ही मथुरा पहुँच गये थे।

मनोनिवेश-पूर्वक श्रीमद्भागवत के अवलोकन से युक्त जनों को यह बात अच्छी तरह विदित हो जायगी कि मथुरा से वृन्दावन जाने के समय अक्रूरजी इतने प्रेम-विह्वल हो रहे थे कि उनके रथ के घोड़े स्वाधीन भाव से बहुत धीरे स्वतः चल कर सायङ्काल वृन्दावन पहुँचे थे। इसी प्रकार वृन्दावन से चलने के समय अक्रूरजी गोपियों का विलाप देख घबरा कर संक्षेप ही में सन्ध्यावन्दन कर कृष्ण-बलदेव सहित वृन्दावन से चल दिये और बड़ी से बहुत दूर, अर्थात् कई कोस पर आकर, यमुनातट पर रुके। उस समय गोपियों का विलाप देख कर अक्रूरजी ने अपना रथ तेज़ी से हाँका था†। वहाँ से वर्त्तमान अक्रूरघाट तक आने में एक पहर से अधिक समय लगा था। सो कालिन्दी के तट पर वृक्षच्छाया में रथ ठहरा कर और कृष्ण बलदेव को जलपान करा कर अक्रूरजी ने वहाँ पर पुनः विधिपूर्वक सन्ध्यावन्दन करना प्रारम्भ किया और जल के भीतर भगवान् के विश्वरूप का दर्शन करके तथा उनकी स्तुति करके बहुत समय बिता दिया। फिर तीसरे पहर आपने कृष्ण-बलदेव के साथ मथुरापुरी में प्रवेश किया। यदि अक्रूरजी बीच में दोपहर को रुक न जाते तो उनके वायुवेगशाली रथ के पहुँचने के पहले ही नन्दादिक गोप कदापि मथुरा न पहुँच सकते। इससे निश्चित है कि श्रीकृष्ण के समय में रथादि के द्वारा मथुरा से वृन्दावन आने या वृन्दावन से मथुरा आने में दोपहर से अधिक समय न लगता था।

## मध्यकाल।

किसी देश की राजधानी के निकट के नगरों तथा ग्रामों की उन्नति या अवनति राजधानी की उन्नति या अवनति से घनिष्ठ सम्बन्ध रखती है। वृन्दावन, व्रज भूमि और मथुरा ज़िला सदा से भारत की राजधानी के निकट ही रहा। यहाँ तक कि नन्दग्राम और बरसाना तो मथुरा और देहली की सरहद ही के स्थान हैं। महाभारत का परिणाम सबसे अधिक व्रज-भूमि पर पड़ा और यहाँ के कितने ही उत्तमोत्तम वंश सदैव के लिए लुप्त हो गये। इसके अनन्तर भी बहुत दिनों तक व्रज-भूमि सैनिकों की क्रीड़ा का स्थान बना रहा। बौद्धों के समय में यहाँ और भी समरानल प्रज्वलित रहा। लगातार सैकड़ों वर्षों तक बौद्धों और वैदिकों के शस्त्र चलते रहे। वैष्णवों से चिढ़ कर कितनी ही बार बौद्धों ने मथुरा और वृन्दावन को उजाड़ दिया, सैकड़ों मन्दिरों को ढहा दिया, और अगणित प्राणियों को धराधाम से उठा दिया। इसी पैशाचिक काण्ड में हज़ारों ग्रन्थों से सुशोभित अनेक पुस्तक-भाण्डार भस्मीभूत हो गये। यही कारण है कि व्रज-भूमि के एकमात्र धर्म श्रीनिम्बार्क-सम्प्रदाय के अधिकांश ग्रन्थ सदैव के लिए लुप्त हो गये। वैष्णवों को छिन्न-भिन्न करके सैकड़ों वर्षों तक व्रज-भूमि में बौद्धों का आधिपत्य रहा और बौद्ध-तीर्थों में मथुरा भी एक प्रधान तीर्थ हो उठा*।

चीन के प्रसिद्ध यात्री फाहियान और हुएनसांग भी, जो क्रमशः ४०० और ६२० ईसवी के लगभग मथुरा आये थे, मथुरा को बौद्धों का प्रधान तीर्थ स्वीकार कर गये हैं। फिर, जब उत्तरी भारत हज़ारों वर्षों तक बौद्धों के वेश में रहने के कारण धार्मिक तत्वों से उदासीन हो रहा था तब दक्षिणी भारत से वेदान्त के प्रबल प्रवाह ने मथुरा के बौद्धों पर भी धावा बोल दिया। सैकड़ों वर्षों तक फिर वही वैदिकों और बौद्धों के द्वन्द चले और बौद्ध मठ धराधाम पर लुण्ठित तथा वैदिक मन्दिर उन्नत हुए।

ग्यारहवीं शताब्दी से मथुरा विदेशियों के आक्रमण का केन्द्र हो गया। १०१७ ईसवी में महमूद ग़ज़नवी ने बीस दिन तक मथुरा में रह कर पास पड़ोस तक की बस्तियों और गाँवों को ख़ूब ही जलाया और मन्दिरों को मटियामेट करके इनकी सम्पत्ति बड़ खूट ले गया। १२०० ईसवी में गुलाम सिकन्दर लोदी ने भी मथुरा का सर्वनाश किया। कदाचित्

---

* इत्युक्त्वा चोदयामास स्यन्दने गान्दिनीसुतः।
मथुरामनयद्रामं कृष्णं चैव दिनात्यये॥
(श्रीमद्भागवत—दशम स्कन्ध)

† भगवानपि सम्प्राप्तो रामाक्रूरयुतो नृप।
गोभिः कालिन्दीमगमाशिवाम्॥
(श्रीमद्भागवत—दशम स्कन्ध)

* मथुरा के प्रयोजन—मथुरा, वृन्दावन, गोवर्द्धन, राधाकुण्ड, नन्दग्राम, बरसाना आदि सभी से है।

वह व्रजभूमि में एक भी प्राणी न छोड़ता, पर, श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्य जगद्विजयी केशवकाश्मीरि भट्टाचार्य ने अपने चमत्कारों से उसे अपने वशीभूत कर लिया और उसे व्रजभूमि से चले जाने का उपदेश दिया। सिकन्दर व्रज से चला गया। इसी आनन्द के उपलक्ष्य में लाखों व्रजवासी वृन्दावन में उपस्थित हुए। उन्होंने श्रीकेशवकाश्मीरिजी को अपना गुरु और कर्णधार बनाया। यही कारण है जो आज व्रजमण्डल में श्रीनिम्बार्क-सम्प्रदाय का प्रभाव जमा हुआ है। मथुरा में जिस स्थान पर श्रीकाश्मीरिजी रहते थे वह अब तक वर्तमान है और ध्रुवटीले के नाम से प्रसिद्ध है। हिन्दुओं के धार्मिक तथा सामाजिक कार्यों में इस गद्दी के गोस्वामियों का सर्व-प्रथम स्वागत अब तक मथुरा में होता है। वृन्दावन में श्रीकेशवकाश्मीरिजी जिस स्थान पर रहते थे वह केशीघाट के नाम से प्रख्यात है। श्रीकेशवाचार्य की चौथी पीढ़ी में यह स्थान श्रीस्वभूदेवाचार्यजी के अधीन हुआ, जो श्रीनिम्बार्क-सम्प्रदाय के सर्व-प्रधान आचार्य थे और जिनके वंश के गोस्वामी अद्यावधि इस मन्दिर के सत्वाधिकारी हैं। इस वंश के गोस्वामी श्रीधर्मदासजी का प्रभाव इतना बढ़ा-चढ़ा था कि स्वयं दिल्ली से मुग़ल सम्राट् तक मन्दिर में दर्शन करने को आये और छः हज़ार साल की आमदनी का जैत-ग्राम भेंट कर दिया। पर गोस्वामीजी ने सम्राट् की भेंट स्वीकार न की। इस मन्दिर में महाराज माधवराव नारायण पेशवा दर्शन के निमित्त आते थे। उनका भेंट किया हुआ ग्राम बसई अब तक मन्दिर के राग-भोग के लिए वर्त्तमान है।

व्रजमण्डल में शान्ति स्थापित होते ही चारों ओर से महात्मा-गण आकर वृन्दावन में पदार्पण करने लगे। महात्मा श्रीहरिदास स्वामी के मधुर स्वरों से वृन्दावन गूँज उठा। मनुष्य क्या, पशु-पक्षी तक आनन्द-गद्गद हो उठे। स्वामी हरिदासजी श्रीनिम्बार्क-सम्प्रदाय के आचार्यों में थे और अपने समय के परम श्रेष्ठ सिद्ध महात्मा थे। उनकी गद्दी के वर्त्तमान महन्त श्रीभगवानदासजी एक आदर्श महात्मा हैं। स्वामी श्रीहरिदासजी का दर्शन करने के लिए प्रसिद्ध सम्राट् अकबर का आना सर्वविदित बात है।

गोस्वामी श्रीहितहरिवंशजी के सुमधुर पदों से वृन्दावन के लोग मन्त्रमुग्ध हो गये थे। उनका स्थापित किया हुआ श्रीराधारमणजी का मन्दिर भी विख्यात है। उनके वंश के श्रीराधारमणीय गोस्वामी भी जगत् में सुप्रसिद्ध हैं।

बङ्गदेश के महानुभाव श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके शिष्यों के पदार्पण से वृन्दावन की ओर भी प्रसिद्धि हुई। अगणित भक्तगण आकर उसकी शोभा बढ़ाने लगे। श्रीजीव गोस्वामी, श्रीसनातन गोस्वामी, श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी आदि महानुभावों ने प्रेम और भक्ति का समुद्र प्रवाहित कर दिया। उनके नगर-कीर्तन आदि से वृन्दावन प्रेम-पूरित हो उठा। उनके सात देवालय प्रसिद्ध हैं। उन्हीं में से श्रीमदनमोहन, श्रीगोविन्ददेव, श्रीगोपीनाथ आदि के मन्दिर हैं। श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी के उपास्य श्रीराधारमणजी हैं। इनकी गद्दी के गोस्वामी लोग श्रीराधारमणीय गोस्वामी के नाम से विख्यात हैं।

श्रीवल्लभाचार्य्य गोस्वामी भी श्रीवृन्दावन में विराजमान थे। उनके प्रिय शिष्य महात्मा सूरदासजी के कोकिल कण्ठ से दिग्दिगन्त प्रतिध्वनित हुआ है।

यह समय वृन्दावन के लिए अमृतमय समय था। एक ओर महात्मा लोग वेदान्त और भगवद्भक्ति का स्रोत बहा रहे थे। दूसरी ओर भक्तगण वैष्णवधर्म का डङ्का बजा रहे थे। तीसरी ओर नये नये मन्दिर और देवालय स्थापित हो रहे थे। चौथी ओर दूर दूर से यात्रियों के झुण्ड के झुण्ड आ रहे थे। इसी प्रकार दिन पर दिन वृन्दावन अपने रूप को बदलता जा रहा था और भारतवर्ष में उसकी ख्याति प्रकट हो रही थी।

इस समय भारत में शेरशाह का राज-चक्र चल रहा था और एक प्रकार से प्रजा शान्ति के सुख का आनन्द ले रही थी। शेरशाह का राजदण्ड प्रजा के लिए भयावह न था। इसीसे हिन्दू अपने धर्माचरणों को स्वाधीनता

सम्राट् अकबर ने जब आगरे को [illegible]
तब मथुरा पर विपत्ति का बादल फिर [illegible]
के मध्य में होने के कारण [illegible]
किन्तु जब अकबर ने [illegible]
वह हिन्दुओं का [illegible]
बाँटने लगा। [illegible]
केन्द्र है। राजपूत

पूताने के राजाओं पर इसका प्रभाव है; समस्त भारत में
समय वैष्णवधर्म का डङ्का बज रहा है; अतएव हिन्दू-
ति के आकर्षण का उपाय वृन्दावन में है। इन्हीं बातों
सोच कर विचक्षण अकबर ने वृन्दावन में पैदल प्रवेश
या। तानसेन के तानपूरे को कन्धे पर रक्खा और स्वामी
रिदास के सम्मुख उसने मस्तक नत कर दिया। अपनी
नीति से अकबर सफल मनोरथ हुआ। मन्त्र-मुग्ध की
ह हिन्दू उसके वशीभूत हो गये। धर्माचार्यों ने अकबर
वैष्णव घोषित किया। सुन्दर तिलक और लम्बी माला के
ोंन से राजपूतों ने सम्राट् को हिन्दू धर्म रक्षक स्वीकार
या।

अकबर के समय से शाहजहाँ के समय तक ब्रज अपने
ांचरणों में स्वतन्त्र रहा। पर सन् १६३६ ईसवी में शाह-
हाँ ने देवमूर्त्ति बना देने के लिए एक प्रतिनिधि भिजा दिया
र औरङ्गज़ेब ने भारत के अन्यान्य तीर्थ-स्थानों की तरह
न्दावन का भी नाश कर डाला। गोविन्ददेव, मदनमोहन,
वीनाथ, जुगलकिशोर आदि के प्रसिद्ध और दर्शनीय मन्दिर
ढ़ दिये गये। रक्त-धारा से पृथ्वी रञ्जित होने लगी और
न्दावन के देव-विग्रह आस पास के क्षत्रिय राज्यों में चुपचाप
हुँचा दिये गये।

औरङ्गज़ेब के समय से अँगरेज़ी अमलदारी तक मथुरा
ुछ कभी देहली और आगरे के मुग़ल-वंश की टक्करों को
लता, कभी मरहटे और मुग़लों के संघर्षण सहता, कभी
रतपुर और देहली के चपेटों को खाता, कभी जयपुर और
रतपुर के द्वन्द्व में फँसता और कभी अँगरेज़ों और उनके
रोधियों का लक्ष्य बनता रहा। यहाँ तक कि चलते चलाते
न् १८५७ ईसवी के विद्रोही भी वृन्दावन पर दो दो हाथ
ि गये।

## वर्त्तमान काल

जब इस देश में पूर्णरूप से शान्ति विराज गई, रेल के
ारा एक प्रान्त दूसरे प्रान्त से जुड़ने लगा, तब श्रीवृन्दावन
ें पञ्जाब, बिहार, बङ्गाल, मदरास, गुजरात, राजपूताना,
यध्यप्रान्त तथा अन्यान्य प्रान्तों से क्षत्रियों के दल के दल
ाने लगे और इन्हीं की सेवा में मन्दिर स्थापित हो गये।
स समय यहाँ भारत के सैकड़ों स्वाधीन नरेशों के बड़े बड़े
न्दिर, इन्हीं धर्मोत्तेजना के चिह्न-स्वरूप, खड़े हैं।

ऐतिहासिक स्थानों में गोविन्ददेव, मदनमोहन, गोपी-
नाथ, जुगलकिशोर, राधावल्लभ आदि के पुराने भग्न मन्दिर
हैं। उन्हीं के पास इन्हीं नामों से नये मन्दिर स्थापित हो
गये हैं।

बड़े और प्रसिद्ध मन्दिरों में श्रीरङ्गनाथ (सेठजी) का
मन्दिर, शाहजी का मन्दिर, लाला बाबू का मन्दिर, श्रीगङ्गा-
धारीजी (महाराज-ग्वालियर) आदि का मन्दिर है। श्रीबाँके-
बिहारीजी का सुप्रसिद्ध मन्दिर पुराने शहर में है।

घाटों में भरतपुर की लक्ष्मी रानी का घाट दर्शनीय है।
पर अब इस समय किसी घाट पर यमुना नहीं है।

वंशीवट, सेवाकुञ्ज, गङ्गाबट, केशवट और निधुवन
भी सुप्रसिद्ध और प्राचीन स्थान हैं।

पहले यहाँ धर्मशालाओं का अभाव था। पर अब कई
धर्मशालायें बन गई हैं और बनती जा रही हैं।

जयपुर के वर्त्तमान महाराज का बनवाया हुआ एक
मन्दिर वर्षों से अधूरा पड़ा हुआ महाराज के कृपाकटाक्ष का
आसरा देख रहा था। बड़ी खुशी की बात है, उसमें अभी
हाल ही में मूर्त्ति-स्थापना हुई है।

यहाँ एक डाक बँगला, एक सरकारी डिस्पेन्सरी, रजिस्टरी
का दफ़्तर, पुलिस का थाना, म्युनिसिपल मिडिल स्कूल और
डाकख़ाना—ये सरकारी इमारतें हैं।

श्रीलक्ष्मण सेवा-श्रम नाम का एक दातव्य चिकित्सालय
भी है। इससे सर्व साधारण का बहुत उपकार होता है। सच
तो यह है कि वृन्दावन में नाम लेने योग्य एक यही
चिकित्सालय है। इसके वर्त्तमान अध्यक्ष डाक्टरों और वैद्यों
के सरदार हैं।

इधर सात आठ वर्षों से वृन्दावन में हिन्दी का विस्तार
बढ़ रहा है। पाँच देश भी खुल गये हैं। इनसे सात पत्र-
पत्रिकायें हिन्दी में निकलने लगी हैं।

शिक्षादान के लिए यहाँ कितनी ही पाठशालायें हैं। पर
सुप्रबन्ध के अभाव से इनसे यथार्थ काम कम होता है। यहाँ
के लोगों को शिक्षा का महत्त्व भी नहीं मालूम। सबसे बढ़ कर
दरिद्रता भी बड़ा बाधक है। वह बालकों को पढ़ने का अवकाश
ही नहीं देती। स्वर्गीय बाबू शिवदेव सिंहजी ने इस दुर्भाग्य
के लिए पहले यहाँ एक अनाथालय का निर्माण प्रारम्भ
भी किया। पर दुर्भाग्य कई वर्षों से यह काम स्थगित पड़ा है। यह

संस्थाओं में श्रीप्रेम महाविद्यालय है, जिसका विस्तृत वर्णन सरस्वती की किसी पिछली संख्या में निकल चुका है।

वृन्दावन में श्रावण में झूलनों का उत्सव दर्शनीय होता है। उस अवसर पर वृन्दावन की शोभा बहुत बढ़ जाती है। चैत्र में रथ का बड़ा मेला होता है।

इधर संयुक्तप्रान्त के आर्य्यसमाजों ने भी वृन्दावन को अपना केन्द्र बना लेने की इच्छा प्रकट की है। इसी से इनका गुरुकुल भी यहाँ स्थापित हुआ है। इस पर वृन्दावन-वासियों ने भी ब्रजमण्डल-यदुकुल और आचार्य्य-कुल नाम से दो संस्थायें स्थापित की हैं। देखें कब यह सुअवसर प्राप्त होगा जब इन तीनों कुलों में से निकले हुए वैदिक-सिंहों के पारस्परिक विचार से इस देश के धर्म का कल्याण होगा।

अब ज़रा यहाँ के स्वास्थ्य का भी वृत्तान्त सुन लीजिए। यह वृत्तान्त वृन्दावन के म्युनिसिपल बोर्ड की रिपोर्टों के ही सहारे लिखा जाता है।

सन् १८९१ की मनुष्य-गणना के समय वृन्दावन में ३१,६११ मनुष्य थे, पर सन् १९०१ की गणना के समय २२,७१७ ही मनुष्य गिने गये। और, सन् १९११ की मनुष्य-गणना में यहाँ केवल १८,४४३ ही मनुष्य रह गये! सन् १९११ में जो कमी दिखाई दी उस पर मुनिसिपैलिटी ने कहा है—"सन् १९०१ में मनुष्य-गणना के समय फूल-डोल एकादशी थी। इससे बहुतेरे यात्री भी यहाँ आये हुए थे।" अच्छा, मान लीजिए, म्युनिसिपैलिटी ठीक कहती है, पर ज़रा १९१२, १९१३ और १९१४ में समाप्त होने वाले वर्षों की रिपोर्टों को भी देख लीजिए। सन् १९१२ में समाप्त होने वाले वर्ष में ४७१ बच्चों ने जन्म लिया और ८२२ मनुष्य मौत के मुख में गये। इस प्रकार ३८४ मनुष्यों का घाटा रहा। सन् १९१३ में समाप्त होने वाले वर्ष में २१२ बच्चे उत्पन्न हुए और ७७२ मनुष्य मरे। इस प्रकार २६० मनुष्यों का घाटा रहा। और, सन् १९१४ में समाप्त होने वाले वर्ष में २७७ बच्चे पैदा हुए और ८१९ मनुष्य मरे। इस प्रकार २४२ मनुष्यों का घाटा रहा। इस विवरण से यह प्रकट हो गया कि आगामी गणना के समय, सन् १९२१ में, वृन्दावन में कोई पन्द्रह हज़ार ही मनुष्य रह जायँगे। यदि यही अवस्था रही तो चालीस-पचास वर्षों में वृन्दावन में कुछ ही लोग रह जायँगे।

बन राजों, महाराजों और सेठों ने निर्माण किया। जिन्होंने वृन्दावन में देवालयों की स्थापना की है, यदि वृन्दावन को जीवित रखना है तो इन्हें इस का परिचय दीजिए और सात आठ लाख रुपये वृन्दावन के स्वास्थ्य की रक्षा के लिए चालीसवर्षीय कर दीजिए। इतने रुपये से घाटों पर यमुना का प्रवाहित होना जल-कल का प्रबन्ध, नालियों का प्रबन्ध और प्रकाश का कार्य्य आदि प्रायः सभी कुछ हो जायगा। सिर्फ़ बाढ़ों के लिए दो लाख से ऊपर रखना चाहिए। इसमें से पचास हज़ार रुपया गवर्नमेंट दे चुकी है। यदि इतने काम के लिए सर्वसाधारण धन संग्रह कर सकें तो गवर्नमेंट भी सहायता देने से न हटेगी। आशा है, लक्ष्मी के लाल इन दरिद्र भाइयों के लिए मुट्ठी खोलेंगे।

यहाँ पुलिस और सर्वसाधारण का प्रायः सद्भाव रहता है। रेल, डाक, तार, पुलिस आदि के कर्मचारी भी सब अच्छा ही व्यवहार करते हैं।

अब भी वृन्दावन अपने समय का अद्वितीय हिन्दू-तीर्थ है और एक बार दर्शन करने योग्य है। भारतवर्ष के अन्य तीर्थ-स्थानों को देखते हुए वृन्दावन को देख कर सन्तोष होता है। एक महात्मा का कहना है—

"वृन्दावन सों बन नहीं, नन्दगाम सों गाम।
बंशीवट सों बट नहीं, कृष्णनाम सों नाम।"

और तुलसीदासजी तो यहाँ तक कहते हैं कि—

"वृन्दावन-बैकुण्ठ को तौल्यो तुलसीदास।
गरुओ रह्यो सो रहि गयो, हलको गयो अकास।"

हमारी भगवान् श्रीकृष्ण से प्रार्थना है कि एक बार पुनः श्रीवृन्दावन अपने अतीत गौरव को प्राप्त करे और असदादि किङ्करों को अपने चरण का सेवक बनावे। और यदि किञ्चित् कृपाकटाक्ष हो तो दास की भी मनोकामना महानुभाव महात्मा रसखानिजी की भाँति पूर्ण हो—

जो खग हौं तो बसेरो करौं
मिलि कालिन्दी कूल कदम्ब की डारन ॥"
किशोरीलाल गोस्वामी

## प्रश्नोत्तरी।

आदि सभ्य है कौन मही पर ? जिसका जोड़ा नहीं कहीं पर।
कौन देश है सब से प्यारा ? हिन्द हमारा, हिन्द हमारा ॥१॥
अपना अद्भुत बल दिखला कर, सब को सकल कला सिखला कर।
कौन बना त्रिभुवन का तारा ? हिन्द हमारा, हिन्द हमारा ॥२॥
पशुवत् जब मानव रहते थे, नाना क्लेश सदा सहते थे।
कौन हुआ तब विश्व-सहारा ? हिन्द हमारा, हिन्द हमारा ॥३॥
नर वर सी क्रीड़ा करने को, सज्जन की पीड़ा हरने को।
कौन ईश का बना दुलारा ? हिन्द हमारा, हिन्द हमारा ॥४॥
कौन सुरों का भी रक्षक था ? कौन असभ्यों का शिक्षक था।
कौन न छूता था पर-दारा ? हिन्द हमारा, हिन्द हमारा ॥५॥
विद्या, विनय, दया में, नय में, कृतज्ञता में, पुण्य, प्रणय में।
कौन किसी से कभी न हारा ? हिन्द हमारा, हिन्द हमारा ॥६॥
रोग-शोक घर के झगड़ों से, नये नये धार्मिक रगड़ों से।
कौन न पाता है छुटकारा ? हिन्द हमारा, हिन्द हमारा ॥७॥
सीस कोटि का नायक होकर, निज सर्वस्व आप ही खोकर।
कौन बहाता दृग-जल-धारा ? हिन्द हमारा, हिन्द हमारा ॥८॥
निज भाषा से कौन विमुख है ? कौन अनेकों सहता दुख है !
कौन बना है अब बेचारा ! हिन्द हमारा, हिन्द हमारा ॥९॥
था जो सुर-पुर से भी बढ़ कर—वही विपति-गर्त्त में पड़ कर—
फिरता है अब मारा मारा, हिन्द हमारा, हिन्द हमारा ॥१०॥
रामचरित उपाध्याय।

## उद्योग-धन्धे की शिक्षा।

शिक्षा से तात्पर्य्य मनुष्य को सदा नागरिक और चरित्रवान् बनाने से है। प्रत्येक माता पिता का कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह अपनी सन्तान को सुशिक्षित बनाये। इस स्थान पर हमें इस बात का विचार नहीं करना है कि कौन सी शिक्षा कैसे देनी चाहिए। यहाँ पर हम केवल उद्योग-धन्धे की शिक्षा के विषय में दो चार मोटी मोटी बातें लिखना चाहते हैं।

अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि शिक्षा का उद्देश केवल शिक्षा ही होना चाहिए। उनका कथन है कि शिक्षा देते समय इस बात का ध्यान कभी न करना चाहिए कि उससे अमुक फल हमको प्राप्त होगा, अथवा अमुक फल की आशा से हम शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। यह बात समृद्धिशाली देशों के लिए चाहे भले ही ठीक हो, परन्तु जो देश सम्पत्ति, विद्या या वैभव में न्यून हैं और जिन्हें अपनी सत्ता स्थिर रखने के लिए उन्नत देशों का मुकाबला करना ज़रूरी है उनके लिए यह सिद्धान्त किसी तरह ठीक नहीं। ठीक ऐसी ही दशा इस समय हमारे देश की है। हमारे देश के धनी तो पढ़ना-लिखना एक प्रकार का व्यर्थ झंझट समझते हैं। दीन-दुखिया लोग अपना पेट ही नहीं पाल सकते, पढ़ें क्या ख़ाक। रह गये बेचारे मध्यम श्रेणी के लोग सो ये अ, आ, प्रारम्भ करते ही इस सोच में पड़ जाते हैं कि पढ़ कर तहसीलदार, डेपुटी कलेक्टर, वकील आदि बनेंगे। जिस देश की यह दशा है उस देश के निवासियों से यह कहना कि पढ़ो केवल पढ़ने के लिए, मानो उनको इस बात का विश्वास दिलाना है कि गधे के भी सींग होते हैं।

हम में से वे लोग जो अपने को सुशिक्षित समझते हैं नौकरी—और वह भी सरकारी नौकरी—को अपनी बपौती बना बैठे हैं। हमारे देश में अनेक जातियाँ हैं। उनमें इस नौकर जाति को और सम्मिलित कर लेना चाहिए। प्राचीन काल में प्रतिष्ठा के साधन भले ही विद्या और राजसेवा आदि रहे हों, परन्तु इस समय तो प्रतिष्ठा का एक मात्र साधन धन है। शायद सौ में एक ही नौकरी-पेशा आदमी ऐसा मिलेगा जिसने अपने बाहुबल से धन-सञ्चय किया हो। हमारा विश्वास तो यह है कि नौकरों की दशा इतनी शोचनीय होती है कि लाखे-

पीने की चीज़ों का निर्ख़ ज़रा चढ़ते ही गवर्नमेंट तक को उन्हें साहाय्यदान (Famine Allowance) देना पड़ता है। फिर हर चीज़ की क़दर उसकी तैयारी और माँग से जानी जाती है। जिस चीज की माँग ज़ियादह हो, समझ लेना चाहिए कि उसकी क़दर है और जो चीज़ ज़्यादह तैयार मिलती हो, समझ लेना चाहिए कि उसकी बेक़दरी है। आप किसी समाचार-पत्र में छपवा दीजिए कि हमको ३० या ४० रुपये मासिक पर एक बी० ए० अध्यापक की आवश्यकता है। बस, हज़ारों नहीं तो सैकड़ों आवेदनपत्र आपके पास आ जायँगे। जब ऐसी दशा है तब यह कहना कि विद्याध्ययन का एक मात्र उद्देश विद्याध्ययन होना चाहिए विडम्बना मात्र है।

अच्छा तो इस स्थिति का कारण क्या है? शिक्षा मूलतः दो प्रकार की होती है। एक साधारण शिक्षा—जिसमें लिखना, पढ़ना, हिसाब आदि सम्मिलित है। दूसरी व्यावहारिक या उद्योग धन्धे की शिक्षा—जिससे मनुष्य कोई काम धन्धा सीखता है और इस योग्य हो जाता है कि उसके द्वारा वह सहज में अपना पेट पाल सके—उसे अपने जीविका-निर्वाह के लिए दूसरों का मुँह न ताकना पड़े। कहने की आवश्यकता नहीं कि इस प्रकार की शिक्षा से देश की सम्पत्ति भी बढ़ती है और यही हमारे सारे कष्टों का उद्देश भी होना चाहिए। इस प्रकार की शिक्षा-प्राप्ति का सुभीता इस देश में नहीं, और न इसकी ओर किसी का विशेष ध्यान ही है। हाँ, गवर्नमेंट का ध्यान इस ओर कुछ कुछ ज़रूर आकृष्ट हुआ है। इसी से उसने कहीं कहीं एक टेक्निकल (उद्योग-धन्धा विषयक) स्कूल खोला है। पर उसके इस प्रयत्न को देख कर शायद लोग उसके सिर यह दोष मढ़ने को तैयार हो जायँगे कि अब पढ़े-लिखे लोग बहुत हो गये हैं। सरकार के पास उतनी नौकरियाँ नहीं। इसलिए यह पढ़े लिखे लोगों का स्थान दूसरी ओर खींचने के लिए यह चाल चल रही है। परन्तु यह बात सर्वथा निर्मूल है।

अब देखना यह है कि हम लोगों ने स्वयं इस विषय में कुछ किया है या नहीं। हमारे देश में बहुत से ऐसे विद्यालय हैं जो सरकार से कुछ भी सहायता नहीं लेते। परन्तु शोक के साथ कहना पड़ता है कि उनमें भी इस बात का कुछ भी प्रबन्ध नहीं वे भी अपनी शिक्षाप्रणाली वही रक्खे हुए हैं जो सरकारी विद्यालयों की है। गुरुकुलों की [illegible] कुछ विद्यालय ऐसे भी खुले जिन्होंने शिक्षा-प्रणाली तो बदल दी, पर उद्योग-विषयक शिक्षा की ओर ध्यान न दिया। पढ़ कर जो लोग निकले वे या तो लड़के पढ़ाने में लग गये, या लेकचर झाड़ने में, या अख़बार-नवीसी करने में। हमारी समझ में नहीं आता कि ये सब लोग—क्योंकि हमारा उद्देश सबको शिक्षित बनाने का है—व्याख्यानबाज़ी करके या लड़कों को पढ़ा कर देश का कौन सा बहुत बड़ा उपकार करेंगे। एक बार महात्मा साक्रेटीज़ ने एक यूनानी युवक से कहा—'यदि तुम चाहते हो कि देश तुम्हारा आदर करे तो तुमको उचित है कि तुम देश का उपकार करो। देश को धनधैभव-सम्पन्न किये बिना देश का उपकार नहीं हो सकता'। आज हम भी अपने शिक्षित समाज से निवेदन करते हैं कि तुम्हारे एम० ए०, बी० ए० या एल-एल बी० हो जाने से देश का क्या उपकार होता है—देश की कितनी सम्पत्ति बढ़ती है? यदि सच पूछो तो तुम्हारे इन पदवियों को धारण करने ही देश एक प्रकार की आपत्ति में पड़ जाता है। यदि तुम वकील बने तो तुम्हारा भला तभी होगा जब देशवासी आपस में लड़ें-झगड़ेंगे। यदि तुम नौकरी की—और नौकरी के अतिरिक्त तुम कर भी क्या सकते हो—तो तुम्हारे टाटपाट का सामान हमारे दरिद्र देश को ही जुटाना पड़ेगा। तुमने हज़ारों दरज अच्छा पद जुलाहा है जो सूत ले कर कारख़ाना बुनता है। उसकी कृपा से यह अपने और अपने परिवार का उदरपोषण करता है और कारख़ाने से तुम्हारे नहू बदन को कपड़ा भी देता है। हमारे कहने का तात्पर्य यह कदापि नहीं कि अध्यापक, वकील, या लेखक का परिश्रम किसी काम का नहीं उपयुक्त ही नहीं करता। हमारा मतलब सिर्फ़ यह

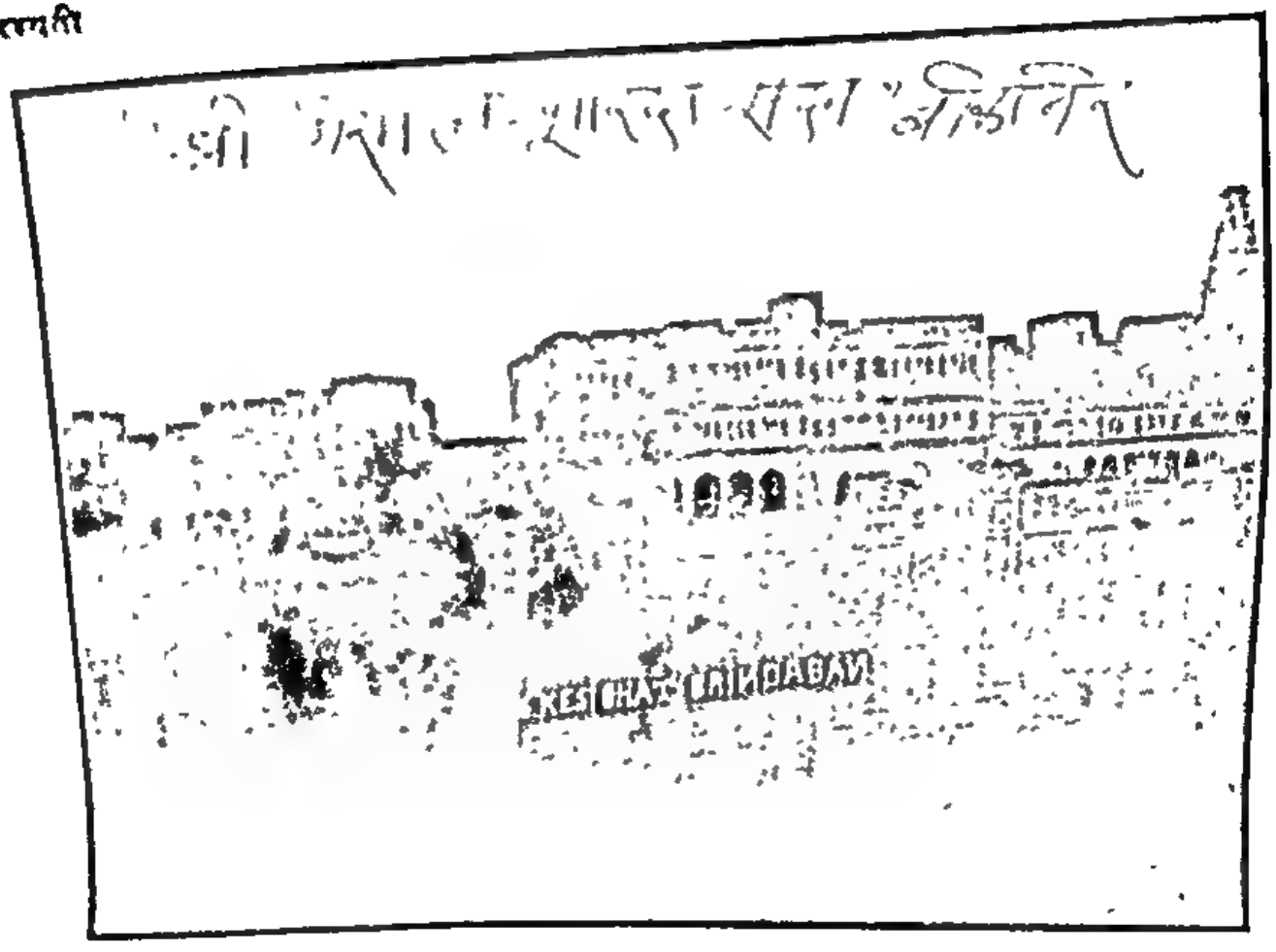

केशीघाट—वृन्दावन ।

कि इस समय हमारे देश को कैसे परिश्रम की आवश्यकता है जिससे प्रत्यक्ष रीति पर देश की समृद्धि बढ़े।

यहाँ पर यह प्रश्न हो सकता है कि उद्योग-धन्धे की शिक्षा का प्रबन्ध करने के लिए बड़े व्यय की आवश्यकता है। हमारा देश बड़ा दरिद्र है। यह इतना रुपया कहाँ से लायेगा। इस में सन्देह नहीं कि यदि हम लोग इंगलैंड, अमेरिका, जर्मनी या फ्रान्स आदि समृद्धिशाली देशों की नकल करके उनके जैसे उद्योग-धन्धे-सम्बन्धी बड़े बड़े स्कूल और कालेज क़ायम करें तो बहुत व्यय की आवश्यकता है। परन्तु हम लोगों को अपनी स्थिति पर विचार करके काम करना चाहिए। कहाँ उक्त देश और कहाँ हमारा दीन देश! कहाँ इन्द्र का ऐरावत और कहाँ कलुआ कुम्हार का गधा! हमको उचित है कि हम अपनी आर्थिक दशा पर विचार करके एक साधारण सा स्कूल इस विषय का खोल दें। कौन जानता है कि हमारा यही छोटा सा स्कूल एक दिन योरप के बड़े बड़े कालेजों की टक्कर का न हो जायगा। सुनते हैं, नर्मदा नदी के किनारे बरगद का एक वृक्ष है। वह इतना बड़ा है कि उसकी छाया में लगभग दस हज़ार मनुष्य सुख से बैठ सकते हैं। परन्तु सोचिए तो सही कि यह इतना बड़ा वृक्ष कितने छोटे बीज से उत्पन्न हुआ है। क्या कोई उस छोटे बीज को देख कर यह अनुमान कर सका होगा कि एक दिन यह इतना विस्तृत वृक्ष हो जायगा? क्या पूना के साधारण स्कूल को स्थापित करते समय उसके सञ्चालकों ने कभी यह अनुमान किया होगा कि हमारा स्थापित किया हुआ यह साधारण स्कूल एक दिन फर्गुसन कालेज जैसा विशालकाय और प्रसिद्ध विद्यालय हो जायगा?

बनारस का हिन्दू विश्व-विद्यालय अभी तक खुला नहीं। हमारे गण्यमान्य और सुशिक्षित भाई उसके सञ्चालक हैं। सारे देश ने उसकी संस्थापना के लिए अपना कठिनता से उपार्जित धन उनके हाथों में सौंप दिया है। वे उसकी ओर एकटक नेत्र लगाये देख रहे हैं। उनको विश्वास सा हो गया है कि यह विश्व-विद्यालय अवश्य हमारा उपकार करेगा—इसके द्वारा अवश्य हमारा कल्याण होगा। हमारी सम्मति में यह संस्था सारे देश के लिए लाभदायक और प्रिय भी तभी हो सकती है जब यह कोई कार्य्य ऐसा कर दिखावे जैसा अभी तक देश में नहीं हुआ। इसका यह कार्य्य हमारे लिए विशेष उपकारी होना चाहिए। इस संस्था के पास धन की कमी नहीं। यदि यह भी वर्तमान ही ढर्रे पर चली कि परीक्षा ली और उत्तीर्ण छात्रों को पदवियाँ वितरण कर दीं तो लक्ष्मी और सरस्वती के वैर-रूप अग्नि में घी की आहुति पड़ेगी और हमारी बड़ी बड़ी आशायें हिमालय पहाड़ से टकरा कर या तो वहीं चूर्ण सी हो जायँगी, या हमारे पास लौट आ कर हमारे ही मन में विलीन हो जायँगी।

कृष्णानन्द जोशी, बी० ए०।

---

## जैन-शाकटायन-व्याकरण कब बना ?

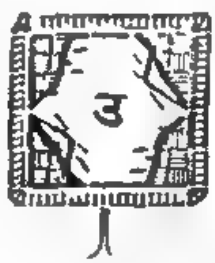

उपलभ्यमान शाकटायन-व्याकरण के कर्ता शाकटायन मुनि के काल और कर्तृत्व विषय में इतिहासज्ञ विद्वानों के भिन्न भिन्न मत हैं। कुछ लोग कहते हैं कि इस व्याकरण के कर्ता वही शाकटसूनु शाकटायन मुनि हैं जिनका स्मरण पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी के—"लङः शाकटायनस्य। ३। ४। १११। व्योर्लघु प्रयत्नतरः शाकटायनस्य। ८। ३। १८। विप्रभृतिषु शाकटायनस्य। ८। ४। ५०।"—इन सूत्रों में किया है। अतः ये शाकटायन मुनि पाणिनि मुनि से प्राचीन हैं।

कुछ विद्वानों का मत है कि ये शाकटायनाचार्य्य वे नहीं जिनका मत पाणिनि-व्याकरण में उल्लिखित हुआ है। पाणिनि के उल्लिखित शाकटायनाचार्य्य वैदिक मतावलम्बी थे और ये जैनधर्मावलम्बी

लम्बी। इनकी स्थिति राजा अमोघवर्ष (प्रथम) के समय में थी।

इस पिछले मतवाले विद्वानों के कथन की पुष्टि में हमें एक और पुष्ट प्रमाण उपलब्ध हुआ है जो इतिहास प्रेमी जनों के लिए यहाँ उद्धृत किया जाता है।

श्वेताम्बर जैन-सम्प्रदाय में, विक्रम की तेरहवीं शताब्दी के अन्त में, मलयगिरि-सूरि नाम के एक प्रखर विद्वान् हो गये हैं। उन्होंने अनेक आगम और प्राकरणिक ग्रन्थों पर विस्तृत और तत्त्व-पूर्ण गहन व्याख्यायें लिखी हैं। धर्म, न्याय, व्याकरण, साहित्य और ज्योतिष आदि अनेक विषयों पर उन्होंने बहुत कुछ लिखा है। उनके लेखों के अवलोकन से मालूम होता है कि उन्होंने व्याकरण-शास्त्र-सम्बन्धी उपलब्ध शाकटायन-व्याकरण ही पढ़ा था। क्योंकि उन्होंने अपने लेखों में अनेक जगह इस व्याकरण का उल्लेख किया है। यही नहीं, किन्तु शाकटायन की प्रणाली के अनुसार उनका बनाया हुआ "मलयगिरिशब्दानुशासन" नामक एक नया व्याकरण भी विद्यमान है। उन्होंने "नन्दीसूत्र" नामक जैनागम की टीका में एक जगह शाकटायन मुनि का स्मरण किया है और लिखा है—

"शाकटायनोऽपि यापनीययतिग्रामाग्रणीः स्वोपज्ञशब्दानुशासनवृत्तावादौ भगवतः स्तुतिमेवमाह"। (नन्दीसूत्र, पृष्ठ २३, कलकत्ता)।

इस वाक्य में शाकटायन मुनि के लिए जो "यापनीययतिग्रामाग्रणी"—विशेषण दिया गया है वह विचारणीय है। इस विशेषण से प्रस्तुत शाकटायन के कर्ता कब हुए, इस बात का निश्चय हो सकता है। इस—यापनीययतिग्रामाग्रणी—विशेषण का अर्थ होता है—"यापनीय संघ के मुनियों के नेता—आचार्य"। अर्थात् शाकटायन मुनि यापनीय नामक संघ के अग्रसर आचार्य थे। अब यह देखना चाहिए कि यह यापनीय संघ कौन था और कब हुआ? दिगम्बर-जैन-सम्प्रदाय में, पूर्वकाल में, मूलसंघ, काष्ठासंघ, नन्दीसंघ, सेनसंघ, द्राविडसंघ और कित्तिउर आदि अनेक संघ-सम्प्रदाय प्रचलित थे। उन्हीं में यापनीयसंघ भी एक सम्प्रदाय था। उसकी उत्पत्ति विक्रम की छठी शताब्दी के बाद हुई थी। देवसेनाचार्य नामक दिगम्बर जैन विद्वान् ने, विक्रम-संवत् ९९० के लगभग, "दर्शनसार" नाम की एक पुस्तक लिखी। उसमें लिखा है कि "राजा विक्रम की मृत्यु के ५२६ वर्ष बाद मथुरा में, द्राविडसंघ की उत्पत्ति हुई"*। इन्द्रनन्दी आचार्य, अपने बनाये हुए 'नीतिसार' नामक ग्रन्थ में, लिखते हैं कि द्राविडसंघ के पीछे यापनीयसंघ उत्पन्न हुआ है"†। इन दोनों ग्रन्थों के उल्लेखों से निश्चित है कि विक्रम की छठी शताब्दी के बाद किसी समय यापनीयसंघ में शाकटायन नामक आचार्य हुए, जिन्होंने प्रस्तुत व्याकरण की रचना की। इससे जो विद्वान् शाकटायनाचार्य का समय, प्रथम-अमोघ वर्ष के राज्यकाल में, निश्चित करते हैं वे ठीक कहते हैं। उनका मत विश्वसनीय प्रतीत होता है।

दूसरी बात यह भी है कि यदि ये शाकटायनाचार्य पाणिनि से भी पूर्ववर्ती होते तो इनको सभी जैन—श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों सम्प्रदायवाले—अपना पूज्य समझते। क्योंकि उस समय जैन-समाज में श्वेताम्बर दिगम्बर का मत-भेद उत्पन्न न हुआ था। यह भेद विक्रम की दूसरी शताब्दी में—श्वेताम्बरों के कथनानुसार विक्रम-संवत् १३६, और दिगम्बरों के मतानुसार संवत् १३६ में—उत्पन्न हुआ। अतः यदि ये शाकटायनाचार्य इस मत-भेद-काल से पूर्व हुए होते तो, उक्त दोनों समाजों में इनका एक सा आदर होता, जैसा कि "तत्त्वार्थसूत्र" के कर्ता भगवान् उमास्वाति का है। शाकटायन-व्याकरण का प्रचार और सत्कार दिगम्बर-सम्प्रदाय में ही विशेष कर है, श्वेताम्बर में नहीं।

* छत्तीसे वरिससए विक्कमरायस्स मरणपत्तस्स।
दक्षिणमहुराजादो दाविडसंघो महामोहो॥

† तिष्यनन्दि गुरोर्जातो वज्रनन्दी महामुनेः (?)
द्राविडो, वादिराजश्च, कित्तिउरश्च सप्तमः

के ऊपर जितने टीका टिप्पण हुए हैं वे सब म्बर-विद्वानों ही के किये हुए हैं—"तत्त्वार्थ ।" के सदृश दोनों सम्प्रदायवालों के किये हुए । अतः इससे भी निश्चित है कि ये शाकटा-ाचार्य जैन-समाज में मत-भेद होने के बाद,—म की दूसरी शताब्दी के अनन्तर—किसी य दिगम्बर-सम्प्रदाय में हुए हैं। इस कथन की ष्टि में मलयगिरि सूरि का पूर्व-लिखित "यापनीय-तेभ्राम्राम्रणी" विशेषण विशेष-रूप से प्रमाण-त है।

मुनि जिनविजय
( धीरमगाम )

---

## समाज-शास्त्र ।

ही घर से बाहर निकलने लगे त्योंही किसी ने छींका, कुछ देर ठहर जाना पड़ा। घर से निकलने ही एक काना आदमी मिला; अपशकुन की आशङ्का से हृदय काँप उठा। ज़रा ही आगे ढ़े थे कि बिल्ली रास्ता काट गई। बस, सीधा ार्ग छोड़ कर टेढ़े मार्ग से जाना पड़ा। लोगों ी धारणा है कि छींक, काना आँख या बिल्ली की ाल का हमारी सफलता से कार्य-कारण-सम्बन्ध । पर यदि कोई समझदार आदमी इस बात पर ोड़ा भी विचार करेगा तो उसे स्पष्ट ज्ञात हो ायगा कि यह सम्बन्ध कोरी कल्पना है। तथापि स प्रकार के व्यापक और दृढ़ विश्वास से यह ष्टी तरह प्रकट होता है कि छोटी छोटी, मामूली, सीधी-सादी बातों के विषय में भी लोग कितना कम विचार करते हैं और कार्य-कारण-सम्बन्ध का कितना कम पता लगाते हैं। और उदाहरण लीजिए। यदि लड़के की तबीयत ख़राब है तो किसी "जलर मलर" वाले आदमी से फूँक दला । यदि किसी को दौलत मिल ...ने से देवीजी पर कुछ भेंट चढ़ा दो। दवा-पानी की ज़रूरत नहीं। इस प्रकार के मिथ्या विश्वासों से भी यही परिणाम निकलता है कि जन-साधारण का कार्य-कारण-सम्बन्धी ज्ञान बहुत ही सङ्कुचित और असङ्गत है। जब इन छोटी छोटी बातों के विषय में—जो ज़रा भी पेचीदा नहीं और जिनकी परीक्षा जब चाहें तब हो सकती है—यह हाल है तब पेचीदा, दुर्ज्ञेय, दुष्परीक्ष्य, राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक मामलों का कहना ही क्या है? "यदि सरकार अमुक बात कर दे तो हमारे सारे कष्ट दूर हो जायँ"। "यदि वर्णाश्रम फिर पहले की तरह व्यापित हो जाय तो देश का पूर्ण रूप से उद्धार हो जाय"। "यदि ब्राह्मण अपना कर्तव्य समझने लगें तो भारत उन्नति के शिखर पर पहुँच जाय"—इस तरह की बातें अशिक्षितों और अर्ध-शिक्षितों के मुख से बहुधा सुनने में आती हैं। वे कभी पक्षपातरहित मन से विचार नहीं करते कि इन उपायों से लाभ के बदले हानि तो न होगी? क्या यह या ऐसे ही उपाय पहले कभी हमारे या दूसरे देशों में प्रयुक्त नहीं हुए? यदि नहीं तो उनके प्रयोग के बिना उन देशों का कुछ बिगड़ा या नहीं? यदि प्रयुक्त थे तो उनका क्या परिणाम हुआ? हमारी विशेष सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक परिस्थितियों में यही उपाय समुचित है या इनसे भी कोई अच्छे? ऐसे सैकड़ों प्रश्न एक तो ध्यान ही में नहीं आते और यदि किसी तरह आते भी हैं तो टाल दिये जाते हैं।

बड़ा आश्चर्य तो इस बात पर होता है कि शिक्षित लोग—अपने अपने विषय के प्रामाणिक आचार्य—भी उसी विचारशून्य तर्क प्रणाली का अवलम्बन करते हैं जिसका ज़िक्र ऊपर किया गया है। क्या देश में रोशनी हो रही है और दीपक नहीं जल रहा है? अच्छा, आज आप में रोशनाई घोल दो। बस सब ठीक हो जायगा। यह कोई नहीं सोचता कि दवात और क़लम में कितना रेम्पोंस अर्थ होता है। बिल्लियों की दुर्दशा

के कारण, अकालों के कारण, पशुरोगों के कारण गोवंश की कितनी क्षति हो रही है। इस पर कोई नहीं विचार करता कि भारत ऐसे विशाल देश में, गोशाला-प्रणाली से, गो-हत्या में भला कितनी कमी हो सकेगी? क्या मुसलमानों से दङ्गा फ़िसाद करने से गो-रक्षा के आन्दोलन को लाभ पहुँच सकता है? क्या गोशालाओं का प्रबन्ध चरित्रहीन मनुष्यों के हाथ में सौंप देने से चोरी, छल-कपट, कुप्रबन्ध और सार्वजनिक अविश्वास की आशङ्का नहीं? सारांश यह कि न तो लोग कारणों का अनुसन्धान करते हैं, न उपायों के प्रयोग में विचारशीलता से काम लेते हैं। यदि कोई साधारण आदमी किसी शास्त्र पारङ्गत डाक्टर का विरोध करके बुखार या हैजे की चिकित्सा पर अपना मत प्रकट करे तो डाक्टर को आश्चर्य और क्रोध होगा। वह कहेगा कि जिस आदमी ने ज़रा भी चिकित्सा-शास्त्र का अध्ययन नहीं किया—डाक्टरी बातों का ज़रा भी अनुभव नहीं प्राप्त किया—उसको इस विषय पर मत देने का क्या अधिकार? पर यही डाक्टर साहब बड़े बड़े राजनैतिक और सामाजिक प्रश्नों पर, जिनके विषय में उन्होंने दो चार लेखों को छोड़ और कुछ नहीं पढ़ा, बेधड़क अपना मत प्रकट करते हैं। इंजीनियर, वकील, व्यापारी, कारीगर आदि का भी यही हाल है। संसार की और सब बातों में विशेष ज्ञान, विशेष विचार और विशेष अनुभव की आवश्यकता समझी जाती है। पर समझे बूझे और देखादेखी विषयों के निर्णय के लिए किसी विशेष गुण की आवश्यकता नहीं समझी जाती। लोग बड़ी जल्दी हर बात का निश्चय कर लेते हैं।

संसार में बहुत से लोग निर्धन हैं, भूख प्यास से व्याकुल हैं, अच्छे अच्छे वस्त्रों और घरों के अभाव से शोचनीय दशा में पड़े हुए हैं। इस दुरवस्था का सुधार करने के लिए यह उपाय बताया जाता है कि धनी लोग भूखों को भोजन करायें, सदावर्त खोल दें और खूब दान दें। पर यदि हम सोचें कि जो मुफ़्त बाँट दिया जाता है वह उद्योगधन्धे में लगा जाने पर देश की समृद्धि बढ़ा कर जनसाधारण की सम्पत्ति की वृद्धि कर सकता है; यदि हम सोचें कि दान देने से आलस्य और निरुद्यमता, अतएव, दुराचार की वृद्धि होती है और लम्बन की माया घट जाती है; यदि हम सोचें कि आलसियों और निरुद्यमी लोगों को धन देने से अनेक निरालसी और उद्यमी मनुष्य दुर्दशा में पड़ जाते हैं, तो हमें इस उपाय की व्यर्थता और हानि स्पष्ट मालूम हो जायगी।

एक और उदाहरण लीजिए। हिन्दुओं में बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, अनमेल-विवाह, विवाहों में फ़िज़ूल ख़र्ची, जाति-पाँति के व्यर्थ झगड़े इत्यादि बहुत सी सामाजिक कुरीतियाँ प्रचलित हैं। उन्हें दूर करने के लिए सैकड़ों सभायें स्थापित हैं—ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों की सभायें, कान्यकुब्जों, गौड़ों, सनाढ्यों, अग्रवालों, खण्डेलवालों, पल्लीवालों, कायस्थों और कलवारों तक की भी सैकड़ों सभायें हैं। पर इन सभाओं के कार्यकर्त्ताओं ने यह विचार नहीं किया कि हमारी सारी सामाजिक कुरीतियों की जड़ वर्ण-व्यवस्था है। जातियों की ये छोटी छोटी सभायें जो वर्ण-व्यवस्था के भेद को और भी पुष्ट करती हैं, लाभ के साथ साथ हानि भी पहुँचावेंगी और व्यापक सुधार के आन्दोलनों के मार्ग में विघ्न डालेंगी।

इस प्रकार के बीसों उदाहरण दिये जा सकते हैं। मनुष्य-स्वभाव का पता लगाना बड़ा कठिन है। जो उपाय एक उद्देश से किये जाते हैं उनसे कोई दूसरा ही उद्देश सिद्ध होता है। हमें आशा और विश्वास था कि इस काण्ड का यह फल होगा। पर जब काण्ड किया गया तब कुछ और ही दृश्य हुआ। आपने वहाँ अपना या सार्वजनिक काम बनाया है, जिसमें बड़े परिश्रम और बहुत समय की आवश्यकता है। पर काम आरम्भ किसी मुसलमान बादशाह का मीर [illegible]

रको निराश होना पड़ता है। यही काम यदि
ती ऐसे मनुष्य को सौंपा जाता जिसके पास
ना ही काम बहुत है, अतएव, जिसे कम फ़ुरसत
तो बहुत सम्भव है कि वह आपका भी काम
दी और अच्छी तरह कर देता। किसी किसी
यह धारणा है कि जो लड़के बहुत पढ़ते हैं
बहुत तेज़ होते हैं। पर अध्यापक लोग जानते
कि बहुत पढ़ने वाले लड़के बहुधा मन्दबुद्धि
ते हैं। लोग समझते हैं कि जो बहुत पढ़ता है
बहुत बुद्धिमान होना है। पर बहुधा प्रतिकूल
स्था दृष्टिगोचर होती है। लोग समझते हैं कि
तना ही कड़ा दण्ड दिया जायगा उतने ही कम
राध होंगे। पर संसार का अनुभव और इति-
स बतलाता है कि दण्ड की कड़ाई अपराधों की
ख्या घटाती है, और नम्रता का प्रयोग अपराधों
संख्या घटाता है। लोग समझते हैं कि मारने
टने से लड़के ज़ियादह पढ़ते हैं तथा विनयशील
र सत्स्वभाव वाले हो जाते हैं। पर मानसशास्त्र
र अध्यापनशास्त्र के आचार्य्य और अध्यापक
स स्वीकार करते हैं कि नम्रता और दया के
भाव से ही लड़के पढ़ने-लिखने और आचार-
वहार में अधिक उन्नति करते हैं। ये दृष्टान्त सिद्ध
ते हैं कि मनुष्य-स्वभाव के विषय में बिना
चे समझे कोई मत स्थिर कर लेना अनुचित है।
तिहास की अनेक घटनायें और संस्थायें भी यही
द्ध करती हैं। तो भी "शिक्षित", "सभ्य", "सु-
क्षित" महानुभाव बड़ी जल्दी कार्य-कारण
बन्ध स्थिर कर बैठते हैं। ज़रा देखिए तो सही,
पके चारों ओर की मामूली बातें भी कितने
रयसी कारणों से उत्पन्न हुई हैं। इतवार को
पकी छुट्टी रहती है। इसका कारण यह है कि
लायत वालियों ने, कोई १८०० वर्ष हुए, यहूदियों
देश का धर्म स्वीकार किया था। यह उसी
र्म ग्रन्थ का फल है। यहूदियों ने इतवार को
म न करने का सिद्धान्त कहाँ से और कैसे
खा—बस यही इजारों वर्ष का इतिहास
देखने से लगेगा। अपने त्योहारों और रीति रिवाजों के कारणों का पता भी हज़ारों वर्ष के इतिहास से ही लग सकता है। अपने राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक, औद्योगिक, व्यापारिक सिद्धान्तों और अवस्थाओं के कारण ढूँढने के लिए आपको अपने ही देश के नहीं, किन्तु लगभग सारे सभ्य और असभ्य संसार के इतिहासों, वर्तमान विचारों और अवस्थाओं की खोज करनी पड़ेगी। भविष्यत् के लिए मार्ग स्थिर करने को आपको अनेक बातों की जाँच-पड़ताल करनी पड़ेगी, उनका वर्गी-करण करना पड़ेगा, उनकी परस्पर तुलना करनी पड़ेगी। तब कहीं आप सिद्धान्त स्थिर कर सकेंगे।

इन बातों का उत्तर यह दिया जायगा—"अजी, हमें इतनी जाँच-पड़ताल करने के लिए फ़ुरसत कहाँ। आख़िर संसार का काम तो रुक नहीं सकता। हमारे पास जो कुछ ज्ञान और अनुभव है उसी के सहारे काम करना उचित है"। बस यही प्रवृत्ति उन सारे भ्रान्त उपायों की जननी है जिनका ऊपर वर्णन किया गया है। पूर्वकाल में जब वैद्यक या चिकित्सा-शास्त्र का पूर्णतः आविर्भाव न हुआ था, लोग रोगों का निदान और यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने का कष्ट न उठाते थे और न इसकी आवश्यकता ही को वे अच्छी तरह समझते थे। अब भी उन देशों और प्रतिष्ठितों का यही हाल है जो सभ्यता के केन्द्रों से बहुत दूर हैं। इन लोगों को चाहे जो चाहे जैसी दवा बतावे ये उसी पर विश्वास कर लेते हैं और उसी का प्रयोग करते हैं। यहाँ ज्ञान की कमी है यहाँ अच्छी तरह निर्णय करने का सामान ही नहीं। जैसे जैसे चिकित्सा शास्त्र की उत्तरोत्तर उन्नति होती जाती है और चिकित्सा शास्त्र का ज्ञान सर्वसाधारण में फैलता जाता है वैसे ही वैसे लोग शास्त्रीय रीति और उसकी चिकित्सा के महत्त्व में कार्यकारिणी बुद्धि, विचार और निर्णय से काम लेने हैं।

इसी प्रकार जैसे जैसे समाज-शास्त्र की उन्नति होती जायगी और सामाजिक ज्ञान बढ़ता जायगा

वैसे ही वैसे सामाजिक विषयों में भी खोज, तर्क और निर्णय होने लगेंगे। समाज शास्त्र का यही काम है कि समाज सम्बन्धी सत्यों को इकट्ठा करे, उनका वर्गीकरण करे, उन्हें एक दूसरे से मिलावे, सामाजिक कार्य-कारणों का सम्बन्ध स्थिर करे; उन्नति, अवनति और परिवर्तन के सिद्धान्त—व्यापक नियम—निकाले। इसी मार्ग पर चलने से भविष्यत् प्रगति को सहायता पहुँच सकेगी; और किसी तरह नहीं।

सत्यशोधक।

---

## कुलीनता।

(पंडाक्ष)

विवेक बिना सुविचार सदना,
[illegible]

[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]

न मूढ़ ही हैं अविवेक में फँसे,
यही दशा है मतिमान-वृन्द की।
समर्थ हैं जो तन के विनाश में
स्वयं वही हैं तन पुत्र में पड़े॥
पढ़ा लिखा अर्जन ज्ञान का किया,
सुधी बने जीत सभा अनेक ली।
परन्तु पाई न विवेक-बुद्धि तो,
वृथा हुई सर्व-क्रिया अनुचिता॥
इसा दनों को कह दो मनीषियो,
बनी रहेगी कब लौं समाजता।
कुलीनता के मिस निन्दिता प्रथा,
कुदीन के व्याज विमूढ़-मण्डली॥
न काम आई प्रतिभा गरीयसी,
न बुद्धि-विद्या-विबुधों-भरी सभा॥
निराकृता जो न हुई प्रबन्ध से
प्रवर्द्धमाना कुमथा-विनाशिनी॥
स्व-जाति-सेवा-व्रत है विडम्बना,
समस्त व्याख्यान प्रचार-मात्र है।
विवेकशीला वर बुद्धि आजकी
विफल होवे यदि कार्य-काल में॥
समाज के सम्मुख जो समाधि में
जिसे उतारें करि कुत्सिता क्रिया
करें इसी को यदि कार्य का पड़े,
न सत्य तो है कुकृत्ति हेतुता॥
विवेक को कुण्ठकरी विडम्बना
अविश्वि कुरूढ़ि सदृशता।
[illegible]
इसे विवेक से विचक्षणों [illegible]
[illegible]

विधायिनी है गुरुता स्वदेश की,
विलोपिनी है कुल-वन्दनीयता।
विनाशिनी है सुख शान्ति जाति की।
अपूज्यता पूज्य अपूज्य पूज्यता ॥१२॥

अयोध्यासिंह उपाध्याय।

---

# हमारे सामाजिक ह्रास के कुछ कारणों का विचार।

## (१)

## मस्तिष्क का अमर्यादित व्यय।

इस सम्बन्ध में सबसे पहले यह प्रश्न उठता है—क्या सचमुच हमारे समाज का ह्रास हो रहा है? यदि इस प्रश्न का उत्तर "नहीं" हो, तो सामाजिक ह्रास के कारणों का विचार करना ही अप्रासङ्गिक अतएव अनुचित तथा व्यर्थ है। परन्तु इस लेख में लिखी गई बातों पर ध्यान देने से मालूम हो जायगा कि यथार्थ में, इस समय, हमारे समाज के ह्रास के बहुत से चिह्न देख पड़ रहे हैं। और, यदि, समय पर उपाय न किया जायगा तो ह्रास के ये चिह्न दृढ़ हो जायँगे। अतएव इस विषय पर विचार करना, अपने समाज का हित चाहने वाले प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है।

समाजशास्त्र के सिद्धान्तों के अनुसार किसी समाज की उन्नति, उत्क्रान्ति या विकास के लिए मनुष्य को तीन बातों की आवश्यकता होती है। (१) मनुष्य को स्वयं अपनी और अपने कुटुम्ब की रक्षा करने में समर्थ होना चाहिए; भोजन, वस्त्र आदि जो पदार्थ जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं उन्हें प्राप्त करना चाहिए; रोग, व्याधि, उपद्रव आदि करने वाले प्राणियों और मानव-शत्रुओं का निवारण करना चाहिए; अपनी सुरक्षित दशा को स्थायी करने के लिए ज्ञान, अनुभव और कलाकुशलता की नित्य वृद्धि करनी चाहिए। (२) सुख की वृद्धि करने और दुःख को दूर करने से मनुष्य की आयु बढ़ती है। इसलिए सुख की वृद्धि अथवा आयु की वृद्धि करना मनुष्य का दूसरा कर्तव्य है। (३) अपने कुटुम्ब और जाति की स्थिरता के लिए सन्तान-वृद्धि करना मनुष्य का तीसरा कर्तव्य है। सन्तान की संख्या अधिक हो, वह दीर्घायु हो और उसका शरीर सुदृढ़ तथा बलवान् हो। सारांश यह कि संरक्षण, सुख अथवा आयु की वृद्धि और स्थिरता यही तीन मानव-समाज के मुख्य उद्देश हैं। जो समाज इन तीनों की सफलता के लिए यत्न करता है उसी की उन्नति होती है। जो समाज अपनी चिरकालिक स्थिरता पर विशेष ध्यान देता है उसी का, प्रत्येक पीढ़ी में, विकास होता चला जाता है। यदि समाज-शास्त्र का यह सिद्धान्त सत्य और मान्य हो तो सोचना चाहिए कि हमारे समाज में जो चिह्न देख पड़ रहे हैं और जिनका वर्णन आगे चल कर किया जायगा, वे इस सिद्धान्त के अनुकूल हैं या प्रतिकूल। वर्तमान समय में हमारे समाज में कुछ ऐसी बातें देख पड़ रही हैं जिनसे हमारे समाज की चिरकालिक स्थिरता के बदले उसका ह्रास ही अधिक सूचित होता है।

कोई सौ वर्ष से अनेक नये नये विचारों और कार्यों की ओर हमारी प्रवृत्ति होने लगी है। सभ्यता की कुञ्जी हम लोगों के हाथ आ जाने से हम पश्चिमी विद्या का अभ्यास करने लगे। पहले पहल इस विद्या के तेज से हमारी आँखों में चकाचौंध सी आ गई। पश्चिमी सभ्यता की आश्चर्यजनक बातों से हमारा मन ऐसा मोहित हो गया कि हम में से अनेक लोग अपने पूर्वजों के आचार, विचार और धर्म को निरर्थक मानने लगे। अपनी प्राचीन सभ्यता हमें तुच्छ मालूम होने लगी और पश्चिमी देशों की प्रायः सभी बातें प्रशंसनीय और अनुकरणीय मालूम होने लगीं। केवल तर्क और युक्तिवाद का आश्रय करके उनके पहनावे, खान पान, रहन-सहन आदि की नकल करते करते उनका धर्म भी हम लोगों को प्रिय होने लगा। कुछ लोगों ने तो अपने धर्म का त्याग भी कर दिया। कुछ ने निराकार ईश्वर की पूजा के लिए नूतन धर्म-पन्थ स्थापित कर दिये।

यह अन्धी नक़ल—यह अन्धपरम्परा—और और बातों में भी प्रकट होने लगी। शहरों में रहने वालों की विद्वत्ता, योग्यता, आदर, सुख-चैन और प्रभाव को देख कर देहातों और क़स्बों में रहनेवालों का जी ललचाने लगा। पश्चिमी-विद्याविभूषित शहर निवासियों के व्यक्ति-स्वातन्त्र्य और आधिभौतिक सुखों की ओर देख कर बेचारे देहातियों की लालसा इतनी बढ़ गई कि वे भी अपने पार्वतन उपयोग-धन्धों को छोड़ कर और शहरों में जाकर पश्चिमी विद्या और

सभ्यता सीखने में अपना जीवन व्यतीत करने लगे। उच्च जाति के लोग तो पहले ही से इस विद्याशूल का पान करने में लग गये थे, अब अन्य जातियों ने भी सोचा कि हम क्यों इस सौभाग्य से वञ्चित रहें। बस, फिर क्या था, किसानों ने अपने हल-परशर एक ओर रख दिये और ए०, बी०, सी पढ़ने लगे! मेमारों ने अपनी करनी छोड़ दी, बढ़इयों ने अपना बसूला छोड़ दिया, सुनारों ने घन और निहाई छोड़ दी, नाइयों ने उस्तरा छोड़ दिया, बनियों ने अपना तराजू छोड़ दिया। सब लोग पश्चिमी सभ्यता का स्वर्गीय सुख पाने के लिए लालायित हो गये। यह दशा देख कर ब्राह्मण आदि श्रेष्ठ जातियों के लोग, जो पहले ही से विद्याध्ययन में लगे थे, जी में जलने लगे कि अब हमारी बपौती छिन जायगी। वे इन निकृष्ट जातियों से द्वेष करने लगे। खेद है कि हम लोग अपने उन प्राचीन व्यवसायों को छोड़ रहे हैं जिनमें शारीरिक परिश्रम की आवश्यकता थी और ऐसे व्यवसायों में लग रहे हैं जिनमें केवल बुद्धि या मस्तिष्क का परिश्रम अधिक है। वर्तमान दशा को देख कर यदि यह कहा जाय कि पश्चिमी विद्या और सभ्यता में पारङ्गत होना ही हमारे जीवन का प्रधान उद्देश हो गया है तो कुछ भी अतिशयोक्ति न होगी। प्रायः सभी माता-पिता अपने बच्चों से कहने लगे हैं—"यदि अँगरेज़ी न सीखोगे तो क्या भीख माँगोगे"! सारांश यह कि अपने प्राचीन धर्मतत्त्वों को तुच्छ समझना, केवल व्यक्ति-स्वातन्त्र्य और भौतिक सुखों की लालसा करना, शारीरिक श्रम को हीनता की दृष्टि से देखना, देहात का त्याग करके शहरों में रहना, और अपरिमित विद्या-व्यासङ्ग में समय बिताना ही, हमारी समझ में, समाज और राष्ट्र की उन्नति के लक्षण माने जा रहे हैं। ऐसी अवस्था में क्या हमको इन बातों पर विचार न करना चाहिए कि विद्या-व्यासङ्ग की अधिकता और मस्तिष्क के अतिव्यय से हमारे शिक्षित समाज पर क्या परिणाम हुए हैं, हो रहे हैं और होंगे? देहातों और कस्बों की बस्ती छोड़ कर—शारीरिक श्रम के व्यवसायों को छोड़ कर—शहरों में निवास करने से हमारे समाज की क्या हानि हो रही है? केवल तर्क और युक्तिवाद का आश्रय करके अपनी प्राचीन सभ्यता को तुच्छ मानने से—धार्मिक श्रद्धा के अभाव से—व्यक्ति-स्वातन्त्र्य और आधिभौतिक सुखोपभोगों की प्रवृत्ति के बढ़ जाने से—हमारे [illegible] हो रही है? अब हमको अपनी अन्धपरम्परा [illegible] विवेक शक्ति से काम लेना चाहिए। विवेक देखने पर मालूम होगा कि जिन बातों को हम अपने राष्ट्र की उन्नति के लिए हितावह [illegible] मानते चले आये हैं वही यथार्थ में हमारे [illegible] के कारण हैं। इस लेख में विचार किया [illegible] व्यासङ्ग की अधिकता—मानसिक के अपव्यय [illegible] हमारे समाज का ह्रास कैसे हो रहा है।

ऊपर जिस अन्धपरम्परा का उल्लेख किया उसकी सभ्यता के विषय में हमारे शिक्षित भाई [illegible] करेंगे। परन्तु अन्धपरम्परा से हमारा यह मतलब नहीं नूतन विद्या और सभ्यता निरुपयोगी है। हमारा मतलब यही है कि उनका रहस्य जानने की योग्यता अब तक [illegible] ने नहीं प्राप्त की। हम लोग पश्चिमी ज्ञान की अत्यल्प [illegible] से दुर्विदग्ध हो गये हैं। हम सिर्फ़ यही देखते हैं कि [illegible] विद्वत्ता हमारे नौकरों से, अथवा हमारे बूढ़े दादा [illegible] से, कितनी अधिक है। बस, इसी में हम फूले नहीं [illegible] हमारा सारा ज्ञान केवल शाब्दिक है—तात्त्विक ज्ञान [illegible] पास कुछ भी नहीं। पश्चिमी विद्या और सभ्यता की [illegible] मिल जाने पर भी, सोचिए तो सही, हम लोग पश्चिमी [illegible] के तत्त्ववेत्ताओं के सिद्धान्तों का आकलन करने में [illegible] सफल हुए हैं? पश्चिमी सभ्यता के रहस्यों को जान [illegible] कितने हिन्दुस्तानियों ने अपने देश, समाज, धर्म, [illegible] भाषा और व्यापार की उन्नति का प्रयत्न किया है? एक [illegible] विदेशी अधिकारी ने हमारे शिक्षित समुदाय को "सुपरफ़िशल ग्रेजुएट (Superficial Graduates) कहा है! [illegible] यह वचन कटु है तथापि क्या यह सत्य नहीं? सच तो [illegible] कि हमारा सभी काम अन्धपरम्परा से हो रहा है। [illegible] विदेशियों की सभ्यता का बाहरी अनुकरण करने [illegible] सन्तुष्ट हैं, उनकी सभ्यता के रहस्य का ज्ञान प्राप्त करने [illegible] उनकी सच्ची बराबरी करने में कई सदियाँ पिछड़े हुए [illegible]

अच्छा। अब यह जानने के पहले कि विद्याभ्यास [illegible] अतिरेक से—मस्तिष्क के अपरिमित व्यय से—हमारे [illegible] का ह्रास कैसे हो रहा है, यह जान लेना चाहिए कि [illegible] समय में हमारे समाज की दशा कैसी [illegible] स

सभ्यता सीखने में अपना जीवन व्यतीत करने लगे। वह जाति के लोग तो पहले ही से इस विषामृत का पान करने में लग गये थे, अब अन्य जातियों ने भी सोचा कि हम क्यों इस सौभाग्य से वञ्चित रहें। बस, फिर क्या था, किसानों ने अपने हल-बक्खर एक ओर रख दिये और ए०, बी०, सी पढ़ने लगे। मेमारों ने अपनी कमी छोड़ दी, बढ़इयों ने अपना बसुला छोड़ दिया, लुहारों ने घन और निहाई छोड़ दी, नाइयों ने उस्तरा छोड़ दिया, बनियों ने अपना तराजू छोड़ दिया। सब लोग पश्चिमी सभ्यता का स्वर्गीय सुख पाने के लिए लालायित हो गये। यह दशा देख कर ब्राह्मण आदि श्रेष्ठ जातियों के लोग, जो पहले ही से विद्याध्ययन में लगे थे, जी में जलने लगे कि अब हमारी बपौती छिन जायगी। वे इन निकृष्ट जातियों से द्वेष करने लगे। खेद है कि हम लोग अपने उन प्राचीन व्यवसायों को छोड़ रहे हैं जिनमें शारीरिक परिश्रम की आवश्यकता थी और ऐसे व्यवसायों में लग रहे हैं जिनमें केवल बुद्धि या मस्तिष्क का परिश्रम अधिक है। वर्तमान दशा को देख कर यदि यह कहा जाय कि पश्चिमी विद्या और सभ्यता में पारङ्गत होना ही हमारे जीवन का प्रधान उद्देश हो गया है तो कुछ भी अतिशयोक्ति न होगी। प्रायः सभी माता-पिता अपने बच्चों से कहने लगे हैं—"यदि अँगरेज़ी न सीखोगे तो क्या भीख माँगोगे"! तात्पर्य यह कि अपने प्राचीन धर्मतत्त्वों को तुच्छ समझना, केवल व्यक्ति-स्वातन्त्र्य और लौकिक सुखों की लालसा करना, शारीरिक श्रम को हीनता की दृष्टि से देखना, देहात का त्याग करके शहरों में रहना, और अपरिमित विद्या-व्यासङ्ग में समय बिताना ही, हमारी समझ में, समाज और राष्ट्र की उन्नति के लक्षण माने जा रहे हैं। ऐसी अवस्था में क्या हमको इन बातों पर विचार न करना चाहिए कि विद्या व्यासङ्ग की अधिकता और मस्तिष्क के अतिव्यय से हमारे शिक्षित समाज पर क्या परिणाम हुए हैं, हो रहे हैं और होंगे? देहातों और कस्बों को बरबाद छोड़ कर—शारीरिक श्रम के व्यवसायों को छोड़ कर—नगरों में निवास करने से हमारे समाज की क्या दुर्दशा हो रही है? केवल रटे और घुसिराए का आश्रय करके अपनी बुद्धि-शक्ति को तुच्छ मानने से—पाश्चिमिक श्रद्धा के आधार से—व्यक्ति-स्वातन्त्र्य और अपरिमित भोगों की प्रवृत्ति के बढ़ जाने से क्या हानि हो रही है? अब हमको अपनी अन्धपरम्परा विवेक-शक्ति से काम लेना चाहिए। विचार देखने पर मालूम होगा कि जिन बातों को अपने राष्ट्र की उन्नति के लिए हितदायक हम मानते चले आये हैं वही यथार्थ में हमारे पतन के कारण हैं। इस लेख में विचार किया व्यासङ्ग की अधिकता—मस्तिष्क के हमारे समाज का ह्रास कैसे हो रहा है।

ऊपर जिस अन्धपरम्परा का उल्लेख किया उसकी सभ्यता के विषय में हमारे शिक्षित करेंगे। परन्तु अन्धपरम्परा से हमारा यह मतलब नूतन विद्या और सभ्यता निरुपयोगी है। हमारा यह यही है कि उसका रहस्य जानने की योग्यता अब तक ने नहीं प्राप्त की। हम लोग पश्चिमी ज्ञान की से दुर्विदग्ध हो गये हैं। हम सिर्फ़ यही देखते हैं विद्वत्ता हमारे नौकरों से, अथवा हमारे बूढ़े दादा से, कितनी अधिक है। बस, इसी में हम फूले नहीं हमारा सारा ज्ञान केवल शाब्दिक है—तात्त्विक ज्ञ पास कुछ भी नहीं। पश्चिमी विद्या और सभ्यता मिल जाने पर भी, सोचिए तो सही, हम लोग पश्चि के तत्त्ववेत्ताओं के सिद्धान्तों का आकलन करने में सफल हुए हैं? पश्चिमी सभ्यता के रहस्यों को किसने हिन्दुस्तानियों ने अपने देश, समाज, धर्म, भाषा और व्यापार की उन्नति का प्रयत्न किया है? विदेशी अधिकारी ने हमारे शिक्षित समुदाय को सुपरफ़िशल ग्रेजुएट (Superficial Graduates) कहा। यह वचन कटु है तथापि क्या यह सत्य नहीं? सच तो कि हमारा सभी काम अन्धपरम्परा से हो रहा है। विदेशियों की सभ्यता का बाहरी अनुकरण करने सन्तुष्ट हैं, उनकी सभ्यता के रहस्य का ज्ञान प्राप्त करने उनकी सच्ची बराबरी करने में कई सदियाँ बिताई हुए।

अच्छा। अब यह जानने के पहले कि अतिरेक से—मस्तिष्क के अपरिमित व्यय से—हमारे का ह्रास कैसे हो रहा है, यह जान लेना चाहिए कि समय में हमारे समाज की दशा कैसी थी। पचास, सा

हमारे पूर्वजों को, छोटी उम्र में, विद्याभ्यास और मान-
ाम करने में इतना खून न सुखाना पड़ता था। उस
े लोग अपने घर में या समीप की किसी पाठशाला
लिखना, पढ़ना, हिसाब किताब आदि सीख कर
जीवन-निर्वाह सुख से कर लेते थे। ब्राह्मण वर्ण के
लोग संस्कृत भाषा, और शास्त्रों का अध्ययन करने में
क समय बिताते थे। पर उनके आचार, रहन-सहन, खान-
ादि के कारण उनकी शारीरिक शक्ति का ह्रास न होता
हमारे पूर्वजों को अपने जीवन-निर्वाह के लिए इतना
सेक परिश्रम और मानसिक शक्ति का व्यय न करना
ा था जितना वर्तमान समय में सुशिक्षित तथा विद्वान्
ाने वाले वकील, बैरिस्टर, डाक्टर, प्रोफ़ेसर, इञ्जीनियर
े लोगों को करना पड़ता है। उन लोगों का
ाभ्यास बीस वर्ष की अवस्था तक, पितृत्व-दशा
ाने के पहले ही, पूरा हो जाया करता था। व्यावहारिक
न के लिए उन्हें किसी पाठशाला में न जाना पड़ता था।
ह अनुभव से वे लोग सब व्यवहारों में दक्ष हो जाया
ते थे। तात्पर्य यह कि उनको अपनी आयु की प्रथम
श्था में बहुत मानसिक परिश्रम न करना पड़ता था। इस
ए व्यावहारिक कामों में ज्यों ज्यों उनका अनुभव बढ़ता
ाता था त्यों त्यों उनकी बुद्धि अधिक तीव्र और परिपक
ाती जाती थी। वे लोग अपनी मध्यम अवस्था में, कठिन
। कठिन काम करने में अपना तेज प्रकट कर सकते थे।
द्धावस्था में भी वे नीरोग तथा तगड़ी बने रहते थे।
नका उत्साह, आवेश, निश्चय और शारीरिक श्रम करने की
ाक्ति अन्त तक बनी रहती थी। ऐसे वृद्ध पुरुष अब भी
कहीं कहीं देख पड़ते हैं।

यह बात छिपी नहीं है कि वर्तमान समय में इस देश के
युवकों के सिर पर विद्याभ्यास का कितना बड़ा और कितना
भारी बोझ लाद दिया गया है। सोचना चाहिए कि जिनके
बाप-दादों ने पिछली कई पीढ़ियों तक विद्याभ्यास में विशेष
परिश्रम नहीं किया उनके बालकों और नव-युवकों को, स्पर्धा
और ईर्षा के वर्तमान काल में, पश्चिमी विद्या और सभ्यता का
सामना करने में कितनी कठिन सिरतोड़ मेहनत करनी पड़ती है। पहले
जितनी मिहनत की जाती थी उससे अब कई गुना अधिक करनी
पड़ती है। प्राचीन समय के शिक्षित समाज में सौ में पांच
से अधिक लोग विद्याभ्यास में अपना जीवन नहीं बिताते
थे। परन्तु अब तो हमारे शिक्षित समाज में सौ में पंचानवे
को अपनी बाल्यावस्था और युवावस्था का सारा समय केवल
विद्याभ्यास ही में व्यतीत करना पड़ता है। पहले, बीस वर्ष
की अवस्था के पहले ही विद्याध्ययन पूरा हो जाता था। अब
बीस-बाईस वर्ष की कौन कहे, पितृत्व-दशा के प्राप्त हो
जाने पर भी, हमारे नव युवकों की विद्यार्थि-दशा पूरी नहीं
होती। जिस विद्या और सभ्यता के सीखने में पश्चिमी देशों
के निवासियों ने सैकड़ों वर्ष लगा दिये हैं उसको एक दम
प्राप्त कर लेने का भार गत दो तीन पीढ़ियों पर आ पड़ा।
इस अभ्यास की अधिकता का परिणाम क्या होगा? उत्तर
स्पष्ट है—मस्तिष्क का सङ्कोच, बुद्धि की क्षीणता, शारीरिक
शक्ति की हानि और सन्तान की निर्बलता - अर्थात् सामा-
जिक ह्रास!

सामाजिक ह्रास के कुछ चिह्न सर्वत्र दिखाई दे रहे हैं।
सन्देह करने की आवश्यकता नहीं कि इतने थोड़े समय में ह्रास
के लक्षण कैसे प्रकट हो गये। शरीर-शास्त्र का सिद्धान्त है कि
पिता के विकृत शरीर और मस्तिष्क के पूरे परिणाम एक ही
पीढ़ी में सन्तान में प्रकट हो जाते हैं। यदि सन्तान भी अपने
पिता ही के मार्ग का अवलम्ब करे तो ये परिणाम दूसरी पीढ़ी
में अधिक स्पष्ट और दृढ़ हो जाते हैं। सामाजिक ह्रास का यह
क्रम हमारे शिक्षित कुटुम्बों में बद्धमूल हो रहा है। यदि यह
क्रम इसी तरह जारी रहा तो भविष्यत् में शिक्षित समाज का
नाश हुए बिना न रहेगा। वर्तमान समय के विद्यार्थियों और
शिक्षित विद्वानों की अकाल-मृत्यु, उनकी शारीरिक दुर्बलता,
उनकी सन्तति की अशक्तता, चित्त की उदासीनता, सदैव
किसी न किसी रोग या व्याधि से पीड़ित रहना इत्यादि, ऐसे
अनेक चिह्न हैं जिनसे निस्सन्देह ही हमारे शिक्षित समाज
का ह्रास सूचित होता है। हिन्दुस्तान के शिक्षित कुटुम्बों
में—विशेषतः उन कुटुम्बों में जिनमें कुछ पीढ़ियों से विद्या-
ध्ययन और मानसिक परिश्रम के सिवा और कुछ काम नहीं
किया जाता—ऐसे बहुत कम होंगे जिनको अपने तरुण
पुरुषों की अकालिक आकस्मिकता, रुग्णावस्था या मृत्यु पर
शोक न करना पड़ता हो! हमने कई युवकों को देखा है
जिन्होंने पचीस-तीस वर्ष तक विद्याध्ययन किया, दस पांच
वर्ष तक गृहस्थी का सुख भोगा, फिर मध्यम अवस्था ही में,

पहले हमारे पूर्वजों को, छोटी उम्र में, विद्याभ्यास और मानसिक श्रम करने में इतना ख़ून न सुखाना पड़ता था। उस समय वे लोग अपने घर में या समीप की किसी पाठशाला में कुछ लिखना, पढ़ना, हिसाब किताब आदि सीख कर अपना जीवन-निर्वाह सुख से कर लेते थे। ब्राह्मण वर्ण के कुछ लोग संस्कृत भाषा, और शास्त्रों का अध्ययन करने में अधिक समय बिताते थे। पर उनके आचार, रहन-सहन, खान-पान आदि के कारण उनकी शारीरिक शक्ति का ह्रास न होता था। हमारे पूर्वजों को अपने जीवन-निर्वाह के लिए इतना मानसिक परिश्रम और मानसिक शक्ति का व्यय न करना पड़ता था जितना वर्त्तमान समय में सुशिक्षित तथा विद्वान् कहलाने वाले वकील, बैरिस्टर, डाक्टर, प्रोफ़ेसर, इञ्जीनियर आदि लोगों को करना पड़ता है। उन लोगों का विद्याभ्यास बीस वर्ष की अवस्था तक, पितृत्व-दशा में आने के पहले ही, पूरा हो जाया करता था। व्यावहारिक ज्ञान के लिए उन्हें किसी पाठशाला में न जाना पड़ता था। प्रत्यक्ष अनुभव से वे लोग सब व्यवहारों में दक्ष हो जाया करते थे। तात्पर्य्य यह कि उनको अपनी आयु की प्रथम अवस्था में बहुत मानसिक परिश्रम न करना पड़ता था। इस लिए व्यावहारिक कामों में ज्यों ज्यों इनका अनुभव बढ़ता जाता था त्यों त्यों इनकी बुद्धि अधिक तीव्र और परिपक्व होती जाती थी। वे लोग अपनी मध्यम अवस्था में, कठिन से कठिन काम करने में अपना तेज प्रकट कर सकते थे। वृद्धावस्था में भी वे नीरोग तथा तन्दुरुस्त बने रहते थे। इनका उत्साह, आवेश, निश्चय और शारीरिक श्रम करने की शक्ति अन्त तक बनी रहती थी। ऐसे वृद्ध पुरुष अब भी कहीं कहीं देख पड़ते हैं।

यह बात छिपी नहीं है कि वर्त्तमान समय में इस देश के युवकों के सिर पर विद्याभ्यास का कितना बड़ा और कितना भारी बोझ लाद दिया गया है। सोचना चाहिए कि जिनके बाप दादों ने पिछली कई पीढ़ियों तक विद्याभ्यास में विशेष परिश्रम नहीं किया उनके बालकों और नव-युवकों को, स्पर्धा और ईर्षा के वर्त्तमान काल में, पश्चिमी विद्या और सभ्यता का सामना करने में कैसी कठिन मिहनत करनी पड़ती है। पहले जितनी मिहनत की जाती थी उससे अब कई गुना अधिक करनी पड़ती है। प्राचीन समय के शिक्षित समाज में सौ में पांच से अधिक लोग विद्याव्यासङ्ग में अपना जीवन नहीं बिताते थे। परन्तु अब तो हमारे शिक्षित समाज में सौ में पंचानवे को अपनी बाल्यावस्था और युवावस्था का सारा समय केवल विद्याभ्यास ही में व्यतीत करना पड़ता है। पहले, बीस वर्ष की अवस्था के पहले ही विद्याध्ययन पूरा हो जाता था। अब बीस-बाईस वर्ष की कौन कहे, पितृत्व-दशा के प्राप्त हो जाने पर भी, हमारे नव युवकों की विद्यार्थि दशा पूरी नहीं होती। जिस विद्या और सभ्यता के सीखने में पश्चिमी देशों के निवासियों ने सैकड़ों वर्ष लगा दिये हैं उसको एक दम प्राप्त कर लेने का भार गत दो तीन पीढ़ियों पर आ पड़ा। इस अभ्यास की अधिकता का परिणाम क्या होगा? उत्तर स्पष्ट है—मस्तिष्क का सदोष, बुद्धि की क्षीणता, शारीरिक शक्ति की हानि और सन्तान की निर्बलता—अर्थात् सामाजिक ह्रास।

सामाजिक ह्रास के कुछ चिह्न सर्वत्र दिखाई दे रहे हैं। सन्देह करने की आवश्यकता नहीं कि इतने थोड़े समय में ह्रास के लक्षण कैसे प्रकट हो गये। शरीर-शास्त्र का सिद्धान्त है कि पिता के विकृत शरीर और मस्तिष्क के बुरे परिणाम एक ही पीढ़ी में सन्तान में प्रकट हो जाते हैं। यदि सन्तान भी अपने पिता ही के मार्ग का अवलम्ब करे तो ये परिणाम दूसरी पीढ़ी में अधिक स्पष्ट और दृढ़ हो जाते हैं। सामाजिक ह्रास का यह क्रम हमारे शिक्षित कुटुम्बों में बद्धमूल हो रहा है। यदि यह क्रम इसी तरह जारी रहा तो भविष्यत् में शिक्षित समाज का नाश हुए बिना न रहेगा। वर्त्तमान समय के विद्यार्थियों और शिक्षित विद्वानों की अकाल-मृत्यु, उनकी शारीरिक दुर्बलता, उनकी सन्तति की अल्पता, चित्त की उदासीनता, सदैव किसी न किसी रोग या व्याधि से पीड़ित रहना इत्यादि, ऐसे अनेक चिह्न हैं जिनसे निस्सन्देह ही हमारे शिक्षित समाज का ह्रास सूचित होता है। हिन्दुस्तान के शिक्षित कुटुम्बों में—विशेषतः उन कुटुम्बों में जिनमें कुछ पीढ़ियों से विद्याध्ययन और मानसिक परिश्रम के सिवा और कुछ काम नहीं किया जाता—ऐसे बहुत कम होंगे जिनको अपने लड़के पुत्रों की अकालिक अल्पायुता, दुरवस्था या मृत्यु पर शोक न करना पड़ता हो! हमने कई युवकों को देखा है जिन्होंने पच्चीस-तीस वर्ष तक विद्याध्ययन किया, दस पांच वर्ष तक गृहस्थी का सुख भोगा, फिर मध्यम अवस्था ही में,

दो चार छोटे छोटे बच्चों को छोड़ कर, परलोक का राज्य लिया। ऐसों के वृद्ध माता-पिताओं की अवस्था और दुःखद स्थिति का वर्णन करना कठिन है। हमारी शारीरिक शक्ति के ह्रास के चिह्न जगह जगह देख पड़ रहे हैं। हम लोगों को अपनी यथार्थ दशा न भूलनी चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि पश्चिमी विद्या का अभ्यास करके कुछ लोग प्रसिद्ध लेखक, ग्रन्थकार, वक्ता, अध्यापक, वकील, बारिस्टर, डाक्टर, कौंसिल के मेम्बर और सिविलियन हो गये हैं परन्तु ये लोग उन तारों के समान हैं जो आकाश में क्षण भर चमक उठते हैं और अपनी चमक दमक से सारे आकाश को प्रदीप्त करके थोड़ी ही देर में लुप्त हो जाते हैं। सोच करना चाहिए कि इन सुप्रसिद्ध अल्पायु पुरुषों के कुटुम्बों और सन्तानों की दशा कैसी है। जब तक शारीरिक शक्ति का ह्रास होता रहेगा तब तक हम किसी राष्ट्रीय महत्व के कार्य का सम्पादन करने में समर्थ न हो सकेंगे। होलर नामक इतिहासकार ने हमारे विषय में जो लिखा है उसका सारांश यह है—"शिक्षा के प्रभाव से हम ईरानी और गम्भीर मनुष्यों के समान बातें करना सीख लेंगे; परन्तु हमारे सब कार्य बालकों ही के समान होंगे।"

शारीरिक शक्ति के ह्रास के साथ साथ बुद्धि के भी ह्रास के चिह्न दिखाई देने लगे हैं। यह अनुभव से सिद्ध है कि आज कल के विद्यार्थी विद्यालयों का बुद्धि-सामर्थ्य और मानसिक स्फूर्ति, उनकी अन्तिम परीक्षा के बाद ही, समाप्त हो जाती है। वे लोग न तो अपनी बुद्धि की कुछ विशेष उन्नति कर सकते हैं और न कोई नूतन कठिन कार्य करने में स्थिर, निडर, तथा धैर्य ही दिखा सकते हैं। [illegible] और [illegible] का [illegible] [illegible] [illegible]

। अल्प समय में इतना अधिक मानसिक श्रम करें कि
इम पश्चिमी सभ्यता और विद्वत्ता की चोटी पर जा
! इस प्रयत्न में हमारा शरीर निर्बल हो जाय और
री बुद्धि क्षीण हो जाय तो भी कुछ परवा नहीं ! परन्तु,
ण रहे, अल्प समय में अपरिमित विद्याभ्यास करने से
रे शरीर और हमारी बुद्धि का ही ह्रास न होगा, किन्तु
री सन्तति की कर्तृत्व शक्ति का भी नाश हो जायगा ।

जिनको सुख, समाधान और जीवन-निर्वाह के साधनों
अनुकूलता है; जिनको विद्याध्ययन करने में अधिक
: या उतावली नहीं करनी पड़ती, और जिनकी बुद्धि बहुत
न है—उन लोगों पर भी विशेष ज्ञान प्राप्ति तथा विचार-
र्य का अनिष्ट परिणाम हुए बिना नहीं रहता । इस
ा में जिन लोगों को ऐसी अनुकूलता नहीं उन पर
र्थात् हमारे वर्त्तमान शिक्षित समाज पर ) कितना अधिक
। परिणाम होगा, इसकी कल्पना तक नहीं की जा
इती । जगत् के इतिहास की ओर देखने से मालूम होता
कि जो लोग किसी विशेष ज्ञान में अत्यन्त प्रवीण और
सिद्ध हो गये हैं उनमें से अधिकांश सन्तान-हीन थे,
विवाहित भी थे । हमारे आधुनिक शिक्षित समाज का,
त पचास साठ वर्ष का, इतिहास देखा जाय तो यही
दित होगा कि बहुतेरे सुप्रसिद्ध विद्वान् सन्तान हीन हैं,
ार यदि किसी के सन्तान है भी तो वह अपने कुल की
ामा बढ़ाने के बदले उसकी विडम्बना ही का कारण है ।
ात्पर्य यह कि बुद्धि का प्रकर्ष—मस्तिष्क का अमर्यादित
यय—सन्तान के लिए हानिकारक है ।

कुछ लोग यह कहा करते हैं कि पिता की विद्वत्ता
जितनी अधिक होगी उतनी ही, अथवा उससे भी अधिक,
विद्वत्ता उसकी सन्तान की होगी । परन्तु यह विश्वास
सिद्धान्त तथ और अनुभव के विरुद्ध है । शिक्षित पिता
और उसके पुत्र की बुद्धि में सदा ही व्यस्त परिमाण
ही (inverse ratio) देख पड़ता है । आज कल के
मुन्सिफ़, तहसीलदार, डिप्टी कलेक्टर, वकील, डाक्टर, शिक्षक,
प्रोफ़ेसर आदि शिक्षित सज्जनों से पूछिए—"महाशय, जब
आप अपने लड़के की उम्र के थे उस समय आपकी जैसी
बुद्धि थी, क्या वैसी ही बुद्धि इस समय आपके लड़के की
भी है ? अथवा, जिस उम्र में, जितने परिश्रम से, जितनी
विद्वत्ता आपने प्राप्त कर ली थी, क्या उतनी ही उम्र में,
उतने ही परिश्रम से, उतनी ही विद्वत्ता आपके लड़के ने
भी प्राप्त की है या प्राप्त करने के लक्षण उसमें देख पड़ते
हैं ? सब बातों का विचार करके कहिए कि आपकी सन्तान
की बुद्धि आप से कम है, अथवा अधिक है, अथवा बराबर ?" हमारा विश्वास है, इन प्रश्नों का यही उत्तर
मिलेगा—"आज कल के लड़कों की बुद्धि बहुत मन्द देख
पड़ती है; उन्हें विद्याध्ययन में अधिक मिहनत करनी पड़ती
है" । पाठशालाओं के शिक्षक और कालेजों के अध्यापक
भी कहते हैं—'विद्वान् और सुशिक्षित पुरुषों के लड़के
किसी काम के नहीं रहते—उनमें अपने पिता का कुछ भी
तेज नहीं देख पड़ता" । जब इस शोचनीय दशा पर चर्चा
होने लगती है तब कोई गृह-शिक्षा को दोष देता है, कोई
माता-पिता के प्यार को दोष देता है, कोई लड़कों के
खिलाड़ी और आलसीपन को दोष देता है, कोई शिक्षकों
और अध्यापकों को दोष देता है और कोई शिक्षा-पद्धति
ही को सब दोषों की जड़ समझता है । यदि इन बातों में
कुछ न्यूनता देख पड़ती है तो चारों ओर से पुकार होने
लगती है कि बस, यही हमारी अवनति का सच्चा कारण
है । जब तक इसमें सुधार न होगा तब तक हमारी उन्नति
नहीं हो सकती । परन्तु, स्मरण रहे कि ये बातें हमारी
अवनति का—हमारे सामाजिक ह्रास का—हमारी सन्तान
की बुद्धि की क्षीणता और शारीरिक दुर्बलता का—सच्चा
कारण नहीं । सच्चा कारण यह है कि हम लोग अल्प समय
में, विद्याभ्यास करने में, अमर्यादित मानसिक श्रम और
मस्तिष्क का व्यय करके स्वयं ही अपने शरीर और अपनी बुद्धि
को निर्बल कर डालते हैं । इस प्रकार हम अपनी सन्तान
की भी कर्तृत्व-शक्ति का नाश कर देते हैं ।

वर्त्तमान समय में जो लोग अपने को शिक्षित और
विद्वान् समझते हैं उनको सोचना चाहिए कि हमारे बाप-
दादे कितने जिले पढ़े और कितने विद्वान थे । इन लोगों
ने अपने जीवन में जो बड़े बड़े काम किये उनमें उन्हें
मस्तिष्क-शक्ति का अधिक व्यय नहीं करना पड़ा था । इस
समय पाठशालाओं और कालेजों में जो लड़के सबसे अधिक
बुद्धिमान् गिने जाते हैं वे विशेष विद्वान् और शिक्षित
माता-पिताओं के पुत्र नहीं । जिन लोगों ने विद्याभ्यास

में बहुत कम निदर्शन की है उन्हीं की ये सम्मति है। उनमें से अधिकांश शहर-निवासियों के नहीं, किन्तु देहात में रहने वालों के लड़के हैं। एमर्सन नामक ग्रन्थकार ने मेधा के विषय पर कुछ निबन्ध लिखे हैं। उनमें उसने इस बात की भी चर्चा की है कि विद्याभ्यास के अधिक से किसकी हानि होती है। वह लिखता है—"Nations born with internal fire of thought and affection which wastes while it works. We shall find finer combustion and finer fuel. Intellect is a fine, harsh and pitiless, it melts the wonderful home house which is called man. Genius even, as it is the greatest good, is the greatest harm." अर्थात्—विचारों और महत्त्वाकांक्षाओं की आन्तरिक अग्नि से देश जलता रहता है। मालूम होता है कि यह अग्नि एक ओर बहुत अच्छा काम कर रही है, परन्तु दूसरी ओर उससे बहुत हानि भी हो जाती है। बुद्धि, अग्नि के समान है। उसमें न दया है, न दूरदृष्टि। वह हड्डियों की इस विलक्षण इमारत को, जिसे हम मनुष्य कहते हैं, भस्म कर देती है। विलक्षण बुद्धि का होना अत्यन्त हितदायक है; परन्तु उससे बहुत कुछ अनहित भी होता है।

सारांश यह कि थोड़े समय में अधिक लाभ की आशा से पश्चिमी सभ्यता पर मोहित हो जाना और अपने प्राचीन तथा स्वाभाविक स्वरूप का त्याग कर देना मानो अपने समाज को नष्ट करना है। यथार्थ में पश्चिमी सुधार और सभ्यता का स्वरूप बड़ा भयानक है। यह बात इतिहास-प्रसिद्ध है कि जहाँ जहाँ यूरप वालों ने बस्ती की है वहाँ वहाँ के मूल-निवासी नष्ट हो गये हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इस सुधार और सभ्यता के प्रचार में उन लोगों का हेतु शुद्ध और प्रशंसनीय होता है; परन्तु परिणाम की ओर देख कर उन लोगों को भी आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। देखिए, किड नामक ग्रन्थकार अपने "सामाजिक विकास" (Social Evolution) नाम के ग्रन्थ में क्या लिखता है—"The Anglo-Saxon looks forward, not without reason, to the day when wars will cease; but without war, he is in-

[illegible] Nationalism, and the [illegible] [illegible] [illegible]

या घर की भी चिन्ता है। यहाँ यह बतला देना नुचित न होगा कि इस कुटुम्ब में सुरेश और श के सिवा और कोई आदमी नहीं। माता-ना इनके पहले ही चल बसे हैं।

सुरेश के पास अधिक धन नहीं। जो कुछ है ; यह घटता नहीं; दिन दिन घटता ही जाता ,। बढ़े भी कैसे? रोज़ रोज़ जब उसमें से कुछ कुछ निकाला ही जाता है और उसके फिर से ाने की कोई सूरत नहीं, तब वह घटने के सिवा ढ़ कैसे सकता है? नरेश बी० ए० पास कर चुके । पर, सुरेश ने उन्हें पढ़ने के लिए अब तक एक ाड़ी भी नहीं दी। एंट्रेंस परीक्षा पास करने के ाद उनके पिता संसार से विदा हुए थे। तब से ागाकर अब तक ये इधर उधर लड़कों को पढ़ा र ही अपना ख़र्च चलाते रहे हैं। केवल अपना ार अपनी पढ़ाई भर का ही नहीं, घर का भी ारा ख़र्च इन्हीं की कमाई से चलता था। ड़ी कठिनाइयों से नरेश बी० ए० पास हुए हैं। ये अब प्रोफ़ेसरी का पद पाने की इच्छा से एम० ए० ास करने की तैयारी में हैं।

सुरेश का सारा धन ख़र्च हो गया है। उनके ास कौड़ी भी बाक़ी नहीं है। सुरेश ने यह धन कुछ तो फ़िजूल-ख़र्ची में और कुछ खाने पीने में ख़र्च किया है। अब नरेश ही की थोड़ी बहुत कमाई का आसरा है। नरेश सुरेश से कभी कुछ न कहते थे। ये सदा पिता की तरह उनका सम्मान करते थे। नरेश ने दो एक बार बड़े भाई से किसी नौकरी-चाकरी के लिए कहा भी। पर, उनकी इच्छा न देख ये चुप हो रहे।

अनेक कष्ट झेल कर नरेश ने एम० ए० पास कर लिया। ये इस परीक्षा में अपने विश्वविद्यालय में प्रथम आये। नरेश को प्रोफ़ेसरी मिलते देर न लगी। ये जहाँ पढ़ रहे थे उसी कालेज में डेढ़ सौ मासिक पर प्रोफ़ेसर हो गये। अब नरेश और सुरेश के खाने पीने की तकलीफ़ दूर हुई। अब उनके दिन सुख से कटने लगे।

नरेश को प्रोफ़ेसरी करते कुछ समय हुआ। सुरेश को ख़ाली बैठे देख कुछ रुपये लगा कर उन्होंने उनसे एक दूकान खुलवा दी। कुछ ही दिनों में सुरेश को दूकान से बड़ा लाभ हुआ। लाभ के रुपयों में से उन्होंने कुछ जमीन भी मोल ले ली। सुरेश नामी दूकानदार और धनी आदमी होगये। नरेश को अब सुरेश के विवाह की भी चिन्ता होने लगी। उन्होंने एक अच्छे घर की कन्या से उनका ब्याह करा दिया। सुरेश की स्त्री का नाम है कलावती। कलावती कलह की कला में बड़ी निपुण निकली। इधर एक अच्छी लड़की देख कर नरेश ने भी अपनी शादी कर ली। नरेश की स्त्री का नाम है लक्ष्मी। लक्ष्मी सचमुच ही लक्ष्मी है।

इस प्रकार दोनों भाइयों का विवाह हो चुकने पर इस कुटुम्ब के सुख की मात्रा कुछ बढ़ गई। पर, कलावती अपने स्वभाव के कारण हर बात में लक्ष्मी से लड़ पड़ती। लक्ष्मी बेचारी उसकी बातों को शान्ति पूर्वक सह लेती। वह नरेश से इस विषय में कुछ भी न कहती।

कुछ दिनों बाद सुरेश की पत्नी के एक लड़का हुआ और नरेश की पत्नी के एक लड़की। सुरेश के लड़के का नाम रमेश और नरेश की लड़की का नाम प्रतिभा रक्खा गया। लक्ष्मी रमेश को बहुत प्यार करती, पर, कलावती प्रतिभा को कुछ भी न समझती। तथापि लक्ष्मी इस बात से बुरा न मानती। वह बड़ी ही शान्ति-प्रिय थी।

कलावती यदि कलह-प्रिय न होती तो इस कुटुम्ब पर कभी दुःख का डेरा न होता। यह बहुत अच्छा कुटुम्ब गिना जाता। पर, ऐसा न हुआ। प्रतिमा और रमेश में परस्पर बड़ा मेल था। ये आपस में खेल-कूद के समय लड़ते-झगड़ते, पर फिर हिलमिल कर रहते। प्रतिमा रमेश से साल भर बड़ी थी। वह उससे होशियार भी अधिक थी।

सुरेश दूकान में हैं और नरेश कालेज गये हुए हैं। घर में लक्ष्मी और कलावती के सिवा और कोई

नहीं। प्रतिभा आँगन में बैठी बैठी अपनी गुड़ियों से खेल रही है। रमेश ने आकर उसकी आँखें मीच लीं। प्रतिभा हँसकर बोली—"रमेश भैय्या, मैं जान गई। आँखें खोल दो। भला यह तो बताओ, घर में इतने छोटे और सुन्दर हाथ किस के हैं"? रमेश ने हाथ हटा लिये। प्रतिभा ने प्यार से रमेश को पास बिठा लिया। रमेश ने पूछा—"जीजी, क्या करती हो?"

प्रतिभा—"रमेश, आज मेरे गुड्डे का ब्याह है। देखो, मेरे गुड्डे की बहू कैसी सुन्दर है। भैय्या, इसी तरह तुम्हारा भी ब्याह होगा। तुम्हारी भी बहू बड़ी सुन्दर होगी।"

रमेश अपनी बचपन की हँसी हँसता हुआ बोला—"प्रतिभा बहिन, मेरी बहू तुम जैसी होगी।"

अबोध रमेश का यह सरल वचन सुन कर प्रतिभा पानी पानी हो गई। मुसकराती हुई प्रतिभा ने रमेश के दोनों हाथ पकड़ लिये। हाथ पकड़ कर वह बोली—"पाजी, बदमाश, चुप।" यह कह कर उसने धीरे से उसके दो चपत जमा दिये। बालक रमेश उदास होगया। उसकी बड़ी बड़ी आँखों से आँसू निकल पड़े। कलावती को यह अच्छा मौक़ा हाथ लगा। वह फ़ौरन गरज कर बोली—"अरी प्रतिभा, तू ने रमेश को क्यों मारा"? यह कह कर उसने उसके मुँह पर दो कड़े तमाचे जमा दिये। प्रतिभा दौड़ कर लक्ष्मी के पास चली गई। उसकी गोद में वह मुँह छिपा कर रोने लगी। लक्ष्मी का स्वभाव शान्त था। वह कुछ न बोली।

सन्ध्या हुई। सुरेश और नरेश दोनों घर आये। लक्ष्मी ने तो दिन की घटना की कुछ भी चर्चा न की। पर, कलावती से न रहा गया। उसने सुरेश के कान भर दिये। सुरेश से वह बोली—

"आज छोकरी ने रमेश को बिना क़सूर बहुत मारा। उसके गाल सूज गये हैं। तुम्हीं ने यह सब देखती बैठी रही। उठ कर पुड़ाया भी नहीं। इसे जाकर पुड़ाओ। तब भी वे कुछ न बोलीं। प्रतिभा रमेश को बात बात में पीटती रहती है। अब एक मैं नहीं रह सकती। मुझसे देखा जायगा।"

सुरेश के कान में रोज़ ही कुछ न कुछ कलावती भरा करती थी। पर, आज मात्रा बहुत अधिक हो गई। कुछ सोचे विचारे बिना ही सुरेश ने आँगन में आकर नरेश को पुकारा। नरेश बाहर आये। सुरेश नरेश से लगे—"नरेश, हम देखते हैं, आज कल घर में बहुत होती है। थोड़ी थोड़ी सी बात पर भी बड़ा झगड़ा उठ खड़ा होता है। प्रतिभा बिना ही रमेश को पीटा करती है। अच्छा हो, दोनों अलग अलग खेलें, और लियाँ भी अलग रहें।"

यह सुन कर सात वर्ष की प्रतिभा ने रोते रोते मुँह निकाल कर कहा—'नहीं ताऊजी, मैं रमेश के साथ ज़रूर खेलूँगी।"

सुरेश कलावती की ओर देखने लगे। कलावती ने आँख के इशारे से सुरेश के रहे सहे होश को भी नष्ट कर दिया। नरेश सुरेश से कहने लगे—

"भाई साहब, .....

उनकी बात बीच में ही काट कर सुरेश बोल उठे—

'मुझे जो कुछ कहना था, कह चुका।"

नरेश चुप रहे, वे कुछ न बोले। थोड़ी देर बाद बँटवारा होगया। लक्ष्मी ने कहा—"दूका और ज़मींदारी?"

सुरेश ने नरेश से कहा—"ये दोनों मेरे पास हैं। मेरी ही पास रहेंगी। जी चाहे तो नालिश करके ले लेना।"

भाई की बात सुन कर नरेश बोले—

"धिक्कार है मुझे, जो मैं एक विधवा ज़मीन और एक छोटी सी दूकान के लिए आप पर दावा करूँ! आप मेरे पास जो कुछ है वह भी ले लें। मुझे तो मेरी मेहनत की आमदनी ही काफ़ी है।"

दूसरे दिन सवेरे ही नरेश शहर में एक किराये के मकान में चले गये। अपनी चीज़ वस्तु सब वे ज़मींदार के पास ही छोड़ते गये।

लक्ष्मी ने नरेश से कहा—"यह क्या? ज़रा सी चीज़ पर आप सब कुछ वहीं छोड़ आये। प्रतिभा का विवाह करना है, उसके लिए ही कुछ रखते।"

नरेश ने लक्ष्मी से कहा—"आख़िर भाई को ही तो दिया है, दुश्मन को तो नहीं। क्यों न दिया?" यह सुन कर प्रतिभा अपने पिता के गले लिपट कर हँसने लगी।

साल भर नरेश सुख से कमाते और खाते रहे। दूसरे साल उन्हें तपेदिक़ की बीमारी हो गई। बहुत दिनों तक खाट में पड़े रहने के कारण उनकी नौकरी भी छूट गई। अब खाने-पीने के लिए भी तकलीफ़ होने लगी। लक्ष्मी ने अपने गहने बेच बेच कर पति की तन, मन से सेवा-शुश्रूषा की। पर, परमात्मा अधिक दिनों तक लक्ष्मी पर प्रसन्न न रहे। उन्होंने नरेश को शीघ्र ही संसार से विदा कर दिया। नरेश अपनी प्यारी पत्नी और अनाधार बालिका को अनाथ छोड़ कर संसार से सर्वदा के लिए कूच कर गये।

सुरेश को नरेश की मृत्यु का समाचार मिला। वे भाई के मृत शरीर को देखने के लिए उसके घर गये। दो आँसू भी वहाँ उन्होंने बहाये। पास पड़ोस के लोगों ने कहा—"भाई का क्रिया-कर्म तुम्हीं को करना चाहिए।"

सुरेश बोले—"ज़रा घर में पूछ तो लूँ।"

हद होगई। अरे कृतघ्न! तू ने यह क्या किया! जिस भाई की बदौलत तू इस दशा को पहुँचा है, जिसकी बदौलत तू सुरेशचन्द्र जेनरल मरचेंट बना है, जिसकी बदौलत तुझे लोग ज़मींदार कहते हैं, हाय, उसी अपने सहोदर का शरीर-संस्कार तू अपनी स्त्री से पूछ कर करेगा! ऐसे समय पर लोग अपने घोर शत्रु से भी इस तरह का बर्ताव नहीं करते। तू तो अपने भाई के लिए ऐसा कह रहा है। नरेश, तेरा सहोदर तेरा उपकार करने वाला भाई था। हाय, आज तू ने उसके उपकारों की ओर ज़रा भी ध्यान न दिया। रे पापी, तू भी एक दिन इस संसार से इसी तरह कूच कर जायगा। तेरे पीछे लोग तेरा नाम लेना भी बुरा समझेंगे।

सुरेश अपने घर चले गये। उन्होंने कलावती से पूछा—"तुम्हारी क्या राय है। नरेश का मृतक-संस्कार मैं करूँ कि नहीं?"

कलावती बोली—"तुम वैसे ही बीमार रहते हो। इस कड़ी दोपहर में पाँच घण्टे तक आग के सामने रहोगे। कहीं अधिक बीमार न हो जाय। कहला दो, वही सब कुछ कर डाले।"

सुरेश ने एक पड़ोसी की मारफ़त लक्ष्मी को कहला भेजा—"मेरी तबीयत ख़राब है।"

हा भगवन्! भाई भतीजों के होते भी आज नरेश का मृतक-संस्कार उसकी स्त्री ही को करना पड़ा!

नरेश का मृत-शरीर भागीरथी के तट पर पहुँचा। चिता चुनी गई। उसके ऊपर नरेश का शरीर रख दिया गया। चिता में आग लगाने का समय आया। नरेश का कोमल शरीर, जो गुदगुदे बिछौने पर रहता था, आज लकड़ी जैसी कड़ी वस्तु के ऊपर रक्खा हुआ है। जो लक्ष्मी नरेश के शरीर की बड़े यत्न से सेवा-शुश्रूषा करती थी, आज वही उस पर आग लगायेगी। हाय, लक्ष्मी के लिए यह समय कैसा भयङ्कर है! उपस्थित मनुष्यों की आँखों में आँसू भर आये। वे रो रो कर उसके दुःख से सहानुभूति प्रकट करने लगे।

लक्ष्मी ने रोते रोते चिता में आग लगा दी। हवा तेज़ थी। आग भड़क उठी। थोड़ी ही देर में नरेश का शरीर जल कर राख होगया। लक्ष्मी राख को भागीरथी के प्रवाह में डाल कर घर लौट आई।

× × × × ×

लक्ष्मी के ये दिन अब नहीं। गहने सब बिक ही चुके थे। खाने को भी घर में मुहताज होगई। सुरेश ने कुछ सहायता करनी चाही, पर कलावती

को यह अच्छा न लगा। उसने सुरेश को खूब डांटा। सुरेश बेचारे चुप रह गये।

बड़े सुख से पली हुई प्रतिभा को अब समय पर खाना नहीं मिलता। कपड़े भी उसके बिलकुल मैले और फटे-पुराने हैं। आज रमेश का जनेऊ है। छोटे छोटे लड़के अच्छे अच्छे कपड़े पहने घूम रहे हैं। रमेश के एक बहिन भी थी। वह उमदा साड़ी पहने उमङ्ग में इधर उधर घूम रही थी। साढ़े आठ वर्ष की प्रतिभा भी अपनी फटी साड़ी पहने लड़कों में जा मिली। रमेश की बहिन ने कहा—"देखो मेरी रेशमी साड़ी।' प्रतिभा अपनी धोती का छोर दिखा कर बोली—"देखो मेरे भी है।" रमेश की बहिन बोली—"मेरी साड़ी नई और रेशमी है।" बालिका प्रतिभा उदास होकर लक्ष्मी के पास चली गई। उसी समय से उसको बड़े ज़ोर से ज्वर चढ़ आया। शाम को लक्ष्मी एक कटोरी लेकर कलावती से उसके लिए दूध माँगने गई। कलावती बोली—दूध थोड़ा ही है। वह रमेश के लिए रक्खा है। लक्ष्मी अपना सामुंह लेकर वापस लौट आई।

प्रतिभा का ज्वर रात को और भी बढ़ गया। वह न सवेर उठा न दोपहर। शाम फिर भी लक्ष्मी कलावती से दूध माँगने गई। कलावती ने फिर वही उत्तर देकर उसे जवाब दिया।

इस दिन सुरेश के घर दावत थी। सब [illegible] सुरेश ने कलावती से पूछा—'दूधिया दी क्या नहीं है?' कलावती ने मुंह बना कर उत्तर दिया—'नहीं है।' दूध [illegible] सुरेश ने [illegible] कुछ देर में लक्ष्मी [illegible] कटोरा दूध [illegible] प्रतिभा [illegible] उसे [illegible] दूध [illegible] लक्ष्मी [illegible] प्रतिभा [illegible] दूध [illegible]

बेच कर नई साड़ी पहनाऊँगी।" पर इस [illegible] के समाप्त होने ही प्रतिभा की सांसारिक [illegible] समाप्त हो गई। सुरेश अपने हृदय को दो [illegible] पाँवों वहाँ से लौट आये।

बाबला

---

## मेघदूत का रामगिरि।

कुछ दिनों से इस बात पर विवाद [illegible] रहा है कि मेघदूत का राम [illegible] कौन सा है। १९०६ से इस वि [illegible] पर अब तक कई लेख हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में निकल चुके हैं। भिन्न भिन्न [illegible] मतों के मत से रामटेक या रामटेकरी, जो नागपुर के पास है, रामगढ़ या रामगिरि जो रियासत सरगुजा के पास है, रामटेकरी जो रतनपुर के पास है, रामटेकरी जो सरगुजा राज्य में है, मेघदूत का रामगिरि है। इसके अतिरिक्त अमरकण्टक के पश्चिमोत्तर कोण में एक रामगढ़ है और गोंडवाने के दक्षिण भी एक रामगिरि है। अब देखना यह है कि इनमें से कौन सा मेघदूत में वर्णित रामगिरि हो सकता है या नहीं।

मेघदूत में मेघ के जाने का पथ यों दिया है—रामगिरि से चल कर उत्तर दिशा में मेघ वहाँ से उत्तर अथवा पश्चिमोत्तर दिशा में [illegible] फिर, क्रमशः उत्तर दिशा में रेवा नदी, [illegible] दशार्ण नदी पर बसी हुई विदिशा [illegible] उत्तर उत्तर पश्चिम दशार्णपुर नगर।

[illegible] नदी के तट पर दशार्णपुर अब भी [illegible] है। दशार्ण नदी का आधुनिक नाम धसान [illegible] है। दशार्णपुर के पास दशपुरा में धसान [illegible] है। दशपुर का आधुनिक नाम मन्दसौर है। यहाँ पर [illegible] दशपुर के अवशेष मिलते हैं। दशार्ण [illegible] दशार्णपुर का नाम मेघदूत में है। दशपुर [illegible] है। यह बात [illegible] दशपुर के [illegible] है। अतः [illegible] दशपुर ही

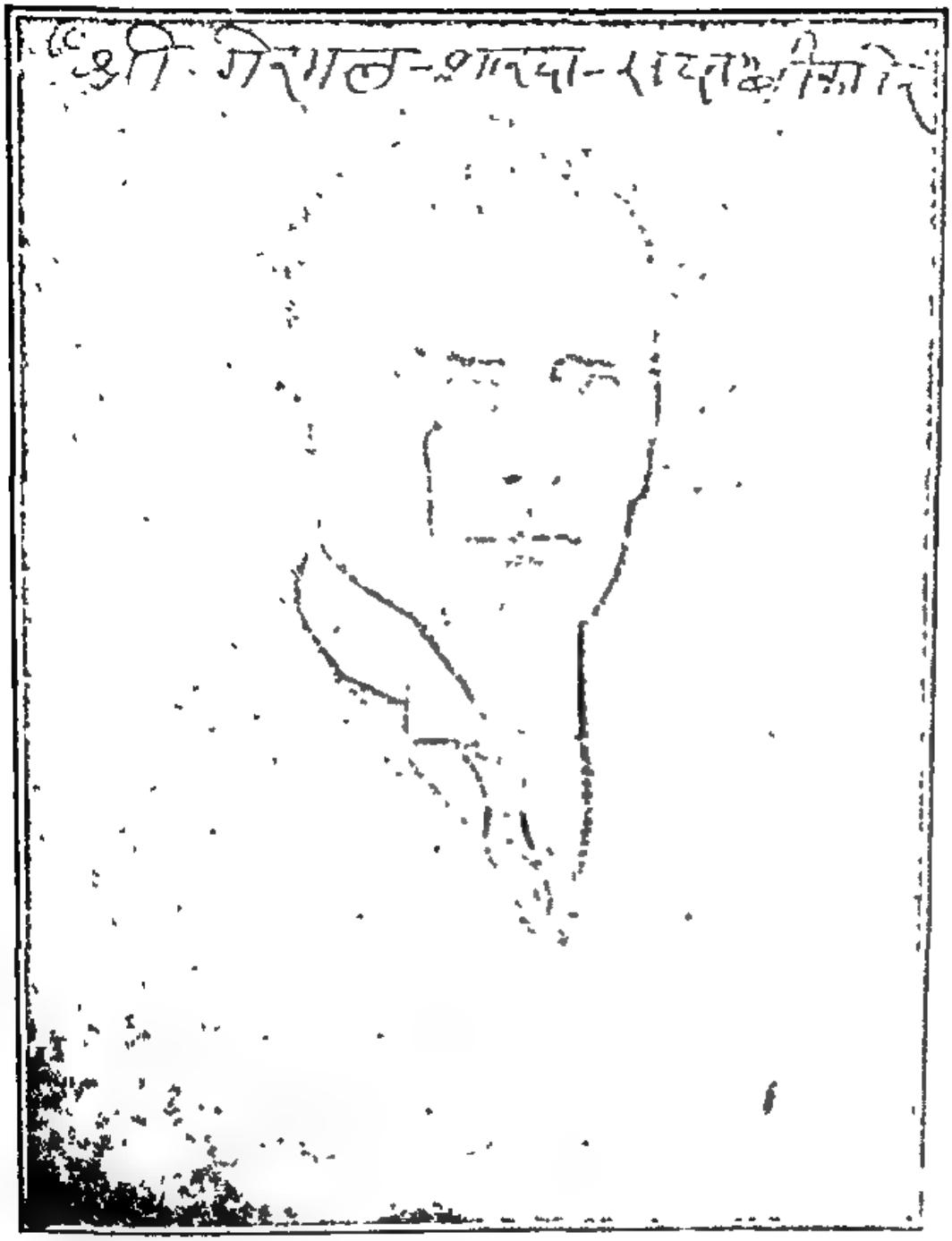

राइट आनरेबल सर्विस पेन्सनर्स
भारत के नये सेक्रेटरी आफ स्टेट।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

दे उलटा चलिए तो आम्रकूट विदिशा के दक्षिण होना चाहिए, मालक्षेत्र आम्रकूट के दक्षिण अथवा क्षेण-पूर्व होना चाहिए और रामगिरि मालक्षेत्र के क्षेण होना चाहिए। मेघदूत के अनुसार यही स्थिति होनी चाहिए। इससे सिद्ध है कि आम्रकूट और अमरकण्टक एक नहीं हैं, जैसा कि किसी महाशय माना है। विशेष विचार करने के पहले हम मेघदूत के सोलहवें श्लोक के उत्तरार्द्ध पर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करते हैं। वह इस प्रकार है—

सद्यः सीरोत्कषणसुरभिक्षेत्रमारह्य मालम्।
किञ्चित्पश्चाद् व्रज लघुगतिर्भूय एवोत्तरेण॥ १६॥

इस पर मल्लिनाथ सूरि टीका में लिखते हैं—

मालं मालाख्यं क्षेत्रं शैलमाद्यमुन्नतस्थलम्। सद्यस्तत्कालमेव तीरेर्हलैरुत्कर्षणेन सुरभिग्राणतर्पणं यथा तथारुह्य। तत्राभिमुख्येनार्थः। किञ्चित्पश्चाल्लघुगतिस्तत्र निवृत्तश्चाग्निप्रगमनः सन् भूयः पुनरप्युत्तरेणैवोत्तरमार्गेणैव व्रज गच्छ।

अर्थात्—रामगिरि से उत्तर दिशा में चल कर मालक्षेत्र का जाना। वहाँ थोड़ी देर ठहर कर (पानी बरसा कर) फिर शीघ्र-गति से उत्तर दिशा की ओर बढ़ना।

'किञ्चित्पश्चाद् व्रज' का जो कुछ लोग यह अर्थ करते हैं कि थोड़ी दूर तक पश्चिम दिशा में चल कर फिर उत्तर दिशा की ओर चलना—यह असंगत है और टीकाकार के विरुद्ध है। यदि मेरा किया हुआ अर्थ ठीक है तो रामगिरि को आम्रकूट के दक्षिण ही होना चाहिए, दक्षिण-पूर्व नहीं, जैसा कि किसी महाशय ने लिखा है।

बिना प्रमाण के कोई बात कहना व्यर्थ है। इस लिए सबसे पहले मैं यह दिखाना चाहता हूँ कि क्यों आम्रकूट और अमरकण्टक एक नहीं हो सकते। भारतवर्ष के नक्शे को देखिए। विदिशा (भिलसा) ७८ अक्षांश के पश्चिम है और अमरकण्टक ८२ अक्षांश के भी पूर्व। अतएव ये दोनों स्थान ऊपर-नीचे नहीं हो सकते। अथवा यों कहिए कि अमरकण्टक से उत्तर की ओर जाने से दशार्ण देश, वेत्रवती नदी और विदिशापुरी मिल ही नहीं सकती। फिर अमरकण्टक कैसे आम्रकूट कहा जा सकता है? दोनों में नाम सादृश्य तो कुछ अवश्य है, परन्तु दोनों स्थान एक नहीं।

जो रामगढ़ या रामगिरि रियासत बस्तर में है वह भी रामगिरि नहीं हो सकता। क्योंकि वह भी ८२ अक्षांश के पूर्व है। विदिशा के और उसके अक्षांश में चार अंश (डिगरी) का अन्तर है। रतनपुर के पास की रामटेकरी भी, इसी कारण से, रामगिरि नहीं हो सकती। इस रामटेकरी और विदिशा तथा उज्जयिनी के देशान्तर में कुछ ही कलाओं का अन्तर है। अतएव ये तीनों स्थान एक दूसरे के पूर्व-पश्चिम हैं, उत्तर दक्षिण नहीं। इसके निकट का मालदा मालक्षेत्र नहीं हो सकता, क्योंकि वह भी रामटेकरी के उत्तर नहीं है। सरगुजा वाला रामगढ़ तो और भी पूर्व है। वह विदिशा के ठीक पूर्व है, इसलिए वह भी रामगिरि नहीं हो सकता।

अमरकण्टक के पश्चिमोत्तरवाला रामगढ़ भी रामगिरि नहीं, क्योंकि यदि अमरकण्टक को हम आम्रकूट मान भी लें तो रामगढ़ उसके दक्षिण में होना चाहिए, पश्चिमोत्तर में नहीं। गोदावरी के दक्षिणवाला रामगिरि भी मेघदूतवाला रामगिरि नहीं, क्योंकि सीताजी के साथ श्रीरामचन्द्र गोदावरी के दक्षिण कभी नहीं रहे। अब रही केवल यह रामटेकरी जो नागपुर के पास है। यह टेकरी भी विदिशा के ठीक दक्षिण नहीं है, किन्तु दक्षिण पूर्व में है। परन्तु यहाँ राम, लक्ष्मण और सीता सम्बन्धी बहुत से टूटे फूटे मन्दिर हैं। यदि यह मान लें कि कवि ने उत्तर दिशा का उल्लेख सामान्य रीति से किया था तो इस रामटेकरी को रामगिरि मानने में विशेष आपत्ति नहीं। अथवा यों कहिए कि ऊपर जितने स्थान लिख गये हैं उनमें से रामगिरि होने की सबसे अधिक सम्भावना इसी रामटेकरी की है। मेरी सम्मति में यह है कि ठीक विदिशा के दक्षिण आम्रकूट के हिस्से में रामगिरि का पता ढूँढना चाहिए।

रामटेकरी के रामगिरि होने के विरुद्ध पण्डित लक्ष्मण अनन्तशास्त्री दुसे ने नीचे लिखी हुई युक्तियाँ पेश की हैं—

"वाल्मीकि रामायण के आधार पर निश्चित, ऊपर लिखे हुए, मार्ग से यह ज्ञात होता है कि रामचन्द्र ने विन्ध्य-पर्वत तथा कोशल देश, जो उनका ननिहाल था, टालने के लिए चित्रकूट से चल कर थोड़ी ही दूर पर दण्डकारण्य में प्रवेश किया था। रामचन्द्र का प्रण था कि पिता के आज्ञानुसार— वत्स्यामि विजने वने'। फिर यह सम्भावना क्यों कर हो सकती है कि उन्होंने नागपुर में जाकर रामटेक में निवास किया? क्योंकि नागपुर दक्षिण-विन्ध्य के पश्चिम, विदर्भ देश के अन्तर्गत है। अर्थात् रामचन्द्र विन्ध्य-पर्वत को एक तरफ़ छोड़ कर दण्डकारण्य के भीतर से गये थे, इस कारण दक्षिण-विन्ध्य के दूसरी ओर जो स्थान हैं उनमें रामचन्द्र का जाना कदापि सम्भव नहीं हो सकता। रामचन्द्र को न तो नर्म्मदा नदी लांघनी पड़ी और न विन्ध्य-पर्वत ही को किसी जगह उन्होंने पार किया। इससे रामटेक में रामचन्द्र का जाना सिद्ध नहीं होता"।

दुबेजी ने भारतवर्ष का एक नक़्शा भी अपने लेख के साथ दिया है (सरस्वती, जनवरी १९०६, देखिए)। प्रसिद्ध स्थान पञ्चवटी नासिक के पास है। परन्तु इस नक़्शे में यह मदरास हाते में दिखाई गई है। शीघ्र प्रसिद्ध पञ्चवटी को बम्बई हाते से उठा कर मदरास हाते में ले जाने के लिए प्रमाण आवश्यक था जो नहीं दिया गया। दुबेजी ने यह मान लिया है कि नागपुर का यह प्रान्त, जहाँ रामटेक है, रामचन्द्र के समय में वनपूर्ण न था। विदर्भ देश के अन्तर्गत होने ही से दुबेजी ने तत्काल यह समझ लिया कि रामटेक रामचन्द्रजी के समय में अवश्य था। क्योंकि रामायण में यह कहीं नहीं लिखा कि रामचन्द्र ने नर्म्मदा को पार किया और विन्ध्य-पर्वत के एक पार्श्व से दूसरे पार्श्व को गये। इसी दुबेजी ने यह सिद्धान्त निकाला है कि रामचन्द्र [illegible] नहीं हो सकता। पाठक इस [illegible] का यह क्या पढ़ें जहाँ रामचन्द्र [illegible] के साथ [illegible] में आना लिखा [illegible] है, वहाँ [illegible] यह [illegible] रामचन्द्र के साथ [illegible] गये। [illegible] यह [illegible] गये।

दिशा में चल कर दण्डकारण्य में जाते हुए रामचन्द्र सोन नदी के किनारे कैसे पहुँचे थे? इसीसे सिद्ध है कि नर्म्मदा नदी पार करने का उल्लेख न होने से यह निश्चय नहीं हो सकता कि रामचन्द्र नर्म्मदा को नहीं पार किया। मालूम होता है दुबेजी ने रामायण के उस अंश पर ध्यान नहीं दिया जहाँ दण्डकारण्य की सीमा निर्दिष्ट है। रामायण ही में लिखा है कि दण्डकारण्य की विस्तृति विन्ध्य और शैवल गिरियों के मध्य में थी। अर्थात् विन्ध्य गिरि के दक्षिण पार्श्व ही से दण्डकारण्य शुरू होता था। तब कैसे कहा जा सकता है कि श्रीरामचन्द्र विन्ध्य के दक्षिण पार्श्व में नहीं गये। दुबेजी को कुछ भ्रम हो गया है, जिससे उनकी पश्चिम से पूर्व चली गई और कितने ही स्थान भी उलट पुलट गये।

हरिप्रसाद पालधि।

---

## फिलीपाइन द्वीप में शिक्षा-प्रचार।

[illegible] समुद्र के पूर्व में एक छोटा [illegible] द्वीप समुदाय है। उसको लोग फिलीपाइन्स कहते हैं। [illegible] समय पहले यहाँ स्पेन देश का राज्य था। परन्तु अब पन्द्रह वर्ष से अमेरिका ने यहाँ अपनी [illegible] स्थापित की है। थोड़े ही समय में जो आश्चर्यजनक उन्नति इस द्वीप-समुदाय में दिखाई दी है वह भारतवर्ष में साठ सत्तर वर्ष के प्रयत्न से होने वाली उन्नति से भी कहीं बढ़ चढ़ कर है। इसका एक मात्र कारण यही है कि इस द्वीप-समुदाय के शासन कर्त्ताओं और यहाँ की [illegible] जातियों में मतभेद नहीं। शिक्षा ही सब उन्नतियों का मूल आधार है। इसी से इस द्वीप में शिक्षा का बहुत विशेष ध्यान दिया जाता है।

[illegible] में, जहाँ साढ़े सात [illegible] का राज्य था, वहाँ शिक्षा-प्रचार के विषय में [illegible]

ान नहीं दिया था। सर्व-साधारण में शिक्षा का ार करने के लिए सन् १८६३ में एक आज्ञापत्र ाशित हुआ था, जिसके आधार पर बहुत सी थमिक पाठशालायें खोली गई थीं। परन्तु दो रणों से विशेष उन्नति न हुई—(१) वहाँ की क्षा-पद्धति बिल्कुल पुराने ढँग की थी; (२) क्षा की देख-भाल का महत्त्वपूर्ण कार्य्य उन दरियों को सौंपा गया था जो शासनकार्य्य से लिष्ट सम्बन्ध रखते थे। परिणाम यह हुआ कि न द्वीप-समुदाय के निवासियों की शिक्षा सन्तोष-यक न हुई।

ज्योंही इस द्वीप-समुदाय में अमेरिका की सत्ता ापित हुई त्योंही यह निश्चय किया गया कि १) सर्वसाधारण में बड़े विस्तार और उदारता से शिक्षा का प्रचार किया जाय; (२) इस द्वीप के निवासियों को कलाकुशलता और भिन्न भिन्न वसायों की उच्च शिक्षा दी जाय; (३) इस द्वीप ी के बहुत से निवासी प्रभावोत्पादक और योग्य शिक्षक बनाये जायँ, जिससे शिक्षा का कार्य्य अत्यन्त शीघ्रता और सरलता से हो। बस, इन्हीं तीन तत्त्वों के आधार पर वहाँ शिक्षा के प्रचार के लिए पूरा पूरा यत्न किया गया। इसके अच्छे फल फिलीपाइन के निवासी अब बड़े आनन्द से भोग रहे हैं। अब इन तत्त्वों के प्रयोगों का कुछ वर्णन सुनिए।

## (१) सर्वसाधारण में शिक्षा का प्रचार।

प्राथमिक शिक्षा ग्यारह वर्ष में पूरी होती है। इसके तीन विभाग हैं:—प्रारम्भिक में चार वर्ष, माध्यमिक में तीन वर्ष और उच्च में चार वर्ष लगते हैं। इन विभागों में पढ़ना लिखना, व्याकरण, भाषा-सम्बन्धी ज्ञान, गणित, भूगोल, आरोग्य-शिक्षा इत्यादि विषयों के साथ साथ उद्योग-धन्धों की शिक्षा भी विशेष रीति से दी जाती है। विशेषता यही है कि जिस स्थान में जिस वस्तु की उपज होती है या जिस वस्तु की थोड़े ही दाम में मिलने की सम्भावना रहती है उस स्थान में उसी वस्तु से व्यावसायिक पदार्थ आदि बनाना अधिकता से सिखाया जाता है। प्रारम्भिक विभाग के चार वर्षों की शिक्षा का क्रम संक्षेप में यह है—

**पहला वर्ष**—प्रत्येक विद्यार्थी को दस्तकारी (Manufacture) और उद्योग-धन्धा (Industry), इन दो में से कोई भी एक विषय अवश्य लेना पड़ता है। इस वर्ष मोटी मोटी और उपयोगी चीज़ें—जैसे चटाई, टोपी, पंखा, टोकरी, पुस्तकें रखने की थैलियाँ आदि बनाना सिखाया जाता है।

**दूसरा वर्ष**—हाथ से कपड़ा बुनना और बागीचे का काम सिखाया जाता है। इसके साथ ही इन विषयों में से कोई एक विषय और भी लेना पड़ता है—(१) लकड़ी पर काम करना; (२) चिकनी मिट्टी की चीज़ें बनाना (Clay-Modelling), (३) सादे नमूने पर मोटे-किनारी का काम करना (लड़कियों के लिए)।

**तीसरा वर्ष**—इन विषयों में से दो विषय अवश्य लेने पड़ते हैं—(१) हाथ से कपड़ा बुनना (२) टोकरी बनाना (३) बाग़ सम्बन्धी काम (४) लकड़ी का काम (५) बाँस का काम (६) यन्त्रों से कपड़ा बुनना (७) मिट्टी की चीज़ें बनाना (८) सिलाई का काम। इस वर्ष के विद्यार्थियों से यह आशा की जाती है कि वे अपनी निपुणता से उपयोगी और शीघ्र बिक जाने वाली चीज़ें तैयार कर सकेंगे।

**चौथा वर्ष**—ऊपर लिखे गये विषयों में से दो विषय और जोड़ दिये जाते हैं—(१) गृह-कार्य (२) आरोग्य-रक्षा तथा सफ़ाई (३) लोहे का काम (४) बाग़वानी। इस वर्ष प्रारम्भिक विभाग की शिक्षा पूरी हो जाती है। इस वर्ष के अन्त में विद्यार्थियों में स्वतन्त्र रीति से किसी न किसी धन्धे का काम करने की शक्ति अच्छी तरह हो जाती है।

प्रारम्भिक विभाग की चार वर्ष की शिक्षा पूरी हो जाने पर लड़कों के लिए दो मार्ग [illegible]

या तो वे माध्यमिक विभाग की शिक्षा पावें, या फिलीपाइन स्कूल आव् आर्ट्स ऐन्ड ट्रेड्स में कला-कुशलता की शिक्षा प्राप्त करें। माध्यमिक वर्षों की पढ़ाई के छः भाग हैं—(१) साधारण शिक्षा—इसमें इतिहास, भूगोल, सङ्कोच-विद्या और शरीर-शास्त्र की शिक्षा दी जाती है। (२) शिक्षक का काम (३) खेती किसानी का काम इसमें वनस्पति-शास्त्र और खेती की सब आवश्यक बातें सिखाई जाती हैं (४) व्यापार की शिक्षा (Trade ;—इसमें दूकानदारी की शिक्षा दी जाती है (५) गृह-कार्य—इसमें रसोई, सीना-पिरोना, कपड़ा बुनना, सदाचार, आरोग्य-रक्षा, स्वच्छता आदि की शिक्षा दी जाती है (६) व्यवसाय (Business):—इसमें हाट-बाटिङ्ग और जमाखर्च का हिसाब रखना आदि सिखाया जाता है। इस अन्तिम काम के साथ साथ खाद्य पदार्थ और चित्र-कला की शिक्षा का भी प्रबन्ध रहता है।

## (२) कला-कुशलता की शिक्षा।

[illegible]

व्यापार-धन्धे में लग कर अपनी योग्यता [illegible] सार स्वतन्त्र-रीति से जीवन व्यतीत कर सकें। पाठशाला में व्यापार-सम्बन्धी शिक्षा की [illegible] अधिक ध्यान दिया जाता है। सन् १९१२ [illegible] स्कूल की बनी हुई चीज़ों की बिक्री से [illegible] हज़ार की आमदनी हुई थी। यह धन [illegible] छात्रों का उत्साह बढ़ाने में ख़र्च किया [illegible] इस स्कूल में भर्ती होने के लिए, कम [illegible] प्रारम्भिक स्कूल की शिक्षा प्राप्त करनी [illegible] यहाँ छात्रों से फ़ीस कुछ भी नहीं ली [illegible] प्रत्येक विद्यार्थी को यह प्रतिज्ञा करनी [illegible] कि यहाँ की शिक्षा पाने पर मैं नौकरी न [illegible] किन्तु किसी रोज़गार धन्धे ही में लगा [illegible] इस स्कूल की शिक्षा सात वर्ष में पूरी [illegible] है। इसके बाद विद्यार्थी अपनी इच्छा के [illegible] कालेज में जा सकता है।

## शिक्षक।

[illegible] पहले पहल यहाँ गवर्नमेंट के आज्ञानुसार [illegible] सौ पचास अमेरिकन शिक्षक अँगरेज़ी [illegible] देने के लिए भेजे गये। इस द्वीप में शिक्षा [illegible] बहुत ही कम थी। इस कारण [illegible] शिक्षकों के भरण की सफलता न होने पाई [illegible] पहले जितने अमेरिकन शिक्षक मिले उतने [illegible] काम दिया गया। धीरे धीरे फिलीपाइन नि[illegible] और विद्यालयों में पढ़कर वेम बढ़ने लगा [illegible] कई देशों में बहुत सा समाचार होता रहता है, [illegible] कहाँ क्या क्या विद्याओं के आवश्यक [illegible] पूरा करते हैं। इससे विद्यार्थियों को [illegible] [illegible] इस सम्बन्ध में शिक्षा [illegible] [illegible] पर ध्यान दिया [illegible] [illegible] है कि इस द्वीप के [illegible]

आ। अब तो इस संख्या में और भी अधिक वृद्धि हुई होगी।

सारांश यह है कि इस छोटे से द्वीप-समुदाय में जो शिक्षा दी जाती है उसका एकमात्र उद्देश यही है कि यहाँ के निवासी स्वतन्त्र रीति से अपना जीवन व्यतीत कर सकें—उन्हें अपने सुख के लिए किसी दूसरे का मुँह न ताकना पड़े। यही शिक्षा अच्छी समझी जाती है जिसकी सहायता से मनुष्य अपने जीवन-निर्वाह में सफल हो सके। जिस शिक्षा से मनुष्य केवल नौकरी ही करने के योग्य हो जाता है उस शिक्षा को यथार्थ में "शिक्षा" नहीं कह सकते। फिलीपाइन के लिए यह अत्यन्त गौरव की बात है कि यहाँ शिक्षा के यथार्थ हेतु पर उचित ध्यान दिया जाता है। यहाँ के कोई सत्तर लाख निवासियों का प्रायः छठा भाग विद्यार्थियों ही का है। सन् १९१०–११ में इस छोटे से द्वीप-समुदाय में प्रारम्भिक स्कूलों की संख्या ४१३१, माध्यमिक स्कूलों की संख्या २४५ और ऊँचे दरजे के स्कूलों की संख्या ३८ थी। इन ४४०४ स्कूलों में ६,१०,४९३ विद्यार्थी पढ़ते थे। उस साल गवर्नमेंट ने शिक्षा के प्रचार के लिए १,०३,५०,००० रुपये ख़र्च किये। प्रत्येक विद्यार्थी के लिए गवर्नमेंट का कोई २३ रुपये वार्षिक ख़र्च पड़ा। गवर्नमेंट की शिक्षा-सम्बन्धिनी उदारता का अनुमान इस बात से भी किया जा सकता है कि फिलीपाइन में किसी को अपनी ग़रीबी या दरिद्रता के कारण शिक्षा से वञ्चित नहीं रहना पड़ता। यहाँ की गवर्नमेंट इस बात के प्रयत्न में लगी रहती है कि एक भी लड़का या लड़की अशिक्षित न रहने पावे। आरम्भ ही से यहाँ ऐसा क़ानून बना दिया गया है, जिससे सब लोगों को मुफ़्त और ज़बरदस्ती (Free and Compulsory) शिक्षा दी जाती है।

फिलीपाइन द्वीप में शिक्षा की सफलता का रहस्य इसी बात में है कि यहाँ दस्तकारी, व्यापार, उद्योग-धन्धा और कला-कुशलता की शिक्षा देने में बहुत उदारता प्रकट की गई है। हिन्दुस्तान के बड़े बड़े शहरों में भी ऐसी शिक्षा देने का बहुत कम प्रबन्ध है, छोटे शहरों और क़सबों की तो बात ही नहीं। हिन्दू-विश्वविद्यालय को इस ओर अवश्य ध्यान देना चाहिए।

श्रीविक्रम शर्म्मा

---

## वल्लभाचार्य्यजी का जन्म-स्थान।

क्षिण में चम्पारण्य अथवा चम्पकारण्य नामक एक वन है। यह महानदी के तट से एक मील के अन्तर पर, मध्य-प्रदेश के रायपुर नगर से अनुमान ३५ मील है। रायपुर से धमतरी को जो रलवे लाइन जाती है उस पर अमनपुर नाम का जंकशन है। उसके आगे एक स्टेशन राजिम है। उसे राजीवलोचन का स्थान कहते हैं। यह रायपुर से २८ मील है। यहाँ से चम्पारण्य को जाते हैं। महानदी के इस पार नयापारा है। यहाँ यात्रियों के विश्राम के लिए एक उत्तम धर्मशाला है। उसे देवकीनन्दनाचार्य्य के नाम से रायबहादुर पंशीलाल अमीरचन्द ने बनवाया है। इस नयापारा से साथी कच्ची सड़क चम्पारण्य को गई है। यहाँ से यह ७ मील है। उसे अब लोग चाँपाझर कहते हैं।

यहाँ के कई प्राचीन पुरुष तथा विद्वानों का कथन है कि ५०० वर्ष पूर्व यह वन सघन, कटीले रामा आदि वृक्षों से पूर्ण था। तमाल, पलाश, आम्र, सागौन आदि के बीच बीच में इतने ऊँचे वृक्ष थे कि मध्याह्न में भी सूर्य्य के दर्शन न होते थे। सदा निबिड़ अन्धकार से सारा वन व्याप्त रहता था। सिंह, व्याघ्रादि हिंसक जीवों का भी यह निवास-स्थान था। अनएव एकाकी मनुष्य को [illegible]

निकल जाने का साहस न होता था। चम्पा के वृक्षों का इसमें आधिक्य था। इसीसे इसे चम्पारण्य कहते हैं। अब इसमें चम्पा के वृक्ष नहीं हैं। अब यह एक छोटा सा वन रह गया है। उसके भीतर चम्पेश्वर महादेव का मन्दिर है। मन्दिर से थोड़ी दूर पर वल्लभाचार्य्य की बैठक है। उससे एक फरलाङ्ग पर एक नाला जल से सदा भरा रहता है। शाही समय में न सड़कें थीं, न इतनी स्वच्छता, तथापि बहुत से यात्री इन्हीं चम्पारण्य, त्रिकूटादि वनों से होकर काशी आया करते थे।

यही वन श्रीमहाप्रभु वल्लभाचार्य्यजी का जन्म स्थान है। संवत् १५३५ में जब यवनों के उपद्रव से दक्षिण देश पीड़ित हुआ तब बहुत से लोग दक्षिण छोड़ कर देशान्तरों को भागने लगे। उसी समय लक्ष्मण भट्टजी, जो तैलङ्ग ब्राह्मण थे, अपनी पत्नी इल्लम्मागारु को साथ लेकर कई एक यात्रियों के साथ काशीयात्रार्थ निकले और इसी वन-मार्ग से काशी गये। इनकी पत्नी गर्भिणी थी। प्रसव समय भी आसन्न था। अकस्मात् उनकी पत्नी का गर्भ इसी वन में गिर पड़ा। पर वे भय से व्याकुल भागते ही चले गये। बालक की ओर उन्होंने कुछ भी लक्ष्य न दिया। काशी जाकर वे रहने लगे। इधर ईश्वर ने उस बालक की रक्षा की। सत्य है—

"दारित निहति दैवदितं सुरक्षित दैवतं विनश्यति।
जीवत्यनाथोऽपि वने विसर्जितः कृतप्रयत्नोऽपि गृहे न जीवति"॥

जब उन्होंने सुना कि दक्षिण में यवनों का उपद्रव शान्त हो गया है तब उन्होंने फिर काशी से दक्षिण लौट जाने का विचार किया। फिर वे इसी वन से होकर निकले। वहाँ उन्होंने एक कुण्ड में एक बालक को दिव्यदेहधारी से रक्षित पाया। तब उन्हें स्मरण हुआ कि यह हमारा ही बालक है। उन्होंने अग्निदेवता से प्रार्थना की। इस पर बालक की माता को भीतर जाने की आज्ञा मिली। भीतर प्रविष्ट होकर स्वच्छन्द क्रीड़ा करते हुए बालक को उसने गोद में उठा लिया। तत्पश्चात् वे बालक माता के स्तनों से दुग्ध स्रवित होने लगा। रात को स्वप्न हुआ कि यह तुम्हारा ही बालक है। यह प्रतापी, प्रसिद्ध उपदेशक तथा उद्धारकर्ता होगा

शास्त्र में लिखा है कि जिस कुल में सोम-यज्ञ होते हैं उसी में ईश्वरावतार किंवा पुरुष का जन्म होता है। लक्ष्मण भट्ट के वंश १०० यज्ञ हुए थे। इसीसे श्रीवल्लभाचार्य्यजी जन्म हुआ।

इस चम्पकारण्य में अग्निकुण्ड का यह स्थान बना हुआ है। वन से थोड़ी दूर पर एक छोटा सा ग्राम भी है। इस वन में अब तक यह विश्वास है कि यदि कोई गर्भिणी स्त्री इसमें प्रविष्ट होती है तो उसका गर्भ गिर जाता है। इससे इस वन के भीतर गर्भिणी स्त्रियाँ नहीं जातीं। बहुत लोग इस वन की लकड़ी को भी, अग्नि लग जाने के भय से, उपयोग में नहीं लाते।

श्रीकृष्णशास्त्री तैलङ्ग
(रायपुर)

---

## दिनों का नामकरण किसने किया

आ सरस्वती के पाठकों के सम्मुख एक और प्रश्न उपस्थित करने का साहस करता हूँ। आशा है विद्वान् लोग अपने गवेषणापूर्ण विचारों को प्रकट करके पुरातत्त्वान्वेषियों को अनुगृहीत करेंगे। कुछ समय हुआ मैंने इसी प्रकार का एक प्रश्न बहुधा अन्य केवल जिज्ञासु भाव से पाठकों के विचार के लिए प्रस्तावित किया था। परन्तु अब तक किसी भी सज्जन ने इस पर ध्यान न दिया। इसी बीच में दो [illegible] ने [illegible]

कुछ लिख तो दिया और मुझे शास्त्रार्थ के लिए ललकारा भी, तथापि—"पुनस्तथैवावलम्बितो तालः"—सवाल जैसे का तैसाही बना हुआ है दि सम्भव हुआ तो किसी समय उसे मैं फिर श करूँगा, और जो कुछ मुझे अधिक कहना ाना कहूँगा। यहाँ केवल इतनी ही प्रार्थना है क ये प्रश्न हठधर्मी या कट्टरपन के कारण नहीं काशित किये जाते। मेरा उद्देश केवल यही है के पाठक महाशय विचारोन्मुख हों और तटस्थ होकर अपने निश्चय को प्रकट करें, जिससे सत्या-सत्य का निर्णय हो। अथवा निराग्रह होकर विचारशील सज्जन अन्वेषण की ओर झुकें। आज का प्रश्न बहुत साधारण है। परन्तु इसके निर्णय के लिए भी बहुत छानबीन की आवश्यकता है—

प्रत्येक पढ़ा लिखा मनुष्य नित्य प्रति अपने कार्यों में समय से काम लेता है। उसे रात और दिन का अवश्य ध्यान रहता है। एवं साप्ताहिक दिनों (Week-Days) या वारों का ध्यान भी उसके लिए परमावश्यक है। हिन्दू-धर्मावलम्बियों का तो शायद इसके बिना निर्वाह ही नहीं हो सकता, क्योंकि जब तक मुहूर्त न साधा जाय वे कुछ कार्य ही नहीं कर सकते। आज मैं इसी लिए यह जानना चाहता हूँ कि दिनों के नाम, जो नित्य हमारे काम आते हैं, कैसे रक्खे गये। क्या भारतवासियों ने ही इनका पहले पहल नामकरण किया अथवा किसी और जाति से इन्होंने दिनों के नाम सीखे ?

इस सम्बन्ध में जो कुछ मुझे ज्ञातव्य है मैं यहाँ लिखता हूँ।

## नामों की उपपत्ति।

दिनों के नाम ग्रहों की संज्ञाओं के आधार पर रक्खे गये हैं। अर्थात् जो नाम ग्रहों के हैं वही नाम उनके दिनों के भी हैं। जैसे सूर्य के दिन का नाम रविवार, आदित्यवार, अर्कवार, भानुवार इत्यादि। शनैश्चर के दिन का नाम शनिवार, सौरिवार इत्यादि। चाहे आप संस्कृत में चाहे किसी अन्य भाषा में देखें साप्ताहिक दिनों के नाम सातों ग्रहों के नामों पर ही रक्खे हुए आपको मिलेंगे। संस्कृत में ग्रह के नाम के आगे दिन या वासर या कोई और पर्य्यायवाची शब्द रख दिया जाता है। इससे यह सूचित होता है कि अमुक ग्रह का अमुक दिन है। संक्षेप के लिए कभी कभी केवल ग्रह का नाम ही दे दिया जाता है—जैसे रवौ, भौमे इत्यादि। योरप की भाषाओं में भी, इसी प्रकार, ग्रहों के नाम के साथ दिन का वाचक शब्द लगा दिया जाता है। जैसे:—

| Latin | Saxon | English |
|---|---|---|
| Dies Solis | Sunnandæg | Sunday |
| „ Lunæ | Monandæg | Monday |
| „ Martis | Tiwesdæg | Tuesday |
| „ Mercurii | Wodnesdæg | Wednesday |
| „ Jovis | Thunresdæg | Thursday |
| „ Veneris | Frigedæg | Friday |
| „ Saturni | Sæternesdæg | Saturday |

संस्कृत में नौ ग्रह हैं। अतएव नौ ही दिन चाहिए—एक एक ग्रह का एक एक दिन। फिर सात ही दिन क्यों ? इस प्रश्न पर हम आगे चल कर विचार करेंगे।

इस प्रश्न पर ध्यान देना है कि यह क्रम कैसे

चला और अमुक दिन अमुक ग्रह का है, इसका अभिप्राय क्या है। ज्योतिष के ग्रन्थों से विदित होता है कि प्राचीन समय में ग्रहों का क्रम इस प्रकार माना जाता था—शनि, बृहस्पति, मङ्गल, सूर्य, शुक्र, बुध और चन्द्रमा। अर्थात् की अपेक्षा शनैश्चर सबसे ऊपर या दू जाता था और चन्द्रमा सबसे नीचे समीप, जैसा कि चित्र (क) से प्रक

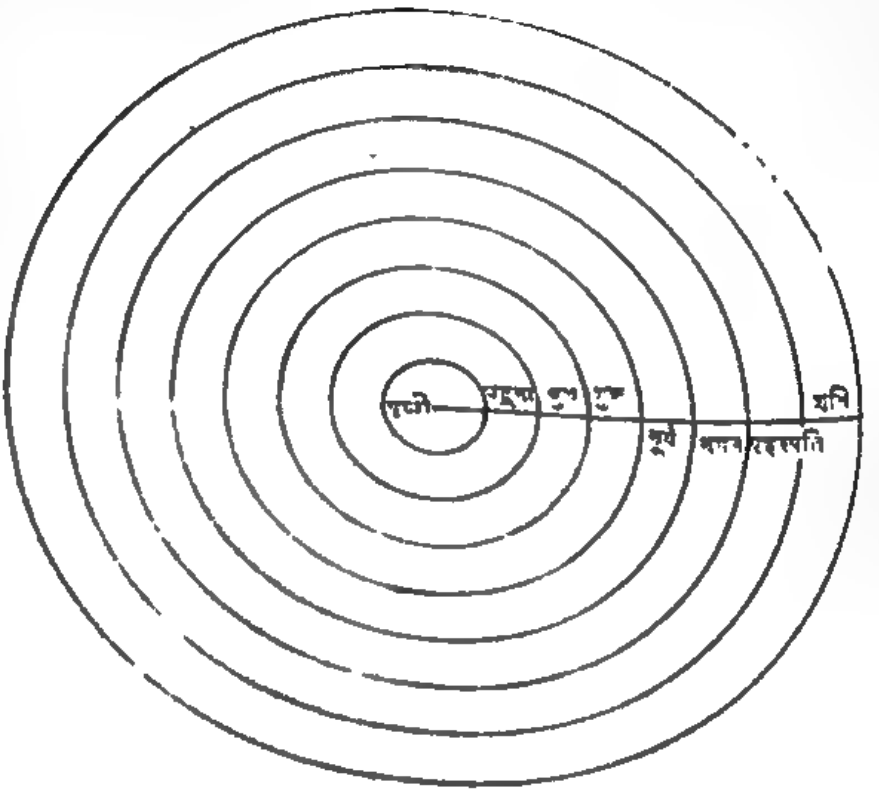


इन ग्रहों का, जैसा कि सूर्य सिद्धान्त आदि ग्रन्थों से सिद्ध है, ज्योतिषियों ने दिनों का स्वामी माना है। सूर्योदय से सूर्योदय तक के समय को दिन कहते हैं। इसके पूर्वजों ने इस काल को २४ भागों में विभक्त किया और एक एक भाग का नाम घड़ी (घंटा या घण्टा) रक्खा। पुराने ज़माने में [illegible]

बाँट दिया
एक भाग
'अवर' (H
घण्टा रख
उन्होंने प
घड़ी या
एक एक
बाँट दिया
उन्होंने
लिया कि
घण्टा
क्रमशः
ग्रह के
रहती
नारायण
के राज
हैं। इस

दिन को १० घड़ियों में बाँटने से जैसी गणना होगी

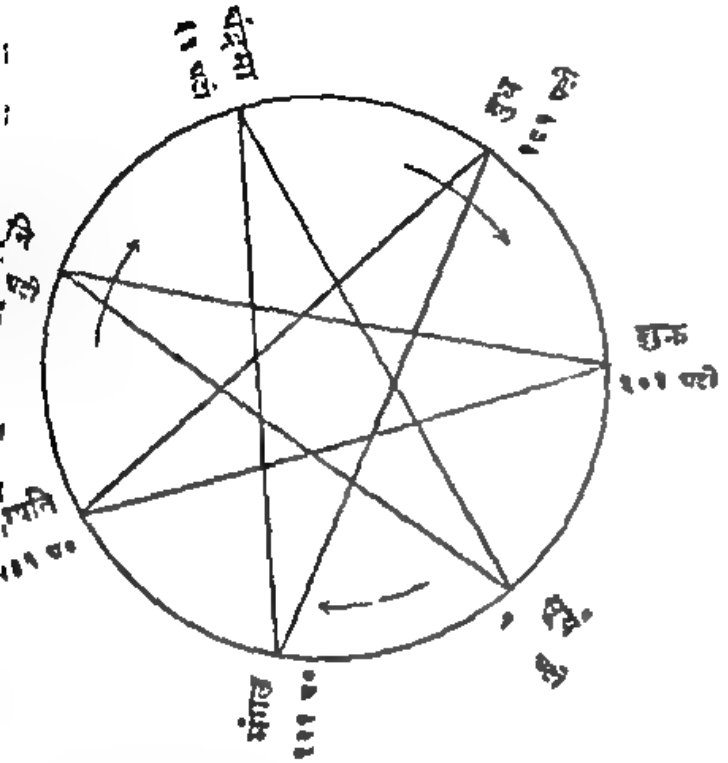

दिन को २४ घण्टों में बाँटने से यह गणना होगी

इनमें तीर का मुख रेखा या अवरोह के अनुसार दिखाया गया है।

अब पाठक समझ गये होंगे कि दिनों का क्रम कैसे बना। जो ग्रह दिन की पहली घड़ी या घण्टे का स्वामी हुआ वही उस दिन का भी स्वामी माना गया।

अब प्रश्न यह है कि पहले पहल दिनों ( \\...\ )\n...\) के नाम कब रक्खे गये और सबसे पहले किस जाति ने उनका प्रयोग किया। मैं इन दोनों प्रश्नों का उत्तर देने में असमर्थ हूँ। यही हेतु मेरे इस लेख के प्रकाशित कराने का है।

कुछ विद्वानों की राय है कि भारतवासियों ने ही सबसे पहले इन नामों को निकाला तथा इनका प्रयोग किया। कुछ वर्ष हुए मेरा भी ऐसा ही विचार था, परन्तु अब मुझे यह सम्मति प्रमाण रहित प्रतीत [illegible] समझ में शायद इन लोगों ने दिनों [illegible] से सीखा। ये विदेशी शायद [illegible] निवासी हों। अथवा कोई [illegible]

जिन मुख्य कारणों से मेरे विचार में यह परिवर्तन हुआ है उनका उल्लेख नीचे किया जाता है —

(१) अति प्राचीन लेखों में दिनों के नाम नहीं पाये जाते। इसके सिवा कुशानवंशी राजाओं के समय के लेखों में भी ये प्रायः नहीं मिलते। हाँ, अनुदो और तिथियों के नाम मिलते हैं यथा—

[illegible]

[illegible]

[illegible]

कथा, महीनों के नाम भी नहीं मिलते, जैसा कि ऊपर के उदाहरणों से सिद्ध है। उस समय लोग यही लिखते थे कि वर्षा का या अन्य ऋतु का कौन सा महीना है।

(२) सूर्य-सिद्धान्त-महता ज्योतिष के प्रसिद्ध ग्रन्थों में सप्ताह के दिनों का नाम नहीं। हाँ, दिन-पति ग्रह का नाम अवश्य है। यहाँ पर यह 'होरा' का स्वामी माना गया है और होरा की गणना उपर्युक्त क्रम पूर्वक शनैश्चर से की गई है, जैसा कि है ऊपर लिख चुका हूँ। प्राचीन-काल के ज्योतिर्विद् इसी क्रम के अनुसार ही सप्ताह के 'होरा' का विधान किया और तदनुसार ही दैनिक क्रम की कल्पना की। इन्होंने अपने ये कि [illegible] इसी क्रम के अनुसार ही प्रारम्भ होना [illegible] इसी पर आधारित होने कि शायद [illegible]

[illegible] कहते हैं कि 'होरा' का विधान [illegible] होरा और सप्त [illegible] का [illegible]

इस मत में यह शङ्का हो सकती है कि वालों ने महीनों को दस दिनों में बाँटा दिनों में नहीं। पर यह कोई भारी क्योंकि इसमें सुगमता का होना ही कार महीनों को प्रायः ३० दिनों का मानने से दिनों के ३ भाग ठीक हो जाते हैं। सप्ताह से ठीक नहीं होते।

(३) जहाँ तक मुझे विदित है, हमारे सप्ताहों का उल्लेख नहीं। यदि हुआ भी नवीन ग्रन्थों में।

(४) हमारे यहाँ नवग्रह माने जाते हैं। मन्दिरों में बहुधा ग्रहों की मूर्तियाँ पाई जा वे सात ही होती हैं। यदि हमारे यहाँ इतवा उत्पत्ति होती तो शायद सात दिन का 'सप्ता प्रचलित होता।

इसका बेखटके कहा जा सकता है कि देश के निवासियों को ईसासदी की शताब्दी में सात ग्रहों का ज्ञान था इस बात का प्रमाण हमें यूनानी लेखों मिलता है।

[illegible] इस विषय पर

ने स्वीकार कर लिया। अपर मिडिल सेक्शन, अर्थात् श्रेणी, तक इतिहास, भूगोल, विज्ञान और गणित । साल से विद्यार्थियों की अपनी भाषा में सिखाये । इन विषयों की शिक्षा अब अपनी भाषा के द्वारा अब तक ये विषय भी अँगरेज़ी द्वारा ही पढ़ाये जाते वारे छोटे छोटे बच्चे अँगरेज़ी में हिसाब किया करने ोल की परिभाषायें अँगरेजी मे बिना समझे रटा करते गणित उनकी समझ ही में न आता था। इतिहास की सी वे अँगरेजी-साहित्य की पुस्तक मान कर पढ़ा करते न विषयों का ज्ञान अब पक्का होगा, क्योंकि विद्या- वे अँगरेज़ी भाषा की कठिनाई दूर करने के लिए ने जानने में समय न नष्ट करना पड़ेगा। अध्यापकों को ही बात, देशी भाषा और अँगरेजी में, दो दफ़े न बतानी । जैसा कि अब तक वे करते थे।

पाठ्य प्रणाली-विषयक आज्ञा-पत्र के साथ जो भूमिका है उसमें लिखा है कि सातवें और आठवें दरजों में ों को उत्साहित करना चाहिए कि वे अँगरेज़ी पारि- क शब्दों का प्रयोग करें। उसमें यह भी लिखा है कि वें दरजे में गणित की परीक्षा अँगरेज़ी भाषा ही मे । विज्ञान की शिक्षा सातवें दर्जे से आरम्भ होगी। आज्ञा के अनुसार लड़कों को हिन्दी और उर्दू न नवीन वैज्ञानिक शब्दों का ज्ञान न होगा जिनके ने के लिए वर्षों से विद्वान् उद्योग कर रहे हैं। इतिहास ज़े सातवें दरजे से पढ़ाया जाता था। अब छठे से ही या जायगा। परन्तु खेद का विषय है कि इतिहास की य पुस्तकें अच्छी नहीं चुनी गईं। इन पुस्तकों से तो ारप्रान्त की पुस्तकें अच्छी हैं। भूगोल की शिक्षा अँग- पुस्तकों द्वारा ही दी जायगी। परन्तु पादटीका (फुट नोट) सूचना दी गई है कि देशी भाषा में पुस्तकें तैयार हो रही । विज्ञान भी अँगरेज़ी-पुस्तकों द्वारा ही पढ़ाया जायगा। ठीक नहीं। ऐसा करने से अपनी भाषा के द्वारा शिक्षा मिलेगी। विज्ञान में अब सातवें दरजे में भी प्रयोग (Experiments) कराये जाने हैं। यदि प्रयोग हिन्दी था उर्दू में लिखे रहेंगे तो उनको लड़के अच्छी समझ गे। भूगोल में—विशेष करके प्राकृतिक भूगोल में— गरेजी-पुस्तकों द्वारा पढ़ी हुई परिभाषायें कठिन मालूम होंगी। आशा है कि हिन्दी और उर्दू के लेखक अब इन विषयों पर उपयुक्त पुस्तकें लिखेंगे और सरकार उनका उचित आदर करेगी।

"स० ना०"

## २—सम्पादकों, समालोचकों और लेखकों का कर्तव्य।

इस देश में सम्पादन-कार्य की शिक्षा का कुछ भी प्रबन्ध नहीं। कुछ लोग अच्छी शिक्षा पाकर सम्पादक बनते हैं; कुछ लोग यथेष्ट शिक्षा प्राप्त करके भी पहले किसी सुयोग्य सम्पादक की अधीनता में काम करते हैं, तब कोई अख़बार या सामयिक पुस्तक निकालते हैं। कुछ लोग न अच्छी तरह शिक्षा ही प्राप्त करते हैं, न सम्पा- दन-कार्य्य ही सीखते हैं, और सम्पादक बन बैठते हैं। हमारे सदृश हिन्दी के अनेक सम्पादक प्रायः इसी तीसरी कक्षा के हैं। इसी से कोई पत्र या पुस्तक निकालने के वर्षों पहले, हिन्दी-सेवा की दुहाई देते हुए, वे अपने अजन्मा पत्र या पुस्तक का विज्ञापन मुफ़्त ही छपाते हैं। उसमें वे बड़ी बड़ी बातें कहते हैं। राम राम करके जब उनके पत्र का पहला अङ्क निकलता है तब इसके पहले ही पृष्ठ पर किसी न किसी त्रुटि के लिए क्षमा-प्रार्थना के दर्शन होते हैं। ऐसे पत्र शीघ्र ही बन्द हो जाते हैं। यदि कुछ दिन चलते भी हैं तो जीते ही मुर्दे बन कर अपने दिन काटते हैं। तथापि परिश्रमी, सचेष्ट और ज्ञान-पिपासु सम्पादक, विशेष शिक्षित और अनुभवशील न होने पर भी, अपनी और अपने पत्र की बहुत कुछ उन्नति कर सकते हैं। सम्पादक को इन शास्त्रों और इन विषयों का ज्ञान अवश्य होना चाहिए—इतिहास, सम्पत्तिशास्त्र, राष्ट्र-विज्ञान, समाज- तत्त्व, व्यवस्था-विज्ञान (Juri-prudence), अपराधतत्त्व (Criminology), अनेक लौकिक और वैषयिक व्यापारों का संख्या सम्बन्धी शास्त्र (Statistics), और और जन- पद वर्ग के अधिकार और कर्तव्य, अनेक देशों की शासन- प्रणाली, शान्तिरक्षा और स्वास्थ्य रक्षा का विचार, शिक्षा- पद्धति और कृषि-वाणिज्य आदि का वृत्तान्त। देश का स्वास्थ्य किस तरह सुधर सकता है, कृषि, शिल्प और वाणिज्य की उन्नति कैसे हो सकती है, शिक्षा का विस्तार और उत्कर्ष-साधन कैसे किया जा सकता है। किन उपायों

के अवलम्बन से हम राष्ट्र सम्बन्धी नाना प्रकार के अधिकार पा सकते हैं; सामाजिक कुरीतियों को किस प्रकार दूर कर सकते हैं—इत्यादि अनेक उपयोगी विषयों पर सम्पादकों को लेख लिखना चाहिए। सम्पादक होने ही से कोई सर्वज्ञ—सब विषयों का ज्ञाता—नहीं हो सकता। सब विषय तो दूर रहें, दो चार विषयों का भी यथेष्ट ज्ञान प्राप्त करना दुःसाध्य बात है। अतएव यदि एक एक सम्पादक एकही एक विषय का यथान्त ज्ञान प्राप्त करके उसी पर लेख लिखे तो बहुत लाभ हो। इस समय दशा यह है—सम्पादक रोज़ ही पाठकों से कहा करते हैं, यह न करो वह न करो, ऐसा करो वैसा करो। परन्तु यदि पाठक उनसे पूछ बैठें कि अच्छा आपही बताइए कि अमुक काम किस तरह किया जाय तो ये बेचारे विपत्ति में पड़ जायँ। अतएव सम्पादन-कार्य्य की वर्तमान प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता है।

समालोचना का काम भी प्रायः सम्पादक ही करते हैं। समालोचना से मतलब पुस्तकों की समालोचना से है। कभी कभी और लोग भी आलोचना करते हैं। यह काम बड़ा कठिन है। परन्तु समालोचक अपने को प्रायः सर्वज्ञ समझते हैं और हर विषय की पुस्तक की समालोचना करने से ज़रा भी नहीं हिचकते। लेखक की अपेक्षा समालोचक यदि अधिक विद्वान् है तो और भी अच्छी बात है। तथापि यदि वह समालोच्य पुस्तक के विषय का यथेष्ट ज्ञान रखता है तो भी वह समालोचना का काम कर सकता है। ऐसी दशा में हमारे कुछ भी कहीं कहीं अच्छी समालोचना कर सकते हैं। कठिनता यह है कि किसी को किसी अच्छे काम की आलोचना लिखना है। वह स्वयं तो करि नहीं, पर दूसरे कोई काम का [illegible] लिखा है तथा और [illegible] समालोचकों की [illegible] है। इस दशा में [illegible] वह उस काम की [illegible] मेल का सकता है। जिसने [illegible] किसी की पुस्तक की [illegible] हुई। [illegible] किसी की पुस्तक की [illegible] है। [illegible] समालोचना [illegible]

विशेष कर यही दिखाता है कि लेखक ने व्याकरण की है, अलङ्कार-शास्त्र की भूलें की हैं, छन्दः शास्त्र की है, मुहावरे की भूलें की हैं। वह यह नहीं कि इन बातों के सिवा और भी कोई बात है या नहीं। समालोचना होनी चाहिए। छन्द, अलङ्कार, व्याकरण तो गौण बातें हुईं। इन्हीं पर ज़ोर देना अविवेक के सिवा और कुछ नहीं। व्याकरण आदि की भूलें किससे नहीं? अँगरेज़ी, फ़ारसी, अरबी, संस्कृत भाषाओं के बड़े बड़े विद्वानों ने क्या इस तरह की भूलें नहीं? पर इससे क्या उनके ग्रन्थों की प्रतिष्ठा कुछ कम गई है? किसी पुस्तक या प्रबन्ध में क्या लिखा है, किस ढँग से लिखा गया है, वह विषय उपयोगी है नहीं, उससे किसी का मनोरञ्जन हो सकता है या उससे किसी को लाभ पहुँच सकता है या नहीं, उसमें कोई नई बात लिखी है या नहीं, यदि नहीं तो पुरानी बात को ही नये ढँग से लिखा है या नहीं—विचारणीय विषय है। समालोचक को प्रधानतः इन्हीं पर विचार करना चाहिए। लेखक ने अपने लेख या पुस्तक को जिस उद्देश से लिखा है वह यदि सिद्ध हुआ तो समझना चाहिए कि उसने अपने कर्तव्य का पालन किया। इन बातों पर विचार न करके अवान्तर बातें समालोचना करना और व्यर्थ की खाल निकालना [illegible] लोचना नहीं कही जा सकती।

लेखकों को सरल और सुबोध भाषा में अपना [illegible] लिखना चाहिए। इन्हें आगाडम्बर द्वारा पाठकों पर [illegible] करने की चेष्टा न करनी चाहिए कि वे कोई बड़ी ही [illegible] और बड़ी ही असाधारण बात कह रहे हैं। इस प्रकार [illegible] भाषा को अच्छे पाठक और समालोचक बहुत [illegible] अच्छा करते हैं। जिस [illegible] में लेखक के विचारों [illegible] हैं, जिसमें लेखक के [illegible] और [illegible] हैं, जिसमें वे [illegible] के [illegible] हैं, [illegible] और [illegible] के [illegible] हैं, जिसमें [illegible] नाम, [illegible] [illegible] हैं—उस [illegible] [illegible] है। परन्तु [illegible] नहीं, [illegible] है। जिस [illegible] [illegible] [illegible] चाहिए जिस [illegible]

के अवलम्बन से हम राष्ट्र सम्बन्धी नाना प्रकार के अधिकार पा सकते हैं; सामाजिक कुरीतियों को किस प्रकार दूर कर सकते हैं—इत्यादि अनेक उपयोगी विषयों पर सम्पादकों को लेख लिखना चाहिए। सम्पादक होने ही से कोई सर्वज्ञ—सब विषयों का ज्ञाता—नहीं हो सकता। सब विषय तो दूर रहें, दो चार विषयों का भी यथेष्ट ज्ञान प्राप्त करना दुःसाध्य बात है। अतएव यदि एक एक सम्पादक एकही एक विषय का सूक्ष्मान्त ज्ञान प्राप्त करके उसी पर लेख लिखे तो बहुत लाभ हो। इस समय दशा यह है—सम्पादक रोज़ ही पाठकों से कहा करते हैं, यह न करो वह न करो, ऐसा करो वैसा करो। परन्तु यदि पाठक उनसे पूछ बैठें कि अच्छा आपही बताइए कि अमुक काम किस तरह किया जाय तो वे बेचारे विपत्ति में पड़ जायँ। अतएव सम्पादन-कार्य्य की वर्तमान प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता है।

समालोचना का काम भी प्रायः सम्पादक ही करते हैं। समालोचना से अनेक पुस्तकों की समालोचना से है। कभी कभी और लोग भी आलोचना करते हैं। यह काम बड़ा कठिन है। परन्तु समालोचक अपने को प्रायः सर्वज्ञ समझते हैं और हर विषय की पुस्तक की समालोचना करने से ज़रा भी नहीं हिचकते। लेखक की अपेक्षा समालोचक यदि अधिक विद्वान है तो और भी अच्छी बात है। तथापि यदि वह समालोच्य पुस्तक के विषय का यथेष्ट ज्ञान रखता है तो भी वह समालोचना का काम कर सकता है। ऐसी हालत में हम कभी कभी अच्छी समालोचना कर सकते हैं। कल्पना कीजिए कि किसी ने किसी अच्छे काव्य की [illegible] लिखा है। वह स्वयं तो कवि नहीं, पर अन्य कवियों का इतिहास उसने लिखा है तथा श्रेष्ठ कवियों की समालोचनायें उसने पढ़ी हैं। इस दशा में यदि वह उस काव्य की विस्तृत आलोचना करना चाहे तो कर सकता है। जिसने वह काव्य लिखी की पुस्तक को [illegible] देखा है और कुछ पढ़ी। [illegible] पुस्तक के आधार से वह [illegible] की [illegible] करने में भी [illegible] है। [illegible] समालोचना [illegible]

विशेष कर यही दिखाता है कि लेखक ने [illegible] की है, अलङ्कार-शास्त्र की भूलें की हैं, छन्द की हैं, मुहावरे की भूलें की हैं। वह या इन बातों के सिवा और भी कोई बात है जो समालोचना होनी चाहिए। छन्द, अलङ्कार, से गौण बातें हुईं। इन्हीं पर ज़ोर देना के सिवा और कुछ नहीं। व्याकरण की किससे नहीं? अँगरेज़ी, फ़ारसी, अ भाषाओं के बड़े बड़े विद्वानों ने क्या इस बा कीं? पर इससे क्या उनके ग्रन्थों की प्रतिष्ठा गई है? किसी पुस्तक या प्रबन्ध में क्या कि किस ढँग से लिखा गया है, वह विषय नहीं, उससे किसी का मनोरञ्जन हो सका उससे किसी को लाभ पहुँच सकता है या नहीं, कोई नई बात लिखी है या नहीं, यदि पु पुरानी बात को ही नये ढँग से लिखा है विचारणीय विषय हैं। समालोचक को प्रधानतः पर विचार करना चाहिए। लेखक ने अपने पुस्तक को जिस उद्देश से लिखा है वह यदि सि तो समझना चाहिए कि उसने अपने कर्तव्य दिया। इन बातों पर विचार न करके अक्षर समालोचना करना और व्याकरण की ग़लतियाँ लोचना नहीं कही जा सकती।

लेखकों को सरल और सुबोध भाषा में लि लिखना चाहिए। उन्हें वाग्जाल द्वारा पाठकों क करने की चेष्टा न करनी चाहिए कि वे कोई बड़े और बड़ी ही अलौकिक बात कह रहे हैं। इस अंग्रेज़ी भाषा को अनेक पाठक और समालोचक [illegible] भाषा करते हैं। जिस रचना में संस्कृत के [illegible] हों, जिसमें संस्कृत के अनेकानेक [illegible] हों, जिसमें वेदों तथा पुराणों के [illegible] और देवताओं के नाम हों, जिसमें [illegible] बराबर यत्रतत्रादि की अपारों में लिखे हों—वह [illegible] कठिन समझते हैं। परन्तु वह [illegible] है। हिन्दी में यदि कुछ लिखना हो तो [illegible] चाहिए जिसे केवल हिन्दी जानने [illegible]

संस्कृत और अँगरेज़ी शब्दों से लदी हुई भाषा चाहे भले ही प्रकट हो, पर उससे ज्ञान और का उद्देश अधिक नहीं सिद्ध हो सकता। यदि ण्डित्य दिखाने के उद्देश से ही किसी लेख या चना न की गई हो तो ऐसी भाषा का प्रयोग ए जिसे अधिकांश पाठक समझ सकें। तभी ा उद्योग सफल होगा—तभी उसके पढ़ने वालों ार आनन्द की वृद्धि होगी।

सम्बन्ध में बँगला के मासिक पत्र "प्रवासी" में ट बहुत अच्छे निकले हैं। उन्हीं का आश्रय लेकर ाया गया है। प्रवासी के सम्पादक के विचारों से ा लेखक सर्वांश में सहमत है।

## सरकारी मदरसों की नमूनेदार इमारतें।

ी और कालेजों के अध्यापकों की योग्यता, पाठ्य- उपयोगिता और पढ़ाई तथा फ़ीस आदि के सरकार जैसे बहुत ज्ञान-ध्यान और बहुत विचार म बनाती है उसी तरह इमारतों के सम्बन्ध में भी और कालेजों से नियमों की पाबन्दी कराती है। और हाई स्कूलों की तो बात ही नहीं, देहाती इमारतों के लिए भी उसने नियम बना दिये हैं। कमरे हों, ऐसी खिड़किया हों, ऐसा बरामदा हो, र हो—यह सब सरकार ने नियमबद्ध कर दिया है। नमूनेदार इमारतों में रुपया खर्च होता है और कमी के कारण शिक्षा-विस्तार में बाधा आती है। ध में अपने नियम कुछ शिथिल कर देने के लिए अनेक लोगों ने सरकार से प्रार्थना की, परन्तु ा फल न हुआ। देश में निरक्षरता का साम्राज्य दूर करने—दूर न सही, कम करने—के लिए इमा- ी नियमों की पाबन्दी जितनी कम करनी पड़े अच्छा। एक तो वहाँ प्रारम्भिक शिक्षा मुफ़्त निवार्य भी नहीं—दूसरे इमारतों का झमेला। शिक्षा-प्रचार में बहुत नहीं तो थोड़ी बाधा ी है। बरोदा एक छोटी सी रियासत है। शिक्षा मुफ़्त ी जाय; अँगरेज़ी राज्य में को सर्व ाने से निकालना यदि और मदों में कम खर्च करके शिक्षा-विभाग में अधिक खर्च करना चाहिए और प्रारम्भिक मदरसों में फ़ीस माफ़ कर देनी चाहिए। स्विज़रलेंड बहुत छोटा देश है। उसकी आबादी सिर्फ़ ३० ४१ ००० है। अर्थात् आबादी के लिहाज़ से संयुक्त प्रान्त उससे दस ग्यारह गुना बड़ा है। स्विज़रलेंड की आबादी हमारे सिन्ध-प्रान्त से कुछ ही अधिक है। इतना छोटा देश होने पर भी वहाँ प्रारम्भिक शिक्षा मुफ़्त दी जाती है। यही नहीं, वहाँ प्रारम्भिक मदरसों में काग़ज़, क़लम, दावात और पुस्तकें भी विद्यार्थियों को मुफ़्त ही मिलती हैं। जून १९१२ के माडर्न रिव्यू में, पृष्ठ ६६३ पर, एक महाशय ने लिखा है—

The children have to pay no fees, and all, whether from rich or poor houses, are supplied free of charge with all school books, writing materials, etc.

इन महाशय का नाम राय साहब पण्डित चन्द्रिकाप्रसाद त्रिगाड़ी है। ये स्विज़रलेंड की सैर कर आये हैं और वहाँ का आपने देखा हाल उन्होंने लिखा है। ख़ैर, हिन्दुस्तान यदि अभी मुफ़्त शिक्षा पाने का पात्र नहीं, अथवा यदि सरकार के ख़ज़ाने में इस काम के लिए काफ़ी रुपया नहीं, तो यह नमूने-दार इमारतों की पख तो न लगाई जाय। देहात में बीस पचीस रुपया खर्च कर देने से तीस चालीस लड़कों के बैठने लायक़ छायादार जगह तैयार हो सकती है। पर मंज़ूरी नहीं मिलती। उधार के मकानों और छप्परों से काम लिया जाय, हर्ज नहीं। पर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड अपनी तरफ़ से एक छप्पर न रखावेगी। जब बनावेगी तब नमूनेदार ही इमारत बना-वेगी, चाहे उसमें जितना खर्च पड़े।

डाक्टर सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कलकत्ते के पास बोलपुर में ब्रह्म-विद्यालय नाम का जो स्कूल आज १२ वर्ष से खोल रक्खा है उसमें कोई २०० लड़के शिक्षा पाते हैं। अध्यापकों की संख्या २० के लगभग है। उनमें से कितने ही एम० ए०, बी० ए० हैं। कुछ तो विलायत में शिक्षा पाये हुए हैं। ये लड़के नमूनेदार इमारतों में शिक्षा नहीं पाते। ५ जून १९१२ के "लीडर" में एक महाशय ने लिखा है कि ये पेड़ों की छाया में पढ़ते हैं। पाठ्य बरामदे पर उस मकान के बरामदे में चले जाते हैं जिसमें रात को ये सोते हैं:—

सरस्वती

परलोकगत राय देवीप्रसाद ।

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

"श्री निर्मल-शारदा-सदन"

हुआ। अन्त में प्रोफ़ेसर सालिगराम पाण्डेय, एम० ए० तथा और भी कितने ही प्रतिष्ठित जनों की सलाह से पीपल कटने का निश्चय जनसाधारण ने किया। हज़ारों आदमी एकत्र हुए। कितने ही पण्डित, सुनार और सुर्लिए आये। महाराजा रघुवा भी पधारे। पुलिस वाले भी आये। १ मई १९१२ को पेड़ काटा गया तो मूर्त्ति के रूप में सिवनी निकल आये और महाराजा रघुवा ने उनके लिए वहीं एक मन्दिर बनवा देने की आज्ञा दे दी। पीपल की उम्र ७० वर्ष से कम न होगी।

हमारे भी जन्म-ग्राम से तीन फ़रलांग के फ़ासिले पर, गङ्गाजी के किनारे, पीपल का एक पेड़ था। चार पाँच महीने हुए वह सूख गया। सूखे पेड़ का कुछ अंश अब तक खड़ा है। कोई ५० वर्ष हुए उसकी जड़ के पास एक खोखले में किसी ने कई उपलखण्ड रख दिये। उनकी पूजा होती रही। पीपल का तना ज्यों ज्यों पुष्ट होता गया वे मूर्तियां उसके भीतर बन्द होती गईं। धीरे धीरे वे सभी उसके गर्भ में चली गईं और अन्तर्हित हो गईं। पेड़ के सूख जाने और खड्डा तथा गूदे के सङ्कुचित होने से वे अब फिर निकल आई हैं। प्रोफ़ेसर पाण्डेयजी उनके लिए एक मन्दिर बनवा दें तो बड़ी कृपा हो।

## ८—इटाली की समर-शक्ति।

आस्ट्रिया के अधिकार में कुछ प्रान्त ऐसे हैं जहां के निवासी इटाली ही की भाषा बोलते हैं और इटाली ही के रीति-रिवाज व्यवहार में लाते हैं। मन से वे अपने को इटाली ही की प्रजा समझते हैं। इस देशांश को मिला लेने के लिए इटाली बहुत समय से लालायित है। इसी से वह आस्ट्रिया का चिरकालीन शत्रु रहा है। कुटिल राजनीति की प्रेरणा से ही उसे जर्मनी और आस्ट्रिया के साथ मित्रता करनी पड़ी थी। जब आस्ट्रिया ने सर्बिया के साथ युद्ध आरम्भ कर दिया तब इटाली ने उस मैत्री सूत्र को तोड़ दिया। वह यह चेष्टा करने लगा कि उसके अधिकृत देशांश यदि आस्ट्रिया उसे खुशी से दे दे तो वह युद्ध से उदासीन रहे। आस्ट्रिया ने ऐसा करने से इनकार कर दिया। कुछ प्रलोभन उसने दिया ज़रूर, पर उसे इटाली ने पर्याप्त न समझा। फल यह हुआ कि इटाली भी अब युद्ध में कूद पड़ा है। इटाली के राजा (किंग विक्टर एमैन्युअल, तीसरे) सेना सञ्चालन करते हैं। इटाली पहले त्रिदेश-मैत्री में दाख़िल थी, तथापि उसकी सेना संख्या और सामर्थ्य में ही अधिक है। शान्ति के समय इटाली में २,३१,००० सेना रहती है। युद्ध छिड़ने पर यह संख्या बढ़ कर १२,३०,००० तक पहुँच जाती है। कानून यह है कि २० वर्ष से लेकर ३९ वर्ष की उम्र तक इटाली का प्रत्येक पुरुष सेना में काम पाने के लिए बाध्य है। शान्ति के समय आस्ट्रिया की सेना-संख्या ४,३२,००० और युद्ध के समय १८,२०,००० है। यदि यह हिसाब ठीक है तो इटाली की युद्ध-कालीन सेना आस्ट्रिया की सेना से कम दुगनी है। इटाली की ३२ लाख सेना में यदि अशिक्षित सेना भी शामिल समझी जाय तो भी, तीन महीने युद्ध जारी रहने पर, वह भी सिखाई जा सकती और कवायद, परेड इत्यादि सीख कर शिक्षित सेना के ही युद्ध क्षेत्र में काम कर सकती है।

अब इटाली और आस्ट्रिया की सामुद्रिक शक्ति का हिसाब देखिए:—

| | आस्ट्रिया | इटाली |
|---|---|---|
| सेना | ३२,००० | ४०,००० |
| बैटिलशिप | १२ | १४ |
| आरमर्ड क्रूज़र | ३ | १० |
| हलके क्रूज़र | १० | १६ |
| टारपीडो जहाज़ | ६ | १ |
| टारपीडो नाव | २२ | ६४ |
| टारपीडो-नाव नाशक | १८ | ३३ |
| सब मैरीन | ६ | २० |

यदि इस हिसाब में भूल नहीं तो सामुद्रिक शक्ति में भी आस्ट्रिया से इटाली बढ़ा चढ़ा है। अतएव इटाली के युद्ध में शामिल हो जाने से रूस, फ्रांस और इँगलेंड का पक्ष पहले से बहुत अधिक सबल हो गया समझना चाहिए।

## ९—नये सेक्रेटरी चार्ल्स स्क्रेट।

भारत के राज्य-प्रबन्ध और शासन से सम्बन्ध रखने वाला जो दफ़्तर लन्दन में है उसका नाम है—इंडिया आफ़िस। उसका प्रधान अधिकारी सेक्रेटरी आफ़ स्टेट कहाता है। भारत के भाग्य की डोर अधिकांश में उसीके हाथ में

इती है। वह एक कौंसिल की मदद से भारत के बड़े
ड़े मामलों का निपटारा करता है। अब तक इस पद
र लार्ड क्रू थे। सम्राट् के सिंहासनारोहण-सम्बन्धी जलसे
ं ये उस साल यहां भी आये थे। अब आपको एक और
ो पद मिला है। आपकी जगह राइट आनरेबल आस्टिन
म्बरलेन सेक्रेटरी आव् स्टेट हुए हैं। लार्ड क्रू उदार-पक्ष के
ं; आस्टिन चेम्बरलेन अनुदार-पक्ष (Conservative)
। हैं। इस कारण सेक्रेटरी आव् स्टेट के पद पर आपकी
ियुक्ति होने से भारत के कुछ हितैषी सन्तुष्ट नहीं। आपका
एक चित्र अन्यत्र इसी संख्या में प्रकाशित है।

## १०—राय देवीप्रसाद की परलोक-यात्रा।

बड़े दुःख की बात है, बड़े ही परिताप का विषय है,
ड़ी ही हृदय-दाहक घटना है—राय देवीप्रसाद अब इस
ोक में नहीं। गत ३० जून को सवेरे १० बजे ये उस
'धाम" के पथ के पथिक हो गये जहां से फिर कोई लौट कर
हीं आता—"यद्गत्वा न निवर्तन्ते"। ऐसे सच्चे देश-भक्त,
ैसे उत्तम वक्ता, ऐसे उत्कृष्ट कवि, ऐसे हार्दिक हिन्दी-प्रेमी,
ैसे पुराण धर्मिष्ठ की निधन-वार्ता अचानक सुननी पड़ेगी,
सका स्वप्न में भी ख़याल न था। सुन कर सिर पर वज्रपात
ा हुआ, कलेजा कांप उठा। दूर होने के कारण अपने इस
ाननीय मित्र के अन्तिम दर्शनों से भी वह जन वञ्चित रहा।
ोक ] जिसकी हास्यरस-पूर्ण, पर तर्क-सङ्गत और युक्ति-
ुक्त, वक्तृता सुन कर, कुछ समय पूर्व, श्रोता लोग अत्यन्त
ी मुग्ध हो गये थे वह विद्वान्, वह नामी वकील, वह
र्म्म-प्राण पुरुष केवल ५८ वर्ष की उम्र में, अपने प्रेमियों
ो, अपने नगर के निवासियों को, अपने मित्रों और कुटु-
्बियों को रुला कर चल दिया। कानपुर में आपकी बड़ी
तिष्ठा थी। कोई बड़ा काम ऐसा न होता था जिसमें आप
रीक न होते हों। कोई कैसा ही क्यों न हो, यथा शक्ति
ाप उसकी अवश्य ही इच्छा-पूर्ति करते थे। बस, आपके
हां तक उसे पहुँच भर जाना चाहिए। नवयुवकों तक की
भाओं में आप प्रसन्नता पूर्वक जाते थे, व्याख्यान देते थे,
ौर प्रार्थना करने पर सभापति का पद भी ग्रहण कर लेते
ते। धर्म्म आपकी बड़ी प्यारी वस्तु थी। ब्रह्मसमाज-सनातन-
र्म्म मण्डल की स्थापना आप ही ने की थी। सङ्गीत में भी
आप प्रवीण थे। कविता आपकी बहुत ही सरस और
स्वाभाविक होती थी। बहुत बरसों तक आपके स्थान पर हर
रविवार को एक कवि-मण्डली का अधिवेशन होता था और
निश्चित समस्याओं पर बड़ी सुन्दर पूर्तियां सुनाई जाती थीं।
आप बहुत शीघ्र कविता करते थे। आपकी कई कवितायें
सरस्वती में भी निकल चुकी हैं। "देश-हित के कुण्डल"—
पाठकों को अब तक न भूले होंगे। राय साहब थे तो
कायस्थ, पर आचरण और धार्म्मिकता में आप बड़े बड़े विद्वान्
ब्राह्मणों से भी बढ़े हुए थे। वेदान्त आपका प्यारा विषय था।
कुछ समय पूर्व आप पञ्चदशी का परिशीलन करते थे।

कानपुर के ज़िले में एक मौज़ा भदरस है। राय साहब
वहीं के रहनेवाले थे। शिक्षा आपने जबलपुर में पाई थी।
वहीं आप बी० ए० और वहीं बी० एल० हुए। हाईकोर्ट
वकील की परीक्षा पास करके आपने कानपुर में वकालत
शुरू की। थोड़े ही समय में आपकी गिनती कानपुर के
नामी वकीलों में हो गई। आप अधिकतर दीवानी के ही
बड़े बड़े मुक़द्दमे लेते थे। आपका दीवानी क़ानून-विषयक
ज्ञान बहुत बढ़ा चढ़ा था। बड़े बड़े पेचीदा मुक़द्दमे बहुधा
आप ही के पास आते थे। आप पर नगर-निवासियों का
बड़ा प्रेम था। आपकी निधन-वार्ता फैलते ही शहर के
बाज़ार बन्द हो गये। कचहरी भी बन्द कर दी गई।

राय साहब ने अनेक काम अपने ऊपर ले रक्खे थे।
आप म्यूनिसिपल बोर्ड के मेम्बर थे, कांग्रेस कमिटी और
पीपुल्स एसोसिएशन के सभापति थे। १९१२ में कानपुर
में जो प्रान्तिक कान्फ्रेन्स हुई थी उसकी अभ्यर्थना-समिति
के आप ही सभापति थे। गत अप्रिल के आरम्भ में हिन्दी
का जो प्रान्तिक सम्मेलन गोरखपुर में हुआ था उसके भी
सभापति आप ही थे। लन्दन की रायल एशियाटिक सोसा-
यटी ने आपको अपना मेम्बर बनाया था।

राय साहब की लिखी हुई कितनी ही पुस्तकें हैं।
चन्द्रकला भानुकुमार-नाटक और परमारथ-पारस की आलो-
चनायें, बहुत पहले, सरस्वती में निकल चुकी हैं। पहले
आप मासिक साहित्य सम्बन्धी कविता पुस्तक हर महीने निका-
लते थे। पीछे से धर्म्म कुसुमाकर नामक एक मासिक पत्र
आप निकालने लगे थे। ब्रह्मसमाज का और सर्वसाधा-
रण की और भी कितने ही काम करके आप साहित्य सेवा के
लिए भी समय निकाल लेते थे। विद्यार्थियों के लिए भी

क, से प्राप्य। जितना आदर इस तरफ़ तुलसीकृत
ण का है उतना ही बङ्गाल में कृत्तिवासीय रामायण
। उसीका यह छन्दोबद्ध हिन्दी अनुवाद है। बाबू
मबलसिंह ने इस अनुवाद की रचना एक अच्छे कवि
ाई थी। इस बात को कई वर्ष हुए। प्रस्तुत पुस्तक
अनुवाद का तीसरा संस्करण है। पद्य-रचना सरस
सुन्दर है। अनेक स्थलों में यह रामचरितमानस की
ी करती है। भाषा प्रयोग में भी तुलसीदास ही की
का अनुकरण किया गया है। यह है तो पुरानी, पर
है। पुस्तक संग्रहणीय है।

❊

५—बाल-धर्म्म शिक्षक। आकार छोटा; पृष्ठ संख्या
मूल्य ३ आने; लेखक, श्रीयुत काशीनाथ; प्रकाशक,
न गणेशशङ्कर विद्यार्थी (प्रताप-प्रेस, कानपुर) से प्राप्य।
पुस्तक में प्रश्नोत्तर के रूप में साधारण धर्म्म के सिद्धान्त
ला-पूर्वक लिखे गये हैं—"लेखक ने यथा-शक्ति यह
ाश की है कि किसी सम्प्रदाय के किसी मुख्य धार्म्मिक
न्त के विरुद्ध इस पुस्तक में कोई बात न आने पावे,
जिन कुरीतियों, कुविचारों और कुसंस्कारों को देश
गभग सभी विद्वान् और सुधारक देश, जाति और
र्म्म के लिए सर्वथा अहितकर मानते हैं, और जो उन्नति,
र्ग, सदाचार और उदार-धर्म्म के सर्वथा प्रतिकूल हैं
का दिग्दर्शन मात्र बड़े ही नम्र शब्दों में कहीं कहीं कर दिया
है।" अतएव यह बड़ी अच्छी पुस्तक है और सभी सम्प्रदाय
ों के काम की है। भाषा भी सरल और सुबोध है।

❊

६—विषवृक्ष। आकार छोटा; पृष्ठ-संख्या २६२; मूल्य
आने; अनुवादक, पण्डित गुलजारीलाल चतुर्वेदी
धर्म्मरत्न), प्रकाशक, पण्डित हरिदास वैद्य, २०१ हरि-
रोड, कलकत्ता, से प्राप्य। बँगला के नामी लेखक
बङ्किमचन्द्र चटर्जी के प्रसिद्ध उपन्यास, विषवृक्ष, का
हिन्दी-अनुवाद है। अनुवाद अच्छा हुआ है। भाषा सरस
सरल है। छपाई उत्तम और रङ्गीन टाइटिल पेज मनो-
हर है। पुस्तक पढ़ने योग्य है।

❊

७—आत्म-परीक्षा। आकार छोटा पृष्ठ-संख्या ७२;
ल्य २ आने; प्राप्ति-स्थान—सुपरिंटेंडेंट, स्याद्वादमहाविद्या-
लय, काशी। ईसवी सन् ८०० के लगभग विद्यानन्द
स्वामी नाम के एक जैन विद्वान् हो गये हैं। उन्हीं के
आप्त परीक्षा नामक संस्कृत ग्रन्थ का यह हिन्दी-अनुवाद है।
मूल पुस्तक में १२४ श्लोक हैं। प्रस्तुत पुस्तक में मूल भी
है और उसके नीचे उसका अर्थ भी हिन्दी-गद्य में है। इस
गद्य के लेखक श्रीयुत उमरावसिंह जैन हैं। आपने भूमिका
में लिखा है:—

'इस ग्रन्थ के कर्ता ने [illegible] आप अर्थात् जैन का सच्चा
ज्ञान बतानेवाले पुरुष की इस आप्त-परीक्षा में परीक्षा की है। और वैशेषिक,
सांख्य वेदान्त और वेदान्त आदि दर्शनों के कर्ताओं में सर्वज्ञता का लक्षण
सर्वज्ञपना व वीतरागपना न पाकर उनमें इस ग्रन्थ के द्वारा उपर्युक्त लक्षण से
सर्वज्ञपना नहीं सिद्ध किया है'।

सो और सभी शास्त्रकार अल्पज्ञ, राग पूर्ण और झूठे;
एक मात्र अर्हन्तदेव सच्चे, सर्वज्ञ और वीतराग! लेखक के
मत में दूसरों को गाली देना और अपनों की अहन्ता का
पटह पीटना ही शायद सचाई, सर्वज्ञता और वीतरागता
का सबसे बड़ा लक्षण है।

❊

८—सती-मण्डल, भाग १। इस नाम की एक पुस्तक
गुजराती में है। उसके कई संस्करण हो चुके हैं। पण्डित
केशवजी विश्वनाथ त्रिवेदी ने उसे लिखा है। प्रस्तुत पुस्तक
उसी गुजराती-पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है। अनुवादक हैं—
श्रीयुत माधव शर्म्मा। पुस्तक की पृष्ठ-संख्या चार सौ के ऊपर
है। सुन्दर जिल्द बँधी हुई है। छपाई और कागज़ साधारण
है। मूल्य है—डाई रुपया। इसके पहले दर्शन में सीता,
लक्ष्मी, सरस्वती आदि देवी सतियों—सुकन्या, दमयन्ती,
सावित्री आदि महासतियों—शकुन्तला, सत्यवती, लीलावती
आदि सतियों—विदुषी, कर्म्मदेवी, कलावती आदि वीर-
सतियों और मदाम माटिन, मरियम, पोरशिया आदि विदेशी
सतियों का जीवनचरित है। इसके दूसरे दर्शन में स्त्री पुरुष
के धर्म्मोन्नति सदाचार आदि से सम्बन्ध रखने वाली अनेक
उत्तमोत्तम शिक्षायें हैं। अन्त में विषयानुसारिणी कुछ
कवितायें भी हैं। भाषा सरल है। अनुवादक महाशय की
मातृ-भाषा गुजराती है। अतएव आपकी भाषा-सम्बन्धिनी
त्रुटियां क्षम्य हैं। पुस्तक उत्तम है। कविता की पंक्ति, व
महाशय के पढ़ने पर मूल लेखक के [illegible] मिलती है

## पुस्तक-चर्चा ।

१—श्रीमद्भागवत भाषान्तर । आकार बड़ा; सुन्दर सुनहरी-चन्द्रांकित जिल्द बँधी हुई; पृष्ठ-संख्या ११२० × ८ × ८; काग़ज़ मोटा; टाइप बड़ा; अनेक चित्रों से विभूषित। इन सब विशेषताओं के होते हुए भी मूल्य केवल दो रुपये ! पुस्तक इतनी सस्ती क्यों ? इस लिए कि परम-भिक्षु अमरदानन्दजी की देख-रेख में यह ग्रन्थ कार्य्यालय, कालबादेवी रोड, बम्बई, से
कार्य्यालय गुजराती भाषा के साहित्य
रहा है उतनी शायद ही और किसी
के उपयोगी ग्रन्थ प्रकाशित करने
पर बेचने ही से देश में साक्षरता
है । इस उद्देश की सिद्धि के
। इन्हीं को लक्ष्य मान कर यह
कार्य करता है । सरल
का यथानुवाद केवल
की वृद्धि होगई । इसके साथ
पर बने हुए चित्र भी देना
में एक एक मूल श्लोक भी
उपयोग करता है । यह इस
। पहली चार आवृत्तियाँ बिक
गुजराती भाषा के ग्रन्थियों ने
अनेक वर्ष पहले बँगला-भाषा में अनुवाद हो चु
के पढ़ने से पुस्तक में दिए हुए इतिहास के उप
का इस पुस्तक में विशेष उपयोग हुआ है। पुस्त
अच्छे हैं। प्रकृतिक दृश्यों के
दिखाई गई है। भाषा सरल है। विषय विभाग
पुस्तक अवश्य-पठनीय, इतिहास-प्रेमी और
विद्यार्थियों के पढ़ने लायक है। पुस्तक हिंदुस्तान
लेखक महाशय को लिखने में कितनी है।

२—सुखी सन्तान । आकार डिमाई, पृ
१६२; मूल्य आठ आने; लेखक, श्रीयुत घोटाभाई
पुराणी, एम० ए०; प्रकाशक, श्रीयुत चमनलाल, बी
पञ्जाब प्रिंटिंग प्रेस, लाहौर। यह बड़ी ही उप
पुस्तक है । प्रत्येक पढ़ी-लिखी स्त्री को इसे पढ़
अपने पास रखना चाहिए । शिशु-पालन और
सम्बन्ध रखने वाली बातें इसमें हैं। लेखक के अनु
"विश्वसनीय और प्रमाणभूत लेखकों के अपने
लिखी हुई बातों"—के आधार पर इसकी रचना
भाषा में त्रुटियाँ हैं, पर इस इतने दोष से पुस्तक
योग्यता कम नहीं हुई ।

४—कृत्तिवास-प्रणीत रामायण का लघुतम
आकार बड़ा; पृष्ठ-संख्या ४७० + ७४; मूल्य १
प्रकाशक—पण्डित रामनाथ वाजपेई, लक्ष्मन स्टीम प्रिं

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## मानस-कोश।

अर्थात्

'रामचरितमानस' के कठिन कठिन शब्दों का सरल अर्थ।

हमने काशी की नागरी-प्रचारिणी सभा के द्वारा मुद्रित करा कर यह "मानसकोश" नामक पुस्तक प्रकाशित की है। इस "मानसकोश" को सामने रखकर रामायण के अर्थ समझने में हिन्दीप्रेमियों को बड़ी सुगमता होगी। इसमें उत्तमता यह है कि केवल एक शब्द के एक एक दो दो नहीं, कई कई अर्थबोधक शब्द देकर उनका अर्थ समझाया गया है। इसमें अकारादि क्रम से ६०४५ शब्द हैं। मूल्य केवल १) रुपया रक्खा गया है, जो पुस्तक की लागत और उपयोगिता के सामने कुछ भी नहीं है। जल्द मंगाइए।

## *सचित्र हिन्दी महाभारत*

( मूल आख्यान )

७० से अधिक पृष्ठ  बड़ी साँची  १९ चित्र

अनुवादक—हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी।

महाभारत ही आर्यों का प्रधान ग्रन्थ है, यही आर्यों का सच्चा इतिहास है और यही सनातन धर्म का बीज है। इसी के अध्ययन से हिन्दुओं में धर्म-ज्ञान, पुरुषार्थ और समयानुसार काम करने की शक्ति आजतक होती आई है। यदि हम चाहें भारतवर्ष के ५ सहस्र वर्ष पहले का सच्चा इतिहास जानना हो, यदि भारतवर्ष के स्त्रियों को सुशिक्षित करके प्राचीन धर्म का पुनरुद्धार करना अभीष्ट हो, यदि ब्रह्मचारी भीष्मपितामह के पावन चरित्र को पढ़कर ब्रह्मचर्य रक्षा का महत्त्व देखना हो, यदि भगवान् कृष्णचन्द्र के उपदेशों से अपने आत्मा को पवित्र और बलिष्ठ बनाना हो, तो इस "महाभारत" ग्रन्थ को मंगा कर अवश्य पढ़िए। इसकी भाषा बड़ी सरल, बड़ी चित्ताकर्षिनी और बड़ी मनोहारिणी है। प्रत्येक पढ़ी लिखी स्त्री अथवा कन्या को यह महाभारत मँगा कर अवश्य पढ़ना और उससे लाभ उठाना चाहिए। मूल्य केवल ३) रुपये।

[ कविरत्न श्रीअखिलानन्द-प्रणीत ]

## दयानन्ददिग्विजय।

महाकाव्य

हिन्दी-अनुवादसहित

जिसके देखने के लिए सहस्रों आर्य वर्षों से उत्कण्ठित हो रहे थे, जिसके रसास्वादन के लिए सैकड़ों संस्कृतज्ञ विद्वान् लालायित हो रहे थे, जिसकी सरल, मधुर और रसीली कविता के लिए सहस्रों आर्यों की वाणी चंचल हो रही थी वही महाकाव्य छप कर तैयार हो गया। यह ग्रन्थ आर्य-समाज के लिए बड़े गौरव की चीज़ है। इसे आर्यों का भूषण कहें तो अत्युक्ति न होगी। स्वामीजी कृत ग्रन्थों को छोड़ कर आज तक आर्य-समाज में जितने छोटे बड़े ग्रन्थ बने हैं उन सबमें इसका आसन ऊँचा है। प्रत्येक वैदिकधर्मानुरागी आर्य को यह ग्रन्थ लेकर अपने घर को अवश्य पवित्र करना चाहिए। यह महाकाव्य २१ सर्गों में सम्पूर्ण हुआ है। मूल ग्रन्थ के रायल आठ पेजी साइज़ के ६१५ पृष्ठ हैं। इसके अतिरिक्त ५७ पृष्ठों में भूमिका, ग्रन्थकार का परिचय, विषयानुक्रमणिका, आवश्यक विवरण, शुद्धिपत्र, ग्रन्थालय-प्रशस्ति और सहायक-सूची आदि अनेक विषयों का समावेश किया गया है।

उत्तम सुनहरी जिल्द बँधी हुई इतनी भारी पोथी का मूल्य सर्वसाधारण के सुभीते के लिए केवल ४) चार रुपये ही रक्खा है। जल्द मँगाइए।

## सौभाग्यवती।

हर हिन्दी स्त्रियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। इसके पढ़ने से स्त्रियों बहुत कुछ उपदेश ग्रहण कर सकती हैं। मूल्य ॥)

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

९—प्राच्य दर्शन। आकार मझोला, पृष्ठ-संख्या २४०; मूल्य डेढ़ रुपया, लेखक, पण्डित राधाप्रसाद शास्त्री, रतन बाग़, लाहौर से प्राप्य। बड़ी अच्छी पुस्तक है। सर्वदर्शन-संग्रह के ढंग की है। इसमें सभी पूर्वी दर्शनों का संक्षिप्त वर्णन है। इसे पढ़ लेने से हमारे प्रसिद्ध षड् दर्शनों के सिवा बौद्ध, जैन, चार्वाक आदि मतों के सिद्धान्तों का भी थोड़ा-बहुत ज्ञान हो सकता है। इसमें बताया गया है कि "वेद के साथ दर्शनों का क्या सम्बन्ध है। फिर आस्तिक और नास्तिक रूप वह दो विभाग दर्शनों के करके, स्थूल-विचार चार्वाक से लेकर अति-सूक्ष्म वेदान्त तक के वर्णन और परीक्षा की गई है"। टाइप बड़ा और काग़ज़ अच्छा है, पर भाषा अच्छी नहीं।

*

१०—वेदान्त-सिद्धान्त। आकार छोटा; पृष्ठ-संख्या ७; मूल्य आठ आने, लेखक पण्डित शिवकुमारजी शास्त्री [illegible], से प्राप्य। इस पुस्तक में सत्य ज्ञान से देशोपकार, [illegible] का कार्यक्षेत्र में विजय, वेदान्तियों की कार्य-[illegible], वेदान्तियों का विविध कार्य्य, निद्रा में योगाभ्यास और ईश्वर आदि विषयों पर निबन्ध हैं। लेखक [illegible] ने पांच प्रकार के ईश्वरों का वर्णन किया है। ईश्वर [illegible] होने के प्रमाण भी आपने दिये हैं। और भी कितनी नई नई बातें आपने लिखी हैं। कुतूहल-निवृत्ति आपकी पढ़ने से हो ही जायगी। पुस्तकारम्भ में एक विषय-सूची दी गई है।

*

११—पदार्थों के गुण और स्वभाव। आकार छोटा, [illegible], मूल्य १ आने, लेखक, पण्डित [illegible], बी० एस-सी०, अजमेर-कालेज, अजमेर। यह पहली पुस्तक है। अपने बालकुमार इसमें [illegible] पदार्थों का वैज्ञानिक ढंग से सरल भाषा [illegible] है। चित्र लिखे हैं। पुस्तक बहुत अच्छी है।

*

जिन चित्रों का परिचय हम देते हैं वे पुस्तकें भी पढ़ने योग्य हैं। उनके नाम क्रमानुसार ये हैं—

(१) [illegible]—लेखक, शिवशम्भु शर्मा, प्रकाशक।

(२) [illegible]—प्रकाशक, बाबू [illegible], मुरादाबाद।

(३) [illegible] का [illegible], लेखक, [illegible], [illegible], मुरादाबाद।

(४) अरोड़-वंशव्यवस्था—लेखक, पं० राधाप्रसाद [illegible], लाहौर।

(५) स्त्री जाति का महत्त्व
(६) नीतिशिक्षावलि
} प्रकाशक, हिन्दी-प्रेस, प्रय

(७) गोरक्षा-भजन संग्रह—प्रकाशक, पण्डित नवल चतुर्वेदी, मथुरा।

(८) एक विलक्षण स्वप्न
(९) स्त्री सुधार का दिव्य रसायन
} प्रकाशक, आगु प्रेस, बनार

(१०) विज्ञान-शिक्षा—प्रकाशक, बाबू दामोदरदास [illegible], कलकत्ता।

(११) श्रीवाल्मीकि-सभा, रायबरेली, की नियमावली } प्रकाशक, मन्त्री, वाल्मीकि सभा, रायबरेली।

---

## चित्र-परिचय।

### (१)

### अज-विलाप।

इन्दुमती की अचानक मृत्यु पर राजा अज ने जो विलाप किया था उसका बड़ा ही हृदयद्रावक वर्णन कविवर कालिदास ने रघुवंश में किया है। कई चित्रकारों ने इस घटना को दृश्य चित्र में अङ्कित किया है। इस तरह का एक चित्र कुछ समय हुआ सरस्वती में बहुत पहले निकल चुका है। इस संख्या में भी एक और चित्र प्रकाशित है। पहले की अपेक्षा इस चित्र में विशेषता है, जिसे चित्रकला-कुशल जन देखते ही समझ जायँगे। जिस माला के स्पर्श से इन्दुमती का प्राणान्त हुआ था उसे हाथ में लेकर और इन्दुमती के निष्प्राण शरीर को अपने अङ्क में रख कर, अपनी आन्तरिक वेदना को राजा किस कारुणिक भाव से प्रकट कर रहा है, यह चित्रकार ने बड़ी ही सूक्ष्मता से दिखाया है।

### (२)

### आषाढ़।

इस महीने का दूसरा रङ्गीन चित्र आषाढ़ है। इसका भी वर्णन कालिदास के आषाढ़-वर्णन के आधार पर किया हुआ है। कालिदास-कृत में कवि का किया हुआ वर्णन नीचे देखिए।

---

## ✻ ✻ ✻ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ✻ ✻ ✻

### चरित्रगठन ।

जो नवयुवक विद्यार्थी चरित्रगठन के अभिलाषी हों तो इसे अवश्य ही पढ़ें, और विशेष कर उन्हीं के लिए यह पुस्तक बनाई गई है। ये इस पुस्तक को पढ़ कर आप तो लाभ उठावेंगे ही, किन्तु अपने भावी बालकों को भी विशेष लाभ पहुँचा सकेंगे। इस पुस्तक के सभी विषय सुपाठ्य हैं। जिस कर्तव्य से मनुष्य अपने समाज में आदर्श बन सकता है उसका उपदेश इस पुस्तक में विशेष रूप से किया गया है। सत्यनिष्ठा, उदारता, सुशीलता, दया, क्षमा, प्रेम, प्रतिज्ञापालकता आदि अनेक विषयों का वर्णन उदाहरण के साथ किया गया है। अतएव क्या बालक, क्या वृद्ध, क्या युवा, क्या स्त्री सभी इस पुस्तक को एक बार अवश्य एकाग्र मन से पढ़ें और इससे पूर्ण लाभ उठावें। २३२ पृष्ठ की ऐसी उपयोगी पुस्तक का मूल्य समाज के लिए केवल ॥) बारह आना है।

### कुमारसम्भवसार ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

कवि-कुलगुरु कालिदास के "कुमार-सम्भव" काव्य का यह मनोहर सार छप कर तैयार हो गया। प्रत्येक हिन्दी-कविता-प्रेमी को द्विवेदी जी की यह मनोहारिणी कविता पढ कर आनन्द प्राप्त करना चाहिए। कविता बड़ी रसवती और प्रभावशालिनी है। मूल्य केवल ।) चार आने।

### भारतवर्ष में पश्चिमीय शिक्षा ।

श्रीमान् पण्डित मनोहरलाल जुत्शी, एम० ए० के नाम को कौन नहीं जानता। आप उर्दू और अँगरेजी के प्रसिद्ध लेखक हैं। आपने "एज्युकेशन इन ब्रिटिश इंडिया" नामक एक पुस्तक अँगरेजी में लिखी है और उसे इंडियन प्रेस, प्रयाग ने छापकर प्रकाशित किया है। पुस्तक बड़ी खोज के साथ लिखी गई है। उक्त पुस्तक का सारांश हिन्दी और उर्दू में भी छप गया है। आशा है हिन्दी और उर्दू के पाठक इस उपयोगी पुस्तक को मँगाकर अवश्य लाभ उठावेंगे। मूल्य इस प्रकार है :—

एज्युकेशन इन ब्रिटिश इंडिया ( अँगरेजी में ) २॥)
भारतवर्ष में पश्चिमीय शिक्षा ( हिन्दी में ) ।=)
हिन्द में मगरबी तालीम ( उर्दू में ) ।=)

### कर्मयोग ।

स्वामी विवेकानन्दजी के कर्मयोग-सम्बन्धी व्याख्यानों का हिन्दी-अनुवाद करा कर यह "कर्मयोग" नामक पुस्तक छापी गई है। इसमें सात अध्याय हैं। उनमें क्रमशः—१—कर्म का मनुष्य चरित्र पर प्रभाव, २—निष्काम कर्म का महत्त्व, ३—धर्म क्या है ?, ४—परमार्थ में स्वार्थ, ५—अलग रहना ही सच्चा त्याग है, ६—मुक्ति और ७—कर्मयोग का आदर्श—इन विषयों का वर्णन बहुत ही ओजस्विनी भाषा में किया गया है। अध्यात्मविद्या या कर्मयोग के जिज्ञासुओं को यह पुस्तक अवश्य पढनी चाहिए। मूल्य केवल ।=)

### संक्षिप्त इतिहासमाला ।

लीजिए, हिन्दी में जिस चीज की कमी थी उसकी पूर्ति का भी प्रबन्ध हो गया। हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पण्डित श्यामबिहारी मिश्र, एम० ए० और पण्डित शुकदेवबिहारी मिश्र, बी० ए० के सम्पादकत्व में पृथ्वी के सभी प्रसिद्ध प्रसिद्ध देशों के हिन्दी में संक्षिप्त इतिहास तैयार होने का प्रबन्ध किया गया है। यह समस्त इतिहासमाला कोई २०, २२ संख्याओं में पूर्ण होगी। इसकी क्रमशः एक एक पुस्तक इंडियन प्रेस, प्रयाग, से प्रकाशित होती रहेगी। अब तक ये ६ पुस्तकें छप चुकी हैं :—

| | | |
|---|---|---|
| १—जर्मनी का इतिहास | ... | ।=) |
| २—फ्रांस का इतिहास | ... | ।=) |
| ३—रूस का इतिहास | ... | ।=) |
| ४—इंगलैंड का इतिहास | ... | ॥=) |
| ५—जापान का इतिहास | ... | ।) |
| ६—स्पेन का इतिहास | | ।=) |

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

(महाकवि कालिदासकृत)

## रघुवंश

का गद्यात्मक हिन्दी-अनुवाद

(श्री० पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी लिखित)

इस अनुवाद में एक यो नहीं अनेक विशेषतायें हैं। इसमें कालिदास के लिखे केवल शब्दों का ही अनुगमन नहीं किया गया है, किन्तु उन शब्दों के प्रयोग द्वारा महाकवि कालिदास ने जो अनुपम भाव दरसाये हैं उन्हीं भावों को, उन्हीं भीतरी मर्मों को, महाकवि की उन्हीं प्रतिभा प्रदीप्त कल्पनाओं तथा लोकोत्तरानन्ददायिनी उक्तियों के गूढ़ रहस्यों को, सबके समझने योग्य हिन्दी भाषा में, विशद रूप से प्रकाशित किया गया है।

जो आनन्द संस्कृतज्ञ विद्वानों को मूल रघुवंश के पढ़ने में आता है वही आनन्द हिन्दी जानने वालों को इससे प्राप्त होगा। हमारे इस कथन में अत्युक्ति का लेश मात्र भी न समझिए 'हाथ-कंगन को आरसी क्या?' जब आप इस अपूर्व ग्रन्थ को देखेंगे तभी आपको इसके औहर मालूम होंगे।

सुन्दर चित्रों से सुशोभित। पृष्ठ कुल मिलाकर ३००। सुन्दर सुनहरी जिल्द। मूल्य केवल २)

## विनयपत्रिका।

(आगरानिवासी पं० रामेश्वरभट्ट-कृत सरला टीकासहित)

गोस्वामी तुलसीदासजी के नाम को कौन नहीं जानता। जिस कवि की कविता को सुन कर हिन्दू ही नहीं, विदेशी और विधर्मी लोग भी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते हैं उसकी कविता की प्रशंसा में कुछ लिखना सूर्य को दीपक से दिखाना है। रामायण से बढ़कर विनयपत्रिका का ही नंबर है। नहीं नहीं, प्रेम और भक्ति के वर्णन की दृष्टि से विनयपत्रिका का नंबर रामायण से भी पहले गिना जाय तो कोई आश्चर्य नहीं। विनयपत्रिका का एक एक पद भक्ति और प्रेम रस में सराबोर हो रहा है। अर्थ ऐसी सरल भाषा में है कि बालक भी समझ सकते हैं। पृष्ठ ३७४। सुन्दर जिल्द। मूल्य २)

विनयपत्रिका के विषय में डा० ग्रीव्स, ए० सिविलियन सी० आई० ई० के पत्र की नकल हम नीचे देते हैं। इन्होंने विज्ञापन में पंडित रामेश्वर भट्ट के नाम लिखे।

*True copy of the letter received from George A. Grierson, K.C.I.E., Rathfarnham, England, to the address of the Committee, Vinaya Patrika.*

*Dated 6th September, 1*

Dear Sir,

Forgive a stranger for addressing you, but I write to say how highly I appreciate your excellent edition of the विनयपत्रिका, which I obtained from the "Indian Press" a few days ago. It is a worthy successor of your Edition of the रामचरितमानस, and really fills a want which I have long felt. The *Vinaya Patrika* is a difficult work, but I think it is one of the best poems written by Tulasi Dása and should be studied by every devout भक्त. I have also found it of great assistance in explaining difficult passages.

May I hope that you will go on with your work, and bring out similar editions of the गीतावली and of the कवितावली (including the उत्तरकाण्ड), both of which are very important. The कवितावली is most important, as it throws so much light on the life of the poet.

Yours faithfully,

GEORGE A. GRIERSON.

Pandit Rámeśvar Bhatt.

## जापान-दर्पण।

(ग्रन्थकर्त्ता के हाफ़टोन चित्र सहित)

जिस हिन्दुधर्मावलम्बी वीर जापान ने महाबली रूस को पछाड़ कर सारे संसार में आर्य्यजाति मात्र का मुख उज्ज्वल किया है, उसी वीरशिरोमणि जापान के भूगोल, आचरण, शिक्षा, उत्सव, धर्म, व्यापार, राजा, प्रजा, सेना और इतिहास आदि बातों का, इस पुस्तक में, पूरा पूरा वर्णन किया गया है। भारत की अधोगति पर आँसू बहानेवाले देशभक्तों को तो इस पुस्तक से अवश्य कुछ शिक्षा लेनी चाहिए। ३५० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य १) से घटा कर ॥) बारह आने कर दिया।

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## बालसखा-पुस्तकमाला।

यन प्रेस, प्रयाग से "बालसखा-पुस्तकमाला" सीरीज़ में जितनी किताबें आज तक हैं ये सब हिन्दी-पाठकों के लिए, विशेष कर बालिकाओं और स्त्रियों के लिए, परमोपयोगी सिद्ध हो चुकी हैं। इस 'माला' की सब की भाषा ऐसी सरल—सबके समझने लायक़ी है कि जिसे थोड़े पढ़े लिखे बालक भी आसानी से पढ़ कर समझ लेते हैं। इस 'माला' तक जितनी पुस्तकें निकल चुकी हैं उनका विवरण यहाँ दिया जाता है:—

### बालभारत—पहला भाग।

—इसमें महाभारत की संक्षेप से कुल कथा सरल हिन्दी भाषा में लिखी गई है कि बालक क्यों तक पढ़कर समझ सकती हैं। यह ों का चरित्र बालकों को अवश्य पढ़ाना । मूल्य ॥) मूल्य आठ आने।

### बालभारत—दूसरा भाग।

—इसमें महाभारत से छाँट कर डेढ़ियों ऐसी लिखी गई हैं कि जिनको पढ़कर बालक अच्छी प्रहण कर सकते हैं। हर कथा के अन्त में रूप शिक्षा भी दी गई है। मूल्य वही ॥)

### बालरामायण—सातों काण्ड।

—इसमें रामायण की कुल कथा बड़ी सीधी में लिखी गई है। इसकी भाषा की सरलता में अधिक और क्या प्रमाण दें कि गवर्नमेंट ने पुस्तक को सिविलियन लोगों के पढ़ने के लिए कर दिया है। भारतवासियों को यह पुस्तक य पढ़नी चाहिए। मूल्य ॥)

### बालमनुस्मृति।

—आज कल आप-सम्बन्धी अपनी आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक रीति-रस्मों को न जान कर कैसे घोर अन्धकार में धँसती चली जा रही है सो किसी भी विचारशील से छिपा नहीं है। इसी दोष के दूर करने के लिए 'मनुस्मृति' में से उत्तम उत्तम श्लोकों को छाँट छाँट कर उनका सरल हिन्दी में अनुवाद लिखा गया है। मूल्य ।)

### बालनीतिमाला।

५—नीतिविद्या बड़े काम की विद्या है। हमारे यहाँ चार नीतिज्ञ बड़े प्रसिद्ध हो गये हैं। शुक्र, विदुर, चाणक्य और कणिक। इन्हीं के नाम से चार पुस्तकें विख्यात हैं। शुक्रनीति, विदुरनीति, चाणक्यनीति और कणिकनीति। ये सब पुस्तक संस्कृत में हैं। हिन्दी जाननेवालों के उपकार के लिए हमने इन चारों पुस्तकों का संक्षिप्त हिन्दी-अनुवाद छापा है। इसकी भाषा बालकों और स्त्रियों तक के समझने लायक है। मूल्य ॥)

### बालभागवत—पहला भाग।

६—लीजिए, 'श्रीमद्भागवत' की कथा भी अब सरल हिन्दी-भाषा में बन गई। जो लोग संस्कृत नहीं जानते, केवल हिन्दी-भाषा ही जानते हैं, वे भी अब श्रीमद्भागवत की भक्ति-रस-भरी कथाओं का स्वाद ले सकते हैं। इस 'बालभागवत' में 'श्रीमद्भागवत' की कथाओं का सार लिखा गया है। इसकी कथायें बड़ी रोचक, बड़ी शिक्षादायक और भक्ति रस से भरी हुई हैं। हर एक हिन्दी प्रेमी हिन्दू को इस पुस्तक की एक एक कापी अवश्य खरीदनी चाहिए। मूल्य ॥) आने

### बालभागवत—दूसरा भाग।

अर्थात्

श्रीकृष्णचरित।

७—श्रीकृष्ण के प्रेमियों को यह बालभागवत का दूसरा भाग अवश्य पढ़ना चाहिए। इसमें, श्रीमद्भागवत में वर्णित श्रीकृष्ण भगवान् की अनेक लीलाओं की कथायें लिखी गई हैं। मूल्य केवल ॥)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ❋ ❋ ❋ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ❋ ❋ ❋

## सीतावनवास ।

सुप्रसिद्ध पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर लिखित "सीतार-वनवास" नामक पुस्तक का यह हिन्दी-अनुवाद "सीतावनवास" छप कर तैयार है। इस पुस्तक में श्रीरामचन्द्रजी-द्वारा गर्भवती सीताजी के परित्याग की विस्तारपूर्वक कथा बड़ी ही रोचक और करुणरस-भरी भाषा में लिखी गई है। इसे पढ़ते समय आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगती है और पाषाण-हृदय भी मोम की तरह द्रवीभूत हो जाता है। मूल्य ॥)

## गारफील्ड ।

इस पुस्तक में अमेरिका के एक प्रसिद्ध प्रेसीडेंट "जेम्स एबराम गारफील्ड" का जीवनचरित लिखा गया है। गारफील्ड ने एक साधारण किसान के घर जन्म लेकर, अपने उद्योग, साहस और विद्या के बल से, अमेरिका के प्रेसीडेंट का सर्वोच्च पद प्राप्त कर लिया था। बालकों के लिए पुस्तकों में इस पुस्तक से बहुत अच्छा उदाहरण मिल सकता है। मूल्य ।)

[illegible]

थाले नहीं विदेशी विद्वान् भी लट्टू हैं। [illegible] जैसा बढ़िया यह नाटक हुआ है वैसा ही [illegible] यह हिन्दी में लिखा गया है। काश्य रस के [illegible] हिन्दी के सच्चे कालिदास राजा लक्ष्मण [illegible] अनुवादित किया है। लीजिए, देखिए तो इसमें [illegible] में कैसा अनुपम आनन्द आता है। मूल्य ।)

## मुकुट ।

यह बँगला के प्रसिद्ध लेखक श्रीयुक्त [illegible] बँगला उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। [illegible] में परस्पर अनबन होने का परिणाम क्या [illegible] इस छोटे से उपन्यास में यही बड़े [illegible] साथ दिखलाया गया है। इसे पढ़ कर [illegible] मन को विमलानन्द के दोनों से बना सकते हैं। [illegible]

## युगलांगुलीय ।

[illegible]

दो कहानियाँ

बँगला के प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक [illegible] बाबू की लिखी [illegible] परिचय है। इन [illegible] उपन्यास का यह [illegible] हिन्दी में [illegible] है। यह [illegible] पढ़ें, बड़ा [illegible] बालों के पढ़ने [illegible] [illegible] है। मूल्य ।)

[illegible]

# ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ※ ※ ※

## बालविष्णुपुराण ।

—विष्णुपुराण में कितनी ही ऐसी विचित्र ाप्रद कथायें हैं कि जिनके जानने की हिन्दी ा बड़ी ज़रूरत है। इस पुराण में कलियुगी राजाओं की वंशावली का बड़े विस्तार से ख्या गया है। जो लोग संस्कृत भाषा में ाण की कथाओं का आनन्द नहीं लूट सकते, ालविष्णु-पुराण' पढ़ना चाहिए। इस पुस्तक ुपुराण का सार समझिए। मूल्य ।)

## बाल-स्वास्थ्य-रक्षा ।

—यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दी जाननेवाले ी चाहिए। प्रत्येक गृहस्थ को इसकी एक एक पने घर में रखनी चाहिए। बालकों को तो से ही इस पुस्तक को पढ़कर स्वास्थ्य-सुधार यों का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। इसमें ा गया है कि मनुष्य किस प्रकार रह कर, किस का भोजन करके, नीरोग रह सकता है। इसमें न के वर्णन में आनेवाली खाने की चीज़ों के गुण- । अच्छी तरह बताये गये हैं। कहाँ तक कहें, मनुष्य-मात्र के काम की है। इतनी उपयोगी का मूल्य केवल ॥) आठ आना रक्खा है।

## बालगीतावलि ।

—महाभारत में क्या नहीं है। उसमें सभी कुछ है। महाभारत को रत्नों का सागर कहना , शिक्षा का भण्डार कहना चाहिए। आप ई "बालगीतावलि" में क्या है? इसमें महा- में से ९ गीताओं का संग्रह किया गया है। ाओं में ऐसी उत्तम उत्तम शिक्षायें हैं कि अनुसार बर्ताव करने से मनुष्य का परम ा हो सकता है। हमें पूरी आशा है कि समस्त प्रेमी इस पुस्तक को पढ़ कर उत्तम शिक्षा ा करेंगे। मूल्य ।) आठ आने।

## बालनिबन्धमाला ।

२०—इसमें कोई ३५ शिक्षादायक विषयों पर, बड़ी सुन्दर भाषा में, निबन्ध लिखे गये हैं। बालकों के लिए तो यह पुस्तक उत्तम गुरु का काम देगी। ज़रूर मंगाइए। मूल्य ।=)

## बालस्मृतिमाला ।

२१—हमने १८ स्मृतियों का सार-संग्रह करा कर यह "बालस्मृतिमाला" प्रकाशित की है। आशा है, सनातनधर्म के प्रेमी अपने अपने बालकों के हाथ में यह धर्मशास्त्र की पुस्तक देकर उनको धर्मिष्ठ बनाने का उद्योग करेंगे। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

## बालपुराण ।

२२—पुराणों में बहुत सी ऐसी कथायें हैं जिनसे मनुष्यों को बहुत कुछ उपदेश मिल सकता है। पर पुराण इतने अधिक और बड़े हैं कि उन सबका पढ़ना प्रत्येक मनुष्य के लिए असम्भव नहीं तो महाकष्ट-साध्य अवश्य है। इसलिए सर्वसाधारण के सुभीते के लिए हमने अठारह महापुराणों का सारूप 'बाल-पुराण' तैयार करा कर प्रकाशित किया है। इसमें अठारहों पुराणों की संक्षिप्त कथासूची दी गई है और यह भी बतलाया गया है कि किस पुराण में कितने श्लोक और कितने अध्याय आदि हैं। पुस्तक बड़े काम की है। इतनी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल ॥)

## बालभोजप्रबन्ध ।

२३—राजा भोज का विद्याप्रेम किसी से छिपा नहीं है। संस्कृत भाषा के "भोजप्रबन्ध" नामक ग्रन्थ में राजा भोज के संस्कृत-विद्याप्रेम-सम्बन्धी अनेक आख्यान लिखे हुए हैं। वे बड़े मनोरञ्जक और शिक्षादायक हैं। उसी भोजप्रबन्ध का सारूप यह "बाल-भोजप्रबन्ध" उतारकर तैयार हो गया। सभी हिन्दी-प्रेमियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य बहुत ही कम केवल ।) आठ आने।

लिखने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

## बालगीता ।

८—गीता की एक एक शिक्षा, एक एक बात मनुष्यों को मुक्ति और मुक्ति की देनेवाली है। ऐहिक और पारमार्थिक सुख चाहने वालों को गीता के उपदेशों से ज़रूर शिक्षा लेनी चाहिए। गीता में जगह जगह ऐसा अमृतमय उपदेश भराहुआ है कि जिसके पान से मनुष्य अमर-पदवी तक पा सकता है। श्रीकृष्णचन्द्र महाराज के मुखारविन्द से निकले हुए सदुपदेश को कौन हिन्दू न पढ़ना चाहेगा? अपने आत्मा को पवित्र और बलिष्ठ बनाने के लिए यह "बालगीता" ज़रूर पढ़नी चाहिए। इसमें पूरी गीता का सार बड़ी सरल भाषा में लिखा गया है। मूल्य ॥)

## बालोपदेश ।

९—यह पुस्तक बालकों को ही नहीं युवा, वृद्ध, पण्डिता सभी को उपयोगी तथा चतुर, धर्मात्मा और शीलसम्पन्न बनाने वाली है। राजा भर्तृहरि के विमल अन्तःकरण में जब संसार से वैराग्य उत्पन्न हुआ था तब उन्होंने एक दम भरा पूरा राज-पाट छोड़ कर संन्यास ले लिया था। उस परमानन्दमयी अवस्था में उन्होंने वैराग्य और नीति-सम्बन्धी दो शतक बनाये थे। इस 'बालोपदेश' में उन्हीं मनुहरि-कृत नीति-शतक का पूरा और वैराग्यशतक का संक्षिप्त हिन्दी अनुवाद छापा गया है। यह पुस्तक स्कूलों में बालकों के पढ़ने के लिए बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।)

## बालभारतीव्यास (सचित्र) चारों भाग।

१०-१३—हिन्दुस्तान जिससे करोड़ों के लिए दुनिया भर के इतिहासों में सर्वश्रेष्ठ भारत का कहा जाता है। इसमें वह सब बातें कहानियों के रूप में लिखी गई हैं, जो हर हिन्दू को जानना चाहिए। यह पुस्तक बड़ी दिलचस्प है, इसमें सब कुछ है, कथा है, इतिहास है, उपन्यास है, और पुराण है। इसे पढ़ने से हिन्दी भाषा का प्रचार होगा, मनोरञ्जन होगा, घर में सैर होगी, बुद्धि और विचार-शक्ति बढ़ेगी, सीखने में आवेगी, साहस और हिम्मत यहाँ तक कहें, इसके पढ़ने से अनेक लाभ हैं। प्रत्येक भाग का ॥)

## बालपंचतंत्र ।

१४—इसके पाँचों तंत्रों में बड़ी मनोरंजक कहानियों के द्वारा सरल रीति पर नीति की शिक्षा दी गई है। बालक-बालिकायें इसकी मनोरंजक कहानियों को बड़े चाव से पढ़ कर नीति की शिक्षा ले सकती हैं। यह "बालपंचतंत्र" विष्णुशर्मा के असली पंचतंत्र का सरल हिन्दी में सार है। यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दीपाठक और विशेष कर बालकों के पढ़ने के योग्य है। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

## बालहितोपदेश ।

१५—इस पुस्तक के पढ़ने से बालकों की बुद्धि बढ़ती है, नीति की शिक्षा मिलती है, हित और अहित का ज्ञान होता है और शत्रुओं के छल में फँसने और फँस जाने पर उससे निकलने के और कर्त्तव्यों का बोध हो जाता है। यह पुस्तक पुरुष हो या स्त्री, बालक हो या बूढ़ा, सभी के लिये है। इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य आठ आने।

## बालहिन्दीव्याकरण ।

१६—यदि आप हिन्दी-व्याकरण के गूढ़ से गूढ़ और सूक्ष्म नियमों को जानना चाहते हैं, आप हिन्दी शुद्ध रूप से लिखना और बोलना चाहते हैं, तो 'बालहिन्दीव्याकरण' खरीद कर पढ़िए और अपने बाल-बच्चों को पढ़ाइए। स्कूलों में लड़कों के पढ़ाने के लिए यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।) डाक आने।

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस।

## पारस्योपन्यास ।

जिन्होंने "आरब्योपन्यास" अर्थात् अरेबियन नाट्स की कहानियाँ पढ़ी हैं उनके सामने यह बताने की आवश्यकता नहीं कि पारस्योपन्यास की कहानियाँ कैसी मनोरञ्जक और अद्भुत हैं। विदेशीय सहस्र-रजनी-चरित्र के पढ़ने वालों को एक बार पारस्य उपन्यास भी अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य १)

## भाषाव्याकरण ।

श्रीयुत पण्डित चन्द्रमौलि शुक्ल, एम. ए. असिस्टेंट हेडमास्टर, गवर्नमेंट हाईस्कूल, प्रयाग-रचित। हिन्दी भाषा की यह व्याकरण-पुस्तक व्याकरण पढ़ानेवाले अध्यापकों के बड़े काम की चीज़ है। विद्यार्थी भी इस पुस्तक को पढ़ कर हिन्दी-व्याकरण का बोध प्राप्त कर सकते हैं। मूल्य ॥)

## कालिदास की निरङ्कुशता ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी जी ने "सरस्वती" पत्रिका के बारहवें भाग में "कालिदास की निरङ्कुशता" नामक जो लेख-माला प्रकाशित की थी वह, अनेक हिन्दी-प्रेमियों के आग्रह करने पर, पुस्तकाकार प्रकाशित कर दी गई। आशा है, सभी हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को मँगा कर अवश्य देखेंगे। मूल्य केवल ।) चार आने।

## आरोग्य-विधान ।

नीरोग रहने के सुगम उपायों का वर्णन। मूल्य ॥)

## दुर्गा सप्तशती ।

हमने यह दुर्गा की पोथी बड़ी सुन्दर छापी है। काग़ज़ भी इसका मोटा और अक्षर भी बड़े मोटे हैं। चश्मा लगानेवाले बिना चश्मा लगाये ही इसका पाठ कर सकते हैं। बड़ी शुद्ध छपी है। कीलक, कवच, अङ्गन्यास, करन्यास, रहस्य और विनियोग आदि सभी बातें इसमें मौजूद हैं। इसमें यह भी लिखा गया है कि किस काम के लिए किस मंत्र का संपुट लगाना चाहिए। ऐसी अत्युत्तम पोथी का दाम केवल ॥=)

तार्किकमोहभङ्गप्रकाश (कुतर्कियों का मुँह तोड़ जवाब) १)
रसरहस्य (प्रेमियों के देखने योग्य) ... ॥)
प्रीतमविहार (श्रीरामचन्द्र जी के प्रेमभजन) ।=)
दृष्टान्तसमुच्चय (उपदेश भरे दृष्टान्तों का संग्रह) ॥)
महिम्नस्तोत्र ... ... ... ... =)
एकमुखी हनुमत्कवच ... ... ... =)

## नूतनचरित्र ।

( बाबू रामचन्द्र बी० ए० वकील हाईकोर्ट प्रयाग लिखित )

यों तो उपन्यास-प्रेमियों ने अनेक उपन्यास देखे होंगे पर हमारा अनुमान है कि शायद उन्होंने ऐसा उत्तम उपन्यास आज तक कहीं नहीं देखा होगा। इसलिए हम बड़ा ज़ोर देकर कहते हैं कि इस 'नूतनचरित्र' को अवश्य पढ़िए। मूल्य १)

## षोडशी ।

बँगला के प्रसिद्ध आख्यायिकालेखक श्रीयुत प्रमथकुमार बाबू की प्रभावशालिनी लेखनी से लिखी गई १६ आख्यायिकाओं का यह संग्रह बँगला में बड़ा प्रसिद्ध है। इसी षोडशी का यह हिन्दी अनुवाद तैयार है। ये कहानियाँ हिन्दी में एकदम नई हैं और पढ़ने योग्य हैं। मूल्य ३२० पृष्ठ की पोथी का १)

## विचित्रबधूरहस्य ।

बँगला के प्रसिद्ध लेखक श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर महाशय लिखित "बउठाकुरानीर हाट" नामक बँगला उपन्यास का यह हिन्दी अनुवाद 'विचित्रबधूरहस्य' के नाम से तैयार हो गया। उपन्यास कितना रोचक है, इसकी घटनायें कितनी महत्त्वपूर्ण हैं, उपन्यास का भाव कैसा उच्च है, पात्रों पर इसकी घटनाओं का कैसा प्रभाव पड़ता है इत्यादि बात उपन्यास के पाठकों को स्वयं विदित हो जायँगी। मूल्य ॥)

प्रिण्टर और पब्लिशर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ❋ ❋ ❋ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ❋ ❋ ❋

## मानस-दर्पण

( लेखक—श्री० पं० चन्द्रमौलि शुक्ल, एम० ए० )

इस पुस्तक को हिन्दी-साहित्य का अलङ्कारग्रन्थ समझना चाहिए। इसमें अलङ्कारों आदि के लक्षण संस्कृत-साहित्य से और उदाहरण रामचरितमानस से दिये गये हैं। प्रत्येक हिन्दी-पाठक को यह पुस्तक अवश्य ही पढ़नी चाहिए। मूल्य ।=)

## माधवीकंकण ।

मिस्टर आर० सी० दत्त की चमत्कारिणी लेखनी के चमत्कार को कौन नहीं जानता। "माधवीकङ्कण" नाम का बँगला उपन्यास उन्हीं के क़लम की करामात है। बड़ा रोचक, बड़ा शिक्षादायक और बड़ा मनोरञ्जक उपन्यास है। हृदय-हारिणी घटनाओं से भरपूर है। वीर और करुणा आदि अनेक रसों का समावेश इसमें किया गया है। उपन्यास का उद्देश पवित्र और शिक्षादायक है। मूल्य ।।।)

## हिन्दी-व्याकरण ।

( बाबू माणिक्यचन्द्र जैनी बी० ए० कृत )

यह हिन्दी-व्याकरण अंग्रेज़ी ढंग पर बनाया गया है। इसमें व्याकरण के प्रायः सब विषय ऐसी अच्छी रीति से समझाये गये हैं कि बड़ी आसानी से समझ में आ जाते हैं। हिन्दी-व्याकरण के जानने की इच्छा रखनेवालों को यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। मूल्य ॥)

## हिन्दी-व्याकरण ।

( बाबू गंगाप्रसाद एम० ए० कृत )

यह भी नये ढंग का व्याकरण है। इसमें भी व्याकरण के सब विषय अंग्रेज़ी ढंग पर लिखे गये हैं। उदाहरण देकर हर एक विषय को ऐसी अच्छी तरह से समझाया है कि बालकों की समझ में बहुत जल्द आ जाता है। मूल्य ॥)

## योगवासिष्ठ-सार ।

( वैराग्य और मुमुक्षु-व्यवहार प्रकरण )

योगवासिष्ठ ग्रन्थ की महिमा हि से छिपी नहीं है। इस ग्रन्थ में श्रीरामचन्द्र गुरु वसिष्ठजी का उपदेशमय संवाद लिखा जो लोग संस्कृत-भाषा में इस भारी ग्रन्थ पढ़ सकते उनके लिए हमने योगवासिष्ठ रूप यह ग्रन्थ हिन्दी में प्रकाशित किया साधारण हिन्दी जानने वाले भी इस ग्रन्थ कर धर्म, ज्ञान और वैराग्यविषयक उत्तम से लाभ उठा सकते हैं। मूल्य ॥=)

## हिन्दी-मेघदूत ।

कविकुल-कुमुद-कलाधर कालिदास कृत दूत का समवृत्त और समश्लोकी हिन्दी मूल श्लोक सहित—मूल्य नाम मात्र के लिए ।)

हिन्दी-साहित्य में यह ग्रन्थ अपने ढंग अकेला है। कविता-प्रेमियों—विशेष कर के बोली की हिन्दी-कविता के रसिकों—को हिन्दी-मेघदूत अवश्य देखना चाहिए। बड़ी हर पुस्तक है। पुस्तक के आरम्भ में अनुवादक लक्ष्मीधर वाजपेयी का हाफ़टोन चित्र दिया है। इसके अतिरिक्त विरही यक्ष और वि यक्षपत्नी के दो सुन्दर रंगीन चित्र भी दिये गये हैं। पुस्तक की शोभा देखते ही बनत "अवलि देखिए देखन जोगू"।

## बालापत्रबोधिनी

यह पुस्तक लड़कियों के बड़े काम की है। इसमें पत्र लिखने के नियम आदि बताने के अतिरिक्त नमूने के लिए पत्र भी ऐसे ऐसे उपाये गये हैं कि जिनसे 'एक पंथ दो काज' की कहावत चरितार्थ हो जाती है। इस पुस्तक से लड़कियों को पत्र आदि लिखने का ही ज्ञान होगा हो, किन्तु अनेक उपयोगी शिक्षायें भी प्राप्त हो जायेंगी। मूल्य ।=)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

## बालविनोद ।

म भाग ⁻) द्वितीय भाग ⁻)॥ तृतीय भाग
था भाग ।=) पाँचवाँ भाग ।=) ये पुस्तकें
लड़कियों के लिए प्रारम्भ से शिक्षा शुरू
; लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। इसमें से पहले
ागों में एक ग़ैर भी विशेषता है कि रंगीन-
ं भी दी गई हैं। इन पाँचों भागों में सदुप-
अनेक कवितायें भी हैं। बंगाल की टैक्स्ट
ेटी ने इनमें से पहले तीनों भागों को अपने
में जारी कर दिया है।

## उपदेश-कुसुम ।

ह गुलिस्ताँ के आठवें बाब का हिन्दी-
द है। यह पढ़ने लायक़ और शिक्षा-
है। मूल्य ⁻)

## मुअल्लिम नागरी ।

ई जाननेवालों को नागरी सीखने के लिए
ल समझिए। इसमें उर्दू और नागरी दोनों
गई हैं। इससे बड़ी जल्दी नागरी पढ़ना
। आ जाता है। मूल्य ॥)

## भाषा-पत्र-बोध ।

ह पुस्तक बालकों और स्त्रियों के ही उप-
नहीं सभी के काम की है। इसमें हिन्दी में
हार करने की रीतियाँ बड़ी उत्तम रीति
खी गई हैं। इस किताब को पढ़ कर छोटे
बालक भी अच्छी तरह पत्र-व्यवहार करना
जाते हैं। मूल्य ⁻)॥

## व्यवहार-पत्र-दर्पण ।

ाम-काज के दस्तावेज़ और अदालती काग़ज़ों
मह।
ह पुस्तक काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के
नुसार उसी सभा के एक सभासद् द्वारा लिखी गई है। इसमें एक प्रसिद्ध वकील की सलाह से अदालत के सैकड़ों काम-काज के काग़ज़ों के नमूने छापे गये हैं। इसकी भाषा भी वही रक्खी गई है जो अदालतों में लिखी पढ़ी जाती है। इसकी सहायता से लोग अदालत के ज़रूरी कामों को नागरी में बड़ी सुगमता से कर सकते हैं। क़ीमत ॥)

## कादम्बरी ।

यह कविवर बाणभट्ट के सर्वोत्तम संस्कृत-उपन्यास का अत्युत्तम हिन्दी-अनुवाद, प्रसिद्ध हिन्दी-लेखक स्वर्गवासी बाबू गदाधरसिंह वर्मा ने किया है। कथा तो सर्वोत्तम प्रसिद्ध है ही, परन्तु भाषा भी बड़ी शुद्ध, मधुर और सरस है। इसको सर्वथा पठन-योग्य समझ कर कलकत्ता की यूनिवर्सिटी ने एफ़० ए० क्लास के कोर्स में सम्मिलित कर लिया है। यह उपन्यास हिन्दी-प्रेमियों के देखने योग्य है। दाम ॥)

## पाकप्रकाश

इसमें रोटी, दाल, कढ़ी, भाजी, पकौड़ी, रायता, चटनी, अचार, मुरब्बा, पूरी, कचौरी, मिठाई, मालपुआ, आदि के बनाने की रीति लिखी गई है। यह पुस्तक स्त्रियों के बड़े काम की है। मूल्य ⁻)

## जल-चिकित्सा-( सचित्र )

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

इसमें, डाक्टर लुई कूने के सिद्धान्तानुसार, जल से ही सब रोगों की चिकित्सा का वर्णन किया गया है। मूल्य ।)

## अर्थशास्त्र-प्रवेशिका ।

अर्थशास्त्र के मूल सिद्धान्तों के समझने के लिए इस पुस्तक को ज़रूर पढ़ना चाहिए। ज़रूर लीजिए, बड़े काम की पुस्तक है। मूल्य ।)

## ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग, की सर्वोत्तम पुस्तकें

### यवनराजवंशावली ।

( लेखक—मुंशी देवीप्रसादजी मुंसिफ़ )

छोटी होने पर भी पुस्तक बड़े काम की है। इस पुस्तक से आप को यह बात विदित हो जायगी कि भारतवर्ष में मुसलमानों का पदार्पण कब से हुआ। किस किस बादशाह ने कितने दिन तक कहाँ कहाँ राज्य किया और यह भी कि कौन बादशाह किस सन् संवत् में हुआ। यही नहीं बल्कि बादशाहों की मुख्य मुख्य जीवन-घटनाओं का भी इसमें उल्लेख किया गया है। हिन्दीवालों और विशेष कर इतिहास-प्रेमियों के लिए यह पुस्तक परम उपयोगी है। मूल्य =)

### विक्रमाङ्कदेवचरितचर्चा ।

यह पुस्तक सरस्वती-सम्पादक पण्डित महावीर-प्रसाद द्विवेदी जी की लिखी हुई है। बिल्हण कवि-रचित 'विक्रमाङ्कदेवचरित' काव्य की यह आलोचना है। इसमें विक्रमाङ्कदेव का जीवनचरित भी है और बिल्हण-कवि की कविता के नमूने भी जहाँ तहाँ दिये हुए हैं। इनके सिवा इसमें बिल्हण-कवि का भी संक्षिप्त जीवनचरित लिखा गया है। पुस्तक पढ़ने योग्य है। मूल्य =)

### आघातों की प्रारम्भिक चिकित्सा ।

[ डाक्टर धन्वन्तरि स्मारक पुस्तकावली सं० १ ]

जब किसी आदमी के चोट लग जाती है और शरीर की कोई हड्डी टूट जाती है तब उसको बड़ा कष्ट होता है। जहाँ डाक्टर नहीं हो वहाँ और भी दिक्कत होती है। इन्हीं सब बातों को सोचकर, इन्हीं सब दिक्कतों को दूर करने के लिए, हमने यह पुस्तक प्रकाशित की है। इसमें सब प्रकार की चोटों की प्रारम्भिक चिकित्सा, घावों की चिकित्सा और विषचिकित्सा का बड़े विस्तार से वर्णन किया गया है। इस पुस्तक में आघातों के अनुसार शरीर के भिन्न भिन्न अंगों की ६५ तसवीरें भी छाप कर लगा दी हैं। पुस्तक बड़े काम की है। मूल्य ॥)

### नाट्य-शास्त्र ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी )

मूल्य ।) चार आने

नाटक से सम्बन्ध रखनेवाली—कवि, पात्र-कल्पना, भाषा, रचनाचातुर्य, वृत्ति, कुल, लक्षण, जवनिका, परदे, वेशभूषा, का कालविभाग आदि—अनेक बातों का पुस्तक में किया गया है। हिन्दी-प्रेमियों विशेषकर उन सज्जनों को, जो ... स्थापित करके अच्छे अच्छे नाटकों द्वारा सुरुचि का बीजारोपण कर रहे हैं, यह अवश्य ही देखना चाहिए।

### लड़कों का खेल ।

( पहली किताब )

ऐसी किताब हिन्दी में आज तक कहीं नहीं। इसमें कोई ८४ चित्र हैं। हिन्दी पढ़ने बालकों के बड़े काम की किताब है। खिलाड़ी बालक क्यों न हो और कितना ही जी चुराता हो तो भी यह इस किताब से हिं लिखना बहुत जल्द सीख सकता है। मूल्य

### खेलतमाशा ।

यह भी हिन्दी पढ़नेवाले बालकों के मज़े की किताब है। इसमें सुन्दर सुन्दर बीरों के साथ साथ गद्य और पद्य भाषा लिखे हैं। इसे बालक बड़े चाव से पढ़कर याद क हैं। पढ़ने का पढ़ना और खेल का खेल है। मू

### हिन्दी का खिलौना ।

इस पुस्तक को लेकर बालक ख़ुशी के मारे उछलने हैं और पढ़ने का तो इतना शौक़ हो जा कि घर के आदमी मना करते पर ये किताब से रखते ही नहीं। लीजिए, अपने प्यारे बच्चों एक खिलौना तो ज़रूर ही दे दीजिए। मूल्य ।

मिलने का पता—मैनेजर, इंडिया[illegible] प्रयाग ।

## नई पुस्तकें !

### ाद्धालमीकीय रामायण—पूर्वार्द्ध

(हिन्दी-भाषानुवाद)

ती के समान १००० पृष्ठ, सजिल्द-मूल्य केवल २॥)

ादि-कवि वाल्मीकि मुनि-प्रणीत रामायण
ा में है। उसके हिन्दी-भाषानुवाद भी अनेक
। पर यह अनुवाद अपने ढँग का बिलकुल
। इसमें अक्षरशः अनुवाद है। भाषा सरल
रस है। हिन्दू मात्र रामायण को धर्मपुस्तक
हैं। असल में यह पुस्तक ऐसी ही है। इसके
पढ़ाने वालों को सब तरह का ज्ञान प्राप्त होता
ा आत्मा बलिष्ठ बनता है। इस पूर्वार्द्ध में
काण्ड से लेकर सुन्दर-काण्ड तक—पाँच
का अनुवाद है। बाक़ी काण्ड उत्तरार्द्ध में
उत्तरार्द्ध छप रहा है, वह जल्दी छप कर
ात होगा। जल्दी मँगाइए।

सचित्र

### शरीर और शरीर-रक्षा

ण्डित चन्द्रमौलि सुकुल, एम० ए० की लिखी
ाबें कैसी अच्छी और लाभप्रद होती हैं यह
ाने की ज़रूरत नहीं। जिन्होंने उनकी लिखी हुई
ाबें पढ़ी हैं, वे ख़ुद जानते होंगे। यह पुस्तक
उन्हीं पण्डित जी की क़लम की करामात है।
त में शरीर के बाहरी व भीतरी अङ्गों की बनावट
था उनके काम व रक्षा के उपाय लिखे गये हैं।
समें ऐसी मोटी मोटी बातों का वर्णन किया गया
और ऐसी सरल भाषा में लिखा गया है, कि हर
क मनुष्य पढ़ कर समझ सके और उससे लाभ
ा सके। मनुष्य के अङ्गावयव-सम्बन्धी २१ चित्र
इस में छापे गये हैं। यह पुस्तक सर्वथा उपा-
य है। मूल्य केवल ॥) आने है।

## नई पुस्तकें !!

### तरलतरंग

इंडियन प्रेस, प्रयाग, से जो इतिहासमाला निकल रही है उसके सहायक सम्पादक पण्डित सोमेश्वरदत्त शुक्ल, बी० ए० को पाठक जानते ही होंगे। उन्हीं की लिखी हुई यह 'तरलतरंग' पुस्तक संग्रह-रूप में है। इसमें—अपूर्ण शिक्षक का अधम लक्षण—एक बढ़िया उपन्यास है। और—सावित्री-सत्यवान नाटक तथा चन्द्रहास नाटक—ये दो नाटक हैं। यह पुस्तक विशेष मनोरंजन ही की सामग्री नहीं किन्तु शिक्षा-प्रद और उपदेशप्रद भी है। मूल्य केवल ॥=) दश आने।

### सदुपदेश-संग्रह

मुंशी देवीप्रसाद साहब, मुंसिफ़, जोधपुर ने उर्दू भाषा में एक पुस्तक नसीहतनामा बनाया था। उसकी कुछ पन्द्रह और बराड़ के शिक्षा-विभाग में बहुत हुई। यह कई बार छापा गया। उसी नसीहत-नामा का यह हिन्दी अनुवाद है। सब देशों के प्रसिद्ध मुनि, और महात्माओं ने अपने रचित ग्रन्थों में जो उपदेश लिखे हैं उन्हीं में से छाँट छाँट कर इस छोटी सी किताब की रचना की गई है। शेखसादी का कथन है कि 'अगर भीत पर भी कोई उपदेशात्मक वचन लिखा हो तो मनुष्य को चाहिए कि उसे अपने काम में धर ले'। यह बिलकुल ठीक है। बिना उपदेश के मनुष्य का आत्मा पवित्र और बलिष्ठ नहीं हो सकता।

इस पुस्तक में चार अध्याय हैं। उनमें २५१ उप-देश हैं। उपदेश सब तरह के मनुष्यों के लिए हैं। इनसे सभी सज्जन, धर्मात्मा, परोपकारी और चतुर बन सकते हैं। मूल्य केवल ।) चार आने।

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

अं पुस्तक। अं पुस्तक !!

# गीताञ्जलि

डाक्टर श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की बनाई हुई "गीताञ्जलि" नामक अंगरेज़ी पुस्तक का संसार में कितना आदर है; यह बतलाने की ज़रूरत नहीं। उस पुस्तक की अनेक कवितायें बँगला गीताञ्जलि में तथा और भी कई बँगला की पुस्तकों में छपी हुई हैं। उन्हीं कविताओं को इकट्ठा करके हमने हिन्दी-अक्षरों में 'गीताञ्जलि' छपाया है। जो महाशय हिन्दी जानते हुए बँगला भाषा जानते हैं उनके लिए यह बड़े काम की पुस्तक है। मूल्य १) एक रुपया।

# चित्र ! चित्र !! चित्र !!!

## सरस्वती में प्रकाशित करने के लिए चित्र चाहिए।

जिन सज्जनों के पास सादी अथवा रंगीन दस्ती तसवीरें हों उन्हें सूचित किया जाता है कि वे उन तसवीरों को हमारे पास रजिस्टर्ड भेजें। भेजते समय तसवीरों का मूल्य तथा कापीराइट का विवरण भी लिखें। पसन्द आने पर उनका मूल्य भेज दिया जायगा और पसन्द न आने पर उनके चित्र तुरन्त लौटा दिये जायँगे।

बड़े आकार के (oil or water colour) ऐसे चित्र जिनमें भारतीय जीवन, ऐतिहासिक तथा पौराणिक घटनायें अङ्कित होंगी, विशेष आदर से स्वीकार किये जायँगे। चित्रसम्बन्धी सब प्रकार की लिखा पढ़ी नीचे लिखे पते पर करनी चाहिए।

मिलने का पता—

मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# सरस्वती में विज्ञापन

यह तो आपको विदित ही है कि स[illegible] का प्रचार भारतवर्ष के प्रायः सभी [illegible] सिवा कहीं अधिकाधिक बढ़ता जाता है। [illegible] किसी कोई प्रतियोगिता नहीं है। [illegible] अनेक मासिक पत्र हैं। परंतु नहीं, फिर [illegible] सम्मेलन-समयोपयोगी, गृहोपयोगी और [illegible] सरस्वती के उत्साही ग्राहक बढ़ते जाते हैं। हमारा अनुभव ठीक है कि एक एक ग्राहक से सरस्वती से लेकर पढ़ने वालों की संख्या आठ, दस-दस, तक पहुँच जाती है। इससे सरस्वती का प्रत्येक विज्ञापन प्रतिमास हज़ार सभ्य मनुष्यों के दृष्टिगोचर होता है इसलिए सरस्वती में विज्ञापन छपाने वालों को लाभ रहता है। सन् १९१३ ईसवी से तो का प्रचार और भी अधिक बढ़ रहा है।

आशा है कि आप भी "सरस्वती" में छपा कर उससे लाभ उठाने का शीघ्र प्रयत्न और बहुत जल्द विज्ञापन भेज कर एक बार परीक्षा करके देख लेंगे।

छपाने के नियम ये हैं—

| | | |
|---|---|---|
| १ पृष्ठ या २ कालम की छपाई ... ... | | १९॥) |
| ½ ,, या १ ,, ,, ... ... | | ७) |
| ¼ ,, या ½ ,, ,, ... ... | | ४) |
| ⅛ ,, या ¼ ,, ,, ... ... | | २॥) |

१—विज्ञापन बिना देखे छापने की स्वीकृति नहीं दी जाती।

२—एक कालम या इससे अधिक विज्ञापन छपे सरस्वती बिना मूल्य भेजी जाती है। चौथी को नहीं।

३—विज्ञापन की छपाई पेशगी देनी होगी।

४—साल भर के विज्ञापन की छपाई एक मुश्त देनेवालों से ॥) फ़ी रुपया कम लिया जायगा।

५—सरस्वती का वार्षिक मूल्य ...
नमूने की एक कापी का मूल्य ...

पत्र-व्यवहार इस पते से कीजिए,

मैनेजर, सरस्वती,
[illegible] प्रेस,

"सरस्वती-शारदा-सदन"
SARASVATI—Reg. No. A248.

खण्ड २ ] अगस्त, १९१५ [ संख्या २, पूर्ण संख्या १८८

# सरस्वती

क मूल्य ४) ] सम्पादक—महावीरप्रसाद द्विवेदी [ प्रति संख्या ।=)

इंडियन प्रेस, प्रयाग, से छप कर प्रकाशित।

## महाराजा की राय।

महाराजा दलगञ्जनसिंह देव बहादुर फ़ुमडटरी चीफ़ आफ़ पटना स्टेट बोलांगिर, ज़िला सम्बलपुर से लिखते हैं—

प्रियवर! आपकी भेजी हुई खाँसी की दवा के लिये धन्यवाद हूँ। इस दवा से हमारी खाँसी बिलकुल जाती रही। मैंने इसके कुल सात ही ख़ुराक पीये, अधिक पीने की दरकार न रही। खाँसी मुझे कई महीने से सताती रहती थी, इसलिये पुनः आपको धन्यवाद देता हूँ।

## कफ वो खाँसी की दवा

मूल्य—बड़ी शीशी १) छोटी शीशी ॥)
डा० म० ।=) पो ।=) आने।

दवा सब जगह बिकती हैं। नक़ली दवा से सावधान!

## महाराजकुमार की राय

महाराजकुमार एकदेश्वरसिंह, बोलांगिर से लिखते हैं—

यह दूसरा मौक़ा है; आपकी [illegible] जादू सा असर दिखाया, जिससे तकलीफ़ से नजात पाई। मैं आपका कूर हूँ।

## दाद की मलहम।

मोल—।) चार आने डिबिया।
म० ।=, १२ डिबिया तक ।)

जे० एम० के० एण्ड कं०, सारासर दत्त ष्ट्रीट, कलकत्ता।

कौतुकका आगार ! बुद्धिका भण्डार ॥ दिलचस्पीका पहाड़ !!!

उपन्यासोंका राजा

# लण्डन-रहस्य

अर्थात्

## मिस्ट्रीज आफ दी कोर्ट आफ लण्डन।

जिस उपन्यासके लिये वर्षोंसे लोग लालायित थे, जिस उपन्यासका नाम सुनते ही लोग फड़क उठते थे, उपन्यासकी विचित्रता, मधुरता और अनूठेपनकी धूम संसार भरमें मची हुई थी, जिस उपन्यासने एकबार "यूरोप" को दहला दिया था, जिस उपन्यासके प्रकाशित होते ही "लण्डन" के राजा, मन्त्री, विशप, जज, और बड़े बड़े लार्डोंके कान खड़े हो गये थे, जिस उपन्यासके प्रभावसे यूरोपका अत्याचार, अविचार, व्यभिचार सामाजिक कुरीतियां प्रायः नष्ट हो गयी थीं, जिस उपन्यासने "लण्डन" की राजनीति, शासननीति और कानूनी घातकमें बड़ा भारी उलट फेर मचा दिया था। जिस उपन्यासके छपते ही एकबार लण्डनमें भयानक सामाजिक राजनीतिक क्रान्ति मच गयी थी। उसी अद्भुत, आश्चर्यजनक और प्रभावशाली उपन्यास "लण्डन-रहस्य" के भाग हिन्दीमें छपकर तय्यार हो गये हैं और हाथो-हाथ धड़ाधड़ बिक रहे हैं। इसे यदि उपन्यास न कहकर—

## "लण्डनका प्राचीन इतिहास"

कहा जाय, तो भी अत्युक्ति न होगी; क्योंकि एकबार इस उपन्यासको सरसरी तौरपर पढ़ जानेसे "लण्डन" की ढेरी बड़ी, अच्छी-बुरी प्रायः सब घटनायें आंखोंके आगे नाचने लगती हैं और पाठक यही समझता है, कि मैं लण्डनमें घूम घूमकर इन घटनाओंको आंखोंके सामने देख रहा हूं। "लण्डन-रहस्य", उपन्यास नहीं, वास्तवमें—

## उपन्यास-भण्डार—

की पदवीसे विभूषित करने योग्य है; क्योंकि इसमें सैकड़ों नहीं, बल्कि हजारों घटनाओंका ऐसा सुन्दर, सरल, मनोरंजक और अनूठा वर्णन आया है, कि प्रत्येक घटनामें एक एक स्वतन्त्र उपन्यास बन सकता है। एकबार इस उपन्यासको हाथमें उठा लेनेपर पाठकोंका खाना-पीना, सोना-बैठना तक भूल जाता है और दूसरे उपन्यास इनकी टक्कर ही नहीं होती, यह उपन्यास आश्चर्यका खजाना, विचित्रताका भण्डार, घटनाका समुद्र, दिलचस्पीका पहाड़, खूबसूरतीका अखाड़ा, प्रेमका नन्दन कानन, हंसी-मजाकका फौवारा, मौज-मौजमेलका कोहिनूर और गप-शप, जाल-जुआचोरी, खून-खराबी, चोरी-डकैती तथा अत्याचार अविचारका वायस्कोप है। इस उपन्यासकी अधिक तारीफ करना व्यर्थ है, क्योंकि यदि इसकी पूरी पूरी तारीफ की जाय, तो सिर्फ तारीफहीसे "पलिज़लेखा" या "फ़िसाना आज़ाद" जैसा एक बड़ा पोथा तय्यार हो जाय। परन्तु यह हम दावेके साथ कह सकते हैं, कि इस उपन्यासको खरीदकर पाठकोंको पछताना न पड़ेगा। कारण, कि एकबार इसे आदिसे अन्त पढ़ जानेसे मनुष्य संसारके सब तरहके अच्छे-बुरे, नीच-ऊंच और गुप्तसे गुप्त रहस्योंसे भलीभांति परिचित होकर अपनी वास्तविक उन्नतिमें अग्रसर होने योग्य बन सकता है। इस उपन्यासके प्रत्येक भागमें बड़े ही सुन्दर, घटना पूर्ण ३—४ चित्र भी दिये गये हैं। पूरे १६ भागोंकी चित्र-संख्या लगभग ८० है। दाम १६ भागका ८) रु० और १ भागका सिर्फ १)

मिलनेका पता—आर० एल० धर्म्मन एण्ड को०,

(तारका पता—"धर्म्मन" कलकत्ता) "पुस्तक विभाग" ४०।१२ अपर सीलपुर रोड, कलकत्ता।

# लेख-सूची ।


पृष्ठ

(१) वृद्धावस्था—[ले०, पं० बदरीनाथ भट्ट, बी० ए० ... ... ... ... ६५

(२) विदेशी माल सस्ता क्यों ?—[ले०, श्रीयुत वीरसेनसिंह, अमेरिका ... ... ... ६५

(३) भारतीय किसानों के उद्धार का उपाय—[ले०, श्रीयुत ईश्वरदास मारवाड़ी, बी० ए० ६८

(४) आचार्य्य दिङ्नाग ... .. ७६

(५) एलक-कथा (२)—[ले०, बाबू मैथिलीशरण गुप्त ... ... ... . ७९

(६) सुयोग्य पिता-पुत्र—[ले०, पं० रामनारायण, एम० एस० एस०[इच गायना, दक्षिणी अमेरिका ८१

(७) शिक्षा-विभाग के कुछ नियमों पर विचार [ले०, अध्यापक . . . ८३

(८) सामाजिक ढाँचे के कुछ कारकों का विचार (ढाँचों में रहना) [ ले०, पण्डित [illegible] .. ८८

(९) [illegible] ९१

(१०) [illegible] ९१

(११) [illegible] ९७

(१२) [illegible] ९९

(१३) [illegible] १


# चित्र-सूची ।


(१) वर्षा विहार ( रङ्गीन )।

(२) श्रावण ( रङ्गीन )।

(३) सर पण्डित शीतलप्रसाद [illegible]।

(४) कप्तान लक्ष्मीप्रसाद, आर० एम०।

(५) ट्रिचनापल्ली का पहाड़ी किला।

(६) तञ्जोर का राज-महल।

(७) तञ्जोर के प्रसिद्ध मन्दिर।

(८) तञ्जोर का शिवालय।

(९) श्रीरङ्गम् के मन्दिर।

(१०) श्रीरङ्गम् का गोपुरम्।

(११) मदुरा का प्रसिद्ध मन्दिर, [illegible]।

(१२) रामेश्वर के मन्दिर के [illegible]।

(१३) महात्मा गोखले की [illegible]।

(१४) राजकुमार सिद्धार्थ की [illegible]।

(१५) श्याम सरङ्ग।


## सूचना

नीचे लिखी पुस्तकें [illegible] तैयार हो गई।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

मुफ़्त लुटाते हैं

मुफ़्त लुटाते हैं

ख़ुशबूदार रमेशसावुन एक वैज्ञानिक रीति से बनाया जाता है जो सिर्फ़ ३-४ मिनट में बग़ैर तकलीफ़ के बालों को उड़ाकर जिल्द को मुलायम और ऐसा चमकदार कर देता है मानो बाल थे ही नहीं। रमेशसावुन दाद, खाज, और ज़हरीले जानवरों के विष को भी बात की बात में खो देता है। इसी सबब रमेशसावुन के हज़ारों बक्स बिक रहे हैं। रमेश सावुन बड़े बड़े राजे महाराजे, सेठ के मकान तक आदर पा चुका है। तीन टिकिया मय ख़ूबसूरत बक्स ।॥) बारह आना खरचा ।-) लेकिन जो साहब चार बक्स क़ीमती ३) तीन रुपया एक साथ ख़रीदेंगे उनको एक खने की निहायत मज़बूत ख़ूबसूरत पायेदार फैंसनेबिल घड़ी मुफ़्त नज़र करेंगे। वी० पी०

पता—एल० आर० गुप्ता
(बी शाख) स्वामीघाट, मथुरा।

# आधे दाम में हाथ और पैर का बाजा।

# हिन्दी दारोगा-दफ्तर

## उपन्यासों का सचित्र मासिक पत्र।

यदि आप को उत्तमोत्तम जासूसी उपन्यासों के पढ़ने का शौक़ हो, यदि आप गुप्त-पुलिस के और आश्चर्यजनक कार्रवाइयों पढ़कर स्वयम् भी बहादुर और बुद्धिमान बनना चाहते हों, चोरी, डकैती, जाल, जुआचोरी आदि का पता किस बारीकी से लगाया जाता है, यदि आप जानने की इच्छा हो, तो दो रुपये साल का मुँह न देख इस "मासिक पत्र" के ग्राहक हो जाइये। उपन्यासों के अलावे इसमें सुन्दर सुन्दर लेख और नये नये समाचार भी छपा करते हैं।

### "इस पत्र में किस ढङ्ग के उपन्यास छपते हैं ?"

आश्चर्य्य व्यापारों और लोमहर्षण घटनाओं से भरे हुए, इस पत्र में ऐसे ऐसे अनूठे उपन्यास हैं जो मन चले पाठकों का दिल अपनी ओर खींच लेते हैं। इन उपन्यासों का प्रत्येक पैरा रोचकता और मनोरञ्जकता से कूट कूट कर भरा रहता है, और इनके पढ़ते समय पाठकों का खाना, पीना बैठना तक भूल जाता है। इस पत्र का आवरण-पृष्ठ इतना मनोहर और चित्ताकर्षक है कि देखते ही पुस्तक छाती से लगा लेने की इच्छा होती है। साथ ही प्रतिमास "हाफटोन" फोटो के छपे हुए सुन्दर सुन्दर चित्र भी दिये जाते हैं। अधिक लिखना व्यर्थ है, यदि नमूना देखने की इच्छा हो तो १) टिकिट भेजकर मँगालें, पसन्द हो तो और १॥) भेजकर साल भर के ग्राहक बन जायँ। ८० पृष्ठ के सुन्दर सचित्र मासिक पत्र का वार्षिक मूल्य केवल २) रु० होने पर भी साल में ४) की पुस्तकें निकलती हैं।

मैनेजर "हिन्दी दारोगा-दफ्तर" ४०१।२ अपर चीतपुर रोड, कलकत्ता।

---

छप गया !! सचित्र छप गया

# यूरोपीय महायुद्धका इतिहास।

इस महायुद्धने संसारमें हलचल मचा दी है, जिस महायुद्धने दुनियाके सारे कारबार चौपट कर दिये हैं, जिस महायुद्धने दक्षिणाफ्रिका, यूरोपके कई बड़े प्रतिभाशाली वीरोंका जीवन-मरण निर्भर करता है, महायुद्धमें छोटे छोटे देश कहाँसे कहाँ पहुँच गये हैं, उसी "महायुद्धका सचित्र इतिहास" हिन्दीमें छपकर तैयार हो गया है और आजीवन ग्राहक बिना मूल्य दिया जा रहा है। इसके पढ़नेसे आपको युद्ध संबन्धी ऐसी ऐसी गुप्त और रहस्यपूर्ण बातें मालूम होंगी, जो आपने कभी सुनी न होंगी। इसके द्वारा आपको युद्ध संबन्धी हर बातें मालूम होंगी—इस लिये और दूसरे ग्राहकोंका पूरा साथ बनानेके लिये हिन्दीमें छपा हुआ "यूरोपीय महायुद्धका इतिहास" बिना मूल्य दिया जा रहा है। यदि आपका पता साफ, सही और पूरा लिखा गया है तो आपके पास बिना मूल्य पहुँच जायगा। डाकखर्च [illegible]

[illegible]

# ीक्षित ओषधियाँ ।

## दशतिक्त कषाय ।

सके सेवन से रोज़ आने वाला बुख़ार म्येले-ज्वर, पारी से आने वाला ज्वर, जूड़ी, ताप-, (पिलई) विषमज्वर, मुख का बद-सवाद , शरीर का दुबला होना । यह सब रोग आराम हैं । यह दवा जंगल की दस बूटियों से बनाई । दाम ॥=) आधा पेतल ।

## अपूर्व दन्तमंजन ।

इस मंजन के सेवन से दांत का दर्द, मसूड़ों की ोरी, दूर होती है । हिलते हुए दांतों को ऐसा ृता है कि जैसे किसी ने सोने के तार से बाँध हो और कुछ दिन तक सेवन किया जाय तो की सब बीमारियां दूर हो जाती हैं । यह न ख़ास कर हिलते हुए दांतों को बहुत फ़ायदा ाता है । दाम ।) फ़ी डिब्बी ।

## पीयूष वटी ।

बदहज़मी, पेट का दर्द, अफरा, वायगोला, ूचिका, हैज़ा वग़ैरह सब को दूर करेगी । दाम डिब्बी जिसमें १ दर्जन गोली हैं ।

रस, चूर्ण, तैल, वटिका, आसव आदि शास्त्र : पुरत दर पुरत के अनुभवों से प्राप्त सब तरह ओषधियां सब समय मौजूद रहती हैं । रेलवे ानों के पास रहने वाले रेल का पारसल मँगा-तो महसूल कम लगेगा ।

## पाचक वटी ।

इस वटी के खाने से अजीर्ण, पेट फूलना व पेट दर्द, खराब डकार, चित्त मचलाना, पित्त गिरना दि समस्त उदर-रोग आराम होते हैं और इसके द से मन प्रसन्न होता है । दाम ।॥) डिब्बी जिसमें ० गोलियां हैं ।

नेपाल के स्वर्गवासी जेनरल राना पद्मजंग के

गृहचिकित्सक,

राजवैद्य रमाकान्त व्यास,

कटरा, प्रयाग ।

अमूल्य लाभ !!!

महाशयो ! क्यों आप अपनी स्त्री, पुत्र, पुत्रियों को पवित्र और प्रेमी बना कर गृह-संसार सुधारना चाहते हो तो लो पढ़ो !!! मन की दवा और आत्मा की पुष्टि ।

# सतीमंडल—भा० १ ला०

## ( स्त्री-पुरुषों के धर्म-सहित )

( इस ग्रंथ की गुजराती में सप्तम आवृत्ति है—उसी का यह हिंदी-अनुवाद है ) स्त्री पुरुष को गृह-संसार पवित्र बनाने के लिये किसी भाषा में ऐसा ग्रन्थ अब तक छपा नहीं है—यह पढ़ने से मालूम होगा ।

इस ग्रंथ में जगत् प्रसिद्ध पवित्र—सती सीताजी, लक्ष्मीजी, पार्वतीजी, सावित्री, अनसूयाजी, शारदा-सरस्वतीजी, नर्मदा, द्रौपदी, दमयन्ती, मैत्रेयी, मरीची, अरुन्धती, इन्द्राणी, संज्ञा, स्वाहा, लोपामुद्रा, गार्गी, रेणुका, रेवती, रुक्मिणी, कुन्ती, कौशल्या, गांधारी, मन्दोदरी, अहल्या, दुर्गा, कमला, शकुन्तला, तारा; इत्यादि—७७ सतियों के चरित्र और स्त्रियों का पति तर्फ़ का धर्म, पति का पत्नी तर्फ़ का धर्म, पतिव्रतालक्षण, पति विदेश जाने पर कैसा वर्ताव करना, रजोदर्शन के समय और गर्भावस्था के समय कैसे बर्तना, गर्भवती की कैसी हिफ़ाज़त करना, स्त्रियों को क्या क्या पढ़ाना ज़रूरी है, बालकों की सिखाने की रीति, बालकों की रक्षा करने की रीति, आयुष्य बढ़ाने का उपाय, बीमारों की सेवा करना, गृहव्यवस्था, गृह-वैद्यक, सुंदर और अच्छी संतति कैसे पैदा हो, पति और पत्नी पवित्र कैसे हो सकें, स्त्रि पुरुष को पति बनाने के लिये पसन्द करना, पत्नी बनाने के लिये स्त्रि करना को पसन्द करना, विवाह-समय की पति पत्नी की शर्तें, इत्यादि—२५ गृहसंसारोपयोगी उत्तम विषय हैं—पृ० ५०० सुन्दर सुनहरी जिल्द—छप कर तैयार हो गये हैं—बहुत प्रतियां छिप गई हैं—इस ग्रन्थ में शीघ्र ग्राहक होने वाले को मूल्य रु० ३) पीछे के लिये रु० ४॥) जल्द मंगाइए ।

पता—केशवजी विश्वनाथ त्रिवेदी

# डोंगरे का बालामृत मधुर

## छोटे बच्चे ख़ुशी से पीते हैं।

## छोटे बच्चों की ताक़त बढ़ाने के लिये

डोंगरे का बलामृत

सारे हिन्दुस्तान में मशहूर हो गया है। एजंट होनेवालों को उमदे सर्तरङ्गीन बोर्ड मुफ़्त जाते हैं। शीशी का दाम ॥।) डा० म० ।)

पता—के० टी० डोंगरे क०, गिरगाँव, मुम्बई

you really wish
to be promoted or
et good posts learn
:countancy" and
ort hand" by post.
Qualification ne-
;ary.

*prospectus write to—*

**C. EDUCATION "S"**
POONA CITY.

नीचे लिखी हुई
## कृषि-संबन्धी पुस्तकें
हमारे यहाँ मिलती हैं

१ "खेती बारी"—पं० आनन्दीप्रसाद मिश्र लिखित-मूल्य २)
२ "वैज्ञानिक खेती"—श्रीमती हेमन्तकुमारी देबी लिखित-मूल्य ॥≡)
३ "खाद और उनका व्यवहार"—पं० गयादत्त त्रिपाठी, बी० ए० लिखित-मूल्य ।)

पता:—राधारमण त्रिपाठी, जवहरी मोहल्ला, प्रयाग।

## गेहूं की खेती।

यू० पी० गवर्नमेण्ट विभाग की उपयोगी बनाई हुई यह पुस्तकें हिन्दी उर्दू दोनों भाषा में बनाई गई हैं। इनमें बताया गया है कि प्रत्येक प्रकार की खेती में सामान्यतः दुगुनी तिगुनी और गेहूं की खेती में विशेषतः केवल १० बीघे में एक हज़ार रुपये की वार्षिक पैदावार कैसे की जा सकती है। मूल्य प्रत्येक भाषा की सजिल्द पुस्तक का रुपया १) तीन पुस्तकें डाकव्यय सहित २) में मिलेंगी।

रामप्रसाद, मजिस्ट्रेट जावद,
ज़िला मांडसोर, ( ग्वालियर स्टेट )।

## वन-कुसुम

इस छोटी सी पुस्तक में छः कहानियाँ छापी गई हैं। कहानियाँ बड़ी रोचक हैं। कोई कोई कहानी तो ऐसी है कि पढ़ते समय हँसी आये बिना नहीं रहती। मूल्य केवल चार आने है।

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## त्रैभाषिक विश्व-कोश।

से संस्कृत व अँगरेज़ी की डिकशनरी।)
ोनों भाषा का नया कोश छप कर तैयार हो
में अकारादि से हकार पर्यन्त क्रम से
ब्दों की संस्कृत व अंगरेज़ी के अनेक २
ये हैं। इसमें ५० हज़ार शब्दों का संग्रह
स्कूल व कालेज के अध्यापक, विद्यार्थी,
आदि सब लाभ उठा सकते हैं। जिल्द
क का मूल्य ३॥) है। डाकव्यय पृथक्
। पैसे के टिकट से नमूना भेज सकते हैं।

य, भाषाटीका १) मुहूर्तचन्द्रिका १)
त्र —) शिवाजी का जीवनचरित्र ≡)
सटीक १) वेदान्तसार ≡)
हिन्दुस्तान ॥) एटलस पदिया ॥)
ोध —)॥ संस्कृतसागर भाषाटीका।)
चरित्र भाषा।)

ा पता:—पं० रामस्वरूप शुक्ल,
गवर्नमेंट हाई स्कूल, अलीगढ़।

RUPEES THREE A YEAR.
STUDENTS—Rs. 2.

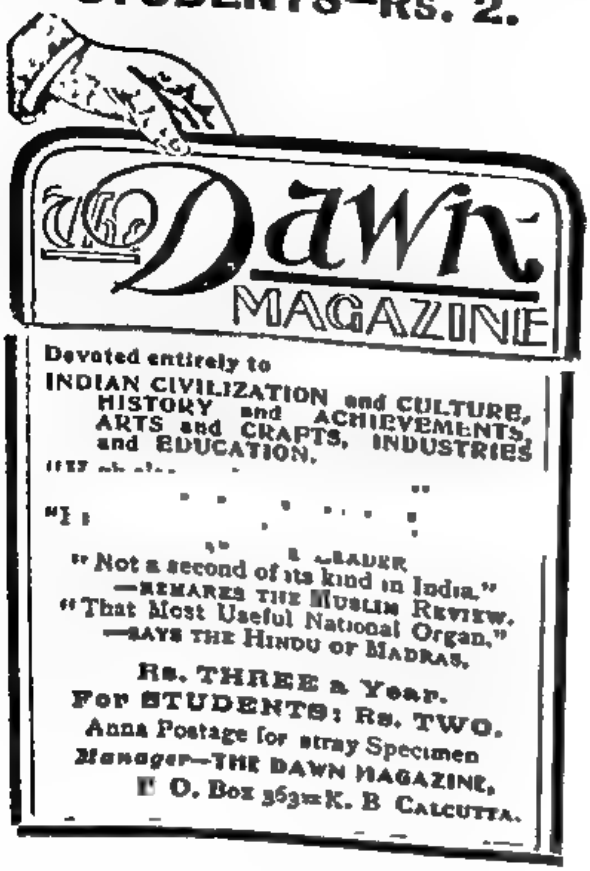


## हाथरस के पक्के चाकू

ये चाकू अपनी सुन्दरता और मज़बूती में विलायती चाकुओं से कहीं अच्छे हैं—चंदन मूठ कमानीदार ॥=) ।=) ।) चंदन सादा ।=) ।) ।=) ।-) लकड़ी मूठ कमानीदार ॥) ।=) ।) ।=) लकड़ी सादा ।=) ।) ।=) ।=) ।-)॥ ।-) दाढ़ीदार ॥=) ॥) ।=) चंदन देशल ॥।) ॥=) ॥) शिकारी छुरी ।) ॥।) सरौते ॥=) ॥) ।=) कैंची ।।) ॥=) ॥) सीपर-दार सादे ॥।) ॥) ।=) ।) ।=) ।) ।=) ।

F you really wish
to be promoted or
get good posts learn
Accountancy" and
short hand" by post.
o Qualification ne-
essary.

*or prospectus write to—*

C. C. EDUCATION "S"
POONA CITY.

भाषिक विश्व-कोश।

स्कृत व अँगरेज़ी की डिकशनरी।)
५। का नया कोश छप कर तैयार हो
क से हकार पर्यन्त क्रम से
संस्कृत व अंगरेज़ी के अनेक २
५० हज़ार शब्दों का संग्रह
लेज के अध्यापक, विद्यार्थी,
लाभ उठा सकते हैं। जिल्द
२॥) है। डाकव्यय पृथक्
से नमूना भेज सकते हैं।
१) मुहूर्तचन्द्रिका १)
शिवाजी का जीवनचरित्र ८)
वेदान्तसार ३)
एटलस घड़ियां ॥)
[illegible] ॥)

[illegible] शुक्ल,
हाई स्कूल, [illegible]।

नीचे लिखी हुई
कृषि-संबन्धी पुस्तकें
हमारे यहाँ मिलती हैं

१ "खेती बारी"—पं० आनन्दीप्रसाद मिश्र लिखित—मूल्य २)
२ "वैज्ञानिक खेती"—श्रीमती हेमन्तकुमारी देवी लिखित—मूल्य ॥=)
३ "खाद और उनका व्यवहार"—पं० गयादत्त त्रिपाठी, बी० ए० लिखित—मूल्य १)

पता:—राधारमण त्रिपाठी, जवहरी मोहल्ला, प्रयाग।

# गेहूं की खेती।

यू० पी० गवर्नमेण्ट विभाग की उपयोगी बताई हुई यह पुस्तकें हिन्दी उर्दू दोनों भाषा में बनाई गई हैं। इनमें बताया गया है कि प्रत्येक प्रकार की खेती में सामान्यतः दुगुनी तिगुनी और गेहूं की खेती में विशेषतः केवल १० बीघे में एक हज़ार रुपये की वार्षिक पैदावार कैसे की जा सकती है। मूल्य प्रत्येक भाषा की सजिल्द पुस्तक का रुपया १) तीन पुस्तकें डाकव्यय सहित २) में मिलेंगी।

रामप्रसाद, मजिस्ट्रेट जावद,
ज़िला मांडसोर, (ग्वालियर स्टेट)।

# वन-कुसुम

इस छोटी सी पुस्तक में छः कहानियाँ छापी गई हैं। कहानियाँ बड़ी रोचक हैं। कोई कोई कहानी तो ऐसी है कि पढ़ते समय हँसी आये बिना नहीं रहती। मूल्य केवल चार आने है।

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

**RUPEES THREE A YEAR.**
**STUDENTS—Rs. 2.**

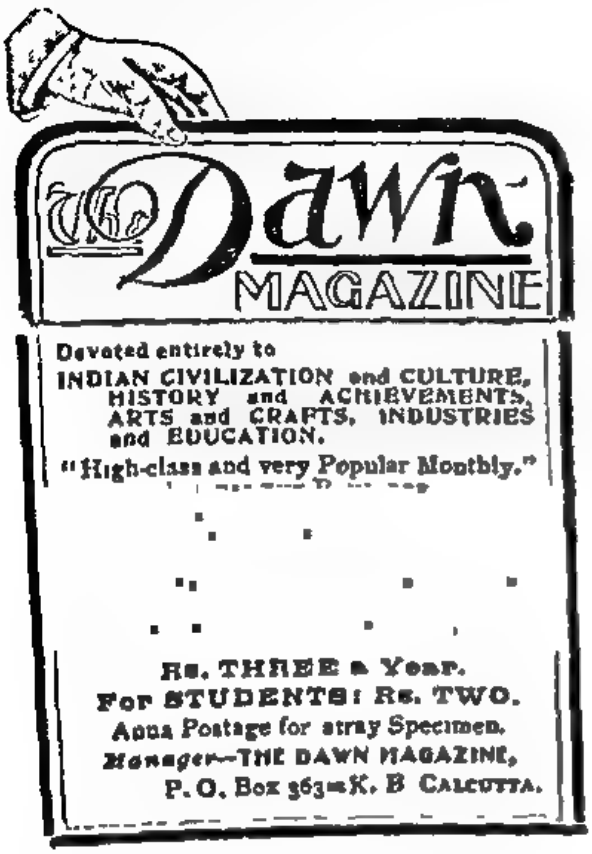


## हाथरस के पक्के चाकू

ये चाकू अपनी सुन्दरता और मज़बूती में विलायती चाकुओं से कहीं अच्छे हैं—चंदन मूठ कमानीदार ॥=) ६) 1) चंदन सादा 1=) 1) ६) =) लकड़ी मूठ कमानीदार ॥) 1=) 1) ६) लकड़ी सादा 1=) 1) ६) =) ॥ =) हाथीदांत 1=) ॥) ६) चंदन देशल ॥) ॥=) ॥) शिकारी छुरी 1) ॥) संतने ॥=) ॥) 1=) कैंची ॥) ॥=) ॥) शीशदार ताले ॥) ॥) 1=) 1) ६) इंचा रंगीन गमछे 1) ६) बढ़िया होंग १०) ८) ६) रुपये सेर।

दी इंडियन कटलरी वर्क्स
नं० ६, हाथरस।

## आठ आने में लुटाते हैं

१ सचित्र कोकविद्या २ गानविद्या ३ रसायनविद्या ४ मंत्रविद्या ५ मैसमरेज़म ६ वशीकरणविद्या मूल्य ॥) चौदहविद्या १) फ़ानूस मार्तण्ड १) इंगलिशटीचर ॥।) सचित्र इंद्रजाल २१६ पृष्ठ ॥।) काकशास्त्र ॥।) व्यापारमाला ।=) बाल काले करने का अस्ली तेल मू० १)

पता—लखपती एण्ड को नं० २
अलीगढ़ सीटी।

## आश्चर्य्य आविष्कार

डाकुरों के शस्त्राघात से बचना चाहो हमारा काला और गुलाबी मरहम का प्रयोग करो—सम्पूर्ण प्रकार के कठिन व साधारण व्रण अति शीघ्र अच्छा करता है। एक डिबिया मरहम का दाम केवल ८ आना है [ मय डाकख

पता—घोस एण्ड सन्स
लूकरगंज—इलाहाबाद।

## असम्भव भी सम्भव कर दिखाते

३॥) के साथ आप कोई फ़ोटो भेजें हम उससे एक बड़ी और स्थायी तसवीर (फ़ोटो इन्लार्जमेंट) १२" × १०" की बनाकर और १८" × १४" के फ्रेम में मढ़ कर आपके पास भेजेंगे और फ़ोटो भी देवेंगे। और बड़ी तसवीर १५" × १२" की २१" × १७" के फ्रेम में मढ़ी हुई, केवल ५) में देते हैं।

पैकिंग और डाकमहसूल कुछ आपको नहीं देना पड़ेगा।

इस मूल्य में तो प्रियजनों का स्मारक घर में अवश्य रख लेना चाहिये। ऐसा अवसर फिर हाथ नहीं आवेगा।

इण्डस्ट्रियल स्टोर्स हाउस, इलाहाबाद।

IF you really wish to be promoted or to get good posts learn "Accountancy" and "short hand" by post. No Qualification necessary.

*For prospectus write to—*

**C. C. EDUCATION "S"**

**POONA CITY.**

## त्रैभाषिक विश्व-कोश।

हिन्दी से संस्कृत व अँगरेज़ी की डिक्शनरी।)

यह तीनों भाषा का नया कोश ढूंढ कर तैयार हो ा। इसमें अकारादि से हकार पर्यन्त क्रम से पूर्ण शब्दों की संस्कृत व अंगरेज़ी के अनेक र द रक्खे हैं। इसमें ५० हज़ार शब्दों का संग्रह इससे स्कूल व कालेज के अध्यापक, विद्यार्थी, ि, पंच आदि सब लाभ उठा सकते हैं। सिद्ध ी पुस्तक का मूल्य ३॥) है। डाकव्यय पृथक् ा। दो पैसे के टिकट से नमूना भेज सकते हैं।

ारसंग्रह, भाषा टीका सहित ।) मुहूर्तचन्द्रिका ।)
र्णचरित्र ।) शिवाजी का जीवनचरित्र ।)
ुबोध सटीक ।) वेदान्तसार ।)
टलस हिन्दुस्तान ॥) एटलस अमेरिका ॥)
पदेश ।) संस्कृतसागर भाषाटीका।)
ुमारचरित्र भाषा।)

ने का पता:—पं० रामस्वरूप शुक्ल,
गवर्नमेंट हाई स्कूल, जबलपुर।

नीचे लिखी हुई

## कृषि-संबन्धी पुस्तकें

हमारे यहाँ मिलती हैं

१ "खेती बारी"—पं० आनन्दीप्रसाद मिश्र लिखित—मूल्य २)

२ "वैज्ञानिक खेती"—श्रीमती हेमन्तकुमारी देवी लिखित—मूल्य ॥≡)

३ "खाद और उनका व्यवहार"—पं० गयादत्त त्रिपाठी, बी० ए० लिखित—मूल्य ।)

पता:—राधारमण त्रिपाठी, जवहरी मोहल्ला, प्रयाग।

## गेहूं की खेती।

यू० पी० गवर्नमेंण्ट विभाग की उपयोगी बनाई हुई यह पुस्तकें हिन्दी उर्दू दोनों भाषा में बनाई गई हैं! इनमें बताया गया है कि प्रत्येक प्रकार की खेती में सामान्यतः दुगुनी तिगुनी और गेहूं की खेती में विशेषतः केवल १० बीघे में एक हज़ार रुपये की वार्षिक पैदावार कैसे की जा सकती है। मूल्य प्रत्येक भाषा की सचित्र पुस्तक का रुपया १) तीन पुस्तकें डाकव्यय सहित २) में मिलेंगी।

रामप्रसाद, मजिस्ट्रेट जावद,
जिला मांडसोर, (सेन्ट्रल इंडिया)।

## वन-कुसुम

इस छोटी सी पुस्तक में छः कहानियाँ लिखी गई हैं। कहानियाँ बड़ी रोचक हैं। कोई कोई कहानी तो ऐसी है कि पढ़ते समय हँसी रुके बिना नहीं रहती। मूल्य केवल चार आने है।

मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

लाभ और सुख का भंडार ? जीवन की सफलता और दुनिया की बहार !!

# अष्टसिद्धि

मनुष्य मात्र को परमोपयोगी व परमावश्यकीय परीक्षित आठ पर्चे।

अमरजंत्री—सौ वर्ष तक काम देनेवाली कई रंगों में चित्राकार है।

मुद्रित धूप घड़ी—मुद्दत तक खराब नहीं होती और बिलकुल ठीक टाइम बताती है।

जेबी दवाखाना—(वैद्यक का टिपारा)—सर्वरोगनाशक एकही सरल दवा का नुसखा, ख
बचाओ, चाहे पैदा कर लो, नीरोग रहो, यश लूटो, वैद्य, हकीम डाक्टर कहलाओ।

कायापलट—कुछ का कुछ दिखाने और स्त्रियों को परम प्यारी व पेरयारी की चीज़ का नुसख
चुड़ैलों को अप्सरा बनाने की तरकीब।

सुख प्राप्ति—मनचाहा फल मिले।

आनन्दवर्धक—सुख शान्ति और आनन्द प्रतिष्ठा पूर्वक गृहस्थ जीवन व्यतीत करने व दाम
प्रेम बढ़ाने के उपाय का खुलासा।

विजयी कवच—प्लेग-प्रहार से रक्षित रहने (बचने, बचाने) का अति सरल उपाय। जान
की खैर।

अनुभवता—आदमी सहज में ही चतुर, बुद्धिमान, सुयोग्य कैसे हो सकता है। सर्व मान्य
का तरीका।

मूल्य सबका डाकव्यय सहित नहीं के बराबर केवल ॥=) आना मात्र अग्रिम है। वी० पी०
नहीं भेजा जाता। दस आना का मनीआर्डर भेजना चाहिए। अष्ट सिद्धि रजिस्ट्री से भेजी जावेगी। या
रखियेगा। दवा और पुस्तकों की भाँति ये वस्तु आपको हर जगह और हर समय मुफ़्त नहीं मि
सकेंगी। इस विज्ञापन पर ध्यान दीजियेगा। बस इतनाही निवेदन है। पूर्ण आशा है कि गुण-ग्राही सज्ज
इससे लाभ उठा कर हमारे यत्नों के परिश्रम व व्यय को सार्थक करेंगे।

पता—हितैषीकार्यालय, आगरा।

"श्री गेरमल-सारदा-सदन"

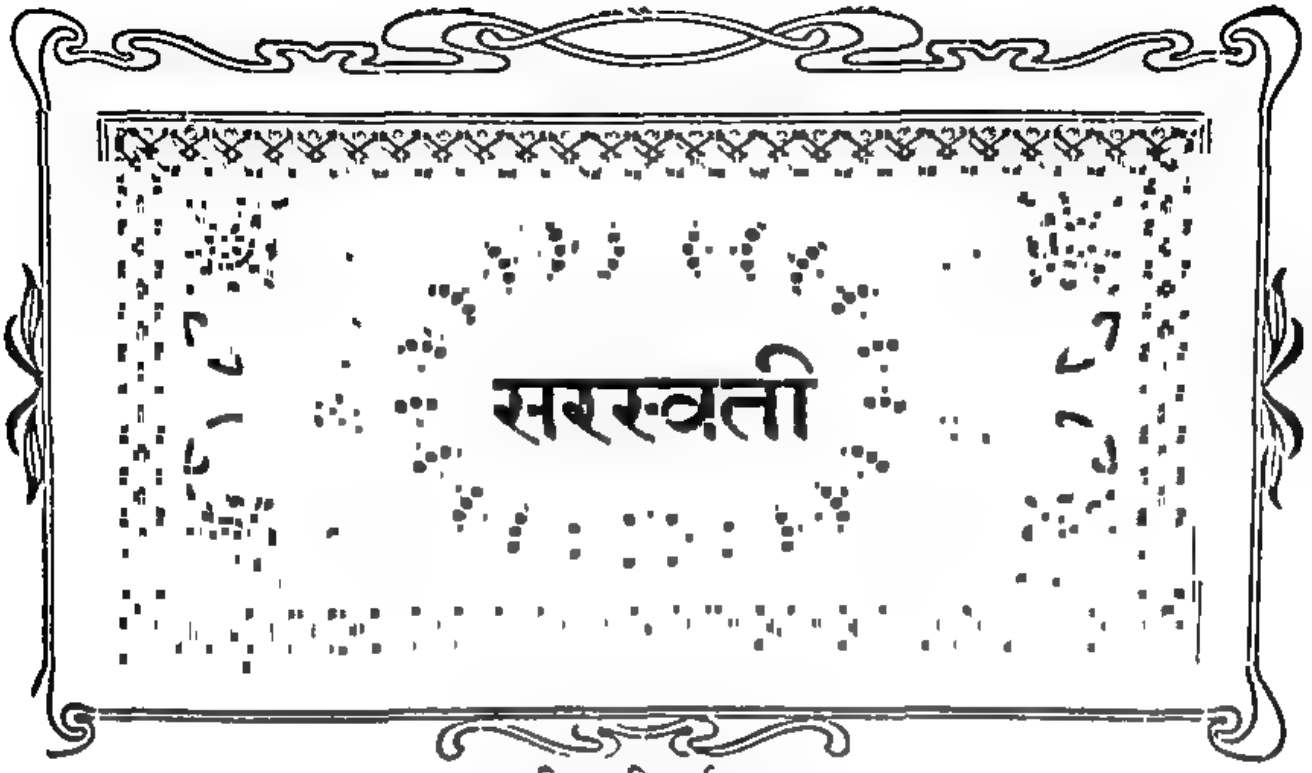


सचित्र मासिक पत्रिका।

१६, खण्ड २ ] अगस्त १९१५—श्रावण १९७२ [ संख्या २, पूर्ण संख्या १८८

## वृद्धावस्था।

( एक वृद्ध की शक्ति समय के प्रति )

कालिदास—

बूढ़ो ! मूढ़ क्यों गया आज।
रह-रह मैं हमें सुलाया मद का आज दाब।
क्या समझ रहा है गई बचे न सिर पर बाल।
धीरे धीरे लेगया हँसी खेली जवानी आज।
यही ओपड़ी यही है बिगड़ा हाल हवाल।
क्या जगाई इस में भी कुछ विस्मृति-सारदा डाल।

बदरीनाथ भट्ट।

## विदेशी माल सस्ता क्यों?

सांसारिक सुखों के साधन सांसारिक पदार्थ हैं। इन पदार्थों को जो शक्ति ईश्वर के अनुसार समस्त पर पैदा करती है वही गुण है। मनुष्य क्या, सभी प्राणियों की प्राय रक्षा सारे पदार्थों ही पर अवलम्बित है। यद्यपि अन्न और हवा के बिना भी जीना असम्भव है, तथापि ये दोनों पदार्थ सब को सब समय बिना परिश्रम मिलते हैं। खाद्य वस्तु ही एक ऐसी चीज़ है जिसके लिए सभी को करने पड़ती है। अन्न के लिए ही कहीं खेत तो कहीं दूकान आदमी ढूंढता है। इस तरह इस संसार में रहने है

लाभ और सुख का भंडार ? जीवन की सफलता और दुनिया की बहार !!

# अष्टसिद्धि

## मनुष्य मात्र को परमोपयोगी व परमावश्यकीय परीक्षित आठ पर्चे।

अमरजंत्री—सौ वर्ष तक काम देनेवाली कई रंगों में चित्राकार है।

मुद्रित धूप घड़ी—मुद्दत तक खराब नहीं होती और बिलकुल ठीक टाइम बताती है।

जेर्वा दवाखाना—(वैद्यक का टिपारा)—सर्वरोगनाशक एकही सरल दवा का नुसखा, बचाओ, चाहे पैदा कर लो, नीरोग रहो, यश लूटो, वैद्य, हकीम डाक्टर कहलाओ।

कायापलट—कुछ का कुछ दिखाने और स्त्रियों को परम प्यारी व पेरयारी की चीज़ का नुस बुड्ढों को अप्सरा बनाने की तरकीब।

सुख प्राप्ति—मनचाहा फल मिले।

आनन्दवर्धक—सुख शान्ति और आनन्द प्रतिष्ठा पूर्वक गृहस्थ जीवन व्यतीत करने व प्रेम बढ़ाने के उपाय का खुलासा।

विजयी कवच—रोग-प्रहार से रक्षित रहने (बचने, बचाने) का अति सरल उपाय। ज्ञान की कुंजी।

अनुभवता—आदमी सहज में ही चतुर, बुद्धिमान्, सुयोग्य कैसे हो सकता है। सर्व मा का तरीका।

मूल्य सबका डाकव्यय सहित नहीं के बराबर केवल ॥=) आना मात्र अग्रिम है। ह नहीं भेजा जाता। दस आना का मनीआर्डर भेजना चाहिए। अष्ट सिद्धि रजिस्ट्री से भेजी जावेगी। दया और पुस्तकों की भांति ये वस्तु आपको हर जगह और हर समय मुफ़्त ना मिलेंगी। इस विज्ञापन पर ध्यान दीजियेगा। बस इतनाही निवेदन है। पूर्ण आशा है कि इससे लाभ उठा कर हमारे यत्नों के परिश्रम व व्यय को सार्थक करेंगे।

पता

रते और उनकी चीनी ख़रीदते—चाहे सस्ती लती चाहे महँगी—तो हम अवश्य ही धनाढ्य हो ते और नक़ली के बदले असली चीनी खाते। पर मारे भाइयों को घर में फूट बोने से ही छुट्टी नहीं। करें तो क्या करें। दूसरी जातियाँ आपस मिल कर सहयोगिता का पाठ पढ़ रही हैं और म फूट का बीज बोते चले जा रहे हैं। सहयोगिता ही अनेक देशों को मालामाल कर दिया है। उसी प्रभाव से माल सस्ता बिकता है। पर हम सह-गिता का कभी स्वप्न भी नहीं देखते। यदि हम हयोगिता की तरफ़ झुकें तो देखते देखते धन-र हो जायँ। केवल एक मति की—केवल योग-न की—ज़रूरत है। क्या आलू और चोकर आदि बनी हुई चीनी उस चीनी की समता कर सकती जो स्वभाव ही से मीठी है? कदापि नहीं। देशी माल के सस्ते होने का कारण सुन जिए—

जो चीज़ अधिक मिक़दार में एकदम तैयार की ती है वह हमेशा सस्ती होती है। मान लीजिए किसी को कोई पुस्तक छपवानी है। यदि वह कदम बहुत सी पुस्तकें छपवाता है तो वे सस्ती ड़ती हैं। पर यही पुस्तक यदि प्रति वर्ष थोड़ी थोड़ी रके छापी जायँ तो महँगी पड़ती हैं। इसका कारण ह है कि समय अधिक लगता है और मज़दूरी में हुत ख़र्च पड़ता है। चीनी तथा दूसरी चीज़ों का यही हाल है। एकदम बहुत सी चीनी बनाई जाती इस कारण सस्ती पड़ती है। कल्पना कीजिए कि ोटी किसान को ईख बेच कर चीनी बनाना है। ोड़ी सी ईख काट कर उसे पेरता है और उसके स को कड़ाह में पका कर उससे गुड़ या चीनी नाता है। यदि यह थोड़ी सी ईख न काट कर हुत सी काटता या कई किसान मिल कर अपनी पनी ईख काट कर सबका रस एक साथ कड़ाह पकाते तो चीनी या गुड़ अवश्य सस्ता पड़ता। ल्पना कीजिए कि सौ घड़े रस से चीनी बनाना । यदि यह रस एकदम गरम किया जाय तो कम आँच ख़र्च होगी। यही यदि दस दफ़े में गरम किया जाय तो ईंधन भी बहुत लगेगा, समय भी, और मज़दूरी भी। अब बताइए कौन सा तरीक़ा सस्ता और अच्छा है।

दूसरी बात यह है कि विदेशों में प्रायः सभी चीज़ों के कारख़ाने हैं। जो जिस विषय को जानता है वह उसी के सम्बन्ध का काम करने के लिए रक्खा जाता है। जैसे, जो चीनी की कल पर काम करता है वह और काम नहीं करता। यह नहीं कि आज तो वह चीनी की कल पर है, कल कोई और काम करने बैठ गया। ऐसा करने से वह कार्य-कुशल नहीं हो सकता। इसलिए जो जिस विषय को जानता है उससे वही काम लिया जाता है। ऐसा आदमी अपने काम को शीघ्र और अच्छी तरह कर सकता है।

तीसरी बात कलों से काम लेना है। हाथ के काम से और कलों के काम से ज़मीन आसमान का फ़रक़ है। कलों से जल्दी काम होता है। हाथ से उसका शतांश भी उतनी देर में नहीं हो सकता। यही कारण है जो कल का बना माल बहुत सस्ता पड़ता है।

पाश्चात्य देशों में मज़दूरी में अवश्य ही अधिक ख़र्च पड़ता है। अमेरिका का मज़दूर ६) रुपये रोज़ पाता है और भारत का ।=) आना रोज़! पर ऊपर कही हुई बातों के कारण अधिक मज़दूरी दे कर भी माल सस्ता पड़ता है। फिर, टापुओं में अधिकतर भारतीय मज़दूर ही काम करते हैं, जहाँ डेढ़ रुपया रोज़ से अधिक मज़दूरी नहीं मिलती।

विदेश में मज़दूरों से काम लेने के और तरीक़े हैं, भारत में और। अमेरिका में, और शायद इंगलैंड में भी, यह तरीक़ा है कि काम करने का समय नियत कर दिया जाता है। जैसे किसी पुर्ज़े को बनाने के लिए पाँच घण्टे का समय दिया गया। अब, यदि, काम करने वाला मज़दूर ढाई घण्टे में ही उसे कर डालता है तो उस को डेढ़ी मज़दूरी मिलती है। यदि वह दो रोज़ का काम एक ही

रोज़ में कर डालना है और उसकी मज़दूरी ६) रोज़ है तो उसे एक रोज़ की मज़दूरी डयोढ़ी अर्थात् ९) मिलेगी। यद्यपि काम उसने १२) का किया, पर ३) कारख़ाने के मालिक की पाकेट में गये। इस तरह कारख़ाने वाले ने दो आदमियों का काम डेढ़ आदमी से लिया। डयोढी मज़दूरी पाने के लिए मज़दूर बड़ी कोशिश करते हैं और काम पर ख़ूब जुटे रहते हैं।

पर भारत में मैं इस तरह काम लेने के ढँग का पक्षपाती नहीं। इस से आरोग्य में बाधा पड़ जाती है और हड़तालों का भी डर रहता है। पाश्चात्य देशों की बात और है। वहाँ जाड़ा अधिक पड़ता है। इस कारण बीमारी इत्यादि कम होती है। फिर वहाँ के मज़दूर दिन में तीन वक्त, मांस-भक्षण करते हैं। शराब बिना उनका गुज़ारा ही नहीं। इस से वे हृष्ट-पुष्ट बने रहते हैं। पर, भारत में यह बात नहीं। समय को देख कर काम करना उचित है।

यदि भारत को व्यापार की घुड़दौड़ में आगे बढ़ना है तो उसे ये काम करने होंगे:—

(१) सहयोगिता का सङ्गठन (२) कलों का प्रयोग और (३) यथाशक्ति स्वदेशी वस्तु-सेवन। यदि इन साधनों से काम लिया जाय तो इसमें सन्देह नहीं कि भारतीय व्यापार की उन्नति हो। भारत में मज़दूरी कम है। इसलिए उसे शीघ्र सजग होना चाहिए। जब यहाँ के मज़दूर भी विलासी हो जायँगे तब अवश्य ही अधिक ख़र्च होगा। पर यह जब होगा तब होगा, वर्तमान दशा को देख कर कार्यारम्भ कर देना चाहिए।

हम लोगों की मुख्य ख़ुराक अन्न है, जिसकी पैदावार बढ़ाना हमारा पहला कर्तव्य है। पर केवल इतने ही से विशेष उन्नति न होगी। जो देश कच्चा माल तैयार करके ही टाल रहता है उसकी उन्नति तो दूर रही, वह दिन पर दिन गढ़े में गिरता जाता है। खान से निकले हुए लोहे की क़ीमत यदि दस रुपया है तो उसी से बनी हुई घड़ी की क़ीमत सौ है। कच्चा माल तैयार माल से कहीं सस्ते भाव में बिकता है। इसलिए हम लोगों को खेती की उन्नति के अलावा कारख़ाने भी खोलने चाहिए। इस दशा में हमको पहले विदेशों से कलें ख़रीदने होंगी। विदेश जाकर कारोबार सीखना होगा। कूप-मण्डूक बने रहने से तो थिर थिर के सिवा और क्या हो सकता है। किसी चीज़ का बिलकुल बहिष्कार करना असम्भव नहीं तो अति कठिन अवश्य है। अमेरिका जैसे देश भी इँगलैंड की और जर्मनी की चीज़ें बर्तते हैं, और जर्मनी इत्यादि अमेरिका की। पर ये अपना हानि-लाभ समझ कर ऐसा करते हैं। क्या भारतवासी ऐसा नहीं कर सकते? अवश्य ही कर सकते हैं।

हमें यथासम्भव स्वदेशी वस्तु का सेवन करना चाहिए। पर यदि स्वदेशी वस्तु नहीं मिल सकती और उसके न मिलने से काम रुका जाता है, शिल्प व्यापार में बाधा पड़ती है तो विदेशी चीज़ ख़रीदनी चाहिए। तथापि, यदि कोई कहे कि मुझे तो सफ़ेद ही चीनी पसन्द है तो इसका उत्तर मेरे पास इतना ही है कि उसकी प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ कीजिए; आप ख़ुद ही उसे बनाइए। समय को देख कर आचरण कीजिए। सहयोगिता की सिद्धि खेती कीजिए और उपयोगी चीज़ों के कारख़ाने खोलिए। सचाई और सहानुभूति से काम लीजिए। ईश्वर पर भरोसा रखिए। फिर देखिए, पुरुषार्थ और धैर्य्य का फल कैसे नहीं मिलता।

वीरसेनसिंह
(अमेरिका

---

## भारतीय किसानों के उद्धार का उपाय

भारतवर्ष कृषि-प्रधान देश है। प्राचीन काल में शिल्प और वाणिज्य में भी भारत और देशों से कहीं बढ़ा चढ़ा था। किन्तु सत्रहवीं शताब्दी से वर्षों में विदेशी वाणिज्य की उन्नति और राजनैतिक अवस्था में परिवर्तन होने के कारण यहां का व्यापार चौपट हो गया। इस समय यह देश केवल कच्चा माल उत्पन्न करने

भावार्थ ।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

छ से तुच्छ वस्तुओं के लिए भी हम लोगों को दूसरों का ह ताकना पड़ता है। कुछ समय पहले तक भारत में जो ाम तैयार होता था वह विदेशों में सस्ते दामों बिक ता था और कड़ा कर लगने पर भी भारतीय शिल्पियों खासा मुनाफ़ा होता था। किन्तु इस समय ये सब व्यव- य मटियामेट हो गये हैं। केवल बची है कृषि। उसी से प्रायः सभी प्रजा को पेट पालना पड़ता है। इसी कारण हा जाता है कि—"India is a Continent Villages" अर्थात् भारतवर्ष गाँवों का देश है। जो ाग देहात में रहते हैं उनकी जीविका का एक मात्र उपाय षि है। एक सरकारी किताब (Imperial Gazetteer) लिखा है—

"It has been estimated that nine-tenths the rural population in India live directly indirectly by agriculture."

अर्थात् हिसाब लगाने से मालूम हुआ है कि ग्राम- वासियों में फी सदी नब्बे मनुष्यों को कृषि के द्वारा जीविका-निर्वाह करना पड़ता है।

इँगलैंड में फी सदी ७७ आदमी नगरों में रहते हैं, किन्तु वहाँ वाले अधिकतर नगरों में नहीं, किन्तु देहात में हते हैं। इसलिए भारत का कृषकों के साथ बड़ा घना म्बन्ध है। उन्हीं की दुर्दशा से भारत की दुर्दशा और उन्हीं की सुदशा से भारत की सुदशा का पता लगता है। अतएव में उचित है कि इन कृषकों की गिरी हुई दशा किस तरह ठीक हो सकती है, इस पर विचार करें। हमारी गवर्नमेंट ी इस बात की क़ायल है और वह इनकी दशा सुधारने ी भरसक प्रयत्न कर रही है।

भारत की दशा इस समय शोचनीय है। एक साल भी यदि अच्छी वर्षा नहीं होती तो सारे देश में कुहराम मच जाता है और लाखों भारतवासी भूखों के मारे छटपटा कर राण-त्याग करते हैं। भारतवर्ष में दुर्भिक्ष का ज़ोर किस कार दिन पर दिन बढ़ता जाता है, यह बात सरकारी रिपोर्टों में प्रकाशित मृत्यु-संख्या से मालूम होती है। अठारहवीं सदी के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक केवल चार दफ़े दुर्भिक्ष पड़ा। किन्तु उन्नीसवीं सदी से दुर्भिक्ष का ज़ोर बढ़ने लगा। १८०० से १८२५ तक संपूर्ण ब्रिटिश भारत में १० लाख भारतवासी भूखों मरे। १८२५ से १८५० तक ५ लाख और १८५० से १८७५ तक ५० लाख मनुष्यों ने बिना अन्न अपने प्राण खोये। उन्नीसवीं सदी के अन्तिम पचीस वर्षों के दुर्भिक्षों का विचार करने से तो छाती फटती है। केवल इन २५ वर्षों में दुर्भिक्ष-दैत्य ने भारत पर २८ बार अपनी कोपाग्नि प्रकट की और लगभग ४ करोड़ मनुष्यों को भस्मीभूत कर दिया। उन्नीसवीं सदी में सब मिला कर जितने मनुष्यों ने भूख से प्राण-त्याग किये उस पर विचार करके कौन ऐसा पाषाण-हृदय होगा जिसके नेत्रों में अश्रु न आ जायँ? संसार में युद्ध से बहुत नर-हत्या होती है। किन्तु जितने मनुष्य अकाल के कारण अकेले भारत में, सौ वर्षों में, मरे उतने संसार के सारे युद्धों में भी उन सौ वर्षों में नहीं मरे। विलियम डिग्बी (William Digby) साहब ने लिखा है कि १७९३ से १८०० ईसवी तक, एक सौ सात वर्षों में, संसार में जितने युद्ध हुए हैं उनमें सब मिला कर ५० लाख से अधिक मनुष्य नहीं मरे। किन्तु इसी समय के बीच अकेले भारत में तीन करोड़ पचीस लाख मनुष्यों ने बिना अन्न संसार-त्याग किया। इससे बढ़ कर भारत की और क्या दुर्दशा होगी! जिस भारत में पशु-पक्षी भी अन्न न पूछते थे उसी भारत में आज लाखों मनुष्य बिना अन्न प्राण त्याग करते हैं। इसका कारण क्या? साधारणतः लोग समझते हैं कि दुर्भिक्ष अनावृष्टि तथा अतिवृष्टि से होता है। वृष्टि की बात ईश्वर के हाथ में है। मनुष्य का इसमें कुछ भी ज़ोर नहीं। किन्तु आश्चर्य्य इस बात का है कि भारत में सर्वत्र कभी अकाल नहीं पड़ता। अकाल के समय में भी हमारे देश के कितने ही प्रान्तों में इतना अन्न होता है कि यदि वह बाहर न जाय तो एक मनुष्य भी भूखों न मरे। बात यह है कि अन्न का कम उत्पन्न होना भारत के दुःख-दारिद्र्य का कारण नहीं। पृथ्वी में कई देश ऐसे हैं जहाँ खेती के योग्य भूमि बहुत कम है। तथापि वहां के लोग भूखों नहीं मरते। इँगलैंड ही को लीजिए। वहां खेती के योग्य बहुत ही थोड़ी भूमि है। वहाँ जितना अन्न उत्पन्न होता है वह वहाँ वालों के लिए साल में ९० दिनों से अधिक के लिए काफ़ी नहीं। तिस पर भी वहाँ के लोग काफ़ी दिनों में भूखों नहीं मरते। जर्मनी का भी यही हाल है। वहाँ के मनुष्य भी अपने देश की उपज से केवल १०४ दिन अपने प्राणों की रक्षा कर

सकते हैं। किन्तु वहाँ भी दुर्भिक्ष से नर-नाश नहीं होता। भारतवर्ष में भी ऐसा समय आज तक कभी नहीं आया जब रुपया देने से भी अन्न न मिले। तब क्या कारण है कि लोग भूखों मर जाते हैं। विदेशी लोग सात समुद्र पार बैठे हुए यहाँ से अन्न माँगा कर अपना पेट पालते हैं और भारतवासी सामने ही अन्न का ढेर देखते हुए भी उसके लिए तरस तरस कर प्राण छोड़ते हैं। इन दरिद्र भारतवासियों के इस दुःख को देख कर कितने ही सहृदय अँगरेज़ों का भी हृदय द्रवीभूत हुआ है। उन्होंने भारत की इस दरिद्रता की ओर सरकार का ध्यान भी आकर्षित किया है। भारतवासियों के धन का मूल कारण दरिद्रता है। यदि भारतवासियों के पास धन हो तो वे कभी इस तरह न मरें। धन ही के अभाव से वहाँ दरिद्रताओं का सामना करना पड़ता है और लोगों [illegible] का ध्यान न देने [illegible] ।

[illegible]

१५) ही रह जाता है! अब इस का मिलान और देशों की आमदनी से यदि आप करें तो लीजिए—

| | रुपया |
|---|---|
| इँगलैंड | ११० |
| जर्मनी | ३१० |
| फ्रान्स | ४२० |
| बेलजियम | ४२० |
| अमेरिका के संयुक्त राज्य | २८१ |
| आस्ट्रेलिया | १४२ |
| भारतवर्ष | १२ |

इस हिसाब से साफ़ ज़ाहिर है कि भारतवर्ष की [illegible] इँगलैंड ७२ गुना अधिक धनी है। अब पाठक [illegible] अनुमान कर सकते हैं कि भारतवर्ष कितना दरिद्र है। इस समय भारतवर्ष की आबादी कोई ३१ करोड़ है। [illegible] से कम से कम २० करोड़ मनुष्य रोटी से आधा पेट [illegible] करते हैं। इन २० करोड़ मनुष्यों में लगभग १० [illegible] मनुष्य ऐसे हैं जो पेट भर खाना किसे कहते हैं, यह [illegible] ही नहीं। सर इलियट (Sir Elliot) ने इस बात को [illegible] पेन किया है कि दरिद्रता के कारण ही लोग की दृष्टि [illegible] है। यह पर होता है कि मनुष्य सेवा और भी का [illegible]

भारतवर्ष के इतनों के दुख दरिद्र का [illegible] [illegible] की बड़ी आवश्यकता है। अकाल [illegible] [illegible] भारतवर्ष का [illegible] हो सकता है। अब [illegible] [illegible] का [illegible] कीजिए।

## [illegible] की [illegible] आवश्यकता

[illegible]

अर्थात् जो जाति केवल कृषि पर ही भरोसा रखती है या ऐसे ही व्यवसाय करती है जिनके बिना उसका ी तरह गुज़ारा हो नहीं वह अपनी आधी उत्पादक शक्ति खोती रहती है।

हम लोगों को अपने देश से कच्चा माल विदेश भेजना ता है। उसी से माल तैयार होकर फिर यहाँ आता है। हरण के लिए जूट लीजिए। यह बङ्गाल में बहुत पैदा ता है। भारतवर्ष में उसकी खपत बहुत कम है। वह ा सारा का सारा विदेश जाता है। यही कारण है कि ज कल योरप में युद्ध छिड़ जाने से यहाँ के जूट का पार चौपट हो गया है। उसका दाम घट कर आधा ही गया है। इस कारण हमें बड़ी भारी हानि उठानी पड़ी है। दि जूट की चीज़ें भारतवर्ष ही में बनतीं तो इस दुरवस्था के कारण इस व्यवसाय को हानि न पहुँचती। उलटा ति होती, क्योंकि बाहर वालों की प्रतियोगिता हमें न ेलनी पड़ती।

भारत में बहुत कम व्यापार होता है। इस कारण ें अधिकांश कृषि-कार्य से ही अपना निर्वाह करना ता है। फल यह होता है कि कृषि पर हद से ियादह बोझ पड़ता है, जिसे सँभालने में वह समर्थ नहीं। दि देश में अधिक व्यापार होता तो कृषि पर उतना बोझ पड़ता। प्रजा का कुछ अंश शिल्प-वाणिज्य से अपना पेट रता। व्यापार से एक और भी लाभ है। उससे देश के ान की वृद्धि होती है। धन की वृद्धि से दरिद्रता की यक्रूरता घटती है। कुछ लोगों का यह ख़याल है कि ारतवर्ष कृषि के ही योग्य है। ईश्वर ने भारत को अन्न उप-ाने के लिए ही बनाया है। यहाँ का जलवायु शिल्प और ाणिज्य की उन्नति के योग्य नहीं। किन्तु यह उनकी भूल । कुछ लोग अमेरिका के लिए भी यही कहते थे कि वहाँ ाणिज्य-व्यापार सफल नहीं हो सकता। किन्तु अब सभी खते हैं कि अमेरिका कृषि तथा वाणिज्य दोनों में कितना बढ़ा चढ़ा है। इसी तरह भारत भी व्यापार-ाणिज्य में उन्नति कर सकता है। हाँ, यहाँ वालों को अपने देश के उत्थान के कार्य में कटा है। जब तक भारतवर्ष कृषिप्रधान बना रहेगा तब तक कृषकों की दशा न सुधरेगी।

## लगान में सुधार की आवश्यकता।

कृषकों के उद्धार का दूसरा उपाय सारे भारतवर्ष में दवामी बन्दोबस्त अर्थात् Permanent Settlement है। जिस समय अँगरेज़ों का शासन इस देश पर हुआ उस समय थोड़े ही समय के लिए ज़मीन के लगान का निर्ख़ निश्चित होता था। इस कारण बहुत बुराइयाँ पैदा होती थीं और दिन पर दिन खेतों की उत्पादक शक्ति कम होती जाती थी। लार्ड कार्नवालिस के गवर्नर-जनरल होकर आने के पहले यहाँ एक अथवा पाँच वर्ष के लिए ही ज़मीन का पट्टा लिखा जाता था। लार्ड कार्नवालिस आये तो उन्होंने देखा कि कृषक अपनी ज़मीन का ठीक तरद्दुद नहीं करते। खेत जङ्गल बन रहे हैं। ज़मीन की उर्वरा-शक्ति नष्ट हो रही है। तब उन्होंने बङ्गाल हाते का दवामी बन्दोबस्त कर दिया। तदनुसार जो मालगुज़ारी १७९३ ईसवी में निर्दिष्ट हुई थी वही आज तक देनी पड़ती है। इससे गवर्नमेंट को कुछ आर्थिक क्षति अवश्य हुई, किन्तु, राजनैतिक दृष्टि से उसे बड़ा लाभ हुआ। इस विषय में होनेंल नाम के एक साहब ने लिखा है—

"While the natives of the soil gained by the Permanent Settlement, as it is called, the British have in the end lost much revenue * * * * * But if there has been a loss in money, there has been an incalculable gain politically The foundation of all Government is in the good will of the subjects, and the Permanent Settlement of Bengal has bound the people in loyal devotion to the British Government."

अर्थात् दवामी बन्दोबस्त से भारतवासियों को अवश्य लाभ हुआ है। किन्तु सरकार की मालगुज़ारी की आमदनी में कमी हो गई है। यह सच है कि आर्थिक दृष्टि से सरकार की हानि हुई है, पर राजनैतिक दृष्टि से इसे अवर्णनीय —— है। राज्य-शासन की नींव प्रजा की प्रसन्नता रहती है, और बङ्गाल के दवामी बन्दोबस्त

के कारण प्रजा सरकार की भक्त बन गई है। यह लाभ थोड़ा नहीं।

लार्ड कार्नवालिस के चले जाने के बाद फिर और किसी भी प्रदेश में दवामी बन्दोबस्त न किया गया। उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ में फिर भी कई शासनकर्त्ताओं के चित्त में सारे भारतवर्ष में दवामी बन्दोबस्त करने का विचार उठा था, किन्तु वे कृतकार्य्य न हो सके। १८०७ में सर टामस मनरो ने मदरास में जो रैयतवारी बन्दोबस्त किया था वह बङ्गाल के दवामी बन्दोबस्त के समान ही था। पश्चिमोत्तर प्रान्त और अवध में भी दवामी बन्दोबस्त करने का विचार उठा, पर हुआ कुछ नहीं। अतएव सिर्फ बङ्गाल के और सब कहीं की प्रजा को, बार बार बन्दोबस्त होने और लगान में इज़ाफ़ा किये जाने के कारण, बहुत कष्ट मिलता है। किसान अपने खेत की यथेष्ट उन्नति नहीं कर सकते। उत्तम और क़ीमती खाद से खेतों की उर्वरा-शक्ति को नहीं बढ़ा सकते। क्योंकि उन्हें हमेशा भय लगा रहता है कि यदि खेत की उन्नति बढ़ जायगी तो सरकारी मालगुज़ारी या लगान भी साथ ही बढ़ जायगा। किसके ही स्थानों में तो जब नये सिरे से बन्दोबस्त करने के लिए सर्वेयर आते हैं तब उनके कुछ समय पहले ही से किसान खेतों की ओर कम ध्यान देते हैं—वे जान बूझ कर खाद कम डालते हैं। वह वे इसलिए करते हैं जिसमें सरकार मालगुज़ारी न बढ़ावे। सेटन कार (Seton-Kar) नाम के एक अङ्गरेज़ ने लिखा है—

"As [illegible] a certain [illegible] and disproportionate [illegible]. Wealth, [illegible]

वैज्ञानिक यन्त्रों का भी लोग प्रयोग नहीं कर सकते। काम में उनकी दरिद्रता भी बाधक होती है। हां, ज़मींदार अवश्य कृषि की उन्नति करने से नहीं डरते। उन्हें लगान बढ़ जाने का डर नहीं। वैज्ञानिक यन्त्र भी वे काम में ला सकते हैं। मेन साहब ने "Village Communities" नामक पुस्तक में लि

"The proprietorship conferred o zemindars has also much to do wi introduction into Lower Bengal, nearly among Indian Provinces, of new an agricultural industries."

अर्थात् भारतीय प्रान्तों में लोअर बङ्गाल (Lower Bengal) ही एक ऐसा प्रान्त है जहां हाल व्यवसाय नये तरीक़े से और प्रचुर परिमाण में इसका बड़ा भारी कारण ज़मींदारों को मालिकी देना है।

इसी विषय पर सेटन कार ने लिखा है—

"Scarcity is met, relief works are foot and supplies are transported with facility, where there are large zemind in provinces where the settlement i made with the heads of village comm or with each ryot direct."

अर्थात् जहां बड़े बड़े ज़मींदार हैं वहां अन्न की वृद्धि होती है। प्रजा की सहायता के लिए दुर्भिक्ष कार्य खोले जा सकते हैं। एक स्थान से दूसरे सुभीते से चीज़ें भेजी जा सकती हैं। पर और प्रकार का सर्वेक्षण करने से [illegible]

वसूल किया जाता है। फल यह होता है कि बेचारे मान दिन पर दिन दरिद्र होते जाते हैं। डब्लू० आर० हंटर नाम के एक साहब ने एक दफ़े कहा था—"The condition of agricultural labourers in India is a disgrace to any country calling itself civilised". अर्थात् भारतीय किसानों की दशा सभ्य कहलाने वाले देश के लिए अत्यन्त ही अपमान-जनक है।

जिस समय वर्तमान गवर्नमेंट का शासन प्रारम्भावस्था में था उस समय अन्धाधुन्ध लगान बढ़ाया गया था। उसे वसूल करने में दया भी न दिखाई जाती थी। सन् १७७६ ईसवी के अकाल में घोर अकाल पड़ा। इस कारण बिना अन्न के सहस्र नर-नारी प्राण-त्याग करने लगे। तिस पर भी मालगुज़ारी वसूल करने में कुछ भी रियायत न की गई। उलटा सरकारी कर्मचारियों ने हर्ष प्रकट किया कि ऐसे घोर दुष्काल में भी मालगुज़ारी वसूल करने में उन्हें आशातीत सफलता हुई। किन्तु सौभाग्य की बात है कि दिन पर दिन सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट हो रहा है। गवर्नमेन्ट कृषकों पर अब समय समय पर दया दिखाया करती है। यदि दुष्काल पड़ता है तो सरकार प्रजारक्षक काम (रिलीफ़ वर्क्स) खोलती और तक़ावी भी बाँटती है। किन्तु अब भी किसानों की दशा अच्छी नहीं।

अब, यदि, आप अन्य देशों के लगान से भारतवर्ष के लगान की तुलना करें तो आपको विदित हो जायगा कि संसार के धनवान् देशों को भारतवर्ष के सदृश दरिद्र देश की अपेक्षा कितना कम लगान देना पड़ता है। योरप में जिस खेत से सौ रुपये की आमदनी होती है उसके लिए नीचे लिखे अनुसार लगान देना पड़ता है—

| | |
|---|---|
| इंगलैंड | ८।) |
| इटाली | ७) |
| जर्मनी | ३) |
| बेलजियम | २॥) |
| हालैंड | २॥) |
| भारतवर्ष | १२ से २०) तक |

इस से यह स्पष्ट प्रकट है कि दरिद्री होने पर भी भारत को और और देशों की अपेक्षा कहीं अधिक लगान देना पड़ता है। यदि इस लगान में कुछ कमी हो जाय तो कृषकों का बड़ा उपकार हो। क्योंकि अच्छी फ़सल न होने पर भी सरकारी लगान अवश्य ही ठीक समय पर देना पड़ता है। नहीं तो घर-द्वार, थोरिया-बँधना बिकने की नौबत आती है। परिणाम यह होता है कि बेचारे ग़रीब किसानों को गाँव के बनिये या महाजन की शरण जाकर मुँहमाँगे सूद पर रुपया क़र्ज़ लेना पड़ता है। तब कहीं वह लगान अदा कर सकता है।

केवल मालगुज़ारी और लगान से सम्बन्ध रखने वाली बुराइयों के कारण ही किसानों को ऋण-पङ्क में नहीं फँसना पड़ता। इसमें उनका भी कुछ दोष है। भारतीय किसान पढ़े लिखे नहीं। उनको नैतिक शिक्षा भी नहीं मिलती। इस कारण वे फ़िज़ूलख़र्च हो जाते हैं। ब्याह आदि में वे अपनी स्थिति के अनुसार ख़र्च नहीं करते। यदि उनको क़र्ज़ मिल जाता है तो वे समझते हैं कि यह रुपया उन्हें फिर कभी देना ही न पड़ेगा। इससे वे मनमाना क़र्ज़ ले लेते हैं और फिर अपनी मूर्खता का कुफल भोगते हैं।

## शिक्षा की आवश्यकता।

भारतवर्ष के किसानों की दशा उन्नत करने के लिए शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है। गोखले महाशय ने इसीसे गवर्नमेन्ट से प्रार्थना की थी कि भारतवर्ष में प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य तथा मुफ़्त कर दी जाय। सारे भारत ने इसका समर्थन किया। किन्तु शोक है कि यह प्रस्ताव स्वीकार न किया गया। यदि यह स्वीकृत हो जाता तो वह दिन दूर न था जब भारतवर्ष के भी कृषक पेट भर रोटी खाने लगते। क्योंकि परिश्रम करने में वे किसी से कम नहीं। इम्पीरियल गैज़ेटिर के तीसरे भाग में (Imperial Gazetteer, Part III) लिखा है कि यहाँ के कृषक खेती करना अच्छी तरह जानते हैं। वे यह भी जानते हैं कि कौन सी ज़मीन किस फ़सल के लिए उपयुक्त है; एक फ़सल बोने के बाद और कौनसी फ़सल उसी खेत में बोनी चाहिए। और देशों के किसानों के सदृश यहाँ के किसान उजड्ड भी नहीं। अतएव यदि पूर्वोक्त दोष दूर कर दिये जायँ तो इनकी दशा सुधरने में देर न लगे।

# देहाती बैंक।

सुरती की बात है, सरकार का ध्यान किसानों की ऋण-ग्रस्तता की ओर आकृष्ट हुआ है। उनके क़र्ज़ का बोझ हलका करने के लिए उसने देहाती बैंक ( Co-operative Credit Societies ) अर्थात् उधार देने वाली समितियाँ स्थापित करना आरम्भ कर दिया है।

कृषि-कार्य में पहले ख़र्च की आवश्यकता होती है। किन्तु बेचारे किसानों के पास पूँजी कहां जो वे पहले लगा लें और फिर उसके फल की प्रतीक्षा करें। इस कारण उन्हें गांव के बनिये, महाजन या ज़मींदार से क़र्ज़ लेना पड़ता है। लेकिन ये लोग सूद इतना लेते हैं कि बेचारे किसान दब जाते हैं। यदि संयोगवश वर्षा न हुई तो उनके बच की सीमा नहीं रहती। फ़सल नष्ट हो जाती है और फिर भी उन्हें महाजन की शरण जाना पड़ता है। उधर सरकारी लगान भी उनसे वसूल कर लिया जाता है। यह कर होता है कि किसान क़र्ज़ में डूबते चले जाते हैं। सरकार ने इनसे इनकी रक्षा के लिए देहाती बैंक खोले हैं। इन बैंकों ने थोड़े ही समय में आश्चर्य जनक उन्नति की है। इस समय हिन्दुस्थान में लगभग १२,००० देहाती बैंक स्थापित हैं। इनके मेम्बरों की संख्या ६ लाख के लगभग है। इनकी पूँजी चार करोड़ रुपये की है।

[illegible] से उधार लेने के कारण मेम्बरों को लगभग [illegible] वार्षिक बचत होती है। कोई कारण नहीं है कि [illegible] दिन पर दिन उन्नति न करे।

इस बचत के सिवा इन बैंकों से और भी [illegible] हैं। बहुत मनुष्य जो रुपया गाड़ कर रखते थे वह [illegible] लगाते हैं। इस कारण जो रुपया किसी के [illegible] आता वह कृषकों के काम आने लगा है। इस [illegible] कारण देहात में शिक्षा का प्रचार भी होने लगा है। [illegible] आदतों और फ़िज़ूल-ख़र्ची को भी छोड़ने लगे हैं। [illegible] भी जानने लगे हैं कि हिसाब-किताब किस [illegible] जाता है और "पास-बुक" कैसे पढ़ी जाती है। [illegible] यही मेम्बर हो सकते हैं जो सदाचारी होते हैं। [illegible] चलन का आदमी मेम्बर नहीं हो सकता। [illegible] मेम्बर एक दूसरे के क़र्ज़ चुकाने का ज़ामिन होते [illegible]

भारतवर्ष में इन बैंकों का कहां तक [illegible] हुई है, यह नीचे लिखे हिसाब से प्रकट होता है-

| | १९०९ | [illegible] |
|---|---|---|
| बैंकों की संख्या | ८४३ | |
| मेम्बरों की संख्या | १०,८४४ | ५,०३० |
| पूँजी | १३ लाख | |

१९१२ ईसवी में ३ करोड़ ३० लाख से [illegible] करोड़ १४ लाख पूँजी हो गई है। इससे सि[illegible] बैंकों की दिन पर दिन उन्नति हो रही है।

खों की दशा सुधर सकती है। भारतवर्ष में नहरों की यन्त आवश्यकता है। यहां के कृषकों को वर्षा पर ही अवलम्बन करना पड़ता है। यदि एक वर्ष वर्षा न हो तो ना न पैदा हो। यह आपत्ति नहरों से बहुत कुछ दूर हो कती है। पर सरकार का ध्यान रेलवे के विस्तार की ओर धिकतर है, नहरों की ओर उतना नहीं। प्राचीन काल से य देश के राजा प्रजा के लाभ के लिए नहरें, बांध और तालाब बनवाते रहे हैं। यही कारण है कि मिथिला में गह जगह तालाब है। कोस कोस लम्बे तालाब भी मिथिला दृष्टिगोचर होते हैं। दक्षिणी भारत में चार कोस लम्बे, डेढ़ कोस चौड़े तालाब पाये जाते हैं। मुसलमान बादशाहों के समय में कई नहरें बनीं। ब्रिटिश सरकार ने भी १८४० ईसवी से नहर खुदवाने का कार्य इस देश में आरम्भ किया है और अब तक इस काम में दत्तचित्त है। जब जब अकाल पड़ा है तब तब सरकार ने थोड़ी बहुत वृद्धि नहरों की अवश्य की है।

गत १० वर्षों में तो नहरों के लिए उसने खर्च की मात्रा भी बहुत कुछ बढ़ा दी है। इस कारण कृषि को बड़ा लाभ हुआ है और सरकार को भी खासी आमदनी हुई है। इस आमदनी का हिसाब नीचे लिखी तालिका से विदित होगा। यह तालिका १९१० ईसवी की है—

| प्रान्त | नहरों में लगी हुई पूंजी | सींचा गया रकबा | फी सदी मुनाफ़ा | कैफियत |
|---|---|---|---|---|
| पञ्जाब और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त | ११० लाख पौण्ड | ६० लाख एकड़ | ६ ४२ | एक पौंड १५ रुपये का समझिए |
| युक्तप्रान्त और अवध | ७६ ,, | २२ लाख ,, | ५ ८७ | |
| मदरास | ७२ ,, | ३७ ,, | ७ २ | |
| बङ्गाल और बिहार | ५८ ,, | ४१ ,, | १ १ | |
| बम्बई और सिन्ध | ४७ ,, | २२ ,, | ५ १५ | |
| समग्र ब्रिटिश भारत | ३६४ ,, | १६० ,, | ६ ३१ | |

इस समय रेल का विस्तार जिस गति से किया जाता है उस गति से नहरों का नहीं किया जाता। किन्तु यह बात प्रमाणित हो चुकी है कि रेल का जितना विस्तार भारत के लिए होना उचित था उतना हो चुका। बुद्धिमान् मनुष्यों का कथन है कि हिन्दुस्तान जैसे निर्धन देश के लिए ४० हज़ार मील रेलवे लाइन काफ़ी है। एक सरकारी रिपोर्ट (Moral and Material Progress and Condition of India) में लिखा है—

"Railways are now almost complete, but that with the exception of [illegible] the general position may be expected to improve."

अर्थात् भारत में अब रेल की सड़कों का काम समाप्त हो है। अतएव रेलों के लिए अब रुपया न खर्च करने से वहां की आर्थिक स्थिति के अच्छी हो जाने की आशा है।

यह सन् की बात है जब इस देश में केवल ३० हज़ार मील रेल थी। इस समय लगभग ३०,००० मील रेलवे बन चुकी है। तथापि रेल का काम बन्द नहीं। १९०१-२ के आबपाशी कमीशन (Irrigation Commission) ने यह राय दी थी कि भारत में सिंचाई का काम बढ़ाना चाहिए। अब तक जितना

[illegible] वगैरह भी ठीक उसी [illegible] के हैं जैसे कि हमारे थे। उनके लिए मानो समुद्र ने पलटा खाया है। अमेरिका आदि देशों में खेती के लिए जो [illegible] लाये जाते हैं। किन्तु यहाँ वही बाबा आदम [illegible] यही सब कारण हैं जिनसे हमारे किसानों की [illegible] रही है। ऊपर लिखे हुए उपायों के [illegible] दशा बहुत कुछ सुधर सकती है।

ईश्वरदास [illegible]

---

## आचार्य दिङ्नाग।

महामहोपाध्याय डाक्टर [illegible] विद्याभूषण, एम० [illegible] एच० डी० का लिखा। बौद्ध न्याय—मानव [illegible] यद्यपि [illegible] प्रकाशित हुआ है। [illegible] बौद्ध विद्वानों और उनके न्याय-ग्रन्थों [illegible] है। आचार्य दिङ्नाग का भी संक्षिप्त [illegible] एक विशेष मनोरञ्जक है और महत्त्व [illegible] लिखा जाना।

"श्री गेरमल-शारदा-सदन"

सरस्वती

स्व पण्डित शीतलप्रसाद दुबे ।
इण्डियन प्रेस, प्रयाग ।

र वह स्वर्ग से मृत्यु लोक में आई और दिङ्नाग सामने उपस्थित हुई। उसकी कृपा से दिङ्नाग रे शास्त्रों के असाधारण ज्ञाता हो गये। एक बार नालन्दा के विश्वविद्यालय के अधिकारियों के रा बुलाये गये। यहाँ उन अधिकारियों की प्रेरणा उन्होंने सुदुर्जय नामक ब्राह्मण दार्शनिक को ास्त करके बौद्ध-धर्म की विजय-पताका उड़ाई। ोंने और भी अनेक ब्राह्मण तार्किकों को हरा कर नी कीर्तिकौमुदी से लोक-समाज को आप्लावित या। इस उपलक्ष्य में उन्हें तर्क-पुङ्गव की पदवी ली। उड़ीसा और महाराष्ट्र-देशों में परिभ्रमण कर दिङ्नाग ने अनेक तीर्थङ्करों के मत का खण्डन या। महाराष्ट्र-देश में जिस विहार में वे रहते थे उका नाम था—आचार्य्य-विहार। उड़ीसा प्रान्त में हों ने भद्रपालित नाम के राजमन्त्री को बौद्ध-धर्म दीक्षित किया। विद्वत्ता और बुद्धिमत्ता में दिङ्नाग र्व-प्रधान थे। वे शील-पारमिता, शान्ति-पारमिता, र्य्य-पारमिता, दान-पारमिता आदि बारह पारमिों, अर्थात् बौद्ध-शास्त्रोक्त उत्कृष्ट बारह धर्मों, ा अनुष्ठान करते थे। नालन्दा के विश्वविद्यालय निवास करते समय दिङ्नाग ने सारे दार्शनिक ज्ञानों को परास्त करके एक अपूर्व शिरोभूषण ास किया। उसका नाम था पण्डितत्वोष्णीष। आन्ध्र-श के एक निर्जन विहार में उनकी मृत्यु हुई।

भारत के कितने ही स्थानों में दिङ्नाग को मण करना पड़ा था। सभी कहीं वे तर्क-युद्ध में वृत्त हुए थे। जिस निर्दयता से वे अपने प्रतिपक्षी र आक्रमण करते थे प्रतिपक्षी भी उसी निर्दयता से न पर आक्रमण करता था। उनका सारा जीवन सी घात-प्रतिघात—इसी लड़ाई झगड़े—में बीता। इस महा युद्ध में वे प्रवृत्त हुए थे उसका अवसान नके मरने पर भी न हुआ। जो ग्रन्थ वे लिख गये हैं, उस-काल में अनेक पण्डितों को उन सभी ग्रन्थों ; मत के खण्डन के लिए कमर कसनी पड़ी। महा-वि कालिदास को मेघदूत-काव्य में दिङ्नाग का स्थूलहस्त" परिहार करने के लिए मेघ को सावधान करना पड़ा। ब्राह्मण वंशीय नैयायिक उद्योतकर ने अपने न्याय-वार्तिक ग्रन्थ के आरम्भ में दिङ्नाग को "कुतार्किक" की पदवी से विभूषित किया। सर्व्वदर्शनस्वतन्त्र वाचस्पति मिश्र ने दिङ्नाग को "भ्रान्त भदन्त" कह कर उनकी भ्रान्ति के निवारण की चेष्टा की। मल्लिनाथ ने दिङ्नाग को "अद्रिकल्प" विशेषण से विभूषित किया। कुमारिलभट्ट और पार्थसारथि मिश्र ने दिङ्नाग पर अबाध बाण-वर्षा की। सुरेश्वराचार्य्य आदि वेदान्त-वेत्ताओं और प्रभाचन्द्र विद्यानन्द आदि जैन दार्शनिकों ने दिङ्नाग का मत लुप्त करने के लिए बहुत प्रयास किया। यहाँ तक कि पीछे पीछे किसी किसी बौद्ध नैयायिक को भी दिङ्नाग के ग्रन्थ के किसी किसी मत के खण्डन का प्रयत्न करना पड़ा। दिङ्नाग सचमुच ही वीर पुरुष थे। उनमें असामान्य मनोबल और दैहिक तेज था। यदि ऐसा न होता तो अनेक दिशाओं से किये गये इतने आघात सहन कर के वे इतने समय तक कभी जीते न रहते। दिङ्नाग के ग्रन्थ भारत से लुप्त हो चुके हैं। नेपाल में भी वे रक्षित नहीं। किन्तु पृथ्वी से एकदम ही लुप्त-प्राय नहीं हुए। तिब्बत में दिङ्नाग के ग्रन्थ यत्न पूर्वक सुरक्षित हैं। तिब्बतीय ग्रन्थों के आधार पर हम दिङ्नाग-प्रणीत न्याय शास्त्र का कुछ विवरण यहाँ देते हैं।

## दिङ्नाग का आविर्भाव-काल।

अनुमान यह है कि ५०० ईसवी में दिङ्नाग जीवित थे। उनके गुरु आचार्य्य वसुबन्धु ४८० ईसवी में विद्यमान थे। दिङ्नाग के दो ग्रन्थों का अनुवाद ५५७—५६९ ईसवी में चीनी भाषा में हुआ। जिस समय आन्ध्र-देश में दिङ्नाग का प्रादुर्भाव हुआ, जान पड़ता है उसी समय दक्षिण में पल्लववंशीय नरेशों का आधिपत्य था। पल्लववंशीय नरेशों में से अधिकांश नरेश बौद्ध धर्म के अनुगामी थे।

## दिङ्नाग का प्रमाण-समुच्चय।

दिङ्नाग का सर्व-प्रधान ग्रन्थ प्रमाण समुच्चय है। किसी समय आन्ध्र-देश की वेङ्गी नगरी के

पास एक निर्जन पर्व्वत के ऊपर वे रहते थे। उसी समय उन्होंने इस ग्रन्थ की रचना की थी। प्रमाण के सम्बन्ध में दिङ्नाग ने समय समय पर जिन श्लोकों की रचना की थी उन्हीं सब श्लोकों का संग्रह एक जगह कर के उन्होंने उसका नाम प्रमाण-समुच्चय रक्खा।

## ईश्वरकृष्ण के साथ दिङ्नाग का विरोध।

सुनते हैं, जिस समय दिङ्नाग ने प्रमाणसमुच्चय का पहला श्लोक बनाया उस समय भीषण भूकम्प हुआ। आन्ध्रदेश प्रकाश-पुञ्ज से चारों तरफ़ समुज्ज्वल हो उठा और सब कहीं कोलाहल मच गया। इसके अनन्तर एक दिन ईश्वरकृष्ण नामक एक ब्राह्मण दार्शनिक दिङ्नाग के शील-विहार में आया। उस समय दिङ्नाग विहार में न थे। दिङ्नाग-लिखित प्रमाण-समुच्चय का पहला श्लोक जो ईश्वर-कृष्ण की दृष्टि में पड़ा तो वे उसे फाड़ कर चलते बने। दिङ्नाग ने आश्रम में लौट कर देखा तो श्लोक नदारद। अतएव उन्होंने उसे फिर लिखा। ईश्वरकृष्ण ने दुबारा आकर उस श्लोक को नष्ट कर दिया। तीसरी दफ़े, दिङ्नाग ने फिर भी उसे लिपिबद्ध किया। इस दफ़े, उपद्रवकारी को सावधान करने के लिए, श्लोक के नीचे, उन्होंने इस आशय का एक लेख लिख दिया—"हम नम्रता-पूर्वक निवेदन करते हैं, कोई इस श्लोक को खेल के बहाने भी नष्ट न करे। अर्थगाम्भीर्य में यह श्लोक अतुलनीय है। इस श्लोक के भाव-सम्बन्ध में यदि कोई हमारे साथ विवाद करना चाहे तो वह हमारे सामने उपस्थित हो। हमारी अनुपस्थिति में उसे कापुरुषता न करनी चाहिए।"

दिङ्नाग बौद्ध भिक्षु थे। भिक्षानुसार भिक्षा के लिए उन्हें रोज़ बाहर नगर में जाना पड़ता था। ऐसे ही समय में ईश्वरकृष्ण फिर भी उनके विहार में आये। उन्होंने उस श्लोक के नीचे दिङ्नाग की प्रार्थना पढ़ी। पढ़ने से उनके हृदय में साधु भाव का सञ्चार हो आया। वे सुदूरस्थ वहीं खड़े रहे। विहार को लौटने पर दिङ्नाग उनके साथ युद्ध में प्रवृत्त हो गये। शर्त यह हुई कि जो पराजित हो वह विजेता का धर्म ग्रहण करे। ईश्वर परास्त हो गये, पर उन्होंने दिङ्नाग का धर्म स्वीकार किया। दिङ्नाग ने जब उन्हें याद दिलाई तब मन्त्रोच्चारणपूर्वक ई दिङ्नाग के विहार में आग लगा दी। व भस्म हो गया। दिङ्नाग के पास पोथी प था सब जल गया। दिङ्नाग बहुत चिं उन्होंने सोचा—"हम एक मनुष्य को स ला सके। फिर भला और लोगों के लिए मु का उपाय हम क्या बता सकेंगे?" उन्होंने बहुत धिक्कारा और प्रमाण-समुच्चय ग्रन्थ लि विचार छोड़ दिया। इसी समय बोधिसत्व उनके सामने आकर उपस्थित हुए और बोले

"वत्स, शान्त हो। जिस शास्त्र का तुमने आरम्भ किया है उसे कोई नष्ट न कर स हम तुम्हारे शिक्षागुरु हैं। संसार के सारे त भी तुम्हारे मत का निराकरण न कर सकेंगे। जिस शास्त्र की रचना कर रहे हो वह सकल का नेत्र है। वह अनेक मनुष्यों को मुक्ति का दिखावेगा।"

यह कह कर मञ्जुश्री अन्तर्धान हो उस अवसर पर दिङ्मण्डल बड़े ही समु प्रभापुञ्ज से प्रकाशित हो गया। आन्ध्र-देश राजा दिङ्नाग के पास आया और उनसे अनु किया कि आप हेतु-विद्या-शास्त्र की अवश्य र कर के उसे समाप्त कीजिए। तब दिङ्नाग ने प्रम समुच्चय नामक ग्रन्थ लिखना आरम्भ कर दिया।

## प्रमाण-समुच्चय का प्रतिपाद्य विषय।

प्रमाण-समुच्चय का छन्द अनुष्टुप् है। इसका नाम का एक भारतीय बौद्ध पण्डित था। उसे दे ए-स्व नामक तिब्बतीय ग्रन्थ-माला के अ प्रमाण-समुच्चय का अनुवाद तिब्बती भाषा में किया। तिब्बत के दा-पा-ती ने नामक तिब्बत

वाद-कार्य्य समाप्त हुआ। इस ग्रन्थ का तिब्बतीय
ा में नाम है—"छे-म-कुन्त इ"। ग्रन्थ के आरम्भ
दिङ्नाग ने लिखा है—

" जो जगत् का हितसाधक और प्रमाण का
तारूप है उसी सर्वशरण्य महागुरु सुगत के
ों में सिर रख कर, इधर उधर बिखरे हुए,
ाण-विषयक वचन-समूहों का एकत्र सङ्ग्रह करके
स ग्रन्थ की रचना करता हूँ।"

ग्रन्थान्त में दिङ्नाग ने लिखा है :—

"सर्वदेशीय तार्किकों का पराभव करनेवाला
र हाथी के सदृश बलसम्पन्न दिङ्नाग ने, अपने
रचे हुए श्लोकों का सङ्ग्रह करके इस ग्रन्थ
प्रकाशन किया"।

प्रमाण-समुच्चय ६ परिच्छेदों में विभक्त है—
) प्रत्यक्ष (२) स्वार्थानुमान (३) परार्थानुमान
) त्रिरूपहेतु (५) प्रत्यक्ष उपमान और शब्द-
ण्डन (६) जात्युत्तर-विचार।

इसके आगे विद्याभूषण महाशय ने प्रमाण-
मुच्चय में लिखी गई बातों का विस्तार के साथ
वेचन किया है। उस विवेचन को हम छोड़े देते
, क्योंकि सरस्वती के पाठकों में से बहुत कम
यह रुचिकर होगा।

लेखारम्भ में डाक्टर विद्याभूषण ने कालिदास
ी उस उक्ति का उल्लेख किया है जिसमें दिङ्नाग
: "स्थूल-हस्त" की बात है। यह उक्ति मेघदूत
चौदहवें श्लोक के चौथे चरण में है। यथा—

" दिङ्नागानां पथि परिहरन् स्थूलहस्तावलेपान् "

जिस पर्वत पर यक्ष ने उससे रवाना होने
ी प्रार्थना मेघ से करके यह कहता है कि जब तू
स पर्वत के ऊपर से उड़ता हुआ आगे बढ़ेगा
ब सिद्धों की स्त्रियों के मन में यह भ्रम उत्पन्न
ोगा कि कहीं पर्वत के किसी टुकड़े को हवा तो
हीं उड़ाये लिये जा रही है। इसी के आगे यक्ष ने
हा है कि जब तू पहाड़ सा काला काला आकाश
उड़ता दिखाई देगा तब तुझे देख कर दिग्गजों
ा गर्व चूर हो जायगा। वे अपने को बहुत विशाल-
काय समझते हैं। परन्तु जब वे तुझे अपने से भी
बड़ा देखेंगे तब उनको अपने भ्रम का ज्ञान हो
जायगा। इससे सिद्ध है कि कालिदास की उक्ति
का प्रकृत सम्बन्ध दिग्गजों से ही है। दिङ्नाग—
नाम आ जाने से श्लेष-शक्ति से यदि उन्होंने आचा-
र्य्य दिङ्नाग पर कटाक्ष किया हो तो यह भी असम्भव नहीं। आचार्य दिङ्नाग अवश्य ही बड़े उद्धत और अतुल-अवलेप पूर्ण थे। यदि किसी प्रकार यह बात सप्रमाण सिद्ध हो जाय कि मेघदूत का पूर्वोक्त पद अवश्य ही श्लिष्ट पद है तो कालिदास के समय-सम्बन्ध में भी यह निश्चय हो जाय कि वे ५०० ईसवी के ही आस पास विद्यमान थे, ईसा के ५६ वर्ष पहले विक्रमादित्य की सभा में न थे।

---

## कृपक-कथा।

( २ )

१—जगा ब्याह के पीछे जब मैं पाकर नया प्रभात,
सुनी रात में दो पथिकों के लुट जाने की बात।
कहां ? नदी पर, जहां लेंदुआ मारा था उस रोज़,
चलो, पुलिस की चिन्ता छूटी, करनी पड़ी न खोज!
२—"नई वधू के लिए दीन जब पा न सका आहार—
तब क्या करता, लूट-मार का करना पड़ा विचार।
पर कुछ चिन्ता नहीं अभी सब कर ले यदि स्वीकार",
प्राज्ञ पुलिस का यही तर्क था, कौन करे प्रतिकार!
३—कहा पिता ने—"यह लड़का है, यह कैसा अन्धेर"?
किन्तु वहां इस के उत्तर में लगती थी क्या देर—
"ऐसा लड़का है कि अकेले की दो दो पर मार,
लड़े लेंदुओं से जो उसको है यह कितनी बात?"
४—"अच्छा, यही सही, तो उसका करदो तुम सामान,
डर क्या है सच और झूठ का साक्षी है भगवान।"
यह सुन कर भी ज़मादार ने किया न कुछ भी रोष,
बोला, यह कि 'मान लो, कर्त्तव्य छूट गया निर्दोष—॥
५—पर कितनी बदनामी होगी जब होगा चालान,
जान बूझ कर भी क्यों ऐसे बनते हो अनजान?
सोचो, कौन देखता जी का पकड़ सकेगा हाथ,
मुठ भेड़ों में भी उनका कौन न देता साथ?

६—आने हैं मौके पर अब वे करने तहक़ीक़ात,
यहां बुलाते ही कलुआ को, खुल जावेगी बात।
अब तक कोई नहीं जानता, आया हूँ मैं आप,
मान रहे तो जान—सोच लो, तुम हो उसके बाप"।

७—"तो क्या करूँ?" पिता ने पूछा उग्र भाव को त्याग,
तब शुभ-चिन्तक जमादार ने दिखलाया अनुराग।
सार यही था— एक गिनी से चल सकता है काम,
किन्तु गिनी बँगरी होनी है, सुना आज ही नाम।

८—बहुत नहीं, बस पन्द्रह रुपया रख सकते हैं लाज,
पर क्या पन्द्रह पैसे भी हैं मेरे घर पर आज।
है कमबेश क्षमा तो मेरी लड़का अब की बार,
दिलवादो इस बार ही मुझको तुम पन्द्रह कलदार।

९—आया रुपया लाल लिफ़ाफ़े में कर के अति उपकार,
तब तक मैं इस चिन्ता से हम को लिया उबार।
मुझे गौण देना लड़का, पर देख लिया का शोक—
कर न सका कुछ, सहम गया मैं, था मेरा ही दोष।

१०—आई उसी दिवस की काली अमावस के बाद,
हुक्म हुआ—"इस का लेना में तुम न दखना स्वाद।
तुरी आज के लिखने हैं सब पन्द्रह के पर्चीस,
तुम्हारी ज़ेरुमा करो तो फिर देने होंगे बीस"।

११—[illegible]

१२—कहा पिता ने—"क्यों कहते हैं ऐसी बात हुज़ूर,
प्रभु क्या अब भी सदय न होंगे, है मुझ को मंजूर।
मैं भी था, मन ही मन मैंने लिया राम का नाम,
और कहा—मंजूर न हो तो देखो अपना काम!

१३—हुक्म हुआ फिर—"मगर क़बूलत होगी लिख देना,
इन्दुलतत्रय नाम का टुकड़ा लिखा गया सादा।
फिर भी वह "बेकार क़बूलत" रही उन्हीं के पास,
उनने में उतने ही मिल कर पूरे हुए पचास!

१४—"अविश्वास क्यों, बड़े लोग क्या होंगे बेईमान"
मैंने कहा कि—"ये क्यों, हम हैं, साक्षी है भगवान
पर यह मेरी 'गुस्ताख़ी' थी, मिली डांट भरपूर,
कुशल यही थी कि मैं पिता से बैठा था कुछ दूर।

१५—और सुनाऊँ? अभी बहुत कुछ कहना है बाक़ी,
एक ओर से कभी किसी का होता नहीं अनिष्ट।
क्या बोलें, क्या रो कर जोलें, पाकर यह अवसर
घर में प्लेगग्राहकों के घर हैं मिट्टी के पात्र!

१६—[illegible]

१७—[illegible]

१८—[illegible]

१९—[illegible]

२०—[illegible]

२१—[illegible]

२२—[illegible]

२३—[illegible]

र बिक चुके थे पहले ही गाड़ी थे दो बैल,
ं था, वे थे और नित्य थी हार-खेत की गैल ।
घन करोंदी के मण्डप का यहीं रहा विश्राम,
खेल-कूद के साथी छूटे, पड़ा राम से काम !
र्य्य निरन्तर बरसाता था सिर पर तीखे तीर,
घायल-सा हो लगा चाहने मैं पल पल में नीर ।
सूरत बदल गई दो दिन में जर्जर हुआ शरीर,
र उस जीवन-समर-भूमि में बना रहा मैं धीर !
हुए प्रसन्न पिता भी मुझ पर रोष-भाव को छोड़,
करने लगे परिश्रम मिल कर हम दोनों जी तोड़ ।
जोत जात कर बीज-योग्य जब खेत किये तैयार,
तब वर्षा के लिए इन्द्र की होने लगी पुकार ॥
पानी के बदले ऊपर से बरस रही थी आग,
आँधी बन कर खेल रही थी हवा धूल की फाग ।
शान्त रही न महाभारी भी पाकर योग, उमङ्ग,
लगी धधकने मृतक-होलिका, हुआ रङ्ग में भङ्ग ।
-भाग बचे थे दौड़-धूप से अब है कौन उपाय ?
चारों ओर आग की ज्वाला फैल रही है हाय ।
अर्द्ध रात्रि थी, सोता था मैं, खुली अचानक आँख,
अन्धेरे में सुना कि जननी रही कष्ट से काँख ॥
-माँ कह कर मैं उठा और झट पहुँचा उस के पास,
मुझे देख कर उस ने केवल लिया एक नि:श्वास ।
काली छाया छाल चुका था मुँह के ऊपर काल,
पुत्र देख सकता है कैसे जननी का यह हाल ?
-पर बश क्या था, रोने का भी समय न था इस बार,
करने लगे शीघ्र ही हम सब किसी भाँति उपचार ।
हुए न हुआ, आते ही आते उषा का आलोक —
अन्धकार छा गया गेह में, दीख पड़ा बस शोक !
-मैं अचेत-सा था, लोगों ने करवाया संस्कार ।
आते ही आते श्मशान से पिता हुए बीमार ।
निर्दय दैव ! सँभल जाने दे; न कर घात पर घात,
एक साथ कह भी न सकूँगा मैं तेरी यह बात ॥

( अप्रकाशित )

मैथिलीशरण गुप्त ।

---

# सुयोग्य पिता-पुत्र ।

सरस्वती के पाठकों को इस संख्या में जो सचित्र लेख भेट किया जाता है वह केवल रोचक ही नहीं किन्तु शिक्षाप्रद और अनुकरणीय भी है । इसके दोनों नायक पिता-पुत्र हैं और दोनों ही विद्यमान हैं ।

पिता का नाम माननीय सर शीतलप्रसाद दुबे है । आप का जन्म सन् १८६७ ईसवी के आश्विन मास की तृतीया के दिन, ज़िला फैज़ाबाद के बँती नामक ग्राम में, हुआ । आप चौदह ही वर्ष की अल्पावस्था में अपनी माता के साथ डच गायना की राजधानी सुरिनाम में पहुँचे । माता-पुत्र दोनों जगन्नाथजी की यात्रा को जारहे थे । किन्तु मार्ग ही से ये माता के साथ ही इस उपनिवेश को भेज दिये गये । यहाँ बालक शीतलप्रसाद विद्याभ्यास कर के डच बोली के ख़ासे पण्डित होगये । सन् १८८८ ईसवी में इन को इमीग्रेसन-दफ़्तर में दुभाषिये की नौकरी मिली । इस कार्य्य में इन्होंने अपनी कार्य्य-तत्परता तथा कर्त्तव्य-परायणता से अपने अफ़सरों को इतना प्रसन्न किया कि ये कुछ ही काल में उच्च पद पर पहुँच गये । आपने अपने अफ़सरों को ही प्रसन्न नहीं किया, किन्तु उन समस्त हिन्दुस्तानियों को भी कि जिन से आपका रोज़ काम पड़ता था और अब भी पड़ता है ।

आज कल पण्डित शीतलप्रसाद को हिन्दुस्तानी लोग, जिनकी संख्या डच-गायना में ४० हज़ार से भी अधिक है, अपना पिता समझते हैं ।

योरप के निवासी इन्हें महाराजा कहते हैं । यदि किसी और हिन्दुस्तानी को यह पद और यह सम्मान प्राप्त होता तो कभी शायद ही यह मामूली आदमी से बात-चीत करता ।

दुबेजी को हालैंड की महारानी विलहैल्मीना से "आर्डर आफ़ दी आरेंया नासाउ" "Order Van Orange-Nassau" की पदवी मिली है। इस पदवी को डच लोग (हालैंड के निवासी) "Knighthood" से भी अधिक मानते हैं—और इसे पाने के लिए सदा तरसते रहते हैं। किन्तु एक आध को ही यह सम्मान प्राप्त है।

दुबेजी का रहन-सहन बहुत ही प्रशंसनीय है। यद्यपि अफ़सरी काम करने के कारण आप को आधुनिक अँगरेज़ी पोशाक पहननी पड़ती है, किन्तु आप का रहन-सहन देख कर सब को दङ्ग होना पड़ता है। चाहे कैसे ही काम में आप क्यों न लगे हों, चाहे कैसी ही पोशाक में हों, अदना से अदना आदमी भी आपको अपनी कहानी सुना सकता है और अपने दुःख निवारण के लिए प्रार्थना कर सकता है। इस विषय में हम अपनी आँखोंदेखी एक घटना सुनाते हैं। एक बार हम दुबेजी के विशाल सुसज्जित बँगले पर ठहरे। यहाँ हमने सभी के लिए दिन-रात द्वार खुला पाया। हमारे बहुत आग्रह करने पर दुबेजी हमें प्रसन्न करने के लिए एक दफ़े [illegible] ले गये। पर हम निश्चय न पाये थे कि एक फटे कपड़े पहने हुए हिन्दुस्तानी आप से कुछ कहने आया। दुबेजी वहीं खड़े होकर और उसके कन्धे पर हाथ रख कर इस ढंग से बातें [illegible] करने लगे मानों वह उनका अत्यन्त [illegible] है। उस [illegible] रहने और कपड़े [illegible] [illegible] सुनने [illegible] [illegible] [illegible]

तानियों को खलासी और आग झोंकने वालों के कोई ऊँचा पद शायद ही कभी मिलता हो। किन्तु यहाँ पर अपनी ब्रिटिश सरकार के कामों की चर्चा नहीं करना। हमें सिर्फ़ यह बताना है कि इस डच-सरकार ने दुबेजी के सम्बन्ध में अपनी ग्राहकता का परिचय दिया है उसी ने उनके पुत्र श्रीयुत लक्ष्मीप्रसाद जी को नाविक-विद्या सिखा कर एक बड़े स्टीमर की कप्तानी भी दी है। इनका हेड क्वार्टर आज कल सिंहापुर (Singapore) में है। इनका चित्र भी इसी संख्या में पाठक देखेंगे।

कप्तान लक्ष्मीप्रसाद दुबे का जन्म सुरीनाम (डच गायना) में २० अप्रेल को, सन १८८९ ईसवी में हुआ। इनके पिता ने इन्हें पहले हिन्दी, उर्दू तथा कुछ अपने घर ही पर पढ़ाई। जब भाई कप्तान लक्ष्मीप्रसाद कुछ बड़े हुए तब इनको सुरीनाम के गवर्नमेन्ट स्कूल तथा कालेज में डच, फ्रेञ्च, जर्मन और अँगरेज़ी में शिक्षा मिली। जब यहाँ की शिक्षा समाप्त हो चुकी तब इनके पिता ने, १९०२ ईसवी में, इञ्जिनीयरी या कलविद्या का काम सीखने को भेज दिया। वहाँ जाकर इन्होंने प्रथम ही शिक्षा पास की थी कि इनके पिता के परम मित्र और इनके संरक्षक (Guardian) एक डच महाशय ने इनको जहाज़ी विद्या सीखने का परामर्श दिया तथा उनकी सिफ़ारिश से वहाँ के सब से बड़े नाविक-विद्या-सम्बन्धी कालेज (Royal Navy College) में भरती भी करा दिया। इस कालेज में इन्होंने बड़ी योग्यता दिखाई और इक्कीस ही साल की अवस्था में आप एक जहाज़ पर तीसरे अफ़सर के पद पर नियुक्त किये गये। इस पद पर आप केवल दस महीने रहे। इतने ही में इनकी योग्यता देख कर डच-सरकार ने इनको उसी जहाज़ का द्वितीय अफ़सर (Second Officer) या लेफ्टिनेन्ट बना दिया। इसके बाद आप अक्तूबर १९१३ की १० तारीख़ को कप्तान के पद पर नियुक्त हुए और अब तक उसी पद पर हैं। आज कल आप कप्तान लक्ष्मीप्रसाद दुबे (आर० एन०) कहाते हैं। इन दिनों आप प्रशान्त-महासागर में सिंहापुर से लेकर जावा, श्याम, बैंकाक, चीन, जापान होकर अमेरिका तक की यात्रा करते हैं। घर आपने सिंहापुर ही में बना रक्खा है।

कप्तान लक्ष्मीप्रसाद अविवाहित हैं। गर्व आप में नाम मात्र को भी नहीं। एक गुण इनमें यह विशेष है कि बचपन से लेकर आज तक किसी ने आपको क्रोध करते नहीं देखा। आप हमेशा हँस-मुख और शान्त रहते हैं। जहाज़ी कप्तान में ये गुण बड़े ही दुर्लभ हैं।

पाठक! आप लोगों ने सुना कि लक्ष्मीप्रसादजी के पिता किस प्रकार अत्यन्त अकिञ्चन दशा से अपने ही बाहुबल से न केवल धनी ही हुए, किन्तु सज्जन और प्रसिद्ध भी हुए। डच-गायना में ऐसा कौन मनुष्य होगा जो शीतलप्रसाद के नाम तथा काम से अनभिज्ञ हो। ऐसे ही पिता के सदुद्योग से उनके पुत्र को आज डच सरकार ने इस योग्य समझ रक्खा है कि समुद्र में सैकड़ों मनुष्यों की जानें इनके हाथ में छोड़ दी हैं। हमको इन दोनों पिता-पुत्रों की संक्षिप्त-जीवनी से लाभ उठाना चाहिए और जानना चाहिए कि ग़रीब से ग़रीब मनुष्य विदेश में भी, जहाँ की भाषा तक वह नहीं जानता, अपने परिश्रम तथा आचरण से सर्वोच्च पद प्राप्त कर सकता है।

रामनारायण शर्म्मा,
डच-गायना, दक्षिणी अमेरिका एल० एम० एस०
ता० १८ अप्रेल १९१५

---

## शिक्षा-विभाग के नवीन नियमों पर विचार।

इस सम्बन्ध के नवीन नियम १० अप्रेल १९१० के गवर्नमेन्ट गज़ट में प्रकाशित हुए हैं और जिनका उल्लेख हम माह की सरस्वती में "शिक्षा-सम्बन्धी कुछ और विचार" शीर्षक लेख में किया था वे बड़े महत्त्व के हैं।

इनमें से कई तो पाठशालाओं की वर्तमान दशा को बिलकुल ही बदल देंगे।

२—नवीन नियमों के अनुसार डिस्ट्रिक्ट के इन्स्पेक्टरों और कलेक्टरों के अधिकार बहुत बढ़ जायँगे। यदि डेप्यूटी इन्स्पेक्टरों को नियुक्त रखने होंगे तो वे डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन साहब को लिखेंगे, चेयरमैन साहब बिना कलेक्टर साहब की आज्ञा और बिना इन्स्पेक्टर साहब की सलाह के इस विषय में कुछ न कर सकेंगे। इसी प्रकार यदि कोई विदुषी स्त्री बिना वेतन के कन्या-पाठशालाओं के निरीक्षण का भार कृपापूर्वक लेना चाहे तो कलेक्टर साहब और इन्स्पेक्टर साहब की आज्ञा के बिना डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ऐसी स्त्री के अनुभव और विद्वत्ता से लाभ न उठा सकेगा। एक तो ऐसी स्त्रियों का मिलना ही कठिन है। और यदि कहीं मिलीं भी तो उनको यह कब पसन्द होगा कि सर्व-साधारण सेवा करने के लिए भी उनका नाम बड़े बड़े अधिकारियों के दफ़्तर में मारा मारा फिरे। इसके अतिरिक्त यह समझ लिया गया है कि डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को कुछ स्वाधीनता दी जाय। क्या यह काफ़ी नहीं कि इन बोर्डों के सभापति स्वयं कलेक्टर हैं? एक ओर तो देश में आन्दोलन मच रहा है कि बोर्डों के सभापतित्व का काम भी भारतवासियों को ही दिया जाय, दूसरी ओर उनके कार्य पर इतना कठोरशासन कि वह कलेक्टर साहब की आँख-पड़ताल की मुहताज होवे। चेयरमैन, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, भी तो सहारी "सिविल सर्विस" का सभासद है। फिर यह मिसिलिएन दफ़्तर और क्यों!

३—इन्स्पेक्टरों की संख्या, कभी थोड़े ही थी दूर, बढ़ाई गई थी। कहा गया था कि उनका काम कम करना चाहिए। इस लिए प्रति डिवीजन में एक इन्स्पेक्टर दिया गया था। तिस पर भी उनका काम हलका करने के लिए असिस्टेंट स्कूलों का एक इन्स्पेक्टर हुआ। संस्कृत, फ़ारसी, शिक्षा और ट्रेनिङ्ग की जाँच के लिए भी अलग अलग इन्स्पेक्टर नियत किये गये। मालूम होता है कि उनके काम की न्यूनता अब इस प्रकार पूरी जायगी। कहा यह है कि डेप्यूटी इन्स्पेक्टरों को अधिक अधिकार दिये जायँगे, परन्तु इसके साथ उनका काम बढ़ता जाता है और साथ उनकी पराधीनता भी बढ़ती जाती है। किसकी किसकी सेवा करें। सेकेटरी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड बहुधा डेप्यूटी कलेक्टर हैं, चेयरमैन डिस्ट्रिक्ट कलेक्टर, इन्स्पेक्टर, असिस्टेंट स्कूलों के इन्स्पेक्टर, इन्स्पेक्टेस, इन्स्पेक्टेस, डाइरेक्टर इत्यादि किस की वे सुनें। इन सब अफ़सरों के हेड को भी कम न समझिए: ये महाशय भी रोब जमाने में कसर नहीं करते। Decentralization अर्थात् पृथक् पृथक् अफ़सरों को कार्य देना Centralization अर्थात् सब अधिकार एक अफ़सर को देने से अच्छा है। सब डेप्यूटी इन्स्पेक्टरों से अधिकार-सम्बन्धी कार्य लेना बन्द कर तहसीलों अथवा सब-डिवीज़नों के अफ़सरों पर भार देना चाहिए। डेप्यूटी इन्स्पेक्टरों को स्वतन्त्रता देनी चाहिए, जिससे वे शिक्षा-नीति (Policy) पर विचार कर सकें, न मुदर्रिसों के तबादिले के काग़ज़ात लिखें। कलेक्टर साहब या कलेक्टर साहब के दफ़्तर शिक्षा से ज़रा भी अनुराग नहीं, हानि फिरें।

४—विगट-कमिटी और सर जेम्स मेस्टन सब से बुद्धिमत्ता की बात यह की है कि प्राइमरी और प्राइमरी विभाग, स्कूलों से दिये। इसके लिए उनको अनेक धारणा प्रबन्ध से लिखित लाभ होंगे—

(क) प्रत्येक ज़िला, स्कूलों की संख्या के सार, विभक्त हो जायगा। ज़िले के प्रत्येक में एक स्कूल अवश्य ऐसा होगा जो दर्जे की शिक्षा देगा।

(ख) यदि कोई स्कूल दर्जा ३ तक की उसको तीन ही दर्जा ४ रखना होगा। ऐसे स्कूल फ़रीक़ ब, ब, अथवा दर्जे रखेंगे उन सब का आदर्श दर्जा ४ तक

ओ३म्

"श्री गंगमल-भारदा-सदन" बीकानेर

सरस्वती

कमल प्रिंटिंग वर्क्स, इला० एवं०।
इंडियन प्रेस, प्रयाग।

होगा, नहीं तो वे प्राइमरी स्कूल न कहलावेंगे। उनमें पढ़नेवाले की कोई क़दर न होगी।

(ग) जब कोई स्कूल खोला जायगा तब डिस्ट्रिक्ट बोर्ड बाध्य होगा कि पहले से उसको प्राइमरी स्कूल तक पहुँचाने के ख़र्च का बजट बनाले। अब तक तो कोई इस बात को पूछता भी न था। बरसों से कई स्कूल लोअर प्राइमरी ही पड़े थे। सच तो यह है कि बोर्ड लोअर प्राइमरी स्कूलों की संख्या अधिक रखता था और अपर प्राइमरी स्कूलों की कम।

(घ) ८० या ९० फ़ी सदी पढ़ने वालों में से अनेक लड़के, जो अपर प्राइमरी स्कूलों की संख्या में न्यूनता के कारण अधूरी शिक्षा पा कर घर बैठते थे, अब दर्जा ४ तक स्कूल में रहेंगे।

(च) मिडिल स्कूलों में विद्यार्थियों की संख्या बढ़ेगी। मिडिल स्कूल अधिक खोलने पड़ेंगे।

५—१९१६ के अनन्तर मिडिल परीक्षा वही विद्यार्थी दे सकेगा जो २½ वर्ष तक मिडिल सेकशन में पढ़ लेगा। नवीन नियमानुसार पहली येर्नेक्यूलर फ़ाइनल परीक्षा १९१८ में होगी। अब तक मिडिल का कोर्स २ वर्ष का था। अब २½ का किया गया है। यह कहते खेद होता है कि इससे कोई लाभ न होगा। सच्चा उपकार तब होता जब स्वर्गवासी मुन्शी गंगाप्रसाद की सम्मति के अनुसार हिन्दी और उर्दू में प्रोफिशेन्सी परीक्षा नियत की जाती और उसका कोर्स एक या दो वर्ष का रक्खा जाता। स्कूल के मिडिल पास विद्यार्थी गणित में चाहे कैसे ही अच्छे हों, हिन्दी और उर्दू तो उन्हें आती ही नहीं। बड़े बड़े नामली एक पृष्ठ लिखने में व्याकरण के साधारण नियमों का भी उल्लंघन करते हैं। इसमें उनका कुछ दोष नहीं। साहित्य के ग्रन्थ तो उन्हें पढ़ाये ही नहीं जाते। नाम को फ़ाइनल (अन्तिम) परीक्षा पास कर लेते हैं। पढ़ाई के वर्ष बढ़ाने से काम न चलेगा। पुस्तकें उपयोगी पढ़ाइए। दर्जा ३ से अन्य पुस्तकों के साथ साथ हिन्दी अथवा उर्दू के किसी (Standard) प्रसिद्ध ग्रन्थकार का सम्पूर्ण ग्रन्थ रखिए। तब मिडिल तक पहुँचने पर भाषा का कुछ ज्ञान हो जायगा।

६—प्रसन्नता की बात है कि मुसलमानों में शिक्षा-प्रचार की ओर सरकार ने विशेष ध्यान देने की इच्छा की है। जिस स्थान में २० मुसलमान बालक मिलेंगे और उनके माता-पिता उनको पढ़ाना स्वीकार करेंगे, वहाँ एक इसलामिया स्कूल खोल दिया जायगा। ऐसे स्कूलों में अध्यापक भी मुसलमान ही होंगे। यदि किसी मकतब में धार्मिक शिक्षा के अतिरिक्त गणित, भूगोल इत्यादि विषय भी पढ़ाये जायँगे तो बोर्ड उनकी सहायता रुपये से करेगा। संयुक्त प्रान्त भर के लिए एक सुशिक्षित मुसलमान इन्स्पेक्टर रक्खा जायगा। प्रत्येक कमिश्नरी में एक मुसलमान डेप्यूटी इन्स्पेक्टर इस निमित्त रक्खा जायगा कि वह कमिश्नरी भर के इसलामिया स्कूलों की देख भाल करे और उनकी संख्या बढ़ावे। प्रान्त भर के लिए ११ मुसलमान सज्जनों की एक मकतब-कमिटी डाइरेक्टर साहब बनावेंगे। प्रत्येक ज़िले में भी ऐसी ही एक कमिटी होगी। नौ आदमियों की एक मकतब-सम्बन्धी टेक्स्ट बुक-कमिटी भी होगी। आशा है, इन उपायों से मुसलमानों में शिक्षा-प्रचार बढ़ जायगा। इस सम्बन्ध में एक बात सोचने की है। गोरखपुर, बनारस, आगरा इत्यादि कमिश्नरियों में, सैकड़ों स्कूलों में, हज़ारों मुसलमान बालक अपने माता पिता के इच्छानुसार उसी प्रकार हिन्दी पढ़ते हैं जिस प्रकार कि कहेलखण्ड इत्यादि कमिश्नरियों में हिन्दू बालक उर्दू पढ़ते हैं। क्या सरकार विशेष प्रकार से मुसलमान इन्स्पेक्टरों और मकतब-कमिटियों को यत्न देगी कि वे वर्तमान व्यवस्था को, लोगों के रुचि के विपरीत, न बदलें?

७—जिस प्रकार २० मुसलमान बालकों के मिलने पर इसलामिया स्कूल खुल सकते हैं उसी प्रकार अन्य जातियों के बालकों के लिए भी स्कूल खोले जा सकते हैं। क्या ही अच्छा होता

यदि ऐसे ही स्कूलों का निरीक्षण करने और इन जातियों को उत्साहित करने के लिए इन्हीं जातियों के डेप्यूटी और सब डेप्यूटी इन्स्पेक्टर भी नियत किये जाते। हाँ, राजनैतिक दृष्टि से इन लोगों को शिक्षा देना उतना उपकारी नहीं समझा जायगा जितना कि मुसलमानों को शिक्षा देना, परन्तु स्मरण रखने की बात है कि बहुत से बहुत जातियाँ जरायम-पेशा हैं, अर्थात् उनमें से कितने ही चोरी, डकैती इत्यादि करते हैं। जहाँ चोरी की तहक़ीक़ात होती है, पहले यही पकड़े जाते हैं। एक तो देश के जन समूह इनको बहुत समझ कर इन से दूर रहते हैं, दूसरे पुलिस हमेशा इनके सिर पर सवार रहती है। ऐसे लोगों में सद्विचार और आत्मोन्नति के भाव कब आ सकते हैं। ऐसे लोगों को शिक्षा देना, मनुष्य-जाति में दूषित विचार वालों की संख्या घटाने का पुण्य-लाभ करना है। अभी इस ओर अधिक ध्यान दिये बिना ही इन लोगों में कुछ जागृति के चिह्न दिखाई दे रहे हैं। इन में कुछ व्यक्ति अब भी सब डेप्यूटी इन्स्पेक्टर इत्यादि पदों का कार्य करने की योग्यता रखते हैं।

८—एक बात सरकार ने बहुत अच्छी की है। २९ अगस्त १९१४ के गज़ेट में उसने स्पष्ट लिख दिया है कि सर्व-साधारण के धन से बोर्ड के जो स्कूल स्थापित हुए हैं उनमें सर्व-साधारण के बालक पढ़ सकते हैं, चाहे वे किसी जाति के हों और चाहे किसी धर्म को मानते हों। गवर्नमेंट ने लिखा है—"डिस्ट्रिक्ट बोर्ड और मुआयना करने वाले अफ़सरों का फ़र्ज़ है कि मुदर्रिस किसी लड़के को, जो पढ़ना चाहता है और जिसके लिए स्कूल में जगह है, पढ़ाने से इनकार न करे और उसको भरती करने के बाद उसके साथ मुनासिब बरताव करे।"

९—जो लोग दिन भर मिहनत-मज़दूरी करते हैं उनको पढ़ाने के लिए यदि किसी स्थान के निवासी २० विद्यार्थी एकत्र करलें तो बोर्ड वहाँ एक स्कूल खोल देगा, जिसमें रात को पढ़ाई होगी। ऐसे स्कूलों में [illegible] की जायगी। विद्या-प्रचारकों के लिए यह बहुत ही अच्छा अवसर है। इन स्कूलों में पढ़ने वाले चाहे जहाँ के हों वहाँ पुस्तकें लिखना पढ़ना और हिसाब-किताब सिखाया जाना

१०—जिनकी दूर के लड़के किसी प्राइमरी स्कूल में भेजेंगे वह प्राइमरी सर्कल कहलाता है। प्रत्येक सर्कल में एक लोकल-कमिटी होती है। उसके मेम्बर मास्टरों और लड़कों की जाँच पड़ताल करेंगे कि वे समय पर आते हैं या नहीं, इत्यादि। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का एक मेम्बर इस कमिटी में रहेगा। ऐसी कमिटियों से कोई लाभ न होगा क्योंकि (१) अभी दिहातों में शिक्षित लोगों का अभाव है (२) इन कमेटियों को कोई अधिकार नहीं दिया गया। जो थोड़े बहुत कर्तव्य इनके लिए बनाये भी गये हैं वे बहुत ही अनिश्चित हैं। जैसे मकान की मरम्मत, कूएँ की जगत बनाने की सलाह देना, असबाब और पढ़ाई के सामान रिपोर्ट करना इत्यादि ऐसे काम हैं जिन पर बहुधा बोर्ड ध्यान ही नहीं देता। सब-डेप्यूटी, डेप्यूटी यहाँ तक कि इन्स्पेक्टर और असिस्टेन्ट इन्स्पेक्टर तक मुआयनों में लिखते रहते हैं कि अमुक अमुक बाब की आवश्यकता है। परन्तु उन पर ध्यान ही नहीं दिया जाता। इसका कारण विशेष कर यही भाव होता है। कमिटी के मेम्बर दो तीन दफे लिख कर घर बैठ रहेंगे, क्योंकि वे समझेंगे कि उनकी बात पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया जाता। (४) गाँवों में बहुधा लड़ाई-झगड़े लगे रहते हैं। हर दल के लोग मुदर्रिसों को अपनी अपनी तरफ़ खींचने का प्रयत्न करते हैं। यदि मुदर्रिस ना-तजरिबेकार हुआ तो वह किसी न किसी फ़रीक़ का तरफ़दार हो जाता है और दूसरे फ़रीक़ के लोग उसको दुश्मन समझने लगते हैं। (५) जिस प्रकार की कमिटियाँ सरकार बनाती आई है, सब व्यर्थ प्रमाणित हुई हैं। सन् १९०८ में स्त्री शिक्षा-प्रचार के लिए प्रत्येक ज़िले में कमिटी बनाई गई थी। उन से क्या लाभ हुआ? ये कमिटियाँ भी निकम्मी निकलीं, क्योंकि उनको कोई काम ही न था।

११—अब सोचना चाहिए कि इन लोकल-कमिटियों से क्या काम लिया जा सकता है? यदि शिक्षा-विभाग और बोर्ड के अफ़सर इन के मेम्बरों से मिलते रहें तो स्कूल के मकान बनवाने और उन की मरम्मत में बड़ी मदद मिल सकती है। शायद ज़मीन के लिए तो बोर्ड को एक पैसा भी न खर्च करना पड़े। मकानों की मरम्मत भी इन के द्वारा सस्ते में हो सकती है। यदि इन मेम्बरों को उत्साह दिया जाय तो सब आपस में मिल कर थोड़ा धन बोर्ड से लेकर नये मकान भी कोवरसीयर से सस्ता बनवा सकते हैं। आज कल सरकार का जो यह ख़याल हो रहा है कि दिहाती स्कूलों के मकान पक्के और शानदार बनवाये जायँ, सो ठीक नहीं। मकान गाँव के बाहर हो, चारों तरफ़ उसके मैदान हो, उसमें दरवाज़े हर तरफ़ हों, उसके क़रीब पेड़ हों—बस, कच्चा मकान भी बरसों काम दे सकता है। झोपड़ियों में रहने वाले बालकों को दिन भर महलों में बिठा कर पढ़ाने से लाभ के बदले हानि ही है। यही धन नये स्कूलों और नायब मुदर्रिसों की संख्या बढ़ाने में लगाना चाहिए। कच्चे मकानों के बनवाने में ग़रीब दिहाती भी बाँस, बल्ले, छप्पर इत्यादि से सहायता दे सकते हैं।

१२—धार्मिक शिक्षा देने के जो नियम बनाये गये हैं उनकी आवश्यकता न थी। अँगरेज़ी स्कूलों में इसी प्रकार के नियम बरसों से चले आते हैं। पर कहीं भी इन पर अमल नहीं होता। लोगों ने इसके लिए कभी इच्छा भी प्रकट नहीं की थी। भला दिहाती लोग पण्डित रख कर स्कूलों में धर्म-शिक्षा दिलवायेंगे? और यदि कभी दिलवायेंगे भी तो मत-मतान्तरों के झगड़े उठ खड़े होंगे। ऐसी शिक्षा से मुदर्रिसों का कोई सम्बन्ध न रखने का नियम बड़ी बुद्धिमत्ता का है। सच्ची धार्मिक शिक्षा अच्छे अध्यापकों और सुन्दर ग्रन्थों के पढ़ने से मिल सकती है न कि शैव और शाक्त, सनातनी और आर्य्यों के झगड़ों से।

१३—ट्रेनिङ्ग क्लासों से बड़ा लाभ हुआ है। परन्तु उनमें जो छः रुपया वज़ीफ़ा दिया जाता है वह कम है। मुदर्रिस ८) की नौकरी छोड़ कर इन क्लासों में भरती होते हैं। यदि नियम यह होता कि जो उम्मेदवार दाख़िल होंगे वे ६) पावेंगे और जो मुदर्रिस पढ़ने आवेंगे उन्हें ८) मिलेंगे तो अच्छा होता।

ट्रेनिङ्ग क्लास का कोर्स प्राइमरी स्कूलों के नये करीक्युलम से नहीं मिलता। Object Lessons (वस्तु-ज्ञान-विषयक पाठ) और Nature Study (प्राकृतिक पदार्थों की शिक्षा) जो इस वर्ष से पाठ-विधि में जोड़े गये हैं उनकी भी तो शिक्षा मुदर्रिसों को ट्रेनिङ्ग क्लास में मिलनी चाहिए।

१४—मुदर्रिसों की वेतन-वृद्धि के नवीन नियम बड़े उत्साह वर्धक हैं। परन्तु इस समय जो ८) मासिक आरम्भ में उनको दिया जाता है, बहुत कम है। एक समय था जब ये लोग ४) पाते थे। फिर ६) पाने लगे। ६) से ८) हुए भी दस वर्ष से अधिक हो गया। अब समय आगया है कि किसी मुदर्रिस को १०) से कम न मिले। सब को प्रोविडेन्ट फंड से फ़ायदा होना चाहिए।

१५—प्राइमरी स्कूलों में पुस्तकालय रखने का नियम अत्यन्त लाभदायक है। सरकार को चाहिए कि हिन्दी और उर्दू के विद्वानों की सहायता से उपयोगी पुस्तकों की एक सूची बनवाकर प्रत्येक डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के पास भेज दे, जिसमें शीघ्र ही पुस्तकालय खुल जायँ। जो पुस्तकें चुनी जायँ वे बालकों और शिक्षकों के लिए उपकारी हों, जिनके पढ़ने से ज्ञान की सीमा बढ़े, सदाचार की वृद्धि और साहित्य में रुचि हो।

१६—फ़ीस की शरह बहुत ज़ियादह रक्खी गई है। फ़रीक़ अ और ब में फ़ीस न लगनी चाहिए। दर्जा १ और २ में ।) पैसा बहुत है। दर्जा ३ और ४ में ।॥, तथा मिडिल-स्कूलों के दर्जा ५ और ६ में ⁻) से अधिक फ़ीस न होनी चाहिए। फ़ीस का सिद्धान्त तो यह होना चाहिए कि प्राइमरी शिक्षा प्राप्त करने वालों से कुछ भी फ़ीस न ली

जाय। प्रारम्भिक शिक्षा मुफ़्त होनी चाहिए। मिडिल का इम्तिहान बहुधा लोग रोज़गार की नीयत से देते हैं। इस लिए मिडिल स्कूलों में एक आने तक फ़ीस लगा दी जाय। देहातों में फ़ीस बड़ी मुश्किल से वसूल होती है। बहुत से मुदर्रिस अपने पास से ग़रीब अथवा नादिहन्द लड़कों की फ़ीस देते हैं। देश में इसके लिए आन्दोलन होना चाहिए। योरप के अनेक सभ्य देशों में फ़ीस तो माफ़ है ही, लड़कों को खाना और कपड़ा भी मुफ़्त मिलता है। हमारे धनाढ्य देशवासियों को चाहिए कि जिस प्रकार वे अँगरेज़ी स्कूलों में छात्र-वृत्तियाँ देते हैं, प्राइमरी और मिडिल स्कूलों में भी दें। यह बात ज़मींदारों को अपनी ज़मींदारी के स्कूलों में करनी चाहिए।

१७—इमदादी स्कूलों के नवीन नियम अत्यन्त हानिकारक हैं। उनका परिणाम यह होगा कि प्रायः सभी स्कूल बोर्ड के हो जायँगे और इस समय जितना शिक्षा-प्रचार इमदादी स्कूलों द्वारा हो रहा है बन्द हो जायगा। ऐसे स्कूलों की वर्तमान अवस्था इस प्रकार है कि गाँव का कोई भी प्रतिष्ठित पुरुष एक घर दे देता है, जिसमें स्कूल जारी हो जाता है। मास्टर भी वही रखलेता है। बोर्ड से ४) या ५) रुपया जो इमदाद मिलती है वह मुदर्रिस को दे दी जाती है। इसके अतिरिक्त गाँव के लोग स्वयं अथवा लड़कों द्वारा उसको भोजन के लिए सीधा इत्यादि दे देते हैं। ऐसे स्कूलों में मुदर्रिस प्रायः मिडिल पास रक्खे जाने लगे हैं। नवीन नियमानुसार जो मैनेजर होगा उसको बोर्ड मंज़ूर करेगा। क्यों? यह गुप्त रहस्य नहीं बताया गया। नामंज़ूर किन हालतों में करेगा, यह भी नहीं मालूम। एक कमिटी भी मैनेजर का काम कर सकती है। यह नियम बुरा नहीं है। पर अभी देहाती लोगों में इतनी शिक्षा नहीं है कि कमिटियाँ बना कर ये काम करें। बोर्ड अब इमदाद उस धन का आधा रुपया देकर करेगा जितना मुदर्रिसों की तनख़्वाह पर ख़र्च होगा। यदि मकतब, पाठशाला अथवा स्कूल अनि-

यों के लिए इमदादी स्कूल खुलेंगे तो उनके बोर्ड तनख़्वाहों पर कुल ख़र्च का ½ देंगी। कोई इमदादी स्कूल ऐसे मुदर्रिस न रख सकें जिन में उतनी योग्यता न होगी कि जितनी बोर्ड के स्कूलों के अध्यापकों में होनी चाहिए। फ़ीस लगाना ज़रूरी होगा। अब तक इमदादी स्कूलों में प्रायः फ़ीस न थी। अब, फ़ीस भी इतनी लो जिस से बोर्ड के स्कूलों को हानि न पहुँचे। इन नियमों से तो अच्छा होता कि स्पष्ट कह दिया जा कि इमदादी स्कूलों को बन्द करो, बिना फ़ीस शिक्षा अब न दी जायगी। अस्तु। हमारे धना भाइयों का अब धर्म्म है कि नवीन नियमानुसार इमदादी स्कूलों को क़ायम रखें। कौन जानता इन कठोर नियमों से लोगों की आँखें खुलें और वे अपने कर्तव्यों को समझने लगें।

अध्यापक।

---

## सामाजिक ह्रास के कुछ कारणों का विचार।

### (२)

### शहरों में रहना।

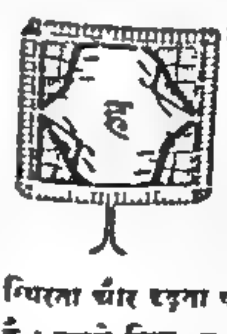

हमारे सामाजिक ह्रास का पहला का[रण] मलिक का अमर्यादित व्यय है। इसका विवेचन पिछले लेख में किया जा चुका है। अब, इस लेख में, इस विचार किया जायगा कि हमारे [ग्रा]म निवासी हो जाने से समाज [की] स्थिरता और दृढ़ता पर कैसा हानिकारक परिणाम हो [रहा] है। इसके लिए पहले यह जानना चाहिए कि यूरोप [के] समाजों की स्थिरता और दृढ़ता किन नियमों के अनुसार [हो] रही है। इसमें सन्देह नहीं कि वे लोग विलक्षण विप[त्ति] व्यसन में अपने हुए हैं। तो भी उनके समाज में वि[से] हानिकारक परिणाम नहीं देख पड़ते! इसका कार[ण] क्या है?

यह नहीं माना जा सकता कि यूरोप में शिक्षित और विद्वान् लोगों पर मस्तिष्क के अमर्यादित व्यय से सार्वकालिक ही परिणाम नहीं होता। उन लोगों में भी जो, किसी विशेष ज्ञान और शक्ति से अत्यन्त उन्नत दशा को पहुँच कर अपने राष्ट्र के लिए भूषण हो जाते हैं, अनेक लोग प्रायः सन्तान हीन हुआ करते हैं। यदि उनके कोई सन्तान हो भी तो उसकी योग्यता कम दर्जे की हुआ करती है और उसका वंश भी कुछ ही पीढ़ियों के बाद हो जाता है। जिन लोगों का दर्जा समाज में सब से अधिक ऊँचा समझा जाता है उनका सुकाव निःसन्तान होने ही की ओर हुआ करता है। इस भग छः पीढ़ियों के भीतर ही बड़े बड़े सुप्रसिद्ध पुरुषों के वंश नष्ट हो जाते हैं। तब उन वंशों का अस्तित्व, दत्तक-विधि या किसी अन्य उपाय से, दृढ़ करने का यत्न किया जाता है। जब किसी वर्ग के कुछ लोग बहुत ऊँचे पद पर आरूढ़ होने के लिए बुद्धि-विषयक अधिकाधिक परिश्रम करने लगते हैं तब उनका भाग्योदय तो होता है सही, परन्तु सन्तानोत्पत्ति के काम में—अपने वंश की स्थिरता के काम में—वे निरुपयोगी हो जाते हैं। श्रेष्ठ वर्गों में विवाह न करने वाले स्त्री-पुरुषों की संख्या अधिक होती है, और जो लोग विवाह करते भी हैं वे बड़ी उम्र में करते हैं। ज्ञान मार्ग का अवलम्ब करने वालों में विवाह की इच्छा सहज ही कम हो जाती है। इसलिए वे लोग सन्तानोत्पत्ति को कम मान देते हैं। परन्तु जिन लोगों को बुद्धि-सम्बन्धी परिश्रम बहुत ही थोड़ा करना पड़ता है—जिन लोगों को अपने मस्तिष्क का बहुत व्यय नहीं करना पड़ता—उनमें बुद्धि की शक्ति का सञ्चय हुआ करता है और उन्हीं में सन्तान की विपुलता भी देख पड़ती है। शारीरिक श्रम करने वाले मजदूरों और किसानों में विवाह की इच्छा बहुत प्रबल हुआ करती है, इन लोगों में विवाह भी जल्द हुआ करते हैं और सन्तान की अधिकता भी देख पड़ती है। ज्योंही अनाज सस्ता होने लगता है त्योंही इन लोगों में विवाहों की संख्या बढ़ जाती है। यह देख कर बर्क कहा करता था कि मनुष्यों की उत्पत्ति मुख से होती है।—Man breeds at the mouth.

इस प्रकार हम देखते हैं कि यूरोप के समाजों में एक ओर से ऊँचे दर्जे तक पहुँचे हुए कुछ वंशों का नाश होता चला जाता है, और दूसरी ओर से नीचे के दर्जों में से कुछ लोग अपनी बुद्धि की सञ्चित शक्ति को साथ ले कर उन्नति-पथ का आक्रमण करते करते नूतन उच्च-वंश स्थापित किया करते हैं। तात्पर्य यह कि जो लोग बुद्धि-परिश्रम अधिक नहीं करते—जो लोग शहरों में रह कर अपने मस्तिष्क का अधिक व्यय नहीं करते—जो लोग देहातों और कस्बों में रह कर खेती, मजदूरी और उद्योग-धन्धों में शारीरिक श्रम अधिक किया करते हैं, वही समाज की जड़ या नींव हैं। इसी नींव पर समाज के भिन्न भिन्न दर्जों की इमारतें बना करती हैं। समाज-रूपी इमारत की चोटी (अर्थात् श्रेष्ठ वर्ग) का हमेशा नाश हुआ करता है। यह शिखर—यह श्रेष्ठ वर्ग—नीचे के दर्जों में रहने वाले लोगों के द्वारा ही पुनरुज्जीवित हुआ करता है। ऊँचे दर्जे के लोगों में, सारे जगत् को चकित कर देने वाला जो अद्भुत सामर्थ्य देख पड़ता है वह, उन्हें समाज की नींव से (अर्थात् नीचे दर्जों में रहने वालों में से) प्राप्त हुआ करता है। इसी सामर्थ्य के प्रभाव से वे लोग सारी दुनिया में अतुल प्रतापी हो रहे हैं।

यूरोप के समाज में श्रेष्ठ वर्गों और कनिष्ठ वर्गों का जो परस्पर सम्बन्ध ऊपर दिखाया गया है वह कुछ उदाहरणों से स्पष्ट ध्यान में आ जायगा। यूरोप के सुप्रसिद्ध व्यक्तियों की दशा बिजली के दीपकों के समान है। इन दीपकों को प्रकाशित होने के लिए जिस शक्ति की आवश्यकता होती है वह किसी अप्रसिद्ध स्थान के एक कोने में यन्त्र-द्वारा उत्पन्न हुआ करती है। जिन तारों में से इस शक्ति की धारा सदा प्रवाहित होती रहती है उनकी ओर किसी का ध्यान नहीं जाता, सिर्फ़ दीपकों के प्रकाश ही की ओर सब लोग टकटकी बाँध कर आश्चर्य से देखा करते हैं। अथवा, यह कहिए कि यूरोप के समाज की वृद्धि केले के पेड़ के समान है। उसकी जड़ से नये नये कल्ले फूटते रहते हैं और पेड़ तैयार होकर फल देने लगता है। पेड़ में फलों के जो गुच्छे या गहरें लगती हैं वे केवल परोपकार के काम आती हैं—वे बीज के काम की नहीं होतीं। सामाजिक विकास का यही वर्णन किड के ग्रन्थ में इस प्रकार किया गया है:—

—While we have, on the one hand, the constant tendency of aspiring ability to rise into the highest class, we have, on the other hand,

within the class itself, the equally constant tendency towards restriction of numbers, towards celibacy and towards *reversion to the classes below*. This is the largest operating cause constantly tending to the decay and extinction of aristocratic families. Not only do the aristocratic families die out, but it would appear that the number of the classes into which it is always the tendency of a very prevalent type of intellectual ability to rise, are being continually weeded out by a process of natural selection, which it appears to have been *the effect of our own civilization* to foster to a peculiar degree. It is evident that our society must be considered as an organism which is continually renewing itself from the base and dying away in those upper strata into which it is the tendency of a large class of intellectual ability to rise."—Kidd: *Social Evolution*, p. 260

सदा प्रकृति के सहवास में रहने के कारण हमारी [illegible] दुःख, दरिद्रता और अज्ञान से घिरे देख पड़ते हैं; सर्व मस्तिष्कों और शरीरों में प्रकृतिदेवी समान [illegible] सङ्ग्रह किया करती है। यही सञ्चित शक्तियाँ उनकी में सङ्क्रमित या विकसित हुआ करती हैं। ऐसी जो अधिक सामर्थ्यवान् होते हैं वे देहात से शहरों [illegible] जाते हैं। पहले पहल वे लोग शारीरिक श्रम ही [illegible] किया करते हैं, परन्तु उनके वंशज, एक या दो [illegible] बाद, मानसिक परिश्रम करने लग जाते हैं। थोड़े ही [illegible] में उनका भाग्योदय होने लगता है और उनके वंश [illegible] लोग अत्यन्त प्रसिद्ध तथा प्रतिष्ठित हो जाते हैं। इस [illegible] के साथ ही साथ उनकी पूर्वार्जित पूँजी—मस्तिष्क [illegible] शरीर की शक्ति—भी खर्च हो जाती है। अतएव उनका [illegible] होने लगता है। यदि उनमें से कुछ लोग देहात को [illegible] कर अपने पूर्वजों की तरह शारीरिक श्रम वाला कोई [illegible] करने लगें तो खोई हुई शक्ति फिर उनमें [illegible] लोग देहात में रहना नहीं चाहते उनके वंश शहरों [illegible] हो जाते हैं। इस विषय पर एमर्सन के निम्न-लिखित [illegible]

recruited and cured by that which should have been my nursery, and now shall be my hospital."- *Ibid.*

संक्षेप में, यूरोप के समाजों की स्थिरता, दृढ़ता और उन्नति के विषय में जिन तत्त्वों का अवलम्बन किया जाता है उनका स्वरूप यह है:—देहात में बुद्धि परती ज़मीन के समान होती है। प्रकृति के सहवास से अरोगता प्राप्त होती है। देहात में जिस बुद्धि और आरोग्य का सञ्चय हुआ रहता है वह, शहरों में चले जाने पर, भिन्न भिन्न मानसिक क्रियाओं में खर्च हो कर कुछ समय के बाद नष्ट हो जाता है। जब तक इस उपयोगी सामर्थ्य का प्रवाह देहात से शहरों की ओर बहता रहता है तब तक समाज की कोई हानि नहीं हो सकती। यदि हम लोगों को अपने शिक्षित समाज की स्थिरता और उन्नति के विषय में कुछ विचार करना है तो इस सिद्धान्त को सदा ध्यान में रखना चाहिए। यद्यपि यह सिद्धान्त हमारे समाज के विषय में भी लगाया जा सकता है, तथापि हमारे समाज में और यूरोप के समाजों में एक बहुत बड़ा भेद है—अर्थात् वे सब लोग एक ही जाति के हैं; उनमें भिन्न भिन्न जातियों का झगड़ा नहीं है। उन लोगों में जिस किसी का भाग्योदय होता है वही श्रेष्ठ वर्ग का कहा जाता है। इसका फल यह होता है कि उनके समाज में बड़े बड़े प्रसिद्ध पुरुषों के पैदा होने में किसी एक ही जाति को अपनी समस्त शक्ति का व्यय नहीं करना पड़ता। इस लिए वहाँ किसी एक ही जाति अथवा वर्ग के लोगों की विशेष हानि नहीं होती। परन्तु हमारे समाज में ऐसा नहीं होता—यहाँ विशिष्ट जातियों की ही बहुत हानि हो रही है।

यदि हमारे समाज में बुद्धि के विकास का कार्य इन सिद्धान्तों के अनुसार किया जाता तो देश की बहुत हानि न होती। जिस समय इस देश के निवासियों को बुद्धि के परिश्रम की—मस्तिष्क के व्यय की—आवश्यकता मालूम हुई उस समय मानसिक श्रम करने का सारा बोझ उन्हीं जातियों पर आ पड़ा जिनमें बुद्धि की सहायता से अपना जीवन निर्वाह करने की प्रथा प्रचलित थी। इन्हीं जातियों को, अर्थात् ब्राह्मण-कायस्थ आदि को, श्रेष्ठ वर्ग कहते हैं। पहले पहल इन जातियों के पूर्वज देहात ही में अधिकता से रहा करते थे; परन्तु पश्चिमी देशों के साथ सम्बन्ध होते ही देहात की स्थिति बदल गई और उन लोगों को उपजीविका के लिए शहरों में रहना पड़ा। जो लोग अब तक देहात में रहते हैं वे अपने लड़कों को विद्याभ्यास के लिए शहरों में भेज दिया करते हैं। सम्भव नहीं कि ये लड़के या इन के वंशज फिर लौट कर देहाती जीवन को स्वीकार करें। सारांश यह कि हमारे देश में श्रेष्ठ जाति के—बुद्धि सम्बन्धी परिश्रम करने वाले ऊँचे दर्जे के—उन लोगों की संख्या दिन पर दिन घट रही है जो पहले प्रकृति के नियमानुसार शारीरिक श्रम किया करते थे और बुद्धि तथा आरोग्य का सञ्चय करते रहते थे। इस समय के शिक्षित समाज में पूर्वार्जित शक्तियों की पूँजी का व्यय करने वाले ही अधिक देख पड़ते हैं। जिन लोगों को सरकारी नौकरी के कारण देहात में रहना पड़ता है वे अपना दुर्भाग्य समझते हैं। हमारे श्रेष्ठ वर्गों के शिक्षित भाई देहात में रहना नापसन्द करने लग गये हैं। इस से जो बुरे परिणाम हमारे समाज पर हो रहे हैं, अर्थात् हमारे समाज का जो ह्रास हो रहा है, उसका विचार करने से मन में भय उत्पन्न होता है।

जब हम अपने देश और समाज की वर्तमान दशा पर विचार करते हैं और यह देखते हैं कि हमारे समाज में श्रेष्ठ वर्ग के प्रायः सभी लोग देहात का त्याग करके शहरों में रहने लग गये हैं और जब हम यह सोचते हैं कि यह परिवर्तन कई पीढ़ियों तक जारी रहेगा तब हमारे शिक्षित समाज की भावी उन्नति और स्थिरता के विषय में सन्देह उत्पन्न होने लगता है। किसी ने सच कहा है "विनाशकाले विपरीतबुद्धिः।" जो लोग देहात से बुद्धि और आरोग्य का सञ्चय अपने साथ ले कर शहरों में आये उन लोगों ने अपनी पूर्वार्जित शक्ति की सहायता से शहरों में रह कर विद्या प्राप्त की और बड़े बड़े अधिकारों के पद पर आरूढ़ हो कर बहुत सा द्रव्य भी उपार्जित किया। परन्तु ज्यों ज्यों उनकी बुद्धि का विस्तार होता गया त्यों त्यों उनका उपजाऊपन भी घटता गया। जो बुद्धिवाद या तर्कवाद (Rationalism) कुछ दिन पहले यूरोप में वृद्धावस्था को पहुँच गया था वही यहाँ पर नव्य रूप धारण करके हमारे विद्वानों को मोहित करने लगा। हमारे शिक्षित मनुष्यों ने अपने पूर्वजों की सीधी सादी वृत्ति का त्याग कर दिया, देहात की

पूंजी नष्ट कर डाली और शहरों के स्थायी निवासी बन गये। इस प्रकार देहाती जीवन में परिवर्तन हो जाने के कारण वहाँ की सम्पत्ति नष्ट हो गई और ऊँचे दर्जे के—मस्तिष्क का उपयोग करने वालों के—कुटुम्बों का भी नाश हो गया। तात्पर्य यह कि हमारे शिक्षित समाज में जड़ ही को उखाड़ डालने का प्रयत्न किया जा रहा है—'मूले कुठारः' की नीति का अवलम्बन किया जा रहा है। यदि यही क्रम भविष्य में भी जारी रहा तो, सम्भव है, जिस जाति के लोगों को वर्तमान समय में बुद्धि-विषयक परिश्रम करना पड़ता है और जो ऊँचे दर्जे के हैं वे नष्ट हो जायँगे।

हम लोग जिस सुधार और सभ्यता के अनुयायी हो रहे हैं उसका यथार्थ स्वरूप बहुत भयानक है। केवल बुद्धिवाद, तर्क और युक्ति का आश्रय करके हम लोग अन्धों के समान अनुकरण कर रहे हैं। जिस प्रथम सुधार—देहात छोड़ने और शहरों में रहने—का हम लोगों ने स्वीकार किया है वही हमारे समाज के लिए घातक हो गया है। दूसरा अनिष्ट सुधार हम ने यह किया है कि एक ही जाति या वर्ग के लोगों को मस्तिष्क का अमर्यादित व्यय करने में लगा दिया है। तीसरा अनिष्ट सुधार यह हुआ है कि शहरों में रहने के कारण हमारा प्राचीन सादापन चला गया है और हम लोग सिर्फ़ जङ्गम सम्पत्ति एकत्र करने लगे हैं। इन्हीं सब सुधारों को अब तक हम अपने समाज की उन्नति के लिए आवश्यक मानते चले आये हैं। परन्तु पश्चिमी सभ्यता के सिद्धान्तों की ओर ध्यान देने से मालूम हो जायगा कि इन्हीं बातों से यथार्थ में हमारे समाज का ह्रास और नाश हो रहा है।

शहरों के स्थायी निवास से मनुष्यों के मस्तिष्क और शरीर पर जो परिणाम होते हैं वे प्रायः सदा ही अनिष्टकारक हुआ करते हैं। शहरों में तङ्ग जगहों में रहना पड़ता है। वहाँ खुले मैदानों की आरोग्य-कारक हवा नहीं मिलती। सभ्यता के नियम कृत्रिम और कठिन होते हैं। भोजन, वस्त्र आदि के सम्बन्ध में बहुत सावधानी रखनी होती है। शरीर दुबला, कमज़ोर और नाज़ुक हो जाता है। खाने पीने में परिमित व्यवहार के सौदे बार बार आया करते हैं। जङ्गली और अखाद्य अन्न का सेवन करने से अजीर्ण सदा हो जाती है और अनेक व्याधियों की जड़ जम जाती है। विशेषकर करने वालों को शारीरिक श्रम का बहुत ही कम मौक़ा मि है। इसलिए वे निर्बल और निस्तेज हो जाते हैं। शहरों की धरती बहुत घनी होती है वहाँ रोगों की भी अधिक होती है। शहरों में सुख-चैन और वि साधनों की कमी नहीं होती; इसीलिए वहाँ दुर्व्यस अधिकता देख पड़ती है। बहुत लोग स्वयं अपने सु आराम के लिए अपने कुटुम्बों की अवहेलना किया क कुटुम्ब के मुखिया मनुष्य पर ही सब लोगों के पालन का भार आ पड़ता है। उसे अपने व्यवसाय में या लोगों की सहायता बहुत कम मिलती है। इन्हीं का नगर-वासियों की तन्दुरुस्ती बिगड़ जाती है। इन लो आरोग्य का बीज ही नष्ट हो जाता है। ऐसी अव उनकी सन्तान की बुद्धि और नीरोगता भी विकृत हो है। इस विकृत अवस्था की वृद्धि होते होते अन्त में कुटुम्ब ही निर्वंश हो जाते हैं। शहरों में रहने से सम जो अनिष्ट परिणाम हुआ करते हैं उनके सम्बन्ध में एक (Olive Schreiner) ने लिखा है—"It is a v common-place that, were the city not re ed from the more primitive country, it w be depopulated in six generations. Vast gorgeous cities have always heralded accompanied the falls of great peoples the ruins of Nineveh, Babylon, Rome an vast fallen cities of India and Greece, ar graves under which a brave, simple mighty people were buried while the yet stood!"

अन्त में पाठकों से यही निवेदन है कि इस वि उचित ध्यान दीजिए। इस बात को सोचिए कि जब म के अमर्यादित व्यय और नगरों के निवास—इन दो में से एक ही हमारे कुटुम्बों को निःसन्तान कर लिए समर्थ है; तब जिस समाज में और जिस का वर्ग में ये दोनों ही कारण एक ही साथ ह हों तब तो हाल हो जाने में क्या विलम्ब है। देश में सुशिक्षित और सभ्य कहलाने वाले म आदि ऊँचे जाति के लोग इसी विनाश-पथ के पथिक हो रहे हैं। विदेशियों की दृष्टि में हम लोग मरे हुए कि और सभ्य [illegible] परन्तु ध्यान में [illegible]

का शिवालय।

मदुरा का प्रसिद्ध मन्दिर—हज़ार खम्भे का।

बीकानेर। "श्री गोरमल-धोरारा-सदन"

चित्तौड़गढ़ का पहाड़ी किला।

१५६ पेज, इकरंग।

गढ़ोर का राज-महल।

ा और यही विद्वत्ता श्रेष्ठ जातियों के लिए कालकूट भूलना चाहिए और, समय रहते ही, इन बुरे परिणामों को
पयगी। हमको अपनी वर्तमान शारीरिक दुर्बलता पर टालने का उपाय करना चाहिए। अन्यथा परिणाम बड़ा ही
अपनी सन्तान की दुर्दशा पर ध्यान देना चाहिए। भयानक होगा।
निक सुधार और सभ्यता का जो निश्चित परिणाम—
त् समाज का ह्रास—हुआ करता है उसको कभी न

माधवराव सप्रे।

---

## पतन और उत्थान।

जो दिनेश कल नभो-देश में अस्त हुआ था, सन्ध्या ही के समय प्रलय से ग्रस्त हुआ था।
तम का था अधिकार तमिस्रा की शाही थी, चोरों को था चैन साँझ से बदराही थी।
आज वही फिर पूर्व से है मुसकाता आ रहा;
देता प्रीति दिगन्त तक कमल खिलाता आ रहा॥ १॥

जो भू कभी प्रचण्ड ताप से तपी हुई थी, तृण या तरु समूल धूल से ढँपी हुई थी।
दावा ने थे दहक दहक वन सघन उजाड़े, आँधी ने थे रहे सहे तरु पुंज उखाड़े।
हरियाली से फिर वही नन्दन-मद हरने लगी,
[illegible] में है विहार करने लगी॥ २॥ [illegible] साथ, बस थी नाचारी।

हम में रहा न तप सत्य से हीन हुए हैं, गिरे यहाँ तक मनुष्यत्व से हीन हुए हैं।
जो सद्गुण थे बने कभी सर्वस्व हमारा, गये सभी वे आज ये नौ दो ग्यारा।
महा मूर्ख बन कर पड़े झगड़ना के जंजाल में,
निरुद्योग-आलस्य-रत हुए हाय इस काल में ॥८॥
बन्धु बन्धु पर घोर-भाव से टूट रहे हैं, दीनों को सम्पत्तिवान ही लूट रहे हैं।
कोटि कोटि नर एक ओर हैं भूखों मरते, उनके टुकड़े हीन मांस स्वानों हैं करते।
पुण्य-भूमि में देखिए कैसा पापाचार है,
धन्य धरा जो सह रही अब तक ऐसा भार है ॥९॥
दुर्जनता ही रही सुजनता बिलकुल भूली, अपना ढेर बटोर और की लहलहे फूली।
ईर्ष्या से है हृदय हमारे निशदिन जलते, जाते हैं हम सूख देख औरों को फलते।
इससे अपना भी अहित होता है कुछ कम नहीं।
हो औरों का अपयशकुल नाक कटे तो ग़म नहीं ॥१०॥
ले अभिमान-निशान दम्भ-दुन्दुभी बजादी, काम, क्रोध, मद, लोभ आदि की सेन सजादी।
कड़खैतों की जगह स्वयं अपने गुण गाये, लोहू हुआ सफ़ेद जोश में ऐसे आये।
मार मार का शोर कर सदाचार से लड़ गये।
लोटा ले कर अक्ल के पीछे ही हम पड़ गये ॥११॥
इस का ही परिणाम हुआ हम हुए अधम हैं, नीच निकम्मे नाम जहाँ तक रखिए कम हैं।
अन्धकार, अविवेक, मूर्खता के अनुचर हैं, दम्भ, द्वेष, दुर्भाव आदि दोषों के घर हैं।
हैं दरिद्रता के धनी मूढ़ों के अधिराज हैं।
आज जगत में हीनता की रक्खे हम लाज हैं ॥१२॥
पतन पूर्ण हो चुका सँभलने के दिन आये, आशा ऊपर उठा रही है गोद उठाये।
फिर सपूत उत्पन्न किये भारत-माता ने, फिर देना आरम्भ किया हम को दाता ने।
फिर वंशी गोपाल की बजी जगाने के लिए।
फिर आये मनु-कुल-तिलक हमें उठाने के लिए ॥१३॥
शिक्षा की रोशनी लगी मन का तम हरने, सदसद् का शुचि ज्ञान लगा हृदयों में भरने।
बढ़ चलने के वचन हमारे मुख पर आये, स्वावलम्ब के पाठ हमें आ रहे पढ़ाये।
जन्म-भूमि की प्रीति फिर है दुचन्द होने लगी।
वन्दे वन्दे की सदा फिर बलन्द होने लगी ॥१४॥
बहुत गिर चुके अब उन्नति गिरि-शृङ्ग चढ़ेंगे, फिर आगे की तरफ़ हमारे क़दम बढ़ेंगे।
प्रेम-भाव ही और भाव तज हृदय मढ़ेंगे। अब तो आठों याम कर्म के पाठ पढ़ेंगे।
ज्ञानार्जन में मूरि श्रम सदा करेंगे साथ ही।
रक्खे बैठे रहेंगे न यों हाथ पर हाथ ही ॥१५॥
सन्तत चढ़ता रहे प्रभो! उन्नति का पारा, चमके फिर इस दुखी देश का नाथ! सितारा।
अब की हो यों वर्धित प्रतापादित्य हमारा, जिसमें लहे प्रकाश प्रकाशित हो जग सारा।
हे हरि! पतितोद्धार का तुम को है अभिमान भी,
पतन तुम्हारे हाथ है वैसे ही उत्थान भी ॥१६॥

# समाजशास्त्र का अस्तित्व।

गत लेख में समाजशास्त्र की आवश्यकता बताने की चेष्टा की गई है। पर संसार में बहुत से लोग या तो समाजशास्त्र का अस्तित्व ही नहीं स्वीकार करते या ऐसे सिद्धान्तों पर विश्वास करते हैं जो समाजशास्त्र के मूलाधार के ही विरोधी हैं। समाजशास्त्री समाज-सम्बन्धिनी बातों के एकत्रीकरण, वर्गीकरण और तद्विषयक तुलनात्मक विचार करने के पश्चात् सामाजिक कार्य्य कारण-सम्बन्ध स्थिर करता है और ऐसे व्यापक नियमों का पता लगाता है जिनके अनुसार समाजों की उन्नति-अवनति होती है। यदि कोई कहे कि सामाजिक मामलों में कार्य-कारण सम्बन्ध के लिए जगह ही नहीं या समाजों की गति कितने ही व्यापक नियमों का अनुसरण ही नहीं करती तो मानों उसने समाजशास्त्र के अस्तित्व ही से मुँह मोड़ लिया।

बहुधा सुना जाता है कि संसार में जो कुछ होता है सब ईश्वर अपनी इच्छा से करता है या हमारे भाग्य से होता है। यदि एक दूकानदार को लाभ हुआ, तो, कुछ लोगों के कथनानुसार, इसका कारण दूकानदार का परिश्रम, बुद्धिमानी, सद्व्यवहार, पूँजी या मित्रों की सहायता नहीं, किन्तु ईश्वर की इच्छा या दूकानदार के भाग्य का उदय है। अर्थात् सफलता और व्यावहारिक गुणों में कोई कार्य-कारण सम्बन्ध नहीं; किन्तु सफलता और ईश्वरेच्छा में तथा सफलता और भाग्योदय में कार्य-कारण-सम्बन्ध है। यदि भारत पर मुसलमानों की जीत हुई, यदि फ्रान्स में राज्यक्रान्ति हुई, तो लोग ऐतिहासिक कारणों की खोज किये बिना ही यह कह कर चुप हो जाते हैं कि "ईश्वरेच्छा बलीयसी"। वे हर काम में ईश्वर का कर्तृत्व देखते हैं, वे ईश्वर की सारी इच्छाओं, अनिच्छाओं और प्रेरणाओं को जानने का दम भरते हैं। इस दशा में उनका झटपट यह कह देना कि ईश्वर अमुक काम इस प्रयोजन से और अमुक इस प्रयोजन से करता है, सर्वथा स्वाभाविक है। बड़े मजे की बात तो यह है कि जो लोग एक क्षण ईश्वर को अतर्क्य, अज्ञेय, अचिन्त्य बतलाते हैं वही दूसरे क्षण ऐसे ढँग से बात-चीत करते हैं मानों वे ईश्वर के साक्षात् प्राइवेट-सेक्रेटरी ही तो हैं। ग़रज़, इस प्रकार के ईश्वर-वादियों के लिए समाजशास्त्र की रचना नहीं हुई। अच्छा तो क्या समाजशास्त्री होने के लिए नास्तिक होना आवश्यक है? नहीं। यदि आप हृदय से विश्वास करते हैं कि परमात्मा अज्ञेय नहीं तो दुर्ज्ञेय अवश्य है। यह इच्छा या सनक से नहीं, किन्तु, निश्चित सिद्धान्तों और नियमों के द्वारा कार्य करता है। उन नियमों का पता लगाना हमारा कर्तव्य है। उनका पता सत्य बातों के एकत्रीकरण, वर्गीकरण और तत्सम्बन्धी तुलनात्मक विचारों से ही लग सकता है। यदि आप पूर्वोक्त विश्वास पर दृढ़ रहें तो आप सच्चे ईश्वरवादी और सच्चे समाजशास्त्री भी हो सकते हैं।

एक और भी सिद्धान्त समाजशास्त्र के मूलाधार का ही विरोधी है। यह महान् पुरुषों की उपासना का सिद्धान्त है। कार्लायल नामक विद्वान् कहता है—"मेरी समझ में मनुष्य-जाति का सारा इतिहास अन्ततः महान् पुरुषों का ही इतिहास है।" हिन्दू कहते हैं कि एक शङ्कराचार्य ने बौद्धधर्म को सदा के लिए भारत से निकाल दिया। ईसाई कहते हैं कि एक ईसामसीह ने सारे संसार की काया-पलट दी। आर्यसमाजी कहते हैं—"एक स्वामी दयानन्द ने सारे भारत को जगा दिया। जो कुछ उन्नति आप देखते हैं उन्हीं की दया का फल है। यदि वे न उत्पन्न होते तो देश अन्धकार में पड़ा रहता।" कुछ लोगों की धारणा है कि अकेला एक मनुष्य करोड़ों मनुष्यों के जीवनक्रम में सदा के लिए या बहुत दिनों के लिए व्यापक परिवर्तन कर सकता है। अतएव सामाजिक परिवर्तनों के कारण जानने के लिए आप को सामाजिक शक्तियों और प्रभावों की ओर जाने की—सामाजिक सत्यों की छानबीन करने

की—आवश्यकता ही नहीं। केवल महान् पुरुषों के जीवन की ओर दृष्टि डालने की आवश्यकता है।

यह धारणा इतनी व्यापक क्यों है? एक तो असभ्य जातियों के इतिहास में नेताओं के लड़ाई-झगड़े छोड़ कर और कुछ है ही नहीं। हम समझ लेते हैं कि असभ्यों के इतिहास में जो बात दृष्टिगोचर होती है वही सभ्यों के इतिहास में भी विद्यमान होगी। दूसरे, सब लोग क़िस्से-कहानियाँ बहुत पसन्द करते हैं; व्यक्तिगत कार्यों की ओर बहुत आकृष्ट होते हैं और यह विश्वास रखते हैं कि मनुष्य-समाज में जो कुछ हुआ है और हो रहा है वह या तो ईश्वर की या कुछ इने गिने महात्माओं ही की माया है। तीसरे, हमारी वर्तमान शिक्षा के क्रम में—साहित्य और इतिहास में—बड़े बड़े लोगों के नाम, धाम, युद्ध आदि पर ही विशेष ज़ोर दिया जाता है। इतिहास और सभ्यता-सम्बन्धी प्रश्नों का बहुत ही सीधा सादा उत्तर आप को इस सिद्धान्त से मिल जाता है। अमुक बात क्यों हुई? अमुक महा-पुरुष के कारण, इत्यादि इत्यादि। अधिकांश लोगों को सामाजिक बातों का इतना कम पता है और पता लगाने की वे इतनी कम इच्छा रखते हैं कि वे ऐसे उत्तरों से ही सन्तुष्ट हो जाते हैं।

पर यदि थोड़ा सा भी विचार किया जाय तो इन की असत्यता और अपूर्णता प्रकट हो जाय। सामाजिक अवस्था ही महान् पुरुषों की महिमा का कारण होती है। अफ़रीक़ा के जङ्गली लोगों के बीच कालिदास-प्रतिभाशाली कवि का उत्पन्न होना असम्भव है। टापू के निवासी अभी इतने असभ्य हैं कि उनके बीच शेक्सपियर या गेटे नहीं हो सकते। यदि मान भी लें कि बन्दरों के बीच से कोई महा-कवि पैदा हो सकता है तो बहुत विकसित और ज्ञान-भाण्डार के बिना वह करेगा क्या? सैकड़ों वर्षों के विचार, सिद्धान्त, साहित्य और सभ्यता के बिना, जिनकी यथेष्ट सहायता ही कविता सम्भव है, वह कुछ भी न कर सकेगा। यदि भाव-पूर्ण कविता समझने और पढ़ने वाले ही होंगे तो वैसी कविता का निर्म्माण ही न होगा। वैसे ही वीर और बुद्धिमान् से बुद्धिमान् सेनापति भी तो और समाज की परिस्थिति के प्रभाव से ही उत्पन्न होता है। वह भी वीर, साहसी और आज्ञाकारी सेनाध्यक्षों के बिना, विविध प्रकार के शस्त्रास्त्र और गोला-बारूद के बिना, फ़ौजी सामग्री के बिना, और उस राष्ट्र के बिना जिससे ये सब चीज़ें हमें मिलती हैं कुछ नहीं कर सकता। सारांश यह कि महान् पुरुषों के कार्य भी समाज के अङ्ग-प्रत्यङ्ग परिस्थितियों, विचारों और भावों पर अवलम्बित रहते हैं। इन बातों की उत्पत्ति, विकास या इतिहास से और महापुरुषों के जीवन-चरित पढ़ने से आप कभी नहीं समझ सकते। इसके लिए तो आपको समाज-शास्त्र की उसी प्रणाली से काम लेना होगा जिसका ज़िक्र ऊपर किया जा चुका है।

समाज-शास्त्र के विरोधियों का एक दल और भी है। यह कहता है कि समाज के मनुष्य कार्य करने के लिए स्वतन्त्र हैं, वे चाहे जैसी संस्था बनावें और चाहे जिस रास्ते चलें। उन्हें ऐसा करने का अधिकार है। अतएव आप यह नहीं कह सकते हैं कि सामाजिक मामलों में निश्चित नियमों के अनुसार ही हेर फेर होते हैं। यह प्रश्न बड़ा जटिल है कि मनुष्य कार्य करने में वास्तव में पूर्ण स्वतन्त्र है या नहीं। न तो यहाँ इसके लिए स्थान ही है और न इस अवसर पर इस प्रश्न पर विचार ही किया जा सकता है। तथापि विरोधियों से इस प्रकार निवेदन किया जा सकता है—हाँ अपने चारों ओर आँख उठा कर देखिए। यदि कोई मनुष्य मार्ग में अपनी ओर घुड़सवार या मोटर आते देखेगा तो वह ज़रूर हट जायगा। यदि कोई चीज़ पड़ोस की दूकान में २५) में मिलती और वही किसी दूर की दूकान में २०) में, तो पहली ही दूकान से उसे ख़रीदेगा। यदि

कोई मकान बेच रहा है और एक मनुष्य उसे १०००) में और दूसरा २०००) में लेने को तैयार है तो वह दूसरे ही के हाथ उसे बेचेगा। अर्थात् यह प्रायः निश्चित और व्यापक नियम है कि मनुष्य अपनी रक्षा का उपाय करता है और हानि के बदले लाभ उठाने का प्रयत्न करता है। यदि व्यक्तियों के व्यवहार में निश्चित और व्यापक नियम प्रचलित हैं, तो मनुष्य-समूह में भी वे अवश्य ही प्रचलित होंगे और अधिक निश्चय और दृढ़ता से प्रचलित होंगे। कारण यह है कि नियमों की विरोधिनी विशेषतायें, जो व्यक्तियों में होती हैं, जन-समूह की विशेषताओं में दब जाती हैं। क़ानून है कि जो कोई चोरी करेगा जुर्माना देना होगा या जेलख़ाने की हवा खानी होगी, और जो हत्या करेगा उसे फाँसी मिलेगी। आप को विश्वास है कि दण्ड के भय से यदि सब नहीं तो अधिकांश मनुष्य चोरी और हत्या से दूर रहेंगे। अर्थात् यद्यपि किसी एक व्यक्ति के विषय में पूर्ण निश्चय से यह नहीं कहा जा सकता कि वह दण्ड के भय से अपराध न करेगा, पर समूह के विषय में—अधिकांश मनुष्यों के विषय में—अवश्यही कहा जा सकता है। जब दण्ड के भय का इतना प्रभाव है तब व्यापक सामाजिक शक्तियों का प्रभाव और भी अधिक होगा। यह अनुमान सर्वथा उचित है।

कुछ लोग यह भी कहते हैं कि समाज-शास्त्र बहुत सी बातों का निश्चय पूर्णरूप से नहीं कर सकता। इस लिए वह शास्त्र की पदवी का अधिकारी नहीं। हम पूछते हैं कि क्या मानस शास्त्र अपने विषय की सभी बातों का पूर्ण निश्चय कर सकता है? क्या भूगर्भ शास्त्र की बहुत सी बातें अब तक थोड़ी बहुत अनिश्चित नहीं? तो फिर समाजशास्त्र के साथ इतनी सख़्ती क्यों? यह तो और शास्त्रों से भी कहीं अधिक पेचीदा है। और, विरोधियों को कम से कम इतना तो मानना ही पड़ेगा कि जिस क्षेत्र में यह सामान्यतः निश्चित है उस क्षेत्र में यह शास्त्र अवश्य है। जैसे जैसे समय बीतता जायगा वैसे वैसे यह भी और शास्त्रों के सदृश उन्नत और परिपक्व होता जायगा।

बस इतने ही विचार से पता लग गया कि समाजशास्त्र के अस्तित्व में शङ्का नहीं। वह अवश्य है। तो फिर शिक्षित और समझदार आदमी भी क्यों कह बैठते हैं कि समाजशास्त्र कोई चीज़ नहीं? बात यह है कि वे भूल जाते हैं कि सामाजिक बातें और आज कल "ऐतिहासिक" कही जानेवाली बातें बिलकुल ही पृथक् पृथक् श्रेणी की बातें हैं। अमुक राजा कब पैदा हुआ, कहाँ पैदा हुआ, कब मरा, क्यों मरा, कैसे मरा, कहाँ मरा, कहाँ दफ़न किया गया, उसकी सेना में कितने पैदल और कितने सवार थे। इस प्रकार की लचर "ऐतिहासिक" बातों के सम्बन्ध में व्यापक और निश्चित नियम किये ही नहीं जा सकते। पर धर्म, समाज-सङ्गठन, समाज के अङ्गों के कार्य, वृद्धि, ह्रास, राजनैतिक प्रगति, व्यापार तथा उद्योग धन्धे की उन्नति और अवनति इत्यादि के विषय में नियम या सिद्धान्त अवश्य ही स्थिर किये जा सकते हैं।०

"सत्यशोधक"

---

# विमाता।

## (१)

विमूषण सत्रह वर्ष का है। काशी के हिन्दू-कालेज में, फ़र्स्ट इयर क्लास एफ० ए० में, पढ़ता है। उसके पिता राममोहन लगभग पचास वर्ष के हैं। पर अपनी अवस्था तथा युवक पुत्र का लिहाज़ न करके उन्होंने परसाल आठ सौ रुपये देकर चमेली नाम की एक सुन्दरी से विवाह कर लिया है। चमेली को विश्वभूषण से अत्यन्त घृणा है।

* लेखक के "समाजशास्त्रसम्बन्ध" के आधार पर।

लेखक

( २ )

इधर विश्वभूषण के विवाह के पैग़ाम आने लगे। यद्यपि विश्वभूषण की इच्छा न थी कि उसका विवाह अभी हो, पर पिता का आग्रह देख कर वह चुप रहा। चमेली इस विवाह की बड़ी विरोधिनी थी। उसे कोई उपाय न सूझता था जिससे वह इस आपत्ति को टालती। कई बार इसने लड़के के पढ़ने में विघ्न पड़ने का भय दिखा कर राममोहन को रोका, किन्तु उसे सफलता न प्राप्त हुई। पुत्र-पुत्री के विवाह को ही अपने कर्तव्य की चरम सीमा मानने वाले माता-पिता के सदृश राममोहन भी अपने विचार पर दृढ़ रहे।

चमेली का हाल इस समय ठीक वैसा ही था जैसा कि वृद्ध की युवती भार्या का होना चाहिए। राममोहन उसे आत्म-समर्पण कर चुके थे। चमेली के गुण-अवगुण देखने की शक्ति का उनके हृदय से लोप हो चुका था। इस दशा में चमेली की पूर्ण स्वाधीनता में केवल विश्वभूषण ही कण्टक हो रहा था। जब से विश्वभूषण के विवाह का प्रस्ताव उठा तब से चमेली की चिन्ता का स्रोत और भी वेग से प्रवाहित होने लगा। अब तक केवल एक विश्वभूषण ही का खटका था, अब एक और भी खटके का उत्थान होने वाला है। इस दूसरे खटके से चमेली की स्वाधीनता के एक-ही लोप हो जाने का डर है। इसी से बचने लिए चमेली ने विश्वभूषण पर एक भयानक लगा दिया। विश्वभूषण ने अपने पक्ष में कुछ कहा। पर राममोहन ने चमेली के पक्ष ही अपना मन्तव्य सुनाया। लाचार होकर ने संसार-सागर में आत्म-निःक्षेप करना उचित समझा। स्वावलम्बन के भरोसे वह -समुद्र की उत्तुङ्ग तरङ्गों में बहने लगा। इस उसने कई सहारे पकड़े, पर विपत्ति में कौन देता है? हम भी एक विपत्तिग्रस्त सुना कर पाठकों का दिल नहीं दुखाना

( ३ )

ऊपर की घटना को हुए दस वर्ष बीत गये प्रयाग के नये वकीलों में प्रसिद्ध वकील बी० बी० त्रिवेदी, एम० ए०, एल-एल० बी० कमरे में बैठे हुए एक मुक़द्दमे के काग़ देख रहे थे। इसी समय प्रयाग के नामी बै श्रीयुत आर० एन० द्विवेदी की गाड़ी आक साती में ठहर गई। उस से उतर कर बैरिस्टर। एक भले आदमी को साथ लिये हुए, त्रिवेदी कमरे में दाख़िल हुए। आगत-स्वागत के ब बैरिस्टर ने कहा—

"काशी में एक भले घर की स्त्री का वि से शरीरान्त हो गया है और विष देने के अपरा उसका पति गिरफ़्तार हुआ है। परसों ही मु की पेशी है। परसों सवेरे मैं काशी पहुँच जाऊँ कल आगरे वाले के मुक़द्दमे की बहस है। मुझे हाज़िर रहना पड़ेगा। इसलिए तुम बनारस जाव और ज़मानत का प्रबन्ध करो। द्दमे का हाल भी अच्छी तरह समझो। फ़िक्र न करो। मैं अभी अपने साथ सब जाता हूँ।"

बैरिस्टर साहब की बात पर "जो आज्ञा" कर त्रिवेदी जी आध घण्टे में ही जाने के लिए तै हो गये और मुवक्किल के साथ बैरिस्टर साह गाड़ी में जा बैठे। गाड़ी स्टेशन की ओर तेज़ी दौड़ने लगी; क्योंकि काशी जाने वाली गाड़ी छू में कुछ ही मिनट बाक़ी थे। गाड़ी मिल गई वकील साहब काशी पहुँच गये।

( ४ )

काशी की फ़ौजदारी अदालत में आज भीड़-भाड़ है। किसी भले आदमी के फँसने कचहरियों में जैसी भीड़ होती है आज भी वैसी ही है। पुलिस ने बड़ी ही मुस्तैदी से की पैरवी की है। लोग समझते हैं कि मुल आज ही दौरा सिपुर्द होगा। हाकिम के आ पर बैरिस्टर द्विवेदी अदालत में पहुँचे। लोगों

ष्टि चारों ओर से उन पर जा पड़ी। ठीक इसी समय उन्हें एकान्त में ले जाकर वकील बी० बी० त्रिवेदी ने उनसे कुछ कहा, जिसे सुन कर उनके चेहरे पर आश्चर्य और चिन्ता के चिह्न झलकने लगे।

यथासमय मुक़द्दमा पेश हुआ। पुलिस की ओर से ज़ोर दिया जाने लगा। कोई तीन घण्टे तक मामला ज़ोरों पर रहा। बाद को बैरिस्टर ने पुलिस की डायरी पेश की। उसमें लिखा था "वारदात के दिन मुलज़िम काशी में न था।" बस, फिर क्या था। यहीं से मुक़द्दमा गिरने लगा और बैरिस्टर के तोरदार जिरह के आगे पुलिस को चुप होना पड़ा। मैजिस्ट्रेट ने मुक़द्दमा ख़ारिज कर दिया। मुलज़िम छोड़ दिया गया।

( ५ )

अदालत से बाहर आकर मुलज़िम अपने बैरिस्टर तथा वकील के पैरों पर गिरने लगा। पर उसे बीच ही में रोक कर बी० बी० त्रिवेदी उसके पैरों पर गिर पड़े। वे बोले—"पिता जी! मैं आप का योग्य पुत्र विश्वभूषण हूँ।" पिता जी ने पुत्र को गले लगाया। जब ये राममोहन बैरिस्टर की ओर फिरे तब उन्हें गले लगा कर बैरिस्टर ने कहा—"भाई साहब! आप मेरे समधी हैं, क्योंकि विश्वभूषण मेरा दामाद है।"

अब राममोहन प्रयाग में त्रिवेणी नहाया और विश्वभूषण के बच्चे को खिलाया करते हैं।

छबीलेलाल गोस्वामी।

---

## पाठकों के प्रति पुस्तक की प्रार्थना।

छप्पय

हे भारती-भक्त! भातृ-वर! भारत-भूषण!

है हम सब की विनय यह तुम्हें मलिन कर से न तुम।
आती है लज्जा हमें होजाती है मलिन हम ॥१॥
हैं हम अबला-जाति अङ्ग सब अबल हमारे।
यह रखिए सब याद मोड़िये हमें न प्यारे!
कीजे नष्ट न आप हमें बहु चिह्न लगा कर।
है यह भारी दोष देखिए ग्रन्थ उठा कर॥
पटिन मृष्ट की याद को मृदुल पत्र सब दीजिए।
कलम कटारी हूल कर प्यारे प्राण न लीजिए! ॥२॥
करो स्नेह जब आप स्नेह तब साथ न लेवो।
हैं हम सब वेदाग न तुम दागी कर देवो॥
सौत आग को दिया कभी मत हमें जलावो।
वैरी जल से मिला न हम को कभी सतावो॥
कभी मूर्ख के हाथ में देवो हमें न भूलकर।
प्राण हमारे व्यर्थ ही लेलेगा वह ये खबर! ॥३॥
जब तुम को कुछ कभी किसी पर रिस है आती।
करता है वह चैन, व्यर्थ हम हैं पिट जातीं।
कभी लगा कर तान मारते हो जो ताज़ी।
गिरती है हा! वज्र सरीखी वह विकराली!
मान हमें बकरन कभी रख देते हो पाय पर।
होता है तन नष्ट यों करो दया हे बन्धु-वर! ॥४॥
बाहर ही जब कभी छोड़ जाते हो प्यारे।
होजाते हैं अङ्ग हमारे न्यारे न्यारे!
रहती हैं हम पड़ी पड़ी तब फड़ फड़ करतीं।
होती हैं अति विकल नहीं कल बिलकुल पड़ती।
एवं आँधी डाल कर चल देते हो बन्धु तुम।
दम घुटती है यों अहो पाती हैं अति दुःख हम! ॥५॥
बतलाती हैं गूढ़ ज्ञान की बातें हमही।
दिखलाती हैं दुःख दलन की घातें हमही॥
देती हैं आदर्श जनों के जीवन हम ही।
लेती हैं पर-अर्थ मात्र को जीवन हम ही॥
सिरहाना तिन को बना करते हो तुम नष्ट क्यों?
दीमक-घूहों से कटा देते हो हा! कष्ट क्यों? ॥६॥
अपने तन को आप स्वच्छ रखते हैं जैसे।
हम भी रक्खी जायँ यही हैं विनती वैसे॥
या धन की ज्यों धार किया करते हैं रक्षा।
त्योंही हम पर करें यही दीजे बर भिक्षा॥

१००

पूरी हमने की हमें आप पापों से मुक्त कमित।
अब कर—जो हित करेगा होगा उसका भी सुहित" ॥७॥
एक हमारी विनय आप यह भी सुन लीजे—
जैसा हम से ज्ञान हमें औरों को दीजे।
इसका सारा-तुच्छ न रखिए कभी छिपा कर।
आप स्वयं ही जन्म नहीं तो जग में आ कर।
फिर भी हैं हम सबों की विनती यह कर जोड़ कर।
दीजे करुणा सर्वदा हे करुणाकर बन्धुवर! ॥८॥

सुखराम चौबे

---

## जापान की राजकीय उन्नति का मूल कारण।

इतिहास में राजकीय हलचलों का विषय सबसे अधिक शिक्षादायक होता है। लार्ड मार्ले अपने एक निबन्ध में लिखते हैं—"The very highest form of all practical energy is the governing of the country." यह सच है। राज्य का प्रबन्ध करने ही में सबसे अधिक व्यावहारिक शक्ति का उपयोग करना पड़ता है। किसी देश अथवा समाज की उन्नति के कारणों का पता लगाना हो तो उसके धर्म और राज्य-सम्बन्धी हलचलों का इतिहास अवश्य देखना चाहिए। योरोप के इतिहास में इन विषयों की अनेक मनोरञ्जक और शिक्षा-दायक बातें पाई जाती हैं। आज इस नोट में यह दिखलाने का यत्न किया जायगा कि पशिया-खण्ड के जापान देश ने, अपनी राजनैतिक हलचल के द्वारा समाज की उन्नति के विषय में, सारे संसार को किस बात की शिक्षा दी है।

जापान में जो राजकीय हलचल हुई है उसकी तुलना संसार के इतिहास में और किसी हलचल से नहीं की जा सकती। यथार्थ में यह अद्वितीय है। योरोप में जो राजनैतिक परिवर्तन हुए हैं उनके कारण लोगों को बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ी हैं, परन्तु जापान में यह बात नहीं हुई। वहाँ राजा और प्रजा दोनों ने मिल कर एक साथ परिवर्तन के लिए प्रयत्न किया है। और, थोड़े ही समय में बिना किसी झञ्झट के उस देश ने अपनी आश्चर्य जनक उन्नति कर ली है।

इस आश्चर्य-जनक उन्नति का मूल कारण क्या? इस विषय की चर्चा के लिए अनेक विद्वानों ने बड़े बड़े ग्रन्थ लिख डाले हैं। संक्षेप में भी उन बातों का उल्लेख करना यहाँ असम्भव सा जान पड़ता है। एक जापानी लेखक ने भी इस विषय पर अपनी सम्मति प्रकट की है। हमारी राय में यह सम्मति सबसे अधिक प्रामाणिक मानी जा सकती है। अतएव इसी के आधार पर जापान की उन्नति के तत्त्व का पता लगाने का यत्न करना चाहिए।

भारत-वासियों के समान जापानी भी अपने राजा को साक्षात् परमेश्वर का अवतार मानते थे। वे लोग भक्ति-पूर्वक अपने राजा की सेवा करना ही परम धर्म समझते थे। राजा की आज्ञा उल्लङ्घन करना बड़ा भारी पाप समझा जाता था। वे लोग राजनैतिक विषयों से अथवा राज्य के प्रबन्ध से बहुत कम सम्बन्ध रखते थे। यदि यह कहा जाय कि उन लोगों की उन्नति और अवनति की सारी ज़िम्मेदारी राजा ने अपने ऊपर ले ली थी तो अतिशयोक्ति न होगी। ऐसी अवस्था में भी जापान के गाँवों में, भारतीय ग्राम-पञ्चायत के समान, एक संस्था थी, जिसके द्वारा उन लोगों को सहकारिता (Co-operation) सदृश अत्यन्त महत्त्व की बातों की शिक्षा मिला करती थी। यही ग्राम-संस्था जापान की राजकीय उन्नति का मूल कारण है। खेद की बात है कि हमारे देश में इस संस्था का सर्वथा नाश हो गया है। यदि यह संस्था अब तक जीवित होती तो इसके आधार पर उन्नति करना सहज काम था। अँगरेज़ ग्रन्थकारों ने लिखा है कि भारत की ग्राम-संस्था को फिर

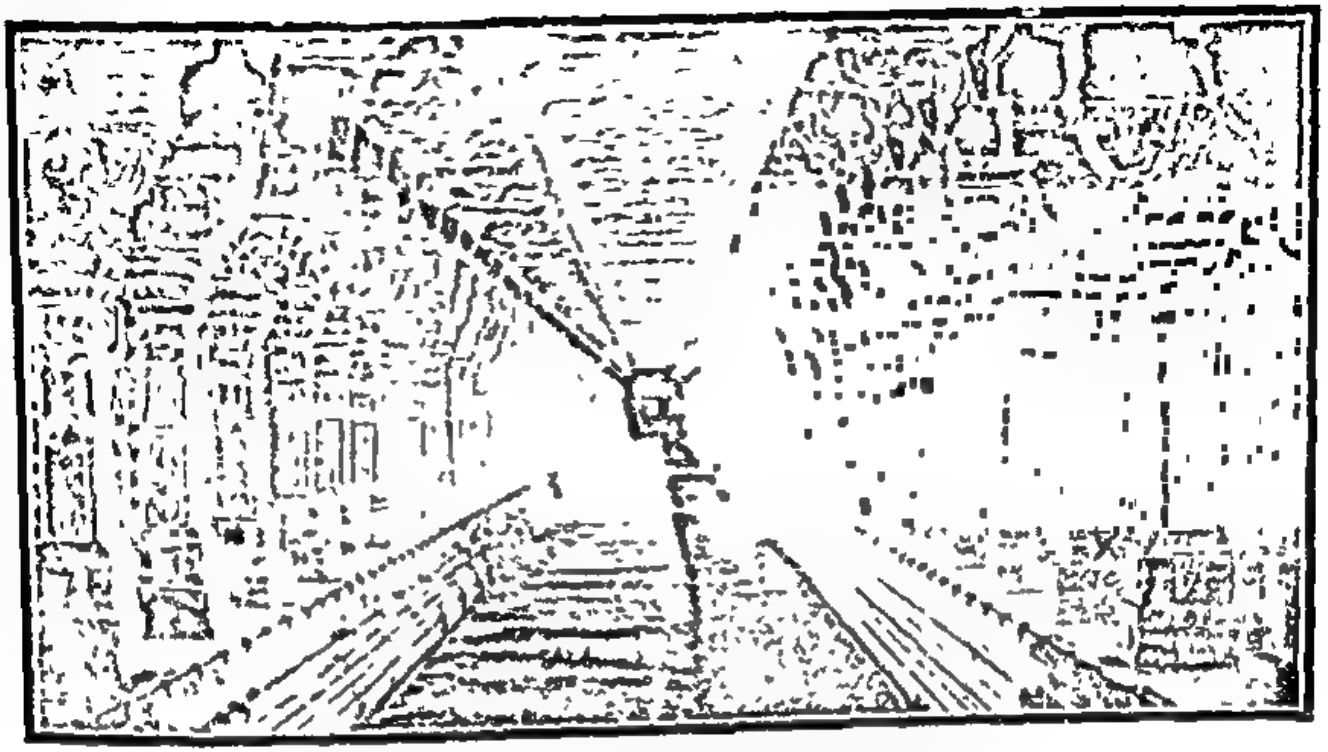

रामेश्वर के मन्दिर के स्तम्भ-समूहों का दृश्य।

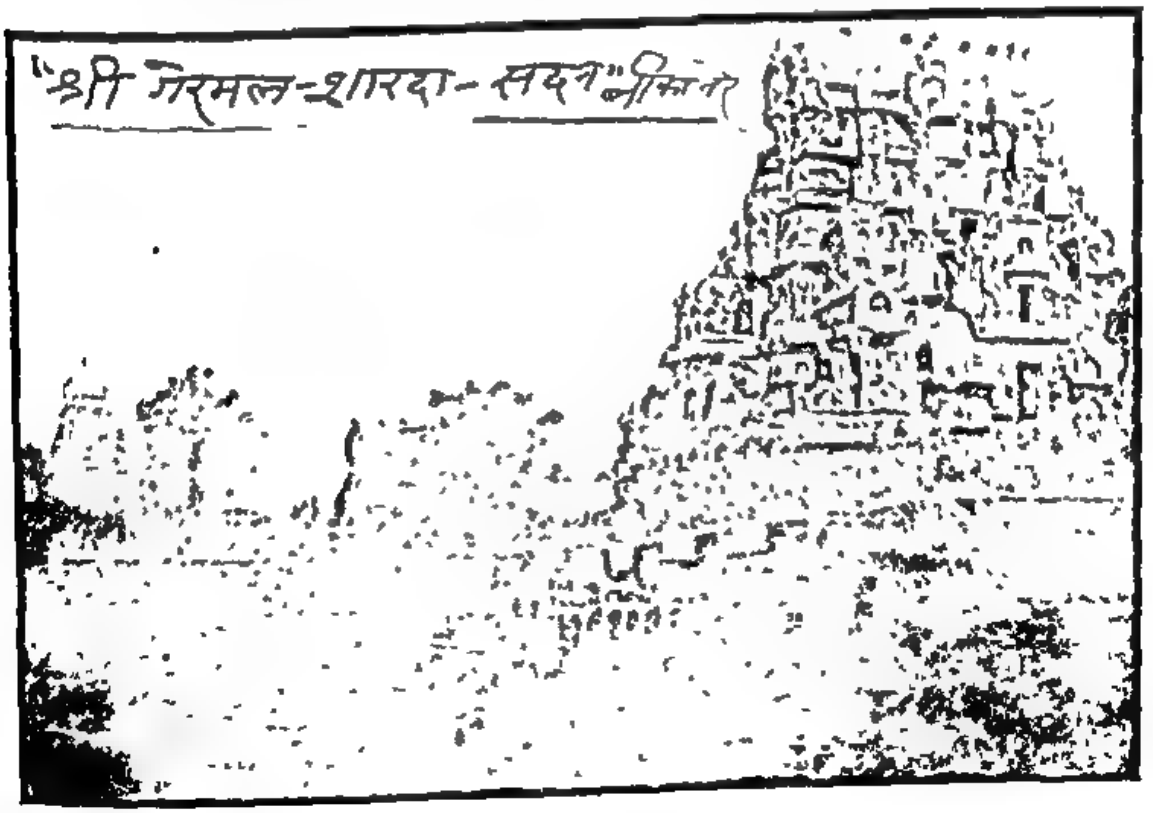


नज़ीर के प्रसिद्ध मन्दिर।

इण्डियन प्रेस, प्रयाग।

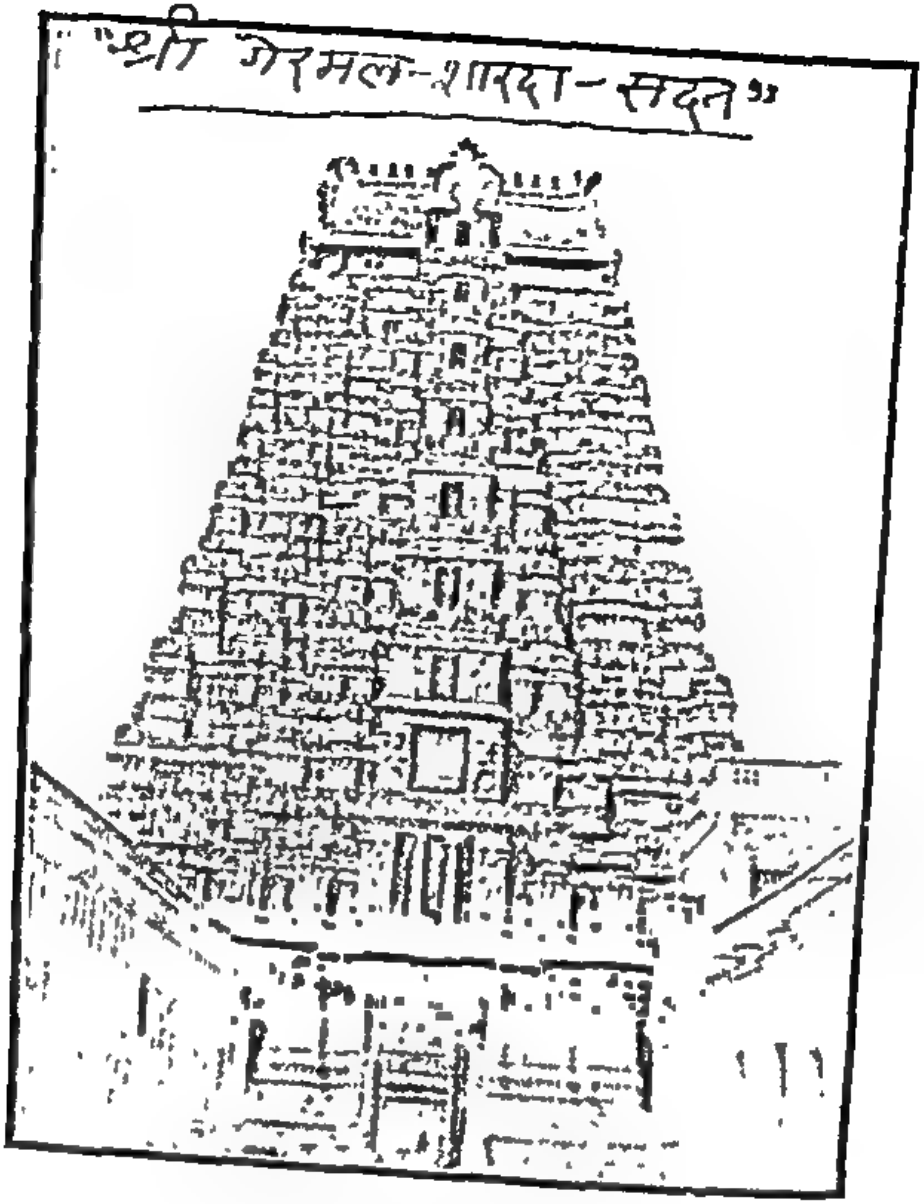


श्रीरङ्म का गोपुरम ।

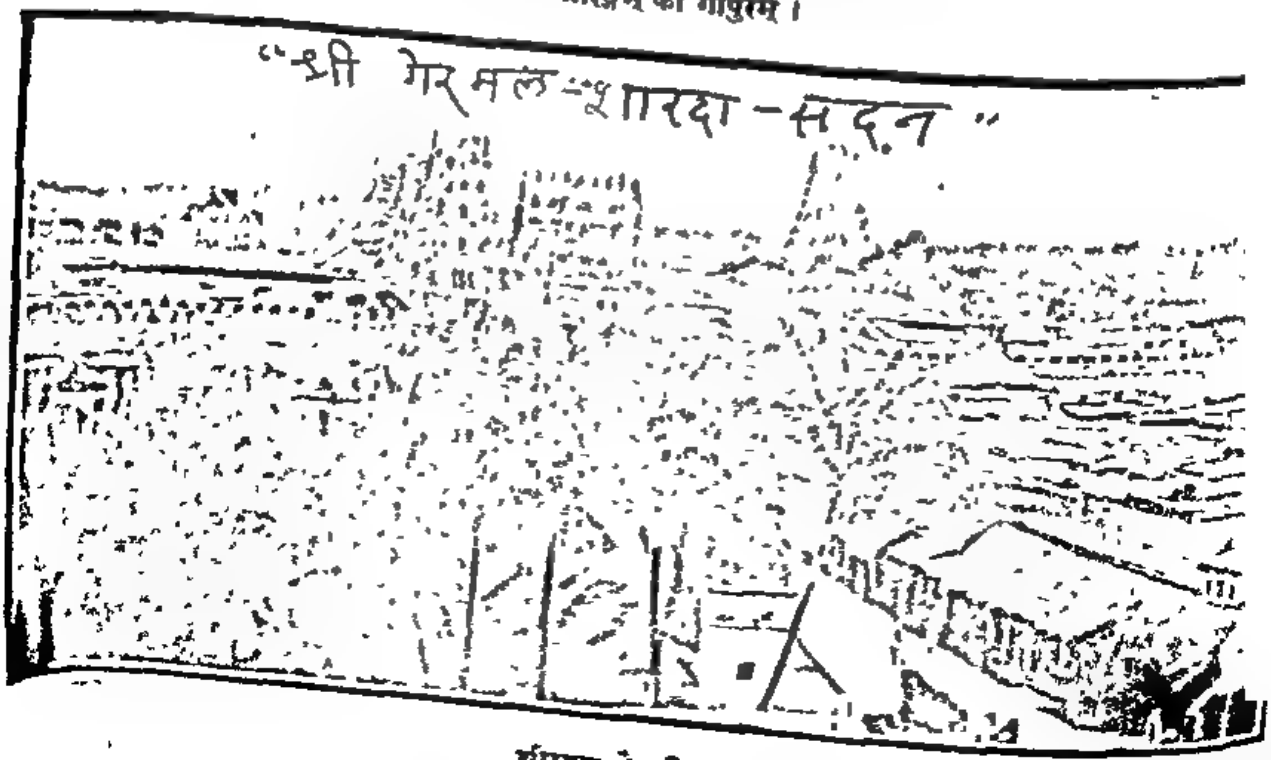

करने का यत्न होना चाहिए। इस विषय पर अधिक लिखने के लिए अवकाश नहीं है। गत अप्रेल की सरस्वती में "देवास-राज्य में पञ्चायत की प्रथा" स्थापित की जाने का हाल लिखा गया है। यदि ऐसी संस्थायें सारे हिन्दुस्तान में स्थापित हो जायँ तो देश की यथार्थ उन्नति होने में विलम्ब न हो। अब जापान की ग्राम-संस्था का कुछ हाल सुनिए।

प्रत्येक गाँव (मूरा) पाँच पाँच आदमियों के हिस्सों में विभक्त था। प्रत्येक हिस्से को जापानी "कुमी" कहते थे। "कुमी" के सदस्यों का मुखिया "कूमी" के सदस्यों में से चुना जाता था। "कूमी" के कार्यों पर इस मुखिया का पूरा दबाव और अधिकार रहता था। नीचे लिखे गये नियमों को सब लोगों को मानना पड़ता था :—

(१) हम में से कोई यदि पितृद्रोही होगा तो उसे हम नहीं छिपायेंगे, इस बात की हम सूचना देंगे।

(२) हम बच्चों को पितृ-मातृ-पूजन, नौकरों को स्वामि-सेवा और एक घर में रहने वालों को शान्ति से रहने की शिक्षा देंगे। प्रत्येक "कूमी" के सदस्य का यह कर्तव्य होगा कि वह एक दूसरे के आचरण और व्यवहार को सुधारे।

(३) "संगाशिर" (कूमी का मुखिया) अपने सदस्यों को आलसी होने से बचायेगा और उसे हर तरह से सुधारने की कोशिश करेगा। यदि उसकी आज्ञा न मानी जाय तो वह "तोदियोरी" (गाँव के मुखिया) के पास रिपोर्ट करेगा।

(४) किसी भी "कूमी" के मेम्बर को यह अख्तियार होगा कि वह दूसरे के लड़ाई-झगड़ों को रोके। न रोक सकने पर वह रिपोर्ट करे।

(५) अपने कुटुम्बी जनों के बीच किसी प्रकार का झगड़ा करने वाले की रिपोर्ट की जायगी।

(६) कहीं लड़ाई झगड़ा न करना चाहिए। यदि झगड़े के लिए यथेष्ट कारण भी हो तो भी रिपोर्ट ही करनी चाहिए। ऐसा न करने पर सख्त सज़ा दी जायगी।

(७) किसी की निन्दा करने की सख्त मुमानियत है।

(८) ईमानदारी से नौकरी करने वाले की और पितृभक्त की सरकार के पास सिफ़ारिश की जायगी।

(९) हमें सबके सुख-दुःख में शामिल होना चाहिए। किसी पशुवृत्ति वाले जंगली आदमी की ज़िम्मेदारी हमी लोगों पर होगी।

(१०) यदि कहीं आग लगे तो सब को अपने घर से पानी लेकर आना चाहिए। आग बुझाने के समय ग़ैर हाज़िर रहनेवाला दण्ड पाने योग्य समझा जायगा।

(११) रात को कहीं चोरी या आक्रमण होने पर उसकी सूचना घण्टा बजा कर दी जायगी। अपराधी को पकड़ने के लिए सुनने वालों को दौड़ना चाहिए। ऐसा न करने वाला, बाद तहक़ीक़ात के, दण्ड का पात्र होगा।

इन नियमों से यह अच्छी तरह मालूम हो सकता है कि जापान के ग्राम-निवासियों को सामाजिक और नैतिक शिक्षा अवश्य मिलती थी। इस शिक्षा का मूलमन्त्र परस्पर सहायता, सहकारिता और सहयोगिता है। और, यही शिक्षा उस देश में राजकीय उन्नति की जड़ कही जा सकती है। अब उन्नीसवीं सदी में वहाँ इस बात की हलचल हुई कि राज्य का प्रबन्ध सिर्फ़ राजा या उसके मन्त्री और बड़े बड़े ज़मींदारों ही के हाथ में न रहना चाहिए, किन्तु अपने देश के शासन में प्रजा के प्रतिनिधियों की सम्मति भी ली जानी चाहिए, तब इस परिवर्तन के लिए उन लोगों को अपने देश-भाइयों के साथ ज़रा भी झगड़ा फ़िसाद नहीं करना पड़ा। सुरुम ही वहाँ प्रतिनिधित्व के तत्त्व पर कौंसिल की स्थापना की गई। प्रजा के प्रतिनिधियों के बल से जापान ने थोड़े ही समय में ही

किले के भीतर राजा का महल देखने योग्य है। यहाँ और बड़े बड़े प्रसिद्ध मन्दिर हैं। शिवालय के सामने ६ फ़ीट का एक विशालकाय नन्दी है। मन्दिर की बनावट पुराने ज़माने की कारीगरी का नमूना है। यहाँ रेशम और क़ालीन का काम अच्छा होता है।

## श्रीरङ्गम्।

इस नाम का एक स्टेशन भी अब खुल गया है। यात्री प्रायः त्रिचिनापली किला (Trichinopoly Fort) स्टेशन पर उतरते हैं और यहाँ से पैदल या सवारी गाड़ी से श्रीरङ्गम् जाते हैं। यहाँ के क़िले की दीवार तोड़ दी गई है। उत्तर की ओर पहाड़ का एक टुकड़ा है, जिसकी ऊँचाई २६० फ़ीट है। यह बड़ा रमणीक स्थान है। चोटी पर गणपति का एक छोटा सा मन्दिर है। बीच में शिवजी का एक मन्दिर है। चोटी तक पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ बनी हैं। लोग आसानी से ऊपर चले जाते हैं। ऊपर पहुँचने पर नीचे बहती हुई कावेरी नदी और श्रीरङ्गजी के विशाल मन्दिर की अद्भुत छटा दीख पड़ती है। यहाँ से दो मील पर श्रीरङ्गम् है। वहाँ श्रीरङ्गजी का मन्दिर है। यह स्थान एक छोटा सा टापू है। उसी पर श्रीरङ्गम् नाम का क़सबा आबाद है। श्रीरङ्गजी का मन्दिर वैष्णवों का सबसे बड़ा मन्दिर कहा जाता है। इसकी ऊँचाई १७० फ़ीट है। यह मन्दिर बहुत विस्तृत है। इस में ५०० फ़ीट का एक बड़ा मण्डप है। इस मण्डप में एक एक शिला के ऊँचे ऊँचे खम्भे कारीगरी की अद्भुत बानगी दिखा रहे हैं। मन्दिर के चारों ओर विशाल फाटक क़िले के समान खड़े हैं। मन्दिर एक मील के घेरे में है। इसको वैकुण्ठ-द्वार कहते हैं। यह मन्दिर सत्रहवीं शताब्दी का बना कहा जाता है। यह बड़ा ही रमणीक स्थान है। चारों तरफ़ कावेरी नदी बहती है। महात्मा रामानुजाचार्य यहीं हुए हैं। उन्होंने १२० वर्ष की अवस्था में यहीं समाधि लगाई थी। वैकुण्ठ-एकादशी को यहाँ बड़ा पर्व होता है और दूर दूर से यात्री उत्सव में आते हैं।

## मदुरा (Madura)

यह भी बहुत प्राचीन स्थान है। इसको दक्षिणी भारत का एथन्स (Athens of South India) कहते हैं। रामेश्वर के यात्री यहीं से हो कर आते जाते हैं। यहाँ सुन्दरेश्वर और मीनाक्षी का एक बड़ा विशाल मन्दिर है। दक्षिण के मन्दिरों में यह बहुत अच्छा मन्दिर समझा जाता है। यह मन्दिर लम्बान में ३०० गज है। बीच में १००० खम्भे का एक बड़ा मण्डप है, जिसको आर्यनायक ने १५५० ईसवी में बनवाया था। मन्दिर की बनावट और कारीगरी हिन्दुस्तान की शिल्प-कला के महत्त्व की गवाही दे रही है। इसी मण्डप में बाज़ार लगता है, जिसमें सब तरह की चीज़ें बिकती हैं। बाज़ार का दृश्य बड़ा रमणीक मालूम होता है। विशाल फाटक के शिखर पर तरह तरह की चित्र-विचित्र रँगीली मूर्तियाँ हैं। यहाँ से एक मील पर एक तालाब है, जिसके मध्य में एक मन्दिर बना है और दोनों ओर कुछ इमारतें हैं। यह स्थान देखने योग्य है। राजा तिरुमल नायक का महल मन्दिर से कुछ दूरी पर है। इस महल की कारीगरी अद्वितीय है। इसके विशाल हाथी के सदृश मोटे मोटे खम्भे अपनी बनावट और मज़बूती के स्वयं ही नमूने हैं। काम ऐसा पुष्ट है कि कभी मरम्मत की आवश्यकता नहीं हुई। इस महल में अब सरकारी दफ़्तर और कचहरी है।

## रामेश्वर।

मदुरा होकर यात्री रामेश्वर पहुँचते हैं। मण्डपम् बीच (Mandpam Beach) नामक जगह तक रेल जाती है। यहाँ से नहर पार करके जहाज़ पर पम्बम् बीच (Pambam Beach) तक जाना होता है। अब कुछ दिन से इस नहर के ऊपर पुल बन गया है और रेल से यात्री सीधे रामेश्वर तक चले जाते हैं। रामेश्वरक्षेत्र ११ मील का एक टापू है। यहाँ १००० फ़ीट में एक बहुत बड़ा विस्तृत

सुशील ने कहा—" ख़बर क्यों न लगेगी। पर, यह न समझिए कि आपके घर के किसी आदमी ने ख़बर दी है"।

योगेन्द्र बाबू फिर हँस कर बोले—"अच्छा भाई, अब मैं तुम से कहता हूँ कि जब तुम्हें अवकाश मिले तब एक बार जाकर उसे देख आना।"

सुशील ने कुछ जवाब न दे कर सामने मेज़ पर पड़े हुए समाचार-पत्र पर दृष्टि डाली।

योगेन्द्र बाबू ने कहा—" अब मेरे कचहरी जाने का समय हो गया। मैं जाता हूँ। तुम तीसरे पहर आओगे न?"

सुशील ने उत्तर दिया—"सुनिए। जब तक मैं यह न जानलूँ कि आप मुझे किस भाव से जाने के लिए कह रहे हैं तब तक मैं इस बात का कुछ भी जवाब न दूँगा। यदि आप मुझे रिश्तेदारी के नाते जाने के लिए कहते हैं तो मैं कदापि न जाऊँगा। पर, यदि एक साधारण डाक्टर जान कर आप मुझे जाने के लिए कहें तो मैं अपने व्यवसाय के अनुरोध से अवश्य ही जाऊँगा।"

इसके बाद प्रायः आध घण्टे तक दोनों साले बहनोई परस्पर वाद-विवाद करते रहे। अन्त में—"रिश्तेदारी के लिहाज़ से नहीं, किन्तु डाक्टरी के लिहाज़ से ही जाऊँगा"—अपनी इसी ज़िद पर सुशील डटे रहे। इस पर योगेन्द्र बाबू झिझला कर बोले—"अच्छी बात है, मैं तुम्हें एक साधारण डाक्टर के तौर पर ही कहता हूँ कि तुम मेरे घर पर रोगी को देखने के लिए आना।" इतने पर भी सुशीलकुमार को सन्तोष न हुआ। उन्होंने फिर कहा—"किस समय आऊँ?" योगेन्द्र बाबू बोले—"तीसरे पहर पाँच बजे।" यह कह कर वे चले गये।

योगेन्द्र बाबू के चले जाने पर सुशील अपने अड़ व्यवहार पर कुछ पछताने लगे। साले का बहनोई होने से क्या, उम्र में योगेन्द्र बाबू सुशील के पिता थे। उनके साथ इतनी हिटाई ठीक नहीं। इसके अलावे जो घटना हो चुकी थी उसे वहीं पर लिख देने से सुशील के इस रूखे व्यवहार का कुछ समर्थन हो जायगा। थोड़े दिनों पहले एक तुच्छ सी बात पर सुशील अपनी स्त्री सरला पर नाराज़ हो गये थे। इसी दशा में एक रोज़ उन्हें उनके सहपाठी मित्र डाक्टर हरेन्द्रनाथ से ख़बर मिली कि सरला का स्वास्थ्य ख़राब है और हरेन्द्र बाबू उसका इलाज कर रहे हैं। पर, इस विषय में न तो सरला ने ही उन्हें कुछ लिखा और न ससुराल वालों ने ही कोई ख़बर भेजी। सुशील ने सोचा, यह सारी करतूत सरला की है। सात आठ रोज़ से सुशील मारे अभिमान के मन ही मन कुढ़ रहे थे कि इतने ही में योगेन्द्र बाबू उनसे मिलने आये। बस, सारा बदला उन्होंने बहन के बदले भाई से ही चुका लिया। क्रोधाग्नि बुझने पर सुशील का हृदय जब कुछ शान्त हुआ तब वे अपने किये पर बड़े लज्जित हुए। वे सोचने लगे कि ख़ैर, हुआ सो हुआ, तीसरे पहर जाकर क्षमा माँग लेने से मामला तय हो जायगा।

( २ )

कचहरी से लौट कर योगेन्द्र बाबू ने अपने घर पर सुशील का सारा हाल कह सुनाया। घरवालों ने मिल कर सङ्कल्प किया कि इस धृष्टता के लिए सुशील को कुछ शिक्षा अवश्य देनी चाहिए। सरला की बड़ी बहन तरला बोली—"बड़े भैया, यह काम तुम हम लोगों पर छोड़ दो। हम डाक्टर साहब को ख़ूब छकायेंगी।"

छोटी बहन कमला बोली—" मैं टीन का कनस्टर काट कर चार रुपये बनाऊँगी। यही डाक्टर बाबू को फ़ीस में दूँगी।"

योगेन्द्र बाबू सुन कर बोले—"टीन के नहीं। इससे उसे उचित शिक्षा न मिलेगी। उसे सचमुच ही चार रुपये फ़ीस के दिये जायँगे। जब वह डाक्टर बन कर आरहा है तब उसके साथ पूरा डाक्टर जैसा बर्ताव होना चाहिए। यह सरला को अपनी पत्नी की तरह नहीं देखना चाहता, तो मैं भी अपनी बहन को उसके सामने न होने दूँगा। सरला पर्दे की ओट में रहेगी"। इस बात पर सब कोई राज़ी

यह मुझे पहले न मालूम था। आज अपने पिताजी वालों से मिल कर तुमने मुझे बहुत अपमानित किया है। जो हो, तुम अब मुझे मुँह दिखलाना नहीं चाहतीं तो मैं भी प्रतिज्ञा करता हूँ कि आजीवन तुम्हारा मुँह न देखूँगा। मेरे और तुम्हारे बीच पति-पत्नी का जो सम्बन्ध था वह अब टूट गया। अब तुम सब तरह से स्वाधीन हो। जो तुम्हारे मन में आवे, करो। तुम यह तो अच्छी तरह से जानती हो कि मेरे कहने और करने में कुछ भी अन्तर नहीं होता। इस समय तुम से नाता तोड़ कर मैं अपने आपको बड़ा सौभाग्यवान समझता हूँ। इति"।

पत्र पढ़ कर सरला कुछ चिन्तामग्न हो गई। उसे ख़बर ही न थी कि इस तुच्छ बात पर सुशील इतने क्रुद्ध हो जाँयगे। इस घटना के कारण यदि सुशील और सरला में सब दिन के लिए वैमनस्य हो जाय तो इसके लिए सरला ही पूर्णरूप से अपराधिनी है। सरला तो पहले ही इस भावी विपद की आराङ्का कर रही थी। यह सरला को इस बात की चेतावनी भी दे चुकी थी।

इतने ही में सरला के आजाने पर तरला बोली—"डाक्टर साहब तो बड़े बिगड़े हैं। वे इस तरह क्रुद्ध हो जाँयगे, यह जानती तो ऐसा खेल न खेलती"।

सरला की आँखें भर आईं। बड़े ही करुण-स्वर में वह कहने लगी—"दीदी, अब क्या किया जाय"?

तरला उसे साहस दे कर बोली—"तू इतना घबराती क्यों है? अब उन्हें यह मालूम हो जायगा कि परदे की आड़ में मैं थी, तब तुझ पर उनका कोप न रहेगा। इसके लिए तो मुझे ही डाक्टर साहब को मनाना पड़ेगा। किसी तरह वे एक बार फिर यहाँ आजायँ तो मैं सब बात बनाऊँ"।

"आप कहें मैया से कहूँ, मुझे अभी यहाँ लिवा दें"।

"पागली कहीं की। इस से तो वे और भी बिगड़ेंगे।"

दोनों बहनों में ये बातें हो ही रही थीं कि योगेन्द्र बाबू वहाँ आ गये। वे कहने लगे—"तुम ने मिल कर बेचारे सुशील को आज पागल किया। यह जो व्यवस्था-पत्र लिख गया है, वह मेज़ पर पड़ा था। सन्ध्या को सरला का जानने के लिए हरेन्द्र बाबू आये तो उन्होंने यह पत्र पढ़ कर कहा—"सरला की इस तुच्छ बीमारी पर सुशील बहुत घबरा गये हैं। घबराहट में वे ऐसा व्यवस्था-पत्र लिख गये। उसमें लिखी हुई दो दवायें ऐसी हैं कि आपस में मिलने पर ज़हर बन जाता है। हरेन्द्र को भीतर का हाल तो कुछ मालूम ही न था। कह रहे थे कि इसी लिए डाक्टर लोग घर में डाक्टरी नहीं करते"।

तरला बोली—"व्यवस्था पत्र हम सब को एक खिलवाड़ था। नहीं तो आज बड़ी भारी दुर्घटना हो गई होती।"

"हरेन्द्र बाबू कहते थे कि यह व्यवस्था-पत्र उनके पास भेज दो। वे पढ़ कर इसे सुधार देंगे।" यह कह कर योगेन्द्र बाबू ज़ोर से हँसने लगे।

"वह व्यवस्था-पत्र है कहाँ?"

"मेरे पास है"।

"उसे मुझे दे दीजिए"।

"क्यों, उस पर फिर नमक-मिर्च लगाओगी"?

"नहीं, नमक-मिर्च न लगाऊँगी। अबकी बार जाल में फँसे ही मर हैं। अब उन्हें यहाँ बुला लाऊँगी।"

योगेन्द्र बाबू के चले जाने पर सरला से तरला बोली—"सरला, डाक्टर साहब की दवा का सब सामान ठीक कर रक्खो। वे अभी आने वाले हैं।"

"न जाने, फिर तुम कौन सा जाल रचोगी"? स्नेहभरी चितवन से छोटी बहन की ओर देख कर तरला बोली—"नहीं, नया जाल न रचूँगी। जो जाल रच चुकी हूँ उसी का फैसला करूँगी

हो गये। क्योंकि इस से डाक्टर बाबू को शिक्षा के साथ कुछ सज़ा भी मिल जायगी।

घर भर जब यह निश्चय कर के ख़ुश हो रहे थे तब बेचारी सरला बड़ी ही घबराहट में थी। वह मन ही मन सोचती थी—"बड़े भैया के अपमान का बदला तो लिया जायगा, किन्तु मेरे लिए इस परिणाम अच्छा न होगा। दोनों बहिनों को हँसी करने का तो अच्छा मौक़ा मिला, पर इसके लिए वे मुझे ही अपराधिनी ठहरायँगी।" यह सोच कर सरला बहुत डरी। सरला से वह गिड़गिड़ा कर कहने लगी—"दीदी, तुम यह क्या कर रही हो? मैं परदे की ओट से साड़ी न दिखाऊँगी।"

सरला हँस कर बोली—"क्यों, परदे की ओट से क्या शर्म मालूम होगी? अच्छा तो सामने खड़ी हो जाना।"

"यह बात अच्छी न होगी"।

सरला भौंह सिकोड़ कर बोली—"ये तो बड़े भैया की बात का कुछ ख़याल न कर के सब तरह अपनी ही ज़िद पर डटे रहे, यह तो शायद तेरी समझ में अच्छी बात है, पर, हम सब यदि बहनोई से कुछ हँसी करें तो तुझे अच्छी न लगेगी"।

"तुम सब जो चाहो करो, किन्तु मुझे इस बखेड़े में मत डालो। ये तो पहले ही से मुझ पर रुष्ट हैं, इस बात से और भी नाराज़ हो जायँगे। ऐसा व्यवहार से उनको रुष्ट नहीं करना चाहती।"

सरला कुछ सोच कर बोली

है। अच्छा, तुझे [illegible]

[illegible]

(३)

तीसरे पहर पाँच बजे सुशीलकुमार की [illegible] उनकी ससुराल के दरवाज़े पर आ लगी। सुशी[illegible] के बैठक में पहुँचते ही योगेन्द्र बाबू के छोटे [illegible] नरेन्द्र बाबू ने ज़ोर से कहा—"अरे बुद्धू, [illegible] जाकर कहदे कि डाक्टर साहब आ गये"।

सुशील समझ गये कि सवेरे वाली [illegible] बदला शुरू हो गया। थोड़ा बहुत हँसी-[illegible] उन्हें अवश्य ही करना होगा, क्योंकि [illegible] ऐसा है। इतने ही में भीतर से अमला [illegible] बोली—"डाक्टर साहब भीतर चलिए"। सुशील हँस कर बोले—"चलो"। पर, भीतर जाने सुशील को मालूम हो गया कि मामला टेढ़ा है। सदा की भाँति उनकी सलहजों में से [illegible] उनका स्वागत करने के लिए नहीं आई। [illegible] और नौकरानी भी उन्हें देखते ही ये जानते की सी हो कर एक ओर खड़ी हो गई।

एक कमरे के बीचों-बीच हरे रङ्ग का एक [illegible] पड़ा हुआ था। परदे के पास एक कुर्सी रक्खी है। अमला के कहने पर सुशील उसी पर बैठ [illegible] अमला बोली—"दीदी, डाक्टर साहब आये हैं। [illegible] अपना हाथ निकाल दो।"

तुरन्त ही चूड़ी-कङ्कण और कङ्के पहने हुए [illegible] गोरी सी कलाई परदे के भीतर से बाहर [illegible] पड़ी। सुशील तो पहले ही से रुष्ट हो रहे थे। [illegible] को देख कर वे मारे क्रोध और अपमान [illegible] से तन गये। कमरे के बाहर [illegible] धीमी हँसी की आवाज़ आने लगी। सुशील [illegible] असमञ्जस सा हो कर अपने हाथ में लिये हुए [illegible] को बजाने लगे।

सुशील का चेहरा मैले दुर [illegible] हो गया। इस नीच व्यवहार से [illegible] दिमाग़ बिगड़ उठा। उन में [illegible] परदे को फाड़ कर फेंक दें। इस पर [illegible] से बगल वाले दर की [illegible]

के लिए जो नाटक रचा गया था सरला ही उसकी प्रधान अभिनेत्री थी।

फिर रुपयों को बजाती हुई अमला बोली—"डाक्टर साहब, क्या सोच रहे हैं? नब्ज़ देखिए।"

सुशील ने अपनी सामयिक उत्तेजना को रोक कर मन ही मन निश्चय कर लिया कि दूसरे समय इस अपमान का बदला अच्छी तरह लिया जायगा। पर इस समय तो वे डाक्टर बन कर आये हैं। डाक्टर ही की तरह उन्हें आचरण करना उचित है। वे तो आप ही कह चुके हैं कि मैं एक डाक्टर की हैसियत से आऊँगा, न कि रिश्तेदार की तरह। अब यदि उनके साथ कोई वैसा ही व्यवहार करे तो वे कैसे उसका प्रतिवाद कर सकते हैं? अन्त में वे मन लाड़ी देख कर सुशील चलने के लिए उठ खड़े हुए। इस पर अमला कहने लगी—"अभी जाइए मत, एक बार दीदी के हृदय की भी परीक्षा करनी होगी।"

इस दशा में, अर्थात् बिना रोगी के बाहर निकले, कैसे उसकी हृदय-परीक्षा हो सकती है? यह बात सुशील की समझ में अब तक न आई। वे चिरक हो कर अमला की ओर देखने लगे।

अमला बोली—"दीदी, तुम खड़ी हो जाओ। डाक्टर साहब तुम्हारी हृदय परीक्षा करेंगे।" फिर बड़ी फुर्ती से सुशील की तरफ़ देख कर—"आप इस सूराख़ से अपने 'स्टेथस्कोप' को भीतर कर दें"—यह कह कर उसने परदे का छेद सुशील के सामने कर दिया।

बाहर फिर भी धीमी हँसी की आवाज़ चारों तरफ़ गूँज गई। सुशील का चेहरा जलते हुए अङ्गार की भाँति लाल हो गया। पर वे बेचारे सब तरह से लाचार थे। हृदय-परीक्षा का खेल खतम होने पर—"यह लीजिए डाक्टर साहब अपनी फ़ीस"—कह कर अमला ने चार रुपये सुशील के हाथ पर रख दिये।

सुशील रुपयों को जेब में रख कर एकदम बाहर चले गये। बदला लेने के लिए उनका चित्त व्याकुल हो उठा। मन में उन्होंने निश्चय कर लिया कि ऐसा बदला लूँ कि सरला को जीवन-पर्य्यन्त अनुताप करना पड़े। इतना दम्भ, इतना अहङ्कार!

सुशील गाड़ी पर चढ़ने को थे ही कि अमला ने आ कर उन्हें रोक लिया। इतने पर भी अमला के हाथ से उन्हें छुट्टी न मिली। फिर उसने एक ज़हरीला तीर छोड़ा—"वाह डाक्टर साहब, आप तो फ़ीस लेकर चलते बने। पर, व्यवस्था-पत्र लिखा ही नहीं।"

सुशील ने लौट कर एक व्यवस्था-पत्र लिख दिया। इस तरह डाक्टर के सब कर्त्तव्यों का पालन उन्होंने अच्छी तरह कर दिया।

सुशील फिर से जाने ही को थे कि अमला बोली—"रोगी को आप ने कैसा पाया?"

"आश्चर्यमय"

"यह कौन सा रोग है?"

"अस्वाभाविक"

सुशील के चले जाने पर सरला बोली—"उस समय तो मेरी हँसी रोके न रुकती थी।"

सरला कहने लगी—"पर, मुझे अत्यन्त कष्ट हो रहा था।"

(४)

सन्ध्या-समय खिली हुई चाँदनी में छत पर बैठी हुई सरला वायु सेवन कर रही थी। इतने ही में सरला आ कर रोती आवाज़ से उससे कहने लगी—"देखो दीदी, कैसा अनर्थ हो गया। तुम ने तो हँसी समझी थी"।

"साफ़ कहती क्यों नहीं, क्या बात है?"

"यह लो, यह पत्र आया है। पढ़ देखो।"

यह कह कर सरला एक पत्र सरला के सामने फेंक कर चली गई। सरला ने कमरे में आकर दीपक के उजियाले में उसे पढ़ा। सुशील ने निम्न लिखित पत्र सरला को लिखा था—

"सरला,

कुछ दिनों से तुम्हारे कठिन हृदय का परिचय मुझे मिल रहा है। किन्तु उसमें इतना विष भरा है,

यह मुझे पहले न मालूम था। आज अपने पितृालय वालों से मिल कर तुमने मुझे अत्यन्त अपमानित किया है। जो हो, तुम अब मुझे मुँह दिखलाना नहीं चाहती तो मैं भी प्रतिज्ञा करता हूँ कि आजीवन तुम्हारा मुँह न देखूँगा। मेरे और तुम्हारे बीच पति-पत्नी का जो सम्बन्ध था वह अब टूट गया। अब तुम सब तरह से स्वाधीन हो। जो तुम्हारे मन में आवे, करो। तुम यह तो अच्छी तरह से जानती हो कि मेरे कहने और करने में कुछ भी अन्तर नहीं होता। इस समय तुम से नाता तोड़ कर मैं अपने आपको बड़ा सौभाग्यवान् समझता हूँ। इति"।

पत्र पढ़ कर तरला कुछ चिन्तामग्न हो गई। उसे ख़बर ही न थी कि इस तुच्छ बात पर सुशील इतने क्रुद्ध हो जायँगे। इस घटना के कारण यदि सुशील और सरला में सब दिन के लिए वैमनस्य हो जाय तो इसके लिए तरला ही पूर्णरूप से अपराधिनी है। सरला तो पहले ही इस भावी विपद की आशङ्का कर रही थी। वह तरला को इस बात की चेतावनी भी दे चुकी थी।

इतने ही में सरला के आजाने पर तरला बोली—"डाक्टर साहब तो बड़े बिगड़े हैं। वे इस तरह ख़फ़ा हो जायँगे, यह जानती तो ऐसा खेल न खेलती"।

सरला की आँखें भर आईं। बड़े ही करुण-स्वर में वह कहने लगी—"दीदी, अब क्या किया जाय"?

तरला उसे ढाढ़स दे कर बोली—"तू इतना घबराती क्यों है? जब उन्हें यह मालूम हो जायगा कि परदे की आड़ में मैं थी, तब तुझ पर उनका कोप न रहेगा। इसके लिए तो मुझे ही डाक्टर साहब को मनाना पड़ेगा। किसी तरह वे एक बार फिर यहाँ आजायँ तो मैं सब बात बनालूँ"।

"तुम बड़े भैया से कहो, मुझे अभी यहाँ भिजवा दें"।

"पगली कहीं की। इस से तो वे और भी बिगड़ेंगे"।

दोनों बहनों में ये बातें हो ही योगेन्द्र बाबू वहाँ आ गये। वे कहने लगे—"तुम ने मिल कर बेचारे सुशील को आज पागल कर दिया। यह जो व्यवस्था-पत्र लिख गया है, बाहर बैठ की मेज़ पर पड़ा था। सन्ध्या को सरला का हा जानने के लिए हरेन्द्र बाबू आये तो उन्होंने व्यवस्था पत्र पढ़ कर कहा—"सरला की इस तुच्छ बीमारी पर सुशील बहुत घबरा गये हैं। घबराहट में वे ऐसा व्यवस्था-पत्र लिख गये हैं उसमें लिखी हुई दो दवायें ऐसी हैं कि जिन आपस में मिलने पर ज़हर बन जाता है। हरेन्द्र को भीतर का हाल तो कुछ मालूम ही न था। कह रहे थे कि इसी लिए डाक्टर लोग अपने में डाक्टरी नहीं करते"।

तरला बोली—"व्यवस्था पत्र हम सब के एक खिलवाड़ था। नहीं तो आज बड़ी भारी टना हो गई होती।"

"हरेन्द्र बाबू कहते थे कि यह व्यवस्था-पत्र पास भेज दो। वे पढ़ कर इसे सुधार देंगे।" कह कर योगेन्द्र बाबू ज़ोर से हँसने लगे।

"वह व्यवस्था-पत्र है कहाँ?"

"मेरे पास है"।

"उसे मुझे दे दीजिए"।

"क्यों, उस पर फिर नमक-मिर्च लगाओगी

"नहीं, नमक-मिर्च न लगाऊँगी। अब तक जाल में फँसे ही मर हैं। अब उन्हें यहाँ खींच लाऊँगी।"

योगेन्द्र बाबू के चले जाने पर सरला से बोली—"सरला, डाक्टर साहब की खातिर का सब सामान ठीक कर रक्खो। वे अभी वाले हैं।"

"न जाने, फिर तुम कौन सा जाल रचोगी स्नेहभरी चितवन से छोटी बहन की ओर कर तरला बोली—"नहीं, नया जाल न रचूँ जो जाल रच चुकी हूँ उसी का फैसला करूँगी

महात्मा गोखले की हस्त-लिपि ।

"श्री निर्मल-हार्दा-सदन" बीकानेर

मी ~~[illegible]~~ तथा आपणांसे आपल्या हितासाठी अनेक वार्तालाप करावे असतात. परंतु आपल्या हितास सर्वांगसुंदर करणेकरितां मी ~~[illegible]~~ इच्छितो त्यांतील थोडक्या ~~[illegible]~~ गोष्टी ~~[illegible]~~ ~~[illegible]~~ ~~[illegible]~~

आग्रह-पूर्वक सरला पूछने लगी—"क्या करोगी, रा सुनूँ तो सही।"

"जा यहाँ से, अभी न बताऊँगी।"

रात के दस बज चुके हैं। डाक्टर सुशीलकुमार पने कमरे में आराम-कुरसी पर लेटे हैं। उनका मन न्ता-मग्न है। सरला के दुर्व्यवहार पर क्रोध साथ उन्हें विस्मय भी उत्पन्न हो रहा है। यह नेहमयी लज्जाशीला सरला आज कैसे उनको इस ीति अपमानित कर सकी? काय, वचन, मन से ति-अनुरागिणी सरला दस पन्द्रह दिन के भीतर ी ऐसी पिशाचिनी बन गई! यह सोच कर सुशील ा हृदय व्यथित हो उठा। क्या अभिमान के वशी ूत होकर सरला ने ऐसा आचरण किया? स्त्री ा ऐसा दुरभिमान कदापि क्षमा के योग्य नहीं। म्भव है, सरला अपनी इच्छा के विरुद्ध वैसा ाचरण करने के लिए विवश की गई हो? सरला ैसी सङ्कोचशीला नम्र-हृदया के लिए जैसे यह ुराचरण असम्भव है वैसे ही बड़े भाई और बहनों ी बात टालना भी बड़ा कठिन है।

खुली हुई खिड़की की राह से जो तीन चीज़ें—र्थात् ठण्डी हवा, चन्द्रमा की उजियाली, खिले हुए ूलों की मधुर महक आ रही है वे सब मस्तिष्क ो शीतल करने में समर्थ हैं। इन तीनों की ंयुक्त क्रिया से सुशील का उष्ण मस्तिष्क कुछ ठण्डा ा रहा है। अब उनके मन में कुछ कुछ अनुताप भी ाने लगा है। इतने ही में कमरे का दरवाज़ा खोल कर एक सचेतन पदार्थ उसके भीतर घुस आया। उसे देख कर सुशील चौंक पड़े। यह सचेतन पदार्थ उनके ससुराल का नौकर माधो है। उसके ाथ सुशील के नाम लिखी हुई सरला की एक ुली चिट्ठी है—

"सुशील बाबू,—

तुम सरला के लिए जो दवा लिख गये हो उसकी एक ख़ुराक पिलाते ही सरला की तबीयत बहुत ख़राब हो गई है। उसकी यह हालत देख कर हम सब बहुत ही घबरा रही हैं। तुम जो व्यवस्था-पत्र लिख गये हो उसे माधो के हाथ भेजती हूँ। पढ़ कर देखना कोई तेज़ दवा के कारण तो ऐसा नहीं हुआ। चिट्ठी पढ़ते ही तुम चले आओ और जो तुमसे करते बने करो। देर होने से बड़ी विपद् की सम्भावना है"।

व्यवस्था-पत्र पढ़ते ही सुशील कुरसी से कूद पड़े। अरे, सत्यानाश हो गया। हाय प्यारी सरला! अब कैसे तुझे बचाऊँ? अरे, कौन है दरवाज़े पर? जल्दी गाड़ी लाओ"।

माधो ने कहा—"बाबूजी, हम तो गाड़ी लेई के आया है। आप हाली चल"।

सुशील बड़ी व्यग्रता से आलमारी खोल कर एम्प और कई तरह की दवाओं की शीशियाँ लेकर दौड़ते हुए गाड़ी पर जा बैठे और कोचमैन से कहने लगे—"जल्दी चलो, तुम्हें इनाम मिलेगा"।

बड़े ज़ोर से आवाज़ करती हुई गाड़ी योगेन्द्र बाबू के दरवाज़े पर आ लगी। तरला सरला से बोली—"चुप चाप लेटी रह, ख़बरदार जो हँसी"।

"दीदी"—

"चुप। अरे, जान जायँगे तो भण्डा फूट जायगा।"

"देख फिर कहीं वैसा न"—

"पागल। कहती तो हूँ कि तू बेफ़िक्र लेटी रह।"

तरला सरला के कमरे के दरवाज़े पर खड़ी हो गई। सुशील को लेकर माधो वहाँ हाज़िर हो गया। साँस रोक कर सुशील पूछने लगे—"क्या हाल है?"

तरला अत्यन्त दुःखित भाव से बोली—"हाल तो ख़राब है। चलो, भीतर चल कर देखो।"

लड़खड़ाते हुए पैर से सुशील ने कमरे के अन्दर जाकर देखा, सरला लेटी है। धीरे से बिछौने पर बैठ कर वे नाड़ी देखने लगे।

"नाड़ी की चाल तो ठीक है"।

तरला भौंह सिकोड़ कर बोली—"नाड़ी देखने से तुम्हें कुछ न मालूम होगा। तुम्हें तो नाड़ी पकड़ना आता ही नहीं"।

विस्मय के साथ सुशील बोले "यह आपने कैसे जाना"।

"यह बात तुम रोगी से पूछ देखो। मैं जाती हूँ"। यह कह कर सरला चली गई। बाहर से उसने दरवाज़ा बन्द कर दिया।

सुशील सोचने लगे—ठीक है, नाड़ी से तो कुछ पता नहीं चलता। एक बार हार्ट (हृदयन्त्र) की परीक्षा करूँ। सुशील ज्यों ही रबर की नली कान में लगा कर हृदयन्त्र की परीक्षा करने चले त्यों ही सरला ने उनके दोनों हाथ पकड़ लिये। वह कहने लगी—"मुझे क्षमा करो, तुम्हारी दवा नहीं पिलाई गई"। उस समय सरला के नेत्रों से अश्रु-धारा बह रही थी।

चकित-चित्त सुशील विह्वल हो गये। वे अधीरता से पूछने लगे—"सच कहती हो"?

सरला ने संक्षेप में सारी राम-कहानी कह सुनाई। वह अभिमान-पूर्ण स्वर से बोली—"यदि मुझ पर तुम्हारी सच्ची प्रीति होती तो तुम तुरन्त लख जाते कि यह कलाई मेरी न थी। मैं तो तुम्हारे नखों तक को पहचानती हूँ।"

इस समय भी बाहर चारों ओर से खिल-खिलाने की आवाज़ आ रही थी। प्रगल्भा अमला बाहर से पुकारती थी—"डाक्टर साहब, बाहर निकलिए। क्या रात भर हृदय की परीक्षा होगी"*?

बङ्गमहिला।

---

## भारतवर्ष की सङ्गीत-विद्या।

भारत ने सङ्गीत-विद्या में बड़ी उन्नति की है। नाद और ब्रह्म का ज्ञान जितना भारत ने प्राप्त किया है उतना और किसी देश ने नहीं। सङ्गीत है भी ऐसा ही। वह का भाण्डार खोलने की कुञ्जी है।

सङ्गीत की उत्पत्ति सात स्वरों से हुई है स्वर अपने आद्यक्षर के अनुसार स० रि० ग० प० ध० नि० कहाते हैं।

सङ्गीत-रूपी सुन्दर पट्ट-वस्त्र में ये सातों ताने-बाने के सदृश हैं। ये स्वर आपस में प्रकार से मिलते हैं। इस मेल से अनेक प्रकार मनोरञ्जक रागिनियाँ, जो अपने अपने रूप में पृथक् हैं, उत्पन्न होती हैं। सातों स्वरों के रीति से मिलने पर छः राग उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक राग की पाँच पाँच रागिनियाँ हैं। उनमें अपने राग के स्वर प्रधान हैं। इस प्रकार रागों रागिनियों की संख्या ३६ है। यही मुख्य राग रागिनियाँ समझी जाती हैं। इनके स्वर आपस मिलने से अनेक छोटी छोटी रागिनियाँ बनती इस अभिप्राय से कि प्रत्येक राग-रागिनी का तरह ज्ञान हो सके, उनके अलग अलग नाम गये हैं।

राग-रागिनियों में यह विलक्षणता है अपनी अपनी ऋतु और अपने अपने काल में जाती हैं। प्रत्येक राग-रागिनी गाने का समय ऋतु अलग अलग हैं। यह नियम मनःकल्पित किन्तु शब्द-शास्त्र के गूढ़ आशयों के आधार इसका निश्चय हुआ है। शब्द-शास्त्र के वेत्ता सकते हैं कि शब्द-मण्डल में जो अनेक लहरें होती हैं उनके प्रवाह का रूप पृथक् पृथक् और समयों में कैसा होता है। पदार्थ बतातीं है कि प्रकाश और अन्धकार शब्दों की लहरों पर पृथक् पृथक् प्रकार का है। कुछ शब्द-तरङ्गें ऐसी होती हैं जिनकी भूति प्राकृतिक पदार्थों के साथ होती है। कारण वे सुगमता से सुनाई देती हैं। कुछ होती हैं जो सहानुभूति के अभाव से कठिन सुनाई देती हैं। गाने में ऋतु और समय का इन्हीं सूक्ष्म कारणों के लिहाज़ से रक्खा गया विषय पदार्थ-विद्या द्वारा निरूपण करने

इस सम्बन्ध में यह भी स्मरण रहे कि एक एक ऋतु दो महीने की होती है—

| | | |
|---|---|---|
| ऋतु | वसन्त | चैत—वैशाख |
| | ग्रीष्म | जेठ—असाढ़ |
| | वर्षा | सावन—भादों |
| | शरद | क्वार—कातिक |
| | हेमन्त | अगहन—पौष |
| | शिशिर | माह—फागुन |

मुख्य मुख्य रागों और रागिनियों के नाम और उनके गाये जाने की ऋतु तथा समय इस प्रकार है—

| राग | रागिनी | ऋतु | समय |
|---|---|---|---|
| १—भैरव | | शरद | प्रातः काल |
| | १—भैरवी | ,, | ,, |
| | २—बँगाली | ,, | दिन का अन्तिम भाग |
| | ३—मधुमाधवी | ,, | दिन का चौथा भाग |
| | ४—सिन्धवी | ,, | ,, |
| | ५—बङ्गाली | ,, | ,, |
| २—मालकोश | | शिशिर | रात का चौथा भाग |
| | १—टोड़ी | ,, | मध्याह्न-काल |
| | २—गौरी | ,, | दिन का चौथा भाग |
| | ३—गुणकली | ,, | दिन का प्रथम भाग |
| | ४—रम्भाती | ,, | रात का तीसरा भाग |
| | ५—कुम्भिका | ,, | रात का चौथा भाग |
| ३—हिण्डोल | | वसन्त | दिन का पहला भाग |
| | १—रामकली | ,, | रात का चौथा भाग |
| | २—वैशाखी | ,, | दिन का पहला भाग |
| | ३—ललिता | ,, | ,, |
| | ४—विलावल | ,, | ,, |
| | ५—पटमञ्जरी | ,, | दिन का दूसरा भाग |
| ४—दीपक | | ग्रीष्म | मध्याह्न-काल |
| | १—देसी | ,, | ,, |
| | २—कुमोदिनी | ,, | ,, |
| | ३—गर | ,, | दिन का चौथा भाग |
| | ४—केदारा | ,, | मध्याह्न-काल |
| | ५—कान्हरा | ,, | रात का पहला भाग |
| ५—श्रीराग | | हेमन्त | दिन का चौथा भाग |
| | १—मालश्री | शरद | मध्याह्न-काल |
| | २—मारू | हेमन्त | दिन का चौथा भाग |
| | ३—धनाश्री | ,, | मध्याह्न-काल |
| | ४—वसन्त | वसन्त | दिन का दूसरा भाग |
| | ५—आशावरी | हेमन्त | मध्याह्न काल |
| ६—मेघमल्लार | | वर्षा | रात का चौथा भाग |
| | १—टंक | ,, | रात ,, |
| | २—मल्लार | ,, | रात का पहला-तीसरा भाग |
| | ३—गुर्जरी | ,, | प्रातःकाल |
| | ४—भूपाली | ,, | रात |
| | ५—विभास | ,, | रात का चौथा भाग |

इनमें से प्रत्येक राग-रागिनी अपने अपने रूप में अति सुन्दर, मनोहर और मधुर है। सुनने वाले के चित्त को वह बड़ी विलक्षणता से आकर्षित करती है। वह आत्मा के गुप्त और सुप्त भावों को जागृत कर देती है, परमानन्द के समुद्र की लहरों से चित्त को आप्लावित कर देती है और इन्द्रियों के सुख से परे आत्मानन्द का भी चमत्कार दिखाती है। उस समय ऐसा ज्ञात होने लगता है मानो स्थूल शरीर के बन्धन, और आत्मा के झगड़े दूर हैं, धीरे धीरे विलय को प्राप्त होते जाते हैं। यहाँ तक कि सच्चिदानन्द का अनुभव होने लगता है।

इन रागों और रागिनियों में एक और भी विलक्षणता है। वह यह कि प्रत्येक का मानुषी स्वरूप वर्णन किया गया है। उदाहरण के लिए भैरव राग की भैरवी रागिनी का रूप सुनिए—

भैरवी गौर-वर्ण, त्रिनेत्र और चार भुजा वाली, एक तरुणी है। वह सफ़ेद साड़ी और लाल रङ्ग की कञ्चुकी पहने हुए है। कमल के फूलों की माला उसके गले में है। कार्तिक सिंह के आसन पर बैठी हुई यह महादेवजी के चरणों की पूजा कर रही है और नाद से देखने में मग्न है।

है। इस कारण सङ्गीत की मनोहरता और में बड़ी न्यूनता आ गई है। देश-हितैषियों को है कि इस विषय में ये विशेष विचार करें। क कि रस और भाव आदि की अनुकूलता का न होगा तब तक सङ्गीत-विद्या का सुधार नहीं कता। किसको ज्ञात नहीं कि भैरवी रागिनी में कल प्रायः शृङ्गार रस की चीजें गाई जाती हैं। दशा दूसरी रागरागिनियों की है।

यह भी स्मरण रहे कि जो चीजें आज कल गाई हैं वे प्रायः भाषा और व्याकरण के विचार से निरस्कार करने योग्य होती हैं। कारण यह ये गवैयों ने मनमानी चीजें गढ़ कर गाना न कर दिया है। इससे प्राचीन पवित्र हिन्दू- को बड़ा धक्का पहुँचा है। यह दुःख की बात इसका उपाय होना चाहिए।

सारांश यह कि पहले रागों और रागिनियों के रस के अनुकूल गाने की चीजें होनी ए। दूसरे यह कि ये चीजें शुद्ध और साल- हिन्दी में हों, जिससे केवल कानों ही को न हो, किन्तु अर्थ-विचार से मन और को भी सुख की प्राप्ति हो। सूरदासजी के ऐसी भाषा के आदर्श हैं। इसी प्रकार पत्रिका में तुलसीदासजी के पद हैं। के उत्साही जनों को उचित है कि इन दो में से राग-रागिनियों के रसानुकूल भजनों दों को प्रचार में लावें। सङ्गीत के सुधार यह बहुत सुगम उपाय है।

कश्मीमल, एम० ए०।

---

## विविध विषय।

### —हिन्दी-भाषा और मराठी "मनोरञ्जन"।

बई से मनोरञ्जन नाम का एक मासिक पत्र मराठी में निकलता है। उसके रूप, रङ्ग और लेख आदि पर हिन्दी के कुछ हितैषी जी- जान से फ़िदा हैं। दो एक सामयिक पत्र चित्रों की बदौलत कभी कभी अपनी सचित्रता स्थिर रखते हैं। हिन्दी के हित-चिन्तकों की इस उदारता से लाभ उठाने वाले मनोरञ्जन ने अपनी जून १९१५ की संख्या में हिन्दी पर कुछ कृपा की है। पाठकों को विदित ही है कि गत महाराष्ट्र साहित्य सम्मेलन में, बहुत विपक्षता होने पर भी, हिन्दी प्रचार के अनुकूल प्रस्ताव "पास" हो गया। सम्मेलन ने यह निश्चय किया कि हिन्दी ही राष्ट्र भाषा होने योग्य है। अतएव उसे भी पढ़ाने का प्रबन्ध स्कूलों में होना चाहिए। यह बात मनोरञ्जन को पसन्द नहीं। वह कहता है कि सम्मेलन महाराष्ट्र-भाषा-विषयक था, हिन्दी की चर्चा उस में हुई ही क्यों? इस पर प्रार्थना है कि महाराष्ट्र-साहित्य की उन्नति से वह महाराष्ट्र-देश का भी कुछ सम्बन्ध समझता है या नहीं? साहित्य की उन्नति से भी देश की उन्नति हो सकती है या नहीं? यदि नहीं, तो यह सम्मेलन है किस मर्ज़ की दवा? शिक्षा-प्रचार, ज्ञान-वृद्धि और साहित्योन्नति से यदि देश की उन्नति हो सकती है और यदि परोक्ष रीति से इसी उन्नति के लिए यह सम्मेलन होता है तो हिन्दी की चर्चा करना इसकी सीमा के बाहर की बात नहीं। इस तरह की बातों पर यदि सम्मेलन में विचार न होता तो होता कहाँ? मनोरञ्जन ने इस काम के लिए कोई और सभा, संस्था या सोसायटी बना रक्खी है? बना रक्खी हो तो उसी में वह हिन्दी-प्रचार अथवा बहिष्कार की चर्चा कराये। राष्ट्रीय भाव की उत्पत्ति, रक्षा और वृद्धि के लिए यदि किसी एक भाषा के प्रचार की आवश्यकता समझी जाय तो भाषा और साहित्य-सम्बन्धी सम्मेलन को छोड़ कर उसका विचार और होगा कहाँ? राष्ट्र-भाषा के सङ्गठन और उत्कर्ष-साधन से देश को लाभ पहुँच सकता है या नहीं?

हिन्दी के सम्बन्ध में मनोरञ्जन के विचार सुनने लायक़ हैं :—

(१) तामील, तेलगू, मलयाली और कानड़ी भाषा जहाँ बोली जाती है वहाँ "सुलभरूपें" हिन्दी न समझी जायगी।

(२) सिन्ध और पञ्जाब के मुसलमानों के लिए हिन्दी "दुर्बोध" है।

(३) साधारणतः मुसलमान और पारसी आदि के लिए हिन्दी "चांगल्या रीती ने" समझी जाने योग्य नहीं।

(४) हिन्दी में "इहद बाहुल्य" नहीं।

अन्त में उन्होंने के लिये हुए सिलसिले का तो ख्याल कीजिए। "इसी तरह अरबी के भी आहें"। साहित्य की भाषायें नहीं बोली जाती हैं वहां भला हिन्दी मुखड़ कैसे हो सकती है? क्या वहां हिन्दी बोली जाती है? मुखड़ा-पूर्वक न सही, दुर्भाषा-पूर्वक तो समझी जाती है या नहीं? मदरासी साधी जब काशी, प्रयाग, हरद्वार और बदरीनाथ की यात्रा करने जाते हैं तब किस भाषा की कृपा से उनका काम चलता है? और, इसी भारत के निवासी जब काबुल, सन्धुता और रामेश्वर जाते हैं तब भी उन से बात चीत करने में मदरासियों को किस भाषा की सहायता लेनी पड़ती है? सुलभता का तो यहां सवाल ही नहीं। हिन्दी की कृपा से यदि भिन्न भिन्न प्रान्तों के लोग अपने विचार किसी तरह एक दूसरे पर प्रकट कर सकें तो इतना ही बहुत है। हिन्दी की उपयोगिता के लिहाज़ से यदि उसकी शिक्षा की ओर लोगों का ध्यान जायगा तो कुछ समय बाद उसमें परस्पर पत्र-व्यवहार भी होने लगेगा। और, पत्र-व्यवहार तो अब भी होता है। कितने ही गुजराती, महाराष्ट्र और मदरासी सरस्वती के सम्बन्ध में अब भी हिन्दी ही में हम से पत्र-व्यवहार करते हैं। जो लोग इस देश से फ्रांस, जर्मनी और जापान जाते हैं वे क्या वहां की भाषा सुगमता-पूर्वक बोल और समझ सकते हैं? वहां की भाषाओं का थोड़ा बहुत ज्ञान सम्पादन करके वे अपना काम किसी तरह चला लेते हैं। यही हिन्दी के लिए भी होना चाहिए।

सिन्ध और पञ्जाब के मुसलमानों के लिए हिन्दी को "दुर्बोध" बताना अपनी अज्ञानता प्रकट करना है। मनोरञ्जन यदि कभी सिन्ध और पञ्जाब की यात्रा करेगा तो उसे मालूम हो जायगा कि वहां के मुसलमानों के लिए हिन्दी दुर्बोध है या सुबोध।

साधारणतः पारसी और अन्य प्रान्तों के मुसलमान यदि हिन्दी "अच्छी तरह" नहीं समझ सकते तो न सही, समझ तो सकते हैं। मनोरञ्जन के सञ्चालक स्वयं ही क्या हिन्दी—"मांगल्या रीती ने समझतात"? फिर और लोग अच्छी तरह न समझें तो क्या आश्चर्य्य? थोड़ी बहुत हिन्दी समझ लेना ही इस बात का प्रमाण है कि हिन्दी ही राष्ट्र-भाषा होने की योग्यता रखती है।

"इहद बाहुल्य" न होने से हमारा कहना नहीं सूचित होता। साहित्य समृद्ध न होने से किसी भाषा के प्रचार को क्या कुछ बाधा पहुंच सकती है? और "इहद" कहाने वाले साहित्य का क्या है? अपने देश की किस भाषा में? अपने समृद्धता के सम्पादन के लिए अवश्यक ही क्या? अवश्यक तो हिन्दी को दूसरी भाषा-भाषियों के सहयोग की है। और इहद बाहुल्य का प्रश्न उसे होता।

बात है किसी भाषा को राष्ट्रीय भाषा बनाने की। ऐसी भाषा एक मात्र हिन्दी है। राष्ट्रीय भाषा देश की अपेक्षा सम्पत्ति राष्ट्रीय भाषा ही है। उसकी चर्चा सिर्फ प्रान्तों के साहित्य-सम्मेलनों ही में नहीं, किन्तु देश, हाट-बाज़ार और घर घर में होनी चाहिए।

२—महात्मा गोखले की हस्त-लिपि।

ब-हाई शासनपत्रक नाम का एक मासिक पत्र [illegible] मराठी भाषा में निकलता है। उसके एप्रिल १९१२ के अंक में महात्मा गोपाल कृष्ण गोखले, सी० आई० ई० की लिपि का नमूना प्रकाशित हुआ है। पाठक इस नमूने के फोटो सरस्वती में अन्यत्र देखेंगे। इससे उन्हें गोखले की देवनागरी लिपि के भी दर्शन हो जायेंगे और यह भी मालूम हो जायगा कि गोखले अपनी मातृ-भाषा, मराठी, में अपने विचार व्यक्त करते थे। उनकी लिपि के नमूने मराठी बहुत ही सीधी सादी, पर देश-भक्ति के साँचे में ढली हुई, है। उसका भावार्थ नीचे दिया जाता है:—

> इस समय इस लोगों को अपने देश के लिए अनेक प्रकार से [illegible] करना चाहिए। उदाहरण देश-भक्ति से प्रेरित होकर यदि हम [illegible] को सर्वाङ्ग-सुन्दर बनाने के लिए यत्न करें तो काम बन जाने [illegible] लिति बहुत दिन तक न ठहर सकेगी। इसमें सन्देह [illegible] इस समय सिर्फ वृष्टि डालिए उधर ही काम का पर्वतमात्र [illegible] हुआ दिखाई देता है। उसका भार उठाने के लिए हजारों [illegible] को अपना शरीर अर्पण कर देना चाहिए। यह समय कर [illegible] लोगों पर बहुत बड़ा उत्तर-दायित्व है। हमारे हृदयों में स्फूर्ति होनी चाहिए। हमारे मन में यह भाव जागृत होना चाहिए कि देश के लिए और किसी उद्योग में हमारा लोक सफल यह जन्म जिसका चित्त देशव्रत हो जाता है उसे ईश्वर मातृ-भूमि का बनाये बिना नहीं रहता।

कहिए, हमारा निवेदन सच है न? कैसे हृदयोद्गार हैं। देश-भक्ति का कैसा अच्छा निदर्शन है।

## ३—देहली के क़िले की इमारतों का ख़र्च।

भारतीय पुरातत्त्व-विभाग के सर्वोच्च अधिकारी सर जान मार्शल हैं। आप डाइरेक्टर जनरल आफ़ आर्कियोलाजी पदवी से अलङ्कृत हैं। आपकी कृपा से आपकी बहु-मूल्य वार्षिक रिपोर्टें पढ़ने का सौभाग्य सरस्वती को भी प्राप्त होता रहता है। आपकी १९११-१२ की वार्षिक रिपोर्ट में गार्डनर मैन्डर-साहब का लिखा हुआ एक लेख छपा है। वह फ़ारसी तवारीख़ इतिहासों के आधार पर लिखा गया है। उसमें अकबर के देहली वाले क़िले से सम्बन्ध रखने वाली अनेक ज्ञातव्य बातें हैं। कितने ही चित्र भी उसमें हैं। १८८३ से १९११ तक इस क़िले की इमारतों की मरम्मत आदि में गवर्मेंट ने कोई तीन लाख रुपया ख़र्च किया है। अभी और भी बहुत रुपया वह ख़र्च करने वाली है। कुछ समय से इमारतों की विशेष रक्षा होती है। एक लेख में इस विषय का उल्लेख सरस्वती में हो भी चुका है। आज, इस नोट में हम यह बताना है कि इस क़िले की इमारतें तैयार कराने में शाहेजहाँ ने कितना रुपया ख़र्च किया था।

१०४१ हिजरी (१६३१ ईसवी) में देहली के क़िले के शाही महलों की नींव डाली गई। उस समय ग़ैरतख़ाँ वहाँ का गवर्नर था। दूर दूर से कारीगर बुलाये गये। ८ हिजरी, अर्थात् ८ वर्ष, में इमारतें बन कर तैयार हुईं। ८ साल, २४ रबी-उल-अव्वल को, शाहेजहाँ ने अपनी इस राजधानी में प्रवेश किया। शाहज़ादा दाराशिकोह, सोना और चाँदी लुटाता हुआ, पिता को क़िले के फाटक तक ले गया। बड़ा भारी दरबार हुआ। बहुत कुछ दान-पुण्य किया गया। बादशाह ने अपने बेटों, पोतों और बड़े बड़े कर्म-चारियों को ख़िलअतें दीं। उनकी तनख़्वाहें बढ़ाईं और वृद्धि भी करदी।

औरङ्गज़ेब के शासन-समय में मुस्तआद ख़ाँ नाम के एक आदमी ने इस नये क़िले की इमारतों के ख़र्च का हिसाब लिखा था। वह हिसाब इस प्रकार है—

| | लाख रुपया |
|---|---|
| (१) शाही महल | २८ |
| (२) दीवाने ख़ास | १४ |
| (३) इम्तियाज़ महल (रङ्ग-महल) | २½ |
| (४) दीवाने आम | २ |
| (५) हयातबख़्श बाग़ | ६ |
| (६) बेगमों के महल | ७ |
| (७) बाज़ार इत्यादि | ४ |
| (८) क़िले के भीतर की अन्य इमारतें | ६० |
| (९) क़िला और ख़न्दक़ | २१ |

कारीगरों और मज़दूरों की मज़दूरी में एक करोड़ रुपया ख़र्च हुआ था।

इस क़िले की अपार सम्पत्ति और बहुमूल्य वस्तुयें कई दफ़े लूटी गईं। नादिरशाह, अहमदशाह अब्दाली और मरहटों ही ने नहीं, १८५७ के विद्रोह के समय, विद्रोहियों ने भी इन पर हाथ मारा। स्वयं इमारतों पर भी अब तक अनेक अत्या-चार हुए हैं। अब जो बच रही हैं उनको बनी रखने का प्रबन्ध अपने हाथ में लेकर गवर्नमेण्ट ने बड़ा अच्छा काम किया है।

## ४—दिल्ली का तख़्ते-ताऊस।

इसके पहले नोट में उल्लिखित १९११-१२ की आर्कियो-लाजिकल सर्वे रिपोर्ट में देहली के तख़्ते-ताऊस का भी अच्छा वर्णन है। यह वर्णन बादशाह-नामे के आधार पर लिखा गया है। उसका मतलब नीचे दिया जाता है—

बादशाह शाहेजहाँ ने कहा, मेरे ख़ज़ाने में अनन्त रत्न हैं। हर साल जो नये नये रत्न आते हैं वे भी वहीं रख दिये जाते हैं। वहाँ वे बेकार पड़े रहते हैं; किसी को देखने को भी नहीं मिलते। यह सारी रत्न-राशि राज्य की शोभा-वृद्धि के लिए है। अतएव उसे इस तरह और ऐसी जगह रखना चाहिए जहाँ सब लोग उसे देख सकें। यह सोच कर उसने सब रत्न ख़ज़ाने से निकलवा लिये। दो करोड़ रुपये की मालियत के रत्नों में से ८६ लाख रुपये की मालियत के उत्तमोत्तम रत्न छाँटे गये। वे बेबदलख़ाँ नाम के एक अफ़सर के सिपुर्द किये गये। यह अफ़सर शाही सुनार-ख़ाने के दरोग़ा का सुपरिन्टेन्डेन्ट था। शाहेजहाँ ने उससे हुक्म दिया कि एक लाख तोले वज़न की, सोने की एक पटिया पर वे जड़े जायँ। कोई १४ लाख रुपये के ख़र्च से ३½ गज़ लम्बी, २½ गज़ चौड़ी और २ गज़ ऊँची पटिया तैयार की गई। इसी पटिया या चौकटे ने तख़्ते-ताऊस के ढाँचे का काम दिया। पन्ने जड़े हुए १२ खम्भों पर लकड़ी की छतपरी की गई। छत के भीतरी भाग पर मीनाकारी का काम हुआ। बाहर सब तरफ़ रत्न जड़े गये। छत के ऊपर, बाहरी ओर, दोनों तरफ़, एक एक

मोर बनाया गया। मोरों के चञ्चु-प्रत्यङ्गों में बड़े ही अद्भुत रत्न जड़े गये। उन दोनों मोरों के बीच में एक पेड़ बनाया गया। उसमें हीरे, पन्ने, लाल और मोती जड़े गये। तख्त पर चढ़ने के लिए तीन सीढ़ियां बनाई गईं। उन पर भी दिव्य रत्न लगाये गये। सात वर्ष में यह तख्त बन कर तैयार हुआ। इसकी तैयारी में एक करोड़ रुपया खर्च पड़ा। तख्त के चारों तरफ़ सोने की ११ पटियां जोड़ कर दीवार बनाई गई। उन पर भी जवाहिरात जड़े गये। बीच की जिस पटिया के सहारे बादशाह को बैठना था अकेले उसकी लागत कोई दस लाख रुपये तक पहुँच गई। तख्त के बीच में एक बहुत बड़ा लाल लगाया गया। फ़ारिस के शासक शाह अब्बास ने इस लाल को, ज़नबीलबेग़ नाम के एक अफ़सर के हाथ, शाहेजहाँ के पिता जहांगीर को भेंट में भेजा था। दक्षिण जीतने की ख़ुशी में जहांगीर ने यह लाल शाहजहाँ को पुरस्कार के तौर पर दिया था। यह लाल किसी समय तैमूर के पास था। उसने उस पर अपना नाम खुदवाया था। इसके बाद यह शाह-रुख़ और उलूगबेग के हाथ लगा। उन्होंने भी अपना अपना नाम उस पर खुदवाया। बाद को यह जहांगीर को मिला तब जहांगीर ने भी अपना नाम खुदवा कर उसकी शोभा बढ़ाई।

तख्त तैयार हो जाने पर शाहेजहाँ के कवि (कवि-चक्रवर्ती) हाजी मुहम्मदजां "क़ुदसी" ने तारीफ़ में यह कविता, फ़ारसी में, लिखी—

१—ज़हे फ़रमूदः तख़्त पादशाही * कि शद सामाँ बताईद इलाही
२—फ़लक रोज़े कि मीकरदश मकमल * ज़र ख़ुरशीद रा बगदाख़्त अव्वल
३—बहुक्म कादिर फ़रमा सरफ़ शद पाक * मीनाकारीश मीनाए अफ़लाक
४—ख़ुद ईं तख़्त अज़ ज़र ओ गौहर चे मक़सूद * वजूद बहर ओ बर रा हिकमतीं बूद
५—ज़ याक़ूतश कि दर क़ीमत बहा नीस्त * लबे लाले बदख़्शाँ रा दिल अस्ता नीस्त
६—ज़ाए पायः अश उमरे कशीदः * गुहर अफ़सर बसर ख़ातम दरीदः
७—बसरअश आलम अज़ ज़र शद चनाँ पाक * कि शद अज़ गंज ख़ाली कीसः ख़ाक
८—रसानद गर फ़लक ख़ुद रा बपायश * दहद ख़ुरशीद ओ मः रा ज़र नमायश
९—सर अफ़राज़े कि सर बर पायः अश सूद * ज़ गरदूं पायः बर तख़्त अफ़ज़ूद
१०—ख़राज बहर ओ बर पैरायः ओ * पनाह अरश ओ कुरसी सायः ओ
११—ज़ अनवाए जवाहर गश्तः अरयाँ * चरानीए आलमे हर दानः आँ
१२—दर अतरापश बूद कोहे मीना * दरख़्शाँ चूं चराग़ अज़ तूर सीना
१३—चू मीकरद अज़ फ़राज़श कोतही दस्त * तकीन ख़ेशश हम बर पायः अश बस्त
१४—शबे तार अज़ फ़रोग़ लाल ओ गौहर * तवानद सद फ़लक रा दाद अख़्तर
१५—दहद शाह जहाँ रा दौलते बर पाए * अरां शद पायः तख़्तश फ़लक साए
१६—कुनद शाह जहाँ बख़्शश चनाँ बख़्त * ख़राज आलमे रा ख़ुर्द यक तख़्त
१७—ख़ुदावन्दे कि अरश ओ कुरसी अफ़राख़्त * तवानद तख़्तश तख़्तीं चनीं साख़्त
१८—अगर बातीस्त ता गरदूं ओ मकाँ रा * बवद बर तख़्त जा शाह जहाँ रा
१९—बवद तख़्तीं चनीं हर रोज़ जायश * ख़राज हफ़्त कशवर ज़ेर पायश
२०—चू तारीख़श ज़बाँ बरख़ीद अज़ दिल * बगुफ़्त अरंग शाहंशाह आदिल

इसकी अन्तिम पंक्ति के—"अरंगे-शाहंशाहे-आदिल"—अक्षरों से तख़्त तैयार होने की तारीख़ निकलती है। वह ११३७ हिजरी (१७२७ ईसवी) है। इस कविता को शाहेजहां ने तख़्त के भीतरी भाग में एक पटिया पर खुदवा दिया।

इस कविता के कुछ अंशों का भावार्थ इस प्रकार है—

× × × × ×

कहते हैं कि सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा ने वेद द्वारा
करके संसार को बनाया। इस युक्ति
है। तथापि सर्व-साधारण
में आश्रय लेना
दि के

सरस्वती

राजकुमार विद्यार्थी की दानशीलता।

इंडियन प्रेस प्रयाग।

दि खान से निकला हुआ लोहा और समुद्र से प्राप्त हुआ रत्न-समूह इन
ों को अच्छादन न करता तो खान और समुद्र का होना ही व्यर्थ हो
ता, फिर वे खाने किस काम? इसके अनन्तर वह इन्हें देख कर विस्मा-
देवी प्रियम्वदा का हृदय बहलाने लगता है।

× × × × ×

स सिंहासन के बनने में सर्फ हो जाने के कारण संसार में बहुत सी धन
ट गया है—यह कहना चाहिए कि पृथ्वी का गर्भ—उसका कोष—मार
ो गया है। आकाश यदि इस सिंहासन के पाये तक पहुँचता तो वह
ूँह देखकर, सूर्य और चन्द्रमा दोनों इसे भेंट कर देता।

× × × × ×

जब तक आकाश और जगत् का अस्तित्व कुछ भी जोर है तब तक ईश्वर
ेश्वर शाहंशाह इस सिंहासन पर विराजमान रहें। परमेश्वर करे यह
इस सिंहासन की शोभा बढ़ावे और हाथ जोड़े हुओं को प्रजा के लिये
पर बल और रक्षो—यह उसे प्राप्त हो।

× × × × ×

जिस सिंहासन की प्रशंसा में यह सब कहा गया है उसे, १ ईसवी में, नादिरशाह फ़ारिस उठा ले गया। उसका
ा भी उसका चिह्न तक इस देश में न रह गया। लोगों
ख्याल था कि यह तख़्त फ़ारिस की राजधानी तेहरान में
क विद्यमान है। इस नाम का जो तख़्त वहां है, वह
है। पर लार्ड कर्ज़न की खोज ने इस बात को असत्य
कर दिया है। उन्होंने अपनी "पर्शिया" नामक पुस्तक
ख्खा है कि फ़ारिस का तख़्ते-ताऊस एक और ही तख़्त
ा। फ़तेहअली शाह ने अपनी नई बेगम ताऊसख़ानम के
ुसार बनवाया था। यह बात फ़ारिस के वज़ीरेआज़म ने
कही। वज़ीर ने यह भी कहा कि देहली का तख़्ते-ताऊस
ट पूट गया और उसके जवाहरात लुट गये। वह टूटा
तख़्त नादिरशाह के पोते के पास था। उसे आग़ा
मदख़ाँ ने उससे ज़बरदस्ती छीन लिया। उस समय
टुकड़े टुकड़े हो गये थे। उसने उन सब टुकड़ों को जोड़
ये तर्ज़ का एक तख़्त बनवाया। यह तख़्त तेहरान के
महलों के नये अजायबघर में रक्खा है। सो, अब तक
स के फ़तेहअली शाह वाले तख़्त को तख़्ते-ताऊस समझ
व्यर्थ ही लोग उसकी प्रशंसा के पुल बांधते रहे हैं।

## ५—वैदिक काल।

मीमांसकों के मत में वेद की उत्पत्ति नहीं। किन्तु
न के आचार्यों जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्य तथा नैयायिकों
त में वेद की उत्पत्ति है, पर कब? संसार की सृष्टि
के पूर्व! वे कहते हैं कि सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा ने वेद द्वारा कार्याकार्य का उपदेश करके संसार को बनाया। इस युक्ति को हमें अवश्यही मानना पड़ता है। तथापि सर्व-साधारण को विशेष ग्राह्य लौकिक युक्ति का भी हमें आश्रय लेना चाहिए। सुनते हैं बारंबार वेद के पठन-पाठन आदि के लुप्त होने पर पुनः पुनः वैदिक सम्प्रदाय का उदय होता है। एक समय जब वेद-सम्प्रदाय लुप्त हो गया तब अत्रि मुनि से उत्पन्न दत्त नाम के ऋषि ने फिर उस सम्प्रदाय को चलाया। इस बात का प्रमाण हमें शिशुपालवध महा-काव्य के चतुर्दश सर्ग के इकहत्तरवें श्लोक में मिलता है। लिखा है—

सम्प्रदायविलयादृषेर्गुरोरेष नाशयति विश्वमित्रहृ.।
स्मर्तुमक्षतिहतस्मृतिर्मुनीन्द्रेण इत्यभवदत्रिगोत्रजः॥

इससे स्पष्ट जान पड़ता है कि दत्तात्रेय के समय में वेद के लिखित ग्रन्थ न थे। यदि होते तो कवि का "श्रुतीः स्मर्तुमभवत्" यह कहना सर्वथा असङ्गत होता। और, "श्रूयते आचार्यात् इति श्रुतिः" इस व्युत्पत्ति से भी श्रुति का अर्थ सुना जाना ही होता है। श्रीमद्भागवत के चतुर्थ स्कन्ध में भी, जहां दत्तात्रेय का इतिहास है, लिखा है कि वैदिक सम्प्रदाय चलाने ही से दत्तात्रेय साक्षात् विष्णु का अवतार माने गये थे। इससे मालूम होता है कि दत्तात्रेय का समय वेद के पुनरुदय होने का समय है। दत्तात्रेय मुनि कब हुए और उन्होंने कब वेद को स्मरण किया, इसका निर्णय करना कठिन है, क्योंकि वे पुराणमत से कृतयुग में स्वायम्भु मनु के परवात् हुए थे।

इसके बाद जब फिर वैदिक सम्प्रदाय नष्ट हुआ तब भगवान् कृष्णद्वैपायन ने अनेक स्थानों से श्रुतियों का संग्रह करके हज़ारों शाखाओं में उनका विभाग किया। इसीसे इनका नाम वेदव्यास प्रसिद्ध हुआ। तभी से वेद लिखितों में लिखे गये। वेदव्यास के वेद-विभाग का समय निर्णय करना भी कठिन है। किन्तु वह अन्दाज़न चार हज़ार वर्ष के पहले की बात है। क्योंकि कलियुग के पहले ही व्यास हुए थे, ऐसा पुराणों से ज्ञात होता है। इसके बाद फिर भी एक बार वैदिक सम्प्रदाय उच्छिन्न हुआ। तब, अर्थात् कोई बारह सौ वर्ष पूर्व, शङ्कराचार्य ने उसे पुनरुज्जीवित किया। इस प्रकार स्वायम्भु मनु से ले कर आज तक वैदिक सम्प्रदाय का नाश हुआ, उद्धार और उदय हुआ। इस पर लोग कह सकते हैं कि यह तो वैदिक सम्प्रदाय लुप्त होने पर फिर उसके प्रचलित होने का क्रम

हुआ। वेद की उत्पत्ति का समय तो बताओ। इस पर मेरी प्रार्थना है कि यद्यपि ब्रह्माजी ने ही वेदों को बनाया या उनका उपदेश किया, तथापि वेदद्रष्टा मुनियों को भी हम वेद के रचयिता मान सकते हैं। क्योंकि विश्वामित्र आदि महर्षियों ने अपनी दिव्य ज्ञानदृष्टि से श्रुतियों का ज्ञान प्राप्त करके उन्हें मनुष्यों में प्रचलित किया। अतएव यदि हम उन्हीं मुनियों को वेद के कर्ता कहें तो कुछ भी हानि नहीं। इससे यह भी सिद्ध हुआ कि वेद के कर्ता एक नहीं, किन्तु अनेक मुनि थे। जिस मन्त्र का जो ऋषि है, हमें उसी को उसका कर्ता समझना चाहिए। जैसे, गायत्री-मन्त्र के ऋषि विश्वामित्र हैं। तो उस मन्त्र के प्रणेता वही हुए।

दुण्डिराज शास्त्री
( अगस्तकुण्डा, बनारस )

## ६—सोमनाथ के मन्दिर की प्राचीनता।

सोमनाथ पर एक सचित्र लेख बहुत समय पहले सरस्वती में निकल चुका है। इस नोट में गुजरात के गैज़ेटियर के आधार पर कुछ ऐतिहासिक बातें और भी दी जाती हैं। गैजेटियर में इस मन्दिर का पुराना इतिहास बड़ी खोज से लिखा गया है।

यह मन्दिर पट्टन या पाटन नामक स्थान में है। महाभारत में यही पट्टन प्रभास तीर्थ के नाम से उल्लिखित हुआ है। उसमें प्रभास-पाटन का तो नाम है, पर सोमनाथ का नाम नहीं। हाँ, पुराणों में सोमनाथ का नाम पाया जाता है। वहाँ यह पाँच रत्नों में से एक रत्न माना गया है। जिस समय गुजरात में वलभीपुर के राजाओं की सत्ता थी उसी समय—४८० से ७६७ ईसवी के बीच—इस का निर्माण हुआ था। आदि-मन्दिर लकड़ी का था। इसी लकड़ी के मन्दिर को महमूद ग़ज़नवी ने तोड़ा था। इसके बाद अन्हिलवाड़े के किसी राजा ने पहले मन्दिर की जगह पत्थर का मन्दिर बनवाया। इस मन्दिर को भी, ईसा की सोलहवीं शताब्दी में, गुजरात के शासक महमूद बेगरा ने तोड़ कर नष्ट कर दिया। बेगरा ने मूर्ति तोड़ कर और मन्दिर का अधिकांश नष्ट करके उसे मसजिद में परिवर्तित कर दिया। इस मन्दिर-मसजिद के टूटे फूटे कुछ अश अब तक विद्यमान हैं। सोमनाथ का जो मन्दिर इस समय पाटन में है वह अहल्याबाई का बनवाया हुआ है। अतएव वह कोई ढाई सौ वर्ष का पुराना है।

पुरातत्त्वज्ञ विद्वानों की राय में तो सोमनाथ के मन्दिर को बने पन्द्रह सौ वर्ष से अधिक नहीं हुए। [illegible] के पास ही एक शिलालेख मिला है। उस से ११६६ गुदा हुआ है। उसमें लिखा है कि सोमनाथ लकड़ी वाला मन्दिर श्रीकृष्ण ने बनवाया था। [illegible] भी लिखा है कि लकड़ी के मन्दिर के पहले जो मन्दिर यह चाँदी का था और रावण का बनवाया हुआ था। भी पहले पाटन में सोमनाथ का मन्दिर था। वह सोने का था और सोम का बनवाया हुआ था। इस पर, सम्भव लोग यह कहें कि शिलालेख की बातें विश्वसनीय उस समय प्रचलित जनश्रुति के आधार पर लिखी गई

इब्न असीर नाम का एक इतिहासकार ११६०—१२ ईसवी में हो गया है। उसका लिखा हुआ तारीख़ नामक इतिहास बहुत विश्वसनीय समझा जाता है। महमूद ग़ज़नवी की चढ़ाई और सोमनाथ के मन्दिर विस्तृत वृत्तान्त लिखा है। उसका कथन है कि यह सोम अर्थात् चन्द्रमा का था। उसके ख़र्च के लिए इस गाँव लगे हुए थे। अनन्त रत्नों की राशियाँ मन्दिर में थीं। बारह सौ मील दूर गङ्गा से रोज़ गङ्गाजल आता इसी से मूर्ति-स्नान होता था। एक हज़ार ब्राह्मण पूजा और साढ़े तीन सौ नाचने गाने वाले देवमूर्ति को रिझाने लिए नियत थे। यात्रियों की हजामत बनाने के लिए सौ नाई थे। इन सब लोगों की तनख़्वाह मुक़र्रर मन्दिर में लकड़ी के २० खम्भे थे। उनके ऊपर सीसा हुआ था। मूर्ति २ हाथ ऊँची थी। वह एक सीधी थी। कमरे में रत्न-खचित दीपक जलते थे। मूर्ति बहुत से सोने की एक ज़ंजीर लटकती थी। उसमें वज़नी एक घण्टा टँगा था। इस मन्दिर की लूट से ग़ज़नवी को एक करोड़ रुपये का माल मिला था।

## ७—हस्त्यायुर्व्वेद अथवा पालकाव्य।

बँगला के आठवें साहित्य-सम्मेलन के सभापति महोपाध्याय श्रीयुक्त हरप्रसाद शास्त्री, एम० ए०, सी० ई०। सम्मेलन के इस अधिवेशन में पढ़े गये और अभिभाषण तथा एक अन्य लेख—ये सब साहित्य पत्रिका में प्रकाशित हुए हैं। इन में अनेक ज्ञातव्य बातें एक में शास्त्री जी ने उन लोगों की ख़बर ली है जो

भाषा बोलते और उसी में अपने विचार व्यक्त करते हैं। ये लोग जब अपनी भाषा लिखते हैं तब वे उसे इतना गाढ़ देते हैं कि वह आधा तीतर आधी बटेर की उक्ति की अनुगामिनी हो जाती है। उसकी एक अजीब खिचड़ी बन जाती है। ऐसे लोगों को शास्त्री जी ने सलाह दी है कि वे अपनी भाषा कुछ दिन सीखें तब कलम पकड़ें। जो लोग भी ही संस्कृत के क्लिष्ट शब्दों का प्रयोग करते और कारण ही बहुत-फ़ारसी के शब्दों के प्रयोग से बचते हैं हैं भी शास्त्रीजी ने दो चार खरी बातें सुनाई हैं। चाहे म भाषा के शब्द हों यदि वे अपनी भाषा में प्रचलित हो ई है तो उनका बहिष्कार सम्भव नहीं। भाषा वही अच्छी ही जा सकती है जो सरल हो और जिसे अधिक लोग सानी से समझ सकते हों; चाहे उसमें जिस भाषा के प्रच-त शब्द विद्यमान हों।

हम लोग बहुधा इस बात की शिकायत किया करते हैं हमारे यहाँ इतिहास नहीं। इसके उत्तर में शास्त्रीजी ने तने ही प्राचीन और नवीन इतिहास ग्रन्थों के नाम बताये । उन्होंने कई ऐसी पुस्तकों का हवाला भी दिया है समें औरङ्गज़ेब के समय का विस्तृत वृत्तान्त है। इन सब पुस्तकों के आधार पर कोई योग्य विद्वान उस ल का इतिहास लिखे तो ऐसा इतिहास बड़े ही महत्व का । अब तक हम लोगों ने मुसलमानों और विदेशियों ही मुख से औरङ्गज़ेब की शासन-नीति आदि का वृत्तान्त । है। वह यदि किसी हिन्दू के मुख से भी सुनने को ले तो मालूम हो जाय कि किसमें कितनी सत्यता है और दुओं की राय किसमें कहाँ तक मिलती है।

शास्त्री महाशय ने अपने प्रधान लेख में बङ्गाल-हिन्दियों कुछ बातें बड़े ही मार्के की कही हैं। उनके विस बङ्गाल के गौरव का कारण माना है। रेशम, दाल का ा, चिकेटर, नौका और जहाज, पोत निर्माण और ण देव आदि से सम्बन्ध रखने वाली ऐसी बातों का उल्लेख उन्होंने बताया है कि बङ्गला उन्नति-स्थान बङ्गाल ही है। ुख से ऐसों ही उसके गौरव का कारण है। सबसे पहले ने उन्नपुर्णा का उल्लेख किया है। आपने लिखा है कि केले के चित्रित शाल के उपलक्ष्य में कृष्ण चन्द्र उन्हें ेन से निकाले थे। इन्हीं ने इस शाल का कारीगर । अब से बङ्गल का आरम्भ यह है :—

अङ्ग-देश के राजा लोमपाद की इच्छा हाथी पर सवार होने की हुई। पर हाथी कहाँ मिलते हैं और किस प्रकार वशीभूत किये जाते हैं, यह वह न जानता था। उसने बहुत से ऋषियों को एकत्र किया। उनकी सलाह से उसने हाथियों का पता लगाने के लिए कुछ लोग भेजे। उन्हें एक पहाड़ी आश्रम में हाथियों का एक दल मिला। उसके रक्षक एक मुनि भी वहीं मिले। यह खबर उन लोगों ने राजा को दी। राजा अपनी सेना ले कर उस आश्रम को गया। रक्षक मुनि उस समय वहाँ न थे। वे बाहर गये थे। जितने हाथी राजा को वहाँ मिले उन्हें वह अपनी राजधानी चम्पानगर को ले आया और वहीं रख दिया। मुनि ने लौट कर देखा, हाथी नहीं। वे व्याकुल हो उठे और हाथियों को ढूँढ़ने निकले। चम्पानगर में उन्हें वे मिल गये। वे दुबले और रोगी हो रहे थे। मुनि ने उनकी चिकित्सा आरम्भ कर दी। और लोगों के पूछने पर मुनि ने अपना नाम धाम तक न बताया। जब राजा ने पूछा और बहुत हठ की तब उन्होंने अपना नाम पालकाप्य बताया और राजा की प्रार्थना पर गजायुर्वेद शास्त्र की रचना की। इस शास्त्र को शास्त्रीजी कोई दाई हज़ार वर्ष का पुराना समझते हैं। आप कहते हैं :—

"पालकाप्य महर्षेर्मोद विधेन। मौदिगं का मङ्गलपुर धरे, समुद्र का हिमालयेर मध्ये तोहार अवस्थिति का निश्चय स्थान। यदि ये अङ्गराजे सखपादे महान आयुर्वेद मेला ये प्रचार हय, तिनि कारण बंगला देशेइ थाके। × × × × मुनि पूर्वे बहुत का पर हस्ते यदि बाहिरा देशे इन्दि चिकित्सार कथा शुनिते पाइते थाके, ताहा हइले सेइ देशेर कथा निश्चयेइ बला थाके"।

इन्हीं हस्ती वैद्यों की जो संख्या की, उसका [illegible] कि पालकाप्य का ग्रन्थ [illegible]

## ८—ज्योतिष-सम्बन्धी मानयन्त्र।

अच्छे ज्योतिषियों को परिमाण-ज्ञान की बड़ी आवश्यकता होती है। दूसरों के बनाये हुए परिमाणों के ऊपर विश्वास करने से भूलें होना बहुत सम्भव है। और, बिना यन्त्रों के ठीक ठीक परिमाण-ज्ञान हो नहीं सकता। दूसरे देशों के वेधालयों में अनेक प्रकार के यन्त्र रहते हैं। उन्हीं के सहारे ज्योतिषी अनेक वैज्ञानिक बातों का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस देश में एक भी अच्छा वेधालय नहीं। दो एक मान-मन्दिर अवश्य हैं। पर उनसे कुछ ही इने गिने लोगों को लाभ पहुँच सकता है। इस अभाव—इस त्रुटि—को दूर करने के लिए गौहाटी के श्रीतारकेश्वर भट्टाचार्य्य, एम० ए०, ने एक ऐसा यन्त्र बनाया है जिससे ज्योतिष-विषयक कितने ही परिमाण जाने जा सकते हैं। यह एक ही यन्त्र अनेक यन्त्रों का काम दे सकता है। दिगन्त (Altazimuth), नाड़ीवलय (Equatorial), याम्योत्तर-भित्ति (Transit Circle), थियोडोलाइट (Theodolite) आदि कितने ही यन्त्रों का काम इस से निकल सकता है। विषुवांश, क्रान्त्यंश, अक्षांश, देशान्तर, दिगंश, उन्नतांश, शरांश, रात्र्यंश आदि के परिमाण अकेले इसी यन्त्र से शुद्धता-पूर्वक जाने जा सकते हैं। यह यन्त्र छोटा सा है। ज्योतिषी इसे आराम से अपने साथ रख सकता है और एक जगह से दूसरी जगह ले जा सकता है। गौहाटी में यह अच्छा नहीं बन सका। इस कारण, कुछ परिवर्तन के साथ, इसके बनाने का प्रबन्ध अब कलकत्ते में किया गया है। यदि वहां आशानुरूप बन गया तो इस यन्त्र से नीचे लिखे परिमाण जाने जा सकेंगे—

(१) भौगोलिक भूमध्य-रेखा (Geographical Meridian)
(२) अक्षांश (Terrestrial Latitude)
(३) देशान्तर (Terrestrial Longitude)
(४) दिगंश (Azimuth)
(५) उन्नतांश (Altitude)
(६) विषुवांश (Right Ascension)
(७) क्रान्ति (Declination)
(८) [illegible] Latitude)
(९) [illegible] Longitude)
(१०) चौम्बक क्रांति (Magnetic Declination)
(११) चौम्बक नति (Magnetic Inclination)

ये इतने मान यदि इस एक ही यन्त्र से मालूम हो जायं तो क्या कहना है। ऐसा यन्त्र तो प्रत्येक ज्योतिषी को अपने पास रखना चाहिए।

## ९—प्राचीन भारत में रसायन-विद्या।

कलकत्ते के डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र राय बड़े नामी रसायनशास्त्री हैं। आपने हिन्दुओं की रसायन-विद्या का इतिहास अँगरेज़ी में लिखा है। इस सम्बन्ध में जितनी खोज आपने की है, और किसी ने नहीं की। यह बात आपके लिखे हुए इतिहास से सिद्ध है। उसमें रसायन-विद्या के क्रम-विकास का आपने प्रामाणिक वर्णन किया है। कुछ दिन हुए आपने इसी सम्बन्ध में एक व्याख्यान लाहौर में दिया था। उसका सारांश नीचे दिया जाता है।

आयुर्वेद के उपलब्ध ग्रन्थों में चरक और सुश्रुत सबसे पुराने हैं। उनमें रस शब्द किसी वस्तु के अर्क, या उसके अंश के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। इससे सूचित है कि उस पुराने समय में रस का वह अर्थ न होता था जो आज कल होता है। चरक और सुश्रुत के समय के अनन्तर रस का अर्थ पारे के लिए आने लगा और अब तक आता है। इसके साथ ही यह शब्द धीरे धीरे सभी धातुओं और कई पदार्थों की भस्म आदि के अर्थ में भी आने लगा। हिन्दू रसायन-ग्रन्थों में रस का अर्थ यद्यपि पारा भी लिया गया, तथापि अधिकतर वह पूर्वोक्त वस्तुओं ही का द्योतक है।

रसायन-विद्या की उत्पत्ति भारत में हुए हज़ारों वर्ष हो गये। वात्स्यायन और पतञ्जलि तक ने इसका उल्लेख अपने ग्रन्थों में किया है। सुवर्ण-रस-परीक्षा, धातुवाद और रागाकरज्ञान को वात्स्यायन ने ६४ कलाओं में गिना है। सुनते हैं, पतञ्जलि ने सार (लोहे) के भिन्न भिन्न भेदों और प्रक्रियाओं पर एक ग्रन्थ ही अलग लिखा था। वह अब नहीं मिलता। रसायन जरा मृत्यु को जीतने वाली कला है। इसने इसकी बड़ी महिमा है। यह वैद्यकशास्त्र का अङ्ग समझी जाती है। जब से तान्त्रिक मत का प्राबल्य हुआ तब से इसकी महिमा और भी अधिक हो गई। रुद्रयामल आदि तन्त्र-ग्रन्थों में इस विषय का बहुत वर्णन है। तान्त्रिक काल में इस विद्या की इतनी [illegible]

के सैकड़ों ग्रन्थ इस विषय के बन गये। उनमें से रसार्णव, सहृदय, रससार और नागार्जुन-कृत रसरत्नाकर अब भी उपलब्ध है। उस काल में तो इस विद्या के प्रेमियों और अनुयायियों का एक पन्थ ही अलग हो गया था। इस कारण शंकराचार्य को अपने सर्वदर्शनसंग्रह में उनके सिद्धान्तों का भी उल्लेख करना पड़ा।

नागार्जुन नामक एक विद्वान् के बनाये हुए सिद्धयोग नामक ग्रन्थ में, वर्तमान रसायन-विद्या की प्रणाली के अनुसार, पारे की रसायन का वर्णन है। यह ग्रन्थ कोई ९०० ईसवी का है। इसके अनन्तर चक्रपाणिदत्त आदि ने और भी इसी विषय के कितने ही ग्रन्थ बनाये, जो अब तक पाये जाते हैं। इनमें धातु अभ्रक, तांबे, लोहे, राँगे, हरताल, सीसे आदि को शुद्ध करने, शुद्ध करने और उनकी रसायनें बनाने की प्रक्रिया प्रचलित हुई। भिन्न भिन्न पदार्थों के रूप, रङ्ग, कालत्व और गुणों आदि की जांच करके तत्सम्बन्धी सिद्धान्त भी धीरे धीरे निश्चित किये गये। इसके सिवा इस विषय के अनेक ग्रन्थ हैं।

जो प्रमाण आज तक इस विषय के मिले हैं उनसे यही सिद्ध होता है कि रसायन-विद्या स्वयं भारतवासियों ही की उद्भावना और खोज का फल है।

## १०—हज़ार वर्ष के पुराने खँडहर।

पुरातत्त्व के प्रेमी स्टीन साहब के नाम से अवश्य परिचित होंगे। हज़ारों वर्ष पहले तुर्किस्तान में बौद्धों की गुफ़ाएं और मठ आदि थे। जो जगहें इस समय उजाड़ हैं—जहां सैकड़ों कोस तक एक बूँद भी पानी नहीं—वहां पूर्वकाल में बड़े बड़े शहर थे। स्टीन साहब ने इन उजड़े हुए शहरों और स्थानों की बहुत कुछ खोज की है। इस विषय में उन्होंने एक पुस्तक भी प्रकाशित की है। उसे लिखने बहुत परिश्रम हुआ। चीनी तुर्किस्तान के उजाड़-खण्डों की खोज के लिए आप दुबारा वहां पर हैं। इस काम में आपको कुछ भी बहुत कुछ सफलता हुई है। आपके साथ लालसिंह नामक एक हिन्दुस्तानी महाशय भी हैं। एशिया से अक्टूबर १९१४ के वहां का संक्षिप्त वर्णन स्टीन साहब ने लन्दन की भौगोलिक सभा को भेजा है।

दो ढाई हज़ार वर्ष पहले चीन की सीमा पर, तुर्किस्तान की ओर जाने वाली एक बड़ी दीवार थी। उसमें जगह जगह बुर्जे और किले थे। वे सब भग्नावस्था में हैं। उनकी खोज पहले भी स्टीन साहब ने की थी और अनेक प्राचीन चिह्न और पदार्थ खोज निकाले थे। इस दफ़े भी उन्होंने अनेक किलों, खँडहरों और दीवार के भग्नांशों की खोज की। तिब्बत के उत्तर से उन्होंने प्रस्थान किया। पहले दौरे में उन्होंने एक गुफ़ा के भीतर सहस्र-बुद्ध के एक मन्दिर को ढूँढ निकाला था। इस दफ़े भी वे इस मन्दिर को देखने गये। वहां से पूर्वोक्त दीवार के सहारे कोई २२० मील तक वे जङ्गल ही जङ्गल चले गये। मार्ग में उन्हें मिट्टी और धातु के पात्र तथा कितने ही प्राचीन सिक्के मिले। इससे सूचित हुआ कि यह प्रान्त किसी समय आबाद था। जगह जगह पर सीमा की रक्षा के लिए चीन की फ़ौज रहती थी। पानी न मिलने के कारण स्टीन साहब और उनके साथियों को इस रास्ते से जाने और खोज करने में बहुत कष्ट हुआ। परन्तु उन्होंने धैर्य्य न छोड़ा। फल यह हुआ कि लकड़ी पर खुदे हुए कितने ही प्राचीन लेख, लकड़ी की कितनी ही चीजें, और अनेक प्रकार के औज़ार उन्हें मिले। ये चीजें, इन जगहों में मिलीं जहां दो हज़ार वर्ष पहले चीन की सेना के अड्डे थे।

इसके बाद स्टीन साहब आगे बढ़े और उस उजड़े हुए प्रदेश की खोज की जहां किसी समय प्राचीन यूची जाति और हूणों का आधिपत्य था। ये वही हूण थे जिन्होंने अब एशिया से पश्चिमी देशों तथा भारत पर आक्रमण किया था। इस प्रान्त के खरादोंगो नामक उजड़े हुए नगर में स्टीन साहब को बौद्धों के लिखे हुए अनेक लेख, सिक्के, पात्र, धातु और पत्थर के औज़ार तथा गहने आदि मिले। इनसे सिद्ध हुआ कि इस प्रान्त में किसी समय बहुत बौद्ध रहते थे, बड़े बड़े शहर और गांव थे, और उनके निवासियों का भारत से विशेष सम्बन्ध था। अब पड़ता है, पानी की कमी के कारण ही ये बस्तियां धीरे धीरे उजड़ गईं और कालान्तर में यह प्रान्त का प्रान्त अनवरत भ्रमण और हेरीरे मैदानों में परिवर्तित हो गया।

## ११—चीन दर्शन-ज्ञान प्रसारक मण्डली।

उजड़े हुए चीन-दर्शन-ज्ञान प्रसारक मण्डली की बड़ी संस्था है। इसकी १९१४ ईसवी की रिपोर्ट से विदित हुआ है कि इस सभा अच्छा काम कर रही है। इसके लेख है

( १ ) पशुओं के हत्या-निवारण की चेष्टा ( २ ) मांस-भक्षण से होने वाली हानियों का प्रकटीकरण ( ३ ) विलायत से मँगा कर और बम्बई में छपा कर जीवदया-दर्शक साहित्य का प्रचार ( ४ ) निरामिष-भोजन के गुण बता कर पशु-रक्षा का प्रयत्न। यह सभा चन्दे और दान से चलती है। १९१४ में इसे कोई बारह हज़ार रुपये की आमदनी हुई। उसमें से उस साल इसे कुछ बच रहा; बाक़ी सब ख़र्च हो गया। अपने उद्देशों के साधन के लिए यह सभा हज़ारों पुस्तकें हर साल अँगरेज़ी, हिन्दी, गुजराती और मराठी में मुफ़्त बाँटती है। इसकी भेजी हुई बीस पचीस पुस्तकें हमारे पास भी आ चुकी हैं। पूर्वोक्त रिपोर्ट के साथ भी आठ पुस्तकें आई हैं। वे निःसन्देह सब के पढ़ने योग्य हैं। अमानुषीय आमिष-भोजन के दोष और निरामिष-भोजन के गुण उनमें योग्यतापूर्वक दिखाये गये हैं।

## १२—लड़ाई का ख़र्च।

जो युद्ध इस समय हो रहा है उसमें ३१ मार्च १९१५ तक इँगलेंड का पांच अरब चालीस करोड़ ( ५, ४०,००, ००,००० ) रुपया ख़र्च हो चुका है। यदि यह युद्ध एक साल और जारी रहा अर्थात् फ़रवरी १९१६ तक होता रहा—तो अकेले इँगलेंड को कम से कम पन्द्रह अरब ( १५, ००, ००, ००, ००० ) रुपया ख़र्च करना पड़ेगा। युद्ध में फँसे हुए यदि सभी देशों के ख़र्च का तख़मीना लगाया जाय तो डेढ़ सौ अरब से कई गुना रुपये तक पहुँच जाय! पृथ्वी पर आज तक अनेक बड़े बड़े युद्ध हुए और बरसों जारी रहे हैं। पर इतना ख़र्च किसी में भी नहीं पड़ा। सभ्यता की वृद्धि और विज्ञान में विशेष उन्नति होने के कारण युद्ध के साधन जुटाने आदि के झगड़े में अब बहुत अधिक ख़र्च पड़ता है। इसी से ख़र्च अधिक बैठता है। वाटरलू के साथ २२ करोड़ तक इँगलेंड को युद्ध करना पड़ा था। इन युद्धों में इससे कोई सात गुना अरब रुपया ख़र्च हुआ था। जो ख़र्च इसे ३१ करोड़ में करना पड़ा था उसमें भी अधिक ख़र्च इसे १० अरब में, इस समय, करना पड़ेगा। इस ख़र्च का कुछ हिसाब है। वह अब भी कायम, घट-बढ़ भी सकता है। कुछ बड़े बड़े युद्धों के ख़र्च का हिसाब नीचे दिया है—

| युद्ध का नाम | अवधि | ख़र्च |
|---|---|---|
| (१) राज्य-प्राप्ति सम्बन्धी स्पेन का युद्ध | ७ वर्ष | ७१,००,००,००० |
| (२) स्वतन्त्रता-प्राप्ति-सम्बन्धी अमेरिका का युद्ध | ७ वर्ष | १,४१,२०,००,००० |
| (३) क्राइमिया का युद्ध | २ वर्ष | १०,१२,२०,००० |
| (४) दक्षिणी अफ़रीक़ा का युद्ध | २½ वर्ष | ३,१६,१५,००० |

इससे सिद्ध है कि वर्तमान युद्ध में जितना ख़र्च हुआ है और आगे जितना ख़र्च होगा उतना और किसी में आज तक नहीं हुआ। शस्त्रास्त्रों की भयङ्करता और सेनाओं की असंख्यता में भी यह युद्ध भूत-पूर्व सभी से आगे बढ़ गया है। भगवान् शीघ्र ही इसकी शान्ति करे!

## १३—क़ैसर का ख़ज़ाना।

कोई पैंतालीस वर्ष पहले फ़्रांस और जर्मनी के बीच युद्ध हुआ था उसमें फ़्रांस बेतरह परास्त हुआ था। इस उसे जर्मनी को अपना कुछ देश भी देना पड़ा था और के ख़र्च की मद में बहुत सा रुपया हर्जाने के तौर देना पड़ा था। जर्मनी को रुपया बहुत मिला था। से नौ करोड़ रुपये की गिन्नियाँ क़ैसर ने एक जगह रख दी थीं। जर्मनी की प्रभुता बढ़ाने के इरादे और उनके मन्त्रिमण्डल ने किसी दिन घोर युद्ध निश्चय उसी समय कर लिया था। बात यह कि रुपया युद्ध ही में ख़र्च होना चाहिए। इस भारी उपक्रम सभी से हुआ था। अब कहीं वह पहुँचा है। जिस दिन के लिए वह रुपया था वह दिन अब वर्तमान है। बीच में कई को ज़रूरत पड़ी। इसने उधार लिया, पर इस रक़म से एक पाई भी ख़र्च करना तो दूर रहा, उसकी बराबर जाती रही। इस साल इसमें कुछ न कुछ और धीरे धीरे वह रक़म नौ करोड़ से सीमित वह सारी रक़म तहख़ानों में बन्द रही। क़ैसर युद्ध इसे बराबर आंखों से टेखते और

ता है। ज़मीन के भीतर लोहे के जिन तहख़ानों में रुपया
ये ऐसे बने हैं कि इच्छा करते ही पाम की नदी का
ी इनमें भर जा सकता है और वे १२ फ़ुट गहरे पानी
ब जा सकते हैं। स्पांडो नामक नगर में एक मीनार
उसी के भीतर यह ख़ज़ाना है। तौल कर इसकी जाँच
ने के लिए ऐसे तराज़ू बनाये गये हैं जो कुछ ही देर में
ठीक बता देते हैं कि कितना रुपया है। एक गिन्नी
एक रुपया भी यदि कम हो जाय तो तत्काल मालूम
जाता है।

पैंतालीस वर्ष बाद जर्मनी को रुपये की ज़रूरत हुई।
इस साल के शुरू में ये तहख़ाने खोले गये। जिस
में जर्मनी फ्रांस है उसमें उसका इतना ख़र्च हो रहा
कि बिना इस ख़ज़ाने से रुपया निकाले उसका काम ही
चल सका। इस ख़ज़ाने से निकाली गई गिन्नियाँ
ं, स्वीडन और डेनमार्क पहुँचीं। वहाँ से वे लन्दन
। लन्दन के बैंक आव् इँगलैंड के अधिकारियों ने
पहचान लिया। वे इँगलैंड ही की गिन्नियाँ हैं। इन
वर्तमान विक्टोरिया की तसवीर है। वे सब की सब १८०२
ढली हुई हैं। जिन थैलियों में भरी हुई वे लन्दन पहुँची
उनमें से कितनी ही थैलियों पर बैंक आव् इँगलैंड के
की पुरानी चिट्ठियाँ ज्यों की त्यों चिपकी हुई हैं। जर्मनी
देने के लिए ये गिन्नियाँ फ्रांस ने इँगलैंड ही से ली थीं।
से इस पर बैंक आव् इँगलैंड की मुहर है। अतएव इसमें
भी सन्देह नहीं कि ये वही गिन्नियाँ हैं और रुपये की
ी के कारण इँगलैंड को अपना ख़ज़ाना खोलना पड़ा है।

## १४—चन्दन की पट्टी।

मथुरा की फ्रेंड एंड कम्पनी ने चन्दन की एक पट्टी
ण में रख कर भेजने की कृपा की है। देखने में यह
ड़ पट्टी सर्वांश में चन्दन की है। कैसे पुलकर
रूप में बने हुए साढ़े के पट्टों की होती है वैसी ही इसकी
है। चन्दन के पत्थर पतले टेरेने का सारे में कर
गई है। इसकी भी सुन्दर और सुगन्धित है।
न सुगन्धित है। भारतीय शिल्प का का उत्तम उदाहरण
। इस कम्पनी के ठौरन्ज़ लिखते हैं कि इसके दाम चन्दन
पट्टियों के रुपये से ऊपर ५० रुपये तक की होती हैं।

## १५—पनामा की प्रदर्शिनी में भारतीय विद्वानों और विद्या रसिकों का सम्मेलन।

पनामा की नहर खुलने के उपलक्ष्य में संयुक्त-राज्य अमेरिका के सान फ्रांसिस्को नगर में जो विराट् प्रदर्शिनी हो रही है उसका वर्णन सरस्वती में प्रकाशित हो चुका है। इस प्रदर्शिनी में देश-देशान्तरों के विद्वानों और विद्या प्रेमियों आदि के कोई आठ सौ सम्मेलन भी होंगे। बहुत से हो भी चुके हैं। सब विश्व के विद्वान् एकत्र होंगे, व्याख्यान होंगे, लेख पढ़े जायँगे। इस प्रकार भिन्न भिन्न देशों के लोगों के बीच सुहृद्भाव उत्पन्न करने और बढ़ाने की चेष्टा की जायगी। डाक्टर केंगरेड शार्पी के प्रयत्न और प्रेरणा से वहाँ भारतीय विद्या रसिकों की भी एक सभा होने वाली है। उसका नाम है—The Hindu-[illegible] इस सभा के अधिवेशन १४ १५, १६ अगस्त १९१५ को होंगे। सर्व-साधारण के अधिवेशन (Universal Congresses) में पूर्वोक्त सभा में सम्मिलित होने के लिए सरस्वती-सम्पादक को भी आमन्त्रित किया है। यह पत्र ५ जून १९१५ का लिखा हुआ है, पर उसके [illegible] अगस्त की कृपा से ठीक किया गया था। इस कारण यह कोई १० दिन देर से पहुँचा। इस पत्र में कुछ और भी ज़रूरी बातें अगले अङ्क में प्रकाशित होंगी।

---

## पुस्तक-परीक्षा।

१—[illegible]

कर्तृत्व के सम्बन्ध में शङ्का हो सकती है। क्योंकि इसमें बौद्ध मत के सिद्धान्तों का भी उल्लेख है और बौद्धमत का उदय वाल्मीकि के बाद हुआ है। तथापि, कुछ भी हो, यह ग्रन्थ है बड़ा उत्तम। इसे वेदान्त-विषयक ग्रन्थों का शिरोभूषण कहना चाहिए। जिस तरह पूर्व-रामायण में ६ काण्ड हैं—बाल, अयोध्या, अरण्य, किष्किन्धा, सुन्दर और लङ्का—उसी तरह इस उत्तर-रामायण में भी ६ प्रकरण हैं—वैराग्य, मुमुक्षु, उत्पत्ति, स्थिति, उपशम और निर्वाण। इनमें से भी पहले दो प्रकरण अधिक महत्त्व के हैं। उनका कई बार अनुशीलन करके हमने अनन्त लाभ उठाया है। मूल पुस्तक संस्कृत में है। उसे बम्बई के गणपति कृष्णा जी के छापेखाने में छपे बहुत समय हुआ। इसका सबसे पहला अनुवाद गुरुमुखी भाषा में हुआ। उसके आधार पर लखनऊ में इसका हिन्दी-अनुवाद निकला। बम्बई का छपा हुआ, इसके कई प्रकरणों का, हिन्दी-अनुवाद इस नोट के लेखक के पिता के पास था। यह कोई ३० वर्ष की बात है। याद नहीं, वह किसका प्रकाशित किया हुआ था। वह पुस्तक इस समय हमारे संग्रह में नहीं। यहां, इस प्रान्त में, अबसे लाला भैरवनाथ जी ने इस परमोपयोगी ग्रन्थ का एक सुन्दर अनुवाद प्रकाशित कराया तबसे इसका परिचय बहुत लोगों को होगया। पर मूल्य अधिक होने से इसका यथेष्ट प्रचार न हो सका।

जिस पुस्तक का परिचय हमें इस नोट में देना है वह इस ग्रन्थ के पहले पांच प्रकरणों का गुजराती अनुवाद है। इसके पहले भी इसके दो एक अनुवाद गुजराती में निकल चुके हैं। उनका मूल्य अठारह अठारह रुपये तक होने के कारण गुजराती जाननेवालों में भी इसका यथेष्ट प्रचार नहीं हुआ। पर, अब, आशा है, इस अनुवाद से हज़ारों लोग लाभ उठा सकेंगे, क्योंकि इसका मूल्य बहुत ही कम, अर्थात् केवल तीन रुपया, है। इसे अहमदाबाद और बम्बई के सस्तु-साहित्य-प्रचक कार्यालय ने छपा कर प्रकाशित किया है। आकार बड़ा, पृष्ठ-संख्या ३४०, कागज़ मोटा और छपाई सुन्दर है। टाइप बहुत बड़ा लगाया गया है। प्रत्येक जिल्द बँधी हुई है। यह अनुवाद बम्बई की वेदधर्म-सभा के प्रबन्ध से किया गया है। प्रत्येक सर्ग के आदान्त में [illegible] दे दिये गये हैं। भाषा सरल है। जो गुजराती भाषा नहीं समझते, पर तीन रुपये [illegible] सकते हैं, उन्हें भी इस ग्रन्थ की एक कापी लेकर पुस्तक संग्रहालय की शोभा बढ़ानी चाहिए। पूर्वोक्त का इस अनमोल ग्रन्थ को कौड़ियों के मोल बेच रहा है।



२—परीक्षा-मुख। आकार छोटा; पृष्ठ-संख्या मूल्य ६ आने; मिलने का पता—श्रीयुत घनश्यामदास स्याद्वाद-महाविद्यालय, कारी। कोई ११०० वर्ष माणिक्यनन्दि-स्वामी नाम के एक जैन विद्वान् हो गये यह पुस्तक उन्हीं की रचना है। संस्कृत में है। न्यायशास्त्र की है और सूत्रमय है। पूर्वोक्त घनश्यामदास ही इसे "भाषार्थ" और भाषार्थ-सहित प्रकाशित किया मूल पुस्तक अच्छी है। थोड़े में "प्रमाण" का अच्छा वि किया गया है। उसके स्वरूप, संख्या, विषय और फल का निरूपण इसमें है। खेद है, इसके "भाषार्थ" भावार्थ में कहीं कहीं त्रुटियां रह गई हैं। उदाह इसके पृष्ठ ७४ में—

अविद्यमानसत्ताकः परिणामी शब्दश्चाक्षुषत्वात्।

इस सूत्र का भाषार्थ लिखा गया है:—

शब्द परिणामी होता है, क्योंकि वह चक्षु से जाना जाता है—

इसमें "अविद्यमानसत्ताकः" पद का अर्थ ही किया गया। इसी तरह की और भी त्रुटियां इस भाषा भी यत्र तत्र सदोष है। तथापि पुस्तक उपादेय है

३—"विवेचक" की पुस्तकें। गुजराती मा मासिक पत्र "विवेचक" के सम्पादक ने दो पुस्तकें भेजी (१) पहली का नाम है—पाप-पुञ्ज। इसकी भाषा गुज आकार मँझोला, पृष्ठ-संख्या १३४ और मूल्य ४ आने इसमें एक जासूसी कहानी है—"पैसा ने माटे दुनिया केवा केवा भयङ्कर कामो थाय छे, तेनो चितार आ कल्पित नवल कथा मां यथामति आपवा मां आव्यो। (२) दूसरी पुस्तक का नाम है—हिन्द ना महान पुरु टुंकां जीवन-चरित्र, भाग १ लो। इसकी भी भाषा रानी और आकार मँझोला है। इसकी पृष्ठ-संख्या १२ मूल्य लिखा नहीं। इसमें बाबू कृष्णकुमार मित्र, श्रीयुत [illegible] चन्द (?) दत्त, श्यामसुन्दर चक्रवर्ति (?) आदि

सरस्वती

श्याम सरदृ ।

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

भाय स्थंबक तेलङ्ग, लाला लजपतराय (?), ओन (?) (?)जी० के० गोखले, सी० आई० ई० के संक्षिप्त जीवन-रेख है। मिलने का पता—विवेचक मासिक पत्र का लाहरम, नांदोद। ये दोनों पुस्तकें विवेचक के ग्राहकों पहार में दी गई हैं। सो, गुजराती भाषा के पत्रों के तों को भी उपहार के रूप में "लांच" देनी पड़ती है।

❊

४—स्त्रीदर्पण। इस मासिक पुस्तक की सम्पादिका, ति रामेश्वरी नेहरू, ने इसकी जुलाई १९१२ की संख्या लोचना के लिए भेजी है। समालोचना इस प्रकार है—

यह मासिक पुस्तक ६ वर्षों से इलाहाबाद से निकलती इसका वार्षिक मूल्य २।) है। नाम से सूचित होता है सकी सम्पादिका कारमीरी महिला है। यह हिन्दी के लिए ष की बात है। जिन कारमीरियों पर उर्दू-फ़ारसी ही धिक आधिपत्य था उनकी गृह-देवियों ने हिन्दी को ा देना तो आरम्भ कर दिया। इस पुस्तक के प्रस्तुत में सँझोले आकार के १२० पृष्ठ और २२ गद्यपद्यात्मक है। तीन सादे चित्र हैं और एक रङ्गीन। कागज़, पतला, ा और छपाई साफ़ है। पद्य-लेखों की अपेक्षा गद्य लेख ा अच्छे हैं। इन पिछले लेखों में कई एक बड़े महत्व — विशेष कर वे जो अन्य भाषाओं से अनुवाद किये '। इनके यदि सभी अङ्क ऐसे ही न निकलने हों तो ी पुस्तक आश्रय देने और अवलोकन करने योग्य है।

इस, नेहरू महाशया की आज्ञा के परिपालन में हमें ही निवेदन करना है।

❊

५—निबन्ध-माला। इस नाम की एक नई मासिक भरतपुर से निकली है। इसके दो अङ्क हमें एक ही साथ प्राप्त हुए हैं। पहले अङ्क में २८ और दूसरे में ४२ । प्रत्येक अङ्क में एक एक हाफ़टोन चित्र भी है। इन अङ्कों में प्रकाशित कविताओं में से कई कवितायें बहुत और भावमयी हैं। दर्शन शास्त्र की उत्पत्ति और प्रसार, तथा संस्कृत-भाषा और भाषा-साहित्य, ये दो भी इन अङ्कों में विशेष उल्लेख-योग्य हैं। इसके क और प्रकाशक ने जिन विद्याधियों का उल्लेख है उनको भेज कर भी आपने इस माला को विकास ही दिया, यह आपकी उद्योगशीलता और दृढ़ निश्चय का प्रमाण है। आशा है, आप इसे बराबर निकालते जायँगे और दिन दिन इसकी उन्नति भी करते जायँगे। इसका मूल्य दो रुपया वार्षिक है। मिलने का पता—प्रबन्धकर्त्ता, निबन्ध-माला, विरक्त-मन्दिर, भरतपुर।

❊

६—प्रणवीर प्रताप। आकार छोटा; पृष्ठ-संख्या ५३; छपाई और कागज़ उत्तम; मूल्य ५ आने; लेखक, पण्डित गोकुलचन्द शर्म्मा, धर्म्मसमाज-पाठशाला, अलीगढ़, से प्राप्य। इस २०२ पद्यों की पुस्तक में मेवाड़ के वीर शिरोमणि महाराना प्रताप का कीर्तिगान है। रचना ओजस्विनी है। नमूना—

वह स्वर्ग ही जन्मा जगाया देश को जिसने नहीं।
जातीय जीवन की झलक आई कभी जिसमें नहीं।

❊

७—रङ्गमहलरहस्य। आकार सँझोला, पृष्ठ-संख्या ६२; मूल्य ६ आने, प्रकाशक, एम० पी० सेठ, गऊघाट, मिर्ज़ापुर, छपाई और कागज़ अच्छा। श्रीयुक्त हरिसाधन मुखोपाध्याय की बँगला पुस्तक का यह हिन्दी-अनुवाद है। अनुवादकजी ने अपना नाम नहीं दिया और प्रकाशकजी ने भी नाम लिखने में अँगरेज़ी ढंग की नक़ल करके अपना असली नाम नहीं प्रकट होने दिया। यह शायद इसलिए कि इस पुस्तक में—"मुग़ल बादशाहों के अन्तःपुर की गोपनीय बातें"—हैं। मिलने का पता—मैनेजर, मुक्तम ग्रन्थ-प्रचारक मण्डल, गऊघाट, मिर्ज़ापुर।

❊

८—हरिदास कम्पनी की पुस्तकें। (१) हिन्दी-बँगला-कोष। पृष्ठ-संख्या ४८२, मूल्य डेढ़ रुपया। नाम होना चाहिए था—बँगला हिन्दी कोष, क्योंकि इसमें बँगला-लिपि में बँगला शब्दों के अर्थ हिन्दी में दिये गये हैं। हिन्दी-शब्दों की लिपि देवनागरी है। कोष छोटा, पर उपयोगी है। बँगला सीखनेवालों और बँगला-पुस्तकों का अनुवाद करनेवालों के बड़े काम का है। अर्थ लिखने में कहीं कहीं भूलें हो गई हैं। "चारुलोचन" का अर्थ—"शिव की सी आंखें हों जिसकी"—ठीक नहीं। चारुदृग का—सुन्दर हों आंखें जिसकी। पर ऐसी भूलें बहुत नहीं।

(२) संयोगिता। पृष्ठ-संख्या ६६; मूल्य ३ आने। बाबू सतीशचन्द्र की बँगला-पुस्तक का अनुवाद है। इसमें राजा जयचन्द की कन्या और पृथ्वीराज की रानी संयोगिता की कहानी है। अच्छी है। (३) वीर चूड़ामणि। पृष्ठ-संख्या १००; मूल्य ६ आने। ऐतिहासिक उपन्यास है। मेवाड़ के राजकुमार चूड़ाजी की वीरता और एक राजकुमारी से उनके विवाह आदि का वर्णन है। लिखने की शैली मनोहारिणी है। भाव मनोवेधक हैं। (४) उपदेश-कुसुमाञ्जलि। पृष्ठ-संख्या ४४; मूल्य २ आने। छोटे छोटे तीन सौ उपदेशों का सङ्ग्रह है। रचना गद्य में है। उपदेश उपादेय हैं। (५) पाप-परिणाम। पृष्ठ-संख्या १३७; मूल्य ६ आने। बाबू मणीन्द्रमोहन बसु की बँगला-पुस्तक "पापेर परिणाम" का यह हिन्दी-अनुवाद है। यह दो खण्डों में है। पहले में कीचक-वध है, दूसरे में जयद्रथ-वध। इसकी पौराणिक कथा बालक-बालिकाओं के पढ़ने लायक है। भाषा कहीं कहीं कुछ शिथिल है। (६) महाराणा प्रताप। पृष्ठ-संख्या १०८; मूल्य ६ आने। यह नाटक है। कथानक इसका सर्वश्रुत है। इसके पद्य-भाग का अधिकांश बाबू हरिश्चन्द्र और बाबू राधाकृष्णदास आदि की पुस्तकों से लिया गया है। यही इसके प्राण हैं। नाटक का विस्तार अधिक नहीं, अतएव इसके अभिनय में सुभीता है। प्रूफ़-संशोधन में यत्र तत्र असावधानता हो गई है। "उदू होवें पामाली मग़लूब शाह के"—इसके पहले तीन शब्द एक ही में मिले हुए छप गये हैं। (७) मँझली बहू। पृष्ठ-संख्या ११६; मूल्य २ आने। यह अनुवाद है। पर लेखक ने यह बताने की कृपा नहीं की कि किस भाषा की किस पुस्तक का। कथा इसकी औपन्यासिक है। इसके सामाजिक दृश्यों में स्वाभाविकता है। इसमें एक सेवक की स्वामि-भक्ति का चित्र बड़ा ही सुन्दर है। भाषा में कहीं कहीं शैथिल्य आ गया है।

इन सभी पुस्तकों की छपाई और काग़ज़ मनोहर है। इनका मूल्य मँगाने का है। मिलने का पता—हरिदास एंड कम्पनी, २०१ हरिसन रोड, कलकत्ता।

९—सिन्धु-भास्कर प्रेस की पुस्तकें। (१) भारत-पुष्पावलि। आकार छोटा, पृष्ठ-संख्या ३२, मूल्य २ आने। इस छोटी सी पुस्तक में देश-भक्ति-पूर्ण भ संग्रह है। नमूना—

दशावतार वेनि चारो अवतार—
भारत-दशा आज द्वापर से महानन्द है आज।
पल पल में मिटता जाता है परवश आर्य्य-समाज।
देवतुल्य थे भारतवासी हुए आज कुछ और।
भूतल पर जिनका अब उनको नहीं कहीं भी ठौर।

इत्यादि। (२) संसारोपयोगी वेदान्त। आकार पृष्ठ-संख्या ८०, मूल्य २ आने। स्वामी रामतीर्थ कुछ वक्तृताओं का नाम है—ग़ैर मुल्कों के तजरबे। अब इस नये नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित की गई इनमें प्रकट किये गये विचार अनमोल हैं।

दोनों पुस्तकें मिलने का पता—सिन्धु-भास्कर हैदराबाद, सिन्ध।

१०—आत्मतत्त्व-प्रकाश। आकार छोटा, पृष्ठ-सं ११२, मूल्य ज्ञात नहीं। प्राप्ति-स्थान—लक्ष्मीनारायण मुरादाबाद। यह महामहोपाध्याय डाक्टर सतीशचन्द्र वि भूषण, एम० ए०, पी—एच० डी० की बँगला पुस्तक अनुवाद है। मुरादाबादनिवासी पण्डित ज्वालादत्त इसे लिखा है। पुस्तक दो भागों में विभक्त है। भारतीय दर्शनों का संक्षिप्त इतिहास और दूसरे में तत्त्व का निरूपण है। भारत के गहन दार्शनिक परिशीलन करने वालों में भी विरले ही संस्कृतज्ञ इसे ठीक आन्तरिक आशय समझ सकते हैं; केवल हिन्दी वालों के लिए तो यह बात प्रायः असम्भव ही थी। यह सम्भव हो गई। इसमें भारत के प्राचीन दर्शन का इतिहास लिख कर डाक्टर सतीशचन्द्र ने आत्मा, कर्म्मबन्धन, जगत्, जन्म, मृत्यु, पुनर्जन्म, मुक्ति का वर्णन थोड़े में, पर बड़ी योग्यता से, किया है। की भाषा सरल—सब की समझ में आने योग्य—है। पढ़ लिया मानों थोड़े ही में भारतीय आध्यात्मिक का ज्ञान प्राप्त कर लिया।

११—गूलर। यह मासिक पत्र दो वर्ष बनारस से निकलता है। आकार में यह सरस्वती

चित्र भी इसमें रहते हैं। निम्न पर भी वार्षिक मूल्य का केवल दो रुपये है। इसमें कभी कभी बड़े अच्छे लेख निकल जाते हैं। इसके तीसरे वर्ष के चौथे अङ्क में—चीन राज्य-प्रबन्ध—नाम का एक छोटा सा लेख पढ़ने योग्य है। पत्र लेने और पढ़ने लायक है।

❋

१२—गोपकाव्यो। भाषा गुजराती, आकार मँझोला; संख्या २२ × १२२; जिल्द बँधी हुई; मूल्य आठ आने; लेखकर्त्ता कल्याणजी विट्ठलभाई मेहता और धुनीलाल नन्द शेलत; प्रकाशक कुंवरजी विट्ठलभाई मेहता, ज्ञान-बन्धु-आफिस, सूरत। इस पुस्तक में अनेक प्राचीन और नवीन गुजराती कवियों की कविताओं का संग्रह है। इन कविताओं में ग्राम्य-जीवन-सम्बन्धी दृश्यों के मनोहारी शब्द-चित्र हैं। देहातियों के सरल स्वभाव, स्वाभाविक स्नेह-सहन और भोले भाले भावों के वर्णन के सिवा प्राकृतिक दृश्यों का भी अच्छा वर्णन है। नरसिंह मेहता, नानालाल दलपतराम, दीनदयाराम कृपाराम, डाह्या भाई, लक्ष्मण भाई, मंदाशङ्कर बालाशङ्कर आदि नामी नामी कवियों की कविताएँ इस में संग्रहीत हैं। संग्रह अच्छा है।

❋

१३—सौ अजान और एक सुजान। आकार मँझोला, पृष्ठसंख्या १०३, मूल्य ६ आने। यह एक छोटा सा उपदेश-पूर्ण उपन्यास है। हिन्दी के परम प्रेमी श्रीयुक्त बालकृष्ण भट्ट की रचना है। पहले पहल हिन्दी दीप में क्रम क्रम से छपा था। फिर भट्ट जी ने इसे अलग पुस्तकाकार छपाया था। अब इसे हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (प्रयाग) ने प्रकाशित किया है। इसे पढ़ने से शिक्षा भी मिल सकती है और भट्ट जी की अनोखी रचना शैली का आस्वादन भी प्राप्त हो सकता है।

❋

१४—धर्म्मप्रकाश : द्वितीयसमुल्लासः। अप्रैल १९१२ की सरस्वती के पृष्ठ २१७ पर ६ नंबर की पुस्तक की आलोचना पढ़िए। उसी का यह दूसरा भाग है। इसकी पृष्ठसंख्या ३६ और मूल्य ७ आने है। लेखक ही से मिलती है।

❋

१५—औपसर्गिक सन्निपात (प्लेग) आकार मध्यम, पृष्ठसंख्या ४०, मूल्य चार आने। इस छोटी सी पुस्तक में पण्डित राधावल्लभ वैद्यराज ने—"प्लेग का इतिहास, प्लेग का आयुर्वेदीय और डाक्टरी मतानुसार विवेचन, प्लेग का तात्त्विक सम्बन्ध, प्लेग और धर्म्म, संक्रामक रोगों के कारण, प्लेग-चिकित्सा आदि"—का वर्णन किया है। निबन्ध उपयोगी है। मिलने का पता—आरोग्य-सिन्धु-कार्य्यालय, विजयगढ़, अलीगढ़।

❋

१६—भ्रातृ-भाव। आकार छोटा, पृष्ठसंख्या २३, मूल्य ३ आने, लेखक और प्रकाशक—श्रीयुत दामोदरसहाय-सिंह, स्कूल सब-इन्स्पेक्टर, आरा। इस छोटी सी पुस्तक में भ्रातृ-भाव का अच्छा विवेचन है। उससे होने वाले लाभ भी खूब दिखाये गये हैं। लेखक महाशय ने अन्त में लिखा है कि भ्रातृ भाव के प्रचार के लिए मातृ भाषा की उन्नति की बड़ी आवश्यकता है।

❋

नीचे जिनके नाम दिये गये हैं वे पुस्तकें भी पहुँच गई हैं। भेजने वाले महाशयों को धन्यवाद—

(१) आर्य्याचारादर्शः
(२) महामारीकल्पः
(३) दिव्यानन्दचन्द्रोदयः प्रथमो भागः
(४) ,, द्वितीयो भागः
(५) रसमञ्जूषा, प्रथम भाग

प्रेषक, पण्डित देवनारायण मिश्र, आरा, डाकखाना कुरथा, गया।

(६) स्वर्गीय जीवन—प्रकाशक, श्रीयुत हरिदास बैद्य, २०१ हरिसन रोड, कलकत्ता।

(७) शिव-पार्वती का विवाह—लेखक, मुं० रामगुलाम-लाल, ज़िला छपरा।

(८) श्रीरामानुज-गुरु-परम्परा—लेखक, स्वामी श्लोकटा-नन्द, बेलनगञ्ज, आगरा।

(९) दुर्वासा-मुनि-स्वीकार नाटक—लेखक, पण्डित शिवदत्त काव्यतीर्थ, अजमेर।

(१०) पाठशाला के विद्यार्थी और उनका स्वास्थ्य } लेखक, श्रीयुत सिद्धनाथ माधव खोंडे, आगर।

(११) दान-धर्म्म-प्रचारिणी सभा का वार्षिक वृत्तान्त } प्रकाशक, माननीय बा० सुन्दरसिंह, मुजफ्फरनगर।

(१२) दमयन्ती-चरित्र
(१३) बालिका-विनोद } प्रेषक, अध्यक्ष सावित्री-कन्या-पाठशाला, फ़तेहपुर।

(१४) भारत-सुधार-भजनमाला—लेखक, विद्यार्थी "सेवक," इलाहाबाद।

(१४) भक्ति—अनुवादक, बाबू दामोदरसहायसिंह, आरा।
(१५) रत्नमहल-रहस्य, संख्या २—प्रकाशक, एम० पी० सेठ, मिर्ज़ापुर।
(१७) पिङ्गल—प्रकाशक, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन कार्य्यालय, प्रयाग।
(१८) मिस्टीज़ आफ़ अलीगढ़—लेखक, मास्टर मुरारीलाल गुप्त।
(१९) सुरत में जयन्ती-महोत्सव—प्रकाशक, शेट मगनीचन्द कपूरचन्द झवेरी।

---

## चित्र-परिचय।

### (१)

### वर्षा-विहार

इस महीने का पहला रङ्गीन चित्र वर्षा-विहार है। वर्षा ऋतु है। व्रज की कुञ्जों में चित्र-विचित्र कुसुम-कदम्ब खिल रहे हैं। मेघों से नभो-मण्डल आच्छादित है। धीरे धीरे मेह बरस रहा है। रह रह कर बिजली चमक उठती है। पास ही यमुना बहती हुई चली जा रही है। ऐसे ही सुखमय समय में राधिका और कृष्ण गलबाँही दिये हुए वर्षा-विहार कर रहे हैं। इसी दृश्य को एक चतुर चित्रकार ने इस चित्र में अङ्कित किया है। यह चित्र हमें टेहरी-गढ़वाल के श्रीयुत कुँवर विचित्रशाह की कृपा से प्राप्त हुआ है।

---

### (२)

दूसरा रङ्गीन चित्र श्रावण नाम का है। इस में हिंडोले का दृश्य है। चित्र के नीचे के छप्पय का भाव प्रकट करने के लिए ही चित्रकार ने इस चित्र का अङ्कन किया है। छप्पय कविवर केशवदास कृत है और पूर्ववत् उन्हीं के ग्रन्थ से उद्धृत किया गया है।

### (३)

### राजकुमार सिद्धार्थ की दानशीलता।

सर एडविन आर्नल्ड ने लाइट आव एशिया (Light of Asia) नाम की एक पुस्तक लिखी है। उसमें महात्मा बुद्ध का जीवन-चरित है। इसमें एक घटना का वर्णन है। लिखा है कि राजकुमार सिद्धार्थ कुमारियों को अशर्फ़ी-भाण्ड वितरण कर सिद्धार्थ का दिया हुआ उपहार ले लेते भाण्ड रिक्त हो गया। ऐसे समय में राजकुमारी आई। अब उसे क्या दिया और कुछ पास न देख, अपने गले से पहनी कर उसे दे दिया। वह उसे पाकर कृतार्थ ने उसी के साथ विवाह करने का निश्चय किया दान के दृश्य का चित्र, चित्रकार श्रीयुत वर्म्मा ने कलकत्ते से भेजने की कृपा की है। अन्यत्र, इसी संख्या में, प्रकाशित पावेंगे।

---

### (४)

### श्यामगरुड़।

डाक्टर महेन्द्रलाल गर्ग ने लड़ाई के परिचमी से "श्यामगरुड़" नाम का एक चित्र भेजने की कृपा है। यह चित्र इसी संख्या में अन्यत्र प्रकाशित है। चित्र विषय में उन्होंने लिखा है:—

"चित्र पर फ़्रांसीसी भाषा में "ल-ईगल नोइर" है। इसका अर्थ होता है—"श्यामगरुड़"। ईगिल (जर्मन लोगों का जातीय चिह्न है। जैसे वह आकाश में ऊँचे चढ़ कर नीचे छोटे छोटे जन्तुओं पर भी नज़र है वैसेही जर्मन लोग भी अपने को सर्वोच्च समझते हैं। इस बार गरुड़ ने फ़्रान्स पर झपटा मारा है। इस चित्र में की मीयान से तलवार निकाल रही है और गरुड़ की देख रही है वह फ़्रान्स है। उसके पटके में तीन रङ्ग हैं— पीला और गुलाबी। यही फ़्रान्स के जातीय झण्डे के रं उसके दाहने पैर के नीचे जर्मन का ताज और झण्डा प है। पीछे की ओर जर्मन-मुकुट आग से जलाया जा रहा मेरे जो मित्र चित्र विद्या को अच्छी तरह समझते हैं, अपेक्षा इस चित्र के भाव को विशेष-रूप से समझ स गरुड़ का झपटा मारना भी, इस चित्र में अच्छा दि गया है।"

आशा है सरस्वती के पाठक इस भाव भरे चित्र को पसन्द करेंगे।

Printed and published by Apurva Krishna Bose, at the

# ज़िन्दगी की बहार यानी ३० साल की आज़मूदा

## ज़बरदस्त ताक़त की अनमोल गोलियां

देखिये ताक़त की गोली की बहार

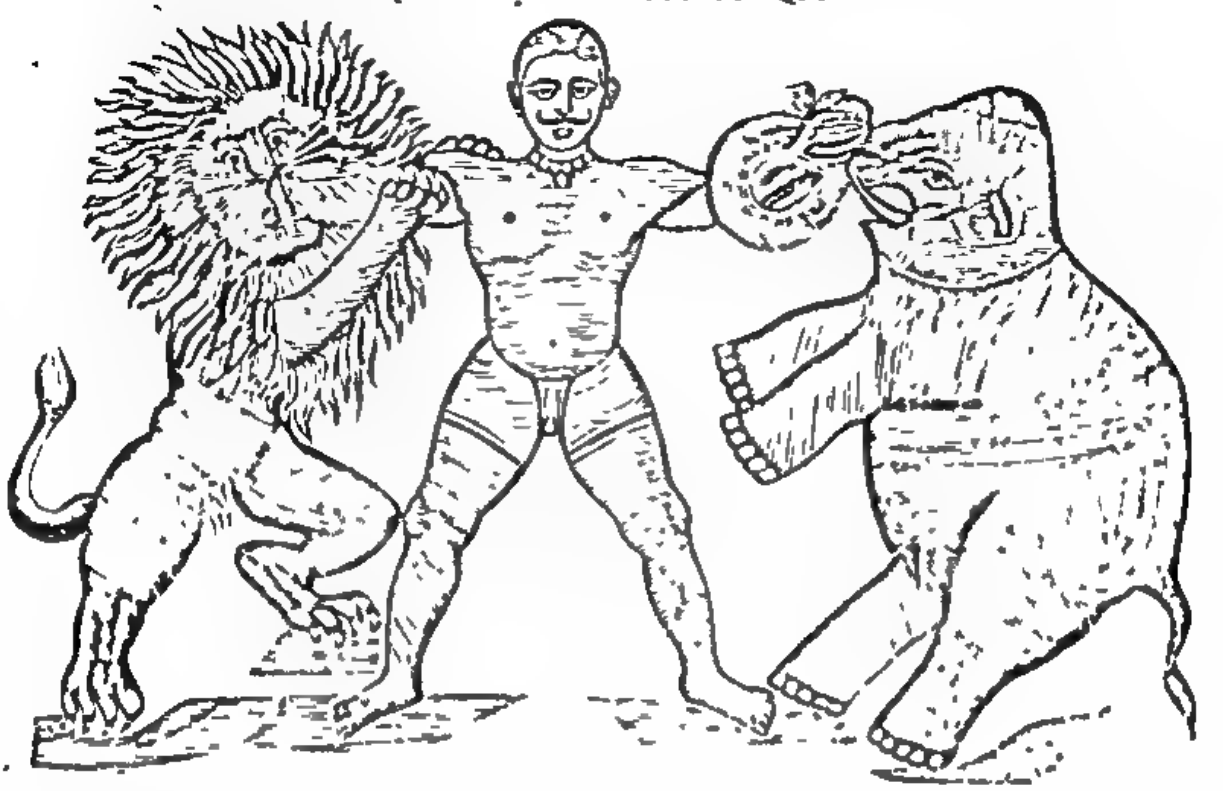


ज़ोर हाथी का करे इनसां शिकार

लीजिए यह वही ज़बरदस्त ताक़त की अनमोल गोलियां हैं, जिनकी हमारे ग्राहक महाशयों को अत्यंत आवश्यकता थी। मनुष्य चाहे कैसा पतला कमज़ोर या सुस्त क्यों न हो, अकेले ही रोज़ दो गोलियां खाने से ताक़त पैदा होती है। कुछ रोज़ सेवन करने से नातावत्ती हमेशा के लिये किनारा कर जाती है। भूख ख़ूब लगाती हैं। दस्त साफ़ होता है। शरीर की नसें कमज़ोर होगई हों तो इन गोलियों के सेवन करने से बिलकुल आराम होजाता है। शरीर में हर समय सुस्ती रहना सर में चक्करों का आना या दर्द होना, हाथ पैरों में कमज़ोरी, आंखों में बार २ पानी भरआना, थोड़ी मेहनत से थकावट मालूम होना, किसी काम में मन का न लगना, चेहरे पर ख़ुश्की या पीलापन होना, इन सब को दूर कर ज़बरदस्त ताक़त पैदा करती हैं। बुढ़ापे में जवानी की सी ताक़त मालूम न होगा दाम वापिस। जिस पत्र आप इन गोलियों का सेवन करेंगे अपने मनोरथ को भली भांति पूरा कर बदन में फूले न समायेंगे ये गोलियां स्त्रियों के लिए भी लाभदायक हैं इनसे तत्काल फ़ायदा पहुंचने के सिवाय बहुत से प्रशंसापत्र मौजूद हैं। कम ज़ोर की वजह से नहीं लिख सकते। आप अलहदा मंगा कर देख सकते हैं। क़ीमत २८ गोलियों की डोज़ी सिर्फ १) २ डोज़ी एक साथ लेने से १।।) ६ डोज़ी एक साथ लेने से ४।) १२ डोज़ी लेने से ८)

### इस पर भी उपहार सिर्फ़ २० रोज़ तक।

इसके हर एक ख़रीदार को आत्म-समर्पण महाना लेकर के पूरी की बिलकुल मुफ़्त में उपहार करते। आने समय जो विमान बनाया था, उसके फोटो का चित्र बिना मूल्य दिए जाएगा। अपरिचित को कोई वस्तु से खाली न रहना चाहिए यह हमारे देश का गुण है।

पता:—चन्द्रप्रकाश कम्पनी, कर्नलगंज, इलाहाबाद।

# दद्रु-शत्रु

## दाद की खुजली और तकलीफ़ लगाते ही दूर होती है। इनाम २५० रुपये

यह दाद की एक अजीब दवा है, लगाते ही दाद छूमंतर हो जाता है। दाद के लिये दवाओं के आप हजारों विज्ञापन देखते होंगे पर दाद की दवाओं में एक यह दोष होता है कि दाद जड़ से अच्छा नहीं होता, कुछ दिन के लिये दबही जाता है। हमारी दवा में यह बात नहीं है। इसको कुछ ही दिन लगाने से दाद बिलकुल जड़ से चला जाता है।

खूबी यह है कि इससे न तो जलन होती है और न किसी प्रकार का कष्ट होता है। इसका शीघ्र प्रचार करने के लिये हमने इसकी क़ीमत सिर्फ़ ।) चार आने मात्र रक्खी है। और नीचे लिखे अनुसार उपहार देता है।

### उपहार ! उपहार !! उपहार !!!

४ शीशी एक साथ लेने से महसूल-डाक माफ़

८ शीशी एक साथ लेने से एक इंगलिश फाउंटेन पेन यानी बिना स्याही में डुबोये लिखने वाली क़लम मुफ़्त

१२ शीशी एक साथ लेने से एक बिलायती कैमरा मुफ़्त।

१८ शीशी एक साथ लेने से एक सायकोप सिनेमा होगा जैसी घड़ी मुफ़्त।

२१ शीशी एक साथ लेने से एक सिल्वर प्लेटेड दर्द बीघने की घड़ी मुफ़्त। घंटी के साथ।

( नोट ) जो हजरती अब से दद्रु का नाम सर्वदा के लिये हमेशा दद्रु को नष्ट करना चाहते हैं वे हमसे पत्र लिखें।

पत्र का पता—

# चंद्रसुखीकरण

यह दव
यती ,
फूलों की
इसे वि
एक मशहू
ने बनाक
अभी रख
है। सा
बदन पै
पर मल क
से, स्याह
गुलाब के
भाँति
सफ़ेद, मर
माफ़िक
हो जाती है
से ख़ुशबू की प्यारी २ लहर निकलने ल
सीतला माता के दाग, आँखों और गालों
दाग, झाँई छोप झुर्रियाँ मुहासे आदि सो मि
ऐसी ख़ूबसूरती आ जाती है कि चेहरा
माफ़िक चमकने लगता है। तारीफ़ यह है
रंगत और ख़ूबसूरती इससे पैदा होती है
क़ायम रहती है क्योंकि यह यह पोडर नहीं
बाज़ारी चीजें लगाकर घड़ी दो घड़ी को
चमड़ी कर लेती हैं। अपनी प्राणप्यारी को
मुर्गी बनाना है तो इसे अवश्य मँगाइये।
फ़ी बोतल १॥) तीन बोतल एक साथ
पारसल खर्चा माफ़।

मिलने का पता—

रमेशचंद्र एण्ड को०,

स्यालकोट ( पी ओ ) पं

विज्ञापन के मुताबिक न होने पर दाम वापिस देंगे।

# मैस्मेरिज़म अंगूठी।

यह विचित्र मैस्मेरिज़म अंगूठी बड़ी ही आश्चर्य-कारक आकर्षणशक्ति की बहुमूल्य वस्तुओं के [illegible] बिजली की ताक़त देकर बड़ी मिहनत से तैयार की है। यह अद्भुत अंगूठी बड़ी ही विचित्र कलाओं की [illegible] है। हर एक स्त्री, पुरुष और बालक इस अंगूठी के द्वारा भूत, भविष्यत् और वर्तमान तीनों कालों [illegible] हाल बड़ी आसानी से पल भर में जान सकते हैं; और मरे हुए या जीवित पुरुषों या अक्षरों आदि से [illegible] ज्ञान करना, हज़ारों कोस दूर का हाल, पृथ्वी का गड़ा धन, बीमार की बीमारी का हाल, खोई [illegible] वस्तु का पता लगाना और गूढ़ से गूढ़ प्रश्नों का उत्तर देना, इत्यादि हज़ारों काम इस अंगूठी से [illegible] भर में हो जाते हैं। विधिपत्र पारसल के साथ भेजा जायेगा। मूल्य १॥)

मिलने का पता:—

मैनेजर, स्टार कलचरिंग कंपनी, नं ८, झांसी।

## राय

डाक्टर एस० पी० श्रीवास्तव, एम० डी० आनरेरी सर्जेन्ट आफ़ एस० आई० एस० आफ़ स्टार मेडिकल सोसायटी, लंडन, और मेम्बर आफ़ सी० एम० सोसायटी, लंडन, लिखते हैं।

"मुझे आप की मैस्मेरिज़म अंगूठी मिली। मैंने इसे इसी प्रकार की [illegible] पाई है। मैंने उसकी प्रशंसा की है और अब मैं अपने मित्रों के लिये मंगवा [illegible]"

"मैस्मेरिज़म अंगूठी के काम देखकर मुझे और मेरे मित्रों को बहुत आश्चर्य हुआ।" [illegible] आप भी अनगिनत सर्टिफ़िकेट मय लोग हमारे दफ़्तर में देख सकते हैं।

इसी आश्चर्यजनक मैस्मेरिज़म अंगूठी के द्वारा हम ने कुछ [illegible] को काम [illegible] एक्सेलेंसी श्रीमान वाइसराय और गवर्नर जनरल बहादुर को दिखा कर [illegible] और जो अब में सबसे सिरताज और इसके लिये [illegible] कर उन्हें धन्यवाद [illegible] है।

[illegible]

समय थोड़ा है या फिर कभी नहीं।

## मानस—कोश ।

अर्थात्

"रामचरितमानस" के कठिन कठिन शब्दों का सरल अर्थ ।

हमने काशी की नागरी-प्रचारिणी सभा के द्वारा सम्पादित करा कर यह "मानसकोश" नामक पुस्तक प्रकाशित की है। इस "मानसकोश" को सामने रखकर रामायण के अर्थ समझने में हिन्दीप्रेमियों को अब बड़ी सुगमता होगी। इसमें उत्तमता यह है कि एक एक शब्द के एक एक दो दो नहीं, कई कई पर्यायवाचक शब्द देकर उनका अर्थ समझाया गया है। इसमें अकारादि क्रम से ६०४५ शब्द हैं । मूल्य केवल १) रुपया रक्खा गया है, जो पुस्तक की लागत और उपयोगिता के सामने कुछ भी नहीं है। अब मँगाइए।

## *सचित्र हिन्दी महाभारत*

( मूल आख्यान )

५०० से अधिक पृष्ठ बड़ी सोची १९ चित्र

अनुवादक—हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी।

महाभारत ही आर्यों का प्रधान ग्रन्थ है, यही आर्यों का सच्चा इतिहास है और यही सनातन धर्म का बीज है। इसी के अध्ययन से हिन्दुओं में धर्म-भाव, सत्पुरुषार्थ और समयानुसार काम करने की शक्ति आती है। उठती है। यदि इस बूढ़े भारतवर्ष का ५ सहस्र वर्ष पहले का सच्चा इतिहास जानना हो, यदि भारतवर्ष में स्त्रियों को सुशिक्षित करके प्राचीन धर्म का पुनरुद्धार करना अभीष्ट हो, यदि कालक्षेपकारी मीमांसाशास्त्र के पठन-पाठन को एकदम बन्द करके न्याय का सहारा लेना हो, यदि आपस के कुसंस्कारों से उत्पन्न आलस्य को दूर और कर्मिष्ठ बनना हो, तो इस "महाभारत" ग्रन्थ को झाँक कर अवश्य देखिए। इसकी भाषा बड़ी सरल, बड़ी सुन्दर और बड़ी मनोहारिणी है। प्रत्येक पढ़ी लिखी स्त्री अथवा कन्या महाभारत मँगा कर अवश्य पढ़ना और लाभ उठाना चाहिए। मूल्य केवल ३) रुपये

( कविरत्न श्रीअखिलानन्द-अर्पित )

## दयानन्ददिग्विजय ।

महाकाव्य

हिन्दी-अनुवादसहित

जिसके देखने के लिए सहस्रों आर्य उत्कण्ठित हो रहे थे, जिसके रसास्वादन सैकड़ों संस्कृतज्ञ विद्वान् लालायित हो रहे जिसकी सरल, मधुर और रसीली कविता सहस्रों आर्यों की वाणी चंचल हो रही महाकाव्य छप कर तैयार हो गया। यह ग्रन्थ समाज के लिए बड़े गौरव की चीज़ है। इसे का भूषण कहें तो अत्युक्ति न होगी। स्वामी ग्रन्थों को छोड़ कर आज तक आर्य-समाज छोटे बड़े ग्रन्थ बने हैं उन सबमें इसका ऊँचा है। प्रत्येक वैदिकधर्मानुरागी आर्य ग्रन्थ लेकर अपने घर को अवश्य पवित्र चाहिए। यह महाकाव्य २१ सर्गों में सम्पूर्ण मूल ग्रन्थ के सायल आठ पेजी सोची है। इसके अतिरिक्त ५७ पृष्ठों में भूमिका, का परिचय, विषयानुक्रमणिका, आवश्यक शुद्धिपत्रिका, ग्रन्थालय-प्रशस्ति और सहायक आदि अनेक विषयों का समावेश किया गया उत्तम सुनहरी जिल्द बँधी हुई इसकी का मूल्य सर्वसाधारण के सुभीते के लिए केवल चार रुपये ही रक्खा है। अब मँगाइए।

## सौभाग्यवती ।

यदि स्त्रियाँ स्त्रियों को यह पुस्तक उपहार में देवें तो बहुत अच्छा हो। इसके पढ़ने से स्त्रियाँ अपने कर्तव्य को भली भाँति समझ सकती हैं। मूल्य ॥)

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

(महाकवि कालिदासकृत)

## रघुवंश

का गद्यात्मक हिन्दी-अनुवाद

(श्री० पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी लिखित)

इस अनुवाद में एक दो नहीं अनेक विशेषतायें । इसमें कालिदास के लिखे केवल शब्दों का ही नुवाद नहीं किया गया है, किन्तु उन शब्दों के योग द्वारा महाकवि कालिदास ने जो अनुपम ाव दरसाये हैं उन्हीं भावों को, उन्हीं भीतरी मर्मों ो, महाकवि की उन्हीं प्रतिभा प्रदीप्त कल्पनाओं था लोकोत्तरानन्ददायिनी उक्तियों के गूढ़ रहस्यों ो, सबके समझने योग्य हिन्दी भाषा में, विशद ग से प्रकाशित किया गया है।

जो आनन्द संस्कृतज्ञ विद्वानों को मूल रघुवंश ; पढ़ने में आता है वही आनन्द हिन्दी जानने वालों ो इससे प्राप्त होगा। हमारे इस कथन में अत्युक्ति ा लेश मात्र भी न समझिए 'हाथ-कंगन को ारसी क्या ?' जब आप इस अपूर्व ग्रन्थ को देखेंगे ीं आपको इसके जौहर मालूम होंगे।

सुन्दर चित्रों से सुभूषित। पृष्ठ कुल मिलाकर ००। सुन्दर सुनहरी जिल्द। मूल्य केवल २)

## विनयपत्रिका।

(आचार्यशिरोमणि पं० रामेश्वरभट्ट-कृत सरल टीकासहित)

गोस्वामी तुलसीदासजी के नाम को कौन नहीं ानता। जिस कवि की कविता को सुन कर हिन्दु ी नहीं, विदेशी और विधर्मी लोग भी मुक्तकण्ठ से ंसा करते हैं उसकी कविता की प्रशंसा में कुछ लिखना सूर्य को दीपक से दिखाना है। रामायण से ढ़कर कर विनयपत्रिका का ी मेकर है। यहाँ नहीं, म और भक्ति के दर्शन की दृष्टि से विनयपत्रिका ा मेकर रामायण से भी पहले लिया जाए तो कोई आश्चर्य नहीं। विनयपत्रिका का एक एक पद भक्ति ौर प्रेम रस में सराबोर हो रहा है। इसे ऐसी रल भाषा में है कि बालक भी समझ सकते हैं। १७४। सुन्दर जिल्द। मूल्य २)

विनयपत्रिका के विषय में सर जार्ज, ए० ग्रियर्सन, के० सी० आई० ई० के पत्र की नक़ल हम नीचे देते हैं कि जो उन्होंने विलायत से पंडित रामेश्वर भट्ट के नाम भेजी है—

*True copy of the letter received from Sir George A Grierson, K.C.I.E., Bathfarnham, England, to the address of the Commentator of* Vinaya Pattrika.

*Dated 6th September, 1914.*

DEAR SIR,

Forgive a stranger for addressing you. I write to say how highly I appreciate your excellent edition of the [illegible], which I obtained from the "Indian Press" a few days ago. It is a worthy successor of your Edition of the [illegible], and really fills a want which I have long felt. The *Vinaya Pattrikā* is a difficult work but I think it is one of the best poems written by Tulsi Dās and should be studied by every devout [illegible]. I have already found it of great assistance in explaining difficult passages.

May I hope that you will go on with your work and bring out similar editions of the [illegible] and of the [illegible] (including the [illegible]), both of which are very important. The [illegible] is most important, as it throws much light on the life of the poet.

Yours faithfully,

George A Grierson

Pandit Rāmeswar Bhatt

## आख्यान-दर्पण।

(आख्यानों के इतिहास चित्र सहित)

जिस हिन्दुधर्मशास्त्री पौराणिक आख्यान से महाकवि ने इस को उठाकर सारे संसार में सार्वजनिक मान का कुछ कारण किया है, उसी पौराणिकशास्त्रि आख्यान के मूलोत्पत्ति-कारण, विकास, कारण, धर्म, कारण, साहित्य सहित, सभा और इतिहास आदि बातों का इस पुस्तक में पूरा पूरा वर्णन किया गया है। आख्यान की कथोपकथन पर कौन कहानियों को ले इस पुस्तक से पढ़ना कुछ लिखा गया है। २०० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य १) है यदि कर १।) कहाँ कम कर लिया।

पुस्तक लिखने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ※ ※

## मानस—कोश।

अर्थात्

"रामचरितमानस" के कठिन कठिन शब्दों का सरल अर्थ।

हमने काशी की नागरी-प्रचारिणी सभा के द्वारा सम्पादित करा कर यह "मानसकोश" नामक पुस्तक प्रकाशित की है। इस "मानसकोश" को सामने रखकर रामायण के अर्थ समझने में हिन्दीप्रेमियों को अब बड़ी सुगमता होगी। इसमें उत्तमता यह है कि एक एक शब्द के एक एक दो दो नहीं, कई कई पर्यायवाचक शब्द देकर उनका अर्थ समझाया गया है। इसमें अकारादि क्रम से ६०४५ शब्द हैं। मूल्य केवल १) रुपया रक्खा गया है, जो पुस्तक की लागत और उपयोगिता के सामने कुछ भी नहीं है। जल्द मँगाइए।

## •सचित्र हिन्दी महाभारत•

( मूल आख्यान )

५०० से अधिक पृष्ठ  बड़ी साँची  १९ चित्र

अनुवादक—हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी।

महाभारत ही आर्यों का प्रधान ग्रन्थ है, यही आर्यों का सच्चा इतिहास है और यही सनातन धर्म का मेरुदंड है। इसी के अध्ययन से हिन्दुओं में धर्म-भाव, सत्पुरुषार्थ और समयानुसार काम करने की शक्ति आजतक हो उठती है। यदि इस बूढ़े भारतवर्ष को ५ हजार वर्ष पहले का सच्चा इतिहास जानना हो, यदि भारतवर्ष में स्त्रियों की सुशिक्षित करके सर्वांगसुन्दर बनाने का पुनरुद्धार करना अभीष्ट हो, यदि क्षात्रधर्मी मैत्र्यादिभाव के पालन शक्ति को बढ़ाकर हृदयग्राही करने का मनोरथ देखना हो, यदि अपने कुरुक्षेत्र के इतिहासों से अपने आत्मा को पवित्र और उन्नत बनाना हो, तो इस "महाभारत" ग्रन्थ को मँगा कर अवश्य पढ़िए। इसकी भाषा बड़ी सरल, बड़ी सुन्दर और बड़ी मनोहारिणी है। प्रत्येक पढ़ी लिखी स्त्री अथवा [illegible] महाभारत मँगा कर अवश्य पढ़ना और लाभ उठाना चाहिए। मूल्य केवल ३) रुपये।

( कविरत्न श्रीअखिलानन्द-प्रणीत )

## दयानन्ददिग्विजय।

महाकाव्य

हिन्दी-अनुवादसहित

जिसके देखने के लिए सहस्रों आर्य [illegible] उत्कण्ठित हो रहे थे, जिसके रसास्वादन [illegible] सैकड़ों संस्कृतज्ञ विद्वान् लालायित हो [illegible] जिसकी सरल, मधुर और रसीली [illegible] सहस्रों आर्यों की वाणी चंचल हो रही [illegible] महाकाव्य छप कर तैयार हो गया। यह [illegible] समाज के लिए बड़े गौरव की चीज़ है। [illegible] का भूषण कहें तो अत्युक्ति न होगी। [illegible] ग्रन्थों को छोड़ कर आज तक आर्य-समाज [illegible] छोटे बड़े ग्रन्थ बने हैं उन सबमें [illegible] ऊँचा है। प्रत्येक वैदिकधर्मानुरागी आर्य [illegible] ग्रन्थ लेकर अपने घर का अवश्य [illegible] चाहिए। यह महाकाव्य २१ सर्गों में समाप्त [illegible] मूल ग्रन्थ के रायल आठ पेजी साँची [illegible] हैं। इसके अतिरिक्त ५७ पृष्ठों में भूमिका, [illegible] का परिचय, विषयानुक्रमणिका, आवश्यक [illegible] शुद्धिपत्र, ग्रन्थालय-प्रशस्ति और [illegible] आदि अनेक विषयों का समावेश किया [illegible]

उत्तम सुनहरी जिल्द बँधी हुई [illegible] का मूल्य सर्वसाधारण के सुभीते के लिए [illegible] चार रुपये ही रक्खा है। जल्द मँगाइए।

## सौभाग्यवती।

पढ़ी लिखी स्त्रियों को यह पुस्तक [illegible] चाहिए। इसके पढ़ने से स्त्रियाँ बहुत [illegible] ग्रहण कर सकती हैं। मूल्य ॥)

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## चरित्रगठन ।

जो नवयुवक विद्यार्थी चरित्रगठन के अभिलाषी हों तो इसे अवश्य ही पढ़ें, और विशेष कर उन्हीं के लिए यह पुस्तक बनाई गई है। वे इस पुस्तक को पढ़ कर आप तो लाभ उठायेंगे ही, किन्तु अपने साथी जनों को भी विशेष लाभ पहुँचा सकेंगे। इस ग्रंथ के सभी विषय सुपाठ्य हैं। जिस कर्तव्य से मनुष्य अपने समाज में आदर्श बन सकता है उसका उल्लेख इस पुस्तक में विशेष रूप से किया गया है। नीति, उदारता, सुशीलता, दया, क्षमा, प्रेम, प्रतिज्ञा आदि अनेक विषयों का वर्णन उदाहरण के साथ किया गया है। अतएव क्या बालक, क्या वृद्ध, क्या युवा, क्या स्त्री सभी इस पुस्तक को एक बार अवश्य एकाग्र मन से पढ़ें और इससे पूर्ण लाभ उठावें। २३२ पृष्ठ की ऐसी उपयोगी पुस्तक का मूल्य समाज के लिए केवल ॥) बारह आना है।

## कुमारसम्भवसार ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

कवि-कुलगुरु कालिदास के "कुमार-सम्भव" काव्य का यह मनोहर सार छप कर तैयार हो गया। प्रत्येक हिन्दी कविता-प्रेमी को द्विवेदी जी की यह मनोहारिणी कविता पढ कर आनन्द प्राप्त करना चाहिए। कविता बड़ी रसवती और प्रभावशालिनी है। मूल्य केवल ।) चार आने।

## भारतवर्ष में पश्चिमीय शिक्षा ।

श्रीमान् पण्डित मनोहरलाल जुत्शी, एम० ए० नाम को कौन नहीं जानता। आप उर्दू और अंगरेज़ी के प्रसिद्ध लेखक हैं। आपने "एज्युकेशन इन ब्रिटिश इंडिया" नामक एक पुस्तक अँगरेज़ी में लिखी है और उसे इंडियन प्रेस, प्रयाग ने छापकर प्रकाशित किया है। पुस्तक बड़ी खोज के साथ लिखी गई है। उक्त पुस्तक का सारांश हिन्दी और उर्दू में भी छप गया है। आशा है हिन्दी और उर्दू के पाठक इस उपयोगी पुस्तक को मँगाकर अवश्य लाभ उठायेंगे। मूल्य इस प्रकार है :—

एज्युकेशन इन ब्रिटिश इंडिया ( अँगरेज़ी में ) २॥)
भारतवर्ष में पश्चिमीय शिक्षा ( हिन्दी में ) ।=)
हिन्द में मगरबी तालीम ( उर्दू में ) ।=)

## कर्मयोग ।

स्वामी विवेकानन्दजी के कर्मयोग-सम्बन्धी व्याख्यानों का हिन्दी-अनुवाद करा कर यह "कर्मयोग" नामक पुस्तक छापी गई है। इसमें सात अध्याय हैं। उनमें क्रमशः—१—कर्म का मनुष्य चरित्र पर प्रभाव, २—निष्काम कर्म का महत्त्व, ३—धर्म क्या है ?, ४—परमार्थ में स्वार्थ, ५—वैराग्य रहना ही सच्चा त्याग है, ६—मुक्ति और ७—कर्मयोग का आदर्श—इन विषयों का वर्णन बहुत ही ओजस्विनी भाषा में किया गया है। अध्यात्मविद्या या कर्मयोग के जिज्ञासुओं को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य केवल ।=)

## संक्षिप्त इतिहासमाला ।

लीजिए, हिन्दी में जिस चीज़ की कमी थी उसकी पूर्ति का भी प्रबन्ध हो गया। हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पण्डित श्यामबिहारी मिश्र, एम० ए० और पण्डित शुकदेवबिहारी मिश्र, बी० ए० के सम्पादकत्व में पृथ्वी के सभी प्रसिद्ध प्रसिद्ध देशों के हिन्दी में संक्षिप्त इतिहास तैयार होने का प्रबन्ध किया गया है। यह समस्त इतिहासमाला कोई २०, २२ संख्याओं में पूर्ण होगी। इसकी क्रमशः एक एक पुस्तक इंडियन प्रेस, प्रयाग, से प्रकाशित होती रहेगी। अब तक ये ६ पुस्तकें छप चुकी हैं :—

| | | |
|---|---|---|
| १—जर्मनी का इतिहास | .. | ।=) |
| २—फ्रांस का इतिहास | . | ।=) |
| ३—रूस का इतिहास | ... | ।=) |
| ४—इंगलैंड का इतिहास | ... | ।=) |
| ५—जापान का इतिहास | . | ।) |
| ६—स्पेन का इतिहास | | ।=) |

# ✻ ✻ ✻ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ✻ ✻ ✻

## सीतावनवास ।

सुप्रसिद्ध पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर लिखित "सीतार-बनवास" नामक पुस्तक का यह हिन्दी-अनुवाद "सीतावनवास" छप कर तैयार है। इस पुस्तक में श्रीरामचन्द्रजी-कृत गर्भवती सीताजी के परित्याग की विस्तारपूर्वक कथा बड़ी ही रोचक और करुणारस-भरी भाषा में लिखी गई है। इसे पढ़ सुन कर आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगती है और पाषाण-हृदय भी मोम की तरह द्रवीभूत हो जाता है। मूल्य ॥)

## गारफील्ड ।

इस पुस्तक में अमरीका के एक प्रसिद्ध प्रेसीडेंट "जेम्स एबरम गारफील्ड" का जीवनचरित लिखा गया है। गारफ़ील्ड ने एक साधारण किसान के घर जन्म लेकर, अपने उत्साह, साहस और संकल्प के कारण, अमरीका के प्रेसीडेंट का सर्वोच्च पद प्राप्त कर लिया था। भारतवर्ष के नव युवकों को इस पुस्तक से बहुत अच्छा उपदेश मिल सकता है। मूल्य ॥)

## हिन्दीभाषा की उत्पत्ति ।

(लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी)

यह पुस्तक हर एक हिन्दी जाननेवाले को पढ़नी चाहिए। इसके पढ़ने से मालूम होगा कि हिन्दी भाषा की उत्पत्ति कहाँ से है। पुस्तक बड़ी खोज के साथ लिखी गई है। हिन्दी में ऐसी पुस्तक, हमारी राय में, अभी तक कहीं नहीं छपी। एक हिन्दी ही नहीं इसमें और भी कितनी ही हिन्दुस्तानी भाषाओं का विचार किया गया है। मूल्य ।)

## शकुन्तला नाटक ।

कविशिरोमणि कालिदास के नाम को कौन नहीं जानता? शकुन्तला नाटक, उन्हीं कविचूड़ामणि कालिदास का रचा हुआ है। इस नाटक पर यहीं वाले नहीं विदेशी विद्वान् भी लट्टू हैं। जैसा बढ़िया यह नाटक हुआ है वैसा यह हिन्दी में लिखा गया है। कारण यह हिन्दी के सच्चे कालिदास राजा लक्ष्मण अनुवादित किया है। लीजिए, देखिए तो में कैसा अनुपम आनन्द आता है। मूल्य ।)

## मुकुट ।

यह बँगला के प्रसिद्ध लेखक श्रीयुक्त बँगला उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। में परस्पर अनबन होने का परिणाम क्या इस छोटे से उपन्यास में यही बड़ी विलक्षण साथ दिखलाया गया है। इसे पढ़ कर हो मन को वैमनस्य के दोषों से बचा सकते हैं।

## युगलांगुलीय ।

अर्थात्

दो अँगूठियाँ

बँगला के प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक बंकिम नाम से सभी शिक्षित जन परिचित हैं। परमोत्तम और शिक्षाजनक उपन्यास का यह हिन्दी-अनुवाद छपकर तैयार है। यह उपन्य स्त्री, क्या पुरुष सभी के पढ़ने और मनन योग्य है। मूल्य ।)

## स्वर्णलता ।

(रोचक और शिक्षादायक सामाजिक उपन्या

यह उपन्यास प्रत्येक गृहस्थ को पढ़ना इस उपन्यास को गृहस्थाश्रम का सच समझना चाहिए। बँगला में इस उपन्यास प्रतिष्ठा हुई है कि १९०८ तक इसके १४ निकल चुके हैं। इस उपन्यास की शिक्षा की है। हिन्दी में यह उपन्यास अनुपम पृष्ठ की पोथी का मूल्य १)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## बालगीता ।

८—गीता की एक एक शिक्षा, एक एक ज्ञान प्राणियों को मुक्ति और मुक्ति की देनेवाली है। ऐहिक और पारमार्थिक सुख चाहने वालों को गीता के उपदेशों से ज़रूर शिक्षा लेनी चाहिए। गीता में जगह जगह ऐसा अमृतमय उपदेश भगवान् ने दिया है कि जिसके द्वारा मनुष्य अमर-पदवी तक पा सकता है। कृष्णचन्द्र महाराज के मुखारविन्द से निकले हुए उपदेशों को कौन हिन्दू न पढ़ना चाहेगा? अपने बच्चों को पवित्र और बलिष्ठ बनाने के लिए यह "बालगीता" ज़रूर पढ़नी चाहिए। इसमें पूरी गीता का सार बड़ी सरल भाषा में लिखा गया है। मूल्य ॥)

## बालोपदेश ।

९—यह पुस्तक बालकों को ही नहीं युवा, वृद्ध, स्त्री सभी को उपयोगी तथा चतुर, धर्मात्मा और ज्ञानसम्पन्न बनाने वाली है। राजा भर्तृहरि के विमल हृदय में जब संसार से वैराग्य उत्पन्न हुआ था तब उन्होंने एक दम भरा पूरा राज-पाट छोड़ कर वनवास ले लिया था। उस परमानन्दमयी अवस्था में उन्होंने वैराग्य और नीति-सम्बन्धी दो शतक बनाये थे। इस 'बालोपदेश' में उन्हीं भर्तृहरि-कृत नीति-शतक का पूरा और वैराग्यशतक का संक्षिप्त हिन्दी अनुवाद छापा गया है। यह पुस्तक स्कूलों में बालकों के पढ़ने के लिए बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।)

## बालभारत्योपन्यास (सचित्र) चारों भाग।

१०-१३—दिलचस्प क़िस्से कहानियों के लिए संसार भर के उपन्यासों में अरबियन नाइट्स का स्थान सबसे पहला है। इसमें से कुछ अयोग्य कहानियों को निकाल कर, यह विशुद्ध संस्करण निकाला गया है। इसलिए, अब, यह किताब क्या स्त्री, क्या पुरुष सभी के पढ़ने लायक़ है। इसके पढ़ने से हिन्दी-भाषा का प्रचार होगा, मनोरञ्जन होगा, घर बैठे दुनिया की सैर होगी, बुद्धि और विचार-शक्ति बढ़ेगी, चतुराई सीखने में आवेगी, साहस और हिम्मत बढ़ेगी। कहाँ तक कहें, इसके पढ़ने से अनेक लाभ होंगे। मूल्य प्रत्येक भाग का ॥)

## बालपंचतंत्र ।

१४—इसके पाँचों तंत्रों में बड़ी मनोरंजक कहानियों के द्वारा सरल रीति पर नीति की शिक्षा दी गई है। बालक-बालिकायें इसकी मनोरंजक कहानियों को बड़े चाव से पढ़ कर नीति की शिक्षा ग्रहण कर सकती हैं। यह "बालपंचतंत्र" विष्णुशर्मा कृत असली पंचतंत्र का सरल हिन्दी में सार है। यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दीपाठक और विशेष कर बालकों के पढ़ने के योग्य है। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

## बालहितोपदेश ।

१५—इस पुस्तक के पढ़ने से बालकों की बुद्धि बढ़ती है, नीति की शिक्षा मिलती है, मित्रता के लाभों का ज्ञान होता है और शत्रुओं के पंजे में न फँसने और फँस जाने पर उससे निकलने के उपायों और कर्त्तव्यों का बोध हो जाता है। यह पुस्तक, पुरुष हो या स्त्री, बालक हो या बूढ़ा, सभी के काम की है। इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य आठ आने।

## बालहिन्दीव्याकरण ।

१६—यदि आप हिन्दी-व्याकरण के गूढ़ विषयों को सरल और सुगम रीति से जानना चाहते हैं, यदि आप हिन्दी शुद्ध रूप से लिखना और बोलना जानना चाहते हैं, तो "बालहिन्दीव्याकरण" पुस्तक मँगा कर पढ़िए और अपने बाल-बच्चों को पढ़ाइए। स्कूलों में लड़कों के पढ़ाने के लिए यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।) चार आने।

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## बालसखा-पुस्तकमाला।

इंडियन प्रेस, प्रयाग से "बालसखा-पुस्तकमाला" नामक सीरीज़ में जितनी किताबें आज तक निकली हैं वे सब हिन्दी-पाठकों के लिए, विशेष कर बालक-बालिकाओं और स्त्रियों के लिए, परमोपयोगी प्रमाणित हो चुकी हैं। इस 'माला' की सब किताबों की भाषा ऐसी सरल—सबके समझने योग्य—रक्खी है कि जिसे थोड़े पढ़े लिखे बालक भी बड़ी आसानी से पढ़ कर समझ लेते हैं। इस 'माला' में अब तक जितनी पुस्तकें निकल चुकी हैं उनका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जाता है:—

### बालभारत—पहला भाग।

१—इसमें महाभारत की संक्षेप से कुल कथा ऐसी सरल हिन्दी भाषा में लिखी गई है कि बालक और स्त्रियाँ तक पढ़कर समझ सकती हैं। यह पाण्डवों का चरित बालकों को अवश्य पढ़ाना चाहिए। मूल्य ॥) मूल्य आठ आने।

### बालभारत—दूसरा भाग।

२—इसमें महाभारत से छाँट कर बीसियों ऐसी कथायें लिखी गई हैं कि जिनको पढ़कर बालक अच्छी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। हर कथा के अन्त में कथानुरूप शिक्षा भी दी गई है। मूल्य वही ॥)

### बालरामायण—सातों काण्ड।

३—इसमें रामायण की कुल कथा बड़ी सीधी भाषा में लिखी गई है। इसकी भाषा की सरलता में इससे अधिक और क्या प्रमाण दें कि गवर्नमेंट ने इस पुस्तक को सिविलियन लोगों के पढ़ने के लिए नियत कर दिया है। भारतवासियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य ॥)

### बालमनुस्मृति।

४—आज कल आप-सन्तान अपनी प्राचीन धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक रीति-रस्मों को न जान कर कैसे घोर अन्धकार में धँसती चली जा रही है सो किसी भी विचारशील से छिपा नहीं। इसी दोष के दूर करने के लिए 'मनुस्मृति' के उत्तम उत्तम श्लोकों को छाँट छाँट कर उनका हिन्दी में अनुवाद लिखा गया है। मूल्य ।)

### बालनीतिमाला।

५—नीतिविद्या बड़े काम की विद्या है। इसमें बड़े बड़े नीतिज्ञ बड़े प्रसिद्ध हो गये हैं। शुक्र, चाणक्य और कणिक। इन्हीं के नाम से चार ग्रन्थ विख्यात हैं। शुक्रनीति, विदुरनीति, चाणक्यनीति और कणिकनीति। ये सब पुस्तक संस्कृत में हैं। हिन्दी जाननेवालों के उपकार के लिए इन चारों पुस्तकों का संक्षिप्त हिन्दी-अनुवाद छपा है। इसकी भाषा बालकों और स्त्रियों तक के पढ़ने लायक़ है। मूल्य ॥)

### बालभागवत—पहला भाग।

६—लीजिए, 'श्रीमद्भागवत' की कथा भी सरल हिन्दी-भाषा में बन गई। जो लोग संस्कृत नहीं जानते, केवल हिन्दी-भाषा ही जानते हैं, वे अब श्रीमद्भागवत की भक्ति-रस-भरी कथाओं का स्वाद चख सकते हैं। इस 'बालभागवत' में 'श्रीमद्भागवत' की कथाओं का सार लिखा गया है। इसकी कथायें बड़ी रोचक, बड़ी शिक्षादायक और भक्ति रस से भरी हुई हैं। हर एक हिन्दी-प्रेमी को इस पुस्तक की एक एक कापी ज़रूर लेनी चाहिए। मूल्य ॥) आने

### बालभागवत—दूसरा भाग।

अर्थात्
श्रीकृष्णलीला।

७—श्रीकृष्ण के प्रेमियों को यह बालभागवत का दूसरा भाग ज़रूर पढ़ना चाहिए। इसमें श्रीमद्भागवत में वर्णित श्रीकृष्ण भगवान् की लीलाओं की कथायें लिखी गई हैं। मूल्य ॥)

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## धोखे की टट्टी ।

इस उपन्यास में एक अनाथ लड़के की नेकनीयती र नेकचलनी और एक सनाथ और धनाढ्य के की बदनीयती और बदचलनी का फोटो या गया है। हमारे भारतीय नवयुवक इसके ने से बहुत कुछ सुधर सकते हैं, बहुत कुछ शिक्षा ण कर सकते हैं। ज़रा मँगाकर देखिए तो कैसी धोखे की टट्टी" है। मूल्य ।=)

## पार्वती और यशोदा ।

इस उपन्यास में स्त्रियों के लिए अनेक शिक्षायें दी हैं। इसमें दो प्रकार के स्त्री-स्वभावों का ऐसा ख़ा फोटो खींचा गया है कि समझते ही बनता । स्त्रियों के लिए ऐसे ऐसे उपन्यासों की अत्यन्त दयकता है। 'सरस्वती' के प्रसिद्ध कवि पण्डित मताप्रसाद गुप्त ने ऐसा शिक्षादायक उपन्यास कर हिन्दी पढ़ी लिखी स्त्रियों का बहुत उपकार या है। हर एक स्त्री को यह उपन्यास अवश्य ना चाहिए। मूल्य ।=)

## सुशीला-चरित ।

आज कल हमारे देश के स्त्री-समाज में ऐसे ऐसे ग्रुण, दुर्व्यसन और दुराचार घुसे हुए हैं जिनके रण स्त्री-समाज ही नहीं पुरुष-समाज भी नाना कार के दुःखजालों में फँस कर घोर नरक-यातना ग रहा है। यदि भारतवासी अपने देश, धर्म और ति की उन्नति करना चाहते हैं तो सब से पहले, प्रकार की उन्नतियों के मूल स्त्री-समाज का ार करना चाहिए। फिर देखिए, आपकी सभी मनायें आप से आप सिद्ध हो जायँगी। स्त्री-माज के सुधार की शिक्षा देने में 'सुशीलाचरित' क बहुत ही उपयोगी है। प्रत्येक पढ़ी लिखी स्त्री सुशीला-चरित अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य ।)

## बाला-बोधिनी ।

( पाँच भाग )

लड़कियों के पढ़ने के लिए ऐसी पुस्तकों की बड़ी आवश्यकता थी, जिनमें भाषाशिक्षा के साथही साथ लाभदायक उपयोगी उपदेशों के पाठ हों और उनमें ऐसी शिक्षा भरी हो जिनकी, वर्तमान काल में, लड़कियों के लिए अत्यन्त आवश्यकता है। हमारी बालाबोधिनी इन्हीं आवश्यकताओं के पूर्ण करने लिए प्रकाशित हुई हैं। क्या देशी और क्या सरकारी सभी पुत्री-पाठशालाओं की पाठ्य-पुस्तकों में बाला-बोधिनी को नियत करना चाहिए। इन पुस्तकों के कवर-पेज ऐसे सुन्दर रङ्गीन छापे गये हैं कि देखते ही बनता है। मूल्य पाँचों भागों का १।) और प्रत्येक भाग का क्रमशः =), ⅜), ।), ।-), ।=), है।

## समाज ।

मिएर आर सी दत्त लिखित बँगला उपन्यास का हिन्दी-अनुवाद बहुत ही सरल भाषा में किया गया है। पुस्तक बड़े महत्व की है। यह सामाजिक उपन्यास सभी हिन्दी जाननेवालों के बड़े काम का है। एक बार पढ़ कर अवश्य देखिए। मूल्य ॥)

## सुखमार्ग ।

इस पुस्तक का जैसा नाम है इसमें गुण भी वैसा ही है। इस पुस्तक के पढ़ते ही सुख का मार्ग दिखाई देने लगता है। जो लोग दुखी हैं, सुख की खोज में जिन्न तन मिर भटकते रहते हैं उनको यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य केवल ।)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## बालविष्णुपुराण ।

१७—विष्णुपुराण में कितनी ही ऐसी विचित्र और शिक्षाप्रद कथायें हैं कि जिनके जानने की हिन्दी वालों को बड़ी ज़रूरत है। इस पुराण में कलियुगी भविष्य राजाओं की वंशावली का बड़े विस्तार से वर्णन किया गया है। जो लोग संस्कृत भाषा में विष्णुपुराण की कथाओं का आनन्द नहीं लूट सकते, उन्हें 'बालविष्णु-पुराण' पढ़ना चाहिए। इस पुस्तक को विष्णुपुराण का सार समझिए। मूल्य ।)

## बाल-स्वास्थ्य-रक्षा ।

१८—यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दी जाननेवाले को पढ़नी चाहिए। प्रत्येक गृहस्थ को इसकी एक एक कापी अपने घर में रखनी चाहिए। बालकों को तो आरम्भ से ही इस पुस्तक को पढ़कर स्वास्थ्य-सुधार के उपायों का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। इसमें बतलाया गया है कि मनुष्य किस प्रकार रह कर, किस प्रकार का भोजन करके, नीरोग रह सकता है। इसमें प्रति दिन के बर्ताव में आनेवाली खाने की चीज़ों के गुण-दोष भी अच्छी तरह बताये गये हैं। कहाँ तक कहें, पुस्तक मनुष्य-मात्र के काम की है। इतनी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल ॥) आठ आना रक्खा है।

## बालगीतावलि ।

१९—महाभारत में क्या नहीं है। उसमें सभी कुछ मौजूद है। महाभारत को रत्नों का सागर कहना चाहिए, शिक्षा का भण्डार कहना चाहिए। आप जानते हैं "बालगीतावलि" में क्या है? इसमें महाभारत में से ९ गीताओं का संग्रह किया गया है। इन गीताओं में ऐसी उत्तम उत्तम शिक्षायें हैं कि जिनके अनुसार बर्ताव करने से मनुष्य का परम कल्याण हो सकता है। हमें पूरी आशा है कि समस्त हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को पढ़ कर उत्तम शिक्षा का लाभ करेंगे। मूल्य ॥) आठ आने।

## बालनिबन्धमाला ।

२०—इसमें कोई ३५ शिक्षादायक निबन्ध बड़ी सुन्दर भाषा में, विचार लिखे गये हैं। [illegible] के लिए तो यह पुस्तक उत्तम गुरु का काम दे ज़रूर मँगाइए। मूल्य ।=)

## बालस्मृतिमाला ।

२१—हमने १८ स्मृतियों का सार संग्रह [illegible] यह "बालस्मृतिमाला" प्रकाशित की है। [illegible] सनातनधर्म के प्रेमी अपने अपने बालकों के [illegible] यह धर्मशास्त्र की पुस्तक देकर उनको धर्मिष्ठ [illegible] का उद्योग करेंगे। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

## बालपुराण ।

२२—पुराणों में बहुत सी ऐसी कथायें हैं [illegible] मनुष्यों को बहुत कुछ उपदेश मिल सकता है। [illegible] पुराण इतने अधिक और बड़े हैं कि उन सबका [illegible] प्रत्येक मनुष्य के लिए असम्भव नहीं तो महा [illegible] साध्य अवश्य है। इसलिए सर्वसाधारण के [illegible] के लिए हमने अठारह महापुराणों का सारांश [illegible] पुराण' तैयार करा कर प्रकाशित किया है। [illegible] अठारहों पुराणों की संक्षिप्त कथासूची दी गई है। [illegible] यह भी बतलाया गया है कि किस पुराण में [illegible] श्लोक और कितने अध्याय आदि हैं। पुस्तक बड़ी [illegible] की है। इतनी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल

## बालभोजप्रबन्ध ।

२३—राजा भोज का विद्याप्रेम किसी से नहीं है। संस्कृत भाषा के "भोजप्रबन्ध" नामक में राजा भोज के संस्कृत-विद्याप्रेम-सम्बन्धी आख्यान लिखे हुए हैं। वे बड़े मनोरञ्जक शिक्षादायक हैं। उसी भोजप्रबन्ध का सार "बाल-भोजप्रबन्ध" छपकर तैयार हो गया। हिन्दी-प्रेमियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी [illegible] मूल्य बहुत ही कम केवल ॥) आठ आने।

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## ✻ ✻ ✻ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ✻ ✻ ✻

### बालविनोद ।

प्रथम भाग ⁻) द्वितीय भाग ⁻)॥ तृतीय भाग ) चौथा भाग ।=) पाँचवाँ भाग ।=) ये पुस्तकें लड़के लड़कियों के लिए प्रारम्भ से शिक्षा शुरू करने के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। इसमें से पहले तीनों भागों में एक ख़ूबी यह भी विशेषता है कि रंगीन तसवीरें भी दी गई हैं। इन पाँचों भागों में सदुपदेशपूर्ण अनेक कविताये भी हैं। बंगाल की टैक्स्ट बुक कमेटी ने इनमें से पहले तीनों भागों को अपने स्कूलों में जारी कर दिया है।

### उपदेश-कुसुम ।

यह गुलिस्ताँ के आठवें बाब का हिन्दी-अनुवाद है। यह पढ़ने लायक़ और शिक्षा-दायक है। मूल्य ⁻)

### मुअल्लिम नागरी ।

उर्दू जाननेवालों को नागरी सीखने के लिए से कल समझिए। इसमें उर्दू और नागरी दोनों छापी गई हैं। इससे बड़ी जल्दी नागरी पढ़ना लेखना आ जाता है। मूल्य ॥)

### भाषा-पत्र-बोध ।

यह पुस्तक बालकों और स्त्रियों के ही उपयोगी नहीं सभी के काम की है। इसमें हिन्दी में पत्रव्यवहार करने की रीतियाँ बड़ी उत्तम रीति से लिखी गई हैं। इस किताब को पढ़ कर छोटे छोटे बालक भी अच्छी तरह पत्र-व्यवहार करना सीख जाते हैं। मूल्य ⁻)॥

### व्यवहार-पत्र-दर्पण ।

काम-काज के दस्तावेज़ और अदालती काग़ज़ों का संग्रह।

यह पुस्तक काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के अनुरोध उसी सभा के एक सभासद द्वारा लिखी गई है। इसमें एक प्रसिद्ध वकील की सलाह से अदालत के सैकड़ों काम-काज के काग़ज़ों के नमूने छापे गये हैं। इसकी भाषा भी वही रक्खी गई है जो अदालतों में लिखी पढ़ी जाती है। इसकी सहायता से लोग अदालत के ज़रूरी कामों को नागरी में बड़ी सुगमता से कर सकते हैं। क़ीमत ॥)

### कादम्बरी ।

यह कविवर बाणभट्ट के सर्वोत्तम संस्कृत-उपन्यास का अत्युत्तम हिन्दी-अनुवाद, प्रसिद्ध हिन्दी-लेखक स्वर्गवासी बाबू गदाधरसिंह वर्मा ने किया है। कथा तो सर्वोत्तम प्रसिद्ध है ही, परन्तु भाषा भी बड़ी शुद्ध, मधुर और सरस है। इसको सर्वथा पठन-योग्य समझ कर कलकत्ता की यूनिवर्सिटी ने एफ़० ए० क्लास के कोर्स में सम्मिलित कर लिया है। यह उपन्यास हिन्दी-प्रेमियों के देखने योग्य है। दाम ॥)

### पाकप्रकाश

इसमें रोटी, दाल, कढ़ी, भाजी, पकौड़ी, रायता, चटनी, अचार, मुरब्बा, पूरी, कचौरी, मिठाई, मालपुआ, खाँड के बनाने की रीति लिखी गई है। यह पुस्तक स्त्रियों के बड़े काम की है। मूल्य ⁻)

### जल-चिकित्सा-( सचित्र )

( लेखक—पण्डित ब्रह्मस्वरूपजी द्विवेदी )

इसमें, डाक्टर कुने के सिद्धान्तानुसार, जल से ही सब रोगों की चिकित्सा का वर्णन किया गया है। मूल्य ।)

### अर्थशास्त्र-प्रवेशिका ।

अर्थशास्त्र के मूल सिद्धान्तों के समझने के लिए इस पुस्तक को ज़रूर पढ़ना चाहिए। अपने ढंग की यह अच्छी पुस्तक है। मूल्य ।)

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

मिस्टर आर० सी० दत्त-लिखित

## महाराष्ट्र-जीवन-प्रभात

का

हिन्दी अनुवाद छप कर तैयार हो गया। इसमें महाराष्ट्रवीर शिवाजी की वीरता-पूर्ण ऐतिहासिक कथायें लिखी गई हैं। वीररसपूर्ण उपन्यास है। हिन्दी पढ़ने वालों को एक बार इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य ॥।=)

मिस्टर आर० सी० दत्त-लिखित

## राजपूत-जीवन-सन्ध्या।

का भी अनुवाद तैयार हो गया। इसमें राजपूतों की वीरता फूट फूट कर भरी है। पर, साथ ही राजपूतों के वीरता-पूर्ण जीवन की सन्ध्या के वर्णन को पढ़ कर आपको दो आँसू ज़रूर बहाने पड़ेंगे। उपन्यास पढ़ने योग्य है। मूल्य ॥।)

## शेखचिल्ली की कहानियाँ।

इस पुस्तक की कहानियों में हज़ारों कापियाँ बिक गईं, बंगला में भी ख़ूब बिक रही हैं। लीजिए, अब हिन्दी में भी यह किताब छप कर तैयार हो गई। बड़े मज़े की किताब है। इन कहानियों की प्रशंसा में इतना ही कह देना बहुत होगा कि इन्हें शेखचिल्ली ने लिखा है। सर्वसाधारण में ये शेख चिल्ली की कहानियाँ पहले ही से प्रसिद्ध हैं। इस किताब की कहानियों की अनोखी सूझ-बूझ। मूल्य ।)

## [illegible]

इस पुस्तक में [illegible] कहानियाँ [illegible] हैं। [illegible] हैं। [illegible] हैं। [illegible] हैं। [illegible]

से स्त्रियों के हृदय में विद्यानुराग का [illegible] हो जाता है, किन्तु पुरुषों को भी इस [illegible] कितनी ही नई बातें मालूम होंगी। मूल्य ।)

## रॉबिन्सन क्रूसो।

क्रूसो की कहानी बड़ी मनोरञ्जक, बड़ी कर्षक और शिक्षादायक है। नवयुवकों के तो यह पुस्तक इतनी उपयोगी है कि [illegible] वर्णन नहीं हो सकता। प्रत्येक हिन्दी पढ़े [illegible] यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। क्रूसो के [illegible] उत्साह, असीम साहस, अद्भुत पराक्रम, [illegible] परिश्रम और विकट वीरता के वर्णन को [illegible] पाठक के हृदय पर ऐसा विचित्र प्रभाव [illegible] कि जिसका नाम नहीं। कूपमण्डूक की तरह [illegible] पर ही पड़े पड़े सड़ने वाले आलसियों को [illegible] पढ़ कर अपना सुधार करना चाहिए। [illegible] बड़े काम की है। मूल्य ।)

## क्षय-रोग।

( जनसाधारण की बीमारी तथा उसका [illegible]

(अनुवादक, पण्डित बालकृष्ण [illegible])

क्षयरोग की भयङ्करता जगत्प्रसिद्ध है। [illegible] बड़ा बुरा संक्रामक रोग है। नहीं मालूम [illegible] भारी प्रतियाँ इस रोग-राक्षस के पेट में [illegible] इस शोक से याद बसते हैं। अमेरिका के [illegible] डाक्टरों और विद्वानों में एक सभा की [illegible] इस रोग से बचने के उपायों पर विचार [illegible] पड़े गये थे। एक विषय सर्वोत्तम [illegible] इसी को पारितोषिक भी मिला था। [illegible] का अनुवाद अब तक कोई २२ भाषाओं में [illegible] है। यह पुस्तक इसी विषय [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible]

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग, की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## पारस्योपन्यास ।

जिन्होंने "आरब्योपन्यास" अर्थात् अरेबियन नाइट्स की कहानियाँ पढ़ी हैं उनके सामने यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि पारस्योपन्यास की कहानियाँ कैसी मनोरञ्जक और अद्भुत हैं। अरबदेशीय सहस्र-रजनी-चरित्र के पढ़ने वालों को एक बार पारस्य उपन्यास भी अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य १)

## भाषाव्याकरण ।

श्रीयुत पण्डित चन्द्रमौलि शुक्ल, एम. ए. असिस्टेंट हेडमास्टर, गवर्नमेंट हाईस्कूल, प्रयाग-रचित। हिन्दी भाषा की यह व्याकरण-पुस्तक व्याकरण पढ़ानेवाले अध्यापकों के बड़े काम की चीज़ है। विद्यार्थी भी इस पुस्तक को पढ़ कर हिन्दी-व्याकरण का बोध प्राप्त कर सकते हैं। मूल्य ॥)

## कालिदास की निरङ्कुशता ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी जी ने "सरस्वती" पत्रिका के बारहवें भाग में "कालिदास की निरङ्कुशता" नामक जो लेख-माला प्रकाशित की थी वह, अनेक हिन्दी-प्रेमियों के आग्रह करने पर, पुस्तकाकार प्रकाशित कर दी गई। आशा है, सभी हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को मँगा कर अवश्य देखेंगे। मूल्य केवल ।) चार आने।

## आरोग्य-विधान ।

नीरोग रहने के सुगम उपायों का वर्णन। मूल्य ॥)

## दुर्गा सप्तशती ।

हमने यह दुर्गा की पोथी बड़ी सुन्दर छापी है। काग़ज़ भी इसका मोटा और अक्षर भी बड़े मोटे हैं। चश्मा लगानेवाले बिना चश्मा लगाये ही इसका पाठ कर सकते हैं। बड़ी शुद्ध छपी है। कीलक, कवच, अङ्गन्यास, करन्यास, रहस्य और विनियोग आदि सभी बातें इसमें मौजूद हैं। इसमें यह भी लिखा गया है कि किस काम के लिए किस मंत्र का संपुट लगाना चाहिए। ऐसी अत्युत्तम पोथी का दाम केवल ॥=)

तार्किकमोहभ्रकाश (कुतर्कियों का मुँह तोड़ जवाब) १)
रसरहस्य (प्रेमियों के देखने योग्य) ... ॥)
प्रीतमविहार (श्रीरामचन्द्र जी के प्रेमभजन) ।=)
दृष्टान्तसमुच्चय (उपदेश भरे दृष्टान्तों का संग्रह) ≡)
महिम्नस्तोत्र ... ... ... ... =)
एकमुखी हनुमत्कवच ... ... ... =)

## नूतनचरित्र ।

( बाबू रामचन्द्र बी० ए० वकील हाईकोर्ट प्रयाग लिखित )

यों तो उपन्यास-प्रेमियों ने अनेक उपन्यास देखे होंगे पर हमारा अनुमान है कि शायद उन्होंने ऐसा उत्तम उपन्यास आज तक कहीं नहीं देखा होगा। इसलिए हम बड़ा ज़ोर देकर कहते हैं कि इस 'नूतनचरित्र' को अवश्य पढ़िए। मूल्य १)

## षोडशी ।

बँगला के प्रसिद्ध आख्यायिकालेखक श्रीयुत प्रभातकुमार बाबू की प्रभावशालिनी लेखनी से लिखी गई १६ आख्यायिकाओं का यह संग्रह बँगला में बड़ा प्रसिद्ध है। उसी षोडशी का यह हिन्दी अनुवाद तैयार है। ये कहानियाँ हिन्दी में एकदम नई हैं और पढ़ने योग्य हैं। मूल्य ३२७ पृष्ठ की पोथी का १)

## विचित्रवधूरहस्य ।

बँगला के प्रसिद्ध लेखक श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर महाशय लिखित "बउठाकुरानीर हाट" नामक बँगला उपन्यास का यह हिन्दी अनुवाद 'विचित्रवधूरहस्य' के नाम से तैयार हो गया। उपन्यास कितना रोचक है, इसकी घटनायें कितनी महत्त्वपूर्ण हैं, उपन्यास का भाव कैसा उत्तम है, पाठकों पर इसकी कथाओं का कैसा प्रभाव पड़ता है इत्यादि बातें उपन्यास के पाठकों को स्वयं विदित हो जायँगी। मूल्य ॥)

मिलने का पता— मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## मानस-दर्पण

( लेखक—श्री० पं० चन्द्रमौलि शुक्ल, एम० ए० )

इस पुस्तक को हिन्दी-साहित्य का अलङ्कारग्रन्थ समझना चाहिए। इसमें अलङ्कारों आदि के लक्षण संस्कृत-साहित्य से और उदाहरण रामचरितमानस से दिये गये हैं। प्रत्येक हिन्दी-पाठक को यह पुस्तक अवश्य ही पढ़नी चाहिए। मूल्य ।=)

## माधवीकंकण ।

मिस्टर आर० सी० दत्त की चमत्कारिणी लेखनी के चमत्कार को कौन नहीं जानता। "माधवीकङ्कण" नाम का बँगला उपन्यास उन्हीं के क़लम की करामात है। बड़ा रोचक, बड़ा शिक्षादायक और बड़ा मनोरञ्जक उपन्यास है। हृदय-हारिणी घटनाओं से भरपूर है। वीर और करुण आदि अनेक रसों का समावेश इसमें किया गया है। उपन्यास का उद्देश पवित्र और शिक्षादायक है। मूल्य ॥)

## हिन्दी-व्याकरण ।

( बाबू माणिक्यचन्द जैनी बी० ए० कृत )

यह हिन्दी-व्याकरण अंग्रेज़ी ढंग पर बनाया गया है। इसमें व्याकरण के प्रायः सब विषय ऐसी अच्छी रीति से समझाये गये हैं कि बड़ी आसानी से समझ में आ जाते हैं। हिन्दी-व्याकरण के जानने की इच्छा रखनेवालों को यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। मूल्य =)॥

## हिन्दी-व्याकरण ।

( बाबू गंगाप्रसाद एम० ए० कृत )

यह भी नये ढंग का व्याकरण है। इसमें भी व्याकरण के सब विषय अंग्रेज़ी ढंग पर लिखे गये हैं। उदाहरण देकर हर एक विषय को ऐसी अच्छी तरह से समझाया है कि बालकों की समझ में बहुत जल्द आ जाता है। मूल्य ≈)

## योगवासिष्ठ-सार ।

( वैराग्य और मुमुक्षु-व्यवहार प्रकरण )

योगवासिष्ठ ग्रन्थ की महिमा हिन्दू से छिपी नहीं है। इस ग्रन्थ में श्रीरामचन्द्रजी गुरु वसिष्ठजी का उपदेशमय संवाद लिखा हुआ जो लोग संस्कृत-भाषा में इस भारी ग्रन्थ को पढ़ सकते उनके लिए हमने योगवासिष्ठ का सार रूप यह ग्रन्थ हिन्दी में प्रकाशित किया है। साधारण हिन्दी जानने वाले भी इस ग्रन्थ को पढ़ कर धर्म, ज्ञान और वैराग्यविषयक उत्तम शिक्षा से लाभ उठा सकते हैं। मूल्य ॥=)

## हिन्दी-मेघदूत ।

कविकुल-कुमुद-कलाधर कालिदास कृत मेघदूत का समवृत्त और समश्लोकी हिन्दी-अनुवाद मूल श्लोक सहित—मूल्य नाम मात्र के लिए ।=)

हिन्दी-साहित्य में यह ग्रन्थ अपने ढंग का अकेला है। कविता-प्रेमियों—विशेष कर के ब्रजबोली की हिन्दी-कविता के रसिकों—को यह हिन्दी-मेघदूत अवश्य देखना चाहिए। अपनी तरह का हर पुस्तक है। पुस्तक के आरम्भ में अनुवादक पंडित लक्ष्मीधर वाजपेयी का हाफ़टोन चित्र दिया गया है। इसके अतिरिक्त विरही यक्ष और विरहिणी यक्षपत्नी के दो सुन्दर रंगीन चित्र भी यथास्थान दिये गये हैं। पुस्तक की शोभा देखते ही बनती है। "अवसि देखिए देखन जोगू"।

## बालापत्रबोधिनी

यह पुस्तक लड़कियों के बड़े काम की है। इसमें पत्र लिखने के नियम आदि बताने के अतिरिक्त नमूने के लिए पत्र भी ऐसे ऐसे छपाये गये हैं जिनसे 'एक पंथ दो काज' की कहावत चरितार्थ हो जाती है। इस पुस्तक से लड़कियों को पत्र लिखने का तो ज्ञान होगा ही, किन्तु अनेक उपयोगी शिक्षायें भी प्राप्त हो जायँगी। मूल्य ।=)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## नई पुस्तकें !

## श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण—पूर्वार्द्ध

(हिन्दी-भाषानुवाद)

परखनी के समान ६०० पृष्ठ, सजिल्द-मूल्य केवल २॥)

आदि-कवि वाल्मीकि मुनि-प्रणीत रामायण संस्कृत में है। उसके हिन्दी-भाषानुवाद भी अनेक र हैं। पर यह अनुवाद अपने ढँग का बिल्कुल या है। इसमें अक्षरशः अनुवाद है। भाषा सरल र सरस है। हिन्दू मात्र रामायण को धर्मपुस्तक मते हैं। असल में यह पुस्तक ऐसी ही है। इसके ने पढ़ाने वालों को सब तरह का ज्ञान प्राप्त होता है—आत्मा बलिष्ठ बनता है। इस पूर्वार्द्ध में दि-काण्ड से लेकर सुन्दर-काण्ड तक—पाँच ण्डों का अनुवाद है। बाक़ी काण्ड उत्तरार्द्ध में गे। उत्तरार्द्ध छप रहा है; वह जल्दी छप कर काशित होगा। जल्दी मँगाइए।

सचित्र

## शरीर और शरीर-रक्षा

पण्डित चन्द्रमौलि सुकुल, एम० ए० की लिखी ; किताबें कैसी अच्छी और लाभप्रद होती हैं यह ाने की ज़रूरत नहीं। जिन्होंने उनकी लिखी हुई ाबें पढ़ी हैं, वे ख़ुद जानते होंगे। यह पुस्तक उन्हीं पण्डित जी की क़लम की करामात है। में शरीर के बाहरी व भीतरी अङ्गों की बनावट उनके काम व रक्षा के उपाय लिखे गये हैं। में ऐसी मोटी मोटी बातों का वर्णन किया गया और ऐसी सरल भाषा में लिखा गया है, कि हर मनुष्य पढ़ कर समझ सके और उससे लाभ सके। मनुष्य के अङ्गावयव-सम्बन्धी २१ चित्र इस में छापे गये हैं। यह पुस्तक सर्वथा उपा है। मूल्य केवल ॥) आने है।

## नई पुस्तकें !!

## तरलतरंग

इंडियन प्रेस, प्रयाग, से जो इतिहासमाल निकल रही है उसके सहायक सम्पादक पण्डि सोमेश्वरदत्त शुक्ल, बी० ए० को पाठक जानते ही होंगे उन्हीं की लिखी हुई यह 'तरलतरंग' पुस्तक संग्रह-रू में है। इसमें—अपूर्ण शिक्षक का अधम लक्षण—एक बढ़िया उपन्यास है। और—सावित्री-सत्यवान नाटक तथा चन्द्रहास नाटक—ये दो नाटक हैं। यह पुस्तक विशेष मनोरंजन ही की सामग्री नहीं किन्तु शिक्षा प्रद और उपदेशप्रद भी है। मूल्य केवल ॥=) दस आने।

## भारतवर्ष के धुरन्धर कवि

(लेखक, लाला कन्हैयालाल एम० ए०)

इस पुस्तक में आदि-कवि वाल्मीकि मुनि से लेकर माघ कवि तक संस्कृत के २६ धुरंधर कवियों का और चन्द कवि से आरम्भ करके राजा लक्ष्मणसिंह तक हिन्दी के २८ कवियों का संक्षिप्त वर्णन है। कौन कवि किस समय हुआ यह भी इसमें बतलाया गया है। अब तक कवियों के सम्बन्ध में जितनी पुस्तकें लिखी गई हैं उन से इसमें कई तरह की मर्यादता है। पुस्तक छोटी होने पर भी बहुत काम की है। मूल्य केवल ।) चार आने।

## तारा

यह नया उपन्यास है। बँगला में "दौदायगढ़श्वरी" नामक एक उपन्यास है। लेखक ने उसी के अनुकरण पर इसे लिखा है। यह उपन्यास मनोरञ्जक, शिक्षा-प्रद और सामाजिक है। यह बढ़िया टाईप में छापा गया है। २५० पेज की पुस्तक का मूल्य केवल ।।=)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

नई पुस्तक !

# हिन्दी-शेक्सपियर

छः भाग

शेक्सपियर एक ऐसा प्रतिभाशाली कवि हुआ है जिस पर योरप देश के रहने वाली गौराङ्ग जाति को ही नहीं किन्तु संसार भर के मनुष्य मात्र को अभिमान करना चाहिए। असल में आज तक जो कीर्ति शेक्सपियर को प्राप्त हुई है और जितना प्रचार शेक्सपियर की किताबों का संसार में हुआ है उतने यश का प्राप्त करनेवाला कोई नहीं हुआ; और न वैसा किसी की किताब का ही प्रचार हुआ। उसी जगत्प्रतिष्ठित कवि के शेक्सपियर का हिन्दी में अनुवाद किया गया है। हिन्दी सरल और सरस है तथा सब के समझने योग्य है। यह पुस्तक छः भागों में विभाजित है। प्रत्येक भाग का मूल्य ॥) आने है और छहों भाग एक साथ लेने पर ३) तीन रुपया है। जल्दी मँगाइए।

# श्रीगौरांगजीवनी

मूल्य =) दो आने

चैतन्य महाप्रभु का जन्म बङ्गाल में हुआ। उनका नाम बङ्गाल ही में नहीं किन्तु भारत के कोने कोने में फैला हुआ है। वे वैष्णव धर्म के प्रवर्तक और श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे। उनके जीवन-चरित्र अनेक भाषाओं में छपे हुए हैं। हिन्दी-भाषा में उनके जीवन-चरित की बड़ी ज़रूरत थी। इस छोटी सी पुस्तक में उन्हीं गौराङ्ग महाशय की जीवन-घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन है। पुस्तक साधारणतया मनुष्य मात्र के काम की है, किन्तु वैष्णव धर्मावलम्बियों को तो उसे अवश्य एक बार पढ़ना चाहिए।

नई पुस्तक !

# इन्साफ़-संग्रह

दूसरा भाग।

मुंशी देवीप्रसाद जी मुंसिफ़ की 'इन्साफ़-संग्रह, पहला भाग' पुस्तक [illegible] होगी। ठीक उसी ढँग पर यह [illegible] ने लिखा है। इसमें ३७ न्यायकर्त्ताओं द्वारा गये ७० इन्साफ़ छापे गये हैं। इन्साफ़ पढ़ने तबीयत बहुत ख़ुश होती है। मूल्य केवल छः आने।

सचित्र

# हिन्दीकोविदरत्नमाला

दूसरा भाग

( सम्पादक—बाबू श्यामसुन्दर दास, बी० ए०

इस भाग में भी पहले भाग की तरह बालीस हिन्दी-लेखकों के संक्षिप्त जीवन-चरि गये हैं। हिन्दी के धुरन्धर लेखक पण्डित प्रसादजी द्विवेदी और पण्डित मातृराव प० आदि विद्वानों के जीवनचरित पढ़कर हिन्दी-भाषा-भाषी को लाभ उठाना चाहिए पुस्तक में भी चरितनायकों के ४० हाफ़टो दिये हैं। जिल्द-बँधी हुई पुस्तक का मू १॥) रुपया।

बाला-पत्र-कौमुदी

मूल्य =) दो आने

यह बड़े आनन्द की बात है कि भार सभी प्रान्तों में कन्यापाठशालायें खुल गई उनमें हज़ारों कन्यायें शिक्षा पा रही हैं। से भारत का सौभाग्य समझना चाहिए। सी पुस्तक में लड़कियों के योग्य अनेक पत्र लिखने के नियम और पत्रों के नमूने हैं। कन्यापाठशालाओं में पढ़ने वाली लिए पुस्तक बड़े काम की है। अवश्य

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## नई पुस्तकें !

## श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण—पूर्वार्द्ध

(हिन्दी-भाषानुवाद)

सरस्वती के समान ६०० पृष्ठ, मजिल्द-मूल्य केवल २॥)

आदि-कवि वाल्मीकि मुनि-प्रणीत रामायण संस्कृत में है। उसके हिन्दी-भाषानुवाद भी अनेक हैं। पर यह अनुवाद अपने ढँग का बिलकुल ही है। इसमें अक्षरशः अनुवाद है। भाषा सरल और सरस है। हिन्दू मात्र रामायण को धर्मपुस्तक मानते हैं। असल में यह पुस्तक ऐसी ही है। इसके पढ़ने पढ़ाने वालों को सब तरह का ज्ञान प्राप्त होता है, आत्मा बलिष्ठ बनता है। इस पूर्वार्द्ध में आदि-काण्ड से लेकर सुन्दर-काण्ड तक—पाँच काण्डों का अनुवाद है। बाकी काण्ड उत्तरार्द्ध में होंगे। उत्तरार्द्ध छप रहा है। वह जल्दी छप कर प्रकाशित होगा। जल्दी मँगाइए।

सचित्र

## शरीर और शरीर-रक्षा

पण्डित चन्द्रशेखर शुक्ल, एम० ए० की लिखी
हुई किताबें कैसी अच्छी
माने की
प्रकाशे
ा है

## नई पुस्तकें !!

## तरलतरंग

इंडियन प्रेस, प्रयाग, में जो इतिहासमाला निकल रही है उसके सहायक सम्पादक पण्डित सोमेश्वरदत्त शुक्ल, बी० ए० को पाठक जानते ही होंगे। उन्हीं की लिखी हुई यह 'तरलतरंग' पुस्तक संग्रह-रूप में है। इसमें—अपूर्ण शिवाजी का अथम लगाव—एक बढ़िया उपन्यास है। और—सावित्री-सत्यवान नाटक तथा चन्द्रहास नाटक—ये दो नाटक हैं। यह पुस्तक विशेष मनोरंजन ही की सामग्री नहीं किन्तु शिक्षा-प्रद और उपदेशप्रद भी है। मूल्य केवल ॥=) दश आने।

## भारतवर्ष के धुरन्धर कवि

(केवल आना कलेवर पृष्ठ ८०)

इस पुस्तक में आदि-कवि वाल्मीकि मुनि से लेकर [illegible] तक सोलह कवियों के [illegible] कवियों के जीवन-चरित्र तथा [illegible] हिन्दी के ३८ कवियों का संक्षिप्त वर्णन है। [illegible] समय हुआ था और जो इनमें [illegible]। इन सब कवियों के [illegible] में कितनी [illegible] है इन से इनमें कई सब की [illegible]

नई पुस्तक !

# हिन्दी-शेक्सपियर

छः भाग

शेक्सपियर एक ऐसा प्रतिभाशाली कवि हुआ है जिस पर योरप देश के रहने वाली गौराङ्ग जाति को ही नहीं किन्तु संसार भर के मनुष्य मात्र को अभिमान करना चाहिए। असल में आज तक जो कीर्ति शेक्सपियर को प्राप्त हुई है और जितना प्रचार शेक्सपियर की किताबों का संसार में हुआ है उतने यश का प्राप्त करनेवाला कोई नहीं हुआ; और न वैसा किसी की किताब का ही प्रचार हुआ। उसी जगत्प्रतिष्ठित कवि के शेक्सपियर का हिन्दी में अनुवाद किया गया है। हिन्दी सरल और सरस है तथा सब के समझने योग्य है। यह पुस्तक छः भागों में विभाजित है। प्रत्येक भाग का मूल्य ॥) आने है और छहों भाग एक साथ लेने पर ३) तीन रुपया है। जल्दी मँगाइए।

# श्रीगौरांगजीवनी

मूल्य =) दो आने

चैतन्य महाप्रभु का जन्म बङ्गाल में हुआ। उनका नाम बङ्गाल ही में नहीं किन्तु भारत के कोने कोने में फैला हुआ है। वे वैष्णव धर्म के प्रवर्तक और श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे। उनके जीवन-चरित्र अनेक भाषाओं में छपे हुए हैं। हिन्दी-भाषा में उनके जीवन-चरित की बड़ी ज़रूरत थी। इस छोटी सी पुस्तक में उन्हीं गौराङ्ग महाशय की जीवन-घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन है। पुस्तक साधारणतया मनुष्य मात्र के काम की है, किन्तु वैष्णव धर्मावलम्बियों को तो उसे अवश्य एक बार पढ़ना चाहिए।

नई पुस्तक !

नई पुस्तक !!

# इन्साफ़-संग्रह

दूसरा भाग

मुंशी देवीप्रस
'इन्साफ़-संग्रह, पह
होगी। ठीक उसी ढँग
ने लिखा है। इसमें
गये ७० इन्साफ़ छपे ग
तबीयत बहुत ख़ुश हो
छः आने।

सचि

# हिन्दीकोविद

दूसरा भा

( सम्पादक—बाबू श्यामसुन्दर

इस भाग में भी पहले भाग
चालीस हिन्दी-लेखकों के संक्षिप्त
गये हैं। हिन्दी के धुरन्धर लेखक
प्रसादजी द्विवेदी और पण्डित मा
ए० आदि विद्वानों के जीवनचरित
हिन्दी-भाषा-भाषी को लाभ उठाना
पुस्तक में भी चरितनायकों के ४०
दिये हैं। जिल्द-बँधी हुई पुस्तक का
१॥) रुपया।

# बाला-पत्र-कौमुदी

मूल्य =) दो आने

यह बड़े आनन्द की बात है कि म
सभी प्रान्तों में कन्यापाठशालायें खुल
उनमें हज़ारों कन्यायें शिक्षा पा रही हैं।
से भारत का सौभाग्य समझना चाहिए।
सी पुस्तक में
पत्र
हैं

## महाराजा की राय।

महाराजा दलगञ्जनसिंह देव बहादुर फ़ुलडटरी चीफ़ आफ़ पटना स्टेट बोलांगिर, ज़िला सम्बलपुर से लिखते हैं—

प्रियवर! आपकी भेजी हुई खाँसी की दवा के लिये कृतज्ञ हूँ। इस दवा से हमारी खाँसी बिलकुल जाती रही। मैंने इसके कुलसात ही ख़ुराक पीये, अधिक पीने की दरकार न रही। खाँसी मुझे कई महीने से सताती रहती थी; इसलिये पुनः आपको धन्यवाद देता हूँ।

## कफ वो खाँसी की दवा

मोल—बड़ी शीशी १) छोटी शीशी ॥)
डा० म० ।=) वी ।-) आने।

दवा सब जगह बिकती हैं।

## महाराजकुमार की राय।

महाराजकुमार एकदेश्वरसिंह, शङ्ख बोलांगिर से लिखते हैं—

यह दूसरा मौक़ा है; आपकी दाद की मलह जादू सा असर दिखाया, जिससे मैंने हर वक़ तकलीफ़ से नजात पाई। मैं आपका दिल से शुक्र हूँ।

## दाद की मलहम।

मोल—।) चार आने डिबिया १ से ६
म० ।-, १२ डिबिया तक ।=)

नक़ली दवा से सावधान!

**इन्द्रमोहन मेडिकल स्टोर, दारागंज, इलाहाबाद।**

---


पाँच वर्ष से बराबर स्त्री-जाति की सेवा करनेवाली हिन्दी भाषा में स्त्री-शिक्षा की सबसे अच्छी, सस्ती और अनेक चित्रों से विभूषित मासिक पत्रिका

वार्षिक मूल्य १॥) सदा **गृहलक्ष्मी** प्रति मास १० पृष्ठ रहते हैं

इस विशेष प्रशंसा न कर हम यही अनुरोध करते हैं कि मैनेजर, गृहलक्ष्मी, प्रयाग, से नमूना मँगा देखिए

गृहलक्ष्मी के ग्राहकों को नीचे लिखी स्त्री-शिक्षा-सम्बन्धी उत्तमोत्तम पुस्तकें देखिए कितनी किफ़ायत से मिलती हैं—

| पुस्तक का नाम | | | औरों से मूल्य | | गृहलक्ष्मी के ग्राहकों से |
|---|---|---|---|---|---|
| गृहिणी | ... | | ॥) | ... | ।=) |
| छोटी बहू | ... | | ॥) | ... | ।=) |
| सचित्र-गुटका-रामायण | | | १) | ... | ॥=) |
| लक्ष्मी बहू | ... | | ।=) | ... | ।)॥ |
| प्रेमलता | ... | | ।=) | ... | ।)॥ |
| आदर्श बहू और भाई-बहिन | | | ।-) | ... | =)॥ |
| बच्चों की परी | | | १) | ... | ॥) |
| सती लक्ष्मी | | | ॥) | ... | ।=) |

**गृहलक्ष्मी, इलाहाबाद।**


---


नई पुस्तक! नई पुस्तक

# रामचरितमानस

बेपकरहित असली रामायण

दुबारा छप कर तैयार होगया।

आज तक भारतवर्ष में जितनी रामायण और आज कल छप कर बिक रही हैं वे सब नक़ली क्योंकि उनमें कितने ही दोहे-चौपाइयाँ तो पीछे से लिखकर मिला दिये हैं। असली रामायण तो केवल इंडियन प्रेस की छपी रामचरितमानस ही है। क्योंकि इसका पाठ गुसाईं जी के हाथ लिखी पोथी से मिला कर शोधा गया है। और कितनी ही पुरानी लिखित पुस्तकों से पाठ मिला कर इसमें से कूड़ा-करकट अलग निकाल गया है। यही विशुद्ध रामायण हमने बड़े सुन्दर मध्यम अक्षरों में, बढ़िया काग़ज़ पर, डबल जिल्द में बँधी हुई है। मूल्य केवल २) दो रु

SARASVATI—Reg. No. A248

भाग १६, खण्ड २ ] सितम्बर, १९१५ [ संख्या ३, पूर्ण संख्या १८९

[ सजिल्द मूल्य ४) ] सम्पादक—महावीरप्रसाद द्विवेदी [ सजिल्द मूल्य ५)

इंडियन प्रेस, प्रयाग, में छप कर प्रकाशित।

## महाराजा की राय।

महाराजा दलगञ्जनसिंह देव बहादुर फुलझरी आफ़ पटना स्टेट बोलांगिर, ज़िला सम्बलपुर से ते हैं—

प्रियवर! आपकी भेजी हुई खाँसी की दवा के कृतज्ञ हूँ। इस दवा से हमारी खाँसी बिलकुल ो रही। मैंने इसके कुल सात ही ख़ुराक पीये, क पीने की दरकार न रही। खाँसी मुझे कई ने से सताती रहती थी, इसलिये पुनः आपको याद देता हूँ।

## कफ वो खाँसी की दवा

ाल—बड़ी शीशी १) छोटी शीशी ॥)
डा० म० ।=) धो ।-) आने।

दवा सब जगह बिकती हैं।

## महाराजकुमार की राय।

महाराजकुमार एकदेवसिंह, बोलांगिर से लिखते हैं—

यह दूसरा मौक़ा है; आपकी दाद की जादू सा असर दिखाया, जिससे मैंने हर क़ नकलीफ़ से नजात पाई। मैं आपका दिल से कुर हूँ।

## दाद की मलहम।

मोल—।) चार आने डिबिया १ से ६
म० ।-, १२ डिबिया तक ।=)

नक़ली दवा से सावधान!

डाक्टर सिंह एण्ड कं० १, रामदुलाल दे स्ट्रीट, कलकत्ता।



पाँच वर्ष से बराबर स्त्री-जाति की सेवा करनेवाली हिन्दी-भाषा में स्त्री-शिक्षा की सबसे अच्छी, सस्ती और अनेक चित्रों से विभूषित मासिक पत्रिका

वार्षिक मूल्य १॥) रुपया **गृहलक्ष्मी** प्रति मास १० पृष्ठ रहते हैं

विशेष प्रशंसा न कर हम यही अनुरोध करते हैं कि मैनेजर, गृहलक्ष्मी, प्रयाग, से नमूना मँगा देखिए

गृहलक्ष्मी के ग्राहकों को नीचे लिखी स्त्री-शिक्षा-सम्बन्धी उत्तमोत्तम पुस्तकें देखिए कितनी किफ़ायत से मिलती हैं—

| पुस्तक का नाम | | चौरों से मूल्य | | गृहलक्ष्मी के ग्राहकों से |
|---|---|---|---|---|
| गृहिणी | ... | ॥।) | ... | ।≡) |
| छोटी बहू | ... | ॥।) | ... | ।≡) |
| पतिव्रता-बुद्धि-विलास | | १) | ... | ॥=) |
| लक्ष्मी बहू | ... | ।≡) | ... | ।)॥ |
| प्रेमलता | ... | ।≡) | ... | ।)॥ |
| आदर्श बहू और भाई-बहिन | | ।=) | ... | ≡)॥ |
| कन्याकौमुदी | | १) | ... | ॥) |
| सती लक्ष्मी | | ॥।) | ... | ।≡) |



नई पुस्तक!

नई पुस्तक

## रामचरितमानस

दोषरहित असली रामायण

दुबारा छप कर तैयार होगया।

आज तक भारतवर्ष में जितनी रामायण और आज कल छप कर बिक रही हैं वे सब क्योंकि उनमें कितने ही दोहे-चौपाइयाँ पीछे से लिखकर मिला दिये हैं। असली तो केवल इंडियन प्रेस की छपी रामचरित ही है। क्योंकि इसका पाठ गुसाईंजी के हाथ लिखी पोथी से मिला कर शोधा गया है। कितनी ही पुरानी लिखित पुस्तकों से पाठ मिला कर इसमें से कूड़ा-करकट अलग निकाल गया है। यही विशुद्ध रामायण हमने बड़े सुन्दर मध्यम अक्षरों में, बढ़िया काग़ज़ पर, छाप

SARASVATI—Reg. No. A248

ग १६, खण्ड २ ] सितम्बर, १९१५ [ संख्या ३, पूर्ण संख्या १८९

# सरस्वती

वार्षिक मूल्य ४) ] सम्पादक—मह

इंडियन प्रेस,

## लेख-सूची।


(१) काँटा और फूल—[ ले०, सनेही ... १२६
(२) अनन्त महाप्रभु—[ले०, श्रीयुत लक्ष्मीनारायणसिंह ... ... ... ... १२६
(३) कृषक-कथा [३]—[ले०, बाबू मैथिलीशरण गुप्त ... ... ... ... १३२
(४) सोना निकालने वाली चींटियाँ—[ले०, श्रीयुत पदुमलाल पन्ना ... ... १३४
(५) सवितृ-मण्डल—[ ले०, श्रीयुत जयवन्तराम बी० ए०, बी० टी० ... ... ... १३६
(६) पौराणिक राजवंशों का समय-निरूपण [ ३ ]—[ ले०, श्रीयुत हरि रामचन्द्र दिवेकर एम० ए० ... ... ... ... १४०
(७) सुधा—[ले०, श्रीयुत चण्डीप्रसाद ... १४४
(८) कवि की निरङ्कुशता—[ ले०, श्रीयुत चूड़ामणि शास्त्री ... ... ... १४७
(९) आरम्भ-शूरता—[ ले०, पण्डित अयोध्यासिंह उपाध्याय ... ... ... १४८
(१०) कोलम्बिया का विश्वविद्यालय—[ ले०, श्रीयुत जगन्नाथ खन्ना, बी० एस-सी०, ई० ई० १४९
(११) गुलाब की पाँखुरी—[ ले०, पण्डित मनन द्विवेदी गजपुरी, बी० ए० ... ... १५२
(१२) कोर्ट आव् वार्ड्स[१]—[ले०, "अभिज्ञ" १५२
(१३) ईसापुर के यूप-स्तम्भ .. .. १५४
(१४) कामी और सती का संवाद—[ ले०, पण्डित रामचरित उपाध्याय ... .. १५७
(१५) मिलन—[ले०, पण्डित उमादत्त शर्मा ... १५९
(१६) चीन में सामाजिक परिवर्तन—[ ले०, "सत्यशोधक" ... ... ... १६४
(१७) पूर्ण-वियोग—[ ले०, रसिक-समाज के कवि १६७
(१८) सामाजिक ह्रास के कुछ कारणों का विचार [ ३ ]—[ ले०, पं० माधवराव सप्रे, बी० ए० ... ... ... १६८
(१९) मानसिक चमत्कार—[ ले०, श्रीयुत रामनाथ गोहल, बी० ए० ... १७३
(२०) भारतीय किसान—[ ले०, पं० कृष्णानन्द जोशी, बी० ए० .. ... ... १७७
(२१) दाद्दूदयाल—[ ले०, श्रीयुत विश्वम्भरदास गार्ग्य ... ... ... १८१
(२२) विविध विषय ... ... ... १८१
(२३) पुस्तक-परिचय ... ... ... १८७
(२४) ... ... ... १९२


## चित्र-सूची।


(१) पूतना-वध } (रङ्गीन)
(२) भाद्र-पद }
(३) अनन्त महाप्रभु।
(४) ईसापुर के यूप-स्तम्भ।
(५) ईसापुर के यूप-स्तम्भ पर खुदा हुआ लेख
(६) कोलम्बिया-विश्वविद्यालय की तीन इमारतें
(७) कोलम्बिया-विश्वविद्यालय का पुस्तकालय।
(८) राय साहब डाक्टर सरयूप्रसाद।
(९) जुड़ी हुई दो लड़कियाँ।
(१०) गैस रोकनेवाला तोबड़ा।
(११) गैस रोकनेवाला तोबड़ा चढ़ाये हुए सैनिक



## नई पुस्तकें! नई पुस्तकें

सचित्र

### अद्भुत कथा

यह पुस्तक बाबू श्यामाचरण दे-प्रणीत 'बङ्गेर उपकथा' नामक पुस्तक का अनुवाद है। ११ कहानियाँ हैं। बालक-बालिका और मनुष्य स्वभावतः क़िस्से-कहानी सुनने और के अनुरागी होते हैं। इस पुस्तक में ऐसी वि विचित्र हृदयाकर्षक और मनोरञ्जक कहानि जिन्हें सब लोग बड़े चाव से सुनें और पढ़ें।। ही साथ उन्हें अनेक तरह की शिक्षा भी दिये इस में कहानियों से सम्बन्ध रखने वे चित्र भी दिये गये हैं। मूल्य ।।।) बारह आने।

### बहराम-बहरोज़

यह पुस्तक मुंशी देवीप्रसाद जी, मुंसिफ़ लिखी हुई है। उन्हों ने इसे तयारीख़ रोज़ से उर्दू भाषा में लिखा था, उसी का यह हिन्दी याद है। उर्दू पुस्तक को यू० पी० के ने पसन्द किया। इसलिए यह कई बार छपी अनेक विद्याविभागों में उसका प्रचार रहा। और बहरोज़ दो भाई थे। उन्हीं का इसमें क़िस्से रूप में है। तेरह क़िस्सों में यह पूरी पुस्तक बड़ी मनोरञ्जक और शिक्षाप्रद है। के बड़े काम की है। मूल्य ।) तीन आने।

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग

# स्त्रीधर्म-शिक्षक

स्त्री-शिक्षा का सचित्र मासिक पत्र

## सम्पादिका—श्रीमती यशोदादेवी,

भारतवर्ष में इससे सस्ता सरल और उपयोगी स्त्रियों के सुधार का धर्म्म-सम्बन्धी हिन्दी ही नहीं संसार की किसी भाषा में भी दूसरा कोई पत्र नहीं है।

वार्षिक मूल्य १॥) नमूना बिना दाम मगाकर देखिये

इस समय बीसों हज़ार स्त्रियां इसे पढ़ सुनकर लाभ उठा रही हैं।

मती धार्मिका विदुषी हिन्दी-हितैषिणी रानी-महारानियों द्वारा संरक्षित.

धर्म-शिक्षक में—धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, वैद्यकशास्त्र, इतिहास, पुराण, शिल्पशिक्षा, धातुविद्या, विद्या, भूगोल, विज्ञानशास्त्र, कथा, कहानी, पहेली, चित्रविद्या, बालासंगीत, शारीरिक शास्त्र और युक्त मनोहर उपन्यास, सन्तानपालन, ग्रहप्रबन्ध आदि स्त्री-उपयोगी स्त्रियों के ही लेख रहते हैं।

जिसे पढ़ी अनपढ़ सभी स्त्रियां समझ सकती हैं। गूढ़ से गूढ़ विषय भी ऐसी सरल और मनोहर । में समझाये जाते हैं, जो मूर्ख से मूर्ख स्त्रियों के भी समझ में शीघ्र ही आ जाते हैं। स्त्री-जाति के र का कोई विषय ऐसा नहीं जो इस में न लिखा जाता हो। अपने मित्रों को भी ग्राहक बनाइये।

श्रीमती यशोदादेवी कृत स्त्री-शिक्षा की अपूर्व पुस्तकें—यदि आपको स्त्री-शिक्षा इन पुस्तकों की ज़रूरत है जिनका मिलना दुर्लभ था, जो इस समय हज़ारों रुपया खर्च करने पर भी ी जगह नहीं मिल सकतीं, जिनके द्वारा इस समय हज़ारों स्त्रियां लाभ उठा रही हैं क्योंकि यह पुस्तकें परिश्रम से बड़ी खोज से बहुत कुछ धन खर्च कर स्त्री-उपयोगी उन विषयों से उपयोगी बनाई गई हैं कि के बिना जाने स्त्री-जाति एक घोर अन्धकार में पड़ी हुई है। शीघ्र ही स्त्री-धर्म-शिक्षक के ग्राहक बनिये।

कई हज़ार पृष्ठ की २७ पुस्तकें ११॥) मूल्य की ५) में मिलेंगी।

| | |
|---|---|
| —गृहलक्ष्मी बहू ॥) | २—आदर्श जीवन ॥) |
| —धार्मिक कथाएं ॥) | ४—सेविका ॥) |
| —रत्नसंग्रह ।=) | ६—गर्भरक्षा-विधान, स्त्रियों के गुप्त रोगों की चिकित्सा ) ॥) |
| —महिलाहास्यभूषण ।) | ८—अभिनवपत्रदर्पण ।) |
| —पतिव्रत-धर्ममाला ।) | १०—पत्रोपयोगदर्पण ।) |
| १—शिशुरक्षाविधान ॥) | १२—जीवनरक्षा ॥) |
| १३—सन्तान-पालन ॥) | १४—सुखी कुटुम्ब ।) |
| १५—नवरत्नसंग्रह ॥) | १६—सर्वसंवाद ॥) |
| १७—स्त्री-संगीतसागर ॥) | १८—पतिप्रेमपरीक्षा ॥) |
| १९—सचा पतिप्रेम ।) | २०—सती सीतिविद्या ।) |
| २१—घर का वैद्य ।) | २२—सच्ची सहेली ।) |
| २३—धात्रीविद्या ।=) | २४—आदर्श बालिका ।=) |
| २५—हीर दर्पण ।) | २६—सर्वसुखदा ॥) |
| २७—स्त्री-रोग-चिकित्सा ... ... | ॥) |

सब पुस्तकें अलग अलग भेजने से डाकखर्च, पैकिंग

श्रीमती यशोदादेवी स्त्री-धर्म-शिक्षक (नं०८०) कर्नलगंज, इलाहाबाद।

जिस महायुद्धने संसारमें हलचल मचा दी है, जिस महायुद्धने दुनियाके सारे कारबार चौपट कर दिये हैं, महायुद्धके परिणामपर यूरोपके बड़े बड़े प्रतिमाशाली राष्ट्रोंका जीवन-मरण निर्भर करता है, जिस महायुद्धमें करोड़ सैना कटने मरनेको तय्यार खड़ी है, उसी "महायुद्धका सचित्र इतिहास" हिन्दीमें कृपकर तय्यार किया गया है और हाथोंहाथ धड़ाधड़ बिक रहा है। इसके पढ़नेसे आपको युद्धसम्बन्धी ऐसी ऐसी गुप्त और रहस्यकी बातें मालूम होंगी, जो आपने कभी देखी-सुनी न होंगी। इसके प्रत्येक भागमें युद्ध-सम्बन्धी बड़े बड़े १०—१० चित्र हैं। युद्ध-स्थानोंका पूरा हाल बतानेके लिये हिन्दीमें छपा हुआ "यूरोप"का एक बड़ा ही सुन्दर रङ्गीन मानचित्र (नक्शा) भी दिया है। यदि युद्धका पूरा पूरा हाल, भयङ्कर लड़ाइयोंका सच्चा, अनूठा और गुप्त समाचार जाननेकी इच्छा हो, तो इसे शीघ्र मंगाइये। मूल्य पहले भागका सिर्फ ॥=) और दूसरे भागका ॥), पहिले भागमें युद्धके बड़े और दूसरे भागमें बड़े बड़े ४७ चित्र दिये गये हैं।

## मिस्ट्रीज़ आफ़ दी कोर्ट आफ़ लण्डन।

जिस उपन्यासके लिये वर्षोंसे लोग लालायित थे, जिस उपन्यासका नाम सुनते ही लोग फड़क उठते थे, जिस उपन्यासकी विचित्रता, सभ्यता और अनूठेपनकी धूम संसार भरमें मची हुई थी, जिस उपन्यासका बङ्गला, गुजराती, मराठी और उर्दू आदि भाषाओंमें हाथोंहाथ बिक रहा था, जिस उपन्यासके हिन्दी-भाषाभाषी न होनेके कारण हिन्दी-प्रेमी आज उसके आनन्दसे अबतक वञ्चित थे, वही उपन्यास हिन्दीकी चुहाती हुई भाषामें नये ठाट-बाट और अनूठे बहुरङ्गी चित्रों सहित कृपकर तय्यार हो गया है, और धड़ाधड़ बिक रहा है। "लण्डन-रहस्य" उपन्यास नहीं, बल्कि—

## उपन्यास-सम्राट

है। आदि इसमें हत्याकी आश्चर्यजनक, कौतूहलवर्धक और हृदयग्राही घटनाओंका ऐसा सुन्दर वर्णन किया है कि एकबार इसके पढ़ना प्रारम्भ किये बिना छोड़नेको इच्छा ही नहीं होती। अधिक तारीफ करना व्यर्थ है, क्योंकि इसकी पूरी तारीफ को आप, तो फिर तारीफ होगी "अल्फ़ैलैला" या "क़िस्साना आलाट" जैसा बड़ा ग्रन्थ पढ़ जाइए। अगर आपको उपन्यास पढ़नेका शौक़ हो तो, तो यह उपन्यास छोड़कर पढ़ने कभी पढ़िए। [illegible] बङ्गलाके लेखकने इसे ऐसा सुन्दर बनाया है, कि एकबार आप "यूरोप" प्रायलोप को भी भूल जायेंगे। दाम ॥) मात्र, "लण्डन रहस्य" १०० चित्र हैं, ८) डाक ॥) मात्र।

—मैनेजर, एम॰ मुहम्मद एण्ड कं॰, ५०१।८ अपर चीतपुर रोड, कलकत्ता

मुफ़्त लुटाते हैं

मुफ़्त लुटाते हैं

.खुशबूदार रमेशसाबुन एक वैज्ञानिक रीति से बनाया जाता है जो सिर्फ़ ३-४ मिनट में बग़ैर या तकलीफ़ के बालों को उड़ाकर जिल्द को मुलायम और ऐसा चमकदार कर देता है मानो बाल .दा कभी थे ही नहीं। रमेशसाबुन दाद, खाज, और ज़हरीले जानवरों के विष को भी बात की बात में खो ता है इसी सबब रमेशसाबुन के हज़ारों बक्स बिक रहे हैं। रमेश साबुन बड़े बड़े राजे महाराजे, सेठ ाहूकारों के मकान तक आदर पा चुका है। तीन टिकिया मय ख़ूबसूरत बक्स ।॥) बारह आना ी० पी० खरचा ।-) लेकिन जो साहब चार बक्स फ़ीमती ३) तीन रुपया एक साथ भेजेंगे उनके। एक ान पर रखने की निहायत मज़बूत ख़ूबसूरत पायेदार फैंसनेबिल सदी मुफ़्त नज़र करेंगे। वी० पी० रचा ॥-)

पता—एल० आर० गुप्ता
(की लाल) स्वामीघाट, मथुरा।

## आधा दाम और घरी इनाम।

हाथ और पैर से बजाने का बाजा। पढ़ना न होने से दाम वापस।

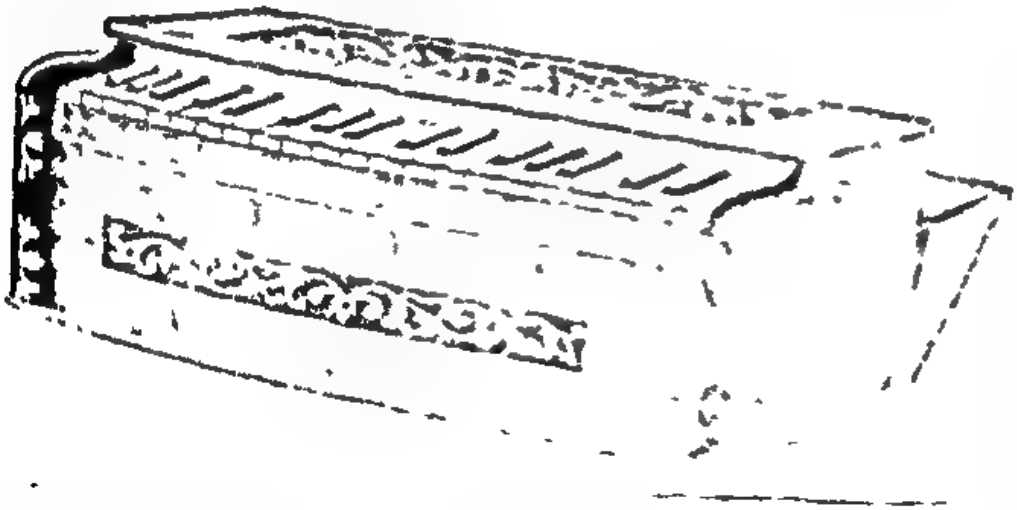

[illegible] आधा दाम [illegible] हारमोनियम सभी [illegible] दिया जाता, और [illegible] इसमें स्वर [illegible] हारमोनी घड़ी साथ "हाथ पैर हैरो" बजाने का बाजा [illegible] और बजाने [illegible] बजाना आता [illegible] बजाना आता [illegible] बजाने के आदमी को [illegible] दाम ३०) ४०) ५०) [illegible] ३०) ४०) ५०) [illegible] ३०) ४०) ५०) [illegible] देकर आप, स्वयं ऐसे [illegible]

[illegible]

छोटे बच्चों के लिए

# डोंगरे का

## बालामृत.

शीशी का दाम १२ आना

डा० म० ४ आना

## प्रशंसा-पत्र

मि० प्राणलाल भाईशंकर, सनवार के महाराजा साहेब के गार्डियन लिखते हैं कि:—

"हमारा लड़का इतना दुबला हो गया था कि उसके जीने की भी आशा हमने छोड़ दी थी लेकिन, डोंगरे का बालामृत पीने से वह लड़का अच्छा हो गया है।"

मि० करीम महमद, एम० ए० एलएल० बी हेड मास्टर जूनागढ़ हाई स्कूल लिखते हैं कि—

"हमारे घर में बच्चों के वास्ते डोंगरे बालामृत हमेशा दिया जाता है, उस बालामृत 'बालामृत'—'बालों का अमृत'—यह नाम बराबर सार्थ किया है।"

पता—के० टी० डोंगरे कं०, गिरगाँव, मुम्बई।

भारत-सरकार से रजिस्ट्री की हुई

# रजिस्टर्ड ] ताक़तबहार गोलियाँ [ रजिस्टर्ड

ज कल विज्ञापन का बाज़ार गर्म है। जिस समाचारपत्र को उठा कर देखते हैं, ताक़त की दवाओं ही विज्ञापन छपे हुए दृष्टिगोचर होते हैं ; जिनकी प्रशंसा में दस बीस लाइन की क्या चली कालम ाम रंगे रहते हैं। लेकिन ! लोगों ने जब वे दवाइयाँ मँगाईं तब टाँय् ! टाँय् ! फिस ! फिस !! के ज़रा भी ताक़त देखने में न आई। ध्यान रहे कि, बहुत से चालाक आदमियों ने हमारी "ताक़त-ोलियों" की अधिक बिक्री देख दवा का नाम बदल कर और क़ीमत कम करके समाचारपत्रों में न तो छपवा दिया पर ये लोग हमारी दवा का ठीक ठीक नुसख़ा न मिलने से ग्राहकों को प्रसन्न सके और फुदक फुदक कर बैठ रहे। हमारा तो कहना है कि, "हाथ-कंगन को आरसी की करत" हम अपने सत्य व्यवहार के भरोसे ही आपके साथ

## इतनी कड़ी प्रतिज्ञा करते हैं

एको पसन्द न आवे तो हम उसे वापिस ले लेंगे, दोनों तरफ का डाक-महसूल ग्राहकों को नहीं ागा, यानी हमीं सहन करेंगे।

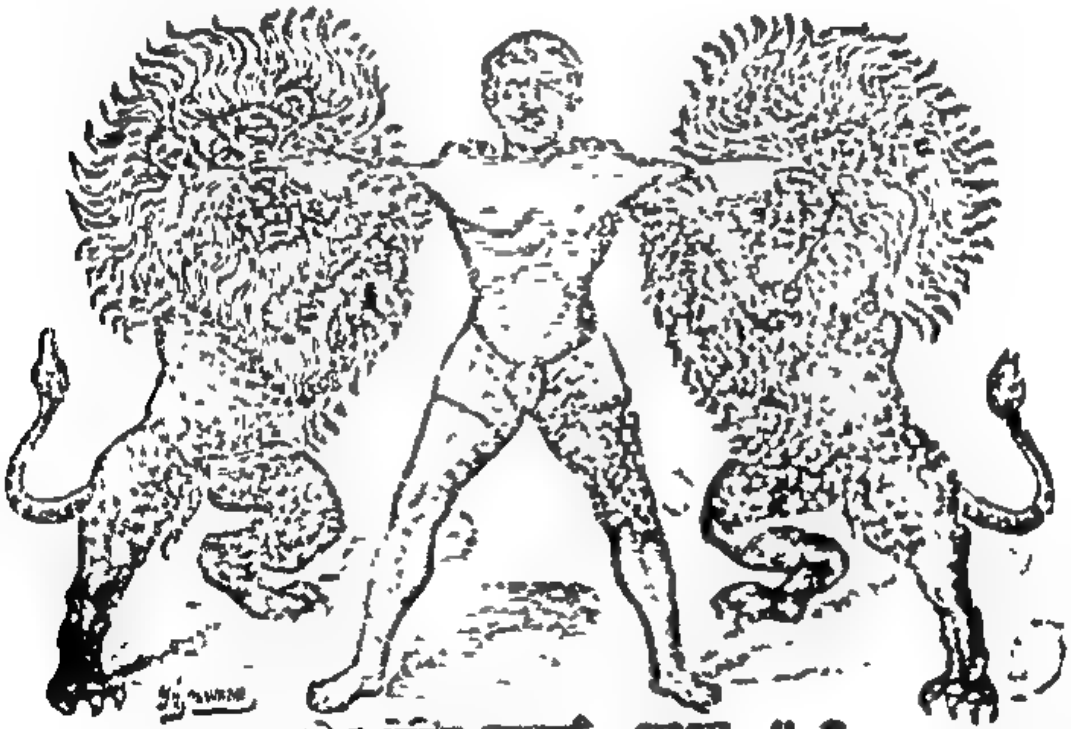

जमना कोल ट्रेडिंग कम्पनी मथुरा. यू. पी.

बाल्यावस्था के दोषों से, अयानी की कुचालों से निर्बलता, पेशाब में अलब्यू या शुक्र का होना, हर य सुस्त रहना, सिर में चक्करों का आना या दर्द होना, हाथ-पैरों में कमज़ोरी, थोड़ा चलने या परिश्रम ा से थकावट मालूम होना, किसी काम में मन का न लगना, चेहरे पर खुश्की या पीलापन होना, इन शिकायतों को दूर कर नयी शक्ति पैदा करती हैं। बुढ़ापे में जवानी की सी ताक़त मालूम न हो तो ' बापस। अधिक प्रशंसा करके अपने मुंह मियां मिट्ठू बनना ठीक नहीं। २१ गोली की १ शीशी का ।) रुपया। दो शीशी का मूल्य १॥) एक रुपया बारह आना। ६ शीशी एक साथ लेने से ५) ना। १२ शीशी एक साथ लेने से ९) नौ रुपया। डाकमसूल कमीशन ख़रीदार।

सूचना— हमारे यहाँ से बङ्गाल का हर एक तरह का केवड़ा, केवड़ादानियों और केवड़ाजलों के अतिरिक्त बहुत उमदा, सस्ता और ठीक समय पर भेजा जाता है।

पता—जमना कोल ट्रेडिंग कम्पनी—मथुरा। (नं०२)

# परीक्षित ओषधियाँ ।

## दशतिक्त कषाय ।

इसके सेवन से रोज़ आने वाला बुख़ार मेलेरिया ज्वर, पारी से आने वाला ज्वर, जूड़ी, तापतिल्ली, (पिलई) विषमज्वर, मुख का बद-सवाद होना, शरीर का दुबला होना। यह सब रोग आराम होते हैं। यह दवा जंगल की दस बूटियों से बनाई गई है। दाम ॥=) आधा बोतल।

## अपूर्व दन्तमंजन ।

इस मंजन के सेवन से दांत का दर्द, मसूड़ों की कमज़ोरी, दूर होती है। हिलते हुए दांतों को ऐसा जकड़ता है कि जैसे किसी ने सोने के तार से बाँध दिए हों और कुछ दिन तक सेवन किया जाय तो दांत की सब बीमारियां दूर हो जाती हैं। यह मंजन ख़ास कर हिलते हुए दांतों को बहुत फ़ायदा पहुँचाता है। दाम ।) फ़ी डिब्बी।

## पीयूष वटी ।

बदहज़मी, पेट का दर्द, अफरा, बायगोला, विशूचिका, हैज़ा वग़ैरह सब को दूर करेगी। दाम =) डिब्बी जिसमें १ दर्जन गोली हैं।

रस, चूर्ण, तैल, वटिका, आसव आदि शास्त्र और पुश्त दर पुश्त के अनुभवों से प्राप्त सब तरह की ओषधियां सब समय मौजूद रहती हैं। रेलवे स्टेशनों के पास रहने वाले रेल का पारसल मँगावेंगे तो महसूल कम लगेगा।

## पाचक वटी ।

इस वटी के खाने से अजीर्ण, पेट फूलना व पेट का दर्द, ख़राब डकार, चित्त मचलाना, पित्त गिरना आदि समस्त उदर-रोग आराम होते हैं और इसके स्वाद से मन प्रसन्न होता है। दाम।॥) डिब्बी जिसमें १०० गोलियां हैं।

नेपाल के स्वर्गवासी जेनरल राना पद्मजंग के

गृहचिकित्सक,

राजवैद्य रमाकान्त व्यास,

कटरा, प्रयाग।

# चंद्रमुखीकरण

यह
यती
फूलों
इसे विलायत
एक मशहूर
ने बनाकर
अभी रवाना
है। सात
बदन और
पर मल कर
से, स्याह रंग
गुलाब के फूल
भाँति सुर्ख
सफ़ेद, मक्खन
माफ़िक मुल
हो जाती है।
से ख़ुशबू की प्यारी २ लहर निकलने लगती
सीतला माता के दाग, आँखों और गालों के
दाग, झाँई छीप झुर्रियां मुहासे आदि को बिल्
ऐसी ख़ूबसूरती आ जाती है कि चेहरा और
माफ़िक चमकने लगता है। तारीफ़ यह है कि
रंगत और ख़ूबसूरती इससे पैदा होती है व
क़ायम रहती है क्योंकि यह यह पौडर नहीं
बाज़ारी चीरतें लगाकर घड़ी दो घड़ी को
चमड़ी कर लेती हैं। अपनी प्राणप्यारी को
सुखी बनाना है तो इसे अवश्य मँगावें।
फ़ी बोतल १॥) तीन बोतल एक साथ
पारसल ख़र्चा माफ़।

मिलने का पता—

रमेशचंद्र ऐण्ड को०,

स्वामीघाट (बी बांच)

हर जगह एजन्टों की ज़रूरत है

## मनमोहिनी वटिका !

मोहनी वटिका का सेवन जो नर करेगा।
दें मर्द बन कर नहीं काम से डरेगा॥
दिल निरास होकर बैठे हों हाथ मल कर।
ा से एक गोली जोबन उमङ्ग भरेगा॥

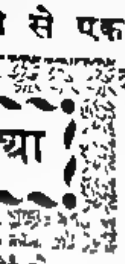

दमी कैसा ही निर्वीर्य व सुस्त-कम-ज़ोर क्यों न हो एक गोली दूध के साथ खाने से आधे घन्टे बाद यह ताक़त पैदा होती है कि बुड्ढे ों को मात कर दें। अगर आपको आगे जवानी हार देखना मंजूर है तो इसे ज़रूर मंगायें। हनी वटिका चन्द रोज़ इस्तेमाल करने से बदन ोलाद बना देती है। क़ीमत फ़ी बक्स १॥) बक्स एक साथ ख़रीदने से ४)

वनामृत सुरमा नेत्रों की हर प्रकार की न बीमारी के लिए अमृत के तुल्य है— एक शीशी॥)

पारसाकर—इसकी प्रशंसा २ अख़्बारों ने प्रशंसा की है, जिसमें सिका-ख़दर्दी अंगूठी, सामूलविदार, कपूर माला, गन्धक का सिलास, कपूर का बटोरा का सिलास, विलायती सिज़ाब, चाँदी सोने का मा, साबुन, दाद की दवा, रबर की मोहरें, बनाने की सैकड़ों तरकीबें लिखी हैं, सदा दाखिल करना है तो सिर्फ़ ॥) का टिकट भेज मँगा लीजिए। जल्दी कीजिए, थोड़ी जिल्दें रह ई।

दा-कलप इस सिज़ाब के लगाने से पाँच मिनट में बाल और काले भौंरे के समान हो जाते हैं, जो बाल एक दफ़े काले हो जाने पर कभी सफ़ेद नहीं होते—बराबर इस्तेमाल के लायक़ उमदा चीज़ है। क़ीमत १॥) रु०

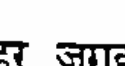

राधाविहार हेयर ऑइल, यह अपने ढङ्ग का विचित्र ख़ुशबूदार अनोखा ही तैल है—दिल और दिमाग़ को ताक़त देता हुआ नये फ़ैशन के चेहरे की खूबसूरती बढ़ाता है—इसे ज़रूर मँगाकर इस्तेमाल कीजिये—सचाई का परिचय तो आपको लेना ही है। मूल्य एक शीशी का १) रु० तीन शीशी लेने से पारसल ख़र्चा माफ़।



अग्निसंदीपन चूर्ण, उदर की अनेक बीमारियों को दूर करके भूक बढ़ाता हुआ आदमी को हट्टा कट्टा पट्ठा बनाता है—फ़ायदा न करे तो दाम वापस—एक शीशी का मूल्य ॥) आना।



दावानल, हर तरह के दाद के दादा को बग़ैर तकलीफ़ के लगादा कर भगाने की गारंटी रखता है एक शीशी १) तीन शीशी लेने से पार्सल ख़र्चा माफ़।



मृत लहर, इसका परिचय देने की कोई ज़रूरत नहीं है। क्योंकि यह दवा सैकड़ों बीमारियों में अपना तत्काल गुण दिखाती हुई हर जगह आदर पाती है और हमने भी हर एक को फ़ायदा पहुँचाने के लिए इसकी रियायती क़ीमत सिर्फ़ तीन माह के वास्ते ॥) आना कर दी है।



मी मिठाई, एक शीशी १४ सेर दूध का काम देती है, खाद, शक्कर, घृत, दही, जो चाहे जिसमें डालकर मिठाई का काम लेकर परमात्मा से बन्दी बिखदत कीजिए। एक शीशी का दाम ॥) आना डाक का ५) रु०



की सफ़ेदी दूर हो, चाहे जब कर लेने में इस्तेमाल कीजिये, चश्मे की बूंद भी नहीं गिरती जब ऐसा ही रहता है जैसा दवा के लगाने के पहिले था इसके इस्तेमाल करने से आँखों के आश्चिक रोग दूर होते हैं इसे ज़रूर इस्तेमाल में लाइए। यह दवा अत्यन्त लाभदायक है। शीशा का दाम १) २) डाक्टर सिंहार का दाम २) ३)

पता—रमेशचन्द्र एण्ड कं०

(ई ब्लॉक) सदर बाज़ार, कानपुर।

॥ श्रीः ॥

विलक्षण प्रतिभा ! दैवी शक्ति ! ! जागता जादू ! ! !

# ॥ अद्भुत साहित्य-संसार ॥

अमृत की वर्षा, आनन्द का समुद्र, स्वर्ग का नंदन कानन, मोक्ष का द्वार, शिक्षाओं का चमत्कार का आगार, बिलकुल नया आविष्कार,

## अर्थात् देवकर जी के रचित उपन्यास ।

आज हम बड़े हर्ष से अपने विद्या-रसिक पाठकों को यह शुभ संवाद सुनाते हैं कि ह नागरी जगत् में बंग भाषा जैसे उपन्यासों का जो अभाव था उसकी पूर्त्ति के लिए हम श्रीयुत बा राम देवकरजी के उपन्यासों का जिन्हें प्रधान २ नागरी रसिकों, विद्वानों, एवं शिक्षा-समितियों ने स सिद्ध किया है, मुद्रित करना प्रारम्भ कर दिया है। ये उपन्यास चित्ताकर्षण, हृदयरंजन त हितोपदेश के अतिरिक्त उच्च कोटि की शिक्षा देते हैं। अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं, पा पढ़ कर देख लें कि "गागर में सागर" वाली कहावत कहां तक सत्य करके दिखलाई गई है:—

१—आदर्शमित्र—पंजाब टेक्ट बुक कमेटी द्वारा स्वीकृत, संसार का मित्र, नव-युवकों का सच्चा सखा, वीरता, प्रतिज्ञता, दुर्व्यसनों के परिणाम की भयानकता, धर्मनिष्ठ न्यायकारियों की न्यायपरायणता और आदर्श मित्रों का विचित्र रहस्य। मूल्य सजिल्द १) सादी ॥)

२—मनमोहिनी—अपने ढङ्ग का निराला आश्चर्य, कौतूहलयुत, तथा स्त्री-शिक्षा के उच्च आदर्शों से परिपूर्ण सजिल्द ॥=) सादी ।=)

३—पानी का बुड़बुड़ा—संसार की निःसारता, प्रकृति का सौन्दर्यनिदर्शन, भूगर्भ की सैर और चमत्कारिक घटनायें मूल्य ।=)

४—भयंकर दुर्दशा—चुहचुहाते हुए हास्य रस का अनमोल रत्न पढ़ कर हृदय को प्रफुल्लित कीजिए। मूल्य =)

५—मायामरीचिका—संसार की विचित्रता, मोक्ष का मार्ग, निदर्शन। एक रमणी का स त्याग, चरित्रबल बढ़ाने का उपाय। अत्य व मनोरंजक। मू० ।=)

६—रामचरित्र रामायण—सातों काण्ड मनोरंजक काव्य-रस-परिपूर्ण राम-रहस्य, दोहा, चौपाई, सोरठा, छन्दों इत्यादिक में है। सजिल्द १) सादी ॥)

७—नवरत्नगीता—ध्यान, कर्म, योगादि का निर्भ्रान्त वर्णन। महत्त्व-पूर्ण ग्रन्थ सजिल्द ॥) सादी ॥)

८—हास्यतरङ्ग—ये हू हँसें, न हँसें और जो नित्य हँसें सो हँसा ही करेंगे। तथा गुण; मूल्य =)

९—चन्द्रप्रभा वैद्यक—उपदंश अर्थात् उत्तमोत्तम नुसखों का संग्रह (देशी वि सर्वोपयोगी है। मू० ।)

विशेष द्रष्टव्यः—इकट्ठी पुस्तकों के खरीदने वाले बुकसेलरों को उचित कमीशन देवेंगे।

पत्रव्यवहार तथा पुस्तकों के मिलने का पताः—

मैनेजर—साहित्य-बन्धु पुस्तकालय

जबलपुर सी० पी०

नई पुस्तक !

# हिन्दी-शेक्सपियर

छः भाग

शेक्सपियर एक ऐसा प्रतिभाशाली कवि हुआ
इस पर योरप देश के रहने वाली गौराङ्ग जाति
ही नहीं किन्तु संसार भर के मनुष्य मात्र को अभि-
न करना चाहिए। असल में आज तक जो कीर्ति
क्सपियर को प्राप्त हुई है और जितना प्रचार
क्सपियर की किताबों का संसार में हुआ है
से यश का प्राप्त करनेवाला कोई नहीं हुआ,
न वैसा किसी की किताब का ही प्रचार हुआ।
जगत्प्रतिष्ठित कवि के शेक्सपियर का हिन्दी
नुवाद किया गया है। हिन्दी सरल और सरस
या सब के समझने योग्य है। यह पुस्तक छः
ों में विभाजित है। प्रत्येक भाग का मूल्य ॥) आने
और छहों भाग एक साथ लेने पर ३) तीन
ा है। जल्दी मँगाइए।

# श्रीगौरांगजीवनी

मूल्य =) दो आने

चैतन्य महाप्रभु का जन्म बङ्गाल में हुआ।
न मात्र बङ्गाल ही में नहीं किन्तु भारत के कोने
में फैला हुआ है। वे वैष्णव धर्म के प्रवर्तक
श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे। उनके जीवन-
र अनेक भाषाओं में छपे हुए हैं। हिन्दी-भाषा
उनके जीवन-चरित की बड़ी ज़रूरत थी। इस
ी सी पुस्तक में उन्हीं गौराङ्ग महाशय की
न-घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन है। पुस्तक
रचना मनुष्य मात्र के काम की है, किन्तु
व धर्मावलम्बियों को तो उसे अवश्य एक बार
ा चाहिए।

नई पुस्तक ! नई पुस्तक !!

# इन्साफ़-संग्रह

दूसरा भाग।

मुंशी देवीप्रसाद जी मुंसिफ़ की बनाई हुई 'इन्साफ़-संग्रह, पहला भाग' पुस्तक पाठकों ने पढ़ी होगी। ठीक उसी ढँग पर यह दूसरा भाग भी मुंशीजी ने लिखा है। इसमें ३७ न्यायकर्त्ताओं द्वारा किये गये ७० इन्साफ़ छापे गये हैं। इन्साफ़ पढ़ते समय तबीयत बहुत ख़ुश होती है। मूल्य केवल ।=) छः आने।

सचित्र

# हिन्दीकोविदरत्नमाला।

दूसरा भाग

( सम्पादक—बा० श्यामसुन्दर दास, बी० ए० )

इस भाग में भी पहले भाग की तरह नामी नामी चालीस हिन्दी-लेखकों के संक्षिप्त जीवन-चरित छापे गये हैं। हिन्दी के धुरन्धर लेखक पण्डित महावीर-प्रसादजी द्विवेदी और पण्डित मामराव रघे बी० ए० आदि विद्वानों के जीवनचरित पढ़कर प्रत्येक हिन्दी-भाषा-भाषी को लाभ उठाना चाहिए। इस पुस्तक में भी चरितनायकों के ४० छायादेह चित्र दिये हैं। जिल्द-बँधी हुई पुस्तक का मूल्य केवल १) रुपया।

बाला-पत्र-कौमुदी

मूल्य =) दो आने

यह बड़े आनन्द की बात है कि भारत वर्ष के सभी प्रान्तों में कन्यापाठशालायें खुल गई हैं और उनमें हज़ारों कन्यायें शिक्षा पा रही हैं। स्त्री शिक्षा से भारत का सौभाग्य समझना चाहिए। इस छोटी सी पुस्तक में लड़कियों के लिये अनेक छोटे छोटे पत्र लिखने के नियम और पत्रों के नमूने दिये गये हैं। कन्यापाठशालाओं में पढ़ने वाली कन्याओं के लिए पुस्तक बड़े काम की है। अवश्य मँगाइए।

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

॥ श्रीः ॥

विलक्षण प्रतिभा ! दैवी शक्ति ! ! जागता जादू ! ! !

# ॥ अद्भुत साहित्य-संसार ॥

अमृत की वर्षा, आनन्द का समुद्र, स्वर्ग का नंदन कानन, मोक्ष का द्वार, शिक्षाओं का चमत्कार का आगार, बिलकुल नया आविष्कार,

## अर्थात् देवकर जी के रचित उपन्यास ।

आज हम बड़े हर्ष से अपने विद्या-रसिक पाठकों को यह शुभ संवाद सुनाते हैं कि आज नागरी जगत् में बंग भाषा जैसे उपन्यासों का जो अभाव था उसकी पूर्त्ति के लिए हम श्रीयुत बाबू राम देवकरजी के उपन्यासों का जिन्हें प्रधान २ नागरी रसिकों, विद्वानों, [illegible] सिद्ध किया है, मुद्रित करना प्रारम्भ कर दिया है। ये उपन्यास चित्ताकर्षण, हृदयरंजन हितोपदेश के अतिरिक्त उच्च कोटि की शिक्षा देते हैं। अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं, पाठक पढ़ कर देख लें कि "गागर में सागर" वाली कहावत कहाँ तक सत्य करके दिखलाई गई है:—

१—आदर्शमित्र—पंजाब टेक्स्ट बुक कमेटी द्वारा स्वीकृत, संसार का मित्र, नव-युवकों का सच्चा सखा, वीरता, प्रतिज्ञता, दुर्व्यसनों के परिणाम की भयानकता, धर्मनिष्ठ न्यायकारियों की न्यायपरायणता और आदर्श मित्रों का विचित्र रहस्य। मूल्य सजिल्द १) सादी ॥)

२—मनमोहिनी—अपने ढङ्ग का निराला आश्चर्य, कौतूहलयुत, तथा स्त्री-शिक्षा के उच्च आदर्शों से परिपूर्ण सजिल्द ॥=) सादी ।=)

३—पानी का बुद्बुदा—संसार की निःसारता, प्रकृति का सौन्दर्यनिदर्शन, भूगर्भ की सैर और चमत्कारिक घटनायें मूल्य ।=)

४—भयंकर दुर्दशा—गुदगुदाते हुए हास्य रस का अनमोल गल्प पढ़ कर हृदय को प्रफुल्लित कीजिए। मूल्य =)

५—मायामरीचिका—संसार की विचित्रता, मोक्ष का मार्ग, निदर्शन। एक रमणी का सच्चा त्याग, चरित्रबल बढ़ाने का उपाय। अत्यन्त य मनोरंजक। मू० ।=)

६—रामचरित्र रामायण—सातों काण्ड मनोरंजक काव्य-रस-परिपूर्ण राम-रहस्य, दोहा, चौपाई, सोरठा, छन्दों इत्यादिक में है। सजिल्द १) सादी ॥)

७—नवरत्नगीता—ध्यान, कर्म, योगादि का निर्भ्रान्त वर्णन। महत्त्व-पूर्ण ग्रन्थ। सजिल्द ॥) सादी ॥)

८—हास्यतरङ्ग—ये हु हँसें, न हँसें और जो नित्य हँसें सो हँसा ही करेंगे। तथा गुण; मूल्य =)

९—चन्द्रप्रभा वैद्यक—उपदंश कर्णरो उत्तमोत्तम नुसखों का संग्रह (देशी सर्वोपयोगी है। मू० ।)

विशेष ज्ञातव्य:—इकट्ठी पुस्तकों के खरीदने वाले बुकसेलरों को उचित कमीशन देंगे।

पत्रव्यवहार तथा पुस्तकों के मिलने का पता:—

मैनेजर—साहित्य-बन्धु ...

# ❀ इंडियन प्रेस, प्रयाग, के रंगीन चित्र ❀

चित्रकला, संगीतविद्या और कविता, इनमें देखा जाय तो परस्पर
त ही लगाव मिलेगा। जैसे अच्छे कवि की कविता मन को मोह लेती
अच्छे गवैये का संगीत हृदय को प्रफुल्लित कर देता है वैसेही चतुर
त्रकार का बनाया चित्र भी सहृदय को चित्र-लिखित सा बना देता है।
बड़े लोगों के चित्रों को भी सदा अपने सामने रखना परम उपकारी
ता है। ऐसे उत्तम चित्रों के संग्रह से अपने घर को, अपनी बैठक को
ाने की इच्छा किसे न होगी? अच्छे चित्रों को बनानेवाले ही एक तो
न मिलते हैं, और अगर एक आध खोज करने से मिला भी तो चित्र
ाने में एक एक चित्र पर हज़ारों की लागत बैठ जाती है। इस कारण
न को बनवाना और उनसे अपने भवन को सुसज्जित करने की अभिलाषा
ी करना हर एक के लिए असंभव है। हमारे यहाँ से प्रकाशित होने
ली सरस्वती मासिक पत्रिका में जैसे सुन्दर मनोहर चित्र निकलते हैं
ा बतलाने की ज़रूरत नहीं है। हमने उन्हीं चित्रों में से उपयोगी उत्तम
ने हुए कुछ चित्र (बँधा कर रखने के लायक़) बड़े आकार में छपवाये हैं।
ित्र सब नयनमनोहर, आठ आठ दस दस रंगों में सफ़ाई के साथ छपे हैं।
क बार हाथ में लेकर छोड़ने को जी नहीं चाहता। चित्रों के नाम, दाम
ार परिचय नीचे लिखा जाता है। शीघ्रता कीजिए, चित्र थोड़े ही छपे हैं—

### शुक-शूद्रक-परिचय

(१४ रंगों में छपा हुआ)

आकार—२०½" × १७" दाम ३) रु०

संस्कृत कादम्बरी की कथा के आधार पर यह
त्र बना है। महा प्रतापी शूद्रक राजा की भारी
य सभा लगी हुई है। एक परम सुन्दरी चाण्डाल-
या राजा को अर्पण करने के लिए एक तोते का
ड़ा लेकर आती है। तोते का मनुष्य की वाणी
आशीर्वाद देना देख कर सारी सभा चकित हो
ती है। उसी समय का दृश्य इसमें दिखाया गया है।

### शुक-शूद्रक-संवाद

(१४ रंगों में छपा हुआ)

आकार—२१" × १८½" दाम ३) रु०

संस्कृत कादम्बरी की कथा के आधार पर यह
चित्र भी बना है। इस चित्र में राजमहल—अन्तःपुर
का दृश्य बहुत अच्छे ढंग से दिखाया गया है।
राजा शूद्रक लेटा है। रानियाँ बैठी हैं। मन्त्री भी
उपस्थित है। चाण्डालकन्या के दिये हुए उसी तोते
से राजा के बातचीत करने का सुन्दर दृश्य दिखाया
गया है।

चित्रों के मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

नई पुस्तक !

# वन-कुसुम

इस छोटी सी पुस्तक में छः कहानियाँ छापी गई हैं। कहानियाँ बड़ी रोचक हैं। कोई कोई कहानी तो ऐसी है कि पढ़ते समय हँसी आये बिना नहीं रहती। मूल्य केवल चार आने है।

# सदुपदेश-संग्रह

मुंशी देवीप्रसाद साहब, मुंसिफ़, जोधपुर ने उर्दू भाषा में एक पुस्तक नसीहतनामा बनाया था। उसकी क़द्र पञ्जाब और बराड़ के विद्या-विभाग में बहुत हुई। वह कई बार छापा गया। उसी नसीहत-नामा का यह हिन्दी अनुवाद है। सब देशों के ऋषि-मुनि, और महात्माओं ने अपने रचित ग्रन्थों में जो उपदेश लिखे हैं उन्हीं में से छाँट छाँट कर इस छोटी सी किताब की रचना की गई है। शेख़सादी का कथन है कि 'अगर भीख पर भी कोई उपदेशात्मक वचन मिला हो तो मनुष्य को चाहिए कि उसे अपने कान में धर ले'। यह बिलकुल ठीक है। बिना उपदेश के मनुष्य का आत्मा पवित्र और बलिष्ठ नहीं हो सकता।

इस पुस्तक में चार अध्याय हैं। उनमें ७४१ उपदेश हैं। उपदेश सब तरह के मनुष्यों के लिए हैं। इसमें सभी सज्जन, धर्मात्मा, परोपकारी और चतुर बन सकते हैं। मूल्य केवल ।) चार आने।

## राम बाबा की कुटिया

[illegible]

नई पुस्तक !!

# श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

(हिन्दी-भाषानुवाद)

सरस्वती के समान ६०० पृष्ठ, सजिल्द-मूल्य केवल

आदि-कवि वाल्मीकि मुनि-प्रणीत [illegible] संस्कृत में है। उसके हिन्दी-भाषानुवाद भी [illegible] हुए हैं। पर यह अनुवाद अपने ढँग का [illegible] नया है। इसमें अक्षरशः अनुवाद है। भाषा [illegible] और सरस है। हिन्दू मात्र रामायण को धर्म [illegible] मानते हैं। असल में यह पुस्तक ऐसी ही है।। पढ़ने पढ़ाने वालों की सब तरह का ज्ञान प्राप्त [illegible] है और आत्मा बलिष्ठ बनता है। इस पुस्तक [illegible] आदि-काण्ड से लेकर सुन्दर-काण्ड तक [illegible] काण्डों का अनुवाद है। बाक़ी काण्ड उत्तर [illegible] रहेंगे। उत्तरार्द्ध छप रहा है। वह जल्दी ही [illegible] प्रकाशित होगा। जल्दी मँगाइए।

# गीताञ्जलि

डाक्टर श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर [illegible] बनाई हुई "गीताञ्जलि" नामक [illegible] पुस्तक का संसार में कितना [illegible] है; यह बतलाने की ज़रूरत [illegible] उस पुस्तक की अनेक कविताएँ [illegible] गीताञ्जलि में तथा और भी कई [illegible] की पुस्तकों में छपी हुई हैं। उन [illegible] ताओं को इकट्ठा करके हमने हिन्दी [illegible] में 'गीताञ्जलि' छपाया है। जो [illegible] हिन्दी जानते हुए बँगला भाषा [illegible] उनके लिए यह बड़े काम की पुस्तक [illegible] मूल्य १) एक रुपया।

## ❀ इंडियन प्रेस, प्रयाग, के रंगीन चित्र ❀

चित्रकला, संगीतविद्या और कविता, इनमें देखा जाय तो परस्पर
त ही लगाव मिलेगा। जैसे अच्छे कवि की कविता मन को मोह लेती
अच्छे गवैये का संगीत हृदय को प्रफुल्लित कर देता है वैसेही चतुर
ाकार का बनाया चित्र भी सहृदय को चित्र-लिखित सा बना देता है।
बड़े लोगों के चित्रों को भी सदा अपने सामने रखना परम उपकारी
ा है। ऐसे उत्तम चित्रों के संग्रह से अपने घर को, अपनी बैठक को
ाने की इच्छा किसे न होगी? अच्छे चित्रों को बनानेवाले ही एक तो
मिलते हैं, और अगर एक आध खोज करने से मिला भी तो चित्र
ाने में एक एक चित्र पर हज़ारों की लागत बैठ जाती है। इस कारण
को बनवाना और उनसे अपने भवन को सुसज्जित करने की अभिलाषा
करना हर एक के लिए असंभव है। हमारे यहाँ से प्रकाशित होने
ी सरस्वती मासिक पत्रिका में जैसे सुन्दर मनोहर चित्र निकलते हैं
बतलाने की ज़रूरत नहीं है। हमने उन्हीं चित्रों में से उपयोगी उत्तम
हुए कुछ चित्र (बँधा कर रखने के लायक़) बड़े आकार में छपवाये हैं।
त सब नयनमनोहर, आठ आठ दस दस रंगों में सफ़ाई के साथ छपे हैं।
ार हाथ में लेकर छोड़ने को जी नहीं चाहता। चित्रों के नाम, दाम
र परिचय नीचे लिखा जाता है। शीघ्रता कीजिए, चित्र थोड़े ही छपे हैं—

### शुक-शूद्रक-परिचय

(१४ रंगों में छपा हुआ)

आकार—२०½" × १७" दाम १) रु०

संस्कृत कादम्बरी की कथा के आधार पर यह
बना है। महा प्रतापी शूद्रक राजा की सारी
सभा लगी हुई है। एक परम सुन्दरी चाण्डाल-
। राजा को अर्पण करने के लिए एक तोते का
ड़ा लेकर आती है। तोते का मनुष्य की वाणी
शीर्वाद देना देख कर सारी सभा चकित हो
ा है। उसी समय का दृश्य इसमें दिखाया गया है।

### शुक-शूद्रक-संवाद

(१४ रंगों में छपा हुआ)

आकार—२१" × १८½" दाम १) रु०

संस्कृत कादम्बरी की कथा के आधार पर यह
चित्र भी बना है। इस चित्र में राजमहल—अन्तःपुर
का दृश्य बहुत अच्छे ढंग से दिखाया गया है।
राजा शूद्रक लेटा है। रानियाँ बैठी हैं। मन्त्री भी
उपस्थित है। चाण्डालकन्या के दिये हुए उसी तोते
से राजा के बातचीत करने का सुन्दर दृश्य दिखाया
गया है।

चित्रों के मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग, के रंगीन चित्र ※

## भक्ति-पुष्पांजलि

आकार—११½" × १४½" दाम ॥=)

...ुन्दरी शिवमन्दिर के द्वार पर पहुँच गई ...ी शिवमूर्ति है। सुन्दरी के साथ एक ... और हाथ में पूजा की सामग्री है। इस ...ुन्दरी के मुख पर, इष्टदेव के दर्शन और ...ुँचे भाव आनन्द, श्रद्धा और सात्त्विकता के ...ूबी से दिखलाये गये हैं।

## चैतन्यदेव

आकार ११½" × ९" दाम ।=) माप

...ु चैतन्यदेव बंगाल के एक अनन्य भक्त ...े जाते हैं। ये कृष्ण का अवतार और विष्णु ...के आचार्य माने जाते हैं। ये एक दिन ...वती जगन्नाथपुरी पहुँचे। वहाँ गरुड़स्तम्भ ...े होकर दर्शन करते करते ये भक्ति के ...ें बेसुध होगये। उसी समय के सुन्दर ...ाव इस चित्र में बड़ी ख़ूबी के साथ ...ये गये हैं।

## बुद्ध-वैराग्य

आकार १८½" × १२" दाम २) ६०

...ध में शान्तिसन्देश का प्रचार करने वाले ...ुद्ध का नाम जगत् में प्रसिद्ध है। उन्होंने ...ुन्दरी को त्याग और वैराग्य ग्रहण कर ...ये चित्र में महात्मा बुद्ध से अपने राज-...ासाद में जाकर त्याग दिया है और अपने ...ों को वहाँ जाकर घर ले जाने के लिए कह ...ये महात्मा के, बुद्ध के मुख पर, वैराग्य ...र और आदर्श के सिद्ध इस चित्र ...ें दिखलाये गये हैं।

## अहल्या

आकार—११½" × १८½" दाम १)॥

अहल्या अलौकिक सुन्दरी थी। वह गौतम की स्त्री थी। इस चित्र में यह दिखाया गया अहल्या वन में फूल चुनने गई है और एक हाथ में लिये खड़ी कुछ सोच रही है। सोच में देवराज इन्द्र के सौन्दर्य को—उन पर वह प्रकार से मोहित सी होगई है। इसी अवस्था इस चित्र में चतुर चित्रकार ने बड़ी कारीगरी साथ दिखलाया है। चित्र बहुत ही सुन्दर बना है।

## शाहजहाँ की मृत्युशय्या

आकार—१४" × १०" दाम ॥)

शाहजहाँ बादशाह को उसके पुत्र औरंगज़ेब ने धोखा देकर क़ैद कर लिया। उसकी प्यारी बेटी जहाँनारा भी बाप के साथ की हालत में रहती थी। शाहजहाँ का निकट है, जहाँनारा सिर पर हाथ रक्खे हुए दे रही है। उसी समय का दृश्य इस चित्र में लाया गया है। शाहजहाँ के मुख पर मृत्युकाल दशा बड़ी ही ख़ूबी के साथ दिखलाई गई है।

## भारतमाता

आकार—१०½" × ९" दाम ।=)

इस चित्र का परिचय देने की अधिक कता नहीं। जिसने हमको पैदा किया है, जो पालन कर रही है, जिसके हम कहलाते हैं, हमारा सर्वस्व है उसी जननी जन्मभूमि भारत का तपस्विनी वेष में यह दर्शनीय चित्र गया है। प्रत्येक भारतवासी को यह चित्र घर में, अपनी आँखों के आगे रखना चाहिए।

...ने के मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

श्रीमान् राय दीवा-
न्दसाहिब एम.ए.
न एल. बी. जज
हौर लिखते हैं:—
'अमृतधारा को मैंने
यं निम्नलिखित रोगों
बर्ता है, और हितकर
ा है, कर्णशूल, शिर-
ल, वृश्चिकदंश, भिड़-
ा, कण्ठपाक, नेत्रशूल,
न का लासना, हाथ
आघात। मैं यहां यह
पना उचित समझता
कि सब जगह अमृत-
ारा को ही बर्तता हूँ,
ार जो औषधियां आप

क विज्ञापन में पृथक् २ रोगों के लिए अमृतधारा के साथ लेनी अंकित हैं, उनको मैंने कभी नहीं बर्ता।

आजकल पाकट-केसों की बाबत बहुत कुछ विज्ञापन निकल रहे हैं, मेरी सम्मति में बहुत सी औषधियों और पाकट-केसों का ख़रीदना व्यर्थ है, अमृतधारा इस प्रकार की औषध है, जो बहुत से रोगों में बहुत शीघ्र लाभ देती है, जिस के सामने कोई दवा दम नहीं मार सकती, मेरी सम्मति में यह औषधि सचमुच अमृत है"।

## रोग मनुष्य को हर समय ग्रसने को तैय्यार रहते हैं

## "अमृतधारा" हर समय पास रक्खो

जो एक ही औषध जिसकी मात्रा २—३ बून्द है, लगभग सब रोगों का, जो बहुधा घरों में होते, बच्चों, जवानों, स्त्रियों और पुरुषों को होते हैं, रामबाण इलाज है, खाने लगाने दोनों के काम आती है, कोई अचानक कष्ट हो, अचानक ही उसको दूर करती है। महीनों के रोग दिनों में, दिनों के घण्टों में, घण्टों के मिनटों में, दूर होते हैं। एक बार आजमावें, झूठी नक़लों से बचें, असल को ख़रीदें॥

प्रायः रोगों के नाम जिनमें "अमृतधारा" हितकर है

हर प्रकार की सिर पीड़ा, श्वास, कास, पार्श्वशूल, पीनस, जुकाम, हिचकी, अपाचक, अरुचि, उबकाई, गुड़गुड़ाहट, परिणामशूल, संग्रहणी, अतिसार, वमन, अपस्मार (मृगी), दन्तपीड़ा आदि दांतों के सर्व रोग, कान के सर्व रोग, मुख के सर्व रोग, फोड़ा, फुन्सी, दाद, खंजल, शोथ, दाह, भिड़, मकड़ी, बटमल, सर्प, बावला कुत्ता, चूहा, सहस्रपाद आदि का डंक, सब प्रकार की बीमारियां, गिल्टियां, ग्रन्थ, जोड़ों का दर्द, आन्तरिक व बाह्यक पीड़ायें, चोट, घवासीर, दुर्बलता, मस्तिष्क, प्रदेश, प्रमेह, प्रदर, स्त्री रोग, पाण्डुरोग, क्षय, राजयक्ष्मा, फ़ीता, वाईगोला, गलगण्ड, कण्ठमाला, सन्निपात, बालरोग, हृद्रोग, मूत्रकृच्छ, मस्तिष्कावरण, वातरोग, अङ्गघात, रक्तपित्त, दर्दकमर, जलना, चित्त, उन्माद, मद गले पड़ना, आवाज़ बैठना, पृक्कहृद्य, मूत्राशय, यकृत्, तिल्ली, फेफड़े, आन्त्र आदि के रोग इत्यादि २ सर्व रोगों को हितकर है॥

### विज्ञापक—

मैनेजर—"अमृतधारा" औषधालय, "अमृतधारा" भवन, "अमृतधारा" सड़क, "अमृतधारा" डाकख़ाना, लाहौर।

RUPEES THREE A YEAR.
STUDENTS—Rs. 2.

सचित्र आयुःशास्त्र

इसमें स्त्री-पुरुषों के जाति-भेद, स
गर्भधारण के नियम, मन चाही संत
करना, यंत्र, मंत्र, तंत्र, वशीकरण-विद्या
रोगों की रामबाण दवायें आयु बढ़ने
उपाय हैं। मूल्य १) वशीकरणयंत्र मुद्रा
चौदहविद्या मूल्य ।।।) कानूनभंग
कानूनों का खुलासा मूल्य १) मुर्दा
चाहे जिस मृतक पुरुष की आत्मा
बुलाकर बातचीत करलो चाहे
भेद पूछलो मूल्य ॥)

पता:—दोर कम्पनी नं० १

हिन्दी इङ्गलिश टीचर

यह इतनी सहज है कि बिना गुरु
में अंग्रेजी लिखना पढ़ना सीख जाते
पूरी सीख लो मू० १) सीख

पता—बाबू राजाराम, बुर

THE GENUINE YAKUTI
YAKUTON
A powerful APHRODISIAC
in NEURASTHENIA.
PRICE Rs 10 for
For Further -

बाबू लिखी हुई

कृषि-संबन्धी पुस्तकें

हमारे यहां मिलती हैं

# गेहूं की खेती।

[० पी० गवर्नमेण्ट विभाग की उपयोगी बताई
ह पुस्तकें हिन्दी उर्दू दोनों भाषा में बनाई
। इनमें बताया गया है कि प्रत्येक प्रकार की
में सामान्यतः दुगुनी तिगुनी और गेहूं की
में विशेषतः केवल १० बीघे में एक हज़ार
की वार्षिक पैदावार कैसे की जा सकती है।
प्रत्येक भाषा की सजिल्द पुस्तक का रुपया १)
पुस्तकें डाकव्यय सहित २) में मिलेंगी।

रामप्रसाद, मजिस्ट्रेट जावद,

ज़िला मांडसोर, ( ग्वालियर स्टेट )।

---

चार पत्रों में प्रशंसित पसन्द न हो तो दाम वापिस

## ाघरस के असली पक्के चाकू

नबिल, कमानीदार यह स्वदेशी चाकू विलायती
ी चाकुओं से कहीं बढ़ कर अच्छे पक्के फैशने-
ार मज़बूत हैं। की० लकड़ी मूठ ।।।) ।) ।।
) ।।) ।) ।=) ।) चंदन मूठ ।) ।)।।=) ।=)
=) ।) ।=) ।।) दोफ़ला ।=) ।।) छेफ़ला ।) बार-
ा १) शिकारी १।) उस्तरा ।) ।=) ।।)
ना ।=) ।।) कैंची ।।=) ।।) चाकू घड़ी का ।) =)
हा =) ।) ।) पवित्र बढ़िया होंग ८) १०)
उड़ाने का स्याहुन तीन टिकी ।।=) डा० म० ।)

पता—भारतहितकारी का० नं० ७, हाथरस
सिटी० यू० पी०

---

## आवश्यकता

ापिका की है। जो हिन्दी मिडल पास हो,
हिला हो। हमें ग ह्रास पास की पहले पसंद
ा आवगा। वेतन योग्यतानुसार। रहने को मकान
।।५ अक्तूबर तक प्रार्थनापत्र आ जाने चाहिएं।

पता—केशवदेव नेवटिया

फ़तहपुर ( जयपुर )

---

IF you really wish to be promoted or to get good posts learn "Accountancy" and "short hand" by post. No Qualification necessary.

*For prospectus write to—*

**C. C. EDUCATION "S"**

POONA CITY.

---

## बादशाही पंखे

यह पंखे बड़े बड़े राजा, महाराजा, सेठ, साहूकार मन्दिर, अजायबघर, नुमायश, कचेहरी के रखने योग्य हैं। सारे हिन्दुस्तान में कहीं भी इस साथ के पंखे तैयार नहीं होते। आप एक बार मँगाकर देखेंगे तो आपको आश्चर्य होगा कि हमारे हिन्दुस्तान में ऐसे पुरुष भी मौजूद हैं जिन्होंने मलयागिरि चंदन का ऐसा कार किया है कि उसको बाल सा बारीक बना कर ऐसा खिलाती फूंदना से बुना है कि आप देख कर खुश होजायेंगे और बहुत मज़बूत दण्डे तक आप उसको घड़ी कर जेब में रखलें खिलाती की दोहरी मय रेशमी झालर के चंदन की छड़ी और खिलाती वाला सिर्फ़ कलमों का नमूना बनाने के लिए एक महीने तक आधा दाम लिया जाता है। बाद पूरा लेलेंगे। ज़्यादा लिखना फ़ज़ूल है। आप देखें बाद खरीद सकते हैं। कीमत एक पंखे का सब खर्चे हमारे दण्डे पर चंदन की फूंदनी और बजन है करीब २५० ग्राम्स की रुपया दो रुपये कुल खर्च।

पता—ईश्वरीनन्दन हुसैनाबाद

फ़र्रुखाबाद।

## "God helps those who help themselves."

अंग्रेज़ी कहावत है कि "परमेश्वर उनकी मदद करता है जो अपनी मदद आप स्वयं करते हैं"

पस यदि आप बिना किसी सहायता के स्वयं ही लाभ, सुख, यश, आनन्द, प्रतिष्ठा, स्वास्थ्य, भोग, सुन्दरता, सद्गुण आदि दुर्लभ पदार्थ सहज में ही प्राप्ति करना चाहते हों तो अपने महानशत्रु—आलस्य, अविश्वास, लोभ और लापरवाही को त्याग केवल ॥=) दश आना मनिआर्डर द्वारा हमारे पास अग्रिम भेज अष्टसिद्धि ( अमर जंत्री, मुद्रित धूपघड़ी, वैद्यक का टिपारा, विजयी कवच, आनन्द-वर्धक, सुखप्राप्ति, कायापलट और अनुभवता ) नामक छपे हुए काग़ज़ के आठ पर्चे शीघ्र मँगा लीजियेगा। बिना अधिक श्रम, व्यय व समय दिये जिन पर केवल ध्यान देने से ही मनोरथ सिद्ध होता है। बात बात पर पैसा गँवाना, दूसरों की ख़ुशामद करना, व उनका मुँह ताकना, पग पग पर ठोकरें खाना, एक दम दूर होगा। आप अवश्य ही सुखी और प्रसन्न होंगे अनेकानेक लाभ स्वयं उठावेंगे और औरों को पढ़वावेंगे।

अष्टसिद्धि मनुष्य मात्र के लिए आवश्यक व लाभदायक है। आवश्यकीय निर्देश (१) फी० फी० नहीं जावेगा, दश आना का मनीआर्डर अग्रिम भेजि- टिकट अवश्य भेजना चाहिए। हमारे ही भेजने चाहिएं।

मनीआर्डर छपने पर कृपया ए लिखें।

ा—हितैषी-ग्रन्थमाला—सागर

## हितैषी-ग्रन्थ-माला

**भारतीय नीतिकथा**—इस पुस्तक में
ता भीष्म की पितृ-भक्ति और ब्रह्मचर्य-पालन,
लव्य की अगाध गुरुभक्ति, कुन्ती का महान्
त्याग, महात्मा विदुर का धर्मोपदेश और
श्रीकृष्ण की अपूर्व राजनीति का अत्यन्त हृदय
वर्णन है। इस पुस्तक की ख़ूबियाँ पढ़ने पर
होंगी। एक बार अवश्य मँगा देखिए मू० ॥) आदर

**चरितावली**—इस में जनरल ग्रंथ और हमारे
गाँधी-सदृश अनेक महात्माओं के पुण्य-चरित
हैं मू० ।=) **गृहिणीभूषण**—स्त्रीशिक्षासंबं
अपूर्व भंडार मू० ॥) **मेरे गुरुदेव**, सचित्र
स्वामी विवेकानन्द कृत मूल्य ।) स्वर्गीयजीवन
नवजीवन विद्या १॥) जर्मनी के विधाता ।) पत्र
ञ्जलि ।=) पैशाचिक कांड १॥) मोहनी ।)
बहिन ॥) राजराजेश्वरी ॥=) हमारी दादी ।=) ज
।=) बूढ़े का ब्याह ।=) प्रतिभा १) शांतिसुधा
विनोद =) धर्मदियाकर ।)

पता—हिन्दीहितैषी कार्यालय, पोस्ट
( सागर ) म० प्र०

## गायन पार्टी

अगर आपको विवाह, उत्सव व संगीत
तिनेत्रद्वारा अपने उत्सव की शोभा को बढ़ा
ो पार्थिक सुधारक संगठन विषयों पर
करने वाली हमारी पार्टी को सूचना दें। दरों
सम्मान के साथ में विशेष प्रसन्नता प्राप्त की है।
कर्षण करता में है। विशेष बात आपके
मिलने पर।

पता—कृपया सदा "आदर्श" संगठन

पूतना-वध।

"श्री गेरुलाल-शारदा-सदन" बीकानेर

# सरस्वती

सचित्र मासिक पत्रिका।

ग १६, खण्ड २ ] सितम्बर १९१५—भाद्रपद १९७२ [ संख्या ३, पूर्ण संख्या १८९

## काँटा और फूल।

हमें तुम क्यों हँसते हो फूल !
तुम हमको कैसी समझे हो, कैसे हो यह भूल।
हम सा यदि न सहायक पाते तो रह जाती धूल॥ हमें तुम०
माली, भँवर, बहरी और खेती होते तुम निर्मूल।
इसी-का विद्रूप से बन कर होते हैं सब शूल॥ हमें तुम०
तुम पर वार रहे हैं सब जन चित्त भी हो अनुकूल।
गाई तुम्हारी सबने भारी हैं फूलन हुए हो फूल॥ हमें तुम०
रङ्ग-रूप अपना जैसा है हो तुम हमरी मूल।
कवि हुए तुम्हारे पीछे समझे गये विबुध॥ हमें तुम०
समझो।

---

* शूल (Thorn) = काँटा।

## अनन्त महाप्रभु।

पर जिस महात्मा का नाम दिया गया है उनका जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव नगर के समीप गाधा दत्तगञ्ज में विक्रम संवत् १८३१ के भाद्रपद की अनन्त चतुर्दशी को हुआ था। उनके पिता का नाम शिवबल्लभ था। शिवबल्लभजी कान्यकुब्जकुलोत्पन्न, वाजपेयी थे। उनके पिता, अनन्त के पितामह, मुरलीमनोहरजी सुदीर्घ और बलिष्ठ शरीरधारी थे। कानपुर में गङ्गा के किनारे बैठकर वे घण्टों हठ-योग किया करते थे। कानपुर में उन्होंने बहुत सा भूमि-धन सञ्चित किया था। इसी कारण उनके वंशधर आज भी कानपुर के बड़े धनी

ली थी। अनन्त की माता का नाम बलिराजकुँवरि था। वे लखनऊ के ही पास की थीं।

कहते हैं, बचपन से ही अनन्त का मन संसार से विरक्त था। वे खेल-कूद में अधिक ध्यान न देते थे। अपने माता-पिता के वे बहुत लाड़ले थे। तो भी उनका मन उस लाड़ प्यार से अधिक विचलित न हुआ था।

अनन्त के पितामह दो भाई थे। जेठ होने के कारण चूड़ामणि ही घर के मालिक थे। कुछ दिनों तक आपका कारोबार अच्छी तरह चलता रहा। पर अन्त में चूड़ामणि और उनके भाई में अनबन हो गई। यह अनबन यहाँ तक बढ़ी कि चूड़ामणिजी को लखनऊ छोड़ना पड़ा। लखनऊ से चल कर वे सपरिवार कानपुर में रहने लगे। कानपुर में थोड़े दिनों तक गृहस्थी का सुख भोग कर चूड़ामणिजी सुरलोक सिधार गये।

चूड़ामणि की मृत्यु के बाद उनके व्यापार और गृहस्थी के कारोबार का सारा भार उनके पुत्र शिवनन्दन पर पड़ा। शिवनन्दन सच्चे ब्राह्मण थे। वे कारोबार का झंझट अच्छी तरह न उठा सकते थे। इस कारण अपने पितृव्य के कहने पर वे अपनी स्त्री और अपने पुत्र अनन्त को लेकर फिर लखनऊ चले गये। शिवनन्दन के पितृव्य का स्वभाव अच्छा न था। चूड़ामणि के रहते तो वे उनका कुछ न कर सके। पर अब मौका पाकर उनकी बन आई। एक रोज़ शिवनन्दन को किसी ने मार डाला। फिर हत्यारे ने चाहा कि अनन्त को भी शिवनन्दन के पास भेज दूँ। यह सोच ही अनन्त के घर गया। अनन्त घर पर सो रहे थे। उनकी माता कुछ काम काज कर रही थीं। अनन्त जिस घर में सो रहे थे उसमें अँधेरा था। अँधेरे के कारण घर हत्यारा अनन्त को साफ़ साफ़ न देख सका। "ईश्वरेच्छा बलीयसी"। तलवार जो उसने अनन्त पर चलाई तो वह उनके सिर के पास लगी। उसकी नोक मात्र अनन्त के दाहिने कान को छुती गई। उसकी चोट का चिह्न अब तक उनके दाहिने कान में मौजूद है। शोर ही इस हत्याकाण्ड का समाचार शहर में गया। इधर अनन्त के मामा ने उस हत्यारे यथेष्ट ख़बर ली। सब लोग यह समाचार कुछ शान्त हुए और अनन्त की माता को सा देने लगे।

अनन्त की माता चतुर थीं। अपने अनुमति से उसने एक वृद्ध क्षत्रिय को अपने यहाँ नौकर रक्खा और अनन्त को लेकर कानपुर चली आई। कानपुर में वह को शिक्षा दिलाने लगी। पर, उस बेचारी का अच्छा न था। थोड़े ही दिनों बाद एक ऐसी हुई जिसके कारण वह आजन्म दुःख के सा गोते लगाती रही।

कानपुर आने के बाद थोड़े ही दिनों में का विवाह एक अच्छे कुल की कन्या के स गया। विवाह हो चुकने पर अनन्त की इ कि अपने पारिवारिक शत्रुओं से बदला लें। लिए उन्होंने घर से कहीं बाहर जाकर सीखनी चाही। पर उसका कुछ फल अनन्त का वृद्ध नौकर इसी समय किसी के कारण दो वर्ष के लिए जेल भेज दिया था। अवधि बीत जाने पर जब वह वृद्ध जेल से लौटा तब अनन्त ने चाहा कि उसे लेकर कलकत्ता देखने के बहाने घर से निकल जायँ। इसी समय अनन्त का मन होने वाला था। पर, अनन्त ने परवा न की। वे अपनी माता से हठपूर्व होकर अपने बूढ़े नौकर के साथ कलकत्ते को गये। कलकत्ते जाकर उन्होंने बूढ़े नौकर को सौंपा छोड़ कामाख्या की ओर प्रस्थान यह घटना संवत् १८५१ की है।

मार्ग में अनेक कष्ट उठाते हुए अनन्त साधुओं के साथ बालागढ़ नामक स्थान में पहुँचे। वहाँ एक प्रसिद्ध वैष्णव महात्मा रहते थे। उन्हीं के शिष्य हो गये। उनके उपदेश से के पुराने विचार बदल गये। उन्होंने अब अध्ययन करके उपदेशक बनें और संस

उपकार करें। यह विचार उत्पन्न होते ही वे की आज्ञा से पास ही के एक नवलखा नामक ा पर चले गये और वहाँ तीन वर्ष तक योग- ा का अभ्यास करते रहे। इसके बाद अपने ाचार्य से आज्ञा लेकर वे चन्द्रनगर में एक ■ तक व्याकरण का अध्ययन करते रहे। तदनन्तर त काशी आये। काशी में ९ वर्ष तक रह कर छहों ों में अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। अब अनन्त अनन्त नहीं रहे। अब वे एक बड़े पण्डित और ात्मा गिने जाने लगे। काशी से वे टिकारी गये। ारी के महाराज ने उनका बड़ा आदर-सम्मान ा। विदा होते समय उन्होंने महात्मा अनन्त बहुत सा द्रव्य दिया। अनन्त पूर्ण पण्डित र वहाँ से अपने गुरु के दर्शनों के लिए रवाना । गुरु का दर्शन करके वे जगन्नाथजी को गये। ! जो कुछ उनके पास था, सब दान कर दिया। ते हैं, उस समय कोई २५ हज़ार का धन आपके ा था। जगन्नाथपुरी से छत्तीसगढ़ होते हुए ा भारत के अनेक बड़े बड़े नगरों में भ्रमण करते । अन्त में, संवत् १८७८ में, आप काश्मीर ये। वहाँ कुछ दिनों रह कर आप लौट पड़े। ी में एक स्थान पर आपने अपने शरीर पर ा रख कर वहाँ पर उपस्थित बड़े बड़े लोगों को दिखला दिया कि शरीर कुछ वस्तु नहीं है।

काश्मीर से आकर आप १० वर्ष तक पञ्जाब पटियाला राज्य के किसी पर्वत पर और १० वर्ष ि लुधियाना नगर के पास के किसी पर्वत की ा में योगमग्न रहे। वहाँ आपकी बड़ी प्रसिद्धि । वहाँ से चल कर आप कानपुर, बहराइच र बहरामघाट आदि होते हुए अयोध्या पहुँचे। ा भ्रमण में कपूरथला के महाराज कुछ दिनों तक आपके साथ थे।

अयोध्या में आप ५ वर्ष तक रहे। आपको दीनरेश श्रीईश्वरीप्रसादसिंहजी की ओर से ी वृत्ति भी मिलती रही। अयोध्या से आप ाल गये। फिर गोरखपुर ज़िले के बरहज नामक स्थान में पहुँचे। इस समय आप यहीं हैं। यहाँ आये आपको ३७ वर्ष हो गये। आप श्रीविहारीजी की गद्दी वाले महन्त से पहले पहल अयोध्या में मिले थे। तब से अब तक उस गद्दी के चार महन्त हो गये हैं। शाहजहाँपुर में आपसे स्वामी दयानन्द सरस्वती की भी भेंट हुई थी।

आपकी अवस्था लोग १०२ वर्ष की बतलाते हैं। पर, हमारी खोज से १३६ वर्ष मालूम होती है। आपकी जन्मतिथि का ज्ञान हमने अनुमान से प्राप्त किया है। आपका साक्षात्कार जिन आदमियों से हुआ है उनकी अवस्था के लिहाज़ से आपकी उम्र १३६ वर्ष से कम नहीं।

इतने दिन आपको बरहज आये हुए, आप सदा एक ही रस रहते हैं। आज तक आपको केवल एक बार थोड़े दिनों के लिए कुछ शरीर-पीड़ा हुई थी। आप न तो किसी से कुछ माँगते जाँचते हैं और न किसी को कोई सिद्धि-साधना ही बताते हैं। किसी के अनुचित प्रश्न का उत्तर भी आप नहीं देते।

आपका आहार एक समय केवल पाव भर दूध है। आज कल यह भी कम हो चला है। आप देख, सुन और कुछ चल फिर भी सकते हैं। आपकी आवाज़ बड़ी ऊँची है। आप सदा 'ओम् ओम्' कहा करते हैं। आप कहा करते हैं कि ओम् चराचर में व्याप्त है। कभी आप गाते, कभी हँसते और कभी रोते हैं। सोते आप बहुत कम हैं। वेद-शास्त्र आदि को आप कल्पित और नश्वर मानते हैं। आप मोक्ष को कुछ नहीं समझते। आपका प्रथम धर्म वैष्णव था, पर आपने धीरे धीरे उसे छोड़ दिया। अब आप विधि-निषेध-रहित स्थिति को पहुँच गये हैं।

लक्ष्मीनारायणसिंह
(जैनगर खीरा, ज़िला गोरखपुर)

---

## गुरुकुल-कथा।

( १ )

कुलवन्ती ' क्या करूँ ' जिला भी कब दिये,
दस देनों बद गये दासता के लिए '
रोए दबे प्रतिविम्ब-सरल बालक वहाँ,
ये दोनों किस लिए जा लिपटे हैं वहाँ ' ॥१॥
सहृदय पाठक ' सुना सुना कर लिख कथा
तुम को देना नहीं चाहता हूँ व्यथा।
बस तुम रोओ मुझे न रोने से कहो!
करके इतनी कृपा सदा सुख से रहो ॥२॥
हा! मैं रोऊँ जो न आज तो क्या करूँ '
इस उबाला में धैर्य धीर धैरे धरूँ ?
दो गूँदें भी दग्ध हृदय को चूँ न मैं ?
मानव ही हूँ, शिला खण्ड तो हूँ न मैं ' ॥३॥
रोऊँ किस के निकट ? उन्हीं भगवान के,
दाता जो सुख और दुःख के दान के।
क्या हमने भी हानि किसी की है कहीं ?
यदि है तो वह मनुज नहीं, पशु भी नहीं ॥४॥
प्रकृत कथा, पर कहाँ ? प्रकृतपन गो गया '
अनहोनी का यहाँ आक्रमण हो गया।
दुख में सुख का योग सर्वदा को गया,
गया न परिकर सहित हाय ! क्यों जो गया ? ॥५॥
कुलवन्ती ने कहा—"भाग्य में था यही,
अनहोनी भी इसी लिए हो कर रही।
जाते हम भी वहीं गये हैं वे जहाँ,
कौन हमारे कर्म्म भोगता फिर यहाँ ? ॥६॥
हमको उनके बिना भले ही गति न हो,
पर जीने में उन्हें कौन सुख था अहो !
साध्य न भी हो मिटे मरण से कष्ट ही,
तो यों उनका कष्ट हुआ है नष्ट ही ॥७॥
'कुछ दिन से क्यों भूख हमारी मर रही ?'
खाते थे अधपेट सदा कह कर यही।
यह मिस था इस लिए कि हम अफरे रहें,
ईश्वर ! ऐसे कष्ट न वैरी भी सहें" ॥८॥
हाय हमारे लिए पिता भूखों मरे,
इसी लिए उत्पन्न हुआ था मैं हरे !

अरी ! अरी ! ओ दुखदे अरी ! हा !
इसी लिए था दास कष्ट तू ने सहा ! ॥९॥
सब देना बदले तुझ से है सूद,
पर मूल बदले हुए हाय ! मुझसे दूर !
कैसा दुखी देखे कि विदग्ध हाय रुदन,
सह सकता था कष्ट कैसा कहूँ ! ॥१०॥
आओ, सब हैं अवनि ' अवश ! अन्तक वहाँ,
शान्त हो सहें धीर आवश्यकता जहाँ।
सब की सब के सत्य जहाँ अवधि रहे,
कभी विपत्ति न हो, सदा सम्पत्ति रहे ॥११॥
कुलवन्ती ने कहा कि—"अब धीरज धरो,
जिनमें यह संसार चले लेना करो।
धीर किसे अब यहाँ हमारा त्राण है,
करुणा-सोते यही एक भगवान है ॥१२॥
हुआ सामना आज यहीं, सँभलूँगी वहाँ,
पता नहीं है किसी ओर भी पार का।
फिर भी, आओ, चले जहाँ तक हम चलें,
प्रभु चाहें तो पार हमें अब भी करें ॥१३॥
मन को रोको, शोक सहन होगा तभी,
उसन हो, यह भार वहन होगा तभी।
अपनी चिन्ता नहीं, मिला जो था दिया,
पर क्या देंगे उन्हें कि जिनसे है लिया ?" ॥१४॥
हैं बस मेरे प्राण, जिसे अब चाह हो,
ज़मींदार ही हो कि महाजन साह हो।
यों कह कर मैं मौन हो गया आपही,
वह भी बोली नहीं, रही चुपचापही ॥१५॥
किन्तु उसी का कथन सर्वथा ठीक था,
मेरा यह आक्षेप नितान्त अलीक था।
कुछ भी हो, संसार आप चलता नहीं,
मर जाओ, पर प्रकृति-नियम टलता नहीं ॥१६॥
जलता है यदि हृदय तुम्हारा तो जले,
खलता है यदि खान-पान भी तो खले।
करना होगा काम छटपटाते हुए,
दुखो भी तो हाथ फटफटाते हुए ! ॥१७॥
ले कर गाड़ी-बैल खेत पर मैं गया,
हुआ हृदय का शोक वहाँ फिर से नया।

क्षण कण में था पिता-स्मरण ही उग रहा,
मैं सोचता हुआ नेत्र-जल फिर बहा ! ॥१८॥
लगा लोटने शून्य देख सब ओर मैं,
सह कर भी यों शोक मरा न कठोर मैं।
मरता कैसे, अभी और भी भोग था,
मृत्यु दूर थी और मानसिक रोग था ॥१९॥
पानी था कुछ बरस गया इस बीच में,
पर वह हमको और फँसाने कीच में।
घर में था जो अन्न हमें भी खो दिया,
गया बीज वह व्यर्थ कि जो था बो दिया ! ॥२०॥
एक बार ही बरस पचीस चले गये,
विधि से भी हम दीन किसान छले गये !
वर्षा में ही हुआ शरद का वास था,
करता मानो धवल चन्द्र उपहास था ॥२१॥
आशाङ्कुर भी गये काल-पशु से चरे,
पीले पड़ने लगे खेत जो थे हरे।
दृग न सूखना देख सके, बरसे नहीं,
किन्तु धरा की गोद रिक्त हो कर रही ॥२२॥
जहाँ कुएँ थे वहाँ परेहे भी चले,
पर माँ में दो चार खेत फूले-फले।
मैं क्या करता ? प्राण छटपटाने लगे,
महरों वाले गाँव याद आने लगे ॥२३॥
वह दुकाल था, देश हुआ जब सन्न सा,
मुख चारा भी चढ़ा तुला पर अन्न-सा !
अन्न-दाता भी और न धीरज धर सके,
बहुत दया की थी, न और फिर कर सके ! ॥२४॥
साह, महाजन, ज़मींदार तीनों तने,
बाम, दिक्, कफ सन्निपात जैसे बने !
पन्द्रहदूनी सीम साह ने भी किये,
माँके पर थे दिये पुलिस-प्रभु के लिए ॥२५॥
पन्द्रहवाँ थी उस समय सामयिक याम था,
क्या कुर्क अमीन, मुझी से काम था।
मेरा मन आत्म-भाव खोने लगा,
या वह सभी कुर्क होने लगा ! ॥२६॥
या मैं बना और गम्भीर था,
हो गया अकम्प शरीर था।
सभी ओर से बद्ध हुआ-सा मैं रहा,
मानों शोणित भी न नाड़ियों में बहा ! ॥२७॥
कुलवन्ती से कहा गया—"गहने कहाँ ?"
थी चाँदी की एक मात्र हँसली वहाँ।
जब तक उन्हें अमीन छीनने को कहे—
उसने आप उतार दिया, ऋण क्यों रहे ? ॥२८॥
हुआ काम भी और रहा क़ानून भी,
नज़राने में क्या न जमेगी दून भी !
दल-बल-सहित अमीन गया सानन्द ही,
मैं कुलवन्ती-सहित रहा निस्पन्द ही ॥२९॥
आगत में यममूर्ति यामिनी आगई,
घर के भीतर अटल अँधेरी छा गई।
लाख लाख नक्षत्र-नयन नभ खोल कर—
हमें देखने लगा न कुछ भी बोल कर ! ॥३०॥
देख, दैव ! तू देख, हमारे नाश को,
देखा मैंने एक बार आकाश को।
तत्क्षण मुझ पर दिया थपेड़ा वायु ने,
साथ न छोड़ा किन्तु अभागी आयु ने ! ॥३१॥
कुलवन्ती भी उठी, निकट आई तथा,
बोली—"अब-" बस, कह न सकी फिर कुछ कथा !
लिपट गई वह फूट फूट कर रो उठी,
मैं भी रोया, विषम वेदना हो उठी ! ॥३२॥
जैसे निर्दय भाव भरे हैं चित्त में,
एक बार ही लगी आग सी चित्त में।
बोला मैं—अब हैं स्वतन्त्र दोनों जने—
मैं शिव हूँ, तू शक्ति, देश मरघट बने ! ॥३३॥
नहीं, नहीं, शिव नहीं, बनूँगा रुद्र मैं,
जानेंगे सब लोग—नहीं हूँ क्षुद्र मैं।
पुलिस मुझे भी व्यर्थ बुरेरा कह रही,
देखें अब वह जीभ किधर, मैं हूँ वहीं ! ॥३४॥
आग लुटेरे, और बनाते हैं हमें,
लुटवाते हैं आप, सताते हैं हमें।
करते हैं बदनाम सभ्य सरकार को,
करती हैं जो दूर सदा अधिकार को ॥३५॥
जमादार वह कहाँ ? आज पकड़ूँ मुझे,
आवे, आकर वही आज जकड़ूँ मुझे।

पन्द्रह जिनके लीज मुझे देने पड़े—
लटकेंगे आ-मरण कलेजे में बड़े ' ॥३९॥
यदि मैं डाकू बनूँ न मेरा दोष है ?
दोषी है सो पुलिस, उसी पर रोष है ।
ज़मींदार भी कुछ-कम किये का पायगा,
फूटे रुपे फिर न कभी लिखवायगा ! ॥३७॥
और महाजन ! फूले लिया उसमें सही,
किन्तु ब्याज की लूट नहीं जाती सही ?
मुझ से मेरे बन्धु न लूटने पायँगे,
यही लुटेंगे जो कि लूटने जायँगे ॥३८॥
मैं क्या क्या कह गया न जाने, रोष में,
गूँज उठा घर घोर घटा-से घोष से ।
मन में आया, आग लगा दूँ मैं अभी,
इसी गेह से भभक उठे भारत सभी ॥३९॥
कुलपत्नी डर गई, कष्ट पाती हुई—
गोली कातर गिरा गिड़गिड़ाती हुई—
"हा हा खाती हूँ, न हाय ! तुम यों कहो,
शान्त रहो, दुर्भाग्य जान कर सब सहो ॥४०॥
न लो लूट का नाम, पाप है पाप ही,
फल पावेंगे सभी किये का आप ही ।
छोड़ो बुरे विचार पाप-प्रतिकार के,
न्यायालय हैं खुले हुए सरकार के ॥४१॥
कोई हो, जब दोष सिद्ध हो जायगा—
दण्ड पायगा, कभी न बचने पायगा ।
प्रभु के घर भी न्याय और सु-विचार है,
भला, दण्ड का हमें कौन अधिकार है ? ॥४२॥
पर न रहो अब यहां, और भी है कहां,
चलो, चलें, जो आप आप अपना जहां ।
सारा-सारा के फूल सीधे में जोड़ कर—
बाँधूँगी मैं उसे यहां कर जोड़ कर ॥४३॥
यहां हमारा क्या करेगी अन्त में,
सारे दुख सन्ताप हरेगी अन्त में ।
भाग्य हमारे फूटे, किसी ने क्या किया ?
हाँ ने भी सर्वनाश एक दिन था किया ! ॥४४॥
आप अपने बनो, और देश भी बनो अपने,
सुखी रहे घर और सदा फूले फले ।

भूमि बहुत है, कहीं और पा जायँगे,
प्रभु देंगे तो कभी सु-दिन भी आयँगे ॥४५॥
तुम मेरे सर्वस्व, तुम्हें क्या दीजिये,
विचलित हो कर नियम न कोई तोड़िये" ।
यों कह कर पर मुझे पकड़ कर रह गई,
गद्गद होती हुई अकड़ कर रह गई ! ॥४६॥
कुलपत्नी, हे प्रिये, शान्त हो, शान्त हो,
चलो जहां पर मनुज न हों, एकान्त हो ।
तू ही मेरी एक मात्र है सम्पदा,
दीप-शिखा-सी मार्ग दिखाती रह सदा ॥४७॥
था मैं भी सावेग उसे पकड़े खड़ा,
इसी समय कुछ शब्द द्वार पर सुन पड़ा,
सांकल खटकी और सिपाही ने कहा:—
बेगारी चाहिए, निकल, क्या कर रहा ! ॥४८॥
बेगारी ? क्या नहीं आज भी मुक्ति है ?
बचने की अब यहां कौन सी युक्ति है ?
लूटे अब तो पिण्ड, देश हम छोड़ते,
सब से निज सम्बन्ध सदा को तोड़ते ! ॥४९॥
यम के रहते हुए हाय ! ऐसी कथा,
पूरी हो बस यहीं अधूरी यह कथा
दयानिधे ! क्या दया तुम्हारी चुक गई ?
और अधिक क्या कहूँ ? गिरा भी रुक गई ! ॥५०॥

मैथिलीशरण गु

---

## सोना निकालने वाली चींटियाँ।

कुछ लोगों का विश्वास है कि भारत में किसी समय ज़मीन से सोना निकालने वाली चींटियाँ थीं। सब से पहले हेरोडोटस नामक इतिहास-लेखक ने सोना निकालने वाली इन चींटियों का हाल लिखा। वह इस प्रकार है—"भारत के उत्तर में कास्पेटायरस (Caspatyrus) और पेक्टायिका (Paktayika) के पास एक जाति रहती है। इस जाति के लोग और लोगों की अपेक्षा अधिक साहसी होते हैं। इस लिए ये लोग सोना लाने के लिए भेजे जाते हैं। भारत के इस भाग

भूमि है, जिसमें एक तरह की चींटियाँ रहती
वे उँचाई में कुत्तों से कुछ कम और लोमड़ियों
कुछ अधिक होती हैं। फ़ारिस के बादशाह के
कुछ ऐसी चींटियाँ हैं। ये चींटियाँ ज़मीन के
र रहती हैं। यूनान की चींटियों से इनकी आकृति
ती जुलती है। ज़मीन के भीतर जाकर ये अपने
ट रेत डाल लेती हैं। जो रेत ये ऊपर फेंकती हैं
में सोना रहता है। जो लोग वहाँ जाते हैं वे
ने साथ तीन ऊँट भी ले जाते हैं। वहाँ पहुँच
वे जल्दी जल्दी अपनी थैलियों में वह रेत भर
हैं। फिर शीघ्रता से वे भाग निकलते हैं। क्यों
तुरन्त ही चींटियाँ उनकी महक पाकर उनका
ा करती हैं। यदि वे लोग तेज़ी से न भाग सकें
चींटियों के हाथ पड़ कर उनमें से एक भी जीता
। लौटता। भारत के लोग अधिकांश सोना इसी
ह पाते हैं"।

यूरोप के मध्य-कालीन ग्रन्थकारों ने भी इन
टियों का उल्लेख किया है। अरब और तुर्क लोगों
भी इनका हाल लिखा है। अठारहवीं सदी के अन्त
लार्चर नामक एक फ्रेंच विद्वान् ने हेरोडोटस के
थ का अनुवाद करते समय लोगों का ध्यान इस
र खींचा था। सन् १७८८ में मेजर रेनल ने यह
ट किया कि इन चींटियों का रङ्ग सफ़ेद था।
तीसवीं सदी के आरम्भ में पुरातत्त्व-वेत्ताओं ने यह
क्षय किया कि ये चींटियाँ चींटियाँ नहीं, गीदड़
था लोमड़ी के सदृश कोई जानवर होंगे।
: विलसन साहब ने उन लोगों के इस सिद्धान्त को
त सिद्ध कर दिया। उन्होंने प्राचीन संस्कृत-
हित्य से प्रमाण भी उद्धृत किये। महाभारत में
हाँ पर युधिष्ठिर को भेंट में दिये गये रत्नों का
र्णन है वहाँ पर 'पेपीलिका' नाम के एक रत्न का
उल्लेख है। उसका 'पेपीलिका' नाम इस लिए
ा था कि यह पिपीलिकाओं द्वारा सञ्चित किया
या था।

मालटबुन नामक एक साहब ने ही पहले पहल
ह अनुमान किया कि ये चींटियाँ मनुष्यों ही की
कोई जाति थी। हेरोडोटस के अनुसार इन चींटियों का स्थान काशपेटायरस और पेक्टायिका के समीप होना चाहिए। काशपेटायरस से अभिप्राय कश्यपपुर (काश्मीर) से है और पेक्टायिका से पाक्तुम है, जो अफ़ग़ानिस्तान के पूर्व में है। अस्तु।

प्राचीन काल से ही काश्मीर के राजाओं ने तिब्बत को अपने अधिकार में लाने के लिए कई बार प्रयत्न किया था। इन चींटियों का स्थान भी हेरोडोटस ने भारत के उत्तर में बतलाया है। यह जगह तिब्बत ही हो सकती है। इस अनुमान की पुष्टि में और भी कई बातें कही जा सकती हैं। यथा—

महाभारत में जो लोग पेपीलिका लाये थे उनका नाम 'खस' दिया गया है। राजतरङ्गिणी के अनुसार खस जाति काश्मीर के पास ही रहा करती थी। युधिष्ठिर को भेंट दी गई वस्तुओं में पेपीलिका के साथ हिमालय के मधु और चमरों का भी उल्लेख है। चमर 'यक' नाम के तिब्बतीय पशुओं की पूँछ से बनाये जाते हैं। सन् १८६५ में ब्रिटिश गवर्नमेंट ने कुछ लोगों को तिब्बत में अनुसन्धान करने के लिए भेजा था। उन में से कुछ लोग नारी-खोरसम नामक जगह में जाकर बीमार पड़ गये। उन्हें वहीं ठहरना पड़ा। नारी-खोरसम में सोने की कई खानें हैं। वहाँ रह कर उन्होंने खान का काम देखा। १८६८ में एक और सज्जन वहाँ गये। उन्होंने भी वहाँ का काम देखा। हेरोडोटस ने सोना निकालने वाली चींटियों की जगह को मरुभूमि कहा है। इन लोगों का भी कहना है कि तिब्बत की यह जगह बहुत उजाड़ और धातुकामय है। यह जगह सोने के लिए प्रसिद्ध भी है। इस कारण, जान पड़ता है, यही उन चींटियों का स्थान होगा। तब चींटियाँ कौन हैं? तिब्बती लोग? मालूम तो ऐसा ही होता है। जाड़े के दिनों में सोने की खान में काम करने वाले तिब्बती लोग कर्वेदार चमड़ों के वस्त्र पहनते हैं। कोई आश्चर्य नहीं जो इसी कारण ये लोग जानवर समझ लिये गये हों।

तिब्बत में जाड़ा ख़ूब पड़ता है। इस कारण
भी लोग ज़मीन के अन्दर ६, ७ फ़ुट नीचे
। गाड़ कर रहते हैं। हेरोडोटस की चींटियाँ भी
ीन के भीतर रहती हैं। अब इनका कारण
यद में आ सकता है। मेगास्थनीज़ ने लिखा है
ये चींटियाँ जाड़े के दिनों में ही ज़मीन खोदती
। और दिनों में उतना नहीं। प्लिनी नामक इति-
तकार ने भी कहा है—"ये जाड़े में ही सोना
कालती हैं। भारत के लोग गरमी के दिनों में उन्हें
ा जाते हैं।" तिब्बत के यात्रियों में से एक ने लिखा
है—"जाड़ा ख़ूब पड़ने पर भी तिब्बती ऊनी वस्त्र में
ी काम करते हैं। गरमी के दिनों में उनके ऊँटों की
सद्दगया जितनी रहती है उससे दूनी शीत-ऋतु में
हो जाती है"। मेगास्थनीज़ ने यह भी लिखा है कि ये
चींटियाँ शिकार कर के रहती हैं। तिब्बती भी 'यक'
और दूसरे जंगली जानवरों को मार कर अपना
जीवन-निर्वाह करते हैं। ये लोग शिकार खेलने के
लिए कुत्ते भी रखते हैं। तेरहवीं सदी के ग्रन्थकार
मार्को पोलो ने इन कुत्तों के विषय में लिखा है
कि ये गधे के बराबर ऊँचे होते हैं। दौड़ने और
शिकार पकड़ने में ये बड़े ही तेज़ होते हैं। हेरोडोटस
ने जिन चींटियों के विषय में लिखा है वे बहुत तेज़
और भयङ्कर होती हैं। ये शायद यही हों। सम्भव
है, यही कुत्ते फ़ारिस भेज दिये गये हों, जिन्हें उन
लोगों ने चींटियाँ समझा हो। हेरोडोटस को इनका
हाल फ़ारिस से ही मालूम हुआ था।

नीअरकस नामक एक मनुष्य सिकन्दर के
साथ भारत आया था। उसने लिखा है कि "यद्यपि
मैंने चींटियाँ नहीं देखीं, पर उनकी खालें देखी हैं।
वे चीते की खाल के सदृश होती हैं"। अच्छा इन
खालों से क्या मतलब? कुछ तिब्बती 'यक' के चमड़े
और सींग पहनते हैं। 'यक' का चमड़ा ही वह खाल
हो सकती है। महाभारत में भी लिखा है कि जो
लोग युधिष्ठिर के पास भेंट की चीज़ें लेकर आये
थे उनमें से कुछ लोग चमड़े और सींग पहने हुए
थे। उनका नाम कङ्कू लिखा है। हो सकता है, वे
लोग यही तिब्बती हों।

इस बात को जान पड़ता है कि ढेर
खोदने वाली चींटियों से तिब्बती ही हैं।"

—

## सवितृ-मण्डल।

( [illegible] )

[illegible] आप का समय किस प्रकार बीतता है?
प्रभात? प्रभात-समय की [illegible]
वंदनीय सी होती है। प्रभात-काल में
मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षी, लता-पत्र
सभी अपने अपने इष्टदेवता के आने की आशा में उत्सुक और
से भरे हुए देख पड़ते हैं। रात्रि का सारा अन्ध
क्षण भर में इस परम देव की कृपा-दृष्टि से नष्ट हो जाता
संसार में भय और कायरता का नाम नहीं रह जाता। क
वान् भास्कर प्राणिमात्र को सदा अभय-दान देते हैं।
सृष्टि के सारे प्राण-धारियों को इतने प्यारे हैं कि इनका
तीन दिन का वियोग—केवल मेघों द्वारा आच्छादन-
असह्य हो जाता है।

तेज और प्रकाश ही जीवन को जीने योग्य बनाता
अन्धकार जीवन को भारभूत कर देता है। अतएव तेज
प्रकाश ही प्राणधारियों के प्राण हैं। इन दोनों के देने
है भगवान् भास्कर। भगवान् भास्कर ही सांसारिक प्राणि
के प्राण हैं—

विश्वरूप हरिर्याजनेदन परायण ज्योतिरेक तपस्वान्।
सहस्ररश्मि शतधा वर्तमान: प्रजानामुदयत्येष सूर्य: ॥

संसार में जितने परिवर्तन दृष्टि आते हैं सब [illegible] तुम
कारण ताप अर्थात् गरमी है। इसी से शरीरधारियों का
बढ़ता है, पृथ्वी पर वायु-प्रवाह चलता है और सागर
में तरङ्गें उठती हैं। इसी से जल का परिवर्तन भाफ़ में होत
है और भाफ़ से वृष्टि होती है। इसी के घटने बढ़ने
ऋतुओं में परिवर्तन होता है और इसी कारण बर्फ़ से नदि
नदियों से सागर, सागर से भाफ़ और भाफ़ से फिर भी

* हिन्दू पेन्टियट के एक लेख का सारांश।

लेखक

चक्र सर्वदा परिचालित होता रहता है। प्रकाश केवल र की वस्तुओं को दृष्टि-पथ में ही नहीं लाता, वह प्राणियों के सौन्दर्य्य, मनोहरता और विविध प्रकार की शोभाओं भी बढ़ाता है। प्राकृतिक दृश्यों द्वारा मनुष्यों को प्रेम, न, आशा और उदारता की उच्च शिक्षा मिलती है। श का अभाव होते ही संसार के सारे प्राकृतिक दृश्य स नष्ट हो सकते हैं। यह नीला आकाश, ये लाल, सफ़ेद फूल, यह हरी हरी घास, ये प्यारे प्यारे वनस्पति सभी प्रकाश के ऋणी हैं। आश्चर्य्य-जनक इन्द्र धनुष, की पुत्तलिका, मृगतृष्णा और अस्थिर गान्धर्व नगर है, जो कवियों की अद्भुत कल्पना को विचित्र रचना का वसर देते हैं, प्रकाश-विषयक साधारण नियमों से उत्पन्न होते हैं। इस महोपयोगी प्रकाश के आदि-कारण सूर्यदेव हैं। अब उनका कुछ हाल सुनिए। साथ ही यह भी जान लीजिए कि भगवान् सूर्य का पृथ्वी आदि अन्य ग्रहों से क्या सम्बन्ध है।

साधारण दृष्टि से देखने पर मालूम होता है कि पृथ्वी और शीतल वस्तु है। उसमें उष्णता का जो अंश है वह र की बदौलत है। व्यावहारिक दृष्टि से यह बात सच भी पर, परिभ्रमण-काल में कुछ सीमा तक पृथ्वी और अन्य का सम्बन्ध एक और प्रकार की उष्णता से भी रहता पृथ्वी की इस प्रकार की उष्णता को हम उसकी आन्तरिक उष्णता कह सकते हैं। यही उष्णता भिन्न भिन्न साधनों कारणों से मिल कर सूर्य को २६ दिन में अपनी धुरी चारों तरफ़ भ्रमण कराती है। सूर्य का आकार अन्य ग्रहों सम्मिलित आकार से भी बड़ा है। पृथ्वी की यही तरिक उष्णता चन्द्रमा को २० से भी अधिक दिनों में अपने अक्ष के चारों ओर का भ्रमण पूर्ण कराती है। चन्द्रमा आकार पृथ्वी से छोटा है।

सूर्य का ताप ही पृथ्वी की उष्णता का कारण है, यह बात ी के ऊपरी भाग के विषय में ही सच है। भीतरी के लिए यह सच नहीं। पृथ्वी के ऊपरी भाग में अधिक होने पर हम कुएं या किसी गढ़े में हाथ डाल कर देख ते हैं कि वहां अधिक गरमी है। इसी प्रकार पृथ्वी के ी भाग में अधिक गरमी होने पर उसका भीतरी भाग र गरम नहीं रहता। ऊपर की गरमी और सरदी का भीतरी गरमी और सरदी से कुछ भी सम्बन्ध नहीं। पृथ्वी के भीतर ज्यों ज्यों नीचे उतरते जायँगे हमें अधिक गरमी मालूम होती जायगी। नीचे के प्रत्येक ६० पर गरमी नापने के यन्त्र (फ़ाहरनहाइट थरमामेटर का पारा एक एक दरजा बढ़ता जायगा। यहां तक कि ास हद तक पहुँचने पर किसी भी पदार्थ का ठोस अवस्था में रहना असम्भव हो जायगा। हां, दबाव की अत्यधिकता के कारण फिर भी कुछ पदार्थ थोड़ी बहुत देर अवस्था में रह सकेंगे।

उष्णता की यही गुप्त शक्ति ज्वालामुखी पर्वत उष्ण सरोवरों और उष्ण झरनों द्वारा अपने रुके हुए वेग को कभी कभी प्रकट करती रहती है। जब प्रज्वलित वड़वानल में पानी पहुँच जाता है तब इस भाफ़ की भीषण सृष्टि होती है। इस प्रकार बनी हुई भाफ़ दबी हुई उष्णता के वेग को नहीं सह सकती वह एकदम पृथ्वी के भीतरी भाग से बड़े ज़ोर का शब्द करती हुई बाहर निकल आती है। उसके निकलते ही पृथ्वी कम्पायमान हो उठती है और एक क्षण में उस पर रहने वाले हज़ारों, लाखों जीवजन्तु और उनकी निवास शालाएं नष्ट-भ्रष्ट हो जाती हैं। जब इस प्रकार घोर गर्जना करती हुई काले धुएँ से आकाश को आच्छादित करती हुई और पत्थरों की बौछाड़ करती हुई पृथ्वी के भीतरी भाग की भाफ़ बाहर निकलती है, तब हमें पृथ्वी की भीतरी उष्णता का काफ़ी प्रमाण मिलता है। पृथ्वी की भीतरी गरमी इसी प्रकार धीरे धीरे बाहर निकल रही है। वह इसी तरह धीरे धीरे ठण्डी होती जाती है। सम्भवतः एक दिन पृथ्वी इतनी ठण्डी हो जायगी कि इस पर देहधारी न रह सकेंगे। पहली अवस्था में वह बहुत उष्ण और पिघली हुई थी। एक समय इस के भी "गैस" की अवस्था में भी थे।

अधिक उष्णता पहुँचाने से कोई भी वस्तु गैस की अवस्था में परिणत हो सकती है। इस अवस्था में प्रकाश और उष्णता, ये दोनों गुण इस में वर्तमान रहेंगे। सूर्य में ये दोनों ही वर्तमान हैं। इसी से सूर्य को गैस की अवस्था में बतलाना युक्ति तथा प्रमाण दोनों से सिद्ध है। पाश्चात्य देश के ज्योतिर्विदों ने वर्णवीक्षण के द्वारा सूर्य को देख कर इस सिद्धान्त को और भी पुष्ट कर दिया है। इसी सिद्धान्त को

कारण चन्द्रमा की गणना बड़े ग्रहों में नहीं। कोई भी चन्द्रमा अपनी ज्योति से प्रकाशमान नहीं। उन्हें सूर्य ही से प्रकाश मिलता है। शनैश्चर के एक चन्द्रमा को छोड़ कर और कोई चन्द्रमा हमारे चन्द्रमा से बड़ा नहीं। कोई उसके बराबर है और कोई छोटे। और यह हमारी पृथ्वी की तरह एक ही एक चन्द्रमा नहीं रखते। किसी किसी के तो सात सात, आठ आठ चन्द्रमा हैं। जो यह पृथ्वी की कक्षा के अन्तर्गत हैं उनका एक भी चन्द्रमा नहीं है। पृथ्वी की कक्षा के बाहर वाले ग्रहों के ही चन्द्रमा हैं।

बृहस्पति के चार चन्द्रमा हैं और शनैश्चर की भूमि को आठ चन्द्र प्रकाशित करते हैं। नेपच्यून और पृथ्वी के अधिकार में एक एक चन्द्रमा है। यूरेनस् और मङ्गल दो दो चन्द्रों से सेवयमान हैं। मङ्गल के चन्द्र अत्यन्त छोटे हैं।

छोटे छोटे ग्रह सूर्य के समीप और बड़े बड़े उससे दूर हैं। पृथ्वी की कक्षा के अन्तर्गत दो ग्रह—बुध और शुक्र—हैं। मङ्गल से ले कर नेपच्यून तक पांच ग्रह पृथ्वी की कक्षा के बाहर भ्रमण करते हैं। छोटे छोटे ग्रहों की गति मन्द और बड़े बड़े ग्रहों की वेग-पूर्ण है। छोटे ग्रह—बुध, शुक्र, पृथ्वी और मङ्गल—अपनी धुरी के चारों तरफ़ घूमने में कोई २४ घण्टे लेते हैं, पर सब से बड़ा बृहस्पति केवल १० घण्टे में अपनी धुरी पर एक बार घूम जाता है।

सूर्य के अनन्तर चित्त को आश्चर्य में डुबोने वाला दृश्य अँधेरी रात में तारागणों से जड़ा हुआ निर्मल आकाश है। यहां सौर जगत् का बड़े से बड़ा ग्रह जगमगाता हुआ तारा-रूप में दिखाई देता है। कई अन्य सौर जगतों के सूर्य भी बड़ी दूर होने के कारण ताराओं जैसे दीखते हुए आकाश की शोभा को और भी अधिक बढ़ाते हैं। हमारी पृथ्वी भी यदि चन्द्र अथवा मङ्गल-ग्रहों पर से देखी जाय तो एक छोटी तारका सी मालूम हो।

जयचन्दराम, बी० ए०, बी० टी०

---

# पौराणिक राज-वंशों का समय-निरू

लेखक, पं० हरी रामचन्द्र दिवेकर, एम० ए०

## (३)

## यादव-वंश।

इस राज-वंश के राजाओं के [illegible] सूर्य वंश से कुछ कम पुराने हैं यह यादव-वंश है। मुद्रा में ९६ राजाओं के नाम दि[illegible] हैं, इस वंश में ७० राजाओं के नाम। अयोध्या के पतित्व राज्य निकट होने के कारण, विदेशियों ने अधिक आक्रमण किये गये। यादव लोगों का था सुदूर दक्षिण की ओर। इस कारण वह आक्रमण से बच गया। इससे यह वंश अ[illegible] अविच्छिन्न ही रहा। दूर होने के कारण इस [illegible] में इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध उत्तरी हिन्दुस्तान से रहा उस काल का इसका इतिहास उत्तरी [illegible] के इतिहास-लेखकों को अज्ञात ही रहा। यही कारण है कि इस वंश में नाम अधिक मिलते भी इसके राजाओं के कृत्यों का बहुत कम [illegible] पाया जाता है।

वैवस्वत मनु के इला नाम की एक कन्या थी चन्द्र के पुत्र बुध से इसने पुरुरवा नाम का एक प्रसव किया। मनु का राज्य जब उसके इक्ष्वाकु [illegible] पुत्रों ने बाँट लिया तब इला को विशेष कुछ भी मिला। वसिष्ठ ऋषि की सिफ़ारिश से केवल प्रति[illegible] नामक एक स्थान इसके हिस्से में पड़ा। इसी प्रतिष्ठा का राज्य पुरूरवा को प्राप्त हुआ। प्रतिष्ठान विषय में विद्वान् लोगों का बहुत मतभेद है। [illegible] तो इसका सम्बन्ध दक्षिण के पैठण नामक गाँव बताते हैं; कोई, कालिदास के वर्णनानुसार, यमुना-सङ्गम के पूर्व तीर पर इसका होना मान करते हैं—जहाँ आज कल झूंसी नाम गाँव है—और कोई, उर्वशी तथा गन्धर्व लोगों

श्री गेरूलाल-शारदा-सदन बीकानेर

सरस्वती

अनन्त महाप्रभु ।

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

घ गान्धार देश से समझ कर, प्रतिष्ठान को
ा का देश बताते हैं। प्रतिष्ठान के स्थान-निर्णय
ए पर्याप्त प्रमाण नहीं मिलते। कुछ भी हो,
श-ब्राह्मण में जो उर्वशी-पुरुरवा की कथा है
लिखा है कि उर्वशी मेषों का पालन करती
गान्धार देश की स्त्रियाँ आज कल भी मेष
ती हैं। इसके सिवा यह बात भी प्रसिद्ध है कि
या गन्धर्व-लोगों ही में से था। इन दोनों कारणों
न्धार और काबुल से पुरुरवा का सम्बन्ध जो
ान किया जाता है वह ठीक जान पड़ता है।

पुरुरवा के आयुस् तथा अमावसु नामक दो पुत्र
उनमें से अमावसु कान्यकुब्ज-देश का राजा
। उसके वंश का वर्णन कान्यकुब्ज के राजाओं
रूपण में किया जायगा। आयुस् को प्रतिष्ठान
ाज्य मिला। उसका पुत्र नहुष और नहुष का
ययाति हुआ। नहुष का दूसरा पुत्र क्षत्रवृध
ी का राजा हुआ। उसके वंश का वर्णन काशी
राजाओं के निरूपण में किया जायगा। ज्ञात होता
ययाति के समय तक काबुल के आस पास,
र में ही, इन राजाओं का राज्य रहा। क्योंकि
ति ने असुरराज वृषपर्वा की कन्या शर्मिष्ठा
असुर-गुरु शुक्राचार्य की कन्या देवयानी से
ाह किया था। यदि सी० वी० वैद्य महाशय का
कथन कि असुर लोग पर्शिया के निवासी थे
हो तो ययाति के राज्य का गान्धार देश के
पास ही होना अधिक सम्भव है। क्योंकि
भारत के अनुसार राजा ययाति आखेट खेलते
ते असुर राज्य में जा पहुँचा था। ययाति का
र कहीं भी रहा हो, उसने अपने पराक्रम से
ी राज्यवृद्धि खूब की और चक्रवर्तित्व का पद
। किया। उसे देवयानी से यदु और नाम
ा पुत्र हुए और
नाम के दो
ों में

ही दिया। उसका वंश तौरव वंश के नाम से ख्यात है -

यः पुत्रो गुणसम्पन्नो मातापित्रोर्हितः सदा।
सर्वमर्हति कल्याणं कनीयानपि स प्रभुः॥

इस न्याय से पुरु को राज्य मिलने पर उसके बाक़ी चारों भाइयों ने चारों तरफ़ बढ़ कर अपना राज्य जमाना चाहा। पर पूर्व की ओर बढ़ना असम्भव ही सा था, क्योंकि काशी, कान्यकुब्ज, अयोध्या आदि में पहले से ही राज्य-स्थापना हो चुकी थी। इस कारण अनु उत्तर की ओर गया और वहाँ उसने अपना राज्य स्थापित किया। "दिशि दक्षिण-पूर्वस्याम्"—अर्थात् आग्नेय दिशा में तुर्वसु ने अपना राज्य जमाया। उसीके वंशज आगे बढ़ते बढ़ते केरल, पाण्डर और चोल देश तक राज्य करने लगे। पर अनुमान किया जाता है कि दक्षिण के राक्षसों के मुकाबले में ये बहुत दिन तक न ठहर सके। अन्त में ये सब नष्ट होगये। इसीसे इनका वंश-वर्णन कहीं नहीं पाया जाता। द्रुह्यु ने पश्चिम दिशा की ओर प्रस्थान किया, पर असुरों के कारण उसका भी वही हाल हुआ जो तुर्वसु और उसके वंशजों का हुआ था। बाक़ी रहा यदु। यह नैर्ऋत्य की ओर बढ़ा और वहाँ उसने अपना राज्य स्थापित किया।

यदु का राज्य नर्मदा नदी के उत्तर में, अर्थात् वर्तमान मालवा और गुजरात में, था। यदु के दो पुत्र थे—क्रोष्टु और सहस्रजित्। यदु के पश्चात् उसका राज्य इन दोनों भाइयों में बँट गया। सहस्रजित् को मालवा मिला। उसके वंशज महिष्मन् ने नर्मदा-तट पर माहिष्मती नगरी को अपनी राजधानी बनाया। माहिष्मती के वर्णन के आधार पर विद्वानों का अनुमान है कि आज कल जहाँ ओंकारेश्वर महादेव का स्थान है वहीं यह नगरी थी।

का मन्दिर इन्दौर-खंडवा लाइन के
ेशन से आठ मील पर है। यह
ी घिरा हुआ है और एक घाट
। सहस्रजित् के वंशज आगे चल कर
नाम से प्रसिद्ध हुए।

क्रोष्टु का राज्य गुजरात में व्याप्त हुआ। उसी के वंशज यादव नाम से विख्यात हुए। क्रोष्टु से लेकर मान्धाता नामक सूर्य्यवंशी राजा के श्वशुर शशबिन्दु तक, बीच में, चारही राजाओं के नाम पुराणों में पाये जाते हैं। पुराणोक्त क्रम यह है—क्रोष्टु से वृजनीवान्, उससे स्वाही, उसके पश्चात् रुषद्गु, उसके अनन्तर चित्ररथ और चित्ररथ से शशबिन्दु। कालदृष्टि से देखा जाय तो यदु सूर्य्यवंशी राजा पृथु का समकालीन था और शशबिन्दु मान्धाता के बाप द्वितीय युवनाश्व का। पृथु और युवनाश्व द्वितीय के बीच सूर्य्यवंश में तेरह नरेश हुए। पुरु यदु का भाई था और मतिनार युवनाश्व द्वितीय का श्वशुर था। उसी समय इन दोनों के बीच, पौरव वंश में, बारह नरेश हुए। इससे अनुमान किया जाता है कि क्रोष्टु से शशबिन्दु तक जो नाम पुराणों में हैं वे क्रम-प्राप्त नहीं हैं। वे उस काल के केवल चार प्रसिद्ध राजाओं के नाम हैं।

शशबिन्दु बड़ा पराक्रमी राजा था। उसने आस पास के कुछ देश जीत कर चक्रवर्तित्व का पद प्राप्त किया। पौरव राजाओं की वंशावली से अनुमान किया जाता है कि शशबिन्दु ने पौरव राज्य को जीत कर यादव राज्य में मिला लिया था। क्योंकि मतिनार का पुत्र तंसु मतिनार के दामाद युवनाश्व द्वितीय का, तथा युवनाश्व द्वितीय के समधी शशबिन्दु का समकालीन होना चाहिए। यहाँ पर इसी तरह का एक अनुमान और भी किया जा सकता है। वह यह कि विदर्भ राज की कन्या राजा सगर को ब्याही थी और उसकी पोती भरत को। अतएव विदर्भ-राज, सगर का बाप राजा बाहु और भरत का दादा ऐलिन् समकालीन होने चाहिए। परन्तु शशबिन्दु और विदर्भ के, तथा युवनाश्व और बाहु के, बीच तो बीस राजे हो गये, पर पौरव कुल में तंसु तथा ऐलिन् के बीच एक भी न हुआ। इस कारण यही अनुमान होता है कि तंसु और ऐलिन् के बीच पौरव वंश का विच्छेद हो गया [illegible] से चल कर, दुष्यन्त के समय में फिर से उस वंश की स्थापना हुई। उत्तरवर्ती लिपिकरों ने तंसु और ऐलिन् का पिता पुत्र सम्बन्ध भूल से लिख दिया जान पड़ता है। चक्रवर्ती राजा होने के लिए देश-विजय आवश्यक होता है। इससे भी यही अनुमान दृढ़ होता है कि शशबिन्दु ने पौरव राज्य को जीत कर यादव राज्य में मिला लिया होगा।

चक्रवर्ती शशबिन्दु के बाद यादव कुल में पृथु आदि सात राजे हुए। उनके नाम पृथुयशा, पृथुश्रवा, पृथुजय, पृथुकीर्ति, पृथुदान, पृथुश्रवा और पृथुतम थे। ये सातों शशबिन्दव नाम से भी विख्यात हुए। वायु-पुराण के अनुसार ये सातों भाई थे और एक के बाद दूसरे ने राज्य किया। पर यह कल्पना भ्रम-सी जान पड़ती है। सातों भाई का, एक के बाद एक, राज्य करना असम्भव नहीं तो असम्भव अवश्य है। इसलिए यहाँ पर वायु पुराण की अपेक्षा कूर्म-पुराण का लेख अधिक सङ्गत जान पड़ता है। उसमें लिखा है कि ये सातों भाई एक न थे। इनमें एक दूसरे से पिता-पुत्र का सम्बन्ध था।

पृथुसत्तम के बाद यादवराज्य अन्तर हुआ। सुयज्ञ के हाथ से उशना नामक राजा के हाथ आया। अपने मित्र कार्तवीर्य्यार्जुन की सहायता से इस राजा ने कई अश्वमेध यज्ञ किये। इसका पुत्र शिनेयु, शिनेयु का पुत्र मरुत्त, मरुत्त का कम्बलबर्हि, उसका रुक्म-कवच और रुक्म-कवच का पुत्र परावृत्त हुआ। रुक्म-कवच ने विन्ध्य पर्वत के कवची नामक लोगों को जीत कर बहुत सा धन प्राप्त किया और उसे ब्राह्मणों को बाँट दिया।

परावृत्त के पाँच पुत्र हुए—रुक्मेषु, पृथुरुक्म, ज्यामघ, परिघ और हरि। जान पड़ता है, परावृत्त के समय में यादव-राजाओं का थोड़ा बहुत अधिकार विदेह देश पर भी हो गया था। क्योंकि वायु-पुराण में लिखा है—"परिघञ्च हरिञ्चैव विदेहेऽस्थापयत् पिता"। पर विदेह देश के हर्यश्व और मद्र राजाओं ने उन्हें शीघ्र ही निकाल दिया होगा। दो कनिष्ठ पुत्रों को विदेह देश में राज्य देकर परावृत्त राज-

मेषु को अपना प्रधान राज्य दिया। पृथुलक्ष
ने भाई रुक्मेषु ही के आश्रय में रहा। पर इन्होंने
मघ को राज्य से निकाल दिया। वह बेचारा
ो जङ्गली स्थान में किसी के आश्रय में रहने
ा। वहाँ एक ब्राह्मण ने उसे क्षात्र-धर्मोपदेश
या। उसकी प्रेरणा से ज्यामघ नर्मदा के दक्षिण
ऋक्षवान् (सतपुड़ा) पर्वतस्थ शुक्तिमती
मक नगरी में जा बसा। ज्यामघ के पश्चात्
ा देश उसके पुत्र के नामानुसार विदर्भ नाम
प्रसिद्ध हुआ। यहाँ से उसने दिग्विजय का
रम्भ करके यादव-राज्य को फिर से प्राप्त किया।
की स्त्री का नाम शैब्या था। अपनी रानी पर
राजा की अपार प्रीति थी। दूसरी स्त्री करने
अपेक्षा अपुत्र रहना ही इसने अच्छा समझा।
त में इसे शैब्या से ही एक पुत्र की प्राप्ति हुई।
का नाम विदर्भ हुआ।

विदर्भ के दो पुत्र क्रथ और कैशिक नाम के
। उनके नाम के भी देश विदर्भ-राज्य में सम्मि-
ट थे। क्रथ के पुत्र कुन्ति ने महाराष्ट्र का भी कुछ
ा जीत लिया। इस कारण महाराष्ट्र का नाम
लराष्ट्र भी प्रसिद्ध हुआ। महाभारत के समय
यह देश इसी नाम से प्रसिद्ध था। कुन्ति के
यादव-वंश में धृष्टि, निर्वृति, विदूरथ, दाशार्ह,
मा, जीमूत, विकृति और भीमरथ नाम के राजे
ा क्रम हुए। यही पिछला भीमरथ राजा नल और
पर्ण का समकालीन था।

भीमरथ के दम नाम का पुत्र हुआ। दम का
नवरथ दक्षिण की ओर चढ़ गया, पर
राक्षसों" से पराजित होकर उसे लौटना पड़ा।
से यादव लोग दक्षिण की ओर बढ़ने की अपेक्षा
र ही की ओर बढ़ते चले। यहाँ तक कि उन्होंने
य राज्य छीन कर पौरव राज-वंश का उच्छेद ही
डाला। नवरथ के बाद दशरथ, शकुनि, करम्भ,
वीक्षित और देवक्षत्र के समय में "राक्षसों" ने
दों को दक्षिण से बिलकुल ही निकाल बाहर
किया—यहाँ तक कि देवक्षत्र के पुत्र मधु के समय
में यादव लोग मथुरा के आसपास हट आये। मधु
का पुत्र कुरुवश, कुरुवश का अनु और अनु का पुरु-
द्वत् हुआ। पुरुद्वत् की स्त्री भद्रवती से उसे पुरुहोत्र
नामक पुत्र प्राप्त हुआ। पुरुहोत्र का पुत्र जंतु और
जंतु का सत्वत् हुआ। सत्वत् के पुत्र सात्वत की स्त्री
इक्ष्वाकु कुलोत्पन्ना कौशल्या नाम की थी। पर उस
राजा का नाम न मिलने से यह निश्चय-पूर्वक नहीं
कहा जा सकता कि वह किस राजा की कन्या थी।
बहुत सम्भव है, वह प्रथम विश्वसह की कन्या हो।
उसने कुण्ड और गोल लोगों के हितसाधनार्थ एक
शास्त्र बनाया। पर उस शास्त्र का पता नहीं कि
उसमें क्या था।

सात्वत के समय से यादव यश की कई
शाखायें हो गईं। उनमें से चार शाखायें बहुत
प्रसिद्ध हुईं। पहली शाखा का आरम्भ ज्येष्ठ पुत्र
भजभमन से हुआ। इसी शाखा में सत्यभामा का
पिता सत्राजित् हुआ। दूसरी वृष्णि से निकली।
कृष्ण के समकालीन अक्रूर उसी शाखा के थे।
तीसरी शाखा में वसुदेव हुए। चौथी शाखा यादव-
राज्य का सञ्चालन करती रही। उसमें सात्वत से
अन्धक, अन्धक से कुकुर, फिर वृष्णि, फिर धृति,
फिर कपोतरोमा, और अन्त में विलोमा नाम के
राजे हुए। इसके अनन्तर तित्तिर, नलिनी, नल,
अभिजित्, पुनर्वसु, आहुक, उग्रसेन और कंस
नामक राजे हुए। इस समय यादवों में एकता न
थी। कंस को मार कर वसुदेव-पुत्र कृष्ण मथुरा
के राजा हुए। चेदि-राज जरासन्ध के भय से
उन्होंने अपनी राजधानी मथुरा से हटा कर द्वारका
में नियत की। भारतीय युद्ध के पश्चात् कृष्ण पुत्र
साम्ब को ऋषि-शाप हुआ। उसके कारण सारे
यादव आपस में ही लड़ कर कट मरे। इस तरह
यादव-वंश की समाप्ति हो गई।

---

# सुधा।

( १ )

रद निशा में निशाकर के रजत-किरण धारण कर लेने से निर्मल नीलाकाश की अपूर्व शोभा होगई है। आज पूर्णिमा है। ऋतुराज के राज में दिगन्त को कम्पित करते हुए पपीहा मधुर-स्वर से गान कर रहा है। चतुर्दिक् कुसुम-सुगन्ध से परिपूर्ण हो रही है। निर्जन गृहकोण में बैठे हुए शशिशेखर सोच रहे हैं—"मैं किस अन्याय-कार्य्य में प्रवृत्त हो रहा हूँ"।

मस्तक के ऊपर शैलबाला का तैल-चित्र सुशोभित है। ऊपर की ओर देख कर शशिशेखर कहने लगे—"शैल! अब भी मैं तुम्हें भूल नहीं सकता। इस जीवन में तुम्हें कभी न भूल सकूँगा। भूलने का भाव भी हृदय में उपस्थित नहीं होता। जिस प्रकार चिरकाल-पर्य्यन्त मैंने तुम्हारी आराधना की थी उसी प्रकार शेष जीवन भी तुम्हारी ही आराधना में व्यतीत करूँगा। क्या इतने पर भी तुम मुझे अपने पास न बुलालोगी"?

तैल-चित्र उसी प्रकार नीरव रहा। उसकी दृष्टि में तिरस्कार की कठोरता न थी; न अनादर का मृदु हास्य ही विद्यमान था। उसकी दृष्टि स्थिर तथा अचञ्चल थी, परन्तु कोई अलौकिक भाव उसमें अज्ञात-स्वरूप से अवश्य विद्यमान था। शशिशेखर उस दृष्टि का भाव जान लेने में समर्थ हुए। वे उच्चस्वर से बोल उठे—"शैल! तुम मुझे वृथा दोषी बनाती हो। मैंने अपनी इच्छा से विवाह नहीं किया। यद्यपि माता ने अपना हठ पूर्ण किया, तथापि क्या मैं तुम्हारी आनन्ददायिनी मूर्ति हृदय-मन्दिर से बाहर करने में समर्थ हो सकता हूँ? कदापि नहीं! तुम मेरे हृदय की अधिष्ठात्री देवी हो। मेरे हृदय में 'सुधा' के लिए तिलमात्र भी स्थान नहीं"।

इतने में पीछे से कोई कोमल मधुर-स्वर से बोला—"हृदयेश! मैं आयी हूँ"।

[illegible] देदीप्यमान कर रही थी। शेखर के विचार भङ्ग हुए। फिर कर देखा तो अनिन्द्यसुषमामयी रमणी की मूर्ति। कम्पित-कण्ठ से शेखर बोले—"सुधा! यहां क्यों आयी? जाओ माता के पास जाओ"।

नेत्रों को नीचे किये हुए सुधा बोली—"प्रभु! के लिए तो अपराधिनी को क्षमा करो। चरण-कमल की आज्ञा देकर आज इस दासी को कृतार्थ होने दो"।

शेखर चुप रहे। तब सुधा ने हाथ में लिये हुए से शेखर के दोनों पैर रँगे। अनेक दिन बाद स्वामी के चरण पर गिर पड़ी। फिर उठ कर "हृदयेश! मेरी पूजा समाप्त होगई। मैं जाती हूँ"।

सुधा चली गई। ऊर्ध्व-आयद्ध दृष्टि से देखते शेखर अचल अटल भाव से बैठे रहे।

( २ )

इस घटना को हुए कितने ही दिन व्यतीत हो परन्तु शशिशेखर के हृदय का दुर्दमनीय वेग शान्त न हो सका। कितनी ही नीरव भिक्षाओं के कितने ही बार कातर नयनों की दृष्टि ने, उनके पर कुछ भी प्रभाव न जमा पाया। एक ही चिन्ता—ही भावना—के कारण शेखर की देह जीर्ण होने लगी। तक वे इस यातना को सह सके, उन्होंने सुधरना किया। परन्तु जब यह यातना असाध्य होगई तब उन्होंने तीर्थराज प्रयाग की ओर प्रस्थान किया।

उस समय कुम्भ का मेला था। हज़ारों यात्री, प्रभृति वहाँ एकत्र हुए थे। अनन्त जनराशि से तीर्थ का कलेवर आच्छादित था। पुण्यसलिला वती जाह्नवी और यमुना का सङ्गम! यमुना के हरित का जाह्नवी के शुभ्र जल से मिलन! वे दृश्य अति सुन्दर तथा मनोरम थे।

कुछ दिन तो शशिशेखर ने किसी न किसी तरह किये। नवीन स्थल पर नवीन दृश्य देख कर किस हृदय पुलकित नहीं होता? शेखर ने यदुदित के साथ इतस्ततः परिभ्रमण करके मन को बहुत कुछ किया। परन्तु यह स्थिरता कितने दिन के लिए थी! का चित्र नया होगया। शशिशेखर अस्थिर चित्त से में परिभ्रमण करने लगे।

( ३ )

सुधा के हृदय में भाव उठा:—"उन्हें एक बार और पाती तो अच्छा होता। उनसे वियोग हुए बहुत दिन गये"। उस तैल-चित्र के समक्ष बैठकर सुधा कहने ी—"भगिनि! तुम जैसी भाग्यशीला संसार में धन्य है! ने पति के हृदय-मन्दिर में स्थान-लाभ किया। मैं हत-भा- हूँ जो तुम्हारा द्रव्य छीनने का प्रयत्न करती हूँ"।

सुधा और न बोल सकी। नयन-मोचित अश्रुधारा से का वक्षःस्थल भीग गया। सुधा फिर कम्पित-कण्ठ से ी—"बहिन! मैं तुम्हारी वस्तु पाने की इच्छा नहीं ी हूँ। परन्तु उस अमूल्य रत्न की आराधना करने की ा अवश्य है। क्या यह इच्छा पूर्ण करोगी?" इतने में से ननद ने कहा—"बहू! क्यों रोती हो"! आंसू कर सुधा ने उत्तर दिया—"हृदय जिस व्यथा से व्यथित रहा है उसे क्या कह कर समझाऊँ। स्त्री होकर भी मेरा विदीर्ण नहीं होता। इस कष्ट से पत्थर, वृक्ष प्रभृति फट जाते। क्या उनके ख़बर पाने का कुछ उपाय नहीं?" लिनी ने धीरे से कहा:—"बहू, क्या तू पागल हो गी? चल। सारा दिन बीत गया। कुछ खायगी भी। । खाले। दादा की ख़बर आई है। वे आज कल वृन्दा- में हैं"। उत्तेजित स्वर से सुधा ने सुधा-वर्षण किया— म माताजी से कहो, मैं उन्हें देखने जाऊँगी'। शैवलिनी हा—"बहू! तू निश्चय पागल होगई है। दो दिन के दादा स्वयं घर आ जायँगे"।

सुधा बोली—"न दीदी! वे कभी न आयेंगे। चलो, लौटा लावें"।

"अच्छा, यही सही। मैं जाकर रविशेखर से कहती । तू तब तक चल। खाना खा"।

रवि शशिशेखर के कनिष्ट भ्राता हैं। सुधा ने नाम मात्र वन किया। सती का वियोग स्वामी से होने के कारण पत्नी से भी वियोग होगया। इस वियोग के कारण ा के सुन्दर, लावण्यमय देह की अपूर्व-रूप कान्ति क्रमशः ण होने लगी। देहलता निर्जीव सी होगई। तब पुत्र कानुज राम ने कहा'—"चल मैं तुझे वृन्दावन ले ूँगी। मैं भी अपनी शेष अवस्था श्रीगोविन्द के पाद- में अर्पण करूँगी"।

शैवलिनी बोली—"माता! अच्छी बात है। चलो हम सब रवि को मना लेकर दादा को खोजें। वे फिर न कहीं चले जायँ। बहू भी पागल सी होती जाती है"।

वृन्दावन के लिए यात्रा स्थिर हुई। उसी दिन सन्ध्या को रविशेखर के साथ सबने पुण्य तीर्थ वृन्दावन को गमन किया। जो घर सदा ही आनन्द-लहरी से मुखरित होता था वही आज निविड़ निस्तब्धता में परिणत होगया।

( ४ )

नील-सलिला स्वच्छ यमुना आज नीरव स्वर से बह रही है। पर, हाय! उस बांसुरी का स्वर नहीं। इसीसे आज यमुना उदास होकर बह रही है। जिस बांसुरी के शब्द को सुन कर गृहवासिनी गोपिकायें उदास हो जाती थीं, हाय यमुने! तुम्हारे तट पर से वह बांसुरी का स्वर कहां गया? और, आज महामाया राधा रानी कहां? वृन्दावन में यद्यपि तुम्हारा सब कुछ है, परन्तु वह मोहन-मुरली नहीं है। यमुने! क्या उसी के विरह में तुम सूख गई हो? कितनी गोपिकाओं की तप्त अश्रुधारायें तुम्हारे जल में मिल गई हैं, सो कौन कह सकता है?

वृन्दावन के निकट तमाल-वन है। इस वन का दृश्य अति मनोरम है। सुन्दर नृत्य से मयूरों ने इस वन की शोभा को बहुत बढ़ा दिया है। इसी वन के मध्य एक पर्ण-कुटी में बैठे हुए दो संन्यासी कथोपकथन कर रहे हैं।

अच्युतानन्द ने कहा—"वत्स! तुम घर लौट जाव। कठोर कर्तव्य करना अभी तुम्हारे लिए शेष है। अभी कर्म-योग पालना ही तुम्हारा कर्तव्य है। ज्ञानयोग में तुम्हारा अधिकार नहीं"।

दूसरे संन्यासी ने कहा—"प्रभो! घर में मुझे शान्ति नहीं। मैं ज्ञान के द्वारा शान्ति-लाभ करना चाहता हूँ"।

अच्युतानन्द गोस्वामी ने हँसते हुए कहा—"वत्स! नयन खोल कर देखो। तुम्हारे सम्मुख कितना महान कर्तव्य करने को पड़ा है। पुत्रशोकातुरा माता सन्तान के आगमन की प्रतीक्षा करती हुई पथ की ओर एकटक निहार रही होगी। दीर्घ वियोग से व्याकुला पतिप्राणा सती स्वामी के दर्शन की लालसा से प्राण धारण कर रही होगी। वत्स! अन्ध मत बनो। तुम्हारी कल्पना अभी बचपनी बनी

मूर्च्छा भङ्ग हुई। परन्तु समय समय पर मूर्च्छा आती रही। पूरे दिन अनिमेषनयना की स्थापि ने अटल मूर्ति धारण की। अच्युतानन्द ने कहा—"माता! चित्त स्थिर कर। आज तेरी कठोर परीक्षा का दिन है। अगतिक गोविन्द के पाद-पद्म में आत्मसमर्पण कर।" शोकातुरा माता भूमि में लोटती हुई उच्चस्वर से रोदन करने लगी। रोते रोते शोक की रोगनिद्रा भङ्ग हुई। उनके नेत्र अश्रु-पूर्ण हो गये। उन्होंने कहा—"माता! रो मत। अपराधी पुत्र को क्षमा कर। पदधूलि दे। आशीर्वाद दे। मेरा समय पूर्ण होगया। मैं जाता हूँ"। घोर विकार के प्रकोप में शोक ने देखा कि अंतिम अङ्गुली के सङ्केत से उन्हें बुला रही है। इसलिए से वे बोल उठे—"अंब! मैं आता हूँ"—इसी दिन रात्रि के शेष होने पर शोक का प्राणपक्षी विञ्जर-मुक्त होकर उड़गया। बालिका सुधा मृतक स्वामी के पैरों के निकट मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर गई।

× × × × ×

इसके बहुत दिन पश्चात् वृन्दावन में बहुत दिन व्यतीत हो गये। माता और सुधा ने वृन्दावन में अच्युतानन्द स्वामी का आश्रम परित्याग न किया। शोक की माता ने यथार्थ ही माधव के पादपद्म में आत्मसमर्पण कर दिया। इसी आत्म-समर्पण के कारण उसने निदारुण पुत्र शोक पर जय-प्राप्ति की। जब मनुष्य का चित्त भगवान् के पाद-पद्म में आकृष्ट हो जाता है तब उसे पार्थिव शोक व्याकुल नहीं कर सकते। और बालिका सुधा! हाय! इस हेमाङ्ग में आज शुभ्र वस्त्र शोभा पा रहे हैं। यह हृदयविदारक दृश्य है। दृश्य संसार के प्रति वैराग्योत्पादकारी है।

सुधा प्रति मुहूर्त निज जीवन के शेष दिनों की प्रतीक्षा करती रही।

सुधा जान गई थी कि प्रेम अविनश्वर है। मृत्यु के उपरान्त भी प्रेम का नाश नहीं होता। प्रेम स्वर्ग में भी मिलता है। ऊपर की तरफ़ हाथ उठा कर वह बोल उठी—"हृदयेश! प्राणवल्लभ! प्राणजीवन! तुम बहुत दूर होते हुए भी मेरे हृदय से दूर नहीं। मैं इस हृदय-मन्दिर में चिर दिन तुम्हारी पूजा करूँगी। मेरा देवता दूसरा नहीं। मेरे देवता तुम्हीं हो। यदि साधना की जीत हुई तो मेरा जीवन शेष होने पर तुमसे अवश्य मिलन होगा। हे प्रियतम! तब तुम मुझे फिर भी चरण से मत टालना"*।

चण्डीप्रसाद।

* बङ्गभाषा के प्रसिद्ध लेखक श्रीयुत यतीन्द्रनाथ सेन, एम॰ए॰एल॰, की "सुधा" नामक कहानी का भावानुवाद।

# कवि की निरङ्कुशता।

कवि जब अपना प्रतिभा-पाटव दिखाने लगते हैं तब उन्हें इस बात का ज़रा भी ख़याल नहीं रहता कि हम किस देवता पर कैसा प्रहार कर रहे हैं। उनकी दृष्टि में उस समय पूज्य, अपूज्य दोनों बराबर नज़र आने लग जाते हैं। देवताओं पर प्रहार करते समय उन्हें तरस नहीं आता। आज चार श्लोक में आपकी सेवा में ऐसे उपस्थित करता हूँ जिनमें वायु तथा जल-देवता की ख़ूब ख़बर ली गई है। देवताओं पर आक्षेप तो किये गये हैं, किन्तु आक्षेपों में रोचकता और सूक्ष्मदर्शिता कूट कूट भरी हुई है। सुनिए। वायु को लक्ष्य में रख कर कवि कहता है:—

अनिल! निखिलविश्वं प्राणिति त्वत्प्रयुक्तं
सपदि च विनिमीलत्याकुलं त्वद्वियोगात्।
वपुरसि परमेशस्येव तन्नोचितं ते
सुरभिमसुरभिं वा यत् समं स्वीकरोषि॥

भावार्थ—हे वायु! तेरे ही संसर्ग से सारा संसार जी रहा है—तू ही सम्पूर्ण विश्व के जीवन का आधार है। तेरा वियोग होने से प्राणिमात्र एक क्षण भी नहीं जी सकता—वह फ़ौरन मर जाता है। अधिक क्या कहूँ, तू तो परमात्मा का शरीर ही है। तथापि तू इतना अज्ञानी और विवेक-शून्य है कि तुझे योग्य-अयोग्य का ज़रा भी ख़याल नहीं। क्योंकि इधर तो तू उत्तम उत्तम पुष्पों की सुगन्धि साथ लिये हुए घूमता है और उधर कहीं बदबू मिल जाती है तो उसे भी साथ लेकर चल पड़ता है। तेरी इस नादानी की बलिहारी!

दूसरा कवि कहता है:—

कोऽयं भ्रान्तिप्रकारस्तव पवन! घनावाकाश्यानजातं
तेजस्वित्रातमेतं नभसि नयसि यत् पांसुरं प्रतिष्ठाम्।
अस्मिन्नुत्थाप्यमाने जननयनपथोरद्धवन्नावदान्तं
केनोपायेन सख्या वपुषि कलुषता दोष एवमन्धे॥

न्न हुई। परन्तु समय समय पर मूर्च्छा आती रही। शशिशेखर की व्याधि ने प्रबल मूर्ति धारण की। नन्द ने कहा—"माता! चित्त स्थिर कर। आज तेरी रीक्षा का दिन है। भगवान् गोविन्द के पाद पद्म में र्पण कर।" शोकातुरा माता धूल में लोटती हुई से रोदन करने लगी। रोने से शेखर की रोगनिद्रा । उनके नेत्र अश्रु-पूर्ण हो गये। उन्होंने कहा— ! रो मत। अपराधी पुत्र को क्षमा कर। पदधूलि दे। द दे। मेरा समय पूर्ण होगया। मैं चलता हूँ"। घोर के प्रकोष्ठ में शेखर ने देखा कि शैल अद्भुती के सङ्केत ुला रही है। उच्चस्वर से वे बोल उठे—"शैल! हूँ"—उसी दिन रात्रि के शेष होने पर शेखर का ी पिञ्जर-मुक्त होकर उड़गया। बालिका सुधा मृतक के पैरों के निकट मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर गई।

× × × × ×

नके उपरान्त वृन्दावन में बहुत दिन व्यतीत हो गये। ीर सुधा ने वृन्दावन में अच्युतानन्द स्वामी का परित्याग न किया। शेखर की माता ने यथार्थ ही के पादपद्म में आत्मसमर्पण कर दिया। इसी आत्म- के कारण उसने निदारुण पुत्र-शोक पर जय-प्राप्ति ब मनुष्य का चित्त भगवान् के पाद-पद्म में आकृष्ट हो तब उसे पार्थिव शोक व्याकुल नहीं कर सकते। और सुधा! हाय! उस हेमाङ्ग में आज शुभ्र वस्त्र शोभा है। यह हृदयविदारक दृश्य है। दृश्य संसार के प्रति पघातकारी है।

धा प्रति मुहूर्त निज जीवन के शेष दिनों की प्रतीक्षा रही।

धा जान गई थी कि प्रेम अविनश्वर है। मृत्यु के भी प्रेम का नाश नहीं होता। प्रेम स्वर्ग में भी मिलता ा की तरफ़ हाथ उठा कर वह बोल उठी—"हृदयेश! न्य! प्राणजीवन! तुम बहुत दूर होते हुए भी मेरे दूर नहीं। मैं इस हृदय-मन्दिर में चिर दिन तुम्हारी ूँगी। मेरा देवता दूसरा नहीं। मेरे देवता तुम्हीं ति साधना की जीत हुई तो मेरा जीवन शेष होने पर वश्य मिलन होगा। हे प्रियतम! तब तुम मुझे फिर ण में मत देखना"॰।

चण्डीप्रसाद।

॰ बङ्गभाषा के प्रसिद्ध लेखक श्रीयुत यती-द्रनाथ सेन, ए॰, बी॰ "सुधा" नामक कहानी का भावानुवाद।

# कवि की निरङ्कुशता।

कवि जब अपना प्रतिभा-पाटव दिखाने लगते हैं तब उन्हें इस बात का ज़रा भी ख़याल नहीं रहता कि हम किस देवता पर कैसा प्रहार कर रहे हैं। उनकी दृष्टि में उस समय पूज्य, अपूज्य दोनों बराबर नज़र आने लग जाते हैं। देवताओं पर प्रहार करते समय उन्हें तरस नहीं आता। आज चार श्लोक मैं आपकी सेवा में ऐसे उपस्थित करता हूँ जिनमें वायु तथा जल-देवता की ख़ूब ख़बर ली गई है। देवताओं पर आक्षेप तो किये गये हैं, किन्तु आक्षेपों में रोचकता और सूक्ष्मदर्शिता कूट कूट भरी हुई है। सुनिए। वायु को लक्ष्य में रख कर कवि कहता है:—

अनिल! निखिलविश्वं प्राणिति त्वत्प्रयुक्तं
सपदि च विनिमीलत्याकुलं त्वद्वियोगात्।
वपुरपि परमेशस्योचितं मोचितं ते
सुरभिमसुरभिं वा यत् समं स्वीकरोषि॥

भावार्थ—हे वायु! तेरे ही संसर्ग से सारा संसार जी रहा है—तू ही सम्पूर्ण विश्व के जीवन का आधार है। तेरा वियोग होने से प्राणिमात्र एक क्षण भी नहीं जी सकता—वह फ़ौरन मर जाता है। अधिक क्या कहूँ, तू तो परमात्मा का शरीर ही है। तथापि तू इतना अज्ञानी और विवेक-शून्य है कि तुझे योग्य-अयोग्य का ज़रा भी ख़याल नहीं। क्योंकि इधर तो तू उत्तम उत्तम पुष्पों की सुगन्धि साथ लिये हुए घूमता है और उधर कहीं बदबू मिल जाती है तो उसे भी साथ लेकर चल पड़ता है। तेरी इस नादानी की बलिहारी!

दूसरा कवि कहता है:—

कोऽयं भ्रान्तिप्रकारस्तव पवन! मनाक्कारुण्यलेशं
नेदृग्विश्वासभेदे वयमपि वयसे का परं प्रक्रियाम।
अस्मिन्नुत्थाय यामे जनवचनपथोद्घट्टनक्लेशभीरुः
केनोपायेन सद्यः कलयसि कमलं देव कल्हारं॥

[illegible] ! क्या तू सचमुच ही सान्त [illegible] है ? तेरा पृष्ठ में पड़ी हुई भूल को [illegible] कर उसकी हत्या करता है— [illegible] पर ही स्थान पाते हैं। एक तो यह दोष। [illegible] मेरे इस काम में भले मानसों के [illegible] ही होती है, यही भूल उनकी आँखों [illegible] तेरा यश उनकी छाती छाती रहती है, सिर [illegible] पर सिर कर उसे मलिन भी कर देती है। यह [illegible] तेरा दोष तेरा ही है। इसका क्या इलाज किया [illegible] ! तेरी यह दोष-परम्परा सर्वथा असह्य है।

एक और कवि जलदेवता से कहता है—

कस्त्वं भोः प्रथमावतार इति किं प्रख्यातमूलं हरेः
किं वा स्यादवतारकर्मनियमः स्वाभाविकी स्थितिः।
किं वा स्यादवतारिणो न भवतः कार्यान्तरं किञ्चन
त्वं मीनाकृतिरेव गच्छसि पयः कर्त्तुं निरोढुं परम्॥

भावार्थ—हे जलदेव! अज (अप् = ज, कमल) से पहले तुझ जल से ही पैदा हुआ। फिर उस अज से ब्रह्माजी आविर्भूत हुए। ब्रह्मा की शक्ति से ब्रह्माण्ड प्रादुर्भूत हुआ। फिर उस अण्डे से स्थावर-जङ्गम आदि सब पदार्थों की उत्पत्ति हुई। मैं नहीं तक कहूँ जो कुछ संसार में है सब तेरी ही लीला है—तू ही सब का मूल-कारण है। पर तुझे धिक्कार! तेरा व्यवहार चोरों का सा है। क्योंकि मछलीमारों से डरे हुए मच्छ, कच्छ, आदि जीव जब तेरी शरण आते हैं तब तू पहले तो उन्हें छिपा रखता है। जब मछुवे तेरे भीतर जाल डालते हैं तब तू उन जीवों को भी साथ लेकर जाल में घुस जाता है। जीव भी तेरा विश्वास करके तेरे साथ चले जाते हैं। पर जब मछुवे जाल उठाते हैं तब तू तो जाल के छेदों से निकल जाता है, पर उन बेचारे जीवों को वहीं फँसा देता है! ये जीव तेरा मुँह देखते ही वहीं फँसा देता है! हा! ऐसी विश्वासघातकता! तूने तो [illegible] कर दी!

दूसरा कवि कहता है—

अम्भः साम गुणान्तरं सरलः स्वाभाविकी स्वच्छता
किं ब्रूमः शुचिना त्वयानुपयुजः सर्गेण यस्
किं वाम्भः परमुष्णतां मुनिरहं वाञ्छामि देहिनां
त्वं नीचैर्गमनेन गच्छसि पयः कर्त्तुं निरोढुं परम्॥

भावार्थ—हे जल! सदा शीतल रहना तेरा स्वभाव ही है; पवित्रता तो मानो तेरे जल के साथ ही उत्पन्न हुई है; तेरी पवित्रता के विषय में इतना ही कहना काफ़ी होगा कि अपवित्र—नापाक आदमी भी तेरे स्पर्शमात्र से पवित्र हो जाते हैं। भला इससे अधिक तेरी महिमा और क्या हो सकती है कि तू ही प्राणिमात्र का जीवन है। अतएव तो तू ही नीच मार्ग से चल पड़ेगा—वह निकलेगा—तो औरों की तो बात ही क्या है! तू देवता है। समर्थ है, तुझे रोकने की शक्ति भी किसी में नहीं। अतएव तुझे ऐसा जघन्य कार्य्य न करना चाहिए। क्योंकि तेरी देखादेखी संसार में इस तरह [illegible] अनाचार फैल सकता है।

चूड़ामणि शास्त्री

---

## आरम्भ-शूरता।

अरिल

देश जाति के अधःपतन का मूल है।
उन्नति का बाधक अपयश का कोष है।
कार्य्य-सिद्धि के लिए कृतान्त-स्वरूप है।
अति निन्दित आरम्भ-शूरता दोष है॥
वह साहस है जल बुद्बुद सा विनसता।
वह उत्साह प्रभात-ओस से है बढ़ा।
वह उमङ्ग है सिकतानिरचित भीत सी।
जिस पर है आरम्भ-शूरता रँग चढ़ा।
उसने देखा कभी सफलता-मुख नहीं।
कभी कौमना वेलि नहीं उसकी सिंची।
कभी न उसका भाग्य गगन उज्ज्वल हुआ।
जिसकी कृति आरम्भ-शूरता से दिखी।
वह उद्योग-समूह मिलेगा धूल में।
वह सभ्यता होगी असफलता-भरी।

पहला स्तम्भ

हेमाद्रि के दूसरे स्तम्भ।

तीसरा स्तम्भ

इण्डिया प्रेस, प्रयाग।

इस विश्वविद्यालय में सब प्रकार की शिक्षायें दी जाती हैं—एंजिनियरिङ्ग, डाक्टरी, विज्ञान, साहित्य, अर्थशास्त्र, क़ानून इत्यादि सभी के विभाग भिन्न भिन्न हैं।

## पुस्तकालय।

विश्वविद्यालय का एक वृहत् पुस्तकालय भी है। उसमें पाँच लाख से अधिक पुस्तकें हैं। वहाँ कोई भी विद्यार्थी किसी भी विषय की पुस्तक साढ़े आठ बजे सवेरे से ग्यारह बजे रात तक देख सकता है और इच्छा होने पर घर भी ले जा सकता है। इसके अतिरिक्त एंजिनियरिंग, खनिज, डाक्टरी इत्यादि विभागों के साथ पृथक् पृथक् भी पुस्तकालय हैं, जहाँ इन विषयों पर चुनी हुई पुस्तकें रहती हैं।

## शारीरिक व्यायाम।

विश्वविद्यालय की एक वृहत् व्यायामशाला भी है, जो प्रति दिन नौ बजे सवेरे से दस बजे रात तक खुली रहती है। उसमें विद्यार्थी तरह तरह के व्यायाम करते हैं। विद्यार्थियों के शरीर की परीक्षा करने के लिए एक चतुर डाक्टर, इस व्यायामशाला में, नियुक्त है जो प्रत्येक विद्यार्थी की भलीभाँति जाँच करके यह निश्चय करता है कि उसे कितना और किस प्रकार का व्यायाम करना चाहिए।

यह व्यायामशाला की इमारत दुमञ्ज़िला है। ऊपर भिन्न भिन्न प्रकार के व्यायाम करने का सामान रहता है और नीचे एक सुन्दर तालाब, फ़ौवारे, हौज़ इत्यादि स्नान करने की सामग्री है।

विद्यालय के प्रत्येक विद्यार्थी के लिए यह आवश्यक है कि वह सप्ताह में कम से काम दो घण्टे अवश्य कसरत करे, जिससे उसमें स्वास्थ्य, शक्ति, साहस, सुन्दरता तथा सहनशीलता उत्पन्न हो और वह संसार के सभी कार्य्य करने योग्य हो जाय।

इसके सिवा विश्वविद्यालय के अधीन निकट ही एक बड़ा मैदान है। उसमें बेसबाल, फुटबाल, दौड़, टेनिस इत्यादि खेलने का प्रबन्ध है। विद्यालय की ओर से नदी के निकट एक नौ भी है। उसमें अनेक नावें रहती हैं। उन पर कर विद्यार्थी नदी की सैर करते हैं।

## विद्यार्थियों को काम दिलाने वाली स

## (EMPLOYMENT COMMITTE

अमेरिका के अधिकतर विद्यार्थी अपने वि जीवन में अपनी ही मिहनत से धन कमा कर ध्ययन करते हैं। इस कार्य्य में विद्यार्थियों को हित करने और उन्हें सहायता पहुँचाने के विद्यालय में शिक्षकों की भी सभा हुआ करती यह प्रयत्न करके विद्यार्थियों के लिए भिन्न प्रकार के काम ढूँढ़ देती है। इसी प्रकार की सभा कोलम्बिया के विश्वविद्यालय में भी है। इस विद्यालय के विद्यार्थियों के लिए काम ढूँ तथा उन्हें अन्य प्रकार से भी सहायता दिया क है। विद्यार्थियों के करने योग्य निम्न प्रकार काम अधिकतर मिलते हैं:—

पढ़ाना, अनुवाद करना, पत्रों पर पता लिख भिन्न भिन्न प्रकार की नक़लें करना, रात के स में पढ़ाना तथा टाइप में लेख और चिट्ठियाँ लिखना। हिसाब लगाया गया है कि इस प्र काम करके इस विद्यालय के निवासी प्रति व लाख रुपये से अधिक पैदा कर लेते हैं। या अधिकतर उन विद्यार्थियों को सहायता देती दूर देशों से वहाँ विद्याध्ययन के लिए और जिन्हें जीविका-निर्वाह का कोई और न नहीं होता।

इसके सिवा इस विद्यालय में एक और विभाग है जो विद्यार्थी के उत्तीर्ण हो जाने पर लिए स्थायी रूप से काम दिलाने का प्रबन्ध करता

## विद्यार्थियों की स्वास्थ्य-रक्षा।

विद्यार्थियों के स्वास्थ्य की रक्षा और देख के लिए भी कालेज की ओर से एक डाक्टर नि है। वह विद्यार्थियों के स्वास्थ्य की परीक्षा

। है। उसका औषधालय प्रति दिन खुला । है। वहाँ जाकर कोई भी विद्यार्थी अपने ्य की परीक्षा करा सकता है।

## विद्यार्थियों का निवास-स्थान।

विश्वविद्यालय की ओर से विद्यार्थियों के लिए बोर्डिङ्ग हाउस, अर्थात् निवास गृह, हैं जिनमें मिला कर ८०० सौ विद्यार्थी रह सकते हैं। प्रत्येक स-गृह १३७ फ़ीट लम्बा और ६० फ़ीट चौड़ा दस मञ्ज़िल ऊँचा है। इनमें बिजली की ती, भाफ़ की गरमी, टेलीफ़ोन, बिजली के -खटोले तथा स्नान करने के लिए सुन्दर र फ़ौवारे हैं।

प्रत्येक विद्यार्थी को दो कमरे दिये जाते हैं, सोने का कमरा और दूसरा अध्ययन करने । दोनों कमरों की छतें और दीवारें चित्रकारी । हुए काग़ज़ से मढ़ी होती हैं। फ़र्श पर र क़ालीन बिछा रहता है। पलँग लोहे की दार कमानी का होता है। वह मोटे तथा गुद- गद्दे और साफ़ चादर इत्यादि आवश्यकीय ाम से सुसज्जित रहता है। पढ़ने के कमरे में ैठने के लिए आलमारी और पढ़ने के लिए ु कुरसी इत्यादि सामान रहता है।

प्रत्येक निवास गृह के बीच में, नीचे की मञ्ज़िल एक वृहत् सभा भवन होता है, जहाँ भिन्न भिन्न ्यों पर विद्यार्थी विचार करने हैं और जहाँ सन्ध्या- ाप जाकर समाचारपत्र पढ़ते तथा गपें मारते हैं।

इन निवास गृहों के अतिरिक्त विश्वविद्यालय के ारही ऐसे अनेक घर हैं जिनमें कोई पचीस रुपये । महीना देने से अच्छा भोजन और रहने का ान मिल सकता है।

## व्यायाम।

विद्यालय में शिक्षा देने के सिवा विश्वविद्यालय ी वर्ष और शिक्षा देने का भी प्रबन्ध करता है। ने के बड़े बड़े विद्वानों को समय समय पर बुला भिन्न भिन्न विषयों पर वह व्याख्यान दिलाता है। इससे विद्यार्थियों के ज्ञान की वृद्धि होती है। विद्यार्थियों के मनोरञ्जनार्थ अच्छे अच्छे शिक्षाप्रद नाटक भी विश्वविद्यालय कराता है। सङ्गीत का स्वाद भी उन्हें चखाया जाता है।

## गिरजाघर।

विश्वविद्यालय के बीच में एक अर्द्ध-गोलाकार वृहत् गिरजाघर है। उसमें १,०५० कुरसियाँ रहती हैं। इस गिरजाघर में विश्वविद्यालय की ओर से एक विद्वान् तथा उदार-हृदय पादरी नियुक्त है, जो प्रति दिन विद्यार्थियों को धार्मिक तथा सामाजिक विषयों पर उपदेश दिया करता है। इस लिहाज़ विश्वविद्यालय में प्रति दिन बारह बजे से साढ़े बारह बजे तक विद्यार्थियों को छुट्टी दी जाती है कि जिसकी इच्छा हो वह गिरजाघर में जाकर धर्मोपदेश सुने। इस गिरजाघर में एक बहुमूल्य "आर्गन" बाजा भी है, जो समय समय पर विद्यार्थियों के लिए बजाया जाता है।

## व्याख्यान-भवन।

यह भवन बहुत विशाल है। इसमें विद्यार्थियों की भिन्न भिन्न सभायें हुआ करती हैं। इन सभाओं से सम्बन्ध रखने वाला एक साधारण हाल ( ) है। इसमें संसार के प्रायः सभी देशों के विद्यार्थी सम्मिलित हैं। उसका वार्षिकोत्सव हुआ करता है। उसमें प्रत्येक देश के प्रतिनिधि विद्यार्थी अपने देश की पोशाक पहन कर आते हैं और अपनी भाषा में गाने तथा बजाने करते हैं।

## यूनीहे।

विश्वविद्यालय की ओर से सैकड़ों ऐसे मकान हैं जो केवल विद्यार्थियों के लिए बने हैं। फ़ार्मेसी के भी बहुत से लिये बने हैं।

इस लिहाज़ विश्वविद्यालय में आकर हमने यह देखा कि विद्या का बहुत है और इसका उद्देश बहुत ऊँचा है।

—

त्ति की रक्षा करना सरकार का कर्तव्य है। देखा जाता है कि जब रियासत ऋण से ऐसी जाती है कि वह बिक गई के बराबर हो जाती कोर्ट होने की दरख्वास्त दी जाती है। ऐसे में इलाक़ा कोर्ट कराने से कुछ भी लाभ । प्रायः ऐसी ऋणी रियासत को कोर्ट आव् स अपने प्रबन्ध में लेने से इनकार कर देती ऋण के होते ही जो लोग अपनी रियासत कोर्ट पुर्द कर देते हैं उनको लाभ होता है। कोर्ट न्ध से रुपया बचा कर ऋण दे डालती है रियासत मालिक को लौटा देती है। यह भी जाता है कि जो रियासत एक बार कोर्ट ने रहित करके मालिक को लौटा दी है वह ऋणी र फिर कोर्ट के प्रबन्ध में आई है।

अधिकांश ज़मींदार और ताल्लुक़ेदार ऋणी चले जाते हैं और प्रबन्ध न कर सकने के उनकी रियासत बार बार कोर्ट के प्रबन्ध में है। अच्छा, तो इसका कारण क्या है और ऐसी में सुधार की सूरत क्या हो सकती है? तक विचार करने से समझ में आता तके तीन बड़े कारण ऐसे हैं जो रियासतों को ही दिनों में ऋणी बना देते हैं:—

(१) मुक़द्दमेबाज़ी
(२) ऐयाशी
(३) विवाहादि की कुरीतियाँ

न प्रान्तों की रियासतें प्रायः इन्हीं तीनों में क या एक से अधिक कारणों से ऋणी हो रही सका खुलासा सुनिए—

मुक़द्दमेबाज़ी—ताल्लुक़ेदारी क़ानून विवाद रोकने र बना था। परन्तु यही विवाद का कारण ा है। बड़े बड़े मुक़द्दमे प्रिवी कौन्सिल तक बात के निर्णय के लिए लड़े जाते हैं कि अमुक सत ताल्लुक़ा है या नहीं, और उसमें राज्यों सी चाल, जिससे बड़ा लड़का ही गद्दी पा ा है, प्रचलित है या नहीं। यह सच है कि कुछ सनों में ऐसी सनदें हैं जिनसे ताल्लुक़ों का होना और न होना दोनों बातें साबित हो सकती हैं, परन्तु बहुधा सनदें मिलने का सबूत पहुँचाना ही मुश्किल हो जाता है और राज्यों के सदृश रीतियों के साबित करने में बहुत ख़र्च करना पड़ता है। क्या ही अच्छा हो यदि ऐसे झगड़े प्रथम में ब्रिटिश इन्डियन ऐसोसियेशन और आगरे में ज़मींदार्स ऐसोसियेशन की पञ्चायत से तै करा लिये जाया करें। ऐसे मुक़द्दमे बड़े ही पेचीदा होते हैं। यह बात इतने ही से साबित है कि ऐसे मुक़द्दमों के निर्णय के लिए सरकार ने पण्डित शीतलाप्रसाद बाजपेयी की लियाक़त का एक ख़ास जज अलग ही नियत कर दिया है। यह अवध की बात हुई। आगरा प्रान्त में भी ऐसे मुक़द्दमात की संख्या कम न होगी। बहुत से ज़मींदारी घराने यह साबित करते हैं कि उनके यहाँ लड़कियों का कुछ भी हक़ नहीं। बड़ी बड़ी रियासतों का बिक जाना, इस बात का पक्का सबूत है।

ऐयाशी। इस विषय में कुछ अधिक कहने की आवश्यकता नहीं। उसका कारण पति-पत्नी की उम्र में असमानता, विद्याहीनता, बुरे चालचलन वाले कर्मचारियों और नौकरों की सङ्गति इत्यादि है। यदि ये कारण दूर हो जायँ तो यह दोष भी दूर हो जाय।

विवाहादि की कुरीतियाँ। बहुत अधिक दहेज़ देने के कारण भी कितनी ही रियासतें ऋणी हो जाती हैं। एक लाख रुपये तक दहेज़ ठहराते देखा गया है। क्षत्रिय लोग प्रायः अपने से बड़े घराने ढूँढते हैं। अतएव उन्हें वर के मनमाने दाम देने पड़ते हैं। क्षत्रिय-सभा ने इस प्रथा को बन्द करने का उद्योग तो बहुत किया, परन्तु उससे कोई विशेष फल न हुआ। अनेक रियासतें एक ही दो विवाह की हो जाती हैं और लड़कियाँ बड़ी उम्र तक अविवाहिता ही रह जाती हैं। और भी कितनी ही बुरी चालें फैली हुई हैं। परन्तु ये हमारे लेख के विषय के बाहर हैं। अतएव हमको उन पर कुछ कहने का अधिकार नहीं।

## गुलाब की पाँखुरी।

मैं प्रात घूमता हुआ टहलने लगा वाटिका में अपने ;
थे खिले गुलाब विविध रंगी वैभवी सुगन्ध फैलाते थे।
एक साधारण सा फूल रहा यह मेरे मन को भाया है;
उससे बढ़ बढ़ कर थे कितने पर लगे नहीं अच्छे उतने ॥१॥
अपनी अपनी रुचिही तो है, है रीत निराली दुनिया की;
अलि को चम्पा की चाह नहीं वीरों पर बन बन भटक रहा।
जब हाथ बढ़ाया लेने को हा! हृदय उसे दे देने को;
सब टूट गई पांखुरी वहीं मोती सी फैलीं बिखर बिखर ॥२॥
आनन्द मृत्यु का भी कारन कहते हैं होता कभी कभी;
क्या छू जाने ही से मुझसे वह मोदमत्त निर्जीव हुआ?
या जड़ शरीर को छोड़ प्रेममय हो कर अन्तर्धान हुआ?
मिल गया स्नेह के सागर में उसके जल का कण हो करके ॥३॥
या खण्डित कर शरीर अपना करने में मेरा शुभ स्वागत
वह हाथ बढ़ा प्यारा प्यारा दे कर सुगन्ध-उपहार मुझे?
प्राणेश कहाँ वह लोप हुआ किसका कैसा यह कोप हुआ!
मैं व्याकुल बैठा सोच रहा, हैं पड़ी पांखुरी उसकी कुछ ॥४॥

मदन द्विवेदी गजपुरी

---

## कोर्ट आव् वार्ड्स।

कोर्ट आव् वार्ड्स वार्डों का कोर्ट है—अर्थात् यह वह अदालत है जो अपने वार्डों के शरीर और सम्पत्ति की रक्षा करती है। वार्ड, अर्थात् संरक्षित लोग, कई प्रकार के होते हैं—

(१) शिशु (नाबालिग़) अर्थात् जिनकी अवस्था १८ वर्ष से कम है।

(२) स्त्रियाँ, जो सरकार की राय में अपनी या अपनी सम्पत्ति की रक्षा नहीं कर सकतीं।

(३) विक्षिप्त, जिनकी दीवानी अदालत अपनी सम्पत्ति की रक्षा कर सकने योग्य नहीं समझती।

(४) वे लोग, जो किसी मानसिक या शारीरिक व्यङ्ग के कारण, सरकार की राय में अपनी सम्पत्ति की रक्षा की शक्ति नहीं रखते।

(५) अन्य मनुष्य जो, सरकार की राय में, अपनी सम्पत्ति की रक्षा इस कारण से नहीं कर सकते कि उनका चाल चलन अच्छा नहीं है और वे किसी ऐसे जुर्म में दण्ड मिल चुका है जिसका क्षमा न हो सकी हो।

(६) वे मनुष्य जो सरकार की राय में ख़र्चों के कारण अपनी सम्पत्ति नहीं रख सकते।

(७) जो सरकार की राय में बिना दूसरों के ही अपना ऋण चुकाने में असमर्थ हैं।

(८) नये क़ानून के अनुसार सरकार मनुष्यों की सम्पत्ति को बिना उनकी इच्छा के अपने प्रबन्ध में ले सकती है जिन पर कि ऋण के कारण इतना ऋण हो गया हो कि उसका वार्षिक ब्याज आमदनी के ½ से अधिक हो। कल्पना कीजिए कि किसी मनुष्य की आमदनी १,६०,०००) है और उसे सरकारी मालगुज़ारी ७०,००० पड़ती है। अतएव उसे ९०,०००) की वार्षिक है। यदि ऐसे मनुष्य पर इतना ऋण हो कि उसका वार्षिक ब्याज ३०,०००) से अधिक सरकार उसे, बिना उसकी इच्छा के भी, अपने बना सकती है। ब्याज का निर्ख़ प्रायः ६) वार्षिक जोड़ा जाता है। अतएव जब किसी की रियासत पर ५,००,००० का ऋण हो जाय तो सरकार उसे वार्ड बनाने का हुक्म दे सकती परन्तु ऐसा करने के पहले सरकार उस मनुष्य ऋण करने और उसे न चुका सकने के कारण का पूरा पूरा अवसर देती है। यदि सरकार कथन में कुछ भी तत्त्व समझती है तो उसे को स्वयं प्रबन्ध करके ऋण चुका लेने का अवसर देती है।

(९) इनके अतिरिक्त भी सरकार दो की दरख़्वास्त पर उन्हें वार्ड बना लेती सरकार को यह विश्वास हो जाय कि

वत्ति की रक्षा करना सरकार का कर्तव्य है। ः देखा जाता है कि जब रियासत ऋण से ऐसी जाती है कि वह बिक गई के बराबर हो जाती ब कोर्ट होने की दरख्वास्त दी जाती है। ऐसे य में इलाक़ा कोर्ट कराने से कुछ भी लाभ ं। प्रायः ऐसी ऋणी रियासत को कोर्ट आव् र्ड्स अपने प्रबन्ध में लेने से इनकार कर देती ऋण के होते ही जो लोग अपनी रियासत कोर्ट सिपुर्द कर देते हैं उनको लाभ होता है। कोर्ट बन्ध से रुपया बचा कर ऋण दे डालती है रियासत मालिक को लौटा देती है। यह भी ा जाता है कि जो रियासत एक बार कोर्ट ने ण रहित करके मालिक को लौटा दी है वह ऋणी कर फिर कोर्ट के प्रबन्ध में आई है।

अधिकांश ज़मींदार और ताल्लुकेदार ऋणी ो चले जाते हैं और प्रबन्ध न कर सकने के रण उनकी रियासत बार बार कोर्ट के प्रबन्ध में ी है। अच्छा, तो इसका कारण क्या है और ऐसी ा में सुधार की सूरत क्या हो सकती है? ा तक विचार करने से समझ में आता इसके तीन बड़े कारण ऐसे हैं जो रियासतों को ी दिनों में ऋणी बना देते हैं.—

(१) मुक़द्दमेबाज़ी
(२) फ़ैयाशी
(३) रिश्वतादि की कुरीतियाँ

इन प्रान्तों की रियासतें प्रायः इन्हीं तीनों में एक या एक से अधिक कारणों से ऋणी हो रही इसका खुलासा सुनिए—

मुक़द्दमेबाज़ी—ताल्लुकेदारी कानून विवाद रोकने लिए बना था। परन्तु यहीं विवाद का कारण रहा है। बड़े बड़े मुक़द्दमे प्रिवी कौन्सिल तक बात के निर्णय के लिए लड़े जाते हैं कि अमुक ासल ताल्लुक़ा है या नहीं, और उसमें सालों ऐसी बात, जिससे बड़ा लड़का ही नहीं पा ा है, प्रचलित है या नहीं। यह सच है कि कुछ दालतों में ऐसी सनदें हैं जिनसे ताल्लुक़ों का होना और न होना दोनों बातें साबित हो सकती हैं, परन्तु बहुधा सनदें मिलने का सबूत पहुँचाना ही मुश्किल हो जाता है और राज्यों के सदृश रीतियों के साबित करने में बहुत ख़र्च करना पड़ता है। क्या ही अच्छा हो यदि ऐसे झगड़े अवध में ब्रिटिश इन्डियन ऐसोसियेशन और आगरे में ज़मींदार्स ऐसोसियेशन की पञ्चायत से तै करा लिये जाया करें। ऐसे मुक़द्दमे बड़े ही पेचीदा होते हैं। यह बात इतने ही से साबित है कि ऐसे मुक़द्दमों के निर्णय के लिए सरकार ने पण्डित शीतलाप्रसाद बाजपेयी की लियाक़त का एक ख़ास जज अलग ही नियत कर दिया है। यह अवध की बात हुई। आगरा प्रान्त में भी ऐसे मुक़द्दमात की संख्या कम न होगी। बहुत से ज़मींदारी घराने यह साबित करते हैं कि उनके यहाँ लड़कियों का कुछ भी हक नहीं। बड़ी बड़ी रियासतों का बिक जाना, इस बात का पक्का सबूत है।

फ़ैयाशी। इस विषय में कुछ अधिक कहने की आवश्यकता नहीं। उसका कारण पति-पत्नी की उच्च में असमानता, विद्याहीनता, बुरे चालचलन वाले कर्मचारियों और नौकरों की संगति इत्यादि है। यदि ये कारण दूर हो जायँ तो यह दोष भी दूर हो जाय।

रिश्वतादि की कुरीतियाँ। बहुत अधिक दहेज देने के कारण भी कितनी ही रियासतें ऋणी हो जाती हैं। एक लाख रुपये तक दहेज ठहराते देखा गया है। सम्भ्रान्त लोग प्रायः अपने से बड़े घराने ढूँढते हैं। इसलिए उन्हें वर के अनमाने दाम देने पड़ते हैं। ऑनरेबल सभा ने इस प्रथा को बन्द करने का उद्योग भी बहुत किया परन्तु इसमें कोई विशेष फल न हुआ। अनेक रियासतें एक ही दो रिश्वत की हो जाती हैं और लड़कियाँ बड़ी उम्र तक कुँवारियाँ ही रह जाती हैं। ऐसी भी मिसालें ही कुँवारी बातें फैली हुई हैं। परन्तु वे इतने ज़ोर पर नहीं हैं। इसलिए इसका इस पर कुछ कहने का कोई असर नहीं।

## गुलाब की पाँखुरी।

मैं प्रात घूमता हुआ टहलने लगा वाटिका में अपने ;
थे खिले गुलाब विविध रंगी कैसी सुगंध फैलाते थे।
एक साधारण सा फूल रहा वह मेरे मन को भाया है;
उसमें बढ़ बढ़ कर थे कितने पर लगे नहीं अच्छे उतने ॥१॥
अपनी अपनी रुचिही तो है, है रीत निराली दुनिया की;
अलि को चम्पा की चाह नहीं थोरों पर बन बन भटक रहा।
जब हाथ बढ़ाया लेने को हा! हृदय उसे दे देने को;
सब टूट गई पांखुरी वहीं मोती सी फैलीं बिखर बिखर ॥२॥
आनन्द मृत्यु का भी कारण कहते हैं होता कभी कभी;
क्या छू जाने ही से मुझसे वह मोदमत्त निर्जीव हुआ?
या जड़ शरीर को छोड़ प्रेममय हो कर अन्तर्धान हुआ?
मिल गया स्नेह के सागर में उसके जल का कण हो करके ॥३॥
या एकत्रित कर शरीर अपना करने में मेरा शुभ स्वागत
वह हाथ बढ़ा प्यारा प्यारा दे कर सुगन्ध-उपहार मुझे?
प्राणेश कहां वह लोप हुआ किसका कैसा यह कोप हुआ!
मैं व्याकुल बैठा सोच रहा, है पड़ी पांखुरी उसकी कुछ ॥४॥

मदन द्विवेदी गजपुरी

---

## कोर्ट आव् वार्ड्स।

कोर्ट आव् वार्ड्स वार्डों का कोर्ट है—अर्थात् यह वह अदालत है जो अपने वार्डों के शरीर और सम्पत्ति की रक्षा करती है। वार्ड, अर्थात् संरक्षित लोग, कई प्रकार के होते हैं—

(१) शिशु (नाबालिग़) अर्थात् जिनकी अवस्था १८ वर्ष से कम है।

(२) स्त्रियां, जो सरकार की राय में अपनी या अपनी सम्पत्ति की रक्षा नहीं कर सकतीं।

(३) विक्षिप्त, जिनको दीवानी अदालत अपनी सम्पत्ति की रक्षा कर सकने योग्य नहीं समझती।

(४) वे लोग, जो किसी मानसिक या शारीरिक त्रुटि के कारण, सरकार की राय में अपनी

(५) अन्य मनुष्य जो, सरकार की राय में, सम्पत्ति की रक्षा इस कारण से नहीं कर सकते कि उनका चाल चलन अच्छा नहीं है और वे किसी ऐसे जुर्म में दण्ड मिल चुका है जिसमें न हो सकी हो।

(६) वे मनुष्य जो सरकार की राय में ख़र्चों के कारण अपनी सम्पत्ति नहीं रख सकते।

(७) जो सरकार की राय में बिना रोक के ही अपना ऋण चुकाने में असमर्थ हैं।

(८) नये क़ानून के अनुसार सरकार मनुष्यों की सम्पत्ति को बिना उनकी इच्छा अपने प्रबन्ध में ले सकती है जिन पर किसी के कारण इतना ऋण हो गया हो कि ब्याज आमदनी के ३ से अधिक हो। अर्थात् किसी मनुष्य की आमदनी १,६०,०००) है और उसे सरकारी मालगुज़ारी ७०,०००) पड़ती है। अतएव उसे ९०,०००) की बाधा है। यदि ऐसे मनुष्य पर इतना ऋण हो कि उसका वार्षिक ब्याज ३०,०००) से अधिक सरकार उसे, बिना उसकी इच्छा के भी, बना सकती है। ब्याज का निर्ख प्रायः वार्षिक जोड़ा जाता है। अतएव जब इस की रियासत पर ५,००,००० का ऋण हो तब सरकार उसे वार्ड बनाने का हुक्म दे सकती परन्तु ऐसा करने के पहले सरकार उस को ऋण करने और उसे न चुका सकने के कारण का पूरा पूरा अवसर देती है। यदि सरकार कथन में कुछ भी तथ्य समझती है तो वह स्वयं प्रबन्ध करके ऋण चुका लेने अवसर देती है।

(९)

की

पहले स्तम्भ का लेख स्तम्भ की १२½ इंच चौड़ी जगह में खुदा हुआ है। उसमें ७ पंक्तियाँ हैं। अक्षरों की ऊँचाई ½ से १½ इंच तक है। लेख की नक़ल नीचे दी जाती है—

(१) सिद्धम् ॥ महाराजस्य राजातिराजस्य देवपु-
(२) त्रस्य शाहेर्वाशिष्कस्य राज्यसंवत्सरे च-
(३) तुर्विंशे २४ ग्रीष्म-मासे चतुर्थे दिवसे
(४) त्रिंशे ३० अस्यां पूर्व्वायां रुद्रिलपुत्रेण द्रोण-
(५) लेन ब्राह्मणेन भारद्वाज-सगोत्रेण मा-
(६) थ-च्छन्दोगेन इष्ट्वा सत्रेण द्वादशरात्रेण
(७) यूपः प्रतिष्ठापितः त्रिवन्तां ∞ अग्नयः ॥

अर्थात्—महाराजाधिराज देवपुत्र शाह वाशिष्क चौबीसवें राज्य-वर्ष में, ग्रीष्म-ऋतु के चौथे महीने के तीसवें दिन, भारद्वाजगोत्रीय, माथ (?) छन्दोग ब्राह्मण रुद्रिल के पुत्र द्रोणल ने द्वादश रात्रि पर्य्यन्त यज्ञ करके इस यूप की स्थापना की। त्रिवेद (गार्हपत्य, दाक्षिणाग्नि और आहवनीय) सत्र है।

इस लेख का 'माथ" शब्द ठीक ठीक नहीं पढ़ा गया। इस लेख को पुरातत्त्ववेत्ता बड़े महत्त्व का समझते हैं। कुशानवंशीय राजा कनिष्क और वाशिष्क के बीच में एक और भी राजा हो गया है। उसका ऐतिहासिक प्रमाण अब तक ठीक ठीक नहीं मिला था। इस लेख से वह मिल गया और निश्चय हो गया कि उस राजा का नाम वाशिष्क था। इसी राजा के राज्यकाल में द्रोणल ने मथुरा में १२ रात्रि पर्य्यन्त यज्ञ करके पूर्वोक्त यूप की प्रतिष्ठा की थी। उस ज़माने में ऐसी यूप-स्थापना की चाल थी। ये यूप एक प्रकार की यादगार समझे जाते थे। जो यज्ञ करता था वह उसकी याद बनी रखने के लिए यूप अवश्य गाड़ देता था। इसी से कालिदास ने रघुवंश में लिखा है—

(१) ग्रामेष्वाम्रविशेषेषु यूपच्छेदेषु कानना—सर्ग १
(२) अध्वरेष्वनिलप्रायैर्वाजिभिः—सर्ग ६
(३) वेदिभिर्हविरन्वितस्रुवाणां यूपनद्धरसनैरुपस्कृतम्—सर्ग १६

इसी वाशिष्क राजा के राज्यकाल का एक खण्डित शिलालेख साँची में भी मिला है। वह अब तक ठीक ठीक न पढ़ा जाता था। पर ईसापुर के इस यूप लेख की सहायता से उसका भी उद्धार हो गया और यह स्पष्ट विदित हो गया कि कनिष्क के सदृश वाशिष्क भी प्रतापी राजा था और उसका राज्य साँची तक फैला हुआ था।

भाषा की दृष्टि से भी ईसापुर का यूप-लेख बड़े महत्त्व का है। यह कोई अठारह उन्नीस सौ वर्ष का पुराना है। उसकी भाषा विशुद्ध संस्कृत है। उसमें जो दो एक छोटी छोटी अशुद्धियाँ हैं वे, सम्भव है, खोदने वाले की असावधानता से हो गई हों। कुशानवंशीय राजाओं के शासन-समय के अन्तर्गत पूर्व-कालीन शिलालेख प्राकृत मिली हुई संस्कृत-भाषा में और उत्तर-कालीन शिलालेख संस्कृत मिली हुई प्राकृत-भाषा में ही अब तक मिले हैं। अर्थात् पहले प्रकार के लेखों में संस्कृत अधिक है, प्राकृत कम, और दूसरे प्रकार के लेखों में प्राकृत अधिक है, संस्कृत कम। मतलब यह कि उस ज़माने में प्राकृत का प्राबल्य हो रहा था और संस्कृत का नैर्बल्य। मौर्य्य और शुङ्ग-वंशीय राजाओं के राज्यकाल में तो प्राकृत ही का सार्वदेशिक प्रचार हो गया था। इस कारण उस समय के प्रायः सभी शिलालेख प्राकृत में ही मिले हैं। संस्कृत का प्रचाराधिक्य तो गुप्त-वंश के राजाओं के समय में हुआ। इसी से उत्तरी भारत में उस समय के जितने लेख मिले हैं सब संस्कृत में हैं। इस दशा में ईसापुर के यूप स्तम्भ का भी लेख प्राकृत मिली संस्कृत में होना चाहिए था। पर है यह प्रायः विशुद्ध संस्कृत में। इस तरह की संस्कृत में खुदा हुआ जो सब से पुराना शिलालेख अब तक मिला है वह १०० ईसवी के आस पास का है। वह सत्रह रुद्रदामा के समय का है और गिरनार की एक पर्वत-शिला पर खुदा हुआ है। ईसापुर का प्रस्तुत लेख उससे भी सौ पचास वर्ष पुराना है। अतएव सिद्ध है कि उस समय,

अर्थात् सन् ईसवी के कुछ समय आगे पीछे, भी संस्कृत का यहाँ अच्छा प्रचार था। उस समय के जो शिलालेख प्राकृत या प्राकृत-मिश्रित संस्कृत में ही मिले हैं इसका कारण यह मालूम होता है कि वे प्रायः सब के सब बौद्धों और जैनों के हैं। ये लोग उस ज़माने में प्राकृत के पक्षपाती और संस्कृत के प्रचार के विपक्षी थे। इसी से इनके शिलालेखों में संस्कृत की अवहेलना हुई है। ब्राह्मण लोग आज से दो हज़ार वर्ष पहले भी संस्कृत ही का विशेष आदर करते थे और उसी में शिलालेख खुदवाते और ग्रन्थ-रचना करते थे। ईसापुर में यज्ञ करने वाला द्रोणल ब्राह्मण ही था। इसी से उसके खुदवाये हुए लेख में संस्कृत ही का प्रयोग हुआ है। विशुद्ध संस्कृत में प्राप्त हुआ यही अब तक सब से पुराना शिलालेख है। सम्भव है, और भी ऐसे ही शिलालेख पृथ्वी के पेट में दबे पड़े हों और कालान्तर में पाये जायँ।

यूपों का वर्णन शतपथ-ब्राह्मण में विस्तारपूर्वक है। यूप बहुत करके खदिर (कत्थे) के वृक्ष का होता था। "था"—इसलिए कि इस समय एक आध भूले भटके याज्ञिक को छोड़ कर शायद ही और कोई इस क्रिया-काण्ड के द्वारा स्वर्ग-प्राप्ति की इच्छा रखता हुआ यज्ञीय पशु बाँधने के लिए यूप गाड़ता हो। जिस काम के लिए यूप गाड़े जाते थे वह लकड़ी के यूप से ही अच्छी तरह हो जाता था। पशु बाँधने के लिए पत्थर तराशने की ज़रूरत नहीं पड़ती। ईसापुर के यूप उस यज्ञीय स्तूप की केवल यादगार हैं। वे पत्थर के इसलिए बनाये गये हैं कि बहुत समय तक बने रहें और यजकर्ता के यज्ञ की याद दिलाते रहें। लकड़ी के स्तूप गाड़ने से वर्ष दो वर्ष में सड़ कर वे नष्ट हो सकते हैं।

अच्छा ये यूप हैं क्या चीज़? शतपथ-ब्राह्मण से तो यही मालूम होता है कि वे पशु बाँधने के लिए यज्ञशाला में गाड़े जाते थे। इनको अपनी वर्तमान [illegible] में क्या करना चाहिए। यूँटा तो कही नहीं सकते, क्योंकि वेदवेत्ता [illegible] विद्वानों की राय है कि यूँटा कहने से यूपों [illegible] अप्रतिष्ठा होती है। इसी डर से हमने इस लेख [illegible] वैसा नहीं किया। अब यही कृपा करके बतावें कि ये "यूप" हिन्दी में भी यूप ही रहें या इनके लि[illegible] वे और कोई प्रतिष्ठासूचक नाम सुझा दें। [illegible] यूपों से जो पशु बाँधे जाते थे उनके लिए "प[illegible] शब्द का प्रयोग भी वेदज्ञ विद्वान् अनादरसूचक समझते हैं। "गवालम्भ"—वाला आलम्भ—[illegible] शायद उन्हें ऐसे पशु के लिए विशेष प्रतिष्ठासूचक ज्ञात हो। इस प्रतिष्ठाजनक शब्द-प्रयोग से शायद उस पशु का कुछ हित हो सकता हो। लोहे [illegible] जेल को ससुराल कहने से भी कैदियों का कुछ उपकार नहीं होता।

ये यूप किस तरह जङ्गल में काटे जाते थे किस तरह गढ़े जाते थे? कब, किस जगह [illegible] किस तरह गाड़े जाते थे? उनकी संख्या कितनी होती थी? उन्हें काटने, गढ़ने, गाड़ने और [illegible] पूजा करने में कौन कौन किन किन मन्त्रों का उच्चारण करता था? पशु को कौन और किस [illegible] बाँधता तथा पूजता था? यूप से बँधे हुए पशु [illegible] वहीं आलम्भ होता था या खोल कर दूसरी जगह? किसी शस्त्र से काम लिया जाता था पाश से? ये सब बातें तेलियों, कायस्थों, शास्त्रज्ञ पण्डितों के "म्लेच्छों," ने अन्य मामलों लिख डाली हैं। पर उनके कथन का अनुवाद [illegible] का साहस नहीं होता। डर लगता है कि [illegible] "सोम-याग" नामक लेख की तरह [illegible] भूलें न हो जायँ। शतपथ-ब्राह्मण में ये सब [illegible] विधिपूर्वक लिखी हुई हैं। सायण, हरिस्वामी [illegible] द्विवेद-गङ्गू ने अपनी टीकाओं में इन [illegible] और भी विशद रीति से समझा दिया। पर हम वेदज्ञ और ब्राह्मणत्व होने का दावा नहीं [illegible] सकते। इस कारण हम उनके आधार [illegible] किसी तरह कुछ लिख कर वेदवेत्ताओं का [illegible] दिखाना चाहते। भूलें हो जाने का [illegible]

ईसापुर के बुद्ध-मन्दिर का टूटा हुआ लेख।

इण्डियन प्रेस, प्रयाग।

आशा है, वेदवेत्ता विद्वान् अपनी क्रिया-शीलता कुछ मंदा का प्रयोग इधर भी करके केवल ी जानने वालों की अवगति के लिए इन बातों सविस्तर प्रकाशित करने की कृपा करेंगे। न ा से वेद-ब्राह्मणों की अप्रतिष्ठा और अनादर की सम्भावना है। कारण यह कि इस विषय मर्मज्ञ महाशय यदि कुछ न लिखेंगे तो अन्य ोगों के सहारे लोग अपनी जिज्ञासा-तृप्ति करने गे। इस दशा में यदि ये यूप को खूँटा और अज को बध कहने लगें तो कोई आश्चर्य्य नहीं। ऐसा ही होने लगे तो इस भ्रमोत्पादन के ोक दोषी हमारे वेदज्ञ विद्वान् भी अवश्य ही हो जायँगे।

---

## कामी और सती का संवाद ।

( रामचरितचिन्तामणि से उद्धृत )

कामातुर दशशीश जानकी-निकट खड़ा है,
डरता बोला, किन्तु प्रकट में बड़ा कड़ा है।
सीते ! मुझको देख तुझे डरना न चाहिए;
बनवासी के लिए व्यर्थ मरना न चाहिए।
यद्यपि राक्षसों के लिए कुछ भी नहीं अधर्म है;
तो भी तुझे प्रसन्न ही रखना मेरा कर्म है ॥१॥
सीते ! मुझको मान, तुझे भी मान मिलेगा;
अपमानित कर मुझे न तेरा काम चलेगा।
भोग-योग्य नृपसुते ! वृथा हठ-योग न कर तू;
मुझे समझ निज दास, समझ लङ्का को घर तू।
कौन वस्तु है विश्व में जिसे न ला दूँगा तुझे,
यदि निज सस्मित वदन को तनिक भर दिखला दे मुझे ॥२॥
जिसकी चढ़ पर दृष्टि भीरु ! मम झुक जाती है;
दो करके लाचार वहीं वह रुक जाती है।
तुझे बना कर स्वयं स्वयम्भू धन्य हुआ है,
मेरे सम सौन्दर्य-सिन्धु क्या अन्य हुआ है !
राक्षस-नायक विश्व का मुझको ही तू जान जा;
राम न पा सकता तुझे मेरी बातें मान जा ॥ ३ ॥
मैं तेरा हो चुका और तू मेरी होगी;
किसी भाँति है भीर ! न इसमें देरी होगी।
हो सकता है राम न मेरे दास-बराबर;
कर आहार-विहार राम से चित्त हटा कर।
भावनेश मैं जनक को सुरत बना दूँगा प्रिये !
और तुझे क्या चाहिए, आज्ञा दे उसके लिए ॥४॥
अल्प काल में नष्ट नव वयस हो जाती है;
बीत गई जो घड़ी नहीं फिर वह आती है।
अपनी अनुपम देह व्यर्थ मत मिट्टी कर तू;
छोड़ राम का ध्यान, प्रेम से मुझको वर तू।
तेरी मेरी मनसुता होगी सीते आज से—
क्यों उत्तर देती नहीं ? नाहक़ चुप है लाज से ॥५॥
दशकन्धर के वचन श्रवण कर सीता बोली,
किन्तु राम-पद से न तनिक मति उसकी डोली—
मुझसे मन को हटा लगा उसको निज-जन में;
राजनीति को समझ दशानन ! अपने मन में।
कभी भूल कर भूप को अनय न करना चाहिए;
ध्यान-सहित निज धर्म को मन में धरना चाहिए ॥६॥
क्यों गिरता है मूढ़ ! अन्ध हो काम-कूप में ?
व्यर्थ न कालिख लगा स्वयं हो भूप रूप में।
छल करके पर-वस्तु तुझे हरना न चाहिए;
निर्बल को बल-विवश कभी करना न चाहिए।
पाप-वृत्ति जिस भूप की हुई अन्य के साथ में,
रहा-सहा रहता नहीं राक्षस ! उसके हाथ में ॥७॥
जिसकी है जो चीज़ उसे वह फिर मिलती है;
सदा किसी की नहीं चालबाज़ी चलती है।
हठ ! हठ मत कर कभी बड़ा धोखा खायेगा;
केवल तेरा अयश जगत में रह जायेगा।
छल-विहीन के साथ छद्म करना अति अन्याय है;
राक्षसेश ! तू समझ जा, सविनय मेरी राय है ॥८॥
एक में सब सम्पत्ति नष्ट होती है सच की,
निर्बल दल की आह नहीं होती है हलकी।
जिसने चाह को छोड़ चाव तू मन चख दुख की,
सुख्यात तज मत पैर कोठरी में कालख की।
भूतल पर अन्याय का फल मिलता है तीव्र ही,
कुत्सित नहीं है दीखता तेरा, तू दख जा कहीं ॥९॥
कभी रहु से नहीं रोहिणी मिल सकती है,
दिवा कुमुद के बनी कुमुदिनी खिल सकती है

सदा प्रभा के साथ अपना शोभा पाती है,
पराधीन पन से हीन नहीं देखी जाती है।
भूप नहीं भूपेन्द्र तू, तो भी राक्षसराज है,
दूर! दूर हो, कुछ नहीं तुझसे मेरा काज है ॥१०॥
रामचन्द्र के साथ रही जैसे सावित्री,
द्विज-गुरु को ज्यों मोह बनाती है गायत्री।
सदा प्रभाकर साथ प्रभा जैसे रहती है,
यथा शम्भु के सङ्ग प्रेम में मग्न सती है।
वैसे ही सम्बन्ध है मेरा भी रघुराज से,
मुझे नहीं कुछ काज है नीच निशाचर-राज से ॥११॥
निर्गन्धा हो भूमि, भूप से हीन अनल हो,
स्पर्श-रहित हो यही रूप के सहित अनिल हो।
रावण! ये हो जायँ सभी अघटित घटनायें;
पर मन डिगता नहीं सती का लोभ दिखाये।
राज्य, रत्न, धन साथ में आते जाते हैं नहीं;
धर्म हीन त्रैलोक्य में जन सुख पाते हैं नहीं ॥१२॥
चल यौवन ही नहीं, किन्तु जीवन भी चल है—
जिसको है यह ज्ञान उसी का जन्म सफल है।
इसी लिए लङ्केश! पतिव्रत मैं पालूँगी;
तेरे मुख पर राख अयश की मैं डालूँगी।
टालूँगी जीती नहीं निगमागम-आदेश को;
देश-वेश-प्रतिकूल जो धिक्कृति उस सुख-लेश को ॥१३॥
सुन कर तेरे कटुक वचन मैं सुख पाता हूँ;
सीते! तनिक न क्रोध-हाथ में मैं आता हूँ।
स्मर-पीड़ित को मुझे अधिक मत पीड़ित कर तू;
कर जोड़े हूँ खड़ा दुःख सब मेरे हर तू।
पर सीधेपन से नहीं काम निकलता है कभी,
इसी लिए निज हाथ से दण्ड तुझे दूँगा अभी ॥१४॥
रूप-जाल में फँसा हुआ हूँ सीते! तेरे;
जो चाहे सो कहे, मुझे हैं मन्त्र मेरे।
और नहीं तो भजा आज तू बनती ऐसे—
वश करलेता मुझे शीघ्र ही होता जैसे।
इन्द्राणी को भी अभी चाहूँ तो वश में करूँ;
अपने मन में सोच तू, फिर मैं क्यों तुझसे डरूँ? ॥१५॥
त्रिलोक चाहे जिस मनोहर वस्तु वही है;
मैं जो तेरा दास हुआ बस हेतु यही है।
मेरे हाथों अन्त करावेगी यदि अपना—
तो फिर मेरे लिए सुमुखि! होगा सुख सपना
तोभी मेरी बात को जो तू मानेगी नहीं,
कुछ दिनों के बाद मैं तुझको मारूँगा वहीं
पहले कामासक्त क्रोध के वश होता है,
फिर वह गिर कर मोह-गर्त में स्मृति खोता है।
होता है हतबुद्धि यही फिर स्मृति को खो कर,
हो जाता है नष्ट स्वयं फिर वह रो रो कर।
रावण! कामासक्त क्यों होता है मेरे लिए
मेरा कहना मान जा कहती हूँ तेरे लिए ॥
राक्षसेश! क्या तुझे काल ने खाया है?
इसी लिए हित-वाक्य नहीं सुनता मेरा है।
क्यों करके अन्याय कलङ्कित तू होता है?
शीघ्र चेत जा, मोह-दिवस में क्यों सोता है?
पुरजन परिजन भी तुझे क्यों समझाते हैं नहीं
क्या ये तेरे साथ में दुख सुख पाते हैं नहीं
अन्यायी के निकट नहीं कोई जाता है,
दुखी देख कर उसे जगत अति सुख पाता है।
पामर हो कर उच्च-वंश क्यों तू बनता है?
हो कर के बक हंस-चाल तू क्यों चलता है?
साधु जनों की दृष्टि से राक्षसेश तू गिर गया,
मानो इस संसार में जीताही तू मर गया ॥१९॥
साधु-वेश धर प्रथम मुझे तूने फुसलाया,
वश में करके अहो भयङ्कर वपु दिखलाया;
क्षत्रियकर से हीन मुझे क्यों हुए देता है?
निज प्रज्ञा से काम नहीं क्यों तू लेता है?
मूढ़! किसी की एक सी राज्यश्री रहती नहीं;
अत्याचार के भार को मही सदा सहती नहीं।
नभ में निज-गति देख तनिक भी गर्व न कर तू।
राक्षसेश! मत शलभ तुल्य उड़ करके मर तू!
शस्त्र-सुसज्जित सभी सुभट हैं तेरे तो क्या?
राज्य, सैन्य से रहित राम मेरे हैं तो क्या?
न्यायपरायण ईश वह न्यायी जन के हाथ में—
विजय-जयन्ती को कभी देगा ही रह साथ में ॥२१॥
भारत की मैं पतिव्रता हूँ सुन दशकन्धर!
नश्वर है जब देह मृत्यु का फिर क्या है डर?

धन्य धर्म के लिए निछावर जो होती हैं;
कीर्ति-बीज को विपुल विश्व में वे बोती हैं।
क्षणिक काम सुख के लिए धर्म न छोड़ूँगी कभी;
कुल मर्यादा से नहीं मैं मुख मोड़ूँगी कभी ॥२२॥
मानस ही में हंस-किशोरी सुख पाती है,
नहीं चन्द्र के बिना चकोरी सुख पाती है।
सिंहसुता क्या कभी स्यार से प्रेम करेगी ?
क्या पत्तर का हाथ कुलस्त्री कभी धरेगी ?
धर्म-पिता मैं आज से शरण मानूँगी तुम्हें;
रघुनायक के पास यदि तू पहुँचा देवे मुझे ॥२३॥
पर तू अच्छी बात कभी क्या सुन सकता है ?
मुक्ता को क्या कभी चकोरक चुन सकता है ?
पूर्व पुण्य सब क्षीण हुए मानों अब तेरे।
सभी काम विपरीत लगे होने सब तेरे।
रोवेगा तू नरक में; रोवेगा निज-राज को,
ईश्वर रक्खेगा सदा राक्षस मेरी लाज को ॥२४॥

---

## मिलन।

### ( १ )

विधाकान्त मुकर्जी के उद्योग से आज-कल प्रयाग विद्यालय जबसे खुला है तब से कानपुर के बालक और बालिकायें इसमें एक ही साथ पढ़ने का स्वर्गीय आनन्द पाने लगी हैं। बालिकाओं और बालकों का प्रेम भी वैसा निर्मल है। इसमें स्वार्थ की गन्ध भी नहीं; इन्द्रिय सम्भोगजन्य सुख की वेश भी नहीं। वह निर्मल प्रेम है, वह शुद्ध प्रेम है। इसमें प्रेम के सिवा और कुछ नहीं। पर, अभागे भारत के अधिकांश के जीवन में तो वह प्रेम कहीं ही नहीं। इसी लिए वे बड़े होने पर शुद्ध प्रेम से वंचित रह जाते हैं। वे शुद्ध प्रेम का अनुमान ही नहीं कर सकते। वह बड़े ही सौभाग्य की बात है।

प्रयाग विद्यालय में कोई तीस लड़के और इतनी ही लड़कियाँ हैं। सबकी उम्र इस साल के अन्दर है। इन में एक लड़का रामानन्द भी है। वह शुरू का तेज है। विद्यालय खुले कभी किसी ने उसे नहीं देखा। वह परीक्षा-फल सुनाने के दिन सबसे पहले उसी का नाम सब सुना करते हैं। रामानन्द और मोहिनी, जो पण्डित देवधर इञ्जीनियर की एकमात्र लड़की है, साथ साथ पढ़ने आया करते और साथ ही साथ जाया करते हैं। दोनों एक ही क्लास में हैं। अपने क्लास में रामानन्द प्रथम और मोहिनी सदा द्वितीय रहा करती है। इस समय इनकी अवस्था कोई दस वर्ष की है। रामानन्द ग़रीब बाप का लड़का है। यद्यपि उसके शरीर पर रेशम के कपड़े और पांव में डासन के जूते किसी ने नहीं देखे, पर उसका गबरून का कोट और हिन्दुस्तानी जूता कभी मैला और टूटा हुआ भी नहीं देखा गया। रामानन्द के पिता बहुत ईमानदार हैं। कमसरियट में नौकर हैं। अपने एकमात्र पुत्र रामानन्द की बुद्धि प्रखरता और संयमता देख कर वे मन ही मन ईश्वर को धन्यवाद दिया करते हैं और अपने भविष्य का चमकीला भाग्य ध्यान में ला ला कर बहुत सुखी हुआ करते हैं।

तीन वर्ष गुजर गये। जून का महीना है। इलाहाबाद-विश्वविद्यालय की प्रवेशिका परीक्षा के फल का इन्तज़ार हो रहा है। विद्यालय बन्द है। छात्रालय में रहने वाले विद्यार्थी अपने अपने घर चले गये हैं। पर सो कहाँ है गज़ट की प्रतीक्षा में है। रामानन्द और मोहिनी ने भी प्रवेशिका परीक्षा दी है। पर इन दोनों को परीक्षा फल जानने के लिए कभी किसी से विशेष श्रम नहीं देना। रामानन्द रोज़ शाम को मोहिनी के बँगले पर आया करता है और उसके साथ मिल कर कल्पना-जल्पना और सम्भाव्य-चर्चा किया करता है। रामानन्द शहर में रहता है। मोहिनी के पिता १२००) मासिक तनख़्वाह पाते हैं। इस लिए वे बड़े ही ठाठ से शहर के बाहर एक बहुत ही बढ़िया बँगले में रहते हैं। मोहिनी कभी कभी अकेली दिल्लगी के लिए रामानन्द के घर आया करती है। पर इसका आना कभी कभी है और रामानन्द का आना नैमित्तिक।

[illegible] रामानन्द अपने कमरे में बैठा हुआ अपनी बेटी की एक कविता पढ़ रहा था कि इतने में दिल्लगी की घड़ी की आवाज़ इसके कान में पड़ी। रामानन्द का अध्ययन अच्छा लड़का था। पुस्तक से आज कल दिल्लगी इस आवाज़ से बिलकुल कम हो। इसकी घण्टा की इच्छानुसार में वह कभी कभी बहुत कष्ट का अनुभव करता था। पर, आज की घण्टा की आवाज़ इसको अच्छा [illegible]

आवाज़ के साथ कुछ ऐसी मिली हुई मालूम हुई कि उसका चित्त एकदम उस मृदु-मधुर टनटनाहट की ओर खिँच गया। इस बात को लिखने में और पाठकों के पढ़ने में ज़रूर दो चार सेकन्ड लगेंगे, पर, मानसिक जगत् में यह व्यापार सेकन्ड के कितने हज़ारवें हिस्से में घटित हो गया, इसका निर्णय नहीं किया जा सकता। जब रामानन्द ने देखा कि वह पैरगाड़ी उसी के द्वार पर रुक गई तब उसकी उत्कण्ठा और भी बढ़ गई। आवाज़ से उसने पहचान लिया कि यह सिवा मोहिनी के और कोई नहीं। इतने में मोहिनी उसके कमरे में आ गई—

"मोहिनी, कुशल तो है? इस समय क्यों कष्ट किया?"

"रामी, बड़ा ही शुभ समाचार सुनाने आई हूँ। पर इसका मिहनताना क्या दोगे। पहले यह बताओ तो सुनाऊँ"।

"मोहिनी, मिहनताने में मुझ ग़रीब के पास है ही क्या, जो तुम लक्ष्मी-स्वरूपिणी की भेंट करूँ? यह शरीर और यह मन भी मेरा—"

बात समाप्त न हुई थी कि मोहिनी ने तार का एक लिफ़ाफ़ा रामानन्द के हाथ में दे दिया और स्त्री-जन-सुलभ मुसकराहट के साथ कहा—"अच्छा न सही, लो इसे पढ़ो।"

रामानन्द ने तार को लिफ़ाफ़े से निकाल कर पढ़ा। उसमें लिखा था—

Allahabad.

Ramanand and Mohini stood first and second in Matriculation. My best congratulations.

Radha Krishna.

तार पढ़ कर रामानन्द ने कहा—

"आपको बधाई है"।

मोहिनी ने हँसते हुए जवाब दिया—

"और आपको भी"।

इसके बाद बहुत देर तक वे दोनों अपने कालेज-शिक्षा के विषय में आलाप करते रहे।

(२)

'मेरे मन कछु और है कर्ता के कछु और'

रामानन्द और मोहिनी कालेज में एक साथ पढ़ने के कारण देख रहे थे कि इनके दो में रामानन्द के लिए को बढ़ाव आने के लिए ज़रूरी हुक्म मिला। रामानन्द को छोड़ कर शिवानन्द जाना पसन्द न करते थे। वे पढ़ने के लि सन्तान को आँख से ओझल न करने के हिन्दुस्तानी बेतरह जकड़े हुए थे। रामानन्द ने यह समाचार बालपन की सहपाठिनी मोहिनी को सुनाया तो वह हो गई। अन्त में वे दोनों, जो आज तक मिले हु जुदा हुए और उनके बीच में सैकड़ों कोस का अ होगया। शिवानन्दजी कलकत्ते में एक ख़ास काम पर हुए। वहाँ जाकर उनका भाग्य चमका। डेढ़ सौ रुपये की तनख़्वाह से एकदम उनकी तनख़्वाह ५ मासिक हो गई। राय साहिब का ख़िताब भी उन्हें मिला। कलकत्ते के एक कालेज में दाख़िल होकर रामानन्द ने अपनी प्रखर प्रतिभा का परिचय होनहार युवकों के साथ बैठ कर देना शुरू किया। मोहिनी बराबर रामानन्द और रामानन्द के पत्र बराबर मोहिनी पास जाया करते थे। पर, न मालूम क्या घटना हो एक दिन शिवानन्द अपने प्रिय पुत्र रामानन्द के मोहिनी के पिता पण्डित देवधर का एक पत्र देकर हुए चले गये—"बेटा, इसमें जो आज्ञा दी गई है पालन करना तुम्हारा कर्तव्य है"।

रामानन्द ने पत्र खोला। उसमें लिखा था—

"कुछ विशेष कारणों से मैं मोहिनी और रामान पत्र-व्यवहार जारी रखना उचित नहीं समझता। मैंने मना कर दिया है कि वह कोई पत्र भैय्या रामानन्द लिखे। आप भी कृपा करके रामानन्द को आज्ञा दें कि वह कोई पत्र भविष्य में मोहिनी को न लिखे। मुझे पूर्ण है कि आपकी आज्ञा को वेदवाक्य समझने वाला रा आयन्दा कोई पत्र उसको न लिखेगा"।

रामानन्द इन पङ्क्तियों को पढ़कर सन्नाटे में आ उसका शरीर चक्कर खाने लगा। वह आराम कुर्सी पर बैठ गया।

(३)

इस घटना को हुए चार वर्ष गुज़र गये। इस विश्वविद्यालय का परीक्षाफल अभी अभी प्रका है। बी० ए० में सबसे पहला नाम रामानन्द का है। बाहर बैरोमीटर ने अपनी सूचना में जो इस

युवक की बड़ी प्रशंसा की है। यह पहला अवसर है कि
ई प्रान्त का नवयुवक कलकत्ते के विश्वविद्यालय की बी०
परीक्षा में पहले नम्बर पर पास हुआ है।

रामानन्द के बी० ए० होते ही भारत-सरकार ने सिविल
स की तैयारी के लिए उसे यथानियम छात्र-वृत्ति दी।
शिवानन्द नहीं चाहते कि रामानन्द जहाज़ पर पांव
कर सामाजिक बन्धन छिन्न करे। इस बात का पता जब
तरियट के बड़े अफ़सर को लगा तब उसने शिवानन्द को
या और उन्हें बहुत समझाया। उसने कहा, इसमें
अकारण हठ न करनी चाहिए। पुत्र की उन्नति, अफ़-
का कहना, योरप से लौट कर भारत में कलक्टरी मिलने
लोभ—इन सब बातों ने मिल कर शिवानन्द के भोले
धर्म्म-भाव-पूर्ण मन पर विजय प्राप्त की।

रामानन्द को हिन्दी से बड़ा प्रेम था। समय मिलने
वह हिन्दी के उत्तमोत्तम ग्रन्थ पढ़ता और समाचारपत्रों
द में पहले हिन्दी के अख़बार देखा करता था। हिन्दी
ुराबी पर वह दुरुस्त था। ज्यों ज्यों वह अन्य भाषाओं
ग्रन्थ पढ़ता त्यों त्यों उसके मन में हिन्दी की हीनता
सन्ताप अधिक होता जाता। जिस अच्छे ग्रन्थ को वह
ता उसका आशय थोड़े में हिन्दी में लिखने की उसकी आदत
गई थी। इस तरह लिखते लिखते उसके पास कापियों
ियां भर गई थीं। विलायत जाते समय ज़रूरी असबाब
साथ हिन्दी की कापियों का एक पुलिन्दा भी उसने रख
या। रामानन्द को खड़ी बोली की कविता से विशेष प्रेम
। वह स्वयं भी कविता लिखता था। पर, किसी पत्र में
ी तक उसकी एक पंक्ति भी न छपी थी। हां—ब्रजभाषा
ाम खड़ी बोली—का स्वयं झगड़ा जब उठा था तब उसने
ल्पित नाम देकर अनेक युक्ति-पूर्ण लेख खड़ी बोली के
में लिखे थे। इस समय हिन्दी साहित्य-सेवियों के मन में
"भाईपन" का परिचय पाने की बड़ी लालसा उत्पन्न
ई थी। पर रामानन्द ने पहले ही सम्पादक से इक़रार करा
या था कि किसी तरह भी मैं तुम्हारा नाम न
ट करूंगा।

इंगलैंड की स्वतन्त्रतामूलक वायु के पहले ही झोंके
रामानन्द के मस्तिष्क को देश-हित के विचारों से भर
या। उसने यह बात ख़ूब अच्छी तरह जानली कि बिना
मातृ-भाषा की उन्नति के देश की यथार्थ उन्नति होना सम्भव
नहीं। अतएव उसने अपने हिन्दी बस्ते को निकाला। फिर
उसने विविध विषयों पर पढ़ी हुई अनेक पुस्तकों का सारांश
भिन्न भिन्न लेखों की शक्ल में लिखना शुरू किया।
रामानन्द को दो ही काम थे। आई० सी० एस० (I.C.S.)
की पाठ्य पुस्तकें पढ़ना और हिन्दी-लेख लिखना। सिर्फ़
इन दो कामों में लीन रामानन्द लन्दन में इस तरह रहने
लगा जैसे कोई जङ्गल में रहता हो। थोड़े ही दिनों के
परिश्रम से उसने कोई २१ लेख लिख कर तैयार कर लिये।
एक दिन उसने उन सब का एक पुलिन्दा बना कर हिन्दी
की सर्वोत्तम मासिक पत्रिका "वैजयन्ती" के सम्पादक के
नाम भेज दिया। ये लेख जो क्रमपूर्वक "भ्रमर" के नाम
से वैजयन्ती में छपे तो उसके हजारों नये ग्राहक हो गये।
घर घर चाव से ये लेख पढ़े जाने लगे। जिन विषयों का
गुमान भी हिन्दी पाठकों को न था उन शास्त्रीय विषयों
पर सुविस्तृत लेख पढ़ कर हिन्दी-हितैषी "भ्रमर" की
विद्वत्ता, योग्यता, सारग्राहिता और लेखन चातुर्य्य पर मुग्ध
हो गये।

कुछ समय बाद रामानन्द ने एक छोटा सा खण्ड-काव्य
लिखा। उसमें उसने एक बड़ी मनोमोहक कहानी, खड़ी
बोली में, पद्य-बद्ध की। जिस समय यह काव्य वैजयन्ती में
निकला उस समय हिन्दी जगत् में खलबली मच गई।
यह काव्य उन दोषों से बिलकुल ही शून्य था जिनको
खड़ी बोली के विरोधी खड़ी बोली के काव्य के लाज़िमी
दोष कहा करते थे। इस काव्य के प्रत्येक पद्य—प्रत्येक
पंक्ति में प्रेम रस भरा हुआ था। ऐसा अच्छा काव्य
आज तक खड़ी बोली में न निकला था। संस्कृत में
कालिदास और अंगरेज़ी तथा हिन्दी में सूर और तुलसी के
काव्यों की तरह लोग इसके पारायण करने लगे। मई की
वैजयन्ती में यह काव्य निकला और जून की वैजयन्ती में
इसकी समालोचना का निकलना शुरू हो गया। समा
लोचना के लेखक ने भी अपना नाम न दिया था। लेख
के अन्त में "समर" लिखा हुआ था। जब जून की
वैजयन्ती कहीं जुलाई में लन्दन पहुँची और रामानन्द ने
अपने काव्य पर सुविस्तृत और सारपूर्ण समालोचना पढ़ी
तब वह दङ्ग रह गया। उसने देखा कि उसके काव्य के

आवाज़ के साथ कुछ ऐसी मिली हुई मालूम हुई कि उसका चित्त एकदम उस मृदु-मधुर टनटनाहट की ओर खिंच गया। इस बात को लिखने में और पाठकों के पढ़ने में ज़रूर दो चार सेकन्ड लगेंगे, पर, मानसिक जगत् में यह व्यापार सेकन्ड के कितने हज़ारवें हिस्से में घटित हो गया, इसका निर्णय नहीं किया जा सकता। जब रामानन्द ने देखा कि वह पैरगाड़ी उसी के द्वार पर रुक गई तब उसकी उत्कण्ठा और भी बढ़ गई। आवाज़ से उसने पहचान लिया कि यह सिवा मोहिनी के और कोई नहीं। इतने में मोहिनी उसके कमरे में आ गई—

"मोहिनी, कुशल तो है? इस समय क्यों कष्ट किया?"

"रामी, बड़ा ही शुभ समाचार सुनाने आई हूँ। पर इसका मिहनताना क्या दोगे। पहले यह बताओ तो सुनाऊँ"।

"मोहिनी, मिहनताने में मुझ ग़रीब के पास है ही क्या, जो तुम लक्ष्मी-स्वरूपिणी की भेट करूँ? यह शरीर और यह मन भी मेरा—"

बात समाप्त न हुई थी कि मोहिनी ने तार का एक लिफ़ाफ़ा रामानन्द के हाथ में दे दिया और स्त्री-जन-सुलभ मुसकराहट के साथ कहा—"अच्छा न सही, लो इसे पढ़ो।"

रामानन्द ने तार को लिफ़ाफ़े से निकाल कर पढ़ा। उसमें लिखा था—

Allahabad.

Ramanand and Mohini stood first and second in Matriculation. My best congratulations.

Radha Krishna.

तार पढ़ कर रामानन्द ने कहा—

"आपको बधाई है"।

मोहिनी ने हँसते हुए जवाब दिया—

"और आपको भी"।

इसके बाद बहुत देर तक वे दोनों अपने कालेज-शिक्षा के विषय में बातचीत करते रहे।

(२)

'मेरे मन कछु और है कर्ता के कछु और"

रामानन्द और मोहिनी कालेज में एक साथ पढ़ने के स्वप्न देख रहे थे कि इतने ही में रामानन्द के पिता को बदली जाने के लिए ज़रूरी हुक्म मिला। रामानन्द को घोड़ा शिवानन्द जाना पसन्द न करते थे। वे पढ़ने के लि सन्तान को और से बेफ़िक्र न करने के हिन्दुस्तानी बेतरह जकड़े हुए थे। रामानन्द ने यह समाचार बालपन की सहपाठिनी मोहिनी को सुनाया तो वह हो गई। अन्त में वे दोनों, जो आज तक मिले जुदा हुए और उनके बीच में सैकड़ों कोस का होगया। शिवानन्दजी कलकत्ते में एक ख़ास काम हुए। यहां जाकर उनका भाग्य चमका। डेढ़ी रुपये की तनख़्वाह से एकदम उनकी तनख़्वाह मासिक हो गई। राय साहिब का ख़िताब भी उन्हें मिला कलकत्ते के एक कालेज में दाख़िल होकर रामानन्द अपनी प्रखर प्रतिभा का परिचय होनहार युवकों के साथ बैठ कर देना शुरू किया। मोहिनी बराबर रामानन्द और रामानन्द के पत्र बराबर पास जाया करते थे। पर, न मालूम क्या घटना एक दिन शिवानन्द अपने प्रिय पुत्र रामानन्द मोहिनी के पिता पण्डित देवधर का एक पत्र देकर हुए चले गये—"बेटा, इसमें जो आज्ञा दी गई पालन करना तुम्हारा कर्तव्य है"।

रामानन्द ने पत्र खोला। उसमें लिखा था—

"कुछ विशेष कारणों से मैं मोहिनी और रमा पत्र-व्यवहार जारी रखना उचित नहीं समझता। मैंने मना कर दिया है कि वह कोई पत्र भैय्या रामानन्द लिखे। आप भी कृपा करके रामानन्द को वह कोई पत्र भविष्य में मोहिनी है कि आपकी आज्ञा आयन्दा कोई पत्र

रामानन्द इन उसका शरीर चक्कर चारपाई लेट गया।

इस घटना विश्वविद्यालय है। बी० ए० है। याद्दश

रामानन्द ने लेख को पढ़ना शुरू किया। भट्टाचार्य्य हर जाकर अपने बाग़ीचे से कुछ फल लाने के लिए ने अपने माली तेजराम को आज्ञा दी। लेख के दो पृष्ठ भी समाप्त न हुए होंगे कि रामानन्द सहसा पड़े—"क्या यह सच है ? अद्भुत व्यापार ! विलक्षण !" आदि वाक्य उनके मुँह से निकलने लगे।

इसी समय भट्टाचार्य्य महाराय कमरे में लौट आये। ा देख कर रामानन्द ने कहा—

"महाराज, जो रहस्य आप आज तक छिपाये हुए थे, ार बार पूछने पर भी जिसे आपने नहीं बताया, उसे आपने स्वयं ही खोल दिया ! आश्चर्य्य तो देखिए"।

भट्टाचार्य्य ने जल्दी में पूछा—"क्या, लेखक का असली आपको मालूम हो गया" ?

रामानन्द ने—"हां, देखिए न" कह कर लेख का ा पृष्ठ भट्टाचार्य्यजी के सामने रख दिया। उसमें एक सटा हुआ था और उसके नीचे लिखा था—

लिखित भट्टाचार्य्यजी की सेवा में सादर समर्पित

मोहिनीबाला, एम० ए०-बी०,

पी लिट्, हिन्दू-धर्म्म कालेज, बनारस।

इसी फोटो पर भट्टाचार्य्यजी ही के हाथ का लिखा था—

सुपत्नि 'मिलन' कथानोचिता

कमल (ि ी)

रामानन्द के आनन्द का आज पार नहीं। मोहिनी के सहसा दुःख के कारण ही उन्होंने "मिलन" काव्य ा था। भट्टाचार्य्यजी ने अत्यन्त-गम्भीर भाव में बहुत देर निस्तब्धता तोड़ी। वे बोले—"तो क्या आप श्रीमती ीकाकाल से परिचित हैं ?"

रामानन्द इसका उत्तर देने ही को थे कि फिर दरवाजा ा और चपरासी एक और कार्ड लेकर कमरे में आया। देखते ही भट्टाचार्य्यजी का चेहरा शुद्ध स्वर्ण-सदृश-सम ा बना और "दो मिनिट के लिए क्षमा कीजिए"—ा हुए वे बाहर गये। कुछ क्षण बाद ही रामानन्द ने ही और भट्टाचार्य्य को कमरे में प्रवेश करते देखा। ेखा एम० ए०-बी० का बाना धारण की। देखते ही रामानन्द मोहिनी को पहचान गये। पर मोहिनी की ाभिज्ञता की परीक्षा लेने के लिए वे चपरासी के हाथ से लिये चुपचाप बैठे रहे। मोहिनी ने रामानन्द को गबरुन का कोट और हिन्दुस्तानी जूता पहने देखा था। उस समय वे एक साधारण विद्यार्थी थे। पर आज वे सोलह आना साहब बने कोट-पैन्ट डाटे थे। इँगलैंड में रहने के कारण उनका शरीर-सौष्ठव और चेहरे का वर्ण भी पहले से बहुत कुछ बदल गया था। आख़िर, मोहिनी ने धोखा खाया और वह दूसरी ओर भट्टाचार्य्यजी के सामने कुरसी पर बैठ कर उनसे बातचीत करने लगी। मानों उसने इन साहब बहादुर को देखा ही नहीं। भट्टाचार्य्यजी से बड़े ही कोमल स्वर में मोहिनी ने कहा—

"मुझे क्षमा कीजिए। मैं परसों शाम को यहां आ गई थी। पर आपके दर्शन इससे पहले न कर सकी"।

भट्टाचार्य्य—"मुझे, आपने अपने आने की मुझे ख़बर तक न की"।

मोहिनी—"मुझे स्वयं ही न मालूम था कि इसी सप्ताह मुझे यहां आना होगा"।

बड़े स्नेह से भट्टाचार्य्य ने पूछा—"कुशल तो है न" ?

मोहिनी बोली "आपका अनुग्रह है। त्रिवेणी की सम्पत्ति के विषय में यहां के प्रसिद्ध वकीलों से एक बहुत ही ज़रूरी सलाह करने के लिए मुझे यहां सहसा आना पड़ा"।

भट्टाचार्य्य—"समझा"।

मोहिनी ने कुछ जोर से पूछा—"कहिए, कई महीनों से 'भ्रमर' महाशय का कोई लेख वैरकपुरी में नहीं छपा। क्या कारण है ? ऐसा लेखक हिन्दीसाहित्य में दूसरा नहीं। दुःख है, आपने उन्हें अपना नाम न बताने की इतनी सख्त ताकीद कर दी है। अन्यथा मैं तो उनके दर्शन करने आने की भी सलाह देती"।

इन बातों ने रामानन्द के हृदय में त्रिवेणी की आशा और बढ़ा दी।

भट्टाचार्य्य ने मुस्कराते हुए कहा—"और आपके सदृश सहृदय को हिन्दी-साहित्य में दूसरा नहीं, यह कहने की मुझे आवश्यकता है"।

मोहिनी हंसते हुए बोली—"धन्यवाद भट्टाचार्य्यजी। मैं तो हिन्दी की एक तुच्छ सेविका हूँ"।

भट्टाचार्य्य ने कुछ स्मरण हो आने के लिए का स्वरूप धारण किया। उन्होंने कहा—

भीतरी से भीतरी और बारीक से बारीक गुण-दोषों का बहुत ही अच्छा विवेचन समालोचना में किया गया है। उसने देखा कि समालोचना की भाषा बड़ी प्रौढ़, उसका शब्द-विन्यास बड़ा सुन्दर और उसकी आक्षेपोक्तियाँ बड़ी रसीली हैं। इन बातों ने रामानन्द के मन में समालोचक के विषय में बड़ी श्रद्धा पैदा कर दी। उसने बड़ी कृतज्ञता से सिर झुका कर ईश्वर का धन्यवाद किया। उसने कहा, ईश्वर ही की कृपा से हिन्दीजगत् में भी ऐसे अच्छे समालोचक पैदा होने लगे। आज से रामानन्द बड़ी व्यग्रता से वैजयन्ती की प्रतीक्षा करने लगा। क्योंकि उसके उक्त अङ्क में समालोचना का सिर्फ़ प्रारम्भिक अंश ही छपा था।

( ४ )

पण्डित शिवानन्द के आनन्द की सीमा नहीं। आज उनके पास सेक्रेटरी आव् स्टेट का तार लन्दन से आया है। उसमें उन्होंने रामानन्द के सिविल सर्विस परीक्षा में सर्वोच्च स्थान पाने की बधाई दी है। इसके दूसरे ही दिन भारतवर्ष के कुल दैनिक पत्रों में रामानन्द की प्रशंसा में टिप्पणियाँ निकल गईं। इसके बाद शीघ्र ही दैनिक पत्रों में ख़बर का तार छपा कि इस वर्ष सिविल सर्विस परीक्षा में उत्तीर्ण पहले चार छात्र कहाँ कहाँ नियुक्त होंगे। रामानन्द इलाहाबाद में नियुक्त हुए।

( ५ )

वैजयन्ती-सम्पादक पण्डित मुखदमूषण भट्टाचार्य बड़े वेदज्ञ पुरुष हैं। साहित्य, इतिहास और दर्शन की तो आप अच्छी मूर्ति हैं। ये कई ग्रन्थ भी हैं। देश भर में आपकी बड़ी ख्याति है। वैजयन्ती प्रयाग से प्रकाशित होती है। भट्टाचार्य महाशय का बङ्गला ख़ासे अच्छे ढङ्ग से है। [illegible] ब्लाटिङ्ग पेपर (सोख़्ता काग़ज़) पास ही रखा हुआ इन चीज़ों को देख कर मालूम होता है कि यह [illegible] रोज़ बदला और साफ़ किया जाता है। दूसरी ओर [illegible] और चाकू आदि हैं। कई तरह की पेंसिलें और [illegible] रक्खे हुए हैं। बीच में विज़िटिङ्ग कार्ड्स रखने [illegible] एक निहायत ख़ूबसूरत रकाबी है। बिजली की [illegible] डोरा मेज़ के एक कोने में बँधा हुआ है। [illegible] कैलेन्डर घड़ी के नीचे लटक रहा है। उसी के पास [illegible] सरस्वती का एक तैल चित्र टँगा है। भट्टाचार्य [illegible] से अख़बार पढ़ रहे हैं। इतने में कमरे का द्वार [illegible] चपरासी एक कार्ड लाया। कार्ड देखते ही भट्टा[illegible] झटपट बाहर गये और कुछ क्षण के बाद ही मित्र [illegible] का हाथ पकड़े हुए कमरे में वापिस आये।

हँसते हुए भट्टाचार्यजी ने कहा—"आज [illegible] ऊपर बड़ा अनुग्रह किया"।

रामानन्द ने बड़ी शिष्टता से उत्तर दिया—"[illegible] कई दिनों से इधर आने को सोच रहा था। [illegible] काम की वजह से अवकाश ही नहीं मिलता। [illegible] से आज आ पाया हूँ"।

भट्टाचार्य—"आपके लेखों और [illegible] सुमधुर काव्य—'मिलन' से हमारी पत्रिका की [illegible] हुई है। मेरे पास यथेष्ट शब्द नहीं जो उनमें [illegible] धन्यवाद करूँ"।

रामानन्द—"हिन्दी के सेवाक्षेत्र में मैं [illegible] दोनों ही नयी हैं। फिर कौन किसका धन्यवाद [illegible] कहिए, मेरे काव्य के समालोचक महोदय का [illegible] लेख तो वैजयन्ती में छपने के लिए नहीं आया"।

भट्टाचार्य—"हाँ आया है"। यह कह [illegible] भट्टाचार्यजी उठे और मेज़ की दराज़ को खोल कर [illegible] काग़ज़ का एक लेख निकाल लाये। मोटी सी [illegible] को दूर से ही देख कर रामानन्द का हृदय काँप [illegible]

लेख को रामानन्द के हाथ में देते हुए भट्टा[illegible] बोला—"यह देखिए, उन्हीं का लिखा हुआ [illegible] लेख आया है। वैजयन्ती की आगामी संख्या का [illegible] अंश होगा। इसमें समालोचक के गुण-दोष [illegible] बड़े विस्तार से लिखे हैं। क्या देखिए तो सही"

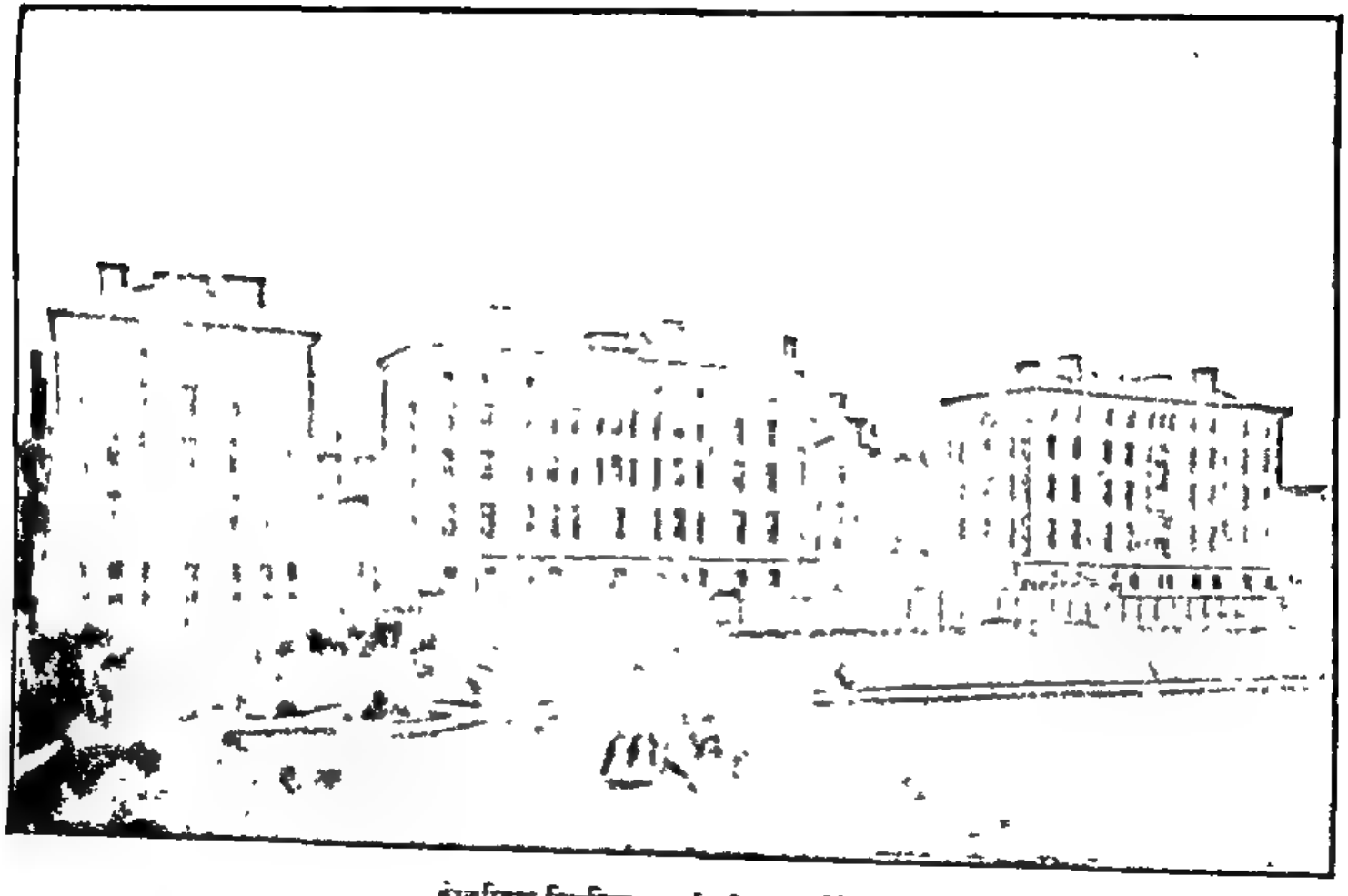

कोलम्बिया-विश्वविद्यालय की नीव इमारतें।

[illegible], [illegible], इलाहा।

"हाँ, आप 'भ्रमर' से मिलना चाहती हैं! वे भी आजकल प्रयाग आये हुए हैं। आप मिल लीजिए। पर आपको भी अपनी ज़िद छोड़ कर उनको पहले पत्र द्वारा यह सूचना देनी होगी कि आप ही उनके काव्य की समालोचिका, अपने शब्दों में 'कमल' और मेरे शब्दों में 'कमलिनी' हैं। कहिए मंजूर है?"

मोहिनी—"प्रयाग में वे कहां ठहरे हैं, यह तो बता दीजिए"।

भट्टाचार्य्य ने हँसते हुए कहा—"मुझ बूढ़े को ठगने की चेष्टा न करो। जब तक उक्त मज़मून का पत्र लिख कर न दोगी, भ्रमर से नहीं मिल सकतीं"।

"क्षमा कीजिए। पत्र लिखती हूँ"—यह कह कर मोहिनी ने मेज़ के ऊपर से काग़ज़ क़लम उठा कर पत्र लिखना आरम्भ किया। इधर भट्टाचार्य्य ने मुँह फेर कर रामानन्द की ओर भावपूर्ण दृष्टि से देखा तो सिविल सर्विस की परीक्षा पास, न्यायमूर्त्ति, रामानन्द उसी निश्चब्धता से अख़बार के ऊपर रक्खे हुए, 'समालोचना तत्त्व' पढ़ने का ढोंग कर रहे थे।

बड़े मीठे स्वर में मोहिनी ने कहा—"पत्र लीजिए"। पत्र को हाथ में लिये भट्टाचार्य्य ने, दोनों के बीच में खड़े होकर, मोहिनी से कहा—

"मोहिनी, मैं तुम्हारा परिचय इलाहाबाद के जाइंट मैजिस्ट्रेट पण्डित रामानन्द चतुर्वेदी, आई० सी० एस०, उरफ़ाम 'भ्रमर' से कराता हूँ"।

फिर रामानन्द की ओर मुड़ कर—

"माननीय महाशय, मैं आपका परिचय आपकी समालोचिका विदुषी मोहिनीबाला से कराता हूँ"।

इन शब्दों के समाप्त होने न होने मोहिनी रामानन्द के चरणों पर गिर पड़ी। रामानन्द ने उसको सत्वर ही बड़े प्रेम से उठालिया।

वृद्ध भट्टाचार्य्य इनके निमित्त जलपान लाने के लिए बाहर खिसक गये।

दूसरे एक सप्ताह बाद इलाहाबाद के दैनिक पत्र में निम्नलिखित आवश्यक की पंक्तियां पढ़ीं—

[illegible]

धूमधाम से हो गया। डार्लिंगटन के प्रधान विचारपति तथा [illegible] विवाह-मण्डप में उपस्थित थे। ईश्वर करे नवदम्पती चिरकाल देश का मङ्गल-साधन करें।

मोहिनी के पिता ने कई लाख की सम्पत्ति छोड़ी जिसकी एकमात्र अधिकारिणी मोहिनी थी। पर, [illegible] को उस सम्पत्ति में सबसे अधिक मूल्यवान् वह पत्र हुआ जो मोहिनी के पिता की मृत्यु के बाद उसके में मिला था। उसमें लिखा था—

"मोहिनी,

जिस दिन मैं इस नश्वर जगत् से विदा हो चुकूंगा उसी दिन [illegible] यह पत्र पढ़ोगी। तुझे विश्वास है कि तुमने मेरी उस आज्ञा [illegible] तुमको रामानन्द के साथ पत्रव्यवहार बन्द करने के लिए [illegible] कर ज़रूर दुःख पाया होगा। पर आज मैं तुमसे कहता हूँ कि [illegible] दिये तुम्हारे और रामानन्द की चित्तावियक्त [illegible] तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ कि तुम रामानन्द के साथ विवाह [illegible] गृहस्थाश्रम में प्रवेश करो। ईश्वर तुम्हारी सारी शुभ कामनाएं [illegible]

तुम्हारा स्नेहभाजन पिता,
[illegible]

---

## चीन में सामाजिक परिवर्त

त पचास साठ वर्षों का [illegible] के इतिहास में बड़े [illegible] माना जायगा। [illegible] यूरुप से चीन का [illegible] हुआ और व्यापार आ[illegible] यूरोपीय जातियों ने ज़बरदस्ती घुस कर [illegible] छीन ली और कुछ विशेष स्वत्व भी [illegible] ईसाई पादरियों ने अपने धर्म और [illegible] का प्रचार शुरू किया। चीन में [illegible] हलचल मच गई। १८९५ में जापान [illegible] हारने पर यह हलचल और भी बढ़ [illegible] की निर्बलता अपने आप पर और स[illegible] प्रकट हो गई। अच्छा अवसर पा[illegible] राष्ट्र मिल कर चीन पर चढ़ आये [illegible] मानमर्दन करके वापस गये। [illegible] कुछ दिन बाद ही, १९०४-५ में, [illegible] में विशाल रूस को नीचा दिखा[illegible]

सरस्वती ... श्री गेरमल-शारदा-सदन

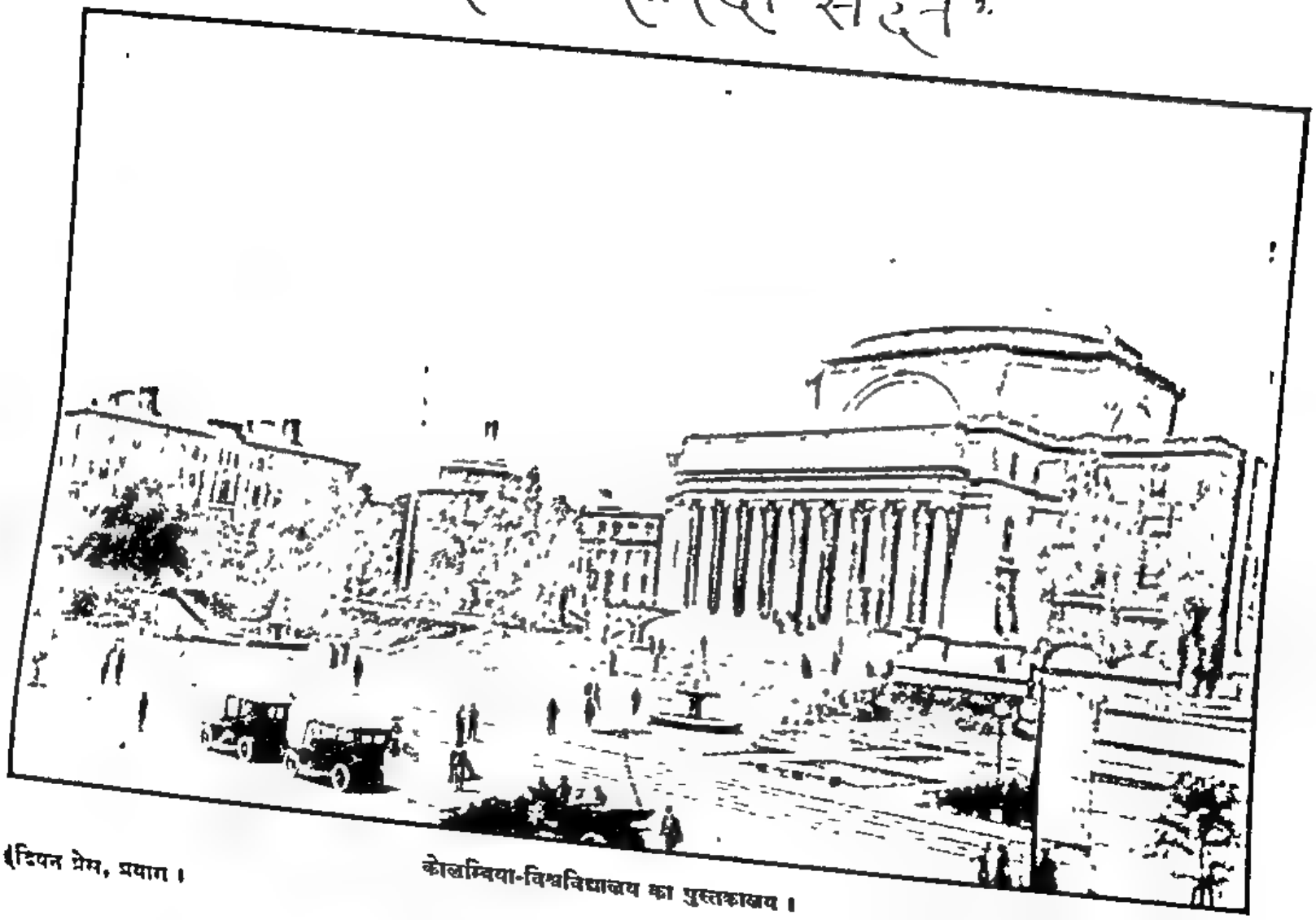

दिपन प्रेस, प्रयाग।

कोलम्बिया-विश्वविद्यालय का पुस्तकालय।

गयी जातियों के हृदय में नई आशायें और नई इच्छायें उत्पन्न कर दीं। जापान की उन्नति का कारण पाश्चात्य साहित्य, कला और विज्ञान का ज्ञान-सम्पादन था। अतएव चीन का ध्यान इस ओर गया। हज़ारों चीनी विद्यार्थी जापान, सैकड़ों अमेरिका को, और कितने ही इँगलैंड, फ्रांस और जर्मनी को विविध शास्त्र और कलायें सीखने गये। नई नई बातें देख कर, नये नये विचार और नये सिद्धान्त मन में धारण करके, ये लोग लौटे। इनके लौटने से नई परिवर्तनकारिणी शक्तियाँ उत्पन्न हो गईं और जो शक्तियाँ पहले से प्रबल थीं वे और भी प्रचण्ड हो उठीं। व्यापार, योग, राजनीति, धर्म, सामाजिक आचार-विचार—सभी में जल्दी जल्दी परिवर्तन होने लगे। अन्त में १९११-१२ की राज्यक्रान्ति ने राजसत्ता के स्थान पर प्रजासत्ता स्थापित करके संसार के सामने नये चीन के विकास की घोषणा कर दी। चीन के इस सामाजिक परिवर्तन पर एक दृष्टि डालने से अनेक नई नई बातें दिखाई देती हैं:—

## स्त्रियों की दशा।

पहले ही पहल समाज-सुधारकों का ध्यान स्त्रियों की दुर्दशा की ओर गया। चीन में भी यह सिद्धान्त प्रचलित था कि स्त्रियों को बचपन में पिता के, बन में पति के, और बुढ़ापे में पुत्र के अधीन रहना चाहिए। उनका जीवन केवल सन्तान पैदा करने और पति तथा सास-ससुर आदि की सेवा करने के लिए है। व्यापक सामाजिक और सार्वजनिक बातों से उनका कोई सम्बन्ध नहीं। जिसके साथ पिता चाहे उसी के साथ कन्या का विवाह कर दे। बहुविवाह की राक्षसी प्रथा भी वहाँ विद्यमान थी। पति के मरने पर कभी कभी स्त्रियाँ सती भी हो जाती थीं। यह तो प्रसिद्ध ही है कि सुन्दरता बढ़ाने के लिए लड़कियों के पैर बहुत छोटे किये जाते थे और व्यर्थ उन्हें नाना यन्त्रणायें सहनी पड़ती थीं। नये विचारों ने इस स्थिति को ज़ोर से धक्का दिया। समानता, स्वतन्त्रता और भ्रातृभाव का सिद्धान्त, राजनैतिक विषयों की तरह, सामाजिक विषयों में भी चरितार्थ हो सकता है। स्त्रियों के स्वत्व भी पुरुषों के समान हैं; स्त्रियों को भी पुरुषों के समान उचित स्वतन्त्रता होनी चाहिए। स्त्री पुरुषों को भ्रातृभाव से रहना चाहिए। इन विचारों के उत्पन्न होते ही सती, बहुविवाह और पैर बाँधने की प्रथायें त्याज्य होने लगीं। सामाजिक जीवन से स्त्रियों का पार्थक्य अन्याय-पूर्ण ज्ञात होने लगा, वैवाहिक स्वतन्त्रता और उच्च स्त्री-शिक्षा आवश्यक ज्ञात पड़ने लगी। अतएव कोई आश्चर्य्य नहीं जो चीन में नये स्त्रीत्व का आविर्भाव हो गया। हाल की राज्यक्रान्ति में बहुतेरी स्त्रियों ने स्वयं युद्ध किया, घायलों की सेवा-शुश्रूषा की और अन्यान्य उपयोगी काम भी किये। स्त्रियाँ 'वोट' के लिए भी आन्दोलन करने लगी हैं। दो वर्ष हुए स्त्रियों के वोट के लिए आन्दोलन करने वाली अन्तर्जातीय महा सभा के बुडापेस्ट में होने वाले अधिवेशन में कई चीनी स्त्रियाँ भी प्रतिनिधि होकर गई थीं। अनेक शिक्षित महिलायें चीन की स्त्रियों की दशा सुधारने के लिए उद्योग कर रही हैं। पैर बाँधने की प्रथा को समूल तोड़ने के लिए, बहुधों के प्रति सासुओं का प्रभुत्व और अधिकार कम करने के लिए, शिक्षा-प्रचार के लिए एवं दूसरे सुधारों के लिए बहुत सी सभायें स्थापित हो चुकी हैं। शहरों में और ऊँचे दरजे के लोगों में सुधार झपाटे से होने लगे हैं। आशा की जाती है कि गाँवों में और नीचे दरजे के लोगों में भी होने लगेंगे।

## गुलामी।

जैसे जैसे कोई जन-समुदाय स्वयं स्वतन्त्रताप्रिय होता जाता है वैसे ही वैसे वह, यदि अपनी कोई भारी क्षति न होती हो तो, अपने चारों ओर रहने वालों को भी स्वतन्त्र देखना चाहता है। अब समझदार चीनी लोग गुलामी की प्रथा को बुरा समझने लगे हैं। छोटे छोटे लड़के और लड़कियाँ

थोड़ी थोड़ी तनख्वाह पर नौकर रख लिये जाते थे। उनके साथ भी निष्ठुर बरताव होना या उनका सर्वस्व हर लिया जाना असम्भव नहीं हो सकता। ऐसी परिस्थिति और उदाहरणों में स्त्री-पुरुषों के उद्योग से घर श्रीसम्पन्न बहुत कम हो सकते हैं। एक बहुत बड़ी बात यह है कि बहुत से काम, जो पहले गुलामों के बिना न हो सकते थे, अब कलों के द्वारा बहुत आसानी से हो सकते हैं। यूरप और अमेरिका में भी दासत्व की प्रथा के उठ जाने का बहुत बड़ा कारण कलों का निर्माण और प्रचार ही था।

## कुटुम्ब और व्यक्ति-स्वातन्त्र्य।

नई रोशनी और स्वातन्त्र्य-प्रेम का अवश्यंभावी परिणाम एक यह भी होता है कि कौटुम्बिक व्यवस्था में अलबली मच जाती है। पहले चीन में कुटुम्ब ही समाज का केन्द्र था, कुटुम्ब का स्वार्थ-साधन कर्तव्य था, कुटुम्ब के आचार-विचार के अनुसार चलना सदाचार था, कुटुम्ब की भलाई करना परमोपकार था, कुटुम्ब के स्वामी की आज्ञा पालन करना धर्म्म था, और कुटुम्ब के पूर्वजों की पूजा करना परलोक में अच्छी गति प्राप्त करने का मुख्य साधन था।

उन्हीं शक्तियों ने, जिनका ज़िक्र ऊपर किया जा चुका है, इस कौटुम्बिक भाव को भी जर्जर करना प्रारम्भ कर दिया। इस भाव का स्थान व्यक्ति स्वातन्त्र्य और राष्ट्रीयता ने लेना प्रारम्भ कर दिया है। सदा अपने ही कुटुम्ब का ध्यान रखना अनुदारता का सूचक है। विद्या, धन, यश और सुख उपार्जन करना चाहिए। और, उनसे दूसरों को भी लाभ पहुँचाना चाहिए। कौटुम्बिक स्वार्थ और सुख का अत्यधिक विचार न करके राष्ट्रीय स्वार्थ और सुख को अपना लक्ष्य बनाना चाहिए। कुटुम्ब-स्वामी की आज्ञा के पालन और पूर्वजों की पूजा की अपेक्षा राष्ट्र की आवश्यकताओं को पूरा करना और जननी जन्मभूमि की पूजा करना अधिक महत्त्व का काम है। चीन में देशभक्त नवयुवकों के हृदयों में स्वार्थ ही की ईंट चुनी जा रही है। चीनी अखबारों के सम्पादकीय लेखों से स्पष्ट है कि व्यक्ति, कुटुम्ब और राष्ट्र के स्वार्थ किस प्रकार एक किये जा सकते हैं।

## नये ढंग के विवाह।

चीन की कोर्टों में कुटुम्ब की ओर से तलाक़ की दरख्वास्तें और आवेदनपत्र पेश होते हैं। इस भाव के कारण ब्याह के ढंग में भी परिवर्तन हो गया है। इसी से युवक और युवतियाँ अब अपनी पसन्द के ब्याह करने लगे हैं।

## भारत से समानता।

भारत और चीन के सामाजिक आन्दोलनों में समता पाई जाती है। पर कुछ भेद भी है। एक तो चीन की सामाजिक दशा वैसी बुरी नहीं है कि भारत की है और सामाजिक प्रश्न भी वैसे पेचीदा नहीं हैं जैसे यहाँ के। दूसरे, जो सुधार-सम्बन्धिनी प्रवृत्तियाँ भारत में काम कर रही हैं वे चीन में अधिक प्रबल हैं। हमारा सम्बन्ध विशेषतः इँगलैंड, अँगरेज़ जाति, अँगरेज़ी सभ्यता और अँगरेज़ी साहित्य से है। चीन का संबंध जापान, अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी और इँगलैंड—इन पाँचों देशों की जातियों, सभ्यताओं और साहित्यों से है। तीसरे, राज्यक्रान्ति के बाद से प्रजासत्ताक सरकार में चीनी सुधारकों का हाथ है। इस लिए सुधार-विषयक आन्दोलनों को बड़ी सहायता मिलती है। चीन में सबको शिक्षा का प्रचार भी बड़े ज़ोरशोर से हो रहा है। अतएव सामाजिक विषयों में चीन का भविष्य भारत से अधिक उज्ज्वल और आशापूर्ण है।

सत्यशोधक।

# पूर्ण-वियोग।

## [ रसिक-समाज, कानपुर, के कवियों का शोक-प्रकाशन ]

काहे दिवि-द्वार दिव्य कनक कलश साजे काहे धूप-धूम की सुगन्ध महा छाई है।
कल्पतरु-पल्लव के तोरन बँधे हैं काहे काहे कदलीन की अनूपम निकाई है।
काहे सुरनारी लीन्हे आरती अनूप ठाढ़ी सुरतरु-फूलन की माल क्यों बँधाई है।
धरम सनातन के सभापति पूरन की अमरपुरी में सुनी आजुही अवाई है ॥१॥
प्रफुलित भई दुति हीनल कुमोदनी की शोक-तम छाय गुणवंत के चित्त गयो।
मन्द भयो सरस प्रकाश नवरसवारो बुद्धि रजनी को सर्व आनँद रित्त गयो।
व्याप्त भुवि लक्षणा की किरन न दीखि परे तारागण भूषण प्रकाश त्यों बित्त गयो।
रसिक-समाजी हूँ चकोर चहुँ ओर हेरें कविता को पूरन कलानिधि कित्त गयो ॥२॥
धरा में मिली है धरा जल जल माँहि मिलो तेजवारो अंश जाय तेज में दिखानो है।
पवन पवन माहिँ नभ नभ मांहिँ मिलो घट-मठ भङ्ग भयो जैसो दरसानो है।
निज निज देवता में इन्द्री दशौ जाय मिलीं मरनो कहा है कैसो कौन ने बखानो है।
छीर माहिँ छीर नीर माहिँ जैसे नीर मिलै पूरन में पूरन को तत्त्व त्यों समानो है ॥३॥
अंशुमान उत्तर अयन में विराजमान चन्द्रकला परी शुक्ल पक्ष समताई है।
दिन को द्वितीय जाम रवि नभ मध्य भागो दुन्दुभी सुरन माही सर्म में बजाई है।
मुक्त हेल अवशि तजे ते तन ऐसे सर्म काल की प्रशंसा यों मुनीगन ने गाई है।
तजि दुचिताई प्रभुताई और बड़ाई सर्व पूरन जू मुक्तिदाई ऐसी गुरु पाई है ॥४॥
सब गुन भरी आपु करें कविताई नीहू और की बड़ाई करें ऐसो को दिखात है।
धन बुधि विद्या को सकल अभिमान छोड़ि और जन को मान करें ऐसो कौन मात है।
गुनुकमिजाजी कवि लोगन को राजी करें पूरन के बिना दूजो कौन दरसात है।
धरम सनातन को चाहे पति दूजो मिलै रसिक-समाज तो अनाथ ही अमात है ॥५॥

रामदत्त सनाढ्य।

---

पूरन प्रतापी जेहि और तजे हैं प्रान सोकमई भई सारी कानपुर की सभान।
कीन्हों हाकिमन छुट्टी सकल अदालत की बन्द की सराफन बजाजन सबै दुकान।
रयी साथ चले बन्धुवर्ग विलखात सबै मित्रगन हिन्दू औरंगेज औ मुसलमान।
दाह सर्म माहीं धन गाजि कुहार दाखी अग्नि दिखावनी भरी रोय हरो आसमान ॥१॥
मेरो चोरो सुन्दर बगीचा कुसुमाकर को करि बखानो जिन हाकन को धरि गो।
आगम निगम और पुरानन को जैसे अनो बचन सुधा सो करि हरो अनो करि गो।
सारद पुराने भये ज्ञान हूने जैसे गुप तिन्हें प्रगटाय पुरातन चलन दृढ़ि गो।
झण्डा-बरदार हाय धरम सनातन को पूरन प्रतापी यह अन्त में सिद्धारि गो ॥२॥
गुरुदिन रसिक-समाज को सचेत कीन्हो प्रथम प्रथम जब कानपुर आये हैं।
बारिका रसिक-पत्र अग्निक सिखारि कैसे अग्नि दुखदाय देस देस पठाये हैं।

परम सनातन को सुभग सार्द्ध श्रीन्दो रहु सुजस पसारे जगत उजारे है।
पूरन प्रभावी राव देवीप्रसाद पूर्ण सहायक हूँरे अशोक को सिधारे हैं॥१॥

सहायक सम्पादक।

---

भारत जननि को सुपूत वर पुत्र सोर हिन्द को हितैषी हिन्दुसनि को प्यारो है।
प्रेमी नागरी को धेनु-रक्षक सुजुगु सिख रसिक समाजिन में नेनन को तारो है॥
परम सनातन को प्रबल पसारा गुन सभ्य कविताई को न दूसरो निहारो है।
कौन कौन गुण मैं बखानौं लालु सोई पूर्ण सकि बुद्धि ओक सुरलोक को सिधारो है॥१॥
साहस को साहस॥ जानिये पधारो हिये मोद हू को मोद सर्व ठौर ही हितानो है।
भूलि गई चातुरी सकल चतुराई हू की धीर हू के धीर को न लगत ठिकानो है॥
मजचन्द देश की दशा को दशा शोकमई शोक हू के हिये शोक-सिन्धु प्रगटानो है।
नेता कानपूर को गुणज्ञ धरमज्ञ पूर्ण उठोही सुन्यो कीन्हों हाय स्वर्ग को पयानो है॥२॥
रचि रचि काव्य बहु भांतिन अनूठी कौन ग्रन्थ ध्वनि भूषण की चरचा चलाई है।
लिखि लिखि लेख शुद्ध सरस गंभीरता सों कौन देश-पत्रन में भेजि प्रगटाई है॥
दै दै वक्तृता को मन्त्र मन की हरनहारी सकल सभा में कौन मोद बरसाई है।
बिना राघरे के आजु पूर्ण कानपूर माहि हाय नागरी को अब कौन अपनाई है॥३॥

मन्नीलाल।

---

# सामाजिक ह्रास के कुछ कारणों का विचार।

## (२) आधुनिक शिक्षा और बुद्धि-स्वातन्त्र्य।

पिछले दो लेखों में दो कारणों का—मस्तिष्क के अमर्यादित व्यय और नगर-निवासी होने का—विचार करके यह दिखाया गया है कि इन कारणों से हमारे समाज का ह्रास कैसे हो रहा है। अब इस लेख में अन्य कारणों का विचार किया जायगा।

यह बात सभी जानते हैं कि वर्तमान समय में जिस स्थिति को हम लोग सामाजिक सुधार, उन्नति और सभ्यता कहते हैं उसका आरम्भ तभी से हुआ है जबसे इस देश में नवीन शिक्षा का प्रचार हुआ और जबसे पश्चिम-देश-निवासियों के साथ हमारा सम्बन्ध बढ़ने लगा। तभी से हमारे समाज में बुद्धि-स्वातन्त्र्य और व्यक्ति-स्वातन्त्र्य का ज़ोर बढ़ता हुआ देख पड़ता है। नवीन शिक्षा का प्रचार और प्रसार होते ही शिक्षित समाज में यह पुकार होने लगी लोगों को अपने धर्म, आचार, विचार, रहन-सहन आदि प्रायः सभी बातों में सुधार करना चाहिए। पर इतना न होना चाहिए कि जो केवल हमारे ही देश अगुओं को पसन्द हो। उसकी व्यापकता इतनी होनी चाहिए कि यदि दुनिया के किसी सभ्य देश के हमारे आचारों और विचारों को देखें तो उनको उ भी न्यूनता न देख पड़े। सत्यता, सुख और सुख अथवा विचार, स्वहित और रुचि—अथवा बुद्धि आधार पर प्रत्येक व्यक्ति को अपनी उन्नति का स्वाधीनता होनी चाहिए। इस उन्नति के मार्ग में समाज की वर्तमान दशा का सुधार करते समय, लज्जा, सङ्कोच या भय न मालूम होना चाहिए। काम में कुछ रुकावट होगी तो हम लोग उन्नति और के सब सुखों से वञ्चित हो जायँगे।

हमारे सुधारक भाइयों को पश्चिमी शिक्षा से यह तत्त्व बहुत पसन्द आया कि सब मनुष्यों की और स्वाधीनता समान होनी चाहिए तथा उनके

ो होने चाहिए। यदि हम लोग अपने विचार, बुद्धि या
ी शक्ति में कुछ विश्वास रखते हों तो हमारा यही कर्तव्य
चाहिए कि इस देश के धर्म-भेद, जाति-भेद, उच्चता-
ा आदि कृत्रिम भेदों को शीघ्र ही नष्ट कर डालें।
सुधारों का हेतु यही है कि मनुष्य स्वयं अपनी
विक योग्यता, अपने महत्त्व और अपने अधिकारों को
ले और तदनुसार बर्ताव करने लगे। इस हेतु की
ना तभी हो सकेगी जब हमारे समाज में प्राचीन तथा
ित भेद भावों, दुराग्रहों और भोलेपन का लोप
ायगा।

सुधार के इन कामों में हमारे देश-वासियों की आत्मिक
और धार्मिक श्रद्धा बहुत बाधा डालती है। सच तो
कि जो वस्तु मनुष्य की बुद्धि के लिए अज्ञेय है
र्मत्व के विषय में श्रद्धा या विश्वास रखना मानो
द और दम्भ करना है। जिस अज्ञेय वस्तु पर हमारे
ासियों की श्रद्धा है उसकी खोज में आज तक दुनिया
ेरी भाग में मानव-बुद्धि सफल नहीं हो सकी। जब
स अज्ञेय को ज्ञेय का निश्चित स्वरूप प्राप्त न होजाय
क हमारे सामाजिक तथा राष्ट्रीय आचारों और व्यव-
में उसको महत्त्व का स्थान न देना चाहिए। सन्देहात्मक
को सत्य के समान कभी न मानना चाहिए। जो वस्तु
अज्ञेय है वह सदा अज्ञेय ही बनी रहेगी। यदि
ज्ञेय सिद्ध करना हो तो केवल विचार, बुद्धि या
से काम लेना चाहिए, श्रद्धा या अन्य मनोवृत्तियों का
ा लेना भीरुता का लक्षण है। अतएव इस श्रद्धा को
ें ही उखाड़ डालना चाहिए। तात्पर्य यह कि ईश्वर का
ा केवल बुद्धिवाद या तर्कवाद से सिद्ध नहीं किया
कता—उसके लिए श्रद्धा की आवश्यकता होती है—
ह ईश्वर सम्बन्धी निराधार कल्पनाओं का प्रभाव अपने
स में न होने देना चाहिए। केवल बुद्धि निश्चित सत्य ही
ानना चाहिए। ऐसे ही सत्य की सदा जय होती है।
ाओं का लोप होते ही स्पर्शास्पर्श, अछूतपन, वेदोक्त
तथा कृत्रिम बातें दूर हो जायँगी। ईश्वर-सम्बन्धी
ष्ट्य भाव और धार्मिक श्रद्धा का त्याग कर देने से
ुरुष का अगला आचरण निश्चित आदर्श, शक्ति, ब्रह्म
ारों का काल्पनिक हव्य-कव्य हो जायगा, मन्त्र-
तन्त्र, सन्ध्या-तर्पण, पूजा पाठ आदि निरुपयोगी कामों में समय व्यतीत न होगा, भूत-पिशाचों का भय भाग जायगा, और अनुचित आशा तथा अनुचित भय उत्पन्न करने वाले स्वर्ग तथा नरक भी लुप्त हो जायँगे।

यूरोप के सुधार का वर्णन पढ़ने से हमारे शिक्षित भाइयों को यह मालूम हुआ कि ईसाइयों के धर्म में कुछ विशेषता है जो उनके सुधार और उन्नति के लिए बहुत अनुकूल है। उनका धर्म, उनकी उन्नति में, कुछ बाधा नहीं डालता—उनके धार्मिक नियमों से उनके सामाजिक और राष्ट्रीय व्यवहार को कुछ भी हानि नहीं पहुँचती। वे लोग जो चाहे खा सकते हैं, जहाँ चाहे जा सकते हैं; जो धन्धा चाहे कर सकते हैं; जिसको चाहे उसी के साथ विवाह कर सकते हैं और मनमानी रीति से अपनी आयु व्यतीत कर सकते हैं। इन कामों में धर्म की कुछ भी रुकावट नहीं है। यही कारण है कि वे लोग इस जगत् में स्वाधीनता को सब से अधिक चाहते हैं। धर्म की बाधा न होने के कारण ही वे लोग सभ्यता के शिखर पर पहुँच कर सुख और वैभव का उपभोग कर रहे हैं। यदि हम लोग इस आधिभौतिक सुख का उपभोग करना चाहें तो हम लोगों को भी अपने धर्म में कुछ सुधार करना चाहिए। जब तक हमारा धर्म और हमारी स्वाधीनता हमारी उन्नति के लिए अनुकूल न हो जावें तब तक शिक्षा और सुधार के प्रयत्न में हमें सफलता न होगी। यदि यह अनुकूलता प्राप्त नहीं की जा सकती तो हम लोगों को अपने इस निकम्मे धर्म का त्याग और उपयोगी ईसाई धर्म का स्वीकार करके अपने समाज तथा देश की उन्नति करनी चाहिए। ईसाई धर्म का स्वीकार कर लेने से हमारे सब सामाजिक विचार ठीक हो जायँगे। खाने, पीने, ओढ़ने, पहनने का कोई बन्धन आने में—अर्थात् किसी भी प्रकार के व्यवहार में—कुछ भी रुकावट न होगी। इसके अतिरिक्त एक बहुत बड़ा लाभ यह होगा कि हमारे अन्धेरे का विषय इस पर सरल हो जायगा। इस जैसे [illegible] हो जिन [illegible], कई कई [illegible] पर [illegible] हो जायँगे, [illegible] [illegible] [illegible]

पर समाज के सुधार का काम करना चाहते हैं, वे ज का हित करने के बदले उसकी हानि ही किया है।

अब प्रश्न यह है कि हमारे शिक्षित भाइयों की दृष्टि । क्यों गई—उनके स्वभाव में यह हानि-कारक परिवर्तन हो गया—उनकी श्रेष्ठ प्रवृत्तियों की सत्ता जाती सी क्यों ? खेद से कहना पड़ता है कि यह परिणाम आधुनिक ा का है। विदेशियों को अपने देश और समाज की । का, तथा हमारे देश और समाज की दुर्दशा का, न करने की आदत सी पड़ गई है। वे लोग बहुधा ा, लेख और व्याख्यान द्वारा, हमारे सामाजिक दुर्गुणों का गीत गाया करते हैं। उसको पढ़ या सुन कर हमारे ा शिक्षित भाई तुरन्त ही उनके चेले बन जाते हैं—वे ही सभी बातों को वेद-वाक्य मानने लग जाते हैं। कुछ ों के अभ्यास से यह मानसिक संस्कार इतना दृढ़ हो ा है कि वह स्वयं अपनी ही बुद्धि की प्रेरणा से उचित ा मालूम होने लगता है। यदि ऐसा न होता तो हमारे क्षित भाइयों को अपने समाज का कुछ प्रशंसनीय अंश अवश्य ही देख पड़ता—वे स्वयं अपने समाज के सम्बन्ध विदेशियों ही के समान, अज्ञानी न रहते—वे यह अवश्य कदापि न करते कि हमारे समाज में आदर करने ग्य कुछ है ही नहीं। सच तो यह है कि बुद्धि-स्वातन्त्र्य का ा बजाने वाले हमारे आधुनिक विद्वान् पराई बुद्धि के ार चलने वाले हैं। वे भले ही कहें कि हमारी बुद्धि का काश होगया है; परन्तु यथार्थ में उनकी बुद्धि उथली और ुचित ही है। उनकी दृष्टि में वही अच्छा देख पड़ता है जिसकी प्रशंसा विदेशियों के द्वारा की जाय; और वही बुरा ा पड़ता है जिसकी विदेशियों के द्वारा निन्दा की जाय।

यह सुन कर बहुतेरे विद्वान् अप्रसन्न होंगे कि वर्तमान क्षा का हमारे समाज पर कुछ बुरा असर पड़ा है। परन्तु ात सच है। इसके प्रबल प्रमाण दिये जा सकते हैं। दि लेख बढ़ जाने का भय न होता मैं अधिक नहीं तो दो ार प्रमाण, नामी नामी पाश्चात्य लेखकों के ग्रन्थों से, ाश्रय देता।

पाठकों के मन में यह व्यर्थ भ्रम न होना चाहिए कि स लेख का लिखने वाला पश्चिमी शिक्षा के लाभों को स्वीकार नहीं करता। नहीं साहब, इस शिक्षा से जो अनन्त लाभ हम लोगों को हुए हैं—जैसे दुनिया भर की बहुत सी बातों का ज्ञान हो जाना; सारे संसार का इतिहास मालूम कर लेना; अनेक शास्त्रों और विद्याओं में पारङ्गत होने के साधनों को प्राप्त कर लेना; सभी देशों के धर्म्म, नीति, उद्योग, आचार आदि का पता लगा लेना; पश्चिमी कवियों और ग्रन्थकारों की कृतियों के अनुपम रस का आस्वादन करना; यूरोप के साहित्य और विज्ञान का रहस्य जान कर उससे निःसीम लाभ उठाना—यह सब इस लेखक को मान्य है। जब सभाओं में वक्तृताओं द्वारा या लेखों तथा ग्रन्थों द्वारा, अंगरेज़ी राज्य से होने वाले लाभों की गिनती की जाती है तब इस नवीन शिक्षारूपी लाभ को अग्र स्थान दिया जाता है। इस शिक्षा का कुछ प्रसाद इस लेखक को भी मिला है। ऐसी अवस्था में यह सम्भव नहीं है कि यह इस शिक्षा के लाभों को स्वीकार न करे। इन सब लाभों के लिए पश्चिमी शिक्षा प्राप्त करना बहुत आवश्यक है। परन्तु, भाग्यवश, इस लेखक को यह भी मालूम है कि हमारी शिक्षा-प्रणाली में विदेशी भाषा का आधिपत्य हो जाने से, हमारे समाज को, धीरे धीरे, हानि भी बहुत पहुँच रही है।

विदेशी भाषा और विदेशी शिक्षा के आधिपत्य का परिणाम यह हुआ है कि हम लोग विदेशी ही भाषा में लिखने, पढ़ने, बोलने और विचार करने हैं। अंगरेज़ी भाषा का सार्वत्रिक प्रचार ही हमारी भावी उन्नति के लिए आवश्यक समझा जाता है। देशी शिक्षा और देशी भाषा को उत्तेजन देना संकुचित दृष्टि का लक्षण माना जाता है। हम अपने देश और समाज की दशा का विचार औरों की दृष्टि से किया करते हैं। फल यह हुआ है कि पश्चिमी शिक्षा दीक्षा के रूप में हम लोग अपने आत्मभाव को कम कर डालने वाला और अपने समाज का ह्रास करने वाला काम करते चले जाते हैं। और, विशेषता यह है कि हम इसी को बुद्धि-स्वातन्त्र्य, व्यक्ति-स्वातन्त्र्य, सुधार, सभ्यता और उन्नति मान रहे हैं। इस शिक्षा के प्रभाव से हम को अपना हिन्दुस्तानीपन निन्द्य, तिरस्करणीय और त्याज्य मालूम होने लगता है। विदेशियों के बनाये हुए दोष ही दोष सदा हमारी दृष्टि के सामने रहने से

हम ईसाई धर्म को स्वीकार करें तो हम सब प्रकार के सुख, सुधार, स्वाधीनता, सभ्यता आदि के अधिकारी, गोरे हो सकेंगे, हो जायँगे।

सारांश यह कि पश्चिमी शिक्षा के प्रभाव से हमारे शिक्षित भाई सोचने लगे कि हम लोगों को चारों तरफ़ से अपने समाज के सुधार के यत्न करना चाहिए। जब तक हम ऐसा न करेंगे तब तक हम अपने देश के सच्चे हितैषी और उद्धार करने वाले न कहावेंगे। हम को सिर्फ़ अपने विचार, बुद्धि और तर्क के बल पर काम करना चाहिए। जो कर्तव्य बुद्धि की कसौटी पर कसा न जा सके—जो काम, बुद्धि के तराज़ू में तौलने पर रत्ती भर भी कम हो—उसका त्याग तुरन्त ही कर देना चाहिए। जो लोग अपनी बुद्धि के तेज को दया, श्रद्धा या अन्य मनोवृत्तियों से मन्द कर देते हैं वे अपने समाज का हित कभी न कर सकेंगे। मनोवृत्तियों के अधीन हो कर बुद्धि के स्वतन्त्र साम्राज्य को मर्यादित करने वाले लिखे पढ़े लोगों को समाज का वैरी समझना चाहिए। शिक्षा का प्रधान हेतु यही है कि बुद्धि का विकास हो, तथा उसकी स्वतन्त्रता की वृद्धि भी हो। इसी बुद्धि के द्वारा सत्य का निर्णय किया जा सकता है। यदि हमारे सामाजिक व्यवहारों में बुद्धि-स्वातन्त्र्य की महत्ता घटा दी जायगी तो समाज का सुधार और हित करने के लिए कोई उपाय ही न रह जायगा। ऐसी अवस्था में हमारी केवल सामाजिक और औद्योगिक हानि ही न होगी; किन्तु राष्ट्रीय हानि भी होने लगेगी। यह हानि हमी लोगों को नहीं, किन्तु हमारे वंशजों को भी सहनी पड़ेगी। इसके अतिरिक्त यूरोप-निवासी हम लोगों को मूर्ख, अज्ञानी, असभ्य, क्रूर, भीरु, हठी, दुराग्रही आदि अप-शब्दों से सदा सम्बोधन करते रहेंगे—हमारा शिक्षित समाज निन्दनीय, उपहासास्पद और केवल अनुकम्पा के योग्य समझा जायगा!

परन्तु खेद और आश्चर्य की बात है कि जब हमारे शिक्षित भाई वर्तमान काल की नूतन शिक्षा पाकर अपने समाज के सुधार की इच्छा और यत्न करने लगते हैं तब वे अपने समाज की ओर स्वयं अपनी दृष्टि से नहीं देखते; किन्तु वे विदेशियों और अन्य-धर्मावलम्बियों के समान केवल दोषों ही को ढूँढ़ निकालने में लग जाते हैं। इस संसार में ऐसी कोई वस्तु ही नहीं जो सर्वथा निर्दोष या सर्वथा सदोष हो। हमारे समाज में बुराइयाँ हो सकती हैं, ही अच्छी बातें भी अवश्य पाई जा सकती हैं। युवक शिक्षित सुधारक अपने समाज के गुणों को कब नहीं बताते। वे तो पहले ही से निश्चय कर हमारे समाज में एक भी गुण नहीं—एक भी नहीं! हमारे पूर्वजों की सभी बातों में—अर्थात् धर्म, आचार, रूढ़ि, व्यवहार, खानपान, पहनाव मूर्खता और अज्ञान के सिवा कुछ भी नहीं! के हृदय में अपने पूर्वजों का अभिमान था और भी नहीं। यथार्थ में हम उनके वंशज कहलाने में को लज्जित और कलङ्कित समझते हैं। ऐसे लि तो आत्मभाव देख पड़ता है, न दूरदृष्टि। वे तो शिक्षा की प्रेरणा से अपनी बुद्धि की अमर्यादित स्व इतने निमग्न हो जाते हैं कि सुधार और सभ्यता अपने समाज और कुटुम्ब को दुःख पहुँचाने दि रहते। इसमें कुछ भी आश्चर्य नहीं कि वे समाज के शत्रु के समान प्रतीत होते हैं। वर्तमान समय में समाज कण्टकों की संख्या दिन पर दिन बढ़ रही है सुधार-सम्बन्धी यत्नों से समाज का कुछ कल्याण तो हो किन्तु आत्मभाव और अन्तःकरण की श्रेष्ठ मनोवृ नाश निस्सन्देह होता है। यही हमारे सामाजिक तीसरा कारण है।

आज तक जिन महात्माओं ने सभ्यता और प्रचार का यत्न किया है उन्होंने अपने समाज में स की पूरी पूरी रक्षा की है। उनके प्रयत्न से समाज मनोवृत्तियों का—प्रेम, आदर, श्रद्धा, उदारता, उपकार, कृतज्ञता आदि (Higher Sentiments) नाश नहीं होने पाया। लूथर, कालविन, बुद्ध, शङ्क रामदास, कबीर, नानक, चैतन्य आदि महात्माओं के की आलोचना करने से यही पाया जाता है कि उनमें की स्वतन्त्रता के साथ साथ अन्तःकरण की श्रेष्ठ मनोवृत्ति पूरी तरह जागृत थीं। उनका जीवन और आचरण इत और पवित्र था कि उनके विषय में उनके अनुयायियों प्रतिपक्षियों के मन में ज़रा भी सन्देह न उपज सका जो लोग अपनी श्रेष्ठ मनोवृत्तियों को ऐसी जागृत अव नहीं रख सकते, जो सिर्फ़ अपनी बुद्धि की स्वतन्त्र

समाज के सुधार का काम करना चाहते हैं, वे का हित करने के बदले उसकी हानि ही किया ।

ब मरन यह है कि हमारे शिक्षित भाइयों की दृष्टि यों गई—उनके स्वभाव में यह हानि-कारक परिवर्तन गया—उनकी श्रेष्ठ मनोवृत्तियों की सत्ता जाती सी क्यों खेद से कहना पड़ता है कि यह परिणाम आधुनिक का है। विदेशियों को अपने देश और समाज की ा, तथा हमारे देश और समाज की दुर्दशा का, करने की आदत सी पड़ गई है। वे लोग बहुधा लेख और व्याख्यान द्वारा, हमारे सामाजिक दुर्गुणों गीत गाया करते हैं। उसको पढ़ या सुन कर हमारे शिक्षित भाई तुरन्त ही उनके चेले बन जाते हैं—वे सभी बातों को वेद-वाक्य मानने लग जाते हैं। कुछ अभ्यास से यह मानसिक संस्कार इतना दृढ़ हो कि वह स्वयं अपनी ही बुद्धि की प्रेरणा से उचित ालूम होने लगता है। यदि ऐसा न होता तो हमारे भाइयों को अपने समाज का कुछ प्रशंसनीय और ध्य ही देख पड़ता—वे स्वयं अपने समाज के सम्बन्ध देशियों ही के समान, अज्ञानी न रहते—वे यह कदापि न करते कि हमारे समाज में आदर करने यु है ही नहीं। सच तो यह है कि बुद्धि-स्वातन्त्र्य का चलाने वाले हमारे आधुनिक विद्वान् पराई बुद्धि के चलने वाले हैं। वे भले ही कहें कि हमारी बुद्धि का होगया है, परन्तु यथार्थ में उनकी बुद्धि उनकी और न ही है। उनकी दृष्टि में वही अच्छा देख पड़ता है प्रशंसा विदेशियों के द्वारा की जाय, और वही बुरा ना है जिसकी विदेशियों के द्वारा निन्दा की जाय। ह सुख का बहुतेरे विद्वान् अप्रसन्न होंगे कि वर्तमान में हमारे समाज पर कुछ बुरा असर पड़ा है। परन्तु न सच है। इसके प्रबल प्रमाण दिये जा सकते हैं। ब बढ़ जाने का भय न होता तो अधिक नहीं तो दो प्रमाण, नामी नामी पाश्चात्य लेखकों के ग्रन्थों से, देता।

ाठकों के मन में यह व्यर्थ भ्रम न होना चाहिए कि ख का लिखने वाला पश्चिमी शिक्षा के लाभों को स्वीकार नहीं करता। नहीं साहब, इस शिक्षा से जो अनन्त लाभ हम लोगों को हुए हैं—जैसे दुनिया भर की बहुत सी बातों का ज्ञान हो जाना; सारे संसार का इतिहास मालूम कर लेना; अनेक शास्त्रों और विद्याओं में पारङ्गत होने के साधनों को प्राप्त कर लेना; सभी देशों के धर्म्म, नीति, उद्योग, आचार आदि का पता लगा लेना; पश्चिमी कवियों और ग्रन्थकारों की कृतियों के अनुपम रस का आस्वादन करना; यूरोप के साहित्य और विज्ञान का रहस्य जान कर उससे निःसीम लाभ उठाना—यह सब इस लेखक को मान्य है। जब सभाओं में वक्तृताओं द्वारा या लेखों तथा ग्रन्थों द्वारा, अंगरेजी राज्य से होने वाले लाभों की गिनती की जाती है तब इस नवीन शिक्षारूपी लाभ को अग्र स्थान दिया जाता है। इस शिक्षा का कुछ प्रसाद इस लेखक को भी मिला है। ऐसी अवस्था में यह सम्भव नहीं है कि यह इस शिक्षा के लाभों को स्वीकार न करे। इन सब लाभों के लिए पश्चिमी शिक्षा प्राप्त करना बहुत आवश्यक है। परन्तु, भाग्यवश, इस लेखक को यह भी मालूम है कि हमारी शिक्षा-प्रणाली में विदेशी भाषा का आधिपत्य हो जाने से, हमारे समाज को, धीरे धीरे, हानि भी बहुत पहुँच रही है।

विदेशी भाषा और विदेशी शिक्षा के आधिपत्य का परिणाम यह हुआ है कि हम लोग विदेशी ही भाषा में लिखने, पढ़ने, बोलने और विचार करने हैं। अंगरेजी भाषा का सार्वत्रिक प्रचार ही हमारी भावी उन्नति के लिए आवश्यक समझा जाता है। देशी शिक्षा और देशी भाषा को उपेक्षित देना संकुचित दृष्टि का लक्षण माना जाता है। हम अपने देश और समाज की दशा का विचार औरों की दृष्टि से किया करते हैं। सच पूछा है कि पश्चिमी शिक्षा दीक्षा के रूप में हम लोग अपने आत्माभाव को बन्द कर डालने वाला और अपने समाज का हास करने वाला काम करने चले जाते हैं। और, विडम्बना यह है कि हम इसी को बुद्धि स्वातन्त्र्य, धर्म्म स्वातन्त्र्य, सुधार, सभ्यता और उन्नति समझ रहे हैं। इस शिक्षा के प्रभाव से हम को अपना हिन्दुत्वसम्बन्धित चित्त, चित्तवृत्ति और स्वभाव अप्रसन्न होने लगता है, विदेशियों के बनाये हुए देश ही देश-भक्त हमारी दृष्टि के सम्मुख खड़े न

हमारी दोष-दृष्टि बलवान् और दृढ़ होने लग जाती है, और हमारे गुणों पर काला परदा पड़ जाने से—हमारी श्रेष्ठ वासनायें और ऊँची महत्त्वाकांक्षायें सदा निद्रितावस्था में पड़ी रहने से—शिक्षित जनों में गुणग्राहकता का अभाव ही बढ़ता चला जाता है। हम लोग हिन्दुस्तान में रहते हुए भी अपने देश, समाज, धर्म्म, नीति, रहन-सहन, भाषा, कुटुम्ब-वात्सल्य, पूर्वज-पूजा आदि के विषय में विदेशियों के समान विचार करने लग गये हैं। धर्मान्तर न करने पर भी अपने धर्म पर हमारी श्रद्धा नहीं; जाति में रह कर भी हम लोग विजातीय से हो गये हैं। क्या यह हमारे समाज का भयङ्कर ह्रास नहीं है?

उक्त परिणामों की ओर ध्यान देने से यही प्रतीत होता है कि जिसको हम लोग बुद्धि-स्वातन्त्र्य और व्यक्ति-स्वातन्त्र्य कहते हैं वह यथार्थ में हमारी बुद्धि की पराधीनता है—यह हमारी मानसिक निर्बलता है। यह परिणाम श्रेष्ठ वर्गों में—ऊँचे दर्जे के लोगों में—और शिक्षित जनों में बहुत देख पड़ता है। यदि हमारे आधुनिक विद्वान् और शिक्षित भाई पश्चिमी विद्या के उक्त बुरे संस्कारों को भूल जायँ और यदि वे अपनी ही स्वतन्त्र बुद्धि से (विदेशियों की प्रेरित बुद्धि से नहीं) अपने देश और समाज की दशा पर विचार करें तो निःसन्देह उन्हें एक नई दुनिया देख पड़े। इस देश में अब भी ऐसे लोग हैं जिन पर पश्चिमी शिक्षा का बुरा असर नहीं पड़ा है—वे लोग अपने देश, समाज, धर्म्म और पूर्वजों के यथेष्ट अभिमानी बने हैं—उनका आत्मभाव जागृत है। उनके विषय में कभी कभी आश्चर्य से यह कहा जाता है कि—"हम लोगों ने हिन्दुओं को इतनी विद्या पढ़ाई, इतनी शिक्षा दी, इतने अच्छे अच्छे विचार दिये, इतने व्यावहारिक लाभों से मोहित किया, हिन्दुस्तानी समाज की हीनता अनेक प्रमाणों और अनुभवों से सिद्ध करके सुधार और सभ्यता की इतनी स्फूर्ति दी, तो भी ये लोग स्वाभिमान का त्याग नहीं करते"! सोचना चाहिए कि इन लोगों में अब तक स्वाभिमान क्यों बना है? कारण यही है कि इन लोगों ने केवल बुद्धि या तर्क की उन्नति को शिक्षा का सार नहीं माना—इन लोगों ने अपने अन्तःकरण की उच्च मनोवृत्तियों की उन्नति पर भी दृष्टि रखा है।

सच है, ईश्वर ने मनुष्य को जैसे बुद्धि (Reason) वैसे ही अनेक मनोवृत्तियाँ (Sentiments) भी दी हैं। मनोवृत्तियों में कुछ ऊँचे दर्जे की और बहुत नीचे हैं। प्रेम, श्रद्धा, सम्मान, उदारता, नम्रता, कृतज्ञता, आदि। सभी देशों के धर्मोपदेशकों और सदाचार ने इन श्रेष्ठ मनोवृत्तियों को उत्तेजित करने का यत्न है। प्राचीन समय में जो राष्ट्र उन्नत हो गये मनोवृत्तियों की शक्ति बहुत प्रबल थी। व्यक्ति कुटुम्बों के बर्ताव पर बुद्धि की अपेक्षा इन ही का आधिपत्य अधिक देख पड़ता है। यही कि दूरदर्शी महात्माओं ने धर्म, रूढ़ि और उपदेश इनकी महत्ता चिरकाल के लिए स्थापित कर दी है भी धर्म का उदाहरण लीजिए, यही देख पड़ेगा बुद्धि की नींव पर नहीं, किन्तु श्रेष्ठ मनोवृत्तियों सनाओं की नींव पर स्थापित किया गया है। मनु की उन्नति इन मनोवृत्तियों को अपने आधा प्रकट करने से होती है, केवल बुद्धि की स्वतन्त्रता होती। बुद्धि का कर्तव्य यही है कि वह इन को अच्छी तरह काम में लावे, उनकी शक्ति को उनके लिए सन्तोष तथा विजय के अवसर बार यदि बुद्धि इन मनोवृत्तियों को पदच्युत करके छीन लेगी तो मनुष्य का मनुष्यत्व ही नष्ट हो वह एक यन्त्र के समान शुष्क, निर्जीव और जायगा। इन मनोवृत्तियों का उदय पहले पहल में हुआ करता है। फिर ज्यों ज्यों उनकी शक्ति ह्रास होता जाता है। जो समाज इनकी उन्नति की नहीं देता उसका ह्रास होने लग जाता है। उदाहरण ग्रीक और रोमन लोगों में पाया जाता से ये केवल व्यक्तियों के सुख और स्वातन्त्र्य की देने लगे—केवल विचार और बुद्धि की स्वतन्त्र लगे—तभी से उनकी नैतिक और धार्मिक उन्नति ह्रास होने लगा। देखिए, किड के सामाजिक नामक ग्रन्थ में क्या लिखा है:—

"No [illegible] person, who has [illegible] the signs of [illegible], can have [illegible]

सरस्वती [illegible]

डा० सरयूप्रसादजी रेजिडेंसी हास्पिटल इंदौर।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

ubt that in a state of unrestricted ionalism, the institution of marriage l the family would undergo modifica- s, incompatible with the continuance that process of evolution with which interests of the race are bound up have unmistakable evidence of the version of the parental feelings among Greeks and Romans and other peoples der rationalistic influences."

बुद्धि-स्वातन्त्र्य (Rationalism) से होने वाले रिणामों को सिद्ध करने के लिए यह अवतरण काफ़ी है। ार करने से मालूम हो जायगा कि ये दुष्परिणाम हमारे के शिक्षित समाज में भी देख पड़ रहे हैं। अर्थात् रे सामाजिक ह्रास के लक्षण स्पष्ट दृगोचर हो रहे हैं। इन बुरे परिणामों से हम अपने समाज की रक्षा करना ते हों तो हम को अपनी बुद्धि की स्वतन्त्रता को दित करके अपनी शिक्षा-पद्धति में नैतिक और धार्मिक वृत्तियों के विकास को उचित स्थान देना चाहिए। इस य में पूर्वोक्त ग्रन्थकार लिखता है:—

"It would appear that the teaching of olutionary science as applied to society that there is only one way in which the ionalistic factor in human evolution be controlled; namely, through the strumentality of religious systems. It under the influence of these systems at the evolution of the race is proceed- g; it is in connection with these systems at we must study the Laws which gulate the character, growth and decay societies and civilizations."

अब हम को अपने सामाजिक ह्रास के कारणों की मांसा को अधिक बढ़ाने के बदले कुछ उपायों का चिन्तन ना चाहिए। पाठकों को स्मरण रहे कि हमारे समाज ह्रास [illegible] हैं:—(१) मस्तिष्क का अमर्यादित व्यय, (२) शहरों में रहने की प्रवृत्ति और (३) विदेशी शिक्षा तथा बुद्धि-स्वातन्त्र्य। इन कारणों से हमारे समाज पर जो बुरे परिणाम हुए और हो रहे हैं उनको टालने के लिए क्या करना चाहिए? इसका विचार फिर किया जायगा।

माधवराव सप्रे।

---

# मानसिक चमत्कार।

न की शक्ति बड़ी तीव्र है। हज़ारों घोड़ों की शक्ति रखनेवाला रेल का यन्त्रिन भी इतनी तेज़ी से नहीं दौड़ सकता जितनी तेज़ी से मन दौड़ता है। किसी समय भी वह चुपचाप नहीं बैठता। मन की चञ्चलता शास्त्रों में प्रसिद्ध है। हमारे प्राचीन ऋषियों ने मन की शक्ति का अच्छी तरह अनुभव किया था। उन्होंने उसमें काम लेने का तरीक़ा भी निकाल लिया था। योगाभ्यास क्या है? मन को अपने वश में लाना और उससे अपनी इच्छा के अनुसार काम लेना ही योगाभ्यास कहाता है। महामुनि पतञ्जलि योग का लक्षण इस प्रकार बताते हैं—योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः। अर्थात् चित्त की वृत्तियों को रोक रखना योग है। योग की सिद्धियों की प्राप्ति से मनुष्य क्या नहीं कर सकता? एक ओर योगी मग्न में लीन हो कर अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव करता है—दूसरी ओर यदि वह चाहे तो थोड़ा ही सा चमत्कार दिखला कर संसार को चकित कर सकता है। पर, योगी ऐसा चमत्कार बहुत कम दिखाते हैं। योग-बल के द्वारा योगी दूसरे मनुष्यों पर अपना प्रभाव डाल सकता है। साथ ही उनकी निर्बल मानसिक शक्तियों को वह अपने अधीन भी कर सकता है। मेस्मेरिज़्म हिप्नाटिज़्म आदि योग ही के कुछ भेद हैं। योग के अभ्यास से जब कुछ शक्ति प्राप्त हो जाती है तब लोग मदारी बन कर उसके चमत्कार दिखाने फिरते हैं। इससे उनकी यह शक्ति नष्ट हो जाती है। इसी से आर्य ऋषि उसे महत्त्व नहीं बताते। यही कारण है कि उनकी शक्ति और आगे नहीं बढ़ने पाती। योग-विद्या का जन्म इसी भारत से प्रकट हुआ था। आज भी विश्व भारत के [illegible] कहीं

प्रकृत योगी का मिलना असम्भव है। मिस्र के प्राचीन निवासियों और ईरानियों ने योग-विद्या यहीं से सीखी थी। योग-विद्या से सम्बन्ध रखनेवाले कुछ चमत्कारों का वर्णन हम यहाँ पर करते हैं। इन चमत्कारों की सत्यता के विषय में किसी प्रकार का सन्देह नहीं हो सकता। योरप के एक सज्जन ने भारत में आकर इस प्रकार का एक चमत्कार अपनी आंखों देखा था। ये चमत्कारों की सत्यता पर विश्वास न करते थे। इन्हें ये केवल हाथ की सफ़ाई समझते थे। एक रोज़ इन्होंने जो कुछ देखा उसका वर्णन ये इस प्रकार करते हैं—

मदारी (ऐन्द्रजालिक) एक हिन्दू था। उसकी आकृति बड़ी प्रभावशालिनी थी। उसके चारों ओर उसके साथी बैठे थे। मदारी अपने सामने ज़मीन पर बहुत से प्याले, डिब्बे और इसी प्रकार की कितनी ही और और चीज़ें रक्खे था। पहले उसने एक डिब्बे से कितने ही सांप निकाले। सांपों को सबके सामने रख कर वह अपने दर्शकों से कहने लगा—सब लोग इन्हें अच्छी तरह देख कर अपनी तसल्ली कर लो। ये सचमुच ही सांप हैं, और कोई चीज़ नहीं। दर्शकों में प्राणिशास्त्र जाननेवाला एक अँगरेज़ भी मौजूद था। उसने सांपों की अच्छी तरह से जांच करके कहा कि ये सचमुच ही देशी जाति के सांप हैं। इसके बाद मदारी कुछ देर तक धीमे स्वर से "उम, म, म, म, म, म, म, म" की आवाज़ करता रहा। उसकी यह आवाज़ ठीक वैसी ही थी जैसे मक्खी भिनभिनाती है।

मदारी के ऐसा करते ही सब के सब सांप अपनी अपनी पूंछों के सहारे खड़े हो गये और अपने अपने सिरों को हिलाने लगे। मदारी कभी कभी अपने डण्डे से उनके सिरों को धीरे धीरे छू देता था। कुछ मिनट बाद दर्शकों को मालूम होने लगा कि ये छोटे छोटे सांप धीरे धीरे बढ़ने लगे। यहाँ तक कि बढ़ते बढ़ते वे बड़े भयानक अजगर से हो गये। यह दृश्य देख कर सारे के सारे दर्शक—क्या अँगरेज़ क्या हिन्दुस्तानी—बड़े भयभीत हुए। इस पर मदारी ने चिल्ला कर सबसे कहा—चुपचाप बैठे रहिए। डरने की बात नहीं। इसके बाद उसने उलटी क्रिया प्रारम्भ की। सांप सब धीरे धीरे छोटे होने लगे। अन्त में वे इतने छोटे हो गये कि वे एकदम अदृश्य ही हो गये।

इसने एक और भी खेल किया। वह भी कम आश्चर्य-जनक था। मदारी ने अपने साथियों में से एक को अपने सामने बिठा लिया। उसके बैठ जाने पर मदारी उसके चारों तरफ़ ज़मीन पर एक लकीर खींच दी। फिर वह मदारी जादू के कुछ मन्त्र पढ़ने लगा। इस से लकीर के भीतर का वह लड़का लट्टू की तरह जल्दी घूमता हुआ दिखाई दिया। धीरे धीरे वह ऊपर और उठा। अन्त में घूमते ही घूमते वह बेहोश हो गया। मदारी ने फिर उलटी क्रिया प्रारम्भ की। लड़का ऊपर से नीचे उतरने लगा। पहले वह एक छोटे से गोले की तरह दिखाई दिया। अन्त में ज्यों ज्यों वह नीचे आता गया त्यों त्यों बड़ा होता गया। पृथ्वी पर आकर खड़े होने के बाद उसने मुसकुरा कर दर्शकों को प्रणाम किया।

इसके बाद एक और खेल हुआ। मदारी ने कुछ गुठलियां लेकर एक छोटे से रेत के ढेर में उन्हें दिया। गुठलियों को गाड़ने के बाद वह मन्त्र पढ़ पढ़ कर उस ढेर पर हाथ फेरने लगा। थोड़ी ही देर में ढेर में अङ्कुर निकल आये। देखते देखते बढ़ कर वह वृक्ष बन गया। वृक्ष पर डालियां और पत्ते भी निकल आये। अन्त में उस पर मौर भी दिखाई दिया और पल भर में पके हुए आम फल तैयार हो गये। ये पके हुए आम तोड़ कर दर्शकों में बांटे गये। अब मदारी ने फिर उलटी क्रिया आरम्भ की। वृक्ष धीरे धीरे लोप हो चला। अन्त में मदारी ने उसने अपनी गुठलियां निकाल लीं और वृक्ष भी अन्तर्हित हो गया। गुठलियां निकाल कर उसने सब लोगों को दिखा दिया।

एक और भी आश्चर्य्य-जनक खेल मदारी ने और उसने रस्से का एक लपेटा हुआ गोला बाहर निकाल दर्शकों के हाथ पर रख कर उसे भली-भांति देख लेने को कहा। इसके बाद उसने रस्से के सिरे पर एक डोरी और उस गांठवाले सिरे को आकाश में उछाल दिया। रस्से की लपेट खुल गई और वह ऊपर आकाश में जाने लगा। धीरे धीरे सारा का सारा रस्सा खुल गया। उसका सिरा वायु में इस तरह लटकता हुआ दिखाई देने लगा मानों गांठ को किसी ने कई मील ऊंचे शून्य में बांध दिया हो। इतने में मदारी का एक साथी रस्से पर चढ़ गया और नीचे लटकते हुए उसके छोर को पकड़ लिया

ी के हुक्म से वह आदमी रस्से के सहारे ऊपर आकाश
ढ़ने लगा। बहुत ऊपर जाने पर वह एक चिह्न सा दिखाई
लगा। अन्त में वह वहीं अन्तर्द्धान हो गया। इस पर
ी ने अपने मुँह से कुछ और शब्द निकाले और रस्सा
कर आकाश में इतना ऊपर जा पहुँचा कि उसका नज़र
ा कठिन हो गया।

इस खेल के साथ तमाशा समाप्त हुआ। उस समय एक
रेज़ कैमरा हाथ में लिये वहां खड़ा था। जब आदमी
ी पर चढ़ने लगा तब उसने उसका फोटो ले लिया। पर,
निगेटिव-प्लेट को उसने धोया तब न उस आदमी की, न
हरण की, न उस रस्से की, किसी की भी तसवीर उस
नज़र न आई। केवल मदारी की तसवीर शीशे पर उतरी
आई दी। पर वह बड़ी विचित्र थी। मदारी अजीब तरह
झुककर्राता हुआ बैठा दिखाई दिया। बात यह थी कि
तब में यह खेल किया ही न गया था। वे सारे खेल केवल
ट-भ्रम के कारण दर्शकों को दिखाई दिये थे। चिरकाल
अभ्यास से मदारी को दूसरे का मन अपने वश में करने
शक्ति प्राप्त थी। इसी शक्ति के द्वारा उसने दर्शकों पर
सा प्रभाव डाल दिया था।

एक और लेखक का बयान सुनिए। वह अमरीका के
क समाचार पत्र का संवाद-दाता था। उसके कथन का
ांश, उसी के शब्दों में, हम नीचे देते हैं—

भारतवर्ष की एक बड़ी नदी में मैं जहाज द्वारा यात्रा
र रहा था। जहाज़ जब बन्दर पर पहुँचा तब एक हिन्दु-
ानी केवल एक लँगोटी लगाये हुए पुर्ज़ी से जहाज़ पर
आया। तैरते समय डूबने से बचने के लिए उसने एक
ाल रङ्ग की गठड़ी गले से बाँध ली थी। वह एक मामूली
साधु सा मालूम होता था। पर, शीघ्र ही उसने अपने गुणों
परिचय देना आरम्भ कर दिया।

जहाज के तख़्ते पर पैर रखते ही उसने वहीं पर पड़ा
ुआ रस्से का एक गोल गेंद उठा लिया। उसका एक सिरा
ाज कर उसमें उसने गाठ लगा दी। गाठ को इसी दम उसने
ी ज़ोर से आकाश की ओर उछाल दिया। गाठ ऊपर को
ढ़ती जाती थी और रस्सी का गोला खुलता जाता था।
ुलते खुलते सारी रस्सी खुल कर आकाश में चढ़ गई और
ही पर लोप हो गई। उस समय जहाज पर एक सन्नाटा
एक टूटा हुआ नारियल लिये खड़ा था। साधु ने उससे नारियल ले लिया और खड़े होकर उसका पानी एक डोल में गिराने लगा। एक डोल भर गया। तब नारियल के नीचे दूसरा डोल रक्खा गया। वह भी शीघ्र ही भर गया। इसी प्रकार उस नारियल के पानी से कोई बारह डोल भर गये। डोलों को भर चुकने बाद उसने उनमें से एक को हाथ में उठा लिया और मन्त्र पढ़ कर शीघ्र ही उसने उसे वहां से लोप कर दिया। थोड़ी देर बाद उसके हाथ में एक चिह्न सा देख पड़ा। यह चिह्न क्रमशः बढ़ते बढ़ते पानी का लबालब भरा हुआ डोल बन गया। मदारी ने उसे जहाज के तख़्ते पर उलट दिया।

इस खेल को एक युवती भी देख रही थी। कुछ दूर उसका बच्चा उसकी "आया" के पास खड़ा था। एकाएक माता क्या देखती है कि आया ने दोनों हाथों पर बच्चे को उठा लिया और शीघ्र ही ऊपर आकाश में उड़ कर वहीं अन्तर्द्धान हो गई। माता बेसुध हो कर पागल की तरह चिल्लाने और आकाश की ओर टकटकी लगा कर देखने लगी। आकाश की ओर मुँह उठाये वह थोड़ी ही देर में क्या देखती है कि एक बादल का टुकड़ा नीचे आ रहा है। यह बादल धीरे धीरे आया के रूप में बदल गया। जैसे जैसे आया नीचे आती गई वैसे वैसेही उसका आकार बड़ा होता गया। अन्त में वह जहाज़ के तख़्ते पर खड़ी हो गई। जहाज पर खड़ी होते ही आया ने बच्चे को उसकी माता के हाथों में दे दिया। माता ने बच्चे को छाती से लगाकर आया से कहा—तुम मेरे बच्चे को क्यों ले गई थीं? आया ने उत्तर दिया—मेम साहब, बच्चा तो सोया हुआ था, मैं इसे कहीं नहीं ले गई। यह सुन कर माता बड़ी चकित हुई। इस पर साधु बोला, मेम-साहबा विचित्र वस्तुओं का केवल स्वप्न देख रही थीं। यह खेल साधु की अलौकिक कल्पना का फल था। इसने उसका चित्त मेस के मन पर अङ्कित कर दिया था।

इस खेल के बाद साधु ने कांच की कई गेंदें लीं। उनमें से एक दर्शकों के बिलकुल बीच में फेंक दी। उसके फेंकते ही वह गेंद एक बड़े से पेड़ के रूप में परिणत हो गई। उसकी शाखाओं पर अनेक प्रकार के फल लगे हुए थे। साधु ने उनमें से एक फल तोड़ कर खाया और उसके बीज को उसने वहीं पर बो दिया। बीज बोते ही वहां पर एक छोटा सा पौधा उग आया। उसने उसे पानी से सींचा। पौधा बढ़ कर बड़ा वृक्ष हो गया। उसमें फल लग

गिरने लगी। कुछ देर बाद उसने आज्ञा दी—बन्द करो। जल-धारा का गिरना फ़ौरन ही बन्द हो गया। फिर उसने आज्ञा दी—चलो। बस वह चलने लगी। इसी तरह उसने कई बार किया। इसके अनन्तर उसने एकाएक एक अजगर पैदा कर दिया। इस अजगर को देखते ही लोग बहुत डरे। तब साधु की आज्ञा पाते ही वह एकदम लोप हो गया। अजगर के बाद उसने सूर्य के प्रकाश में सब के सामने कितनी ही मनुष्य मूर्तियाँ पैदा करदीं। ये मूर्तियाँ धीरे धीरे भाफ़ के बादलों की तरह वहीं अन्तर्द्धान हो गईं। इन अद्भुत तमाशों के बाद उसे काफ़ी दान मिला। उसे लेकर वह वहाँ से चलता बना।

ऊपर के सब खेल मानसिक प्रभाव के ही फल हैं। जो लोग मानसिक प्रभाव का विरोध करते हैं और उसे अपने ऊपर नहीं पड़ने देते, उन्हें इस प्रकार के दृश्य बहुधा नहीं देख पड़ते। अन्य दर्शक जब मानसिक भ्रम में पड़े हुए इस प्रकार के स्वप्न देखने रहते हैं तब प्रभाव न पड़े हुए लोगों को सिर्फ़ मदारी एकाग्र-चित्त हो कर अपनी कल्पना-शक्ति का प्रयोग करता हुआ देख पड़ता है। इस तरह के और भी अनेकानेक खेल किये जा सकते हैं। अभी कुछ दिनों पहले सुना था कि मदरास में एक साधु आया है। वह दर्शकों की वर्षा करता है। यह भी मानसिक भ्रम का ही फल है। कैमरे से लिया हुआ इस तरह का कोई भी चित्र फ़ोटोग्राफ़ी के प्लेट पर नहीं उतरता। प्लेट पर मानसिक एकाग्रता से बैठे हुए केवल मदारी का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। मदारी अपने भीतर एक ऐसी शक्ति प्राप्त कर लेता है जिसके द्वारा वह एकही समय में बहुत से लोगों को कई तरह की वस्तुएँ दिखा सकता है, सुना सकता है और खिला भी सकता है। वास्तव में ये वस्तुएँ विद्यमान नहीं होतीं।

एक भारतीय सज्जन लिखते हैं कि जब मैंने पहले पहल ऐसे खेल देखे तब मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। अन्त में मैंने स्वयं अपने पर इनकी परीक्षा करने का निश्चय किया। मदारी के पास भीड़ थी। जब मैं दर्शकों के साथ खड़ा हुआ तब मुझे ये सब अद्भुत दृश्य एक एक कर के देखने पड़े। पर जब मैं दर्शकों से अलग हो कर एक दूसरी जगह से देखने लगा तब मुझे मदारी के सिर्फ़ दो हाथ काम करते देख पड़े। इससे मैं मदारी के पास गया। अब भी मुझे कोई [illegible] पड़ा। इससे सिद्ध हुआ कि मदारी का प्रभाव सीमा तक ही था। इस सज्जन ने आम के पेड़ रस्से वाले (जिनका वर्णन ऊपर हो चुका है) की ख़ूब परीक्षा की। अन्त में उसे निश्चय हुआ प्राकृतिक नियमों के नहीं, किन्तु मानसिक दिखाई देती हैं। मदारी इन्द्रजाल रचने के [illegible] कर बैठता है। वह मुँह से उम, म, म, [illegible] धीमी आवाज़ करता हुआ अपने धड़ को हि रहता है। इसी लिए कितनेही मनुष्य समझ इस क्रिया का सम्बन्ध जादू से है। पर, उन शारीरिक चेष्टा का उसके कार्यों से कोई सम्ब अच्छा अभ्यास किये हुए लोग कभी अपने हिलाते डुलाते। वे पद्मासन मार कर समाधि खेल के समय शरीर का हिलाना-डुलाना दर्श बढ़ाने के लिए है।

तमाशा देखने वालों के मन पर प्रथम [illegible] का चित्र अङ्कित करने के लिए प्रायः [illegible] विधि का अवलम्बन किया जाता है—

मदारी युवा अवस्था से अपने मन में [illegible] बनाने का अभ्यास करता है। कल्पना की पहले उसने किसी सुपरिचित वस्तु, जैसे [illegible] का स्पष्ट चित्र अपने मन पर खींचना [illegible] खींचने के लिए उसने अपनी इच्छा-शक्ति [illegible] मदारी इतना अभ्यास कर लेता है कि [illegible] नेत्रों के सामने कल्पित वस्तु ठीक वैसी ही दि जैसे किसी व्यक्ति का मुख-मण्डल देखने [illegible] कार के मन में उसका चित्र ज्यों का त्यों [illegible] और फिर बिना देखे ही वह उसे अङ्कित कर अनन्तर मदारी बड़ी बड़ी वस्तुओं का, वस्तुओं [illegible] बढ़ते बढ़ते अधिकाधिक अद्भुत दृश्यों का चि पर अङ्कित करता है। किसी किसी दिनों के [illegible] में दो ही एक ऐसे निकलते हैं जो अपने का स्पष्ट चित्र खींच कर उसके खेल दिखा स [illegible] शक्ति प्राप्त हो जाती है तब मदारी अपनी इच्छा-शक्ति के द्वारा अपने आस-पास के [illegible]

प्रकार के मानसिक श्रम पैदा कर देता है। इस शक्ति में बहुत समय लगता है। दो चार वर्षों में यह प्राप्त हो सकती।

मन्तराम गोहल, बी०ए०

---

## भारतीय किसान।

भारतवर्ष आज ही से नहीं, सदा से, कृषि प्रधान चला आया है। आज, इस सभ्यता के ज़माने में भी, यहाँ की तीन चौथाई जन संख्या प्रत्यक्ष रीति पर खेती करती है, बाक़ी एक चौथाई में एक बड़ा आठ का सम्बन्ध भी खेती से ही है। रे शब्दों में यह समझिए कि यहाँ की लगभग ी जन संख्या किसान है। जिस किसान की ी महिमा है, जिस किसान की मिहनत पर ारा जीवन-मरण अवलम्बित है, और जो किसान ारा ही नहीं, किन्तु दूर दूर देशस्थ लोगों का भी र-पोषण करता है उसी भारतीय किसान की दशा इस सभ्यता के ज़माने में बहुत ही शोचनीय है।

शीत ऋतु में जब हम लोग बनियान, कमीज़, टर, पासकट और कोट डाट कर भी डरते रहते कि कहीं कफ-ज्वर न हो जाय, दरिद्र किसान नङ्गे दन हवा में खड़ा रहता है और हमारे लिए कठिन श्रम करता है। सनसनाती हुई लू भी उसके शरीर को छेदती हुई निकल जाती है और बरसात ा सारा पानी भी उसके शरीर पर ही पड़ता है। या आराम से घर पर शय्या पर लेटे हुए हम लोगों को कभी इस बात का ध्यान आता है? क्या भी हम लोग यह सोचते हैं कि इन दरिद्रियों के ति भी हमारा कुछ कर्तव्य है? कर्तव्य को जानें तिजिए। इस संसाररूपी बाज़ार में हमको प्रत्येक स्तु का मूल्य चुकाना पड़ता है। क्या हम लोग न किसानों की वस्तु (परिश्रम) का ठीक ठीक मूल्य चुकाते हैं?

हम देखते हैं कि यहाँ के किसानों के मुक़ाबले में योरप और अमेरिका के किसान ज़ियादह ख़ुश और मालदार हैं। इसका कारण यह है कि उनकी स्थिति और हमारे किसानों की स्थिति में आकाश-पाताल का अन्तर है। वहाँ के किसान समाज में अच्छा दर्जा रखनेवाले, सुशिक्षित, बहुश्रुत और अनुभवी होते हैं। और, यहाँ के किसान ठीक इसके विपरीत। वहाँ खेती करनेवाला समाज में अच्छा दर्जा रखता है और बड़े से बड़े ओहदे पा सकता है। पर यहाँ तो हल छूते ही, जाति छूत हो जाती है। किसान का नाम सुनते ही हम, बड़े लोग, नाक भौंह सिकोड़ने लगते हैं। शिक्षा और अनुभव प्राप्त करने का मौक़ा तो इन बेचारों को कभी मिलता ही नहीं। यह बात थोड़े में इस तरह कही जा सकती है कि यहाँ के किसान हमारे यहाँ के ज़मींदारों की हैसियत के होते हैं और यहाँ के किसान यहाँ के मज़दूरों से भी गई गुज़री दशा में रह कर कालयापन करते हैं। बहुतों का अनुमान है कि इस स्थिति के कारण भारतीय किसान लाभ उठाता है और पश्चिमी किसान हानि। पर यह सच नहीं। कुछ लोग कहते हैं कि भारतीय किसान अपने खेत का स्वामी होता है। उसके खेत में जो कुछ पैदा होता है वह सब उसी का होता है। उसका चाहे वह खेत करे चाहे कृषण। सुनिए। किसान के खेत में जो कुछ पैदा होता है उसका वह मालिक अवश्य है। परन्तु उसके कितने ही हिस्सेदार भी होते हैं—ज़मींदार, साहूकार, आबपाशी का महकमा और मज़दूर। इन हिस्सेदारों में से पहले तीन इतने ज़बरदस्त हैं कि इनका हिस्सा बिना चुकाये किसान का निस्तार ही नहीं। इनका हिस्सा चुका कर उस बेचारे के पास जो कुछ बच रहता है वह साल भर के बराबर है। उससे दरिद्र भारतीय किसान येन केन प्रकारेण साल के दो तीन महीने मात्र काट सकता है। फिर उसे अपना उदर पालन करने के लिए या तो ज़मींदार के दरवाज़े पर धरना देना पड़ता है या अपने आपको साहूकार के पञ्जे में फँसाना पड़ता है।

जाता है और टेलीफ़ोन के द्वारा दूरस्थ लोगों में परस्पर बातचीत करा सकता है।

गुणी से गुण कभी पृथक् नहीं रहता। निराकार का गुण साकार नहीं हो सकता, यह अटल सिद्धान्त है। तब साकार शब्दों को निराकार आकाश का गुण कैसे मान लें। ज्वालामुखी पर्वत बिना अन्य किसी प्रेरक कारण के फटने का शब्द करता है, दियासलाई का बक्स तेज़ धूप में अपने आप जल उठता है। इसी प्रकार आकाश द्रव्य के बिना भी, यदि किसी अन्य प्रेरक कारण से स्वतन्त्र शब्द हों, तो शब्द आकाश का गुण माना जाय। घोखली की तरह घण्टा पोला होता है। इसी से वह बजता है। पर, रेल की पटरी का टुकड़ा सर्वथा ठोस है। उसमें पोलापन नहीं। किन्तु लटका कर पीटने पर वह भी घण्टे की तरह बजता है। घण्टे की पोली जगह यदि भर दी जाय तो भी वह आवाज़ कर सकता है। इससे साबित हुआ कि किसी चीज़ से शब्द पैदा होना उसके पोलेपन पर अवलम्बित नहीं। कूटस्थ धरती और उस पर पड़ी हुई ठोस शिला भी ठोंकने से बजती है। माना कि बजती ठोस है, पर बजती है अवश्य। जिस वस्तु को किसी अन्य वस्तु का आवरण होता है वह ठोस भी आवाज़ करती है। आवरण होने से एक पदार्थ की विद्युत् का संक्रमण अन्य संसर्गस्थ पदार्थ में होता रहता है। इससे शब्द-तत्त्व की शक्ति क्षीण हो जाती है और वह ठोस आवाज़ देने वाली हो जाती है। जो पदार्थ किसी सूक्ष्म पदार्थ के आश्रय से अधर में स्थिर किया जाता है वह बड़ा शब्द करता है। उसका शब्द ठहरता भी दीर्घ समय तक है। यथा गुम्बज़ में की हुई आवाज़ बहुत देर तक ठहर कर प्रतिध्वनि देती है और ग्रामोफ़ोन के रिकार्डों में भरा हुआ शब्द जब चाहें तभी निकाल सकते हैं। इससे सिद्ध है कि शब्द-किरणें साकार और मूर्तिमान् हैं। तभी तो वे छिद्र-रहित बन्द घर से बाहर नहीं जा सकतीं। वे ग्रामोफ़ोन के सादे रिकार्डों के भीतर सछिद्रहीन भी कर दी जाती हैं। यदि वे मूर्तिमान् न होतीं तो पकड़ी न जा सकतीं। कार होतीं तो उनकी छाया सादे रिकार्ड पड़ सकती। अतएव शाब्दिक किरणें अ के सूक्ष्म परमाणुओं के समूह हैं।

अंश, अंशी में विद्यमान रहता है। इ शाब्दिक अंश जड़ पदार्थों में विद्यमान है प्रत्यक्षावलोकन इस तरह हो सकता बोतल के मुँह पर मुँह लगा कर शब्द आपको शब्द की क्रिया स्पष्ट मालूम शब्द का यथार्थ रूप कर्णगोचर न होग सिद्ध है कि जड़ पदार्थों ही से शब्द की उ है। वायु उसके सञ्चार का निमित्त होने से के वचन दूसरे पुरुष के कानों तक पहुँच

"साक्षरोऽनक्षरश्चैव शब्दो भाषात्मको द्वि
प्रायोगिको वैस्रसिको द्विधा भाषात्मकोऽपि
(तत्त्वार्थ

शब्द दो प्रकार के होते हैं। एक दूसरे अभाषात्मक। साक्षर और अनक्षर भाषात्मक कहते हैं। मनुष्यों का उच्चा है। दो इन्द्रियों वाले जीवों से लगा कर पशुओं तक का उच्चारण अनक्षरात्मक का उच्चारण साक्षर न होने पर भी भा क्योंकि, पशु उसे समझते हैं। वह परिभ

अभाषात्मक शब्द भी दो प्रकार के एक प्रायोगिक, दूसरे वैस्रसिक। आवाज़, घण्टे का बजना, इञ्जिन का इत्यादि शब्द किसी दूसरे सजीव पदार्थ से पैदा होते हैं। इसलिए ये प्रायोगिक सिक शब्द अनेक पदार्थों के अनायास पैदा होते हैं। जैसे, सोडे की बोतल का से फट कर शब्द करना, शीत और उष्ण के संसर्ग से बादलों का भड़क उठना इस

इनको अभाषात्मक शब्द इसलिए इनके श्रवण से निश्चयपूर्वक बोध नहीं हो किसका शब्द है।

विश्वम्भरदास ग

सरस्वती—"श्री-नेरमल-शारदा-सदन"

[illegible]

[illegible] प्रेस, प्रयाग।

# विविध विषय।

## १—बङ्गाल में हिन्दी-शिक्षा की आवश्यकता।

भारतवर्ष के एक प्रदेश के शिक्षित लोगों को यदि दूसरे प्रदेश के शिक्षित लोगों से बात-चीत या पत्र-व्यवहार करना होता है तो अँगरेजी में करना पड़ता है। अनेक स्थलों में ऐसा करना अनिवार्य्य है—अँगरेजी का सहारा लिये बिना कार्य्य-सिद्धि का और कोई साधन ही नहीं। हम इसकी निन्दा नहीं करते। किन्तु यदि हम किसी देशी भाषा के द्वारा यह काम करते तो देश के लिए और भी अच्छा होता, समय की बचत भी अधिक होती। कल्पना कीजिए कि हम किसी अन्य प्रान्त में किसी गृहस्थ के अतिथि हुए। उस देश में यदि हम उसी की मातृ-भाषा में बात-चीत कर सकें तो उसके साथ जितनी घनिष्टता और हृदयता का होना सम्भव है उतना अँगरेजी में बात-चीत करने से सम्भव नहीं। अब हिन्दी सीख लेने से हम उत्तरी भारत में सभी कहीं अपना काम बहुत कुछ चला सकते हैं। राजपूताना, मध्य-प्रान्त, यहाँ तक कि अधिकांश महाराष्ट्र प्रान्त में भी हिन्दी से काम चल जाता है। शिक्षित बङ्गालियों के लिए हिन्दी सीख लेना बहुत ही सहज है। दो ही तीन महीने पढ़ने से हम चलाने लायक हिन्दी सीखी जा सकती है। हम केवल उन्हीं को शिक्षित नहीं समझते जिन्होंने अँगरेजी शिक्षा पाई है। जो लोग केवल बँगला जानते हैं और बङ्गला की ही उत्तमोत्तम पुस्तकें और सामयिक पत्र पढ़ते हैं उन्हें कुछ कम शिक्षा-प्राप्ति नहीं होती। इसके सिवा बहुत-पाठशालाओं के अध्यापकों और ऊँचे दरजे के विद्यार्थियों को भी हम शिक्षित ही समझते हैं। इस प्रकार के सभी लोग दो तीन महीने में बहुत कुछ हिन्दी सीख सकते हैं। हाँ, हिन्दी में विशेष विज्ञ होने के लिए अवश्य ही बहुत दिनों तक लगातार इसे सीखना चाहिए।

यह बात नहीं कि केवल बात-चीत करने और चिट्ठी-पत्री लिखने के लिए ही हिन्दी सीखना चाहिए। आधुनिक हिन्दी-साहित्य में विशेष उत्कृष्ट ग्रन्थ न होने पर भी पढ़ने लायक कितने ही ग्रन्थ लिखे जा चुके हैं और लिखे जा रहे हैं। किन्तु प्राचीन हिन्दी-साहित्य में अनेक अमूल्य रत्न विद्यमान हैं। धार्म्मिक साहित्य के लिए भारतवर्ष बहुत विख्यात है। यह सारा का सारा धर्म्म-साहित्य एक-मात्र संस्कृत और पाली भाषा ही में नहीं है। तामील, तिलेगू, मराठी, गुजराती, हिन्दी, गुरमुखी, बँगला आदि भाषाओं के धर्म्म-साहित्य में भी भारत के आध्यात्मिक ऐश्वर्य का अवस्थान है। मीराबाई, कबीर, दादू, तुलसीदास, हरिदास, गरीबदास, सूरदास आदि के द्वारा रचित गीत, पद और उपदेश माला धर्म्मपिपासु जनों के आदर की चीज़ें हैं। केवल यही चीजें पढ़ लेने से हिन्दी सीखने का श्रम सफल हो सकता है। किन्तु इन महात्माओं की रचना प्रचलित हिन्दी में नहीं। तथापि, हिन्दी में कुछ दूर तक प्रवेश हो जाने पर इनके ग्रन्थ भी समझ में आ सकते हैं।

दो परिवारों के स्त्री-पुरुषों में यदि आलाप, परिचय और बन्धुत्व स्थापित हो जाय तभी यह कहा जा सकेगा कि उनमें परस्पर घनिष्टता है। भारत के भिन्न भिन्न प्रदेशों और प्रान्तों के विषय में भी यही बात है। भिन्न भिन्न प्रदेशों के अँगरेजी शिक्षित पुरुष यदि अँगरेजी ही में परस्पर गिट-पिट करें तो उतने ही से वे एक-जातीयता के सूत्र में बद्ध नहीं हो सकते। अँगरेजी पढ़ी-लिखी देश-भर स्त्रियाँ यदि परस्पर अँगरेजी में बात-चीत करें तो इससे भी विशेष लाभ की सम्भावना नहीं। देश-भाषा के सहारे यदि इनमें सखी-भाव की स्थापना हो तभी राष्ट्रीय परिवार-भाव का उदय हो सकेगा और तभी भिन्न प्रान्तवासिनों में घनिष्टता की उन्नति भी हो सकेगी। स्त्रियों में अँगरेजी शिक्षा का विस्तार बहुत ही कम है। अतएव, यह सम्भव नहीं कि अँगरेजी में बात-चीत और भाव विनिमय द्वारा वे एक अखिल की सृष्टि कर सकें। बङ्गालियों को स्त्रियों के लिए हिन्दी सीखना और हिन्दी बोलने वाली स्त्रियों के लिए बँगला सीखना अत्यन्त आवश्यक है। हमारी स्त्रियों के लिए हिन्दी जानना बहुत आवश्यक है। हिन्दी जानने से शिक्षित बङ्गालियों की कार्य्यकारिता भी बहुत बढ़ सकती है। बङ्गाल में अनेक कर्म्मचारियों की आवश्यकता है। हिन्दुस्तान (हिन्दी भाषा) में तो इससे भी अधिक है। इसी भारत और भारतवासी के इन सेवकों के पास कर्म्मचारियों के लिए बहुधा पत्र लिखा करते हैं। जो शिक्षित इस प्रकार

अध्यापन कार्य करने जायँगी उनके लिए हिन्दी जानना बहुत ही आवश्यक है ०

बँगला के मासिक-पत्र—"प्रवासी"—से अनुवादित

## २—राय साहब डाक्टर सरयूप्रसाद का हिन्दी-प्रेम।

इन्दौर में—सर्व-भारत-हिन्दी-साहित्य-समिति—नाम की एक सभा है। इन्दौर के राय बहादुर सेठ हुकुमचन्द उसके सभापति हैं। सेठ साहब बड़े दानी और विद्योन्नति के बड़े पक्षपाती हैं। सुनते हैं, उन्होंने धार्मिक और विद्योन्नति-विषयक कार्यों में कोई १० लाख रुपया ख़र्च किया है। इस सभा के मन्त्री भी बड़े योग्य और हिन्दी के बड़े प्रेमी हैं। आपका नाम है—डाक्टर सरयूप्रसाद। आप इन्दौर के रेज़िडेंसी हास्पिटल में काम करते हैं। चिकित्सा में आपकी बड़ी ख्याति है। हिन्दी के नामी लेखक और सत्कवि पण्डित गिरिधर शर्म्मा ने आपकी चिकित्सा से बहुत लाभ उठाया है।

इस सभा का एक अधिवेशन, इन्दौर में, ६ जुलाई को हुआ। उसकी रिपोर्ट की एक कापी हमारे पास किसी ने भेजने की कृपा की है। उससे हमें यह पता चला कि महाराष्ट्र-सम्मेलन में हिन्दी-प्रचार के सम्बन्ध में—उसे राष्ट्र-भाषा मानने के सम्बन्ध में—जो प्रस्ताव पास हुआ था उसका अधिकांश श्रेय डाक्टर सरयूप्रसाद ही को है। उस प्रस्ताव के कर्त्ता श्रीयुत किबे महाशय शायद डाक्टर साहब के मित्र हैं। अतएव, सम्भव है, उन्होंने डाक्टर साहब ही की प्रेरणा से वह प्रस्ताव उपस्थित किया हो। यदि ऐसा न हो, तो भी डाक्टर साहब का उतनी दूर बम्बई जाना, उस प्रस्ताव का युक्तिसङ्गत और प्रमाण-दृढ़ अनुमोदन करना और जोड़ तोड़ लगा कर उसे "पास" कराना भी कम प्रशंसा की बात नहीं। पूर्वोक्त रिपोर्ट से यह भी ज्ञात हुआ कि गुजराती के साहित्य-सम्मेलन का भी हिन्दी-प्रचार-विषयक जो प्रस्ताव, अभी हाल में, "पास" हुआ है वह भी आप ही के प्रयत्न, यत्न और श्रम का फल है। लिखा है कि आप ही ने अपने मित्र प्रोफ़ेसर रुस्तम अहमदाबाद से सूरत भेजा था। आप ही की प्रेरणा से महाराय ने गुजराती के सम्मेलन में हिन्दी को राष्ट्र-स्वीकार करने का प्रस्ताव किया और उसे "पास" भी कराया था। इस सभा की स्थापना हुए अभी थोड़े ही दिन हुआ है। पर, इतने ही थोड़े समय में डाक्टर साहब ने उसमें ये दो काम बड़े ही अच्छे कर दिखाये।

सभा के तृतीय अधिवेशन की यह रिपोर्ट है कि "एक काम बहुत ही उपयोगी हुआ। सभापति श्रीयुत [illegible] बापना, बी० ए०, बी० एल-एल० बी०, एडवोकेट सभा-भवन के चन्दे के लिए एक अपील की। इस पर कोई चार हज़ार रुपया चन्दा हुआ। इससे सभा के लिए एक इमारत बनेगी। यह भी डाक्टर साहब ही की इच्छा की पूर्ति जान पड़ती है, क्योंकि [illegible] आपकी वक्तृता का जो सारांश दिया गया है उसमें इस कामना का भी उल्लेख है। डाक्टर साहब [illegible] के पुस्तकालय में अच्छी अच्छी पुस्तकें ही नहीं एकत्र चाहते। वे सभा के प्रबन्ध से हिन्दी में [illegible] पुस्तकें लिखाना और अन्य भाषाओं से अनुवाद भी चाहते हैं। ईश्वर करे आपकी ये सदिच्छायें सफल हों।

## ३—ज़ेन्द-अवस्ता।

अँगरेज़ी की एक सामयिक पुस्तक में पारसियों के पवित्र पुस्तक ज़ेन्द-अवस्ता पर एक अच्छा लेख निकला है। उसमें अध्यापक रोट के एक लेख के आधार पर कहा गया है कि—

"ज़ेन्द-अवस्ता और वेद, इन दोनों पुस्तकों का उत्पत्ति-स्थान एक ही है। वेदों की ज्ञानधारा विशेष विशुद्ध और निर्मल है। वह आरम्भ में जैसी थी वैसी ही अब तक चली आई है। पर ज़ेन्द-अवस्ता की धारा की निर्मलता बहुत कम हो गई है। उसके प्रवाह की दिशा भी बदल गई है। इस समय तो इस बात का पता लगाना भी कठिन हो गया है कि आरम्भ में उसका रूप और उसका आकार कैसा था।"

कुछ विद्वानों की राय है कि अवस्ता की [illegible] रचना ईसा के १००० वर्ष पहले हुई थी। कुछ [illegible]

० प्रवासी सम्पादक के कथन से हम सम्पूर्ण सहमत हैं। आपकी न्यायशीलता सर्वथा प्रशंसनीय है। आशा है, बङ्गाली महाशय हिन्दी सीख कर राष्ट्रीय भाव के उदय और विस्तार की चेष्टा करेंगे और हिन्दी से विरुदावली-चरण करना छोड़ देंगे।
सम्पादक।

१०० वर्ष और कुछ ६००० वर्ष पहले की बताते हैं। लोगों का अनुमान है कि अवस्ता में वर्णन किये गये ज़र या ज़रथुस्त्र ईसा के ७०० वर्ष पूर्व विद्यमान थे। अवस्ता की भाषा और उसमें उल्लिखित धर्म्म पर विचार करने से यही कहना पड़ता है कि उसकी रचना ईसा के कई वर्ष पूर्व से भी बहुत पहले की है। अवस्ता अपनी इस अवस्था में उस रूप में न थी जिस रूप में उसे हम इस समय देखते हैं। उसके भिन्न भिन्न अंश या मन्त्र भी अलग थे। वे बिखरी हुई दशा में विद्यमान थे। वेदों की तरह उनका भी संग्रह पीछे से हुआ है। सिकन्दर के समय में उनका यह संग्रह-रूप प्रचलित था। इससे भी यह है कि इसकी रचना उस समय के बहुत पहले हो चुकी थी। फ़ारिस में गुश्तास्प नाम का एक बादशाह हो गया है। वह कयानियन-वंश का था। उसका समय सन् ईसवी से १३०० वर्ष पूर्व माना जाता है। लोगों का विश्वास है कि ज़रथुस्त्र इसी बादशाह के समय में विद्यमान थे। यदि यह अनुमान सच है तो अवस्ता तीन हज़ार वर्ष से भी अधिक पुरानी हुई। ईसा के जन्म के १००० वर्ष पहले से लेकर सिकन्दर की चढ़ाई तक ज़रथुस्त्र का चलाया हुआ धर्म्म बड़ी उन्नति पर था। तदनन्तर उसकी अवनति होने लगी। ईसा के कोई ३०० वर्ष पहले अरदेशर नाम के बादशाह ने फिर इस धर्म्म का पुनरुज्जीवन या पुनरुद्धार किया। उसी ने इस धर्म्मग्रन्थ को लिपिबद्ध भी कराया। उसके पहले वेदों की तरह अवस्ता भी इस धर्म्म के पण्डितों के कण्ठ ही में वास करती थी। ६५१ ईसवी में इस धर्म्म का—इस अग्निपूजक सम्प्रदाय का—फ़ारिस से लोप हो गया। अरब के मुसलमानों ने फ़ारिस जीत कर वहाँ अपना धर्म्म चलाया। इस धर्म्म के कुछ अनुयायी भारत को भाग आये। उन्हीं ने इसे इस देश में जीवित रक्खा। यहाँ वह पारसी नाम से प्रसिद्ध है।

अवस्ता पाँच भागों में विभक्त है। किसी भाग में धर्म-प्रचार का वर्णन है, किसी में स्तुति और प्रार्थना के मन्त्र हैं, किसी में मनुस्मृति के सदृश धर्माचरण के नियम हैं। कहीं कहीं दर्शनशास्त्र, ज्योतिष, आयुर्वेद, वनस्पतिविद्या आदि से सम्बन्ध रखने वाली बातें भी हैं। इस ग्रन्थ की भाषा "ज़ेन्द" है। इसी से इसके भाग में अवस्ता के पहले "ज़ेन्द" शब्द रक्खा गया है। यह भाषा संस्कृत से बहुत कुछ मिलती जुलती है। इसी से विद्वानों का अनुमान है कि पारसियों और आर्य्यों के पूर्वज किसी समय एक ही देश में रहते और एक ही भाषा बोलते थे। अनेक वैदिक देवताओं के नाम भी अवस्ता में पाये जाते हैं। पर, वहाँ "देव" शब्द का अर्थ उलटा किया गया है। वह आर्य्यों के "दैत्य" शब्द के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। कुछ वैदिक देवताओं के गुण और स्वभाव तो अच्छे बताये गये हैं और कुछ के बुरे। अवस्ता में सोम और सोमयाग की बड़ी निन्दा है। जान पड़ता है, आर्य्यों और पारसियों के पूर्वजों के आचार-विचार में भिन्नता उत्पन्न हो जाने के कारण ही उनकी दो शाखायें हो गईं। एक शाखा सिन्धु पार करके इस देश में चली आई, दूसरी फ़ारिस की तरफ़ गई।

अवस्ता के अनुवाद जर्मन, फ्रेंच और अँगरेज़ी भाषाओं में हो गये हैं। शायद गुजराती में भी उसका अनुवाद हो चुका है।

## ४—सोने के रूप में सरकार का सुरक्षित कोश।

(Gold Standard Reserve)

लेन देन के सुभीते के लिए सरकार सिक्का चलाती है। भारत का मुख्य सिक्का चाँदी का है। भारत के लिए ताँबे और निकल नामक धातु के भी सिक्के चलते हैं। साथ ही नोट भी जारी हैं। सोने के नोटों को जाने दीजिए। उनकी मज़बूती के लिए सरकार उतना रुपया या उतने का सोना अलग ही रख देती है। भारतीय सिक्कों का चलन अन्य देशों में नहीं। उनकी क़ीमत भी घटा बढ़ा करती है। सोना ही एक ऐसी धातु है जिसकी क़दर सब देशों में है। उसकी क़ीमत में भी विशेष परिवर्तन नहीं होता। इसी से जिसके लिए इस देश में जारी रहने से उसके कुछ निश्चित अंश के मूल्य का सोना सरकार सदा अपने पास रखती है। खुले बाज़ार सिक्के की मज़बूती के लिए ऐसा किया जाता है। सोने का सिक्का भी अपने से भिन्न देशों में बहुधा बट्टे पर बिकता है। इसके दो देश भी बहुत सा सोना तैयार रखते हैं जहाँ का सिक्का सोने का है। इस पर से भारत की सरकार कोई ४० करोड़ रुपये का सोना तैयार रखती है। पर इसका अधिकांश बैंक आफ़ इंग्लैण्ड में रखती है। वहाँ वह सूद पर भी खाता है और

लोचना निकली है। उससे मालूम हुआ कि—३० जून १९१४ को, इस देश में, २,४२,६१२ वर्गमील में जङ्गल था। जङ्गल का रक्बा धीरे धीरे बढ़ता ही जाता है। १८९१ ईसवी में जङ्गलों से सिर्फ़ ३७ लाख की आमदनी थी। पर १९१४ में बढ़ कर यह तीन करोड़ के लगभग पहुँच गई। हिसाब नीचे दिया जाता है—

| साल | कुल आमदनी | ख़र्च | बचत |
|---|---|---|---|
| १८९१ | ३७ लाख | २४ लाख | १३ लाख |
| १८८४ | ८८ ,, | ४६ ,, | ४२ ,, |
| १९१३ | १७७ ,, | ९८ ,, | ७९ ,, |
| १९१४ | २९६ ,, | १६४ ,, | १३२ ,, |

देखिए, जङ्गलों की बदौलत गवर्नमेंट को कितनी आमदनी होती है। अब उसने आमदनी के और भी द्वार खोलने का प्रबन्ध किया है। बाँस और बङ्गाल में बाँस बहुत होता है। उसे कटा कर और कुचल कर, उसकी पीठी बना कर, उससे काग़ज़ तैयार करने का ठेका उसने दे दिया है। यह काग़ज़ शायद टीटागढ़ में बनेगा। आसाम और संयुक्त-प्रान्त के जङ्गलों में बैंब नाम की जङ्गली घास बहुत होती है। उससे भी काग़ज़ बन सकता है। गवर्नमेंट इस घास से भी काग़ज़ बनवाने के विचार में है। देवदार के पेड़ों से धूप और तारपीन का तेल तैयार करने के लिए उसने कई कारख़ाने पञ्जाब और संयुक्त-प्रान्त में खोल रक्खे हैं। उनसे भी उसे ख़ासी आमदनी होती है।

## ७—विषाक्त गैस।

गैस एक प्रकार की भाफ़ या धुआँ है। जर्मनी के विद्वानों और रसायन-शास्त्रियों ने एक विषाक्त गैस बनाई है। यह गैस क्लोरायन या ब्रोमाइन नाम की रसायनों से तैयार की गई है। अन्य देशों के डाक्टरों और रसायन-विद्या के ज्ञाताओं का यही अनुमान है। पर, यथार्थ में बात क्या है, यह तो जर्मनी वाले ही जानें। लड़ाई के मैदान में जर्मनी की सेना अपनी खाइयों से यह गैस बड़े बड़े पम्पों और पिचकारियों आदि के द्वारा अपने विपक्षियों की खाइयों की तरफ़ छोड़ती है। जिस समय हवा अनुकूल होती है उसी समय इस गैस के बादल उड़ाये जाते हैं। हवा उन्हें उड़ा कर विपक्षियों की तरफ़ ले जाती है। यह गैस हवा से भारी होती है। इस कारण ज़मीन से सात ही आठ फुट ऊपर उठ सकती है, अधिक नहीं। इसमें जो गुण है वह ही भयङ्कर है। यदि यही गैस मनुष्य के मुँह और नाक के रास्ते पेट में पहुँच जाय तो तत्काल मृत्यु होती है। यदि पतली और विरल इसकी होने पर पेट में पहुँचे तो भी कम प्राण-रक्षा होने की सम्भावना रहती है। मनुष्य का शरीर काला पड़ जाता है और साँस लेने की नलियों में बहुत अधिक ख़राश पैदा हो जाती है। नतीजा यह होता है कि मनुष्य को प्राणान्तक वेदनायें होती हैं और वह खाँस कर दो तीन दिन में मर जाता है। इस गैस के कारण साँस लेने में बड़ी तकलीफ़ होती है। घनी गैस पेट में जाते ही श्वासावरोध होकर मनुष्य के प्राण निकल जाते हैं। इस तरह का पारयिक प्रयोग युद्ध में मना है। युद्ध-सम्बन्धी नियमों के यह सर्वथा प्रतिकूल है। पर जर्मनी ने और भी अनेक नियम तोड़ दिये हैं तहाँ सभ्यता-सूचक और मान्य सङ्गत युद्ध के नियम भी तोड़ दिये हैं। उसने तो आज से कुछ समय से एक विशेष प्रकार के गोले भी बनाना शुरू कर दिया है। इन गोलों के भीतर भी इसी तरह की गैस और और भी कुछ प्राणान्तक रसायनें भरी रहती हैं। गोलों के फटने पर उनसे निकली हुई विषाक्त गैस आस पास दूर दूर तक फैल जाती है। जिनके पेट में यह गैस पहुँचती है वे असह्य यन्त्रणायें भोगनी पड़ती हैं। इसके प्रभाव से अनेक सैनिक मर जाते हैं।

इस विषपूर्ण गैस से अपना बचाव करने के लिए ब्रिटिश ने एक प्रकार का तोबड़ा सा बनाया है। लाखों की संख्या में ये तोबड़े सेनाओं को बाँट दिये गये हैं। ये तोबड़े एलीम्यूनियम के हैं और कुछ फ़लालैन के। इन के भीतर रुई की तह रहती है। यह तोबड़ा सोडा और इसी के पानी से भिगो दी जाती है। उसे बाँध लेने से गैस मुँह की राह से गैस पेट में नहीं जाती। यदि कुछ जाती भी है तो उसकी विषाक्तता बहुत घट जाती है और मनुष्य कम मरते हैं। इस तरह की एक टोपी, थैली या तोबड़े का चित्र यहाँ पर दिया जाता है। इसी ढंग की एक और टोपी बाँधे हुए एक सैनिक का भी चित्र दिया जाता है। इस समय विचार यह हो रहा है कि एक टोपी ऐसी बनाई जाय जो सिर ढकने के भी काम आये और नाक तथा मुँह की राह से गैस को भी पेट में न जाने दे।

ओ३म्

सरस्वती

"श्री गोमल्ल-शालग्राम-सदन"

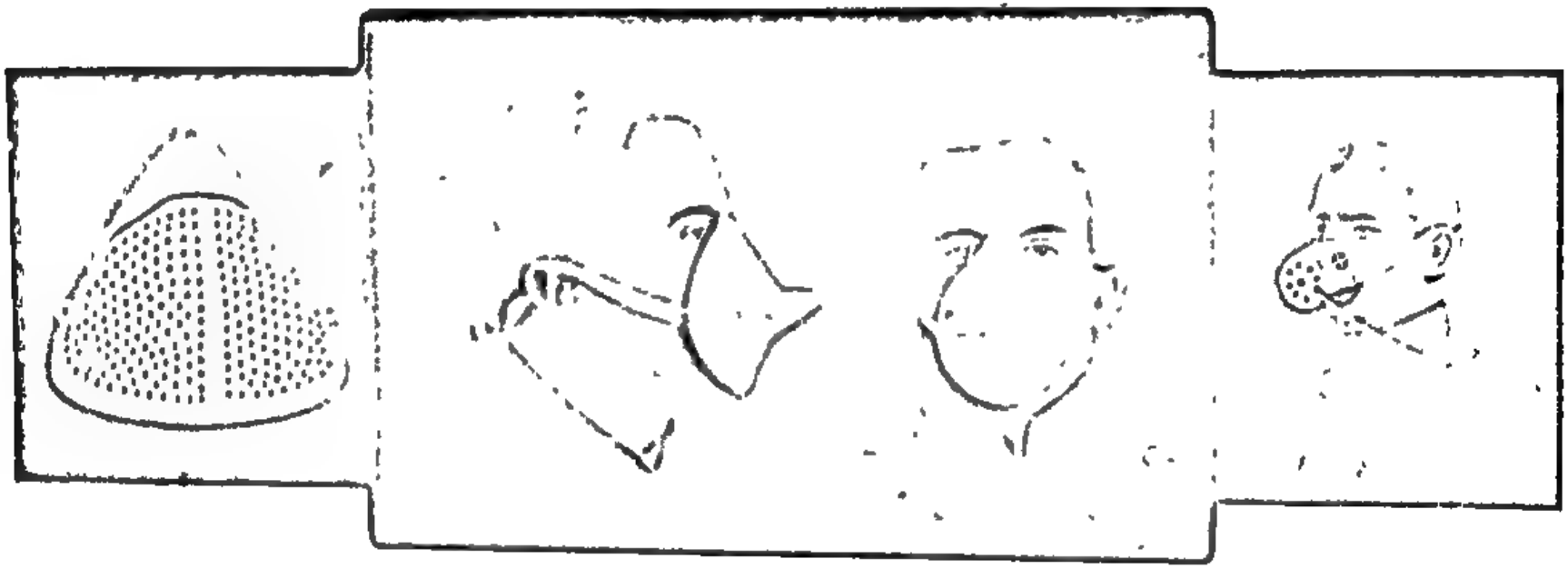

तोपख़ाना चढ़ाये हुए सैनिक।

अमेरिका के एक विज्ञान-वेत्ता ने इन गैसों से बचने का और उपाय बताया है। वह कहता है कि मोरचों में ी के सहारे एक ऐसा पंखा चलाया जाय जो इन गैसों दलों को पीछे ही को लौटा दे अथवा कोई १० फुट आकाश में फेंक दे। पीछे फेंक देने से इन गैसों का स्तक प्रभाव जर्मनी ही की सेना पर पड़ेगा। इस दशा लाचार होकर इनका प्रयोग बन्द कर देंगे।

इस तरह की गैसों का प्रयोग नया नहीं। बहुत पुराने ों में भी इनसे कई दफ़े काम लिया गया है। सन् ी के कोई चार सौ वर्ष पहले एथन्स और स्पार्टा वालों इस समय तक युद्ध हुआ था। उस समय ये लोग लक- के बड़े बड़े ढालों में गन्धक रख देते थे। वायु ुल होने पर वे इन ढालों में आग लगा देते थे। जब ी जलती थी तब गन्धक का धुवाँ शत्रु की तरफ़ जाता उसके प्रभाव से शत्रुओं का दम घुटने लगता था। उनके पैर बेकार हो जाते थे; उनका चलना फिरना बन्द हो ा था। इस दशा को प्राप्त हो जाने पर उन पर धावा दिया जाता था। इसे पढ़ कर पुराणज्ञ पाठकों को ल भगवान् के सम्मोहन किंवा प्रस्वापन अस्त्र का स्मरण बिना न रहेगा। इस अस्त्र के प्रभाव से शत्रुओं की सेना ोह में आ जाती थी। सैनिक काट के से पुतले बन जाते उन्हें नींद सी आ जाती थी। रघु कुमार अज ने इसी के प्रयोग से अपने बहु-संख्यक विरोधी महीपों की सेना ीना था। लिखा है—

सेना परस्य दयितेव निषेव्यमाणा निद्रां नयेन्नयविदस्त्वयि निस्पृहेण।
सापि स्वयं विरचितेव विसृष्टचेष्टा निर्यन्त्रिता रहसि सुप्तवधूसखीव॥

## ८—जुड़ी हुई दो लड़कियाँ।

जयपुर (राजपूताना) से पण्डित रामगोपाल पुरोहित ी हुई दो लड़कियों का एक चित्र भेजा है। चित्र में िया अपने पिता की गोद में बैठी हुई है। लड़कियों का ा है—अथवा यह कहना चाहिए था कि—एक-शरीर। े चित्र में पुरोहितजी लिखते हैं।

[illegible]

पुर के प्रसिद्ध सेवा हास्पिटल में इलाज के लिए, २८ दिसम्बर १९१७ को, गया। वहाँ दाखिल होने के समय लड़कियों का यह हाल था कि एक तो ब पड़ी थी, दूसरी गोदी में बैठाई जाती थी। पैदा लड़की सात दिन बाद, अर्थात् जनवरी १९१८ को, मर गई। दूसरी भी उसके तीन दिन बाद, ७ जनवरी को, चल बसी। इनकी उम्र चार महीने की थी। लड़कियाँ बड़ी सुन्दर थीं हास्पिटल में "पोस्ट मार्टम" परीक्षा से यह मालूम हुआ कि इनका लीवर अर्थात् यकृत एक ही था। चित्र में दाहिनी तरफ़ की लड़की पूरा जीवट की मालूम होती है। छोटी बेचारी के दो दिन बाद दूसरी का भी देहान्त हो गया था। परमेश्वर की शक्ति का यह एक अद्भुत नमूना है।

यह चित्र जयपुर के—"राजपूताना फोटो आर्ट स्टूडी- यो"—का लिया हुआ है।

## ९—राजा टोडरमल की जन्मभूमि।

लहरपुर, ज़िला सीतापुर, से बाबू सोहनलाल वर्मा लिखते हैं:—

"१९१० की सरस्वती, संख्या ६, पृष्ठ ४०१ में, श्रीयुत पण्डित लक्ष्मीधर वाजपेयी का लिखा हुआ राजा टोडरमल पर एक लेख है। इसमें उनका जन्मस्थान सीतापुर बताया गया है। यह ठीक नहीं। ज़िले का नाम अवश्य ठीक है। सीतापुर के स्थान में लहरपुर या लाहरपुर होना चाहिए। लहरपुर में एक मुहल्ला पाँडेपुर होता है। उसमें पाँडे लोग अधिक रहते थे। इसी मुहल्ले में स्वर्गवासी राजा टोडरमल का घर था। अब घर पर प्रायः भग्न हो गया है। केवल एक दीवार का कुछ भाग शेष रह गया है। वहीं राजा टोडर- मल का स्मारक बनाया है। इसके अतिरिक्त राजा टोडरमल के नाम से वहाँ पर एक तालाब और एक गाँव (राजा का ताल या राजापुर) है, जो इस लोगों के अधिकार में है। परन्तु वहाँ पर अभी तक किसी ने भी राजा टोडरमल के नाम की चिरस्थायी करने के निमित्त प्रयोग नहीं किया। केवल एक अन्विवेदी महाशय ने कुछ प्रयत्न किया था। परन्तु वह कार्य रूप में परिणत न हो सका"।

इस सम्बन्ध के लिए वर्मा महाशय को धन्यवाद।

---

## पुस्तक-परीक्षा।

१—महाभारत अनुशासन। यह पुस्तक [illegible] है। मूल्य है—[illegible] इस हिसाब से

डेढ़ सौ के ऊपर है। मूल्य पुस्तक पर लिखा नहीं। इसके लेखक कोई के० पी० चैटर्जी (K. P. Chatterjee) साहब हैं। आपने पुस्तक रचना भी अँगरेज़ी ही में की है और नाम भी अपना अँगरेज़ी ही ढँग से लिखा है। आप कौन हैं, यह मालूम नहीं। हाँ, पुस्तक से इतना पता अवश्य चलता है कि आपको स्वामी ज्ञानानन्द जी की चरण-सेवा का सौभाग्य प्राप्त हुआ है—"I have been privileged to find a place at Sri Swamiji's feet"।

भारत-धर्म्म-महा-मण्डल धार्म्मिक परिषद् है। सनातन-धर्म्म की रक्षा और विस्तार ही के लिए उसका जन्म हुआ है। ऐसी संस्था से प्रकाशित पुस्तकें अँगरेज़ी में क्यों निकलें? हिन्दी या और किसी देश-भाषा में क्यों नहीं? सनातन-धर्म्म का अँगरेज़ी भाषा से कुछ अविच्छिन्न सम्बन्ध तो है नहीं। फिर इस विदेशी भाषा का उपयोग क्यों? इसके प्रयोग का कारण शायद यह हो कि देशी भाषायें प्रान्तिक हैं। भारत के सभी प्रान्तों के लोग किसी एकदेशी भाषा को अच्छी तरह नहीं समझ सकते। पर, अँगरेज़ी भाषा भारत में विशेष व्यापक है। सभी प्रान्तों के शिक्षित मनुष्य प्रायः उसे पढ़, लिख और समझ सकते हैं। अतएव पुस्तक में जिन बातों का वर्णन है उन्हें सभी प्रान्तों के शिक्षित जनों के कान तक पहुँचा देने के इरादे से ही शायद उसमें अँगरेज़ी भाषा का प्रयोग हुआ है। अच्छा, पुस्तक में वर्णना किन बातों की है। वर्णना है विशेष करके स्वामीजी की महिमा, प्रभुता, साधुता, विद्वत्ता, धर्म्म-निष्ठा, परोपकृति आदि की। इसके सिवा स्वामीजी पर समय समय पर जो दोषारोपण हुए हैं, उनके कार्य्य-कलापों की जो कटाक्ष-पूर्ण समालोचनायें हुई हैं, और उन पर, अथवा यह कहना चाहिए कि मण्डल पर, जो मुक़दमे चलाये गये हैं, उनकी भी यत्र-तत्र वर्णना है। साथ ही इन आक्षेपादिकों की असारता और स्वामीजी की निर्दोषता का उद्घोष भी है। इन बातों की घोषणा की ध्वनि दूर तक पहुँचाने में राज-भाषा अवश्य ही अधिक कारगर होगी। पुस्तक में जो बातें हैं वे चैटर्जी महाशय की निज की सम्पत्ति नहीं। स्वामीजी ने ही ये सब बातें उनसे कही हैं। "I have preferred to piece together the notes of what fell from his (Swamiji's) own lips, in regard to his ideas doings." और, शायद स्वामीजी ने ही चैटर्जी महाशय को मण्डल-सम्बन्धी काग़ज़-पत्र, "सरकुलर," और प्रदत्त पदवियों की तालिकायें आदि दी कृपा की है।

चैटर्जी महाशय ने स्वामीजी के कथन को लेखबद्ध मात्र कर दिया है और प्राप्त काग़ज़-पत्रों को यथास्थान लगा दिया है। अतएव इस पुस्तक में लिखी गई बातें स्वामीजी की ही "अपनी बीती" कहानी है। इस कहानी को सुनाने के संरक्षकों और प्रतिनिधियों को स्वामीजी ने अपने आशीर्वाद के साथ ("With blessings from the heart") स्वयं ही समर्पण भी किया है। इस निमित्त एक समर्पण-पत्र पुस्तकारम्भ में लगा दिया गया है। मालूम सब पर्य्याप्त नहीं था, इसीसे पुस्तक-लेखक ने अपनी पृष्ठ-व्यापिनी भूमिका में भी स्वामीजी का गुणानुवाद किया है और उनकी प्रतिकूलता करनेवालों को सदुपदेश दिया है। कष्ट उठाया है। अतएव यह मण्डल का इतिहास (History) नहीं। यह मण्डल का माहात्म्य मात्र है। और, माहात्म्य-वर्णन, स्वामीजी का ही माहात्म्य वर्णन है, क्योंकि पुस्तक-प्रणेता के भी कथनानुसार स्वामीजी ही ब्रह्मा और विष्णु हैं।

भक्त को अपने भक्तिभाजन की स्तुति प्रार्थना सर्वथा स्वाभाविक है। यह उसका धर्म्म ही है। अतः इस सम्बन्ध में पुस्तक-लेखक उपालम्भ के पात्र नहीं। पात्र हैं स्वयं स्वामी ज्ञानानन्दजी। यदि वे चैटर्जी महाशय के कथनानुसार सच्चे साधु और सच्चे महात्मा हैं तो उन्हें निन्दा और स्तुति को तुल्य समझना चाहिए। लोग क्या कहते हैं, इसकी कुछ भी परवा न करके उन्हें कर्त्तव्य और अपने धर्म्म का पालन करना चाहिए। ग्रन्थ-कुशलता, साधुता, महत्ता, धर्म्मनिष्ठा और ग्रन्थमालिका के वर्णनों से पूर्ण पुस्तकें प्रकाशित करके उनका व्यय न बरबाद करना चाहिए। महत् साधु तो किसी का अपकार और प्रत्यपकार समझते हैं। इस दशा में उन्हें ऐसी पुस्तकों के प्रकाशन से दूर रहना और प्रकाशित करा कर उन्हें अपनी ओर से मण्डल के सदस्यों

निधियों को अर्पण करने का तो विचार भी न करना
हिए था। पर उन्होंने यह सब कर दिखाया।

इस पुस्तक के अन्त में आमदनी और खर्च के जो चिट्ठे
हैं उनसे सूचित है कि काशी के इस धर्म्म-महा-मण्डल
को साल बहुत सा रुपया मिलता है। इसकी सालाना
आमदनी कोई २० हज़ार है। इस इतने रुपये से धर्म्म-सम्बन्धी
बहुत कुछ काम हो सकता है। पर, जहां तक हम जानते हैं,
मण्डल ने आमदनी के अनुरूप काम नहीं कर दिखाया।
मठ का जीर्णोद्धार करना, लाइरस का छापाख़ाना ले
लेना, मण्डल के लिए आलीशान इमारत बना देना, पदवियों
को धूम-धूम की तरह बांटना, दस-पांच ग्रन्थ छपा देना और
प्रचार उपदेशक पैदा कर देना ही यथेष्ट धर्म्म प्रचार नहीं।
इन बातों को जाने दीजिए, इस मण्डल की मासिक पत्रिका
तक समय पर नहीं निकलती। सम्भव है, मण्डल ने
और कोई बड़े बड़े काम किये हों पर हमें उनका ज्ञान नहीं।
भविष्य की आशाओं की गणना कार्य्य में नहीं की जा
सकती। स्वामीजी को चाहिए कि मण्डल की आमदनी को
ऐसे कामों में लगावें जिनसे मण्डल के उद्देशों की विशेष
पुष्टि हो। काम ऐसे हों जिनसे लोगों का प्रकृत उपकार हो
और जो सबकी नज़र में आवें। जिन बातों को लोग अनु-
चित समझते हैं उनसे बचें। त्यागी साधु न चेले रक्खें, न
चेलों में रहें और न ठाट-बाट पसन्द करें। विरक्त साधुओं
को चेलों और चेलियों से क्या काम? साधु-जन तो स्त्री-
सहवर्ग का सदा ही त्याग करते हैं। इस त्याग का स्वीकार
करके भी वे समदर्शी हो सकते हैं।

समाचार-पत्रों में महा-मण्डल के प्रतिकूल आज तक
अनेक लेख देख चुके हैं। पर हमने इस सम्बन्ध में कभी
कुछ नहीं लिखा। यह सरस्वती का काम भी नहीं। यदि
इस पुस्तक समालोचना के लिए (Publications for Review)
हमारे पास न आती तो हम आज भी कुछ
न लिखते। अतएव, यह नोट लिखने में हमने पुस्तक
भेजनेवाले महाशय की आज्ञा का पालन मात्र किया है। अन्तर्य
में प्रार्थना, पुस्तक-लेखक और स्वामीजी महाराज हमें
क्षमा करें—

यो मामराध्य च मनागपि दर्पभाजम्
सो दोषमात्मपरिदर्शनपुष्टाहृ।
स्वप्रार्थनाप्रणयभङ्गभियैव किन्तु
श्रीमन् मया स्वमनितः किल किञ्चिदुक्तम्॥

२—आचार्य्य-कोश। आकार बड़ा; पृष्ठ संख्या ४०० के लगभग; मूल्य २ रुपया, मिलने का पता—मैनेजर, ए० पी०, बहावलपुर। इसकी रचना पण्डित रामचरणाचार्य्य शास्त्री ने की है। इसका नाम आचार्य्य कोश शायद इस लिए रक्खा गया है कि इसके बनाने वाले "आचार्य्य" हैं। पर यह केवल कोश ही नहीं। इसके दो भाग हैं। पहले भाग में कोई १२० पृष्ठ हैं। उसमें व्याकरण-शिक्षा है। दूसरे भाग में कोश अलबत्ते है। संस्कृत पढ़ने वालों के लाभ के लिए इसकी सृष्टि हुई है। इसका प्रथम भाग डाक्टर भाण्डारकर की संस्कृत मार्गोपदेशिका के ढंग का है। संस्कृत व्याकरण का कार्योपयोगी नियम और शब्द-साधन इत्यादि लिख कर संस्कृत में अनुवाद करने के लिए हिन्दी-वाक्य भी दिये गये हैं। अनुवाद के लिए कितनी ही कहानियां भी हैं। सरल और प्रारम्भिक बातों से आरम्भ करके धीरे धीरे संस्कृत व्याकरण का अधिकाधिक ज्ञान करा देने की चेष्टा की गई है। इससे अनुवाद करना सीखने और थोड़ी ही मिहनत से संस्कृत का साधारण ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा रखने वालों का बहुत काम निकल सकता है। इसका लिखने वाला वैसा ही होना चाहिए। वैसा संस्कृतज्ञ पण्डितों और पण्डितानियों का होना चाहिए। इसके कोश-भाग में एक विशेषता है। उसमें कोश साथ के साथ, फ़ारसी और अंगरेज़ी के शब्द भी हैं। यह हिन्दी-संस्कृत कोश है। अर्थात् हिन्दी शब्दों का अर्थ संस्कृत में दिया गया है। इसे ग़ौर से, इस दृष्टि से किसी ने अभी तक नहीं। कोश का अन्तिम शब्द है—हरिद्रावान्। उसका अर्थ लिखा गया है—पीतवर्ण, हलदिया। यह अर्थ हमारी राय में ठीक नहीं। हलदिया का तात्पर्य्य तो संस्कृत शब्द हरिद्रावान् है, और नहीं। इसी तरह के और भी कितने ही शब्द हैं जो विचारणीय हैं। तथापि यह आवश्यकता पुस्तक संस्कृत सीखने का अच्छा साधन है। इससे अच्छा और कोश कालेज के विद्यार्थियों को बहुत कम मिल सकता है।

३—[illegible]

ओरियंटल प्रेस, लखनऊ। इस पुस्तक की भूमिका में इन चुटकुलों के विषय में लिखा है—"इनमें विनोद है और उपदेश भी है। समाज-सुधार के उद्देश से कहीं कहीं पर कटाक्ष भी है, पर व्यक्ति-गत या जाति-गत कोई आक्षेप नहीं है"। हमने इस पुस्तक के कितने ही चुटकुले पढ़े और भूमिका-लेखक के इस कथन को सत्य पाया। कितने ही चुटकुलों से बड़ी ही प्रखर प्रतिभा की ज्योति निकल रही है। जहाँ कटाक्ष है वहाँ ऐसी बात पर है जो यथार्थ में कटाक्ष-योग्य है। ऐसे चुटीले चुटकुले लिखना सब का काम नहीं। तीव्र बुद्धि और बहुदर्शी विद्वान् ही उन्हें लिख सकते हैं। हम इस पुस्तक की सैर करके बहुत प्रसन्न हुए। इसके कितने ही चुटकुले लखनऊ के नागरी-प्रचारक में निकल चुके हैं।

❋

४—लक्ष्मण द्विवेदी। पण्डित केदारनाथ पाठक 'पाठक' तो बने बनाये ही हैं; अब कुछ समय से आप लेखक भी हो गये हैं। इस ४४ पृष्ठों की, अच्छी छपी हुई, पुस्तक की रचना आप ही ने की है। यह चरितात्मक है। पर, इसमें न किसी राजा का चरितांश, न सेठ-साहूकार का, न और ही किसी बड़े भारी मालदार का। इसमें काशीनिवासी सांवलजी नागर के पिता परलोकवासी पण्डित लक्ष्मणजी नागर (द्विवेदी) का जीवन-चरित है। इनका परलोकवास हुए अभी थोड़ा ही समय हुआ। सच्चरित्रता, सज्जनता और श्रमशीलता आदि गुणों के कारण इनका चरित मध्यवित्त गृहस्थों के लिए सर्वथा ही आदर्श-तुल्य है। रमेशचन्द्रदत्त के किये हुए बँगला अनुवाद के आधार पर नागरजी ने ऋग्वेद का हिन्दी अनुवाद किया था। वह शायद अब तक अप्रकाशित है। नागरजी में अनेक अनुकरणीय गुण थे, जिनका हाल पुस्तक पढ़ने से मालूम हो सकता है। मिलने का पता—पाठक ऐंड सन्स, राजा दरवाज़ा, बनारस।

❋

५—आर्य्य सनातनी-संवाद। आकार मध्यम, पृष्ठ-संख्या ११४; मूल्य ≠ आने, लेखक पण्डित शिवव्रत शुक्ल, साहसोपाध्याय, प्रतापगढ़; मिलने का पता—पण्डित दीनदयाल दीक्षित, बकुलाही, रायबरेली। अपने नाम-तुल्य इस पुस्तक में आर्य-समाजी और सनातन-धर्मावलम्बी की दलीलें हैं। इसका समस्त सृष्टिक्रम, मोटे यात्रा, नामस्मरण, ईश्वरावतार, श्राद्ध, विधवा ... ईश्वर के आकार में है। किसी शास्त्र, वेद ... वचनों के प्रमाण नहीं दिये गये। दोनों पक्षों के ... निरूपण में केवल युक्ति और तर्क से काम लिया ... सभी नियमों में सनातन-धर्मावलम्बी पक्ष की ... दिखाई गई है। परुष वाक्यों और कुतर्क का ... लिया गया। युक्तियाँ सुसङ्गत हैं। अतएव पुस्तक ऐसे अनुयायियों के पढ़ने लायक है।

❋

६—जमालमाला। इस ११ पृष्ठों की छोटी पुस्तक का मूल्य ॥) है। श्रीयुत पन्नालाल भैया गया मुहल्ला उपरडीह, गया—को लिखने से मिलती है। नामक कवि ने बहुत से "कूट" दोहे कहे हैं। ऐसे दोहों का संग्रह इस पुस्तक में है। प्रत्येक दोहे के ... एक रोला की रचना करके पूर्वोक्त भैया महाशय ... दोहों को कुण्डलिया का रूप दे दिया है। परन्तु ... से जमाल कवि का असली भाव नहीं प्रकट होता। कार को उचित था कि दोहों का अर्थ भी लिख ... करने की आप इच्छा रखते भी हैं। आगे फिर कभी आप अपनी इस इच्छा की पूर्ति करें। दोहों ... नमूना देखिए:—

बन बन उठत दवागि घन छन छन सुहरि दिन
हरखि हरखि तिय तहँ हँसी कारण कौन जमाल

❋

७—जैनसिद्धान्त। आकार छोटा, पृष्ठ-संख्या ... मूल्य ६ आने; लेखक—जैन मुनि उपाध्याय आत्म ... प्रकाशक बाबू परमानन्द, बी० ए०, सहारनपुर, कागज़ मे ... इस पुस्तक में इसके नामानुसार जैन सिद्धान्तों का ... है। चार सर्ग इसमें हैं। पहले में आत्मा का अस्तित्व ... में प्रमाण और नय का विवरण, तीसरे में कर्म ... और चौथे में गृहस्थ-धर्म का विवेचन है। अन्त में ... के प्राकृत ग्रन्थों से प्रमाण उद्धृत हैं। ग्रन्थ और ... दोनों सीधे सादी हैं। भाषा शिष्ट है। इस तरह की ... पुस्तकें शास्त्रज्ञान की भाषा में लिखी जानी चाहिए, ... रचना से अधिक लोग लाभ उठा सकते हैं, ... बहुत कम।

:—आदर्शचरितावली । आकार मँझोला, पृष्ठ-७७; मूल्य २ आने; लेखक—पण्डित शिवसहाय चतु- मिलने का पता—हिन्दी-हितैषी कार्य्यालय, देवरी, । इस छोटी सी पुस्तक में १० अपने देश के और २ के सत्पुरुषों के संक्षिप्त चरित हैं। भरत, दधीचि, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, महाराना प्रतापसिंह, गोखले, , गांधी, जनरल यूथ और बुकर टी० वाशिंगटन आदि के पढ़ने की इच्छा रखने वालों की मनस्तुष्टि इसके अव- से हो सकती है।

९—श्रीसत्यबोधभास्कर । आकार छोटा; पृष्ठ-संख्या । मूल्य २ आने; लेखक, मुनि श्रीयतीन्द्रविजय, मिलने पता—मन्नालाल सोपड़ा, राजेन्द्राभ्युदय-पुस्तकालय, म । इस पुस्तक का दूसरा नाम प्रतिमासंसिद्धि है। क-वासी सम्प्रदाय के लोग मूर्तिपूजा और मूर्ति-प्रतिष्ठा रुद्ध नाना प्रकार के टेढ़े मेढ़े प्रश्न करते हैं। उन्हीं प्रश्नों क्ति-सहित उत्तर इस पुस्तक में हैं। उत्तरों में जिनेन्द्र की ा प्रतिष्ठा की आवश्यकता और उपयोगिता बताई गई इस विषय के सिवा शास्त्राभ्यास, व्याकरण पढ़ने की श्यकता, युक्ति-युक्त प्रश्नोत्तर आदि का भी विवेचन है। बड़ा और छपाई साफ़ है।

१०—स्वामी रामतीर्थ, भाग आठवां। भाषा ी, आकार मँझोला, छपाई और काग़ज़ उत्तम, पृष्ठ-संख्या । मूल्य १२ आने, सम्पादक—भास्कर विष्णु फड़के— ष्ण वासुदेव वर्षे, माटुंगा, बम्बई। सम्पादक-द्वय स्वामी र्थ के व्याख्यानों का अनुवाद मराठी में निकाल रहे ात भाग निकल चुके हैं। यह आठवां है। इसमें प्रवेश के सिवा धर्म्म का ध्येय, साक्षात्कार का राजमार्ग पासना आदि सात व्याख्यानों का अनुवाद है। बड़ी पुस्तक है। मराठी जानने वाले अध्यात्म विषय के ों के पढ़ने और विचार करने लायक़ है। पुस्तक में जहां हिन्दी-भाषा के पद्य और पत्र आ गये हैं वहां बहुधा भाषा-सम्बन्धिनी त्रुटियां हो गई हैं, जो है। पूर्वोक्त सम्पादकों ही को लिखने से पुस्तक मिल ी है।

११—चेतन-कर्म्म-चरित्र । भाषा गुजराती; आकार छोटा; पृष्ठ संख्या २१०; मूल्य ४ आने; लेखक—जीवणलाल कसनदास कापड़िया, प्राप्तिस्थान—सस्ती जैन-ग्रन्थमाला, चांदवाड़ी, सूरत। भगवतीदास कवि का लिखा हुआ एक ग्रन्थ ब्रह्मविलास नामक है। उसमें चेतन कर्म्मचरित्र नाम की एक कविता हिन्दी में है। उसी के आधार पर इस पुस्तक की रचना हुई है। यह उपन्यास के रूप में है। इसमें प्रबोधचन्द्रोदय नाटक की शैली का अनुकरण है। चेतन-शक्ति को चैतन्यसिंह राजा का रूप दिया गया है। इसके चरित्रवर्णन के बहाने अनेक भले-बुरे मानसिक भावों को मानव-मानवी का रूप देकर उनके स्वभावादि का वर्णन और क्रिया-कलाप का उल्लेख किया गया है। इस प्रकार जैनधर्म्म के अनुसार आध्यात्मिक बातें बड़ी अच्छी तरह समझाई गई हैं।



१२—देशभक्ति । आकार छोटा; पृष्ठ-संख्या २६; मूल्य दो आने; अनुवादक, पण्डित देवीप्रसाद द्विवेदी; मिलने का पता—प्रताप प्रेस, कानपुर। श्रीयुत जे० एम० मजूमदार, एम० ए० की लिखी हुई एक छोटी सी पुस्तक अँगरेज़ी में है। देश भक्ति-सम्बन्धी सुन्दर विचारों से पूर्ण उसी पुस्तक का यह हिन्दी अनुवाद है।

नीचे जिनके नाम दिये गये हैं वे पुस्तकें भी पहुँच गई हैं। भेजने वाले महाशयों को धन्यवाद—

(१) दुःखी
(२) समानता —अनुवादक श्रीभोजनदास दामोदरदास, राजकोट।

(३) भारतमाता—प्रकाशक—पण्डित हरिकृष्ण पाठक, देहरादून।

(४) भरतचरितामृत—प्रकाशक—श्रीतुलसी-ग्रन्थमाला, जसनगांव।

(५) मनोहर सङ्गीत—लेखक—पण्डित कृष्णलाल, आगरा।

(६) सेठ माणेकचन्द पानाचन्द दिगम्बर जैन बोर्डिंग ग्रन्थ, बम्बई, की सिरीज़— १९१३—१४ प्रकाशक, एम० बालुभाई प्रेमचन्द वकील बम्बई।

## चित्र-परिचय

(१)

पूतना-वध।

इस संख्या का पहला रङ्गीन चित्र टेहरी-गढ़राज के श्रीयुत कुँवर सिंहजी ने भेजने की कृपा की है। इनमें से एक निकल गुका है। यह दूसरा है। यह टेहरी नरेश श्रीमान् महाराजा प्रतापसिंह दरबार के एक नामी चित्रकार ने इन्हें किया था। पूतना-वध की कथा सर्व-श्रुत है कहने की ज़रूरत नहीं। पाठकों को चित्र देखने जायगा कि चित्रकार ने इस पौराणिक दृश्य को से दिखाया है। चित्र के नीचे श्रीमद्भागवत उद्धृत है उसी के आधार पर इस चित्र को

(२)

भाद्रपद।

इस दूसरे रङ्गीन चित्र का विषय उसके केशवदासजी के सुप्रसिद्ध छन्द से ही स्पष्ट हो ज

---

(७) भारत के दो पुत्र—लेखक, पं० रामेश्वरदत्त शर्मा, मुरादाबाद।

(८) महियाद हिन्दू अनाथाश्रम की वार्षिक रिपोर्ट—१९१३-१४ } प्रकाशक—मन्त्री, अनाथाश्रम, महियाद।

(९) कलामे बिहारी—लेखक—लाला सीताराम, घाघरा मीमच।

(१०) महादेव और मेला } —प्रेषक—पण्डित नन्दकिशोर
(११) बारामासी } शुक्ल, टेहरा, उनाव।

(१२) सुकवि-समिति—प्रकाशक—घेलुभाई दाजीभाई देसाई, सूरत।

(१३) जैन श्वेताम्बरी तेरापन्थी सभा की द्वितीय वार्षिक रिपोर्ट } प्रकाशक—केसरीचन्द कोठारी, कलकत्ता।

(१४) जैन मत नास्तिक मत नहीं—प्रकाशक—जैन ट्रैक्ट सोसायटी, अम्बाला।

(१५) गोरक्षा भजन-चन्द्रिका
(१६) गोरक्षा की प्रार्थना } —प्रकाशक—नटवरलाल चतुर्वेदी, मथुरा।

---

Printed and published by Apurva Krishna Basu, at the Indian Press, Allahabad.

# साप्ताहिक हिन्दी केसरी ।

[ सम्पादक—श्रीयुत गङ्गाप्रसाद गुप्त । ]

लीजिए ! 'हिन्दी-केसरी' साप्ताहिक होगया और इसके लिए ज़मानत भी ले गई है !—यदि देशसे भक्ति है, हिन्दी भाषासे प्रेम है, महात्मा तिलकके स्वल्प विद्वत्तापूर्ण ज़ोरदार लेख, सम्पादकीय विचार तथा दूसरे अनेक उपयोगी बातें पढ़नेका शौक़ है और संसारकी समस्त मुख्य मुख्य घटनाओंका हाल, लड़ाईके सिलसिलेवार समाचार तथा बड़े बड़े चित्र देखनेका अनुराग है तो तुरन्त ग्राहक हो जाइए। जूनसे पाक्षिक निकल रहा था, अब सितम्बर मास में साप्ताहिक होगया, तौभी अभी जो ग्राहक हो जायँगे उनसे वही २) दो रुपया वार्षिक मूल्य लिया जायगा। वी. पी. से २।), उपहारमें स्वदेशी आन्दोलन, दे० दादाभाईनौरोजी या म० गोखलेकी सचित्र जीवनी इन तीनोंमें से कोई एक पुस्तक बिना मूल्य। शीघ्र ग्राहक बन तथा मित्रोंको बना कर स्वदेश और स्वभाषाकी सहायता कीजिए। नमूनेके लिए ।)॥ का टिकट अवश्य भेजना चाहिए।

पता—मैनेजर हिन्दी-केसरी,
आर्ट प्रेस, बनारस सिटी।



## विज्ञापन

भजन, साखी, उपदेश योगीश महात्माओं के देश देशान्तर से दुर्लभ हस्तियों की नक़ल करा कर अलग अलग जीवन-चरित्र और हिन्दी साहित्य में दिये गये हैं—कबीर साहिब, तुलसी साहिब (हाथरसवाले), दादू दयाल, पलटू साहिब, जगजीवन साहिब, धरनीदास जी, गरीबदास जी, सूंदास जी, दरिया साहिब, मीरा बाई, सहजो बाई, इत्यादि।

एक संग्रह साखियों का और दूसरा शब्दों का छापा गया है। जिस में ऊपर लिखे हुए महात्माओं के थोड़े थोड़े भजन और साखियों के सिवाय सूरदास जी, गोस्वामी तुलसीदास जी, कबीरपन्थी स्वामी आदि कुछ महात्माओं की चुनी हुई बानी सहित जीवन-चरित्र सहित छपी है।

जो सज्जन उन ग्रंथों पूरी लिस्टसहित वेलवेडियर प्रेस इलाहाबाद के मैनेजर को लिख कर मंगवा लें॥



## सचित्र आयुःशास्त्र

इस पुस्तक में स्त्री-पुरुषों के जाति-भेद, लक्षण, सहवास और गर्भाधान के नियम, यंत्र, मंत्र, तंत्र मन चाही सन्तान पैदा करने के उपाय, वशीकरणविद्या, सैकड़ों गुप्तबातें जो ढूंढ़े न मिलेंगी १२० पृष्ठ मय वशीकरण यंत्र मू० १) पोस्टेज ।) दो आना।

## सचित्र पंचरत्न

इसमें कोकविद्या, मैस्मरेज़िम, रसायन, मंत्र, गान विद्याओं का वर्णन किया है ८४ पृष्ठ मूल्य ॥) महसूल ।) आना।

पता:—

**स्वतंत्र आफ़िस**

मु० दरियापुर ( सारं )

पोष्ट—हाथरस अंकलान

मु० पी०



## शुद्ध शिलाजीत

सब प्रकार की कमज़ोरी की रामबाण औषधि ॥) और १) मो० पवित्र केसर ।।) मो०, सर्वोत्तम कस्तूरी ।=) और ३०) मो०, उत्तम अंगूरी ब्रांडी ६) मो०।

कमलेश्वरी,
इन्दौर सि० रा०।

# ❋ ❋ ❋ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ❋

## मानस—कोश।

अर्थात्

"रामचरितमानस" के कठिन कठिन शब्दों का सरल अर्थ।

हमने काशी की नागरी-प्रचारिणी सभा के द्वारा सम्पादित करा कर यह "मानसकोश" नामक पुस्तक प्रकाशित की है। इस "मानसकोश" को सामने रखकर रामायण के अर्थ समझने में हिन्दीप्रेमियों को अब बड़ी सुगमता होगी। इसमें उत्तमता यह है कि एक एक शब्द के एक एक दो दो नहीं, कई कई पर्यायवाचक शब्द देकर उनका अर्थ समझाया गया है। इसमें अकारादि क्रम से ६०४५ शब्द हैं। मूल्य केवल १) रुपया रक्खा गया है, जो पुस्तक की लागत और उपयोगिता के सामने कुछ भी नहीं है। अवश्य मँगाइए।

## *सचित्र हिन्दी महाभारत*

( मूल आख्यान )

५०० से अधिक पृष्ठ बड़ी साँची १९ चित्र

अनुवादक—हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी।

महाभारत ही आर्यों का प्रधान ग्रन्थ है, यही आर्यों का सच्चा इतिहास है और यही सनातन धर्म का बीज है। इसी के अध्ययन से हिन्दुओं में धर्म-ज्ञान, सत्पुरुषार्थ और समयानुसार काम करने की शक्ति जाग्रत हो उठती है। यदि इस बूढ़े भारतवर्ष को ५ सहस्र वर्ष पहले का सच्चा इतिहास जानना है, यदि भारतवर्ष में स्त्रियों को सुशिक्षित करके सनातन धर्म का पुनरुद्धार करना अभीष्ट हो, यदि ब्रह्मचारी भीष्मपितामह के पावन चरित्र को घर घर में प्रचार करना हो, यदि श्रीमद्भगवद्गीता के उपदेशों से अपने आत्मा को शुद्ध और हृष्टपुष्ट बनाना हो, तो इस "महाभारत" को मँगा कर अवश्य पढ़िए। इसकी भाषा सरल, बड़ी दिलचस्प और बड़ी मनोहारिणी है। अवश्य मँगाइए।

## दयानन्ददिग्विजय।

महाकाव्य

हिन्दी-अनुवादसहित

जिसके देखने के लिए सहस्रों आर्य उत्कण्ठित हो रहे थे, जिसके रसास्वादन सैकड़ों संस्कृतज्ञ विद्वान् लालायित हो रहे जिसकी सरल, मधुर और रसीली कविता से सहस्रों आर्यों की वाणी चंचल हो रही है महाकाव्य छप कर तैयार हो गया। यह ग्रन्थ समाज के लिए बड़े गौरव की चीज़ है। इसे का भूषण कहें तो अत्युक्ति न होगी। स्वामीजी ग्रन्थों को छोड़ कर आज तक आर्य-समाज में छोटे बड़े ग्रन्थ बने हैं उन सबमें इसका ऊँचा है। प्रत्येक वैदिकधर्मानुरागी आर्य को ग्रन्थ लेकर अपने घर को अवश्य पवित्र चाहिए। यह महाकाव्य २१ सर्गों में समाप्त मूल ग्रन्थ के रायल आठ पेजी साँची के हैं। इसके अतिरिक्त ५७ पृष्ठों में भूमिका, ग्रन्थ का परिचय, विषयानुक्रमणिका, आवश्यक त्रुटिपूर्ति, पुस्तकालय-प्रशस्ति और सहायक आदि अनेक विषयों का समावेश किया गया। उत्तम सुनहरी जिल्द बँधी हुई इतनी मोटी का मूल्य सर्वसाधारण के सुभीते के लिए केवल चार रुपये ही रक्खा है। अवश्य मँगाइए।

## सौभाग्यवती।

पढ़ी लिखी स्त्रियों को यह पुस्तक अवश्य चाहिए। इसके पढ़ने से स्त्रियाँ बहुत कुछ सीख सकती हैं। मूल्य केवल ।)

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

(महाकवि कालिदासकृत)

## रघुवंश

का गद्यात्मक हिन्दी-अनुवाद

(श्री० पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी लिखित)

इस अनुवाद में एक दो नहीं अनेक विशेषतायें हैं। इसमें कालिदास के लिखे केवल शब्दों का ही अनुगमन नहीं किया गया है, किन्तु उन शब्दों के द्वारा महाकवि कालिदास ने जो अनुपम भाव दरसाये हैं उन्हीं भावों को, उन्हीं भीतरी मर्मों को, महाकवि की उन्हीं प्रतिभा प्रदीप्त कल्पनाओं को, लोकोत्तरानन्ददायिनी उक्तियों के गूढ़ रहस्यों को, सबके समझने योग्य हिन्दी भाषा में, विशद रूप से प्रकाशित किया गया है।

जो आनन्द संस्कृतज्ञ विद्वानों को मूल रघुवंश पढ़ने में आता है वही आनन्द हिन्दी जानने वालों को इससे प्राप्त होगा। हमारे इस कथन में अत्युक्ति का लेश मात्र भी न समझिए। 'हाथ-कंगन को आरसी क्या?' जब आप इस अपूर्व ग्रन्थ को देखेंगे तभी आपको इसके औहद मालूम होंगे।

सुन्दर चित्रों से सुभूषित। पृष्ठ कुल मिलाकर ४००। सुन्दर सुनहरी जिल्द। मूल्य केवल २)

## विनयपत्रिका।

(भाषातिलकादि पं० रामेश्वरभट्ट-कृत सरल टीकासहित)

गोस्वामी तुलसीदासजी के नाम को कौन नहीं जानता। जिस कवि की कविता को सुन कर हिन्दू ही नहीं, विदेशी और विधर्मी लोग भी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते हैं उसकी कविता की प्रशंसा में कुछ लिखना सूर्य को दीपक से दिखाना है। रामायण से बढ़ कर विनयपत्रिका का ही नंबर है। नहीं नहीं, राम और भक्ति के वर्णन की दृष्टि से विनयपत्रिका का नंबर रामायण से भी पहले गिना जाय तो कोई आश्चर्य नहीं। विनयपत्रिका का एक एक पद भक्ति और प्रेम रस में सराबोर हो रहा है। अर्थ ऐसी सरल भाषा में है कि बालक भी समझ सकते हैं। पृष्ठ २७०। सुन्दर जिल्द। मूल्य ९)

विनयपत्रिका के विषय में सर जार्ज, ए० ग्रियर्सन, के० सी० आई० ई० के पत्र की नकल हम नीचे देते हैं कि जो उन्होंने विलायत से पंडित रामेश्वर भट्ट के नाम भेजी है—

*True copy of the letter received from Sir George A Grierson, K.C.I.E., Rathfarnham, England, to the address of the Commentator of* Vinaya Pattrika.

*Dated 6th September, 1911.*

DEAR SIR,

Forgive a stranger for addressing you I write to say how highly I appreciate your excellent edition of the तुलसीदास कृत विनयपत्रिका, which I obtained from the "Indian Press" a few days ago It is a worthy successor of your Edition of the रामायण, and really fills a want which I have long felt The *Vinaya Pattrika* is a difficult work but I think it is one of the best poems written by Tulasi DAsa and should be studied by every devout man. I have already found it of great assistance in explaining difficult passages

May I hope that you will go on with your work, and bring out similar editions of the दोहावली and of the कवितावली (including the हनुमान बाहुक), both of which are very important, The कवितावली is most important, as it throws so much light on the life of the poet.

Yours faithfully,

GEORGE A GRIERSON.

Pandit RAmeshvar Bhatt.

## जापान-दर्पण।

(अनेकों के हार्दिक चित्र सहित)

जिस हिन्दुधर्मावलम्बी वीर जापान ने महाबली रूस को पछाड़ कर सारे संसार में आश्चर्यजनक यश का मुख उज्ज्वल किया है, वही वीरविभूषित जापान के भूगोल, इतिहास, शिक्षा, उद्योग, धर्म, आचार, राजा, प्रजा, सेना और इतिहास आदि सभी का, इस पुस्तक में, पूरा पूरा वर्णन किया गया है। अपने को उन्नतिशील कर कौन कौन से देशभक्तों को ले इस पुस्तक ने उन्नत कुछ किया होगा बतलाइए। २०० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य १) से घटा कर ।') डाक खर्च कर दिया।

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ❋ ❋ ❋ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ❋ ❋

## सीतावनवास ।

सुप्रसिद्ध पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर लिखित "सीतार-बनवास" नामक पुस्तक का यह हिन्दी-अनुवाद "सीतावनवास" छप कर तैयार है। इस पुस्तक में श्रीरामचन्द्रजी-कृत गर्भवती सीताजी के परित्याग की विस्तारपूर्वक कथा बड़ी ही रोचक और करुणारस-भरी भाषा में लिखी गई है। इसे पढ़ सुन कर आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगती है और पाषाण-हृदय भी मोम की तरह द्रवीभूत हो जाता है। मूल्य ॥)

## गारफ़ील्ड ।

इस पुस्तक में अमरीका के एक प्रसिद्ध प्रेसीडेंट "जेम्स एबरम गारफ़ील्ड" का जीवनचरित लिखा गया है। गारफ़ील्ड ने एक साधारण किसान के घर जन्म लेकर, अपने उत्साह, साहस और संकल्प के कारण, अमरीका के प्रेसीडेंट का सर्वोच्च पद प्राप्त कर लिया था। भारतवर्ष के नव युवकों को इस पुस्तक से बहुत अच्छा उपदेश मिल सकता है। मूल्य ॥)

## हिन्दीभाषा की उत्पत्ति ।

(लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी)

यह पुस्तक हर एक हिन्दी जाननेवाले को पढ़नी चाहिए। इसके पढ़ने से मालूम होगा कि हिन्दी भाषा की उत्पत्ति कहाँ से है। पुस्तक बड़ी खोज के साथ लिखी गई है। हिन्दी में ऐसी पुस्तक, हमारी राय में, अभी तक कहीं नहीं छपी। एक हिन्दी ही नहीं इसमें और भी कितनी ही हिन्दुस्तानी भाषाओं पर विचार किया गया है। मूल्य ।)

## शकुन्तला नाटक ।

त्रिरिरोमणि कालिदास के नाम को कौन नहीं ? शकुन्तला नाटक, उन्हीं कविचूड़ामणि का रचा हुआ है। इस नाटक पर यहाँ

पाले नहीं विदेशी विद्वान् भी लट्टू हैं जैसा बढ़िया यह नाटक हुआ है वैसा यह हिन्दी में लिखा गया है। कारण यह हिन्दी के सच्चे कालिदास राजा अनुवादित किया है। लीजिए, देखिए तो इस में कैसा अनुपम आनन्द आता है। मूल्य ।)

## मुकुट ।

यह बँगला के प्रसिद्ध लेखक श्रीरवीन्द्र बाबू बँगला उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। आज में परस्पर अनबन होने का परिणाम क्या। इस छोटे से उपन्यास में यही बड़ी विलक्षण साथ दिखलाया गया है। इसे पढ़ कर लोग मन को वैमनस्य के दोषों से बचा सकते हैं। मू

## युगलांगुलीय ।

अर्थात्

दो अँगूठियाँ

बँगला के प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक बंकिम बाबू नाम से सभी शिक्षित जन परिचित हैं। इन परमोत्तम और शिक्षाजनक उपन्यास का यह हिन्दी-अनुवाद छपकर तैयार है। यह उपन्यास स्त्री, क्या पुरुष सभी के पढ़ने और मनन योग्य है। मूल्य ≈)

## स्वर्णलता ।

(रोचक और शिक्षादायक सामाजिक उपन्यास)

यह उपन्यास प्रत्येक गृहस्थ को पढ़ना चाहिए इस उपन्यास को गृहस्थाश्रम का सच्चा समझना चाहिए। बँगला में इस उपन्यास की इतनी प्रतिष्ठा हुई है कि १९०८ तक इसके १४ संस्करण निकल चुके हैं। इस उपन्यास की शिक्षा बड़े महत्व की है। हिन्दी में यह उपन्यास अनुपम है। ३०० पृष्ठ की पोथी का मूल्य १।)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडि

## * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

### चरित्रगठन ।

जो नवयुवक विद्यार्थी चरित्रगठन के अभिलाषी हों तो इसे अवश्य ही पढ़ें, और विशेष कर उन्हीं के लिए यह पुस्तक बनाई गई है। वे इस पुस्तक को पढ़ कर आप तो लाभ उठावेंगे ही, किन्तु अपने भावी सन्तानों को भी विशेष लाभ पहुँचा सकेंगे। इस पुस्तक के सभी विषय सुपाठ्य हैं। जिस कर्तव्य से मनुष्य अपने समाज में आदर्श बन सकता है उसका उल्लेख इस पुस्तक में विशेष रूप से किया गया है। सत्य, उदारता, सुशीलता, दया, क्षमा, प्रेम, प्रतिज्ञापालता आदि अनेक विषयों का वर्णन उदाहरण के साथ किया गया है। अतएव क्या बालक, क्या वृद्ध, क्या युवा, क्या स्त्री सभी इस पुस्तक को एक बार बड़े एकाग्र मन से पढ़ें और इससे पूर्ण लाभ उठावें। २३२ पृष्ठ की ऐसी उपयोगी पुस्तक का मूल्य समाज के लिए केवल ॥) बारह आना है।

### कुमारसम्भवसार ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

कवि-कुलगुरु कालिदास के "कुमार-सम्भव" काव्य का यह मनोहर सार छप कर तैयार हो गया। प्रत्येक हिन्दी-कविता-प्रेमी को द्विवेदी जी की यह मनोहारिणी कविता पढ़ कर आनन्द प्राप्त करना चाहिए। कविता बड़ी रसवती और प्रभावशालिनी है। मूल्य केवल ।) चार आने।

### भारतवर्ष में पश्चिमीय शिक्षा ।

श्रीमान् पण्डित मनोहरलाल जुत्शी, एम० ए० का नाम कौन नहीं जानता। आप उर्दू और अंगरेज़ी के प्रसिद्ध लेखक हैं। आपने "एज्युकेशन इन ब्रिटिश इंडिया" नामक एक पुस्तक अंगरेज़ी में लिखी है और उसे इंडियन प्रेस, प्रयाग ने छापकर प्रकाशित किया है। पुस्तक बड़ी खोज के साथ लिखी गई है। इस पुस्तक का सारांश हिन्दी और उर्दू में भी छप गया है। आशा है हिन्दी और उर्दू के पाठक इस उपयोगी पुस्तक को मँगाकर अवश्य लाभ उठावेंगे। मूल्य इस प्रकार है :—

एज्युकेशन इन ब्रिटिश इंडिया ( अँगरेज़ी में ) २॥)
भारतवर्ष में पश्चिमीय शिक्षा ( हिन्दी में ) ।=)
हिन्द में मगरबी तालीम ( उर्दू में ) ।=)

### कर्मयोग ।

स्वामी विवेकानन्दजी के कर्मयोग-सम्बन्धी व्याख्यानों का हिन्दी-अनुवाद करा कर यह "कर्मयोग" नामक पुस्तक छापी गई है। इसमें सात अध्याय हैं। उनमें क्रमशः—१—कर्म का मनुष्य चरित्र पर प्रभाव, २—निष्काम कर्म का महत्त्व, ३—धर्म क्या है ?, ४—परमार्थ में स्वार्थ, ५—बेलाग रहना ही सच्चा त्याग है, ६—मुक्ति और ७—कर्मयोग का आदर्श—इन विषयों का वर्णन बहुत ही ओजस्विनी भाषा में किया गया है। अध्यात्मविद्या या कर्मयोग के जिज्ञासुओं को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य केवल ।=)

### संक्षिप्त इतिहासमाला ।

लीजिए, हिन्दी में जिस चीज़ की कमी थी उसकी पूर्ति का भी प्रबन्ध हो गया। हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पण्डित श्यामबिहारी मिश्र, एम० ए० और पण्डित शुकदेवबिहारी मिश्र, बी० ए० के सम्पादकत्व में पृथ्वी के सभी प्रसिद्ध प्रसिद्ध देशों के हिन्दी में संक्षिप्त इतिहास तैयार होने का प्रबन्ध किया गया है। यह समस्त इतिहासमाला कोई २०, २२ संख्याओं में पूर्ण होगी। इसकी क्रमशः एक एक पुस्तक इंडियन प्रेस, प्रयाग, से प्रकाशित होती रहेगी। अब तक ये ६ पुस्तकें छप चुकी हैं :—

| | | |
|---|---|---|
| १—जर्मनी का इतिहास | ... | ।=) |
| २—फ्रांस का इतिहास | ... | ।=) |
| ३—रूस का इतिहास | ... | ।=) |
| ४—इंगलैंड का इतिहास | ... | ।=) |
| ५—जापान का इतिहास | ... | ।) |
| ६—स्पेन का इतिहास | | ।=) |

## बालसखा-पुस्तकमाला।

इंडियन प्रेस, प्रयाग से "बालसखा-पुस्तकमाला" नामक सीरीज़ में जितनी किताबें आज तक निकली हैं वे सब हिन्दी-पाठकों के लिए, विशेष कर बालक-बालिकाओं और स्त्रियों के लिए, परमोपयोगी प्रमाणित हो चुकी हैं। इस 'माला' की सब किताबों की भाषा ऐसी सरल—सबके समझने योग्य—रक्खी है कि जिसे थोड़े पढ़े लिखे बालक भी बड़ी आसानी से पढ़ कर समझ लेते हैं। इस 'माला' में अब तक जितनी पुस्तकें निकल चुकी हैं उनका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जाता है:—

### बालभारत—पहला भाग।

१—इसमें महाभारत की संक्षेप से कुल कथा ऐसी सरल हिन्दी भाषा में लिखी गई है कि बालक और स्त्रियाँ तक पढ़कर समझ सकती हैं। यह पाण्डवों का चरित बालकों को अवश्य पढ़ाना चाहिए। मूल्य ॥) मूल्य आठ आने।

### बालभारत—दूसरा भाग।

२—इसमें महाभारत से छाँट कर बीसियों ऐसी कथायें लिखी गई हैं कि जिनको पढ़कर बालक अच्छी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। हर कथा के अन्त में कथानुरूप शिक्षा भी दी गई है। मूल्य वही ॥)

### बालरामायण—सातों काण्ड।

३—इसमें रामायण की कुल कथा बड़ी सीधी भाषा में लिखी गई है। इसकी भाषा की सरलता में इससे अधिक और क्या प्रमाण दें कि गवर्नमेंट ने इस पुस्तक को सिविलियन लोगों के पढ़ने के लिए नियत कर दिया है। भारतवासियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य ॥)

### बालमनुस्मृति।

४—आज कल आप-सन्तान अपनी प्राचीन धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक रीति-रस्मों को न जान कर कैसे घोर अन्धकार में धँसती चली जा रही है सो किसी भी विचारशील से छिपा नहीं। इसी दोष के दूर करने के लिए 'मनुस्मृति' के उत्तम उत्तम श्लोकों को छाँट छाँट कर उनका हिन्दी में अनुवाद लिखा गया है। मूल्य ॥)

### बालनीतिमाला।

५—नीतिविद्या बड़े काम की विद्या है। इसके चार नीतिज्ञ बड़े प्रसिद्ध हो गये हैं। शुक्र, चाणक्य और कणिक। इन्हीं के नाम से चार विख्यात हैं। शुक्रनीति, विदुरनीति, और कणिकनीति। ये सब पुस्तक संस्कृत में हैं। हिन्दी जाननेवालों के उपकार के लिए इन चारों पुस्तकों का संक्षिप्त हिन्दी-अनुवाद हुआ है। इसकी भाषा बालकों और स्त्रियों तक के लायक़ है। मूल्य ॥)

### बालभागवत—पहला भाग।

६—लीजिए, 'श्रीमद्भागवत' की कथा भी सरल हिन्दी-भाषा में बन गई। जो लोग संस्कृत नहीं जानते, केवल हिन्दी-भाषा ही जानते हैं, वे अब श्रीमद्भागवत की भक्ति-रस-भरी कथाओं का स्वाद चख सकते हैं। इस 'बालभागवत' में 'भागवत' की कथाओं का सार लिखा गया है। इसकी कथायें बड़ी रोचक, बड़ी शिक्षादायक और भक्ति रस से भरी हुई हैं। हर एक हिन्दी-प्रेमी को इस पुस्तक की एक एक कापी ज़रूर लेनी चाहिए। मूल्य ॥) आने

### बालभागवत—दूसरा भाग।

अर्थात्
श्रीकृष्णलीला।

७—श्रीकृष्ण के प्रेमियों को यह पुस्तक का दूसरा भाग ज़रूर पढ़ना चाहिए। श्रीमद्भागवत में वर्णित श्रीकृष्ण भगवान् की लीलाओं की कथायें लिखी गई हैं। मूल्य ॥)

## बालगीता ।

८—गीता की एक एक शिक्षा, एक एक बात मनुष्यों को मुक्ति और मुक्ति की देनेवाली है। ऐहिक और पारमार्थिक सुख चाहने वालों को गीता के उपदेश से ज़रूर शिक्षा लेनी चाहिए। गीता में जगह जगह ऐसा अमृतमय उपदेश भरा हुआ है कि जिसके पढ़ने से मनुष्य अमर-पदवी तक पा सकता है। कृष्णचन्द्र महाराज के मुखारविन्द से निकले हुए इस उपदेश को कौन हिन्दू न पढ़ना चाहेगा? अपने बालकों को पवित्र और बलिष्ठ बनाने के लिए यह "बालगीता" ज़रूर पढ़नी चाहिए। इसमें पूरी गीता बहुत ही सार बड़ी सरल भाषा में लिखा गया है। मूल्य ॥)

## बालोपदेश ।

९—यह पुस्तक बालकों को ही नहीं युवा, वृद्ध, स्त्री सभी को उपयोगी तथा चतुर, धर्मात्मा और बुद्धिमान बनाने वाली है। राजा भर्तृहरि के विमल हृदय में जब संसार से वैराग्य उत्पन्न हुआ था तब उन्होंने एक दम भरा पूरा राज-पाट छोड़ कर वनवास ले लिया था। उस परमानन्दमयी अवस्था में उन्होंने वैराग्य और नीति-सम्बन्धी दो शतक बनाये थे। इस 'बालोपदेश' में उन्हीं भर्तृहरि-कृत नीति-शतक का पूरा और वैराग्यशतक का संक्षिप्त हिन्दी अनुवाद छापा गया है। यह पुस्तक स्कूलों में बालकों के पढ़ने के लिए बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।)

## शिक्षाप्रद उपन्यास (सचित्र) चारों भाग।

१०-१३—दिलचस्प क़िस्से कहानियों के लिए संसार भर के उपन्यासों में अरबियन नाइट्स का स्थान सबसे पहला है। इसमें से कुछ अश्लील कहानियों को निकाल कर, यह विशुद्ध संस्करण निकाला गया है। इसलिए, अब, यह किताब क्या स्त्री, क्या पुरुष सभी के पढ़ने लायक है। इसके पढ़ने से हिन्दी-भाषा का प्रचार होगा, मनोरञ्जन होगा, घर बैठे दुनिया की सैर होगी, बुद्धि और विचार-शक्ति बढ़ेगी, चतुराई सीखने में आवेगी, साहस और हिम्मत बढ़ेगी। कहाँ तक कहें, इसके पढ़ने से अनेक लाभ होंगे। मूल्य प्रत्येक भाग का ॥)

## बालपंचतंत्र ।

१४—इसके पाँचों तंत्रों में बड़ी मनोरंजक कहानियों के द्वारा सरल रीति पर नीति की शिक्षा दी गई है। बालक-बालिकायें इसकी मनोरंजक कहानियों को बड़े चाव से पढ़ कर नीति की शिक्षा ग्रहण कर सकती हैं। यह "बालपंचतंत्र" विष्णुशर्मा कृत असली पंचतंत्र का सरल हिन्दी में सार है। यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दीपाठक और विशेष कर बालकों के पढ़ने के योग्य है। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

## बालहितोपदेश ।

१५—इस पुस्तक के पढ़ने से बालकों की बुद्धि बढ़ती है, नीति की शिक्षा मिलती है, मित्रता के लाभों का ज्ञान होता है और शत्रुओं के पंजे में न फँसने और फँस जाने पर उससे निकलने के उपायों और कर्त्तव्यों का बोध हो जाता है। यह पुस्तक, पुरुष हो या स्त्री, बालक हो या बूढ़ा, सभी के काम की है। इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य आठ आने।

## बालहिन्दीव्याकरण ।

१६—यदि आप हिन्दी-व्याकरण के गूढ़ विषयों को सरल और सुगम रीति से जानना चाहते हैं, यदि आप हिन्दी शुद्ध रूप से लिखना और बोलना जानना चाहते हैं, तो "बालहिन्दीव्याकरण" पुस्तक मँगा कर पढ़िए और अपने बाल-बच्चों को पढ़ाइए। स्कूलों में लड़कों के पढ़ाने के लिए यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।) चार आने।

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ※ ※ ※

## बालरक्षा-पुस्तकमाला।

इंडियन प्रेस, प्रयाग की "बालरक्षा पुस्तकमाला" नामक सीरीज़ में जितनी किताबें आज तक निकली हैं वे सब हिन्दी-पाठकों के लिए, विशेष कर बालक-बालिकाओं और स्त्रियों के लिए, परमोपयोगी प्रमाणित हो चुकी हैं। इस 'माला' की सब किताबों की भाषा ऐसी सरल—सबके समझने योग्य—रक्खी है कि जिसे थोड़े पढ़े लिखे बालक भी बड़ी आसानी से पढ़ कर समझ लेते हैं। इस 'माला' में अब तक जितनी पुस्तकें निकल चुकी हैं उनका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जाता है:—

### बालभारत—पहला भाग।

१—इसमें महाभारत की संक्षेप से कुल कथा ऐसी सरल हिन्दी भाषा में लिखी गई है कि बालक और स्त्रियाँ तक पढ़कर समझ सकती हैं। यह पाण्डवों का चरित बालकों को अवश्य पढ़ाना चाहिए। मूल्य ॥) मूल्य आठ आने।

### बालभारत—दूसरा भाग।

२—इसमें महाभारत से छाँट कर बीसियों ऐसी कथायें लिखी गई हैं कि जिनको पढ़कर बालक अच्छी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। हर कथा के अन्त में कथानुरूप शिक्षा भी दी गई है। मूल्य वही ॥)

### बालरामायण—सातों काण्ड।

३—इसमें रामायण की कुल कथा बड़ी सीधी भाषा में लिखी गई है। इसकी भाषा की सरलता में इससे अधिक और क्या प्रमाण दें कि गवर्नमेंट ने इस पुस्तक को सिविलियन लोगों के पढ़ने के लिए नियत कर दिया है। भारतवासियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य ॥)

### बालमनुस्मृति।

४—आज कल आप-सन्तान अपनी प्राचीन धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक रीति-रस्मों को न जान कर कैसे घोर अन्धकार में पड़ी है यह किसी भी विचारशील से छिपा नहीं है। इसी दोष को दूर करने के लिए 'मनुस्मृति' के उत्तम उत्तम श्लोकों को छाँट छाँट कर हिन्दी में अनुवाद लिखा गया है। मूल्य ।)

### बालनीतिमाला।

५—नीतिविद्या बड़े काम की विद्या है। घर नीतिज्ञ बड़े प्रसिद्ध हो गये हैं। शुक्र, चाणक्य और कणिक। इन्हीं के नाम से चार विख्यात हैं। शुक्रनीति, विदुरनीति, चाणक्य और कणिकनीति। ये सब पुस्तक संस्कृत हिन्दी जाननेवालों के उपकार के लिए चारों पुस्तकों का संक्षिप्त हिन्दी-अनुवाद इसकी भाषा बालकों और स्त्रियों तक के लायक़ है। मूल्य ॥)

### बालभागवत—पहला भाग।

६—लीजिए, 'श्रीमद्भागवत' की कथा सरल हिन्दी-भाषा में बन गई। जो लोग नहीं जानते, केवल हिन्दी-भाषा ही जानते हैं, अब श्रीमद्भागवत की भक्ति-रस-भरी कथा स्वाद चख सकते हैं। इस 'बालभागवत' में गवत' की कथाओं का सार लिखा गया इसकी कथायें बड़ी रोचक, बड़ी शिक्षाप्रद भक्ति रस से भरी हुई हैं। हर एक हिन्दी-प्रेमी को इस पुस्तक की एक एक कापी ज़रूर चाहिए। मूल्य ॥) आने

### बालभागवत—दूसरा भाग।

अर्थात्
श्रीकृष्णलीला।

७—श्रीकृष्ण के प्रेमियों को यह बाल का दूसरा भाग ज़रूर पढ़ना चाहिए। श्रीमद्भागवत में वर्णित श्रीकृष्ण भगवान् की लीलाओं की कथायें लिखी गई हैं। मूल्य

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## बालगीता ।

१—गीता की एक एक शिक्षा, एक एक बात
ों को मुक्ति और मुक्ति की देनेवाली है। ऐहिक
पारमार्थिक सुख चाहने वालों को गीता के उप-
से ज़रूर शिक्षा लेनी चाहिए। गीता में जगह
ऐसा अमृतमय उपदेश भराहुआ है कि जिसके
से मनुष्य अमर-पदवी तक पा सकता है।
चन्द्र महाराज के मुखारविन्द से निकले हुए
देश को कौन हिन्दू न पढ़ना चाहेगा? अपने
को पवित्र और बलिष्ठ बनाने के लिए यह
गीता" ज़रूर पढ़नी चाहिए। इसमें पूरी गीता
ार बड़ी सरल भाषा में लिखा गया है।
॥)

## बालोपदेश ।

१—यह पुस्तक बालकों को ही नहीं युवा, वृद्ध,
ा सभी को उपयोगी तथा चतुर, धर्मात्मा और
सम्पन्न बनाने वाली है। राजा भर्तृहरि के विमल
करण में जब संसार से वैराग्य उत्पन्न हुआ था
उन्होंने एक दम भरा पूरा राज-पाट छोड़ कर
ास ले लिया था। उस परमानन्दमयी अवस्था
होंने वैराग्य और नीति-सम्बन्धी दो शतक बनाये
इस 'बालोपदेश' में उन्हीं भर्तृहरि-कृत नीति-
क का पूरा और वैराग्यशतक का संक्षिप्त हिन्दी
वाद छापा गया है। यह पुस्तक स्कूलों में बालकों
पढ़ने के लिए बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।)

## आरव्योपन्यास (सचित्र) चारों भाग।

१०-१२—दिलचस्प क़िस्से कहानियों के लिए
या भर के उपन्यासों में अरबियन नाइट्स का
र सबसे पहला है। इसमें से कुछ अयोग्य कहानियों
निकाल कर, यह विशुद्ध संस्करण निकाला गया
इसलिए, अब, यह किताब क्या स्त्री, क्या पुरुष
ी के पढ़ने लायक है। इसके पढ़ने से हिन्दी-भाषा
का प्रचार होगा, मनोरञ्जन होगा, घर बैठे दुनिया की
सैर होगी, बुद्धि और विचार-शक्ति बढ़ेगी, चतुराई
सीखने में आवेगी, साहस और हिम्मत बढ़ेगी। कहाँ
तक कहें, इसके पढ़ने से अनेक लाभ होंगे। मूल्य
प्रत्येक भाग का ॥)

## बालपंचतंत्र ।

१४—इसके पाँचों तंत्रों में बड़ी मनोरंजक कहा-
नियों के द्वारा सरल रीति पर नीति की शिक्षा दी
गई है। बालक-बालिकायें इसकी मनोरंजक कहानियों
को बड़े चाव से पढ़ कर नीति की शिक्षा ग्रहण कर
सकती हैं। यह "बालपंचतंत्र" विष्णुशर्मा कृत
असली पंचतंत्र का सरल हिन्दी में सार है। यह
पुस्तक प्रत्येक हिन्दीपाठक और विशेष कर बालकों
के पढ़ने के योग्य है। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

## बालहितोपदेश ।

१५—इस पुस्तक के पढ़ने से बालकों की बुद्धि
बढ़ती है, नीति की शिक्षा मिलती है, मित्रता के
लाभों का ज्ञान होता है और शत्रुओं के पंजे में न
फँसने और फँस जाने पर उससे निकलने के उपायों
और कर्त्तव्यों का बोध हो जाता है। यह पुस्तक,
पुरुष हो या स्त्री, बालक हो या बूढ़ा, सभी के काम
की है। इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य आठ आने।

## बालहिन्दीव्याकरण ।

१६—यदि आप हिन्दी-व्याकरण के गूढ़ विषयों
को सरल और सुगम रीति से जानना चाहते हैं, यदि
आप हिन्दी शुद्ध रूप से लिखना और बोलना
जानना चाहते हैं, तो "बालहिन्दीव्याकरण" पुस्तक
मँगा कर पढ़िए और अपने बाल-बच्चों को पढ़ाइए।
स्कूलों में लड़कों के पढ़ाने के लिए यह पुस्तक
बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।) चार आने।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * *

## बालविष्णुपुराण ।

१७—विष्णुपुराण में कितनी ही ऐसी विचित्र और शिक्षाप्रद कथायें हैं कि जिनके जानने की हिन्दी वालों को बड़ी ज़रूरत है। इस पुराण में कलियुगी भविष्य राजाओं की वंशावली का बड़े विस्तार से वर्णन किया गया है। जो लोग संस्कृत भाषा में विष्णुपुराण की कथाओं का आनन्द नहीं लूट सकते, उन्हें 'बालविष्णु-पुराण' पढ़ना चाहिए। इस पुस्तक को विष्णुपुराण का सार समझिए। मूल्य ।)

## बाल-स्वास्थ्य-रक्षा ।

१८—यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दी जाननेवाले को पढ़नी चाहिए। प्रत्येक गृहस्थ को इसकी एक एक कापी अपने घर में रखनी चाहिए। बालकों को तो आरम्भ से ही इस पुस्तक को पढ़कर स्वास्थ्य-सुधार के उपायों का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। इसमें बतलाया गया है कि मनुष्य किस प्रकार रह कर, किस प्रकार का भोजन करके, नीरोग रह सकता है। इसमें प्रति दिन के बर्ताव में आनेवाली खाने की चीज़ों के गुण-दोष भी अच्छी तरह बताये गये हैं। कहाँ तक कहें, पुस्तक मनुष्य-मात्र के काम की है। इतनी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल ॥) आठ आना रक्खा है।

## बालगीतावलि ।

१९—महाभारत में क्या नहीं है। उसमें सभी कुछ मौजूद है। महाभारत को रत्नों का सागर कहना चाहिए, शिक्षा का भण्डार कहना चाहिए। आप जानते हैं "बालगीतावलि" में क्या है? इसमें महाभारत में से ९ गीताओं का संग्रह किया गया है। इन गीताओं में ऐसी उत्तम उत्तम शिक्षायें हैं कि जिनके अनुसार बर्ताव करने से मनुष्य का परम कल्याण हो सकता है। हमें पूरी आशा है कि समस्त हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को पढ़ कर उत्तम शिक्षा लाभ करेंगे। मूल्य ॥) आठ आने।

## बालनिबन्धमाला ।

२०—इसमें कोई ३५ शिक्षादायक विषयों पर बड़ी सुन्दर भाषा में, निबन्ध लिखे गये हैं। बालकों के लिए तो यह पुस्तक उत्तम गुरु का काम करती है। ज़रूर मँगाइए। मूल्य ।=)

## बालस्मृतिमाला ।

२१—हमने १८ स्मृतियों का सार संग्रह करके यह "बालस्मृतिमाला" प्रकाशित की है। सनातनधर्म के प्रेमी अपने अपने बालकों के हाथ में यह धर्मशास्त्र की पुस्तक देकर उनको धर्म-शिक्षा का उद्योग करेंगे। मूल्य केवल ॥) आठ आना

## बालपुराण ।

२२—पुराणों में बहुत सी ऐसी कथायें हैं कि जिनसे मनुष्यों को बहुत कुछ उपदेश मिल सकता है। परन्तु पुराण इतने अधिक और बड़े हैं कि उन सबका पढ़ना प्रत्येक मनुष्य के लिए असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। इसलिए सर्वसाधारण के लिए हमने अठारह महापुराणों का सार "बालपुराण" तैयार करा कर प्रकाशित किया है। इसमें अठारहों पुराणों की संक्षिप्त कथावली दी गई है। यह भी बतलाया गया है कि किस पुराण में कितने श्लोक और कितने अध्याय आदि हैं। पुस्तक बड़ी उपयोगी की है। इतनी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल ॥) आठ आना है।

## बालभोजप्रबन्ध ।

२३—राजा भोज का विद्याप्रेम किसी से छिपा नहीं है। संस्कृत भाषा के "भोजप्रबन्ध" नामक ग्रन्थ में राजा भोज के संस्कृत-विद्याप्रेम-सम्बन्धी बहुत से आख्यान लिखे हुए हैं। वे बड़े मनोरञ्जक और शिक्षादायक हैं। उसी भोजप्रबन्ध का सारांश लेकर "बाल-भोजप्रबन्ध" तैयार हो गया। हिन्दी-प्रेमियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य बहुत ही कम केवल ॥) आठ आने।

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## धोखे की टट्टी ।

इस उपन्यास में एक अनाथ लड़के की नेकनीयती नेकचलनी और एक सनाथ और धनाढ्य के की बदनीयती और बदचलनी का फोटो ा गया है। हमारे भारतीय नवयुवक इसके से बहुत कुछ सुधर सकते हैं, बहुत कुछ शिक्षा कर सकते हैं। ज़रा मँगाकर देखिए तो कैसी ले की टट्टी" है। मूल्य ।=)

## पार्वती और यशोदा ।

इस उपन्यास में स्त्रियों के लिए अनेक शिक्षायें दी हैं। इसमें दो प्रकार के स्त्री-स्वभावों का ऐसा ा फोटो खींचा गया है कि समझते ही बनता स्त्रियों के लिए ऐसे ऐसे उपन्यासों की अत्यन्त दयकता है। 'सरस्वती' के प्रसिद्ध कवि पण्डित ताप्रसाद गुप्त ने ऐसा शिक्षादायक उपन्यास कर हिन्दी पढ़ी लिखी स्त्रियों का बहुत उपकार ा है। हर एक स्त्री को यह उपन्यास अवश्य ना चाहिए। मूल्य ।=)

## सुशीला-चरित ।

आज कल हमारे देश के स्त्री-समाज में ऐसे ऐसे ष, दुर्व्यसन और दुराचार घुसे हुए हैं जिनके ारण स्त्री-समाज ही नहीं पुरुष-समाज भी नाना ार के दुःखजालों में फँस कर घोर नरक-यातना ा रहा है। यदि भारतवासी अपने देश, धर्म और ति की उन्नति करना चाहते हैं तो सब से पहले, प्रकार की उन्नतियों के मूल स्त्री-समाज का ार करना चाहिए। फिर देखिए, आपकी सभी मनायें आप से आप ही सिद्ध हो जायँगी। स्त्री-ाज के सुधार की शिक्षा देने में 'सुशीलाचरित' क बहुत ही उपयोगी है। प्रत्येक पढ़ी लिखी स्त्री सुशीला-चरित अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य १)

## बाला-बोधिनी ।

( पाँच भाग )

लड़कियों के पढ़ने के लिए ऐसी पुस्तकों की बड़ी आवश्यकता थी जिनमें भाषाशिक्षा के साथही साथ लाभदायक उपयोगी उपदेशों के पाठ हों और उनमें ऐसी शिक्षा भरी हो जिनकी, वर्तमान काल में, लड़कियों के लिए अत्यन्त आवश्यकता है। हमारी बालाबोधिनी इन्हीं आवश्यकताओं के पूर्ण करने लिए प्रकाशित हुई है। क्या देशी और क्या सरकारी सभी पुत्री-पाठशालाओं की पाठ्य-पुस्तकों में बाला-बोधिनी को नियत करना चाहिए। इन पुस्तकों के कवर-पेज ऐसे सुन्दर रङ्गीन छापे गये हैं कि देखते ही बनता है। मूल्य पाँचों भागों का १) और प्रत्येक भाग का क्रमशः =), ⊏), ।), ।-), ।=), है।

## समाज ।

मिष्टर आर सी. दत्त लिखित बँगला उपन्यास का हिन्दी-अनुवाद बहुत ही सरल भाषा में किया गया है। पुस्तक बड़े महत्त्व की है। यह सामाजिक उपन्यास सभी हिन्दी जाननेवालों के बड़े काम का है। एक बार पढ़ कर अवश्य देखिए। मूल्य ॥)

## सुखमार्ग ।

इस पुस्तक का जैसा नाम है इसमें सुख भी वैसा ही है। इस पुस्तक के पढ़ते ही सुख का मार्ग दिखाई देने लगता है। जो लोग दुखी हैं, सुख की खोज में दिन रात सिर पटकते रहते हैं उनको यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। मूल्य केवल ।)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ※

## बालविष्णुपुराण ।

१७—विष्णुपुराण में कितनी ही ऐसी विचित्र और शिक्षाप्रद कथायें हैं कि जिनके जानने की हिन्दी बालों को बड़ी ज़रूरत है। इस पुराण में कलियुगी भविष्य राजाओं की वंशावली का बड़े विस्तार से वर्णन किया गया है। जो लोग संस्कृत भाषा में विष्णुपुराण की कथाओं का आनन्द नहीं लूट सकते, उन्हें 'बालविष्णु-पुराण' पढ़ना चाहिए। इस पुस्तक को विष्णुपुराण का सार समझिए। मूल्य ।)

## बाल-स्वास्थ्य-रक्षा ।

१८—यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दी जाननेवाले को पढ़नी चाहिए। प्रत्येक गृहस्थ को इसकी एक एक कापी अपने घर में रखनी चाहिए। बालकों को तो आरम्भ से ही इस पुस्तक को पढ़कर स्वास्थ्य-सुधार के उपायों का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। इसमें बतलाया गया है कि मनुष्य किस प्रकार रह कर, किस प्रकार का भोजन करके, नीरोग रह सकता है। इसमें प्रति दिन के बर्ताव में आनेवाली खाने की चीज़ों के गुण-दोष भी अच्छी तरह बताये गये हैं। कहाँ तक कहें, पुस्तक मनुष्य-मात्र के काम की है। इतनी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल ॥) आठ आना रक्खा है।

## बालगीतावलि ।

१९—महाभारत में क्या नहीं है। उसमें सभी कुछ मौजूद है। महाभारत को रत्नों का सागर कहना चाहिए, शिक्षा का भण्डार कहना चाहिए। आप जानते हैं "बालगीतावलि" में क्या है? इसमें महाभारत में से ९ गीताओं का संग्रह किया गया है। इन गीताओं में ऐसी उत्तम उत्तम शिक्षायें हैं कि जिनके अनुसार वर्ताव करने से मनुष्य का परम कल्याण हो सकता है। हमें पूरी आशा है कि समस्त हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को पढ़ कर उत्तम शिक्षा का लाभ करेंगे। मूल्य ।) आठ आने।

## बालनिबन्धमाला ।

२०—इसमें कोई ३५ शिक्षादायक विष
बड़ी सुन्दर भाषा में, निबन्ध लिखे गये हैं।
के लिए तो यह पुस्तक उत्तम गुरु का काम
ज़रूर मँगाइए। मूल्य ।=)

## बालस्मृतिमाला ।

२१—हमने १८ स्मृतियों का सार-संग्र
यह "बालस्मृतिमाला" प्रकाशित की है।
सनातनधर्म के प्रेमी अपने अपने बालकों के
यह धर्मशास्त्र की पुस्तक देकर उनको धर्मि
का उद्योग करेंगे। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

## बालपुराण ।

२२—पुराणों में बहुत सी ऐसी कथायें
मनुष्यों को बहुत कुछ उपदेश मिल सकता
पुराण इतने अधिक और बड़े हैं कि उन सबका
प्रत्येक मनुष्य के लिए असम्भव नहीं तो क
साध्य अवश्य है। इसलिए सर्वसाधारण के
के लिए हमने अठारह महापुराणों का सार
पुराण' तैयार करा कर प्रकाशित किया है।
अठारहों पुराणों की संक्षिप्त कथासूची दी गई
यह भी बतलाया गया है कि किस पुराण में
श्लोक और कितने अध्याय आदि हैं। पुस्तक
की है। इतनी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केव

## बालभोजप्रबन्ध ।

२३—राजा भोज का विद्याप्रेम किसी से
नहीं है। संस्कृत भाषा के "भोजप्रबन्ध" नाम
में राजा भोज के संस्कृत-विद्याप्रेम-सम्बन्धी
आख्यान लिखे हुए हैं। वे बड़े मनोरञ्जक
शिक्षादायक हैं। उसी भोजप्रबन्ध का सारांश
"बाल-भोजप्रबन्ध" छपकर तैयार हो गया।
हिन्दी-प्रेमियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चा
मूल्य बहुत ही कम केवल ॥) आठ आने।

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन

## धोखे की टट्टी ।

इस उपन्यास में एक अनाथ लड़के की नेकनीयती नेकचलनी और एक सनाथ और धनाढ्य की बदनीयती और बदचलनी का फोटो गया है। हमारे भारतीय नवयुवक इसके से बहुत कुछ सुधर सकते हैं, बहुत कुछ शिक्षा कर सकते हैं। ज़रा मँगाकर देखिए तो कैसी "धोखे की टट्टी" है। मूल्य ।=)

## पार्वती और यशोदा ।

इस उपन्यास में स्त्रियों के लिए अनेक शिक्षायें दी हैं। इसमें दो प्रकार के स्त्री-स्वभावों का ऐसा ा फोटो खींचा गया है कि समझते ही बनता स्त्रियों के लिए ऐसे ऐसे उपन्यासों की अत्यन्त यकता है। 'सरस्वती' के प्रसिद्ध कवि पण्डित ताप्रसाद गुरु ने ऐसा शिक्षादायक उपन्यास कर हिन्दी पढ़ी लिखी स्त्रियों का बहुत उपकार ा है। हर एक स्त्री को यह उपन्यास अवश्य ना चाहिए। मूल्य ।=)

## सुशीला-चरित ।

आज तक हमारे देश के स्त्री-समाज में ऐसे ऐसे ण, दुर्व्यसन और दुराचार घुसे हुए हैं जिनके रण स्त्री-समाज ही नहीं पुरुष-समाज भी नाना तर के दुःखजालों में फँस कर घोर नरक-यातना ा रहा है। यदि भारतवासी अपने देश, धर्म और ति की उन्नति करना चाहते हैं तो सब से पहले, प्रकार की उन्नतियों के मूल स्त्री-समाज का ार करना चाहिए। फिर देखिए, आपकी सभी मनायें आप से आप ही सिद्ध हो जायँगी। स्त्री-माज के सुधार की शिक्षा देने में 'सुशीलाचरित' बहुत ही उपयोगी है। प्रत्येक पढ़ी लिखी स्त्री सुशीला-चरित अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य ।)

## बाला-बोधिनी ।

( पाँच भाग )

लड़कियों के पढ़ने के लिए ऐसी पुस्तकों की बड़ी आवश्यकता थी जिनमें भाषाशिक्षा के साथही साथ लाभदायक उपयोगी उपदेशों के पाठ हों और उनमें ऐसी शिक्षा भरी हो जिनकी, वर्तमान काल में, लड़कियों के लिए अत्यन्त आवश्यकता है। हमारी बालाबोधिनी इन्हीं आवश्यकताओं के पूर्ण करने लिए प्रकाशित हुई है। क्या देशी और क्या सरकारी सभी पुत्री-पाठशालाओं की पाठ्य-पुस्तकों में बाला-बोधिनी को नियत करना चाहिए। इन पुस्तकों के कवर-पेज ऐसे सुन्दर रङ्गीन छापे गये हैं कि देखते ही बनता है। मूल्य पाँचों भागों का १।) और प्रत्येक भाग का क्रमशः =), ⅜), ।), ।-), ।=), है।

## समाज ।

मिष्टर आर सी दत्त लिखित बँगला उपन्यास का हिन्दी-अनुवाद बहुत ही सरल भाषा में किया गया है। पुस्तक बड़े महत्व की है। यह सामाजिक उपन्यास सभी हिन्दी जाननेवालों के बड़े काम का है। एक बार पढ़ कर अवश्य देखिए। मूल्य ॥)

## सुखमार्ग ।

इस पुस्तक का जैसा नाम है इसमें सुख भी वैसा ही है। इस पुस्तक के पढ़ने ही सुख का मार्ग दिखाई देने लगता है। जो लोग दुखी हैं, सुख की खोज में दिन रात सिर पटकते रहते हैं उनको यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। मूल्य केवल ।)

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## बालविनोद ।

प्रथम भाग -) द्वितीय भाग -)॥ तृतीय भाग ) चौथा भाग ।) पाँचवाँ भाग ।) ये पुस्तकें लड़के लड़कियों के लिए प्रारम्भ से शिक्षा शुरू करने के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। इसमें से पहले तीनों भागों में एक और भी विशेषता है कि रंगीन-तसवीरें भी दी गई हैं। इन पाँचों भागों में सदुपदेशपूर्ण अनेक कवितायें भी हैं। बंगाल की टैक्स्ट बुक कमेटी ने इनमें से पहले तीनों भागों को अपने स्कूलों में जारी कर दिया है।

## उपदेश-कुसुम ।

यह गुलिस्ताँ के आठवें बाब का हिन्दी-अनुवाद है। यह पढ़ने लायक और शिक्षादायक है। मूल्य ।)

## मुआल्लिम नागरी ।

उर्दू जाननेवालों को नागरी सीखने के लिए इसे काल समझिए। इसमें उर्दू और नागरी दोनों छापी गई हैं। इससे बड़ी जल्दी नागरी पढ़ना लिखना आ जाता है। मूल्य ॥)

## भाषा-पत्र-बोध ।

यह पुस्तक बालकों और स्त्रियों के ही उपयोगी नहीं सभी के काम की है। इसमें हिन्दी में पत्रव्यवहार करने की रीतियाँ बड़ी उत्तम रीति से लिखी गई हैं। इस किताब को पढ़ कर छोटे छोटे बालक भी अच्छी तरह पत्र-व्यवहार करना सीख जाते हैं। मूल्य -)॥

## व्यवहार-पत्र-दर्पण ।

[illegible] के [illegible] और [illegible] कामों का संग्रह।

यह पुस्तक [illegible] भाषा में [illegible] के [illegible] द्वारा [illegible]

## कादम्बरी ।

यह कविवर बाणभट्ट के सर्व[illegible] उपन्यास का अत्युत्तम हिन्दी-अनुवाद। [illegible] लेखक स्वर्गवासी बाबू गदाधरसिंह [illegible] है। कथा तो सर्वोत्तम प्रसिद्ध [illegible] भाषा भी बड़ी शुद्ध, मधुर और सरस [illegible] सर्वथा पठन-योग्य समझ कर कलकत्ता [illegible] यूनिवर्सिटी ने एफ० ए० क्लास के कोर्स में [illegible] कर लिया है। यह उपन्यास हिन्दी-प्रेमियों [illegible] योग्य है। दाम ॥)

## पाकप्रकाश

इसमें रोटी, दाल, कढ़ी, भाजी, पकौड़ी, चटनी, अचार, मुरब्बा, पूरी, कचौरी, मिठाई, पुआ, आदि के बनाने की रीति लिखी गई है। पुस्तक स्त्रियों के बड़े काम की है। मूल्य ।)

## जल-चिकित्सा-( सचित्र )

( लेखक—पण्डित [illegible] )

इसमें, साफ़ [illegible] कुएँ के [illegible] जल से ही सब रोगों की चिकित्सा का [illegible] गया है। मूल्य ।)

## अर्थशास्त्र-प्रवेशिका ।

अर्थशास्त्र के मूल सिद्धान्तों के [illegible] लिए इस पुस्तक को [illegible] पढ़ना चाहिए। [illegible], को काम की पुस्तक है। मूल्य ।)

लिखने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

मिस्टर आर० सी० दत्त-लिखित

## महाराष्ट्र-जीवन-प्रभात

का

हिन्दी अनुवाद छप कर तैयार हो गया। इसमें महावीर शिवाजी की वीरता-पूर्ण ऐतिहासिक बातें लिखी गई हैं। वीररसपूर्ण उपन्यास है। हिन्दी पढ़ने वालों को एक बार इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य ॥=)

मिस्टर आर० सी० दत्त-लिखित

## राजपूत-जीवन-सन्ध्या।

का भी अनुवाद तैयार हो गया। इसमें राजपूतों की वीरता कूट कूट कर भरी है। पर, साथ ही राजपूतों के वीरता-पूर्ण जीवन की सन्ध्या के समय का भी वर्णन है। उपन्यास पढ़ने योग्य है। मूल्य ॥)

## शेखचिल्ली की कहानियाँ।

इस पुस्तक की अँगरेज़ी में हज़ारों कापियाँ बिक चुकी हैं, बँगला में भी ख़ूब बिक रही हैं। लीजिए, अब हिन्दी में भी यह किताब छप कर तैयार हो गई। बड़े मज़े की किताब है। इन कहानियों की प्रशंसा में इतना ही कह देना बहुत होगा कि इन्हें शेख़चिल्ली ने लिखा है। सरस्वती में जो हीरा और लाल की कहानी छपी थी उसे इस किताब की कहानियों की बानगी समझिए। मूल्य ॥)

## भारतीय विदुषी।

इस पुस्तक में भारत की कोई ४० प्राचीन विदुषी देवियों के संक्षिप्त जीवन-चरित लिखे गये हैं। इसके देखने से मालूम होगा कि पहले स्त्रियाँ कैसी कैसी विदुषी होती थीं। स्त्रियों को तो यह पुस्तक पढ़नी ही चाहिए, क्योंकि इसमें स्त्री-शिक्षा की अनेक उपयोगी बातें ऐसी लिखी गई हैं कि जिन के पढ़ने से स्त्रियों के हृदय में विद्यानुराग का बीज अ हो जाता है, किन्तु पुरुषों को भी इस पुस्त किननी ही नई बातें मालूम होंगी। मूल्य ।=)

## रॉबिन्सन क्रूसो।

क्रूसो की कहानी बड़ी मनोरञ्जक, बड़ी शि कर्षक और शिक्षादायक है। नवयुवकों के तो यह पुस्तक इतनी उपयोगी है कि जि वर्णन नहीं हो सकता। प्रत्येक हिन्दी पढ़े लिखे यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। क्रूसो के अ उत्साह, असीम साहस, अद्भुत पराक्रम, परिश्रम और विकट वीरता के वर्णन को पढ़ पाठक के हृदय पर ऐसा विचित्र प्रभाव पड़त कि जिसका नाम नहीं। कूपमण्डूक की तरह घर पर ही पड़े पड़े सड़ने वाले आलसियों को इसे अव पढ़ कर अपना सुधार करना चाहिए। पुस्त बड़े काम की है। मूल्य १)

## क्षय-रोग।

(जनसाधारण की बीमारी तथा उसका इलाज

(अनुवादक, पण्डित बालकृष्ण शर्म्मा)

क्षयरोग की भयङ्करता जगत्प्रसिद्ध है। यह बड़ा बुरा संक्रामक रोग है। नहीं मालूम कित प्राणी प्रतिवर्ष इस रोग-राक्षस के पंजे में पँहुच इस लोक से चल बसते हैं। जर्मनी के बड़े ब डाक्टरों और विद्वानों ने एक सभा की थी। उस इस रोग से बचने के उपायों पर कितने ही निब पढ़े गये थे। एक निबन्ध सर्वोत्तम समझा गया उसी को पारितोषिक भी मिला था। उसी पुस्त का अनुवाद अब तक कोई २२ भाषाओं में हो चुक है। यह पुस्तक उसी निबन्ध का अनुवाद है। इसमें बताये गये उपायों के द्वारा अब तक सहस्रों रोगियों को आराम होने लगा है। पुस्तक बड़े काम की है। सब के पढ़ने लायक है। भाषा बड़ी सरल है। मूल्य ।=)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ✻ ✻ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ✻ ✻

## मानस-दर्पण

( लेखक—श्री० पं० पद्मसिंह शर्मा, एम० ए० )

इस पुस्तक को हिन्दी-साहित्य का अलङ्कारग्रन्थ समझना चाहिए। इसमें अलङ्कारों आदि के लक्षण संस्कृत-साहित्य से और उदाहरण रामचरितमानस से दिये गये हैं। प्रत्येक हिन्दी-पाठक को यह पुस्तक अवश्य ही पढ़नी चाहिए। मूल्य ।=)

## माधवीकंकण ।

मिस्टर आर० सी० दत्त की चमत्कारिणी लेखनी के चमत्कार को कौन नहीं जानता। "माधवीकङ्कण" नाम का बँगला उपन्यास उन्हीं के क़लम की करामात है। बड़ा रोचक, बड़ा शिक्षादायक और बड़ा मनोरञ्जक उपन्यास है। हृदय-हारिणी घटनाओं से भरपूर है। वीर और करुणा आदि अनेक रसों का समावेश इसमें किया गया है। उपन्यास का उद्देश पवित्र और शिक्षादायक है। मूल्य ।।।)

## हिन्दी-व्याकरण ।

( बाबू माणिक्यचन्द्र जैनी बी० ए० कृत )

यह हिन्दी-व्याकरण अंग्रेज़ी ढंग पर बनाया गया है। इसमें व्याकरण के प्रायः सब विषय ऐसी अच्छी रीति से समझाये गये हैं कि बड़ी आसानी से समझ में आ जाते हैं। हिन्दी-व्याकरण के जानने की इच्छा रखनेवालों को यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। मूल्य =)॥

## हिन्दी-व्याकरण ।

( बाबू गंगाप्रसाद एम० ए० कृत )

यह भी नये ढंग का व्याकरण है। इसमें भी व्याकरण के सब विषय अंग्रेज़ी ढंग पर लिखे गये उदाहरण देकर हर एक विषय को ऐसी अच्छी से समझाया है कि बालकों की समझ में बहुत आ जाता है। मूल्य =)

## योगवासिष्ठ-सार ।

( वैराग्य और मुमुक्षु व्यवहार प्रकरण )

योगवासिष्ठ ग्रन्थ की महिमा है से छिपी नहीं है। इस ग्रन्थ में श्रीरामचन्द्र गुरु वसिष्ठजी का उपदेशमय संवाद लिखा हुआ और लोग संस्कृत-भाषा में इस भारी ग्रन्थ को पढ़ सकते उनके लिए हमने योगवासि रूप यह ग्रन्थ हिन्दी में प्रकाशित किया साधारण हिन्दी जानने वाले भी इस ग्रन्थ कर धर्म, ज्ञान और वैराग्यविषयक उत्तम से लाभ उठा सकते हैं। मूल्य ॥=)

## हिन्दी-मेघदूत ।

कविकुल-कुमुद-कलाधर कालिदास कृत मे दूत का समवृत्त और समश्लोकी हिन्दी अनुवा मूल श्लोक सहित—मूल्य नाम मात्र के लिए।=) हिन्दी-साहित्य में यह ग्रन्थ अपने ढंग का अकेला है। कविता-प्रेमियों—विशेष कर के ब्रजबोली की हिन्दी-कविता के रसिकों—को यह हिन्दी-मेघदूत अवश्य देखना चाहिए। बड़ी सुन्दर हर पुस्तक है। पुस्तक के आरम्भ में अनुवादक श्री लक्ष्मीधर वाजपेयी का हाफ़टोन चित्र दिया गया है। इसके अतिरिक्त विरही यक्ष और विरहिणी यक्षपत्नी के दो सुन्दर रंगीन चित्र भी दिये गये हैं। पुस्तक की शोभा देखते ही बनती "अवसि देखिए देखन जोगू"।

## वार्तापत्रबोधिनी

यह पुस्तक लड़कियों के बड़े काम की है। इसमें पत्र लिखने के नियम आदि बताने के अतिरिक्त नमूने के लिए पत्र भी ऐसे ऐसे छपाये गये हैं कि जिनसे 'एक पंथ दो काज' की कहावत चरितार्थ हो जाती है। इस पुस्तक से लड़कियों को पत्र लिखने का तो ज्ञान होगा ही, किन्तु अनेक उपयोगी शिक्षायें भी प्राप्त हो जायँगी। मूल्य ।=)

---

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस

## पारस्योपन्यास ।

न्होंने "आरब्योपन्यास" अर्थात् अरेबियन
र की कहानियां पढ़ी हैं उनके सामने यह
ने की आवश्यकता नहीं कि पारस्योपन्यास
हानियां कैसी मनोरञ्जक और अद्भुत हैं।
शीयं सहस्र-रजनी-चरित्र के पढ़ने वालों
क बार पारस्य उपन्यास भी अवश्य पढ़ना
। मूल्य १)

## भाषाव्याकरण ।

ीयुत पण्डित चन्द्रमौलि शुक्ल, एम ए. असि-
ंटमास्टर, गवर्नमेंट हाईस्कूल, प्रयाग-रचित।

भाषा की यह व्याकरण-पुस्तक व्याकरण
याले अध्यापकों के बड़े काम की चीज़ है।
ी भी इस पुस्तक को पढ़ कर हिन्दी-व्याकरण
ाध प्राप्त कर सकते हैं। मूल्य ≡)

## कालिदास की निरङ्कुशता ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पण्डित महावीरप्रसाद
ी जी ने "सरस्वती" पत्रिका के बारहवें भाग में
लिदास की निरङ्कुशता" नामक जो लेख-माला
ेख की थी वह, अनेक हिन्दी-प्रेमियों के आग्रह
पर, पुस्तकाकार प्रकाशित कर दी गई। आशा
भी हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को मँगा कर अवश्य
। मूल्य केवल ।) चार आने।

## आरोग्य-विधान ।

ोग रहने के सुगम उपायों का वर्णन। मूल्य ≡)॥

## दुर्गा सप्तशती ।

हमने यह दुर्गा की पोथी बड़ी सुन्दर छापी
काग़ज़ भी इसका मोटा और अक्षर भी बड़े
हैं। चश्मा लगानेवाले बिना चश्मा लगाये ही
ा पाठ कर सकते हैं। बड़ी शुद्ध छपी है।
कीलक, कवच, अङ्गन्यास, करन्यास, रहस्य और
विनियोग आदि सभी बातें इसमें मौजूद हैं। इसमें
यह भी लिखा गया है कि किस काम के लिए
किस मंत्र का संपुट लगाना चाहिए। ऐसी अत्यु-
त्तम पोथी का दाम केवल ॥≡)

तार्किकमोहभङ्ग (कुतर्कियों का मुँहतोड़ जवाब) १)
रसरहस्य (प्रेमियों के देखने योग्य) ... ॥)
प्रीतमविहार (श्रीरामचन्द्र जी के प्रेमभजन) ।-)
दृष्टान्तसमुच्चय (उपदेश भरे दृष्टान्तों का संग्रह) ≡)
महिम्नस्तोत्र ... ... ... ... -)
एकमुखी हनुमत्कवच ... ... ... -)

## नूतनचरित्र ।

( बाबू रत्नचन्द्र बी० ए० वकील हाईकोर्ट प्रयाग लिखित )

यों तो उपन्यास-प्रेमियों ने अनेक उपन्यास देखे होंगे पर हमारा अनुमान है कि शायद उन्होंने ऐसा उत्तम उपन्यास आज तक कहीं नहीं देखा होगा। इसलिए हम बड़ा ज़ोर देकर कहते हैं कि इस 'नूतनचरित्र' को अवश्य पढ़िए। मूल्य १)

## षोडशी ।

बँगला के प्रसिद्ध आख्यायिकालेखक श्रीयुत प्रभातकुमार बाबू की प्रभावशालिनी लेखनी से लिखी गई १६ आख्यायिकाओं का यह संग्रह बँगला में बड़ा प्रसिद्ध है। उसी षोडशी का यह हिन्दी अनुवाद तैयार है। ये कहानियां हिन्दी में एकदम नई हैं और पढ़ने योग्य हैं। मूल्य ३२० पृष्ठ की पोथी का १)

## विचित्रवधूरहस्य ।

बँगला के प्रसिद्ध लेखक श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर महाशय लिखित "बउठाकुरानीर हाट" नामक बँगला उपन्यास का यह हिन्दी अनुवाद 'विचित्रवधूरहस्य' के नाम से तैयार हो गया। उपन्यास कितना रोचक है, इसकी घटनायें कितनी अद्भुत हैं, उपन्यास का भाव कैसा उत्तम है, पात्रों पर इसकी कथाओं का कैसा प्रभाव पड़ता है इत्यादि बातें उपन्यास के पाठकों को स्वयं विदित हो जायेंगी। मूल्य ॥)

मिलने का पता— मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ✻ ✻ ✻ इंडियन प्रेस, प्रयाग, की सर्वोत्तम पुस्तकें ✻ ✻

## यवनराजवंशावली ।

( लेखक—मुंशी देवीप्रसादजी मुंसिफ़ )

छोटी होने पर भी पुस्तक बड़े काम की है। इस पुस्तक से आप को यह बात विदित हो जायगी कि भारतवर्ष में मुसलमानों का पदार्पण कब से हुआ। किस किस बादशाह ने कितने दिन तक कहाँ कहाँ राज्य किया और यह भी कि कौन बादशाह किस सन् संवत् में हुआ। यही नहीं बल्कि बादशाहों की मुख्य मुख्य जीवन-घटनाओं का भी इसमें उल्लेख किया गया है। हिन्दीवालों और विशेष कर इतिहास-प्रेमियों के लिए यह पुस्तक परम उपयोगी है। मूल्य ⊏)

## विक्रमाङ्कदेवचरितचर्चा ।

यह पुस्तक सरस्वती-सम्पादक पण्डित महावीर-प्रसाद द्विवेदी जी की लिखी हुई है। बिल्हण कवि-रचित 'विक्रमाङ्कदेवचरित' काव्य की यह आलोचना है। इसमें विक्रमाङ्कदेव का जीवनचरित भी है और बिल्हण-कवि की कविता के नमूने भी जहाँ तहाँ दिये हुए हैं। इनके सिवा इसमें बिल्हण-कवि का भी संक्षिप्त जीवनचरित लिखा गया है। पुस्तक पढ़ने योग्य है। मूल्य ⊏)

## आघातों की प्रारम्भिक चिकित्सा ।

[ डाक्टर धन्वन्तरि लाल पुस्तकावली सं० १ ]

जब किसी आदमी के चोट लग जाती है और शरीर की कोई हड्डी टूट जाती है तब उसको बड़ा कष्ट होता है। जहाँ डाक्टर नहीं हो वहाँ और भी दिक़्क़त होती है। इन्हीं सब बातों को सोचकर, इन्हीं सब दिक़्क़तों के दूर करने के लिए, हमने यह पुस्तक प्रकाशित की है। इसमें सब प्रकार की चोटों की प्रारम्भिक चिकित्सा, घावों की चिकित्सा और विषचिकित्सा का बड़े विस्तार से वर्णन किया गया है। इस पुस्तक में आघातों के अनुसार शरीर के भिन्न भिन्न अंगों की ६५ तसवीरें भी छाप कर लगा दी हैं। पुस्तक बड़े काम की है। मूल्य ॥)

मिलने का पता—मैनेजर—इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

## नाट्य-शाला ।

( लेखक—पण्डित बदरीनाथजी भट्ट

मूल्य ।) चार आने

नाटक से सम्बन्ध रखनेवाली—अर्थात् पात्र-कल्पना, भाषा, रचनाचातुर्य, वृत्तियाँ, द्वार, लक्षण, जवनिका, परदे, वेशभूषा, हस्त का कालविभाग आदि—अनेक बातों का वर्णन पुस्तक में किया गया है। हिन्दी-प्रेमियों से विशेषकर उन सज्जनों को, जो नाटकम स्थापित करके अच्छे अच्छे नाटकों द्वारा सुरुचि का बीजारोपण कर रहे हैं, यह नाट्य अवश्य ही देखना चाहिए।

## लड़कों का खेल ।

( पहली किताब )

ऐसी किताब हिन्दी में आज तक कहीं न नहीं। इसमें कोई ८४ चित्र हैं। हिन्दी पढ़ने के बालकों के बड़े काम की किताब है। खेल खिलाड़ी बालक क्यों न हो और कितना भी जी चुराता हो तो भी वह इस किताब से लिखना बहुत जल्द सीख सकता है। मूल्य

## खेलतमाशा ।

यह भी हिन्दी पढ़नेवाले बालकों के लिए मज़े की किताब है। इसमें सुन्दर सुन्दर चीरों के साथ साथ गद्य और पद्य भाषा लिखी है। इसे बालक बड़े चाव से पढ़कर याद कर हैं। पढ़ने का पढ़ना और खेल का खेल है। मू

## हिन्दी का खिलौना ।

इस पुस्तक को लेकर बालक खुशी के मारे उ लगते हैं और पढ़ने का तो इतना शौक़ कि घर के आदमी मना करते हैं पर वे कि से रखते ही नहीं। लीजिए, अपने प्यारे बच एक खिलौना तो ज़रूर ही ले दीजिए। मूल्य

# रस्वती में विज्ञापन

तो आपको विदित ही है कि अब सरस्वती
ार भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रान्तों में उत्त-
धिकाधिक बढ़ता जाता है। भारतवर्ष का
ई प्रतिष्ठित नगर नहीं जहाँ "सरस्वती" के
ग्राहक न हों। यही नहीं, किन्तु लन्दन,
ा, इथोफ़ा, फ़ीजी द्वीप आदि दूरदेशों में भी
ी के उत्साही ग्राहक बढ़ते जाते हैं। यह
अनुभव ठीक है कि एक एक ग्राहक के पास
रती ले लेकर पढ़ने वालों की संख्या आठ-
स-दस, तक पहुँच जाती है। ऐसी दशा में
ी का प्रत्येक विज्ञापन प्रतिमास तीस चालीस
सभ्य मनुष्यों के दृष्टिगोचर हो जाता है।
सरस्वती में विज्ञापन छपाने वालों को विशेष
ता है। सन् १९१३ ईसवी से तो सरस्वती
ार और भी अधिक बढ़ रहा है।
ता है कि आप भी "सरस्वती" में विज्ञापन
र उससे लाभ उठाने का शीघ्र प्रयत्न करेंगे
त जल्द विज्ञापन भेज कर एक बार अवश्य
करके देख लेंगे।

छपाने के नियम ये हैं:—

| | | | |
|---|---|---|---|
| ॥ २ कालम की छपाई | ... | .. | १२॥) प्रतिमास |
| ॥ १ " | " | ... ... | ७) " |
| ¼ " | " | ... ... | ४) " |
| ⅛ " | " | ... ... | २॥) " |

—विज्ञापन बिना देखे छापने की स्वीकृति नहीं
।

—एक कालम या इससे अधिक विज्ञापन छपानेवाले को
बेना मूल्य भेजी जाती है। चौथों को नहीं।

—विज्ञापन की छपाई पेशगी देनी होगी।

—साल भर के विज्ञापन की छपाई एक साथ पेशगी
से ॥) फ़ी सदी कम किया जायगा।

—सरस्वती का वार्षिक मूल्य ... ... ४)
ने की एक प्रति का मूल्य ... ... ।=)
हार इस पते से कीजिए,

मैनेजर, सरस्वती,
इंडियन प्रेस, प्रयाग।



# बाल-कालिदास

या

कालिदास की कहावतें

यह बालसखा पुस्तकमाला की २४ वीं पु
है। इस पुस्तक में महाकवि कालिदास के
ग्रन्थों से उनकी चुनी हुई उत्तम कहावतों का
किया गया है। ऊपर श्लोक दे कर नीचे उनका
और भावार्थ हिन्दी में किया गया है। कालिदास
कहावतें बड़ी अनमोल रत्न हैं। उन में सामाजि
नैतिक और प्राकृतिक 'सत्यों' का बड़ी ख़ूब
साथ वर्णन किया गया है। कालिदास की उक्ति
मनुष्य मात्र के काम की हैं। इस पुस्तक की उक्ति
बच्चों को याद करा देने से वे चतुर बनेंगे और स
समय पर उन्हें ये काम देती रहेंगी। मूल्य केवल

सचित्र

# देवनागर-वर्णमाला

आठ रङ्गों में छपी हुई—मूल्य केवल ।=

ऐसी उत्तम किताब हिन्दी में आज तक
नहीं छपी। इसमें प्रायः प्रत्येक अक्षर पर एक
मनोहर चित्र है। देवनागरी सीखने के लिए बच्चों
बड़े काम की किताब है। बच्चा कैसा भी खिला
हो पर इस किताब को पाते ही वह खेल भूल
किताब के सौन्दर्य को देखने में लग जायगा
साथ ही अक्षर भी सीखेगा। खेल का खेल और प
का पढ़ना है। एक बार मँगा कर इसे ज़रूर देखि

# इन्साफ़-संग्रह—पहला भाग।

पुस्तक ऐतिहासिक है। कल्पित नहीं। श्रीयु
मुंशी देवीप्रसाद जी, मुंसिफ़ जोधपुर इसके लेख
हैं। इसमें प्राचीन राजाओं, बादशाहों और सरदा
के द्वारा किये गये अद्भुत न्यायों का संग्रह कि
गया है। इसमें ८१ इन्साफ़ों का संग्रह है। एक ए
इन्साफ़ में बड़ी बड़ी चतुराई और बुद्धिमत्ता भ
हुई है। पढ़ने लायक़ चीज़ है। मूल्य ।=)

मिलने का पता—

मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीज़ के तीन नये ग्रन्थ।

## सफलता और उसकी साधना के उपाय।

इसे नागरीप्रचारिणी पत्रिका के सम्पादक और हिन्दी-शब्दसागर के सहकारी सम्पादक बाबू रामचन्द्र वर्म्मा ने लिखा है। यह कई अँगरेज़ी ग्रन्थों को पढ़ कर और उनका आशय समझ कर अपने ढंग पर हि देश के लिए उपयोगी बना कर लिखा गया है। भाषा बहुत ही शुद्ध और सरल है। सफलता की इ रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को इसे पढ़ना चाहिए। स्कूलों में, लाइब्रेरियों में, रखने और इनाम में देने के लि बहुत उपयोगी है। मूल्य कपड़े की जिल्द का बारह आना सादी का दश आना।

## स्वावलम्बन ( सेल्फ हेल्प )।

यह सेमुएल स्माईल्स के प्रसिद्ध अँगरेज़ी ग्रंथ का स्वतंत्र अनुवाद है। मूल ग्रंथ में जितने उदाहरण थे सब विदेशी पुरुषों के हैं। परन्तु इसमें उनके स्थान में सैकड़ों देशी पुरुषों के उदाहरण चुन चुन दिये गये हैं। इसके लिए बहुत परिश्रम किया गया है। पचासों पुस्तकें पढ़ना पड़ी हैं। विदेशी उदाहरणों में से वे सब ज्यों के त्यों रहने दिये हैं, जो बहुत ही महत्त्व के हैं। और जिनके कारण इस पुस्तक का महत्त्व है। स्माइल्स-के इस ग्रंथ की प्रशंसा करने की ज़रूरत नहीं है। अँगरेज़ी में इसकी लाखों कापी प्रतिवर्ष खपती हैं। अपने पैरों पर आप खड़े होने की, अपने ही भरोसे अपनी उन्नति करने की, आत्म शक्ति का विश्वास दिलाने की शिक्षा इसमें कूट कूट कर भरी है। और जो इस देश के लिए बहुत आवश्यक है। मूल्य कपड़े की जिल्द का पौने दो रु० सादी का डेढ़ रुपया।

## अन्नपूर्णा का मन्दिर।

यह बंग भाषा की सुप्रसिद्ध लेखिका श्रीमती निरुपमा देवी के उपन्यास का अनुवाद है। यह एक पवित्र पुण्यमय करुणरस-पूर्ण ग्रंथ है। इसे स्त्री, पुरुष, बालक, युवा, सभी पढ़कर आनन्द प्राप्त कर सकते हैं। अभी इसको प्रकाशित हुए एक ही वर्ष हुआ है कि इसके अँगरेज़ी और मराठी अनुवाद हो चुके हैं। हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि मैथिलीशरणजी ने इसे बहुत ही पसंद किया है और उन्हीं की प्रेरणा से यह हिन्दी में उपस्थित किया गया है। मूल्य पक्की जिल्द का १) सादी का बारह आना।

## सिक्खों का परिवर्त्तन।

पंजाब के प्रसिद्ध लेखक लाला गोकुलचन्द एम० ए० पी० एच० डी० बैरिस्टर एट्लां, के अंग्रेज़ी ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद है। इसमें इस बात का ऐतिहासिक-पद्धति से विचार किया गया है कि सिक्खों का सादा धार्म्मिक धर्म राजनैतिक कारणों से धर्म कैसे बन गया। बहुत ही महत्त्व का ग्रन्थ है। इसके प्रचार के लिए थोड़ी सी प्रतियाँ मँगाई हैं। मूल्य डेढ़ रुपया।

नोट—सीरीज़ के रजिस्टर्ड ग्राहकों को सब ग्रंथ पिछी ( कमीशन ) में दिये जाते हैं। रजिस्टर्ड ग्राहक बनने के लिए प्रत्येक पुस्तक पर लिखे कार्ड भेजना है। सीरीज़ में पहले ११ ग्रंथ निकल चुके हैं। सूचीपत्र मँगाइये।

मिलने का पता

मैनेजर, हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय

हीराबाग़-पो० गिरगाँव, बम्बई

## नई पुस्तकें !

# रामचरितमानस

क्षेपकरहित असली रामायण

### दुबारा छप कर तैयार होगया ।

आज तक भारतवर्ष में जितनी रामायण छपीं और आज कल छप कर बिक रही हैं वे सब नक़ली हैं, क्योंकि उनमें कितने ही दोहे-चौपाइयां लोगों ने अपने से लिखकर मिला दिये हैं। असली रामायण तो केवल इंडियन प्रेस की छपी रामचरित-मानस है। क्योंकि इसका पाठ गुसाईंजी के हाथ की लिखी पोथी से मिला कर शोधा गया है। और भी कितनी ही पुरानी लिखित पुस्तकों से पाठ मिला भला कर इसमें से कूड़ा-करकट अलग निकाल दिया गया है। यही विशुद्ध रामायण हमने बड़े सुन्दर और सुगम अक्षरों में, बढ़िया काग़ज़ पर, छापी है। जिल्द भी बँधी हुई है। मूल्य केवल २) दो रुपये।

# भारतवर्ष के धुरन्धर कवि

( लेखक, लाला भगवानदीन एम० ए० )

इस पुस्तक में आदि-कवि वाल्मीकि मुनि से लेकर अधुना कवि तक संस्कृत के २६ धुरंधर कवियों का और हिन्दी कवि से आरम्भ करके राजा लक्ष्मणसिंह तक हिन्दी के २८ कवियों का संक्षिप्त वर्णन है। किस कवि का कितना समय हुआ यह भी इसमें बताया गया है। अब तक कवियों के सम्बन्ध में जितनी पुस्तकें लिखी गई हैं उन से इसमें कई तरह की विशेषता है। पुस्तक छोटी होने पर भी बहुत काम की है। मूल्य केवल ।) चार आने।

## तारा

यह नया उपन्यास है। बंगला में "तारासुन्दरी" नाम एक उपन्यास है। लेखक ने उसी के अनुसार इसे लिखा है। यह उपन्यास मनोरञ्जक, शिक्षा और सामाजिक है। यह बंगला टाईप में छपा है। २५० पेज की पोथी का मूल्य केवल ।=)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन

# सूचना

मेरे ग्रन्थ 'गीताय ईश्वरवाद' को हिन्दी में अनुवाद करने का एकमात्र हक़ किसरौल, मुरादाबाद के ज्वालादत्त शर्मा को है। किसी और महाशय को दी हुई अनुवाद की आज्ञा को मैं इस सूचना द्वारा मंसूख करता हूँ। यदि कोई और मनुष्य उक्त ग्रन्थ का अनुवाद करेगा तो वह हर्जे का देनदार होगा।

१३९ कार्नवालिस स्ट्रीट
कलकत्ता
५ अगस्त १५ ई०

हीरेन्द्रनाथ दत्त ।

## नई पुस्तकें !!

सचित्र

# शरीर और शरीर-रक्षा

पण्डित चन्द्रमौलि शुक्ल, एम० ए० की लिखी हुई किताबें कैसी अच्छी और लाभप्रद होती हैं यह बताने की ज़रूरत नहीं। जिन्होंने उनकी लिखी हुई किताबें पढ़ी हैं, वे खुद जानते होंगे। यह पुस्तक भी उन्हीं पण्डित जी की कलम की करामात है। इस में शरीर के बाहरी व भीतरी अङ्गों की बनावट तथा उनके काम व रक्षा के उपाय लिखे गये हैं। इसमें ऐसी मोटी मोटी बातों का वर्णन किया गया है और ऐसी सरल भाषा में लिखा गया है, कि हर एक मनुष्य यह कर समझ सके और अपनी रक्षा कर सके। मनुष्य के अङ्गप्रत्यङ्ग सम्बन्धी २१ चित्र भी इस में छापे गये हैं। यह पुस्तक छपवाई गई है। मूल्य केवल ॥) आने है।

## तरङ्गतरंग

[illegible] लिखित [illegible] है। इसके [illegible] की लिखी हुई [illegible] है। इसमें—[illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन

# हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीज़ के तीन नये ग्रन्थ

## सफलता और उसकी साधना के उपाय।

इसे नागरीप्रचारिणी पत्रिका के सम्पादक और हिन्दी-शब्दसागर के सहकारी सम्पादक बाबू राम वर्म्मा ने लिखा है। यह कई अँगरेज़ी ग्रन्थों को पढ़ कर और उनका आशय समझ कर अपने ढंग पर देश के लिए उपयोगी बना कर लिखा गया है। भाषा बहुत ही शुद्ध और सरल है। सफलता की रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को इसे पढ़ना चाहिए। स्कूलों में, लाइब्रेरियों में, रखने और इनाम में देने बहुत उपयोगी है। मूल्य कपड़े की जिल्द का बारह आना सादी का दस आना।

## स्वावलम्बन ( सेल्फ हेल्प )।

यह सेमुएल स्माइल्स के प्रसिद्ध अँगरेज़ी ग्रंथ का स्वतंत्र अनुवाद है। मूल ग्रंथ में जितने उदाह वे सब विदेशी पुरुषों के हैं। परन्तु इसमें उनके स्थान में सैकड़ों देशी पुरुषों के उदाहरण चुन दिये गये हैं। इसके लिए बहुत परिश्रम किया गया है। पचासों पुस्तकें पढ़ना पड़ी हैं। विदेशी उ में से वे सब ज्यों के त्यों रहने दिये हैं, जो बहुत ही महत्त्व के हैं। और जिनके कारण इस पुस्त महत्त्व है। स्माइल्स के इस ग्रंथ की प्रशंसा करने की ज़रूरत नहीं है। अँगरेज़ी में इसकी लाखों प्रतिवर्ष खपती हैं। अपने पैरों पर आप खड़े होने की, अपने ही भरोसे अपनी उन्नति करने की, शक्ति का विश्वास दिलाने की शिक्षा इसमें कूट कूट कर भरी है। और जो इस देश के लिए बहुत आ है। मूल्य कपड़े की जिल्द का पौने दो रु० सादी का डेढ़ रुपया।

## अन्नपूर्णा का मन्दिर।

यह बंग भाषा की सुप्रसिद्ध लेखिका श्रीमती निरुपमा देवी के उपन्यास का अनुवाद है। व पवित्र पुण्यमय करुणरस-पूर्ण ग्रंथ है। इसे स्त्री, पुरुष, बालक, युवा, सभी पढ़कर आनन्द प्राप्त कर स अभी इसको प्रकाशित हुए एक ही वर्ष हुआ है कि इसके अँगरेज़ी और मराठी अनुवाद हो चुके हैं के सुप्रसिद्ध कवि मैथिलीशरणजी ने इसे बहुत ही पसंद किया है और उन्हीं की प्रेरणा से यह छपाया गया है। मूल्य पक्की जिल्द का १) सादी का बारह आना।

## सिक्खों का परिवर्त्तन।

पंजाब के प्रसिद्ध लेखक डा० गोकुलचन्द एम० ए० पी० एच० डी० बैरिस्टर एट-ला, के ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद है। इसमें इस बात का ऐतिहासिक-पद्धति से विचार किया गया है कि एक सादा पारमार्थिक धर्म राजनैतिक योद्धाओं का धर्म कैसे बन गया। बहुत ही महत्त्व का ग्रन्थ है प्रचार के लिए थोड़ी सी प्रतियाँ मँगाई हैं। मूल्य डेढ़ रुपया।

नोट—सीरीज़ के स्थायी ग्राहकों को सब ग्रंथ पौनी क़ीमत में दिये जाते हैं। स्थायी प्रवेश फ़ी सिर्फ़ आठ आना है। सीरीज़ में पहले ११ ग्रंथ निकल चुके हैं।

मैनेजर, हि रत्न।

"गेरमल-शारदा-सदन" बीकानेर SARASVATI—Reg. No. A248.

ग १६, खण्ड २ ] अक्टोबर, १९१५ [ संख्या ४, पूर्ण संख्या १९०

[ मूल्य ४) ] [ प्रति संख्या ...)

इंडियन प्रेस, प्रयाग, में हरदेव द्वारा प्रकाशित।

## महाराजा की राय।

महाराजा दलगञ्जनसिंह देव बहादुर फ़ुलडटरी चीफ़ आफ़ पटना स्टेट बोलांगिर, ज़िला सम्बलपुर से लिखते हैं—

प्रियवर! आपकी भेजी हुई खाँसी की दवा के लिये कृतज्ञ हूँ। इस दवा से हमारी खाँसी बिलकुल जाती रही। मैंने इसके कुल सात ही ख़ुराक पीये, अधिक पीने की दरकार न रही। खाँसी मुझे कई महीने से सताती रहती थी, इसलिये पुनः आपको धन्यवाद देता हूँ।

## कफ वो खाँसी की दवा

मोल—बड़ी शीशी १) छोटी शीशी ॥)
डा० म० ।=) वी ।=) आने।

दवा सब जगह बिकती है।

## महाराजकुमार की राय।

महाराजकुमार एकदेश्वरसिंह, बोलांगिर से लिखते हैं—

यह दूसरा मौक़ा है; आपकी दाद की जादू सा असर दिखाया, जिससे मैंने हर तकलीफ़ से नजात पाई। मैं आपका दिल से शुक्र हूँ।

## दाद की मलहम।

मोल—।) चार आने डिबिया १ से ६, म० ।-, १२ डिबिया तक ।-)

नक़ली दवा से सावधान!

पाँच वर्ष से बराबर स्त्री-जाति की सेवा करनेवाली हिन्दी-भाषा में स्त्री शिक्षा की सबसे अच्छी, सस्ती और अनेक चित्रों से विभूषित मासिक पत्रिका

वार्षिक मूल्य १॥) रुपया **गृहलक्ष्मी** प्रति मास १० पृ० रहते हैं

विशेष प्रशंसा न कर हम यही अनुरोध करते हैं कि मैनेजर, गृहलक्ष्मी, प्रयाग, से नमूना मँगा देखिए

गृहलक्ष्मी के ग्राहकों को नीचे लिखी स्त्री-शिक्षा-सम्बन्धी पुस्तकें इसी पत्रिका के मिलती हैं—

| पुस्तक का नाम | | ग्राहकों से मूल्य | | गृहलक्ष्मी के ग्राहकों से |
|---|---|---|---|---|
| दर्पण | ... | ॥) | ... | ।=) |
| छोटी बहू | ... | ॥) | ... | ।=) |
| पतिव्रता-पुष्प-विलास | | १) | ... | ।=) |
| रामी | | ।=) | .. | ।)॥ |
| टेम्पर | | ।=) | ... | ।)॥ |
| आदर्श | | ।) | ... | ।=) |
| | | १ | ... | ।)) |
| | | | ... | ।=) |

सहायाट।

नई पुस्तक।

## संक्षिप्त वाल्मीकीय-रामायण

[ संपादक श्री डाक्टर सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ]

आदि-कवि वाल्मीकिमुनिप्रणीत वाल्मीकीय रामायण संस्कृत में बहुत बड़ी पुस्तक है। मूल्य भी अधिक है। सर्वसाधारण उससे लाभ नहीं उठा सकते। इसी से संपादक महाशय ने रामायण का संक्षिप्त किया है। ऐसा करने में कथा का सिलसिला टूटने नहीं पाया है। कहीं कहीं पुस्तिका की गई है। पुस्तक यों तो संस्कृत जाने सर्वसाधारण के काम की है ही, पर स्कूल के विद्यार्थियों और संस्कृत की परीक्षा देने वाले विद्यार्थियों के बड़े काम की है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल १) रुपया।

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, लि०

SARASVATI—Reg. No. A248.

म १६, खण्ड २ ] अक्टोबर, १९१५ [ संख्या ४, पूर्ण संख्या १९०

[ ...ख्या ४, पूर्ण संख्या ...

[ ...ख्या ४, पूर्ण संख्या ...
इंडियन प्रेस, प्रयाग, में ... द्वारा ... ]

छोटे बच्चों के लिए
डोंगरे का
बालामृत.
दीशीशी का दाम १॥ आना
डा० ग० ४ आना

रोमान् राय दीवा-
न्दसाहिब एम.ए.
ा एल. बी. जज
ौर लिखते हैं:—
मृतधारा को मैंने
। निम्नलिखित रोगों
रता है, और हितकर
। है, कर्णशूल, शिर-
, वृश्चिकदंश, भिह-
, कण्ठपाक, नेत्रशूल,
। का लालना, हाथ
आघात। मैं यहां यह
ना उचित समझता
कि सब जगह अमृत-
रा को ही बर्तता हूँ,
र जो औषधियां आप

के विज्ञापन में पृथक् २ रोगों के लिए अमृतधारा के साथ लेनी अंकित हैं, उनको मैंने कभी नहीं बर्ता।

आजकल पाकट-केसों की बाबत बहुत कुछ विज्ञापन निकल रहे हैं, मेरी सम्मति में बहुत सी औषधियों और पाकट-केसों का खरीदना व्यर्थ है, अमृतधारा इस प्रकार की औषध है, जो बहुत से रोगों में बहुत शीघ्र लाभ देती है, जिस के सामने कोई दवा दम नहीं मार सकती, मेरी सम्मति में यह औषधि सचमुच अमृत है"।

## रोग मनुष्य को हर समय ग्रसने को तैय्यार रहते हैं

## "अमृतधारा" हर समय पास रक्खो

जो एक ही औषध जिसकी मात्रा २—३ बून्द है, लगभग सब रोगों का, जो बहुधा घरों में हों, बच्चों, जवानों, स्त्रियों और पुरुषों को होते हैं, रामबाण इलाज है, झाड़े लगाने दोनों के काम आती है, कोई अचानक कष्ट हो, अचानक ही उसको दूर करती है। महीनों के रोग दिनों में, दिनों के घण्टों में, घण्टों के मिनटों में, दूर होते हैं। एक बार आजमावें, झूठी बड़ाई से बचें, असल को खरीदें॥

प्रायः रोगों के नाम जिनमें "अमृतधारा" हितकर है

हर प्रकार की सिर पीड़ा, दमास, कास, पार्श्वशूल, पीनस, जुकाम, हैजा, अजीरक, अरुचि, हिचकी, गुदगुदाहट, परिणामशूल, संग्रहणी, अतिसार, वमन, अपस्मार (मृगी), दन्तपीड़ा आदि दांतों के सर्व रोग, कान के सर्व रोग, मुख के सर्व रोग, फोड़ा, फुन्सी, दाद, खंजली, दोष, दाद, सिर, मरुड़ी, आरमल, सर्प, पागला कुत्ता, चूहा, सहस्रपाद आदि का डंक, सब प्रकार की बीमारियों, सिरदर्दी, ज्वर, जोड़ों का दर्द, आन्तरिक व बाहरी पीड़ायें, चोट, बवासीर, दुर्बलता, मस्तिष्क, प्लेग, प्रमेह, प्रदर, वीर्य रोग, पाण्डुरोग, क्षय, राजयक्ष्मा, प्लीहा, आंतशेला, गलगण्ड, कण्ठमाला, सन्निपात, बालरोग, हृद्रोग, मूत्रकृच्छ, मानसिकउद्वेग, वातरोग, अङ्गघात, स्नायविक, दर्दकमर, जलना, गिल्ल, उन्माद, अधगले पड़ना, आवाज़ बैठना, मूत्राघात, यकृत्, लिवर, हर्निया, प्लीहा, अन्त्र आदि के रोग इत्यादि २ सर्व रोगों को हितकर है॥ मूल्य बड़ी शीशी ॥) और छोटी शीशी ।) है॥

विज्ञापक—

मैनेजर—"अमृतधारा" औषधालय, "अमृतधारा" भवन, "अमृतधारा" सड़क, "अमृतधारा" डाकखाना, लाहौर।

छोटे बच्चों के लिए

# डोंगरे का बालामृत.

शीशी का दाम १२ आना

डा० म० ४ आना

## प्रशंसा-पत्र

मि० माणेकलाल भाईशंकर, सलवार के महाराजा साहेब के गार्डियन लिखते हैं कि:—

"हमारा लड़का इतना दुबला हो गया था कि उसके जीने की भी आशा हमने छोड़ दी थी लेकिन, डोंगरे का बालामृत पीने से यह लड़का अच्छा हो गया है।"

मि० करीम महमद, एम० ए० एल्ल हेड मास्टर जूनागढ़ हाई स्कूल लिखते

"हमारे घर में बच्चों के वास्ते डो बालामृत हमेशा दिया जाता है, उस का 'बालामृत'—'बालों का अमृत'—व बराबर सार्थ किया है।"

पता—के० टी० डोंगरे कं०, गिरगाँव

नई पुस्तक !

# वन-कुसुम

इस छोटी सी पुस्तक में छः कहा-
छापी गई हैं। कहानियाँ बड़ी रोचक
ई कोई कहानी तो ऐसी है कि पढ़ते
हँसी आये बिना नहीं रहती। मूल्य
चार आने है।

# सदुपदेश-संग्रह

ी देवीप्रसाद साहब, मुंसिफ़, जोधपुर ने
ा में एक पुस्तक नसीहतनामा बनाया था।
द्य पञ्जाब और बराड़ के विद्या-विभाग में
है। यह कई बार छापा गया। उसी नसीहत-
। यह हिन्दी अनुवाद है। सब देशों के अपि-
र महात्माओं ने अपने रचित ग्रन्थों में जो
लेखे हैं उन्हीं में से छाँट छाँट कर इस छोटी
ब की रचना की गई है। शेखसादी का
कि 'अगर ग़ैर पर भी कोई उपदेशात्मक
ा हो तो मनुष्य को चाहिए कि उसे अपने
र ले'। यह बिलकुल ठीक है। बिना उपदेश के
ा आत्मा पवित्र और बलिष्ठ नहीं हो सकता।
पुस्तक में चार अध्याय हैं। उनमें २४१ उप-
उपदेश सब तरह के मनुष्यों के लिए हैं।
भी सज्जन, धर्मात्मा, परोपकारी और चतुर
ते हैं। मूल्य केवल ।) चार आने।

# ाम काका की कुटिया

रे यहाँ से हिन्दी-भाषा में बहुत शीघ्र प्रका-
ो। यह बहुत रोचक उपन्यास है। अँगरेज़ी
ुस्तक बहुत ही विख्यात है। भारतीय
में भी इसके अनुवादों के कई संस्करण
है।

नई पुस्तक !!

# श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण—पूर्वार्द्ध

(हिन्दी-भाषानुवाद)

सरस्वती के समान ६०० पृष्ठ, सजिल्द-मूल्य केवल २॥)

आदि-कवि वाल्मीकि मुनि-प्रणीत रामाय
संस्कृत में है। उसके हिन्दी-भाषानुवाद भी अने
हुए हैं। पर यह अनुवाद अपने ढँग का बिलकु
नया है। इसमें अक्षरशः अनुवाद है। भाषा सरल
और सरस है। हिन्दू मात्र रामायण को धर्मपुस्तक
मानते हैं। असल में यह पुस्तक ऐसी ही है। इसके
पढ़ने पढ़ाने वालों को सब तरह का ज्ञान प्राप्त होता
है और आत्मा बलिष्ठ बनता है। इस पूर्वार्द्ध में
आदि-काण्ड से लेकर सुन्दर-काण्ड तक—पाँच
काण्डों का अनुवाद है। बाक़ी काण्ड उत्तरार्द्ध में
रहेंगे। उत्तरार्द्ध छप रहा है; वह जल्दी छप कर
प्रकाशित होगा। जल्दी मँगाइए।

# गीताञ्जलि

डाक्टर श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की
बनाई हुई "गीताञ्जलि" नामक अँगरेज़ी
पुस्तक का संसार में कितना आदर
है; यह बतलाने की ज़रूरत नहीं।
उस पुस्तक की अनेक कवितायें बँगला
गीताञ्जलि में तथा और भी कई बँगला
की पुस्तकों में छपी हुई हैं। उन्हीं कवि-
ताओं को इकट्ठा करके हमने हिन्दी-अक्षरों
में 'गीताञ्जलि' छपाया है। जो महाशय
हिन्दी जानते हुए बँगला भाषा जानते हैं
उनके लिए यह बड़े काम की पुस्तक है।
मूल्य १) एक रुपया।

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## उन्नति के बाधक कौन हैं

आलस्य, अविश्वास, लोभ और लापरवाही

—:o:—

इनको त्यागिये और सर्व प्रकार के सुख-प्राप्ति करने के लिये केवल ॥=) दश आना मनि-आर्डर द्वारा हमारे पास अग्रिम भेज हम से "अष्टसिद्धि" नामक छपे हुए काग़ज़ के परमो-पयोगी आठ पर्चे शीघ्र मँगाकर मनोरथ पूर्ण कर लीजिये।

नित्यपाठ—हृदय, मुख, कमरा सुशोभित करने का अपूर्व साधन। मूल्य ।) चार आना।

पता—हितैषी कार्यालय—आगरा।

THE GENUINE YAK

# YAKUTON

A powerful APHRODISIAC and a valuable in NEURASTHENIA. No Pa necessary.

Price—Rs. 10 for a tin of 50 pills

The anager, "Y. KUTONE" D Kathiawa Camp RAJ

नीचे लिखी हुई

## कृषि-संबन्धी पुस्तकें

हमारे यहाँ मिलती हैं

१ "खेती बारी" पं० आनन्दीप्रसाद लिखित मूल्य २)

२ "वैज्ञानिक खेती"—श्रीमती देवी लिखित मूल्य ॥=)

३ "खाद और उनका व्यवहार" गयादत्त त्रिपाठी, बी० ए० लिखित—मूल्य ।)

पता—राधारमण त्रिपाठी कृषिभवन, इलाह

## बनारस के प्रसिद्ध डाक्टर गणेशप्रसाद भार्गव का बनाया हुआ

## नमक सुलेमानी

दाम फी शीशी १) दाम बड़ी बोतल २) दाम छोटी शीशी ।) दाम बड़ा बोतल २॥)

यह नमक सुलेमानी पाचन शक्ति को बढ़ाता है और उसके सब विकारों को नाश कर दे इसके सेवन से भूख बढ़ती है और भोजन अच्छी तरह से पचता है, नया और साफ़ ख़ून अधिक पैदा होता है, जिससे बल बढ़ता है।

यह नमक सुलेमानी, हैज़ा, बदहज़मी, पेट का अफ़ारा, खट्टी या धुएँधी डकारों का आना, दर्द, पेचिश वादी का दर्द, बवासीर, कब्ज़, भूख की कमी में तुरंत अपना गुण दिखाता है, खाँसी गठिया, और अधिक पेशाब आने के लिये भी बड़ा गुणदायक है। इसके लगातार सेवन से के आमाशय के सब विकार दूर हो जाते हैं:—

बिच्छू या भिड़ के काटे हुए या जहाँ कहीं सूजन हो या फोड़ा उठना हो तो इस नमक सुलेम मल देने से तकलीफ़ तुरंत जाती रहती है।

## सुरती का तेल—दाम फ़ी शीशी ॥)

यह तेल हर क़िस्म के दर्द, गठिया, वायु और सरदी के विकार और सूजन, फ़ालिज, लक़वा, मोच, चोट की तकलीफ़ को फ़ौरन रफ़ा करता है।

प्रशंसापत्र और इनामों की सूची, पत्र, का पता—ठाकुरसिंह भार्गव,

सरस्वती

"श्री गेरमल-शारदा-सदन" बीकानेर (राजपूताना)

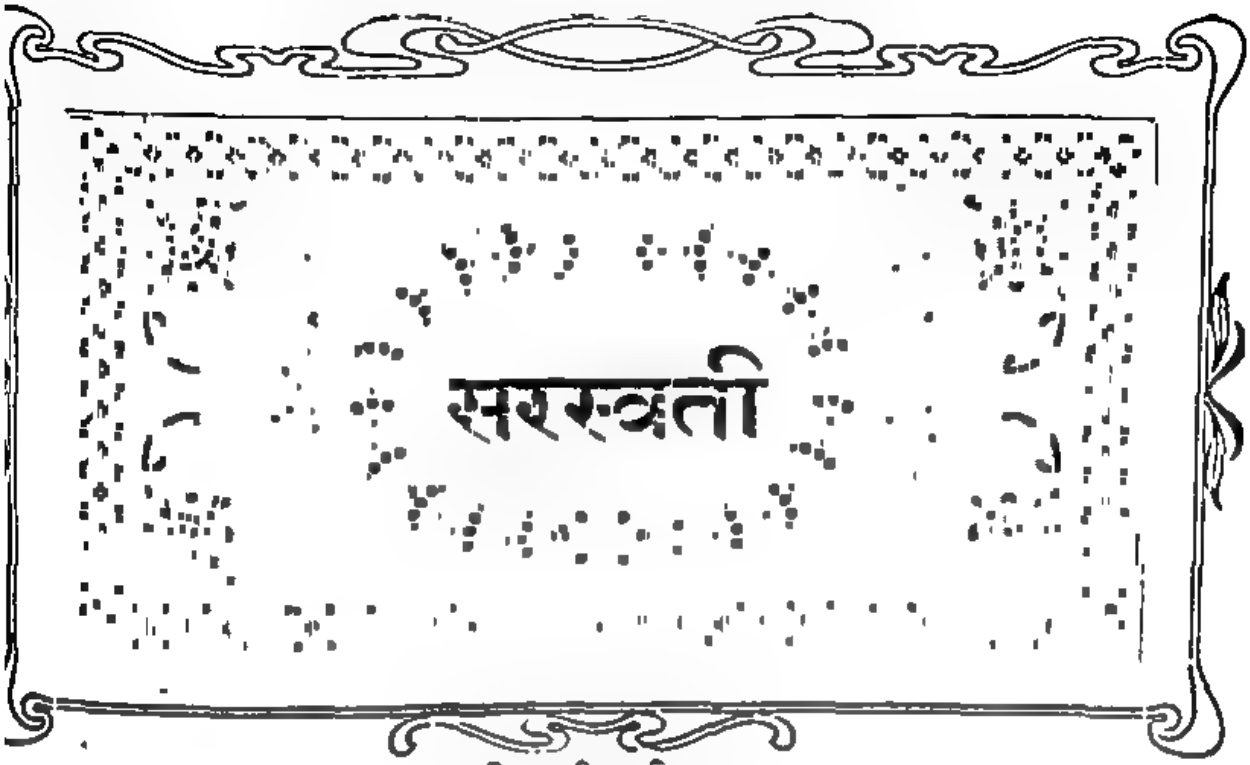


सचित्र मासिक पत्रिका।

६, खण्ड २ ] आक्टोबर १९१५—आश्विन १९७२ [ संख्या ४, पूर्ण संख्या १९०

## मेरा भारत

मेरे भारत ! मेरे देश !
बलिहारी तेरा वर वेश !
आदर मुकुट विभूषित भाल
भीतर अटाजूट का जाल
ऊपर नभ नीचे पाताल
बीच बीच में नू प्रणयाल !
बन्धन में भी मुक्तिनिवेश
मेरे भारत ! मेरे देश ! ॥ १ ॥
कभी गुरज अब वीणावाद
कभी खड्ग से साम निनाद
कभी राग-रञ्जित प्रासाद
कभी छुरी में ही आह्लाद
नहीं कहीं भी भय का लेश
मेरे भारत ! मेरे देश ! ॥ २ ॥
है तेरी कृति में विज्ञप्ति
तेरी प्रकृति में अभिनव शक्ति
अटल नहीं सकती है भक्ति
आत्मा में है अजब कान्ति
अन्तर में है अज अभिलेख
मेरे भारत ! मेरे देश ! ॥ ३ ॥
मातृभूमि का सुख में वास
अन्तर्मन का भी विशुद्ध विकास
जिस प्रकृति का पूर्ण विकास
फिर भी है तू कब उदास
हे विशेष ! हे अनवशेष !
मेरे भारत ! मेरे देश ! ॥ ४ ॥

मातृ-भू तव चरणों में अर्पण
करके तन मन धन सर्वस्व-समर्पण
तेरे सुख में मेरे सुख हैं
तेरे भारत ! मेरे देश ! ॥ ५ ॥

हुआ विविध-कीर्त्ति-विस्तार
पर पूतों का भी परिहार
किया इंगित, पूर्त्ति-प्रकार
किया कहें हम तेरा द्वार ?
तुझ पर कहाँ से करे प्रवेश
मेरे भारत ! मेरे देश ! ॥ ६ ॥

तन से सब भोगों का भोग
मन से महा आत्मिक योग
पहले सत्-ग्रह का संयोग
स्वयं त्याग का फिर उद्योग
अद्भुत है तेरा उपदेश
मेरे भारत ! मेरे देश ! ॥ ७ ॥

धन कण तू चिरसाधन-धाम
हुआ आप ही आत्माराम
लिया नहीं तब तक विश्राम
अब तक पूरा किया न काम
दिये तुझी ने सब उपदेश
मेरे भारत ! मेरे देश ! ॥ ८ ॥

———

मैथिलीशरण गुप्त।

## पौराणिक राज-वंशों का समय-निरूपण।

[ लेखक—श्रीयुत हरि रामचन्द्र दिवेकर, एम० ए० ]

(४)

### कान्यकुब्ज-वंश।

सूर्य-वंश-वर्णन में यह कहा गया है कि पुरूरवा का एक पुत्र अमावसु नाम का, पूर्व की ओर कान्यकुब्ज देश में जाकर, बसा। यही अमावसु इस वंश का मूल पुरुष था। इसी वंश में विश्वामित्र का जन्म होने के कारण विश्वामित्र के वंशजों के गाधि वंश का या कुशिक वंश के नाम से भी प्रसिद्ध है। राजा अमावसु अपने मार्ग में सबसे पहले सूर्यवंशी शशाद का, सनद उसके पश्चात् पुराणों में सीम, सुहोत्र और जह्नु—ये चार नाम पाये आगे के विवेचन से यह स्पष्ट हो जा नाम केवल प्रसिद्ध राजाओं के हैं, क्रम

सीम, काम्पिल्य और सुहोत्र के प जह्नु सिंहासन पर बैठा। यह बड़ा उसने अनेक यज्ञ किये। उसका विवाह मान्धाता की कन्या कावेरी के साथ हु यह स्पष्ट जान पड़ता है कि यह राजा समकालीन था। राजा शशाद और पीछे सूर्य वंश में बीस राजे होगये इतने समय में कौशिक-वंश में तीन ही होना सम्भाव्य नहीं। इससे सिद्ध है कि ये तीन नाम क्रम-प्राप्त नहीं, किन्तु के प्रसिद्ध राजाओं के नाम हैं।

यज्ञ करने की अपेक्षा एक और राजा जह्नु का नाम प्रसिद्ध है। एक बा के किनारे यज्ञ कर रहा था कि गङ्गाजी गईं और सारी यज्ञ-भूमि जलमग्न होग राजा जह्नु को बड़ा क्रोध आया। वह "अस्य गङ्गेऽवलेपस्य सद्यः फलम पतत्तु विफलं सर्वं पीतमम्भः करो

यह बात उसने कर दिखाई। पुरा रखने वाले लोग इसका अर्थ सामान्य भते हैं कि राजा जह्नु ने गङ्गा को पी यह अर्थ ठीक नहीं जान पड़ता। यदि करोम्यहम्" की जगह "जलमग्न विभाम्य तो दूसरी बात थी। पर यह बात नह एव यहाँ पर दूसरी ही कल्पना की है। गङ्गा की बाढ़ से हुई हानि देख कर अवश्य ही क्रुद्ध हुआ होगा और उससे का कुछ उपाय उसने सोचा होगा। सम्भ

रने की कल्पना मन में करके उसने कहा —"हे गङ्गे ! इस गर्व का फल तुझे शीघ्र ही ा। देश में मेरा सब निष्फल जल, नहरों के पीत (पिया हुआ) कर देता हूँ"। बाद से ा यही उपाय है। एक बार गङ्गा पी डालने द से बचना असम्भव ही है। पर नहरें निका से यह काम सहज में ही हो सकता है। इस यही अनुमान होता है कि राजा जह्नु ने गङ्गाजी हरें निकाली होंगी और इस तरह गङ्गा को ं (पी डुई) देश कर उसे ऋषि लोगों ने जाह्नवी दिया होगा।

राजा जह्नु की कावेरी से सुमन्तु नाम का पुत्र । सुमन्तु का अजक, अजक का बलकाश्य और ाश्य का पुत्र राजा कुश था। कुश बड़ा परा- राजा हुआ। उसने अपना राज्य कन्नौज से गङ्गा के दक्षिण मगध तक बढ़ाया। उसके पुत्र थे—कुशाम्ब, कुशनाभ, अमूर्तरय और । इन चारों में से तीन पुत्रों ने तीन नये नगर ये। कुशाम्ब ने कौशाम्बी, अमूर्तरय ने धर्मपुर वसु ने गिरिव्रज। कुशनाभ महोदय देश का ही हुआ। महोदय कान्यकुब्ज का प्राचीन नाम था। कुब्ज नाम पड़ने का कारण रामायण में यह ा है कि कुशनाभ के सौ कन्यायें थीं। एक बार के कारण ये सबकी सब कुबड़ायें हो गईं। उनके हो जाने के क से महोदय का नाम कुब्ज पड़

नेक
बड़े
गुरु
स्त्री
मय में

उनके पुत्र हुए। किन्तु पुराणों में लिखा है कि गर्भाधानार्थ जो चरु ऋचीक ने इन दोनों के लिए तैयार किये थे उनका अदला बदल हो जाने से गाधि की स्त्री को ब्रह्मतेजोयुक्त और ऋचीक की पत्नी को क्षात्रतेजोयुक्त पुत्र हुआ। गाधि के पुत्र का नाम विश्वामित्र और ऋचीक के पुत्र का नाम जमदग्नि हुआ। इसी विश्वामित्र ने एक समय वसिष्ठ-कुलोत्पन्न ऋषि की गाय चुराने का यत्न किया। पर उसमें सफल न होकर उसने ब्राह्मण होने की चेष्टा की और अन्त में वह ब्राह्मण हो भी गया। पुराणों में कई राजाओं के ब्राह्मण होने का वर्णन है। इससे यह अनुमान किया जाता है कि उस समय जाति-निर्बन्ध इतने कड़े न थे और जाति जन्म पर नहीं, किन्तु कर्म पर ही निर्भर होती थी। इस प्रकार कान्यकुब्ज-राजाओं का वंश, अन्त में, ब्राह्मण-कुल में परिवर्तित हो गया। इन विश्वामित्र-कुलोत्पन्न ब्राह्मणों ने भी अनेक क्षत्रियों को शस्त्रविद्या सिखाई। पर, फिर इन्होंने राज्य न किया। इनके वंशज मगध-देश में कौशिकी नदी के किनारे आश्रम बना कर रहते थे।

## ( ५ )

## हैहय-वंश।

पाठकों को याद होगा कि यादवों का वंश यदु-पुत्र क्रोष्टु से चला और यदु का दूसरा पुत्र सहस्रजित् मालवे में जाकर बसा। सहस्रजित् का पुत्र शतजित् और शतजित् का पुत्र हैहय था। हैहय बड़ा पराक्रमी राजा हुआ। यह कुल उसीके नाम से विख्यात हुआ। हैहय के पश्चात् धर्म, धर्मश्रुत तथा महिष्मान् नामक राजे हुए। राजा ने माहिष्मती नगरी को, नर्मदा पहाड़ी पर बसाया। महिष्मान् का हुआ। भद्रश्रेण्य भी बड़ा साहसी था। उसने उत्तर की ओर बढ़ का देश जीता और स्वयं काशी । पर थोड़े ही

दिनों में दिवोदास ने फिर से अपना राज्य छीन लिया। इस युद्ध में भद्रश्रेण्य मारा गया॥

भद्रश्रेण्य की मृत्यु के पश्चात् राजा दुर्दम सिंहासन पर बैठा। दुर्दम का पुत्र कनक, कनक का कृतवीर्य और कृतवीर्य का पुत्र अर्जुन हुआ। यही पिछला राजा कार्तवीर्यार्जुन नाम से विख्यात हुआ। कार्तवीर्यार्जुन ने अत्रिपुत्र दत्त की कृपा से खूब बल-सम्पादन किया और आस पास के देश जीत कर चक्रवर्ती का पद प्राप्त किया। अपने पराक्रम से यही कार्तवीर्यार्जुन पीछे से सहस्रबाहु कहाया। इसने अनेक यज्ञ किये, जिनमें यज्ञवेदी तथा यज्ञभूमि भी सोने की बनी थी। इसने नाग लोगों को जीता और लङ्काधिपति रावण को बाँधकर माहिष्मती में कैद किया। पीछे से पुलस्त्य ऋषि की प्रार्थना पर इसने उसे छोड़ दिया। इस समय राक्षस लोग उत्तर की ओर बहुत बढ़ आये थे। काशी के राजा दिवोदास को इन राक्षसों ने मार कर कई साल तक काशी उजाड़ कर दी थी। अर्जुन के राज्य के अन्त में एक बार बड़ी भारी आग लगी। उसने बहुत प्रान्त और वन जला दिये। उसीसे वसिष्ठ का आश्रम भी जल गया। इस कारण ब्राह्मण लोग अर्जुन के राज्य से असन्तुष्ट हो गये। क्योंकि ऐसे बलवान् राजा का आग से देश को बचाना कर्तव्य था। पर, अर्जुन ने इस कर्तव्य का पालन जान बूझ कर न किया था। उसने तो उलटा अग्नि का प्रकोप बढ़ा दिया था। इसी बीच में अर्जुन के कुछ लोगों ने भार्गव जमदग्नि की गाय चुराई। इससे भार्गव ब्राह्मण परशुराम, जो जमदग्नि का पुत्र था, बहुत सन्तप्त हुआ। उसने कार्तवीर्यार्जुन को द्वन्द्व युद्ध के लिए ललकार कर उसमें उसे मार डाला।

पुराणों में भार्गव परशुराम के द्वारा इक्कीस बार पृथ्वी निःक्षत्रिय की जाने का वर्णन है। पर सब बातों का विचार करने पर यह बात ठीक नहीं जान पड़ती। एक तो क्षत्रियों ने परशुराम का इतना द्वेष होने का कोई कारण नहीं देख पड़ता। दूसरे जिस अर्जुन का वध परशुराम उसी के पुत्र जयध्वज का पराक्रमी राजा हो जयध्वज के पुत्र तालजंघ आदि का भी प्र इस बात का परिपोषक नहीं। अनुमान यह है कि अर्जुन की मृत्यु के पश्चात् तालज लोगों और भार्गव ब्राह्मणों में परस्पर मे होगा और दोनों ने बहुत से क्षत्रिय-कुलों किया होगा। पुराणकारों ने इसका सा परशुराम को ही दे दिया जान पड़ता हैहय-तालजंघों ने शक-यवन आदि लोगों स्तान पर चढ़ाई करने के लिए बुलाया। हुआ कि उत्तर से शकादि ने, दक्षिण से भार्गव ब्राह्मणों ने और आग्नेय दिशा से आर्यावर्त पर चढ़ाई की। जीतते जीतते ये अयोध्या पहुँचे। वहाँ इन्होंने बाहु नामक राजा को भी मार डाला। इस अशान्ति-पूर्ण ही पृथ्वी को इक्कीस बार निःक्षत्रिय होना पु ने समझा होगा। अन्त में भार्गव ब्राह्म हिन्दुस्तान छोड़ कर दक्षिण (कोंकण) में

कार्तवीर्यार्जुन के पश्चात् उसका पुत्र सिंहासन पर बैठा। उस समय विदेह नामक ने जयध्वज के नौकरों को बहुत तङ्ग कि कारण जयध्वज ने विदेह राक्षस को मार कूर्म-पुराण में लिखा है कि राजा लोगों में पूजन की प्रथा इसी जयध्वज ने आरम्भ की ध्वज के पुत्र तालजंघ नाम से विख्यात थे। अनेक राजाओं को पादाक्रान्त किया। इन त के पाँच गण थे—भोज, आनर्त, तुण्डिकेर, और वीतिहोत्र। इनमें से वीतिहोत्र राजा दूसरे लोग यादवगणों में गिने जाने लगे। के पश्चात् उसका पुत्र मधु हुआ और उ पश्चात् दुर्जय। दुर्जय ही कुल का राजा हुआ। एक स्त्री के कारण यह राज्य छोड़ कर चला गया। इसके कोई पुत्र न था कारण इसका राज्य दूसरे लोगों ने बाँट लि इसी समय ज्यामघ नामक यादव राजा

हो उठा। इस कारण हैहय कुल का राज्य गया। तब ये लोग अपने भाइयों के साथ ण में ही सम्मिलित हो गये।

---

## भावी भारत-व्यापी भाषा।

बादल की एक घटा आने पर दूसरी घटा आती है, आकाश से एक बादल के अलग हो जाने पर दूसरा भी अलग होने लगता है। सिर पर जब एक बला आजाती है तब दूसरी, तीसरी के भी आने में कुछ देर नहीं लगती, एक बला के टलने पर दूसरी ए टलने लगती है। एक रुपया हाथ में आया कि ी खनखनाने पहुँचा, एक गया कि दूसरा भी जब एक प्रकार की उन्नति होती है तब दूसरे प्रकार होती है।

त की उन्नति का अब लगा लग गया है। लोग रह प्रकार की उन्नति की चर्चा—चर्चा ही ाति के लिए भिन्न भिन्न प्रकार के उद्योग ऐसे समय में यदि भारतवासी एक देश- ी चर्चा और उद्योग करें तो / ार

श्वर वह दिन शीघ्र ही पूर्ण भारत में न सही, ी भाषा की धूम ई जो टकटकी ?

, उस दिन त हितैषी चिन्ता से में गये ही ग ' वाली

होने पर भी किसी एक भाषा को उस पद पर आरूढ़ करने के लिए विशेष प्रयत्न नहीं किया जारहा है। परन्तु, यह चिन्ता व्यर्थ है। किसी एक भाषा के देश व्यापी होने से दूसरी भाषा के साहित्य को धक्का नहीं पहुँचता। यूरप में फ्रेंच भाषा के महाद्वीप-व्यापी भाषा होने से किस भाषा को चोट पहुँची है? देश-व्यापी भाषा के ग्रन्थ बड़ी सरलता से अपनी अपनी मातृ भाषा में अनुवादित किये जा सकते हैं। कहने का तात्पर्य यह कि एक देश-व्यापी भाषा के होने से देश की अन्य भाषाओं के साहित्य को हानि नहीं, किन्तु कुछ न कुछ लाभ ही, पहुँचता है। कुछ लोग समझते हैं कि देश-व्यापी भाषा का प्रचार होने पर उन्हें अपनी भाषा के साहित्य से सदा के लिए हाथ धोना पड़ेगा। यह उनकी भूल है। देश-व्यापी भाषा कोई प्रधान स्थान नहीं चाहती। प्रधान स्थान तो मातृ-भाषा ही का है।

देश-व्यापी भाषा के लिए भारत-हितैषियों के विशेष प्रयत्न न करने पर भी हर एक भारतीय भाषा, भारत-व्यापी बनने के लिए, संग्राम में प्रवृत्त है। जिस प्रकार [illegible] एक पेड़ अन्य पेड़ों से बढ़ जाने के लिए जी जान तोड़ कर बढ़ता है, प्रकार हर एक जाति औरों से आगे हो जाने के लिए [illegible] करती है, जिस प्रकार हर एक प्राणिवर्ग अन्य न जाने के लिए लड़ता है, उसी भाषा देश-व्यापी बनने के लिए ा बाज़ी ले जाय वही देश-व्यापी

को चाहे सब भाषायें जी जान लड़ा कर सेवक अपनी अपनी भाषा की सेवा में ा वही भाषा ा आ ी आदि के होगी। और अवश्य लिए सो , आप दौड़ धूप ा वह ी। यदि कोई और भाषा ्या थोड़ा भी इनसे ा सो ा पहुँच जायगी। यों परन्तु देश पड़ती है, और ी अब इतना है कि किस से कर अन्त पहुँच जाय।

उसी को ग, जो योग्य और अच्छी हो ? पर, हाँ, फिर भी तो यह जानना है कि कौन योग्य और अच्छी है।

देश-व्यापी भाषा होने योग्य वही भाषा कही जा सकती है—

(१) जिसका प्रचार अधिक हो;

(२) जिसमें सब तरह के विचार सरलता से प्रकाशित किये जा सकें;

(३) जो नये सीखने वालों के लिए सरल अतएव कम श्रमसाध्य हो;

(४) जिसका साहित्य पुष्ट हो।

जो भाषा इन गुणों से वञ्चित होगी वह कदापि देश-व्यापी न हो सकेगी।

प्रथम, प्रचार के विचार से देखा जाय तो इस समय सबसे अधिक प्रचार हिन्दी ही का है। हिन्दी ने अपनी यात्रा का अधिकांश तै कर लिया है। १० करोड़ भारतवासी उसे बोलने लगे हैं। बाक़ी रहे लोगों में भी बहुत से उसे कुछ ही समय में बोलने लगेंगे। यहाँ पर हम उन लोगों की समझ के लिए क्या कहें जो हिन्दी को कोई भाषा ही नहीं समझते और फ़ारसी-अरबी से खचाखच भरी हुई उर्दू को घर घर की बोली बतलाते हैं।

दूसरे गुण के विचार से हिन्दी भारत की अन्य प्रमुख भाषाओं से बढ़ कर नहीं, तो कम भी नहीं। उच्च से उच्च कोटि के दार्शनिक विचार सरलता से हिन्दी में प्रकट किये जा सकते हैं। नये से नये वैज्ञानिक आविष्कार-सम्बन्धी शब्द गढ़े जा सकते हैं। और, आज कल, भारत की कौन सी भाषा ऐसी है जो इस गुण के विचार से हिन्दी से बढ़ जा सकती हो ? बङ्गाली, मराठी आदि एक दो भाषाओं को छोड़ कर और भाषायें तो उसकी बराबरी करने का दम भी नहीं भर सकतीं ? बढ़ने की कौन कहे।

तीसरे गुण के विचार से तो हिन्दी निर्विवाद ही भारत की अन्य सभी भाषाओं से चढ़ी-बढ़ी है। भारतीय भाषाओं से अनभिज्ञ चार अँगरेज़ों को भारत की चार भिन्न भिन्न भाषायें सिखलाइए, तो सबसे पहले हिन्दी सीखने वाला ही सफल होगा। बम्बई में पैर रखते ही अँगरेज़ सबसे पहले हिन्दी ही सीखता है। गुजराती और बँगला सीखने वाला तो कई सप्ताहों तक दो-चार वाक्यों के सिवा उन भाषाओं में कुछ बोल ही न सकेगा। लगभग यही हाल सीखने वाले बङ्गाली का भी होगा। पर, हिन्दी सीखने गुजराती सेठों और बङ्गाली बाबुओं का हाल देखिए। दो-चार आये चार दिन हुए नहीं कि बाबू साहब हिन्दी बोलने वाले दुकानदारों से साफ़ सुथरी हिन्दी बोल रहे हैं। सेठ जी ने रेल से उतर कर रहने के लिए मकान ठीक ही नहीं किया, पर हज़ारों का लेनदेन हिन्दी ही में बातचीत करके तै कर इस समय भारत में ऐसी और कौन सी भाषा है नौसिखियों को इतनी जल्दी आ जाय ? इसका कारण है कि भारतीय अन्य भाषाओं के साथ हिन्दी की समानता रखती है। गुजराती और बङ्गाली में जितनी मता है उससे कहीं अधिक हिन्दी और गुजराती में हिन्दी और बँगला में है।

हिन्दी की अपेक्षा बंगला में उपन्यास और अधिक होने दो; मराठी में राजनैतिक चर्चा अधिक दो; उर्दू में रोज़ाना अख़बार ज़ियादह निकलते हों भी प्राचीन साहित्य के लिहाज़ से हिन्दी ही का सिर से ऊँचा है। हिन्दी-पद्यसाहित्य के सम्मुख और भारतीय भाषाओं के पद्यसाहित्य सिर झुकाये हुए हैं पढ़े लिखे लोगों की उदासीनता के कारण हिन्दी विशेष उन्नति नहीं कर रहा है। नहीं तो इन लोगों ही प्रयत्न से, थोड़े ही समय में, वह उन्नति हो जो अन्य भाषाओं को बहुत समय तक नसीब नहीं इतनी उदासीनता के रहते भी हिन्दी का साहित्य हुआ भी नहीं है। आज कल धड़ाके के साथ हो रही है।

इन्हीं गुणों से विभूषित होने के कारण हिन्दी वही लोग देश-व्यापी नहीं मानते जो हिन्दी किन्तु अधिकांश महाराष्ट्र, गुजराती और बङ्गाली उसे वैसा ही मानते हैं। अतएव हिन्दी को देश-व्यापी बनाने के लिए हमें जी जान से प्रयत्न करना चाहिए। आगा और जब तक अपना काम पूरा न करलो, नाम न लो। "उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत" यह हिन्दी के लिए कम गौरव की बात है कि [illegible] की साहित्य-परिषदों में भी हिन्दी को

के लिए मन्तव्य "पास" हो रहे हैं हैं ? अतएव क्या दी-भाषा-भाषियों के लिए कम लज्जा की बात है जो न्तव्य में वे स्वयं विशेष उत्साह न दिखावें ? हिन्दी ी ही अपना प्रचार बढ़ा रही है ।

ज भाषा होकर भी अँगरेज़ी जितने लोगों में अपना रहों कर पाती उतना हिन्दी एक विचित्र ढँग से कर । जितने लड़कों को हमारे स्कूल और कालेज अँगरेज़ी ेखा पाते, उन से कहीं अधिक आदमियों को हमारे । हिन्दी सिखा देते हैं । एक ओर अँगरेज़ी शिक्षा के विशाल विश्वविद्यालय और विद्यालय हैं, दूसरी ओर के प्रचार के लिए काशी और प्रयाग जैसे तीर्थ तथा जैसे मेले हैं । अन्तर इतना ही है कि स्कूल और कालेज ा पढ़ाते हैं; तीर्थ-स्थान, बाज़ार और मेले बोल-चाल ना सिखाते हैं । हज़ारों आदमी हर साल तीर्थों की कर के और मेलों में धक्के मुक्के खा कर हिन्दी बोलना ते हैं । एक ओर कलकत्ते का एक बङ्गाली ा के बाज़ार में सौदा ख़रीदते समय हिन्दी बोलना ता है, दूसरी ओर कलकत्ते में एक हिन्दी-भाषाभाषी नौकर अपने मालिक को और कुछ न सही तो हिन्दी म देना ही सिखाता है । एक ओर, एक महाराष्ट्र ज-दिल्ली की सैर करते हुए इक्के वाले से हिन्दी सीख है, तो दूसरी ओर दक्षिण में एक हिन्दी-भाषा-भाषी यात्री ई को धीरे धीरे हिन्दी सिखा रहा है । एक ओर, काशी ह हिन्दू कालेज में पढ़ने वाले अन्य-भाषा-भाषी लड़के ो सीख जाते हैं, दूसरी ओर अन्य प्रान्तों के कालेजों ढ़ने वाले हिन्दी-भाषा-भाषी लड़के वहाँ वालों को ो सिखाते हैं । सुदूर प्रान्तों में फेरी करने वाले हिन्दी-भाषी स्टीमर वाले को थोड़ा न समझिए । वह भी दो चार ब्द हिन्दी सिखाता है । इस तरह का प्रचार स्वाभाविक किसी की साध नहीं कि इस प्रचार की बाढ़ को रोक । यह वह प्रचार है जो एक बार शुरू हो कर बन्द हो सकता । हिन्दी के प्रचार का विशेष कारण यह है हिन्दी बोलने वाले भारतवर्ष भर में फैले हुए हैं और ा जा रहे हैं । इन लोगों में अधिकांश व्यापारी हैं । सब आय तो हिन्दी-बोल-चाल के प्रधान प्रचारक मारवाड़ी अन्य व्यापारी ही हैं । इनके फैलने के साथही साथ अन्य-भाषा-भाषी नगरों में हिन्दी-बोल-चाल का प्रचार होता है और वहाँ के बाज़ारही हिन्दी-बोल-चाल सिखाने के स्कूल बन जाते हैं

इस प्रकार हम तुच्छ स्टीमर वाले से लेकर लखपती सेठ तक को हिन्दी-प्रचार करते देख रहे हैं । यह बड़े हर्ष की बात है । परन्तु, यह प्रचार केवल बोल-चाल की भाषा का है । हमें इतने ही से सन्तुष्ट न होना चाहिए । हिन्दी पढ़ने-लिखने और हिन्दी-साहित्य का भी प्रचार करना चाहिए । जब तक यह बात न होगी तब तक हिन्दी सारे देश की भाषा न हो सकेगी । अतएव हिन्दी-प्रेमियो, हिन्दी-प्रचार के लिए तत्पर हो जाइए । हिन्दी-साहित्य की वृद्धि कीजिए । अच्छी अच्छी पुस्तकें लिख कर हिन्दी के भाण्डार को भर दीजिए । फिर आपका अभीष्ट अवश्य ही सफल होगा ।

गिरिजानन्दन ।

---

## आकाश-गङ्गा ।

स्वच्छ आकाश की ओर रात के समय देखने से एक सिरे से दूसरे सिरे तक सफ़ेद बादल के समान अनुमान चार हाथ चौड़ा एक प्रकाशमय पथ दिखाई देता है । इस पथ को आकाश-गङ्गा कहते हैं । कोई कोई उसे दूध-गङ्गा के नाम से भी पुकारते हैं । अँगरेज़ी भाषा में उसे मिल्की वे (Milky Way) कहते हैं । यह प्रकाश-मय पथ अथवा आकाश-गङ्गा असंख्य तारों से बनी हुई एक तेजस्क मालिका है ।

बड़े से बड़े दूर-दर्शक यन्त्र से इस आकाश-गङ्गा का जितना भाग एक बार में दिखाई देता है उसका एक चित्र एक विज्ञान ने तैयार किया है । उस मूल चित्र की हज़ारों नक़लें की गई हैं । पर, उनमें असली चित्र की त्रुटियाँ नहीं आ सकीं । असली चित्र को सूक्ष्म-दर्शक यन्त्र द्वारा देख कर अनेक बड़े बड़े वेधशाला के अधिपति चकित हो गये हैं । आकाश-गङ्गा का यह चित्र उन्नीसवीं

हैं। यह इस शताब्दी का एक अद्भुत आविष्कार है। सम्पूर्ण नभोमण्डल के चित्र २५ भिन्न भिन्न प्लेटों पर उतारे गये हैं। उनके आकाश के जो अद्भुत चमत्कार दिखाई उनका यथार्थ वर्णन मनुष्य की वाणी और ी से परे है। खगोल-शास्त्र के जानने वालों न तथा बुद्धि इन दृश्यों को देख कर आश्चर्य ासागर में गोते खाने लगती है।

आकाश-गङ्गा हम से कितनी दूर है, इसका ान भी हम में से बहुतों ने न किया होगा। ी दूरी की कुछ कल्पना हमें हो जाय, इसलिए इसका कुछ हाल सुनाते हैं। मान लीजिए कि मिनट में एक मील चलने वाली रेलगाड़ी पर सवार हुए और ड्राइवर ने उसके इञ्जिन को आकाश-गङ्गा की ओर बढ़ाया। एक घण्टे में साठ दौड़ने वाली हमारी गाड़ी दिन रात चलती ही। हम पृथ्वी, चन्द्रमा और सूर्य को भी करके आगे निकल गये। इस प्रकार एक वर्ष तक रात दिन हमारी गाड़ी भागती रही। कहाँ हमारे प्रवास का आधा भाग पूरा हो । घबराइए न! विचार कीजिए कि एक घण्टे मील चलने वाली गाड़ी ने एक अब्ज वर्षों तनी यात्रा की! हिसाब लगा कर वर्षों की ा जानने पर कदाचित् आपकी कल्पना को भी त होना पड़े। अपने प्रवास के आधे भाग पर थोड़ी देर के लिए ठहर जायँ और फिर ाश-गङ्गा की ओर देखें तो वहाँ से भी वह ही दिखाई देगी जैसी पृथ्वी से देख पड़ती इस स्थान से यदि हम उसका चित्र लें तो चित्रों में और पृथ्वी के ऊपर से लिये हुए चित्रों में बहुत थोड़ा अन्तर देख पड़ेगा। पर, यदि से अधिक तेज़ दूरदर्शक यन्त्र से हम देखें कदाचित् कुछ अधिक अन्तर मालूम हो। आकाश-गङ्गा के सूर्य्य एक दूसरे से दूर हैं, यह तो यहाँ से भी दूरबीन द्वारा मालूम हो सकता है। इस स्थान से यदि हम पीछे की ओर फिर कर देखें तो हमें मालूम होगा कि वहाँ से हमारा सूर्य भी हमें दृष्टिगोचर नहीं होता। तेज़ दूरदर्शक यन्त्र से देखने पर शायद वह हमें एक सामान्य तारे के सदृश देख पड़े। पर, आकाश में ऐसी असंख्य तारकायें होने से यह जानना कठिन होगा कि इनमें से हमारा सूर्य कौन सा है।

पाठक, हम मार्ग में बहुत ठहर गये। यात्रा अभी हमें बहुत दूर की करनी है। इसलिए हमारी गाड़ी फिर चलाई गई। एक अब्ज वर्ष तक इसी प्रकार और चलते रहने पर आकाश-गङ्गा की बाहरी सीमा के किसी भाग में हम पहुँच गये।

इस पिछले प्रवास में यदि हज़ार हज़ार वर्ष के अन्तर से हम आकाश-गङ्गा के चित्र लेते रहें तो पिछले चित्रों से नये चित्रों में थोड़ा थोड़ा भेद मालूम होता रहेगा। पहले के चित्रों में तारकायें बहुत पास पास दिखाई देती थीं। अब इन नये चित्रों में उनकी दूरी बढ़ती जाती है। आँखों से भी अब हमें हज़ारों सूर्य आकाश में दिखाई देने लगे हैं। जैसे जैसे हम आगे बढ़ते हैं, ये सूर्य हमें अधिक प्रकाशमान् और स्पष्ट दिखाई देते हैं और इनका परस्पर अन्तर भी अधिक जान पड़ता है। इस प्रकार दो अब्ज वर्ष तक प्रवास करने पर आकाश-गङ्गा के प्रदेश के किनारे हम अवश्य पहुँच गये। पर, आकाश-गङ्गा के भीतर आ पहुँचे, यह बात हम अब भी नहीं कह सकते। क्योंकि, ऊपर की ओर दृष्टि डालने से आकाश-पथ जैसा हमको पृथ्वी से दिखाई देता था वैसा ही असंख्य तारों से युक्त अब भी दिखाई देता है। डर है, प्रवास में हमारी गाड़ी कहीं किसी सूर्य के पास न चली जाय, जो हम और हमारी गाड़ी भस्मीभूत हो जायँ। ऐसा होने से हमारी राख अनन्त प्रदेशों में से कहाँ चली जायगी, इसका पता भी हमें न लगेगा।

पृथ्वी से आकाश-गङ्गा की दूरी का अनुमान पाठकों को हम ऊपर के उदाहरण से भी ठीक ठीक नहीं करा सके। वास्तव में वह हमारे लगाये हुए मीलों के हिसाब से भी अधिक दूर है। कई खगोल-

शताब्दी का एक आश्चर्यकारक आविष्कार है। इस चित्र में कोई चालीस हज़ार छोटे छोटे बिन्दु दिखाई देते हैं। यह प्रत्येक बिन्दु एक एक सूर्य का चित्र है। चन्द्रमा और पृथ्वी के पास के पाँच ग्रहों के सिवा आकाश में रात को जितने तारे देख पड़ते हैं वे सब शुक्ल-उष्ण अथवा रक्त-उष्ण प्रकाश वाले सूर्य हैं। हम इन सभी को "तारा" शब्द से ही पुकारते हैं। पर, यह नाम इनका ठीक नहीं। क्योंकि शास्त्रीय अर्थ इनका यह नहीं हो सकता। हमारा सूर्य इस पृथ्वी से १३,१०,००० गुना बड़ा है। यदि उसकी तुलना आकाश-मण्डल के तारों से की जाय तो मालूम हो कि सूर्य भी एक तारा ही है। आकाश गङ्गा नभोमण्डल में हमें एक सिरे से दूसरे सिरे तक फैली हुई दिखाई देती है। उसमें छोटी बड़ी असंख्य तारकायें हैं। उनमें से प्रत्येक हमारे सूर्य से बहुत बड़ी है। पृथ्वी से बहुत दूर होने के कारण हमको ये तारकायें ऐसी दिखाई देती हैं मानों एक दूसरी के बहुत निकट हैं। पर, वास्तव में इनका परस्पर अन्तर करोड़ों मील का है। दूर से देखने से जङ्गल के वृक्ष बहुत पास पास उगे हुए मालूम होते हैं। पर, निकट जाने से यह ज्ञात होता है कि वे एक दूसरे से बहुत अन्तर पर हैं। इसी तरह आकाश-गङ्गा का प्रकाशमान पथ भी हमें ऐसा दिखाई देता है मानों मोती टँके हुए वस्त्र का एक लम्बा टुकड़ा एक सिरे से दूसरे सिरे तक फैला हुआ है। अत्यन्त दूरदर्शी दूरबीन से आकाश-गङ्गा का जो अप्रतिम सौन्दर्य दृष्टि-गोचर होता है [illegible] शब्दों की शक्ति के बाहर है। [illegible] द्वारा कुछ [illegible] बिछा बिजली तदनन्तर और [illegible]

दीपकों को जलाने के बाद जो दृश्य हो जायगा उसके सौन्दर्य से तेज़ देखे गये आकाश-गङ्गा के सौन्दर्य का मान देखने वाले के ध्यान में आ सकेगा। दूरबीन से नीला आकाश कहीं कहीं ऐसा देता है मानों उसमें बड़े बड़े सूर्यों का ढेर है और कहीं कहीं ऐसा भी देख पड़ता है इन सूर्यों की दीवारें खड़ी कर दी गई हैं। कहीं बड़े बड़े मीनार और कहीं कहीं भी दिखाई देते हैं। कहीं तो ये सूर्य एक निकट ऐसे अव्यवस्थित रूप में पड़े हुए से देते हैं कि तेज़ से तेज़ दूरबीन भी उन्हें नहीं दिखा सकते। इस दृश्य को देख कर को जो आनन्द होता है उसकी कल्पना कठिन है। परमात्मा की इस अनोखी सौन्दर्य रचना को देख कर विद्वान् लोग भूख संसार के जटिल जञ्जालों को एकदम भू हैं। इसके सिवा इस सूर्यमय प्रदेश की गुफायें और बड़े बड़े दरवाज़े यह सूचित मानो वहाँ अवकाशरूपी अनन्त अप्सराओं देखने के लिए खिड़कियाँ बना दी गई हैं। आस पास के प्रकाशमान स्थानों के साथ इन कियों की तुलना करने से ये काजल की काली काली दिखाई देती हैं। सूर्य के भाग से आगे की ओर दृष्टि ले जाने वाली खिड़कियों में से किसी एक की ओर दूरबीन का कांच हो जाता है तब दर्शक एकदम चकित हो जाना पड़ता है। आकाश थोड़े बहुत चमत्कार दूसरों को दिखाने में फ़ोटोग्राफ़ी की सहायता से मनुष्यों को किसी में अच्छी सफलता प्राप्त हुई है। इस दृश्य को दृष्टि एकटक देखती रह जाती है। भाषा इसे प्रकट नहीं कर सकती। [illegible] पर अङ्कित [illegible] जाते हैं। [illegible] चित्र प्लेटों पर [illegible]

र भी थोड़ा बहुत हो चुका है। इन्हीं कारणों से
। पहले फ्रांस में सन्तानोत्पत्ति कम हो गई थी
की मनुष्य-संख्या घटने लगी थी। इस बात का
रेड़ी के "Influence of Civilization on
ation" नामक ग्रन्थ में अच्छी तरह किया गया
। के वाक्यों से उस देश के सामाजिक ह्रास के
ा हाल मालूम हो जायगा—

Neither do we affirm that education
sole factor which reduces the birth-
is this is only one of the factors
combined with material ease, less
religious sentiments and an ardent
to attain a higher and better mate-
andard, form an aggregate of in-
al and moral qualities which are
avourable to a high birth-rate

अवनति में सामाजिक ह्रास के जिन कारणों का
किया गया है वे ये हैं:—(१) शिक्षा; (२) आधि-
सुख; (३) धार्मिक भाव, श्रद्धा और श्रेष्ठ मनो-
के विषय में उदासीनता; (४) विषयोपभोग की
इच्छा।

किसी देश में सामाजिक ह्रास होने लगता है तब
ही प्रभावशाली मनुष्यों का उत्पन्न होना बन्द हो
और उसकी राजकीय स्थिति बिगड़ने लगती है।
बन्त है वे इस सामाजिक ह्रास से बचने के लिए
ाय कर सकते हैं। परन्तु जो समाज राजकीय दृष्टि
के अधीन हैं वे यदि इस संकट की अवस्था से
का कुछ उपाय न करें तो उनके नष्ट हो जाने में
आश्चर्य नहीं। मस्तिष्क के अपरिमित व्यय से
होती है इसके विषय में गार्वो नाम का एक लेखक
है—

The constitutions shaken by this
and over-application, they bequeath
ir children. And then these com-
ely feeble children, predisposed to
down even under ordinary circum-

on their energies, are required to go through a curriculum much more extended than that prescribed for the unenfeebled children of past generations. The disastrous consequences, which might be anticipated, are everywhere visible; and they are accumulated by heredity"

Gurvan. Education and Heredity.
Pp 130, 131.

क्या यही दशा हमारे वर्तमान शिक्षित समाज की नहीं होने पड़ती? जब इन सब बातों पर विचार किया जाता है तब मन में यह प्रश्न उठता है कि, क्या यह ह्रास अटल है? क्या सभ्यता, सुधार और आधिभौतिक उन्नति तथा वैभव के साथ सामाजिक ह्रास का योग सदा यों ही बना रहेगा? क्या मनुष्य की बुद्धि का इतना विकास कभी न होगा कि वह ऐसे उपायों को सोचे, जिनसे सभ्यता और सुधार के लाभ और सुख तो प्राप्त हो जायँ, परन्तु समाज की हानि या ह्रास न होने पावे? आज तक के इतिहास से, परिश्रमी सभ्यता और सामाजिक ह्रास के अनिवार्य सम्बन्ध को देख कर, ग्रोलिय स्कीनर नाम के एक ग्रन्थकार ने भी यही प्रश्न किया है—

"Is there any reason to suppose that the emasculation and degradation of human creatures, *which has always taken place wherever a high state of material civilization has been reached*, is an absolutely inevitable concomitant of all high material civilization, for all time? Must the story of History forever repeat itself?"

निराश होने की बात नहीं है। विद्वानों ने सामाजिक विकास के नियमों पर विचार करके कुछ ऐसे सिद्धान्त निश्चित किये हैं जिनका अवलम्ब करने से यह सामाजिक ह्रास रुक सकता है। इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर इस लेख में कुछ उपायों का वर्णन किया जायगा, जिनसे हम लोग अपने समाज के वर्तमान और भावी ह्रास को रोक सकते हैं।

हिन्दुस्तान के निवासी कुछ निर्बल से पराधीन किये गये हैं, परन्तु आश्चर्य की बात है कि जिन्हें योरोप

शास्त्रियों ने तो गणना की है कि आकाश-गङ्गा के अनेक नक्षत्र हम से इतनी दूर हैं कि वहाँ से हमारी पृथ्वी तक उनका प्रकाश आने ही में ३,००० से १५,००० वर्ष तक का समय लगता है। प्रकाश का वेग एक सेकंड में १,८६,००० मील है। इससे पाठक स्वयं ही अनुमान कर लें कि आकाश-गङ्गा के सूर्य हमारी पृथ्वी से कितनी दूर हैं।

आकाश-गङ्गा के अगम्य प्रदेशों में चमकने वाले ये बड़े बड़े सूर्य किसी तेज़ दूरबीन से ही देखे जा सकते हैं। पर, जिन असंख्य पृथ्वियों को ये सूर्य प्रकाशित करते हैं उन्हें देखने के लिए कोई यन्त्र कैसे समर्थ हो सकता है? ये पृथ्वियाँ कैसी होंगी, इनमें कैसे प्राणी बसते होंगे, वहाँ राजकीय, धार्मिक, नैतिक आदि नियम कैसे प्रचलित होंगे—इस बात की क्या आप कल्पना भी कर सकते हैं? मान लीजिए कि आकाश-गङ्गा में एक अब्ज सूर्य हैं—वास्तव में तो उनकी संख्या इससे भी अधिक होगी—तो जिस प्रकार हमारे सूर्य के आस पास आठ ग्रह प्रदक्षिणा करते हैं उसी प्रकार आकाश-गङ्गा के प्रत्येक सूर्य के आस पास भी आठ आठ ग्रह प्रदक्षिणा कर रहे होंगे। इस प्रकार इस असीम आकाश में आठ अब्ज ग्रह तो ऐसे छिपे पड़े हैं कि वे हमें किसी तरह दिखाई ही नहीं देते।

यदि ये आठों अब्ज ग्रह एक साथ एक एक क्षण में नाश होने लगें तो भी आकाश के अनन्त प्रदेश में कुछ भी हेर फेर होता न जान पड़ेगा। जहाँ ऐसे अब्जों ग्रहों का हिसाब नहीं वहाँ महासागर में एक बूँद के समान हमारी यह पृथ्वी किस गिनती में है। परमेश्वर की अनन्त और अपार सृष्टि में हमारी इतनी बड़ी पृथ्वी का कोई हिसाब ही नहीं। हमारे पड़ोसी शुक्र और मङ्गल के निवासियों के सिवा कोई उसे पहचानता ही नहीं। महासागर की बालू की असंख्य कणिकाओं में से एक कणिका रही तो क्या और न रही तो क्या। जहाँ करोड़ों ग्रहों का तो क्या, करोड़ों सूर्यों का हिसाब नहीं [illegible] मनुष्य की कौन गिनती है? परमेश्वर की इस अलौकिक [illegible] रचना का विचार करके भी मनुष्य का अभिमान न चूर्ण हो जाय तो बड़े ही दुःख की बात है।

इस महान् आकाश में चमकती हुई [illegible] पृथ्वियों, अगणित सूर्यों और अगणित ग्रहों का एक ब्रह्माण्ड है। हमारे शास्त्र कहते हैं कि ऐसे २१ ब्रह्माण्ड हैं। वे सब ईश्वरीय माया के जिस भाग में हैं उससे कई गुना अधिक बड़ा एक और प्रदेश है। उससे ब्रह्माण्डों की [illegible] का अभी आरम्भ ही नहीं हुआ। यह इतना बड़ा सम्भूत प्रदेश परमात्मा के अनन्त और [illegible] शरीर के साढ़े तीन करोड़ रोमों में से [illegible] तरह किसी एक कोने में पड़ा हुआ है। [illegible] तत्त्व जानने वाले महापुरुष यही कहते हैं। [illegible] माया के इस छोटे से प्रदेश में ही तेरा, तेरी [illegible] तेरे सूर्य का, और तेरे इस ब्रह्माण्ड का कोई नहीं, तो परमात्म-प्रदेश में तेरी क्या गिनती हो है? अभिमान को छोड़, नम्र बन और आश्चर्यकारक परमात्मा की शरण अनन्य ग्रहण कर। यही एक मात्र तेरे कल्याण का [illegible]

[गुजराती की "महाकाल" नामक [illegible] अनुवादित]

श्रीलाल शालग्राम [illegible]

---

## सामाजिक ह्रास से बचने के [illegible]

[ ४ ]

तमान समय में जिन तीन हमारे समाज का ह्रास उनका विचार पिछले तीन किया जा चुका है। अपरिमित व्यय, शहरों में (पश्चिमी शिक्षा तथा सभ्यता से उत्पन्न होने वा की अनियन्त्रित स्वतन्त्रता का बुरा परिणाम हमारे समाज पर [illegible] तरह और

हा—आतीय स्त्रिया ।

का गंभीर इतिहास में प्रसिद्ध है, जिनके पूर्वजों ने धर्म, राजनीति और समाज के सम्बन्ध में बड़े बड़े लेखों की योग की है, उनके वर्तमान वंशजों में असाधारण गुण नहीं देख पड़ता! यदि यह पूछा जाय कि वर्तमान समय के हिन्दुस्तानियों में धैर्य, आवेश, निरूपण, उत्साह और सहनशीलता क्यों नहीं देख पड़ती, तो उत्तर यह है कि मानसिक परिश्रम के अतिरेक से बुद्धि में एक प्रकार की हीनता आ गई है। इस हीनता को टालने का उपाय यही है कि जिस काम में पिता ने अपनी बुद्धि का—अपने मस्तिष्क का—विशेष व्यय किया हो उसी काम में सन्तान की बुद्धि का व्यय न होने देना चाहिए। यदि किसी घराने की प्रत्येक पीढ़ी के आदमी एक ही व्यवसाय में अपनी सारी बुद्धि का व्यय करने लगें तो कुछ समय के बाद उस घराने में मन्दबुद्धि के मनुष्य उत्पन्न होने लगेंगे और अन्त में उस घराने का ह्रास हो जायगा। यूरोप के समाजों का यही अनुभव है। इस विषय पर गायेो नाम के विद्वान् लेखक ने—"शिक्षा और आनुवंशिक संस्कार"* नाम का ग्रन्थ लिखा है। अँगरेज़ी जानने वाले हमारे भाइयों को इस ग्रन्थ में प्रतिपादित सिद्धान्तों पर अवश्य विचार करना चाहिए। बुद्धि और भूमि की पारस्परिक तुलना करके गायेो कहता है—जो भूमि हर साल जोती बोई जाती है उसका उपजाऊपन घट जाता है—वह निःसत्व हो जाती है। यही हाल बुद्धि (मस्तिष्क) का भी है। जैसे भूमि के उपजाऊपन की वृद्धि करने के लिए उसको कुछ समय तक पड़ी रहने देना चाहिए वैसे ही मस्तिष्क को भी कुछ समय तक बेकार पड़ा रहने देना चाहिए। इस उपाय से उसका ह्रास—उसकी क्षीणता—बन्द हो सकती है। जिन शिक्षित कुटुम्बों ने बुद्धि-व्यायाम और मस्तिष्क ही के उपयोग का व्यवसाय कर रक्खा है उनको उचित है कि वे कुछ समय तक अपनी सन्तान के मस्तिष्क को विश्राम करने दें और उनको शारीरिक परिश्रम के कामों में लगावें। यदि विश्रान्ति लेना असम्भव हो तो एक पीढ़ी में जिस व्यवसाय में बुद्धि का विशेष उपयोग किया गया हो उसी व्यवसाय में दूसरी बुद्धि का अधिक उपयोग न किया जाय—किसी व्यवसाय में बुद्धि का उपयोग हो। यह उपदेश हर पिताओं और शिक्षकों के ध्यान देने योग्य है—

"It is the educator's duty not to press the son to follow his father in his profession, at least whenever that profession is that of the artist, politician, soldier, simply man of business, or man of science, requires very considerable mental expenditure."

जो लोग सम्पत्ति, कीर्ति और वैभव की [illegible] फँस कर, मस्तिष्क की शक्ति के घट जाने पर भी उपयोग में लाने का हठ किया करते हैं उनको चाहिए कि वे अपनी सन्तान को अमर्यादित विद्याभ्यास से अलग रक्खें।

सामाजिक हास को टालने का दूसरा उपाय यह है कि शिक्षित लोगों को देहाती जीवन के स्वीकार और शारीरिक परिश्रम की ओर अधिक प्रवृत्त होना चाहिए। जो जातियाँ कई पीढ़ियों से विद्याव्यासङ्ग में और शहरों में रह कर अपनी पूर्वसञ्चित शक्ति का व्यय कर रही हैं उन्हें देहाती जीवन से निस्सन्देह लाभ होगा। इस उपाय की उपयोगिता के विषय में, सामाजिक कारणों का विचार करते समय, दूसरे नम्बर में बहुत कुछ लिखा जा चुका है। समाज के अस्तित्व का सिद्धान्त है कि पुरुषत्व की इच्छा रखने वाली शक्तिशालिनी और सामर्थ्यवती जातियाँ भी बहुत समय देहाती जीवन से अलग नहीं रह सकतीं—

"It seems to be a law of existence that the most dominant and powerful races, *if they desire to keep their vigour*, cannot remove themselves too far or too long from the primitive conditions of life."

इससे देहाती जीवन का महत्त्व स्वयं सिद्ध है। शहरों में रहने से जो हानिकारक परिणाम किसी समाज पर

* यह शब्द अँगरेज़ी भाषा के Heredity शब्द के लिए है। गत मई की 'सरस्वती' के २०३ वें पृष्ठ के पहले में, इसी शब्द के लिए, 'वंशानुक्रम' लिखा गया है।

ई उनको टालने के लिए देहात में रहना, शारीरिक । करना और प्रकृति की सहायता से अपनी खोई हुई ि को फिर से प्राप्त कर लेना अत्यन्त आवश्यक है। न्देह न करना चाहिए कि यदि हम देहात में रहेंगे ारी मानसिक शक्तियों के प्रकट होने और उनको काम ने का मौक़ा न मिलेगा; हमारी शक्तियां नष्ट हो ो, हम असभ्य और गँवार हो जायँगे। नहीं। सच तो कि देहात ही में हमारी शारीरिक, मानसिक, नैतिक शक्तियां गुप्त रीति से आप ही आप बढ़ती रहती हैं। । की इस गुप्त अवस्था ही से—देहात के कष्टमय, व गँवार तथा दरिद्र जीवन ही से—प्रतिभा की ति हुआ करती है। सारांश यह कि यदि शहरों में वाले और कई पीढ़ियों तक विद्याव्यासङ्ग ही में लगे लोग अपनी सन्तान को देहात में—प्रकृति की गोद विश्रान्ति लेने न देंगे तो उनका वंश शीघ्र ही नष्ट जायगा*।

सामाजिक हास को टालने का तीसरा उपाय यह है हमारे अन्त करण की श्रेष्ठ मनोवृत्तियों का विकास सदा होता रहे। केवल बुद्धि की स्वतन्त्रता से मनुष्य की ीण उन्नति नहीं हो सकती। सात्विक मनोवृत्तियों की ा के विषय में एमरसन नामक ग्रन्थकार ने "On e Sovereignty of Ethics" नामक ग्रन्थ में बहुत ा वर्णन किया है। वर्त्तमान समय के जो अँगरेज़ी लिखने लोग सिर्फ़ अपने स्वतन्त्र विचार या बुद्धि को अपना ईश्वर मानते हैं उन्हें इस पुस्तक को एक बार अवश्य । लेना चाहिए। हमारे यहां इन मनोवृत्तियों का समावेश धर्म्म" में किया गया है। इतिहास देखने से मालूम होता कि जिस समय लोगों में धर्मनिष्ठा प्रबल थी वह समय वश्य ही सब प्रकार प्रशंसनीय था। उलटा, जिस समय गों में धर्मनिष्ठा दुर्बल या लुप्त हो गई थी उसी समय सब प्रकार की अवनतियां हुई हैं। सामाजिक सुख, उत्साह और आनन्द के अवसर सात्विक मनोवृत्तियों ही पर—धर्मनिष्ठा ही पर—अवलम्बित रहते हैं। आस्तिकता, भक्तिभाव, पाप का भय, आदरबुद्धि, उदार आचरण, स्वार्थ-रहित प्रेम आदि सात्विक गुण धर्मनिष्ठा ही के फल हैं। यदि हम इन शुद्ध मनोविकारों को अपने अन्तःकरण में स्थान न देंगे तो हमारे अन्तःकरण की नीच मनोवृत्तियों ी का उदय हुआ करेगा और अन्त में वह मनुष्य समाज यथार्थ में "बुद्धिमान् पशु" हो जायगा। धर्मनिष्ठा और सात्विक गुणों के संस्कारों ही से हमारे अन्तःकरण में वह सारासार विवेक-शक्ति उत्पन्न होती है जिसको अँगरेज़ी में Conscience कहते हैं। जिन लोगों ने पश्चिमी तत्त्वज्ञान के ग्रन्थ पढ़े हैं वे जानते हैं कि यह सारासार विचार शक्ति, बुद्धि और शुद्ध मनोविकारों के बहुत दिनों के उपयोग से उत्पन्न होती है और वही फिर स्वाभाविक हो जाती है। ऐसी अवस्था में जो लोग अपनी बुद्धि की स्वतन्त्रता ही को सम्मानित किया करते हैं और श्रेष्ठ मनोवृत्तियों के विकास की ओर कुछ भी ध्यान नहीं देते वे सचमुच अपने सामाजिक अस्तित्व की जड़ काट डालने का यत्न करते हैं। सारांश यह कि धर्मनिष्ठा का—श्रेष्ठ मनोवृत्तियों और अनेक शुद्ध संस्कारों के आधार पर बनी हुई सारासार विचार-शक्ति का—समाज में ज्यों ज्यों विकास होता जायगा त्यों त्यों समाज की वर्त्तमान क्षीणता भी दूर होती चली जायगी। हमारे आधुनिक शिक्षितों को केवल बुद्धि की स्वतन्त्रता और व्यक्ति-विशेष के सुख ही पर ध्यान न देना चाहिए; किन्तु अपने अन्तःकरण की श्रेष्ठ मनोवृत्तियों का भी विकास अवश्य करना चाहिए।

मृत्युलोक को विद्वान् "कर्मभूमि" कहते हैं। यहां जीवन यात्रा के समय अनेक सङ्कटों का सामना करना पड़ता है। कभी कभी तो अकस्मात सङ्कट उपस्थित हो जाते हैं। उस समय यह सूझ नहीं पड़ता कि हमारा कर्त्तव्य क्या है। मनुष्य की बुद्धि स्तब्ध हो जाती है और ऐसा जान पड़ता है कि हमारा जीवन व्यर्थ ही गया। ऐसे ही सङ्कट के समय कर्त्तव्यमार्ग दिखाने के लिए हमारे हृदय में स्थित मनोवृत्तियों का उदय होता है। वही बुद्धि को प्रेरित करती हैं। यदि इन मनोवृत्तियों की प्रेरणाओं के अनुसार

* "Genius proceeds only from the boxes in which poor have, day by day, hoarded up their talents stead of squandering them in follies Nature accumulates her greatest riches when she is asleep . . . must resign ourselves to our awakening other than we are, or to their ceasing to exist Guyau-Education and Heredity

। है उनको टालने के लिए देहात में रहना, शारीरिक श्रम करना और प्रकृति की सहायता से अपनी खोई हुई शक्तियों को फिर से प्राप्त कर लेना अत्यन्त आवश्यक है। सन्देह न करना चाहिए कि यदि हम देहात में रहेंगे हमारी मानसिक शक्तियों के प्रकट होने और उनको काम लाने का मौका न मिलेगा; हमारी शक्तियां नष्ट हो जायेंगी; हम असभ्य और गँवार हो जायेंगे। नहीं। सच तो यह है कि देहात ही में हमारी शारीरिक, मानसिक, नैतिक ये शक्तियां गुप्त रीति से बार ही बार बढ़ती रहती हैं। ति की इस गुप्त अवस्था ही से—देहात के कष्टमय, न्य गँवार तथा दरिद्र जीवन ही से—प्रतिभा की त्ति हुआ करती है। सारांश यह कि यदि शहरों में ले वाले और कई पीढ़ियों तक विद्याव्यासङ्ग ही में लगे लोग अपनी सन्तान को देहात में—प्रकृति की गोद —विश्रान्ति लेने न देंगे तो उनका वंश शीघ्र ही नष्ट जायगा*।

सामाजिक ह्रास को टालने का तीसरा उपाय यह है हमारे अन्तःकरण की श्रेष्ठ मनोवृत्तियों का विकास सदा होता रहे। केवल बुद्धि की स्वतन्त्रता से मनुष्य की तोषप्रद उन्नति नहीं हो सकती। सात्त्विक मनोवृत्तियों की ता के विषय में एमरसन नामक ग्रन्थकार ने "On ie Sovereignty of Ethics" नामक ग्रन्थ में बहुत ष्ठा वर्णन किया है। वर्त्तमान समय के जो अँगरेज़ी लिखे ले लोग सिर्फ़ अपने स्वतन्त्र विचार या बुद्धि को अपना गैदर्शक मानते हैं उन्हें इस पुस्तक को एक बार अवश्य ा लेना चाहिए। हमारे यहाँ इन मनोवृत्तियों का समावेश धर्म्म" में किया गया है। इतिहास देखने से मालूम होता कि जिस समय लोगों में धर्मनिष्ठा प्रबल थी वह समय पाय ही सब प्रकार प्रशंसनीय था। उलटा, जिस समय लोगों में धर्मनिष्ठा दुर्बल या सुप्त हो गई थी उसी समय सब प्रकार की अवनतियां हुई हैं। सामाजिक सुख और आनन्द के अवसर सात्त्विक मनोवृत्तियों ह धर्मनिष्ठा ही पर—अवलम्बित रहते हैं। श्र भक्तिभाव, पाप का भय, आदरबुद्धि, उदार आचरण रहित प्रेम आदि सात्त्विक गुण धर्मनिष्ठा ही के यदि हम इन शुद्ध मनोविकारों को अपने अन्त स्थान न देंगे तो हमारे अन्तःकरण की नीच मनोवृ का उदय हुआ करेगा और अन्त में यह मनुष्य यथार्थ में "बुद्धिमान् पशु" हो जायगा। धर्मनि सात्त्विक गुणों के संस्कारों ही से हमारे अन्तःकरण सारासार विवेक-शक्ति उत्पन्न होती है जिसको अं Conscience कहते हैं। जिन लोगों ने पश्चिमी के ग्रन्थ पढ़े हैं वे जानते हैं कि यह सारासार विचा बुद्धि और शुद्ध मनोविकारों के बहुत दिनों के उप उत्पन्न होती है और वही फिर स्वाभाविक हो जा ऐसी अवस्था में जो लोग अपनी बुद्धि की स्वतन्त्रता सम्मानित किया करते हैं और श्रेष्ठ मनोवृत्तियों के की ओर कुछ भी ध्यान नहीं देते वे सचमुच अपने जिक अस्तित्व की जड़ काट डालने का यत्न करते हैं। यह कि धर्मनिष्ठा का—श्रेष्ठ मनोवृत्तियों और अने संस्कारों के आधार पर बनी हुई सारासार विचारशक्ति समाज में ज्यों ज्यों विकास होता जायगा त्यों त्यों की वर्त्तमान क्षीणता भी दूर होती चली जायगी। आधुनिक शिक्षितों को केवल बुद्धि की स्वतन्त्रता व्यक्ति-विशेष के सुख ही पर ध्यान न देना चाहिए; अपने अन्तःकरण की श्रेष्ठ मनोवृत्तियों का भी अवश्य करना चाहिए।

मृत्युलोक को विद्वान् "कर्मभूमि" कहते हैं। जीवन-यात्रा के समय अनेक सङ्कटों का सामना पड़ता है। कभी कभी तो अकस्मात सङ्कट उपस्थि आते हैं। इस समय यह सूझ नहीं पड़ता कि हमारा क्या है। मनुष्य की बुद्धि स्तब्ध हो जाती है और ऐसा पड़ता है कि हमारा जीवन व्यर्थ ही गया। ऐ सङ्कट के समय कर्त्तव्यमार्ग दिखाने के लिए हमारे ह इसी मनोवृत्तियों का उदय होता है। वही बुद्धि को करती हैं। यदि इन मनोवृत्तियों की सेवाओं से व

* "Genius proceeds only from the boxes in which e poor have, day by day, hoarded up their talents stead of squandering them in follies Nature se-ures her greatest riches when she is asleep — e must resign ourselves to our sons being other han we are, or to their ceasing to exist' Galton. Hereditary Genius and Heredity

कार्य किया जाय तो कर्तव्य में कुछ भी भूल न हो और हम सारे सङ्कटों और दुःखों को आनन्दपूर्वक सह लें। कर्त्तव्य-सम्बन्धी आनन्द से हमारा हृदय सदा उत्साहपूर्ण और प्रफुल्लित बना रहता है। यह सन्देह करने की आवश्यकता नहीं कि एक शुद्ध मनोवृत्ति दूसरी का विरोध करेगी। नहीं; ऐसा कभी नहीं होता। उदाहरणार्थ, अपनी सन्तान को देख कर हमारे हृदय में प्रेम उत्पन्न होता है; जेठे बड़ों को देख कर आदर का भाव जागृत होता है; दीन जनों को देख कर करुणा का स्रोत बहने लगता है; और अनिवार्य सङ्कट में पड़ जाने पर ईश्वर का स्मरण होता है। जब सम्पत्ति की वृद्धि होती है तब परोपकार की ओर मन झुकने लगता है; जब कर्तृत्व की जागृति होती है तब धर्मोपदेश और देश-सेवा की इच्छा भी बढ़ने लगती है। ज्यों ज्यों मनोवृत्तियाँ अधिकाधिक उदार और विकसित होती जाती हैं त्यों त्यों हमारे हृदय में सहानुभूति और भूतदया भी बढ़ती जाती है। जिस मनुष्य की सहानुभूति और भूतदया विश्वव्यापक हो जाती है वही हमारे प्राचीन ग्रन्थों में "उत्तम भागवत" कहा गया है—

सर्वभूतेषु यः पश्येद् भगवद्भावमात्मनः।
भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः॥
श्रीमद्भागवत, स्कन्ध ११, अध्याय २

तात्पर्य यह कि शुद्ध मनोवृत्तियों का अनुसरण करने ही से मनुष्य के स्वभाव का विकास होता है और समाज उत्तम पद को पहुँच जाता है। ये मनोवृत्तियाँ हमारे सामाजिक जीवन के लिए नन्दनवन के समान हैं। यदि इस नन्दनवन का उच्छेद किया जायगा तो किसी भी व्यक्ति का हित न होगा, मनुष्य-समाज का कल्याण न होगा, सांसारिक जीवन की सफलता न होगी, कर्त्तव्य में कुछ भी विचित्रता न रहेगी और मनुष्य-जाति की अवनति होने लगेगी। अतएव, हम लोगों को अपने अन्तःकरण की श्रेष्ठ मनोवृत्तियों के विकास की ओर ख़ूब ध्यान देना चाहिए।

चौथा उपाय। स्त्री-शिक्षा के विषय में बहुत सावधानी और दूरदृष्टि से काम करना चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि हमारी स्त्रियाँ अपढ़ और ज्ञानहीन हैं। इस लिए जब तक उनको पुरुषों के समान उच्च शिक्षा न दी जायगी तब तक हमारी सन्तान का और इस देश का सुधार न होगा। स्मरण रहे कि उनका यह कथन और यह उपाय समाज-शास्त्र के सिद्धान्तों के विरुद्ध है। यदि यह सत्य है कि अमर्यादित विद्या-व्यासङ्ग से हमारे युवकों का शारीरिक तथा मानसिक ह्रास हो रहा है तो क्या यह हमारी स्त्रियों का भी न होगा? जैसे व्यक्तिगत आरोग्य-शास्त्र के कुछ नियम हैं और उनके अनुसार चलना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है, वैसे ही समाजगत आरोग्य-शास्त्र के भी कुछ नियम हैं और उन्हीं के अनुसार प्रत्येक स्त्री या पुरुष को चलना चाहिए। स्त्रियों के लिए सामाजिक आरोग्य शास्त्र का कथन यह है—"स्त्रियों में पुरुषों से कम सामर्थ्य होता है। उनकी शारीरिक रचना के अनुसार उनमें इतना सामर्थ्य नहीं कि वे उसका व्यय मुख्य निर्दिष्ट सन्तानोत्पादन के कार्य्य में तथा विद्याव्यासङ्ग भी कर सकें। यदि हमें उत्तम सन्तान की चाह हो तो स्त्रियों की शिक्षा की मात्रा बहुत ही कम होनी चाहिए; क्योंकि सन्तानोत्पादन के कार्य्य में स्त्रियों की बहुत शक्ति का व्यय हो जाता है। मस्तिष्क से काम लेना और सन्तानोत्पादन करना, ये दोनों परस्पर-विरोधी कार्य हैं। यदि बेकन या न्यूटन की माताओं को विदुषी और विदुषी बनाने का यत्न किया गया होता तो उनके गर्भ से बेकन या न्यूटन का जन्म न होता। सन्तानोत्पादन के लिए दो बातों की आवश्यकता है—(१) स्त्रियों में गर्भधारण के यथेष्ट सामर्थ्य हो; (२) उचित समय तक बच्चों को दूध पिलाने और उनके पालन-पोषण की शक्ति उनमें हो। (३) अतएव उनमें दुर्बलता न आनी चाहिए। यही स्त्रियों का प्रधान कर्त्तव्य है। इस कर्त्तव्य की ओर ध्यान रख कर ही स्त्रियों को शिक्षा दी जानी चाहिए। स्त्रियों की शिक्षा का मुख्य उद्देश यही होना चाहिए कि वे अपनी श्रेष्ठ वृत्तियों की प्रेरणा अपनी सन्तानों के हृदयों में कर सकें—

"On the mother, in particular, rests the task of developing the heart."

जब हम सामाजिक आरोग्य-शास्त्र के उक्त कथन पर ध्यान देते हैं तब उन लोगों के अज्ञान पर हँसी आती है जो इस देश में उच्च स्त्री-शिक्षा का पक्षपात करते हैं। इस विषय पर जून महीने की सरस्वती में, लन्दन के डाक्टर पेन्शी के एक निबन्ध के आधार पर, हम

न हुआ है। उसे पढ़ने से यह बात मालूम हो कि स्त्रियों को उच्च शिक्षा देने से क्या हानि होती है। नामक एक अमेरिकन लेखक कहता है—"यदि में स्त्री-शिक्षा का प्रचार इसी तरह और पचास क होता रहेगा तो हमारी स्त्रियां वन्ध्या हो जायँगी वाली पीढ़ियों की माताये अटलांटिक महासागर के र से (अर्थात् असभ्य जातियों में से) लाई "।*

न्त में सरस्वती के उक्त नोट के लिखने वाले के में ही हम भी यही प्रार्थना करते हैं कि—"स्त्रियों शिक्षा का प्रचार चाहने वाले हमारे देश-भाई य देशों के अनुभव से अपने मार्ग को प्रशस्त और न बनावें"।

माधवराव सप्रे।

---

## मन्दोदरी और रावण।

(रामचरित-चिन्तामणि से उद्धृत)

मन्दोदरी।

बुध वही गुण- सागर है वही,
सकल लोक-जनेश्वर है वही।
बुध प्रियाऽप्रिय है जिसको नहीं,
विरति में रति में रति-तुल्य है॥ १॥
पर रमा, रमणी विष-तुल्य है,
हट नहीं करिए प्रिय! मानिए।
तनिक ताप इन्हें लगता नहीं—
वृजिन का, जिनका शुभ कर्म है॥ २॥
नय-परायणता प्रिय हो जिसे,
अरुचि हो पर-पीड़न से जिसे।
रमण! हो फिर क्यों उसके नहीं
अहित भी हित भीतर से सदा॥ ३॥
निजवधू-जन में रमिए प्रभो!
सुरसुतोपम है वह जानकी।
न उसकी समता फबती तुम्हें;
असुर हो सुर हो सकते नहीं॥ ४॥
रसिक हो निगमागम के सही,
प्रिय! सुराऽसुर से कर लीजिए।
पर नहीं तुम में कुछ भी हुई
सुजनता जन-ताप निवारिणी॥ ५॥
स्वमहिषी यदि पा कर ये लड़ें,
तब नहीं हटिए रण से कभी।
युध नहीं पहले अरि मारते—
लगुड़ से, गुड़ से यदि कार्य हो॥ ६॥
प्रिय अभी कुछ भी बिगड़ा नहीं,
स्वमन को अपने वश कीजिए।
अहह! क्यों मनुजा छवि-जाल में
शकुल के कुल के सम हो फँसे?॥ ७॥
निज हिताऽहित को समझे न जो,
यदि न हो जिसमें कुछ भी दया।
फिर दशानन! क्यों उसकी नहीं
सुपरता परितापन मानिए?॥ ८॥
भजनहीं करिए अब ईश का,
अवशता अति-ताप-करी सदा।
यदि बने, निज राज्य सहर्ष हो
तनय को नयकोविद! दीजिए॥ ९॥
जनकजा-गत-चित्त न हो प्रभो!
विवश हो वश हो कर काल के।
निकट ही अब पूर्णिम आपका—
दिवस है, बस है चलना नहीं॥ १०॥

रावण।

कुछ नहीं कहिए समझे बिना,
यह सनातन की शुभ नीति है।
इस लिए स्थिर हो करके प्रिये!
विगुणता सुन तापस की क्षमा॥ ११॥
अहह नाक बिना भगिनी हुई
त्रिजगमें! जिसकी करतूत से।
विनय तू करती इसके लिए,
न इसका रण-नाश-करी कर॥ १२॥
रहित हा! सर-नूपुर से किए,
अयमुने! मुझको प्रिय राम ने।

---

* Cf. "If this goes on for half a century, it needs very little to predict, from the laws of heredity, that mothers of our future generations will have to be sought from beyond the Atlantic."

फिर चलें शत्रुओं पर हमी नहीं!
लाख के लक्ष के दल विलीन हैं ॥ ३ ॥

पक्ष में पर शत्रु-सैन्य है,
दृष्टिगत पर है उसी मही।
गुप्त है पर कहीं छिपकर छिपे!
छिद्र के रंध्र के सब भेदिन हैं ॥ ४ ॥

समर है करना विजु से नहीं,
कब भला डर है सुनते इसे।
जगत में अरि की अरु मारिणी—
अमर है, अज है अनघादि भी ॥ ५ ॥

जय यथा सुख-दायक शूर को,
मरण भी रण में शुभ है उसे।
इस लिए मम निर्भय हो सदा
विजन में जन में मग मग्न है ॥ ६ ॥

यम-यजादिक भी मम सामने
टिक नहीं सकते क्षण भी कभी।
तदपि राम भिड़ा सुकर्म से,
न बड़वा बड़वानल को तरे ॥ ७ ॥

बल नहीं अबले! मम जननी,
भय तभी तुझको नर से हुआ।
हम विपक्ष-निशा-तम के लिए
सुमणि हैं, मणि हैं निज वंश के ॥ ८ ॥

हर घड़ी मन में मम कामना
बस यही अब है सुन तू प्रिये!
कब करूँ रण-ताण्डव शत्रु के
निकर में कर में करवाल ले ॥ ९ ॥

तुम विहार करो गतचिन्त हो,
सुमदिरा मदिराक्षि! पिया करो।
कर नहीं सकता मम इन्द्र भी
प्रकृति की कृति की प्रतिकूलता ॥ १० ॥

रामचरित उपाध्याय

---

# हिन्दुस्तानी सिपाहियों की वीरता

(१)

हिन्दुस्तानी सैन्य के एक अंगरेज़ [illegible] ईस्वी की मार्च में २० वर्ष [illegible] पलटन के चतुर पलटन का [illegible] जिस का मेजर है उसी का [illegible] आत्मत्यागी हेमा होगा जिसे [illegible] सेना नहीं न हो सके ऐसे वीर [illegible] सुन ले इस पलटन के अफ़सरों तथा सिपाहियों के वि [illegible] सरपे सन से हाथापाई के बयान न निकले होंगे? या [illegible] शायद अभी तक केवल कोतवाली में पड़ा है। परन्तु [illegible] के पाठकों को इसके पढ़ने की उत्कण्ठा होगी। इस [illegible] उसी वर्णन के आधार पर यह लेख हिन्दी में लिखा [illegible]

२३ नं० की पलटन पञ्जाब की साहसी पलटन [illegible] है। इसमें दो कम्पनियां सिखों की, दो डोगरा राजपू [illegible] दो पठानी मुसलमानों की और दो पश्चिमोत्तर सीमा [illegible] के पहाड़ी पठानों की हैं। एक कम्पनी में सौ से [illegible] अधिक जवान होते हैं। आज कल यह फ़्रांस और बेल्जि [illegible] में युद्ध कर रही है। जब से यह रणक्षेत्र में पहुँची है [illegible] से जिस जिस लड़ाई में इसे लड़ना पड़ा है उस [illegible] इसने अच्छी वीरता दिखाई है। परन्तु २६ अक्टूबर से [illegible] मई तक ईपर की भयङ्कर लड़ाई में जो काम इसने [illegible] दिखाया उसे सुन कर बहादुर से भी बहादुर पलटनों को [illegible] हिला कर उसकी तारीफ़ करनी पड़ेगी।

इस पलटन की वीरता का वर्णन करने के पहले [illegible] सम्बन्धी कई बातों का कुछ विवरण लिखना इसलिए [illegible] है, कि उन्हें जाने बिना पाठक आगे लिखी हुई [illegible] को पूरी तरह न समझ सकेंगे।

अब वह समय गया जब सिपाही खुले मैदान [illegible] होकर लड़ते थे। कारण यह है कि आज कल की बन्दूकों [illegible] दो मील तक निशाना मारा जा सकता है। एक मील तक [illegible] मार इतनी विकट होती है कि चोट लगने से सिपाही [illegible] प्राण जाने का बड़ा भय रहता है। एक मील के आगे रहने [illegible] वह थोड़ा बहुत घायल तो अवश्य ही हो जाता है। तोपों [illegible] मार ८ से १२ मील तक कारगर होती है। व्योमयान आकाश [illegible] में उड़ते हुए आस पास घूम कर तोपख़ानों को यह [illegible]

ं कि शत्रु कहाँ जगह पर है; वह इस तरफ़ जा
सका गोला-बारूद किस स्थान पर है। इन कारणों
विचारवान् अफ़सर अपने सिपाहियों को खुले
ाने की आज्ञा नहीं देता, न उन्हें वहां रहने देता है।
ाही के पास कुदाली, फावड़े आदि रहते हैं। जिस
ठहरने की आवश्यकता हुई वहीं उसने ५, ६ फुट
ा खोदा और उसकी आड़ में छिप रहा। बिना
ा होना मानो यमराज को उसी समय निमन्त्रण
आवश्यकता पड़ने पर यदि फ़ौज को खुले मैदान में
ा है, तो सिपाही लोग सर्प के समान धरती पर
ाने हैं। क्योंकि खड़े हुए आदमी पर तुरन्त
ा जाता है, पड़े आदमी पर निशाना ठीक नहीं
ह घास, झाड़ी, मेड़, नाली, पेड़, रेंडहर आदि
ले, इसी के सहारे जवान आगे बढ़ते हैं। घास
हुई अथवा धरती पर झाड़ी हुई तो बकरों के
ा पैर के बल चलते हुए, पत्तों के भीतर सिर
ाही लोग चलते हैं, जिससे दुश्मन के सिपाही
सकें कि ये लोग कहां हैं और ऊपर उड़ते हुए
पर बैठे हुए भेदिये भी उन्हें न पहचान सकें।
में इस जगह खुली हुई तो एक आड़ से दूसरी
झपक कर बिजली के समान निकल जाने की चेष्टा
ाते हैं। पर्दानशीन औरत, दूसरों की निगाह
लेए, अपना हाथ, मुँह, शरीर ढांक कर जैसी
ाम सफ़ाई के साथ निकल जाती है, उसमें लाख
र सफ़ाई के
ना

[illegible]
प्रकार वीर
ा जाते हैं।
हुआ कि शत्रु
मनुष्य को
में यदि
हज़ार
ग
रही हो
बढ़ने
[illegible]

अब यह देखिए कि आज कल के युद्ध में मोर्चे किस प्रकार तैयार किये जाते हैं। मान लीजिए कि किसी पल्टन को मोर्चा बांधना है तो उसका पहला काम यह है कि वह कम से कम पांच छः फुट गहरा गढ़ा खोदे। उससे जो मिट्टी निकले उससे शत्रु की ओर एक मेड़ बना दी जाय। उसमें छोटे मोटे छेद, सिपाहियों को देखने और बन्दूक चलाने के लिए, छोड़ दिये जायँ। प्रत्येक खाई इतनी बड़ी हो कि उसमें पन्द्रह बीस अथवा अधिक सिपाहियों की टुकड़ी छिप सके। इसी तरह कुछ थोड़ी सी जगह छोड़ कर दूसरी खाई तैयार की जायगी। इस प्रकार सात आठ सौ सिपाहियों की एक पूरी पल्टन के लिए लगातार ४०, ५० खाइयां खुद जाती हैं। जब छिपने के लिए खाइयां तैयार हो जाती हैं तब उनमें सिपाहियों के लिए और भी सुभीते, आवश्यकता मिलने पर, किये जाते हैं। पहले तो खाइयां इतनी गहरी की जाती हैं कि बिना सिर झुकाये सिपाही निर्भय घूम फिर सकें। फिर उनकी दीवारों में लम्बे लम्बे आले बनाये जाते हैं ताकि उनमें बन्दूकें, कारतूस, बम आदि रक्खे जावें। भट्ठियां तैयार की जाती हैं, जिनमें सर्दी विशेष होने पर आग सुलगा दी जाय; सिपाही अपना भोजन तथा खाने-पानी भी तैयार कर लें और सीने करने भी सुना लें। यदि चक्की तथा पानी पड़ता हो तो आसपास बड़े बड़े ताल बनाये जाते हैं, जिनमें सारे सिपाही नहा सकें। शत्रु के व्योमयान ऊपर खाइयों पर बम के गोले फेंकते हैं। इस कारण ऊपर से पेड़ों की डालियों आदि से उनका मुँह इस प्रकार ढक देते हैं जिससे ऊपर उड़ते हुए व्योमयानों पर बैठे हुए शत्रु इनको न पहचान सकें। प्रत्येक खाई में कम से कम एक "मशीन गन" नाम की कलाकारी बन्दूक रहती है। इसमें कारतूसों की माला पहना कर बन्द चलाने से बड़ी तेज़ी से गोलियों की वर्षा होती है। सिपाहियों की मामूली बन्दूकें एक मिनट में एक बार, बहुत हुआ तो दो बार, छोड़ी जा सकती हैं, परन्तु इस "मशीन गन" से एक मिनट में [illegible] छोड़ी जा सकती हैं। [illegible] कारतूसों के [illegible] हैं। [illegible] हैं। इस बात से [illegible] के प्रबन्ध का [illegible]

फिर पर्वों उत्सवों का क्यों नहीं?
नाग के राग के हम चित्र हैं ॥ ३ ॥
प्रकट में यह साधु समाज है,
कुटिलता पर है इसकी भी।
सुजन है पर क्यों जिसकी जिये!
जिए के पर के सम नीति है ॥ ४ ॥
समर है करना विधु से नहीं,
कब अधा हम है सुनते इसे।
जगत में भट की भट मालिका—
अमर है, अज है अजरादि भी ॥ ५ ॥
जब पणा सुत-दायक शूर को,
मरण भी रण में सुख है इसे।
इस लिए मम निर्भय हो सदा
विजन में जन में मन मान्य है ॥ ६ ॥
यम-अजादिक भी मम सामने
रुक नहीं सकते क्षण भी कभी।
तदपि राम भिड़ा मुझसे अहो,
न पड़वा पड़वानल को तरे ॥ ७ ॥
बल नहीं अबले! मम जानती,
भय तभी मुझको नर से हुआ।
हम विपक्ष-निशा-तम के लिए
सुमणि हैं, मणि हैं निज वंश के ॥ ८ ॥
हर घड़ी मन में मम कामना
बस यही अब है सुन तू प्रिये!
कब करूँ रण-ताण्डव शत्रु के
निकर में कर में करवाल ले ॥ ९ ॥
तुम विहार करो गतचिन्त हो,
सुमदिरा मदिराक्षि! पिया करो।
कर नहीं सकता मम इन्द्र भी
प्रकृति की कृति की प्रतिकूलता ॥ १० ॥

# हिन्दुस्तानी सिपाहियों की वीरता

(१)

हिन्दुस्तानी [illegible] इंच के दर्रे [illegible] इंच की ऊंचाई में [illegible] पत्थर के बहुत बड़े-बड़े [illegible] लिए का मैदान है। उसी [illegible] आक्रमणकारी [illegible] शत्रु [illegible] शत्रु न हो तो [illegible] सुख से इस पत्थर के अड़ंगों तथा सिपाहियों के [illegible] मन में आजादी के बचन न खिलने होंगे! [illegible] शायद अभी तक केवल अंग्रेजों में घुसा है। परन्तु [illegible] के पाठकों को इसके पढ़ने की आवश्यकता होगी। इस [illegible] वर्णन के आधार पर यह लेख लिखा गया है।

२७ मई की पल्टन पन्द्रहवें की सबसे पहली [illegible] है। इसमें दो कम्पनियां सिखों की, दो डोगरा राजपूतों [illegible] दो पठानों मुसलमानों की और दो पश्चिमोत्तर [illegible] के पहाड़ी पठानों की हैं। एक कम्पनी में सौ से [illegible] अधिक जवान होते हैं। आज कल यह ब्रिगेड [illegible] में युद्ध कर रही है। जब से यह रणक्षेत्र में पहुँची [illegible] से जिस जिस लड़ाई में इसे लड़ना पड़ा है [illegible] इसने अपनी वीरता दिखाई है। परन्तु २१ अगस्त से [illegible] मई तक इंचर की भयङ्कर लड़ाई में जो काम इसने [illegible] दिखाया उसे सुन कर बहादुर से भी बहादुर पल्टनों को [illegible] हिला कर उसकी तारीफ़ करनी पड़ेगी।

इस पल्टन की वीरता का वर्णन करने के पहले [illegible] सम्बन्धी कई बातों का कुछ विवरण लिखना इसलिए [illegible] एक है, कि उन्हें जाने बिना पाठक आगे लिखी हुई [illegible] को पूरी तरह न समझ सकेंगे।

अब वह समय गया जब सिपाही

हो

र अपनी जगह पर आ जाती है। इस टुकड़ी आने पहली नहीं कि पहली टुकड़ी आगे बढ़ने लगी। इस तरह बढ़ने से एक तो सिपाहियों का दम टूटता, दूसरे दुश्मन की फ़ौज का ध्यान बँट जाता और हमला करने वालों की ओर से शत्रुओं पर बराबर गोली चलती रहती है। यद्यपि २७ नं० ने इसी प्रकार धीर बहादुरी के साथ पहली मंज़िल तै कर ली, उसके बहुत से आदमी गिर गये। जर्मन लोगों ने लिया कि फ़ौज आ रही है; इनके गोलन्दाज़ों को का ज्ञान भी ठीक ठीक हो गया। इस कारण गोलियों गोलों की बौछार बेचारे हिन्दुस्तानी सिपाहियों पर लगी। तो भी गनीमत थी। २०० गज़ के अन्त में ऊँची धरती पर पहुँचे तब शत्रुओं को वे स्पष्ट दिखाई ने। इस समय जर्मनों की अग्नि-वर्षा ने महा भयङ्कर रूप किया। तोपों के गोलों के धमाकों से कान फटने गोलियाँ तो मूसलाधार गिरने लगीं। जो गोले सिपाहे पास आकर गिरते उनसे किसी किसी के चिथड़े ने—किसी का हाथ, किसी का पैर उड़ जाता। कोई सैन डर कर न जाने कहाँ जा गिरता। गोलियों की सिपाही धड़ाधड़ गिरने लगे। ऐसा मालूम होने के प्रलय हो रही है। परन्तु धन्य है २७ नं० के हों को! एक भी सिपाही नहीं कतराया। वे लोग रों के समान आगे बढ़ते ही गये।

०० गज़ की दूरी पर ज़मीन नीची थी। बचे बचाये जो वहाँ पहुँचे तो क्या देखते हैं कि कमाण्डिंग मेजर विलास घायल हो गये हैं, कप्तान रेडफ़ार्ड फ़ील्ड बेलट्रिज गोलों के फूटने से निकली हुई ज़हरीली बेहोश हो गये हैं, कप्तान माहन के पैर में चोट लग । परन्तु, तो भी, वे आगे बढ़ते ही गये।

भी तक जो रास्ता पार हुआ था वह कितना कठिन बताया जा चुका है। परन्तु अन्त के छः सौ गज़ ी भयङ्कर थे। पञ्जाबी सिपाही आगे बढ़ते ही गये गिरते-पड़ते, मरते-मारते, जर्मन-खाइयों से केवल ८० दूरी पर जा पहुँचे। एक झपट और कर पाते तो खाइयों पर वे कूद ही जाते। फिर तो एक एक या एक एक पठान दस दस जर्मनों की ख़बर लेता। जर्मन लोग तलवार अथवा संगीन की लड़ाई में हिन्दुस्तानी फ़ौज के सामने नहीं ठहर सकते, यह बात सभी को विदित है। अतएव जब जर्मनों ने देखा कि संगीन गनों, तोपों और बन्दूकों द्वारा उन्हें नहीं रोक सकते तब उन्होंने एक अमानुषीय अस्त्र का प्रयोग किया, अर्थात् ज़हरीली गैस छोड़ी।

गैस छूटने के पहले २७ नं० का क्या हाल था, यह भी सुन लेना चाहिए। अँगरेज़ अफ़सरों में मेजर ह्यूहान, कप्तान मेक-काई और कप्तान मेन्कम् मारे गये थे। हिन्दुस्तानी अफ़सरों में सूबेदार बधावासिंह और जमादार कृपासिंह भी काम आये थे। सूबेदार फतहजंग बहादुर, जमादार अजागरसिंह, जमादार हयात ख़ाँ और जमादार काले ख़ाँ घायल होकर गिर गये थे। सिपाही कितने मारे गये या घायल हुए थे, इसकी संख्या लेखक को ज्ञात नहीं। परन्तु उस पल्टन का ज़ोर हो गया था, यह निश्चय समझना चाहिए। हर पल्टन में लड़ाई के समय १२ अँगरेज़ और १६ हिन्दुस्तानी अफ़सर रहते हैं। उनमें से उस हमले में कितने गये, इसकी भी ख़बर नहीं। अन्दाज़न अधिक से अधिक ४, ६ रह गये होंगे। अँगरेज़-अफ़सरों में केवल दो ऐसे बचे थे जो चल-फिर सकते थे। इनमें से कप्तान माहन घायल तो हो गये थे, परन्तु ज़िद करके साथ बने थे। लेफ़्टिनेन्ट हीडम भी बिना आघ खाये न बचे थे। उन्हें भी ज़हरीली गैस का ठसका बैठ गया था, परन्तु अपूर्व धैर्य के साथ वे गिरते गिराते एक झोंपड़ी में जा घुसे और ४, ५ सिपाहियों की सहायता से झोंपड़ी की आड़ से जर्मनों को मशीन गन की मार देने लगे। हिन्दुस्तानी अफ़सरों में भी केवल ३ बचे थे। वे भी थोड़ा बहुत घायल थे। इतने में शत्रुओं ने पूर्वोक्त अमानुषीय पेंच खेला। सिपाहियों के पास इस गैस से बचने का कोई उपाय न था। किसे आशा थी कि जर्मनों के सदृश सभ्य लोग आधुनिक धर्म-युद्ध की नीति के विरुद्ध इस नीच प्रयोग का उपयोग करेंगे! यदि अँगरेज़ी सेना के सिपाही दूर होते तो वहाँ तक पहुँचने में गैस का बल कुछ कम हो जाता। परन्तु २७ नं० के सिपाही केवल ८० गज़ की दूरी पर थे। उन्हें ताज़े से ताज़े गैस की तेज़ी सहनी पड़ी। इस गैस के नाक मुँह में जाने से जो कष्ट मनुष्यों तथा पशुओं को होता है उसका ठीक ठीक वर्णन करना बहुत कठिन है। उसका ठसका लगते ही गला घुटने, मुँह सूखने और जलन होने लगती है और

इस प्रकार मोर्चा तैयार करके सिपाही लोग खरगोशों के समान धरती के भीतर रहते हैं, वहीं खाना, पीना, सोना, उठना, बैठना आदि सब कामकाज होते हैं। बाहर निकलना यदि अत्यन्त आवश्यक हुआ तो बिलाव के समान ये लोग रात को निकलते हैं। दिन रात कुछ आदमी मेंड़ के छिद्रों से शत्रु को ताकते हुए बैठे रहते हैं। कोई कोई दूरबीन लगा कर भी देखा करते हैं। दुश्मन दिखाई देते ही सन्तरी लोग सिपाहियों को चेतावनी देकर मेड़ पर बुला लेते हैं। बस, फिर क्या पूछना है, शत्रु पर गोलियों की वर्षा आरम्भ कर दी जाती है। यदि वह पास पहुँच गया तो उस पर बम के गोले भी फेंके जाते हैं। जर्मन लोग बड़ा ही भ लगाने वाले मेज़बान और आदरसत्कार करने में कोई

ता० २१ अक्टोबर के दिन २७ नं० की पल्टन विलेट (बेरे) में शामिल थी। उस बेरे में दो एक गोरा पल्टन थी, जिसका नाम कानाट रेंजर्स पल्टन की दाहनी तरफ़ फ़रासीसियों का एक बेरा गोरा पल्टन की दाहनी ओर २७ नं० और उसके दा १२१ नम्बर जिलोपियों की पल्टन थी। इस प्रकार तीन का फ़ीरोज़पुर बेड़ा पूरा हुआ। उसकी दाहनी ओर विलेट था, जैसा कि नीचे के नक़्शे में बताया गया

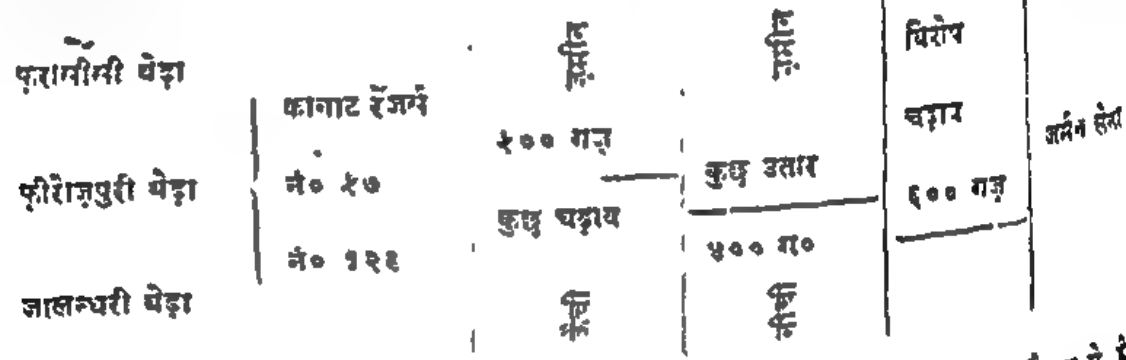


उस दिन नं० २७ को अन्य पल्टनों के साथ यह हुक्म हुआ कि सामने के जर्मन मोर्चों पर हमला करके जर्मन खाइयों को ले लो। हमला करने के पहले यह आवश्यक हुआ कि कुछ आदमी गुप्त रूप से जाकर सामने की ज़मीन को अच्छी तरह देख आवें, जिससे सिपाहियों को रवाना होने के पहले यह ज्ञात हो जाय कि किधर आड़ है, किधर बचाव हो सकता है और किधर नहीं हो सकता। परन्तु समय का अभाव होने के कारण यह काम न हो सका। अफ़सरों को इतना भी न मालूम था कि जर्मन लोगों की खाइयां किस विशेष जगह पर हैं। अनुमान से यह जाना गया कि प्रायः १२०० गज़ की दूरी पर जो पहाड़ियां हैं वहीं पर बहुत करके जर्मन लोग छिपे हुए हैं। अँगरेज़ी सेना के मोर्चे से ज़मीन का चढ़ाव ५०० गज़ तक देर पड़ता था। वहां से अन्दाज़न चार सौ गज़ का उतार था। वहां से फिर ६०० गज़ का चढ़ाव था। वह सब पार करने पर उन पहाड़ियों तक सिपाही पहुँच सकते थे। इस पन्द्रह सौ गज़ के चढ़ाव-उतार-युक्त मैदान में कोई भी जगह ऐसी न थी जहां दुश्मन के गोले-गोलियां बराबर न आ सकती हों। आड़ तो कहीं थी ही नहीं। ऐसे मैदान से ह बजाले में जाना मानो यमराज के दरबार में ह भेंट तुरन्त आने का निमन्त्रण देना था। ज की दूरी पार करना लोहे के चने चाबना था सौ गज़ की दूरी पार करके जर्मन फ़ौज को हमला करना किस प्रकार सम्भव था? ऐसे प्र के मन में उठ सकते हैं। परन्तु सिपाहियों निराला ही है। उन्हें अफ़सरों ने हुक्म दि तामील होनी चाहिए। यदि जलती आग में मिले तो सच्चा सिपाही बिना आनाकानी कूद पड़ेगा।

२७ नं० पल्टन के सिपाहियों ने झपट क सौ गज़ पार कर लिये। लड़ाई में जब कहीं कि किसी जगह झपट कर जाना होता है तब उसमें बन जाती है और वे बारी बारी से दौड़ती हुई टुकड़ी दौड़ कर १००—२० गज़ जाती है लेट कर दुश्मन पर गोली चलाना आरम्भ उतनी देर विश्राम भी कर लेती है। इतने में

अपनी जगह पर आ जाती है। इस टुकड़ी आगे अपनी टुकड़ी आगे निकल की तरह आगे बढ़ने से एक तो सिपाहियों का दम बचता, दूसरे दुश्मन की फ़ौज का ध्यान बँट जाता। इसका करने वालों की ओर से शत्रुओं पर बराबर गोली चलती रहती है। यद्यपि ४७ नं० ने इसी प्रकार बड़ी वीर बहादुरी के साथ पहली मंज़िल तै कर ली, तथापि बहुत से आदमी गिर गये। जर्मन लोगों ने देखा कि फ़ौज आ रही है; इनके गोलन्दाज़ों को इस का ज्ञान भी ठीक ठीक हो गया। इस कारण गोलियों गोलों की बौछार बेचारे हिन्दुस्तानी सिपाहियों पर होने लगी। तो भी ग़नीमत थी। ४०० गज़ के अन्त में ऊँची धरती पर पहुँचे तब शत्रुओं को ये स्पष्ट दिखाई देने लगे। इस समय जर्मनों की अग्नि-वर्षा ने महा भयङ्कर रूप धारण किया। तोपों के गोलों के धमाकों से कान फटने लगे, गोलियाँ तो मूसलाधार गिरने लगीं। जो गोले सिपाहियों के पास आकर गिरते उनसे किसी किसी के चिथड़े उड़ जाते—किसी का हाथ, किसी का पैर उड़ जाता। कोई क्षण भर खड़ा न जाने कहाँ जा गिरता। गोलियों की बाढ़ से सिपाही धड़ाधड़ गिरने लगे। ऐसा मालूम होने लगा कि प्रलय हो रही है। परन्तु धन्य है ४७ नं० के सिपाहियों को! एक भी सिपाही नहीं कतराया। ये लोग वीरों के समान आगे बढ़ते ही गये।

४०० गज़ की दूरी पर ज़मीन नीची थी। बचे बचाये सिपाही जो वहाँ पहुँचे तो क्या देखते हैं कि कमान्डिंग अफ़सर मेजर विलास घायल हो गये हैं, कप्तान रेडफ़ार्ड और लफ़्टेनेन्ट वेनब्रिज गोलों के फूटने से निकली हुई ज़हरीली गैस से बेहोश हो गये हैं, कप्तान माहन के पैर में चोट लग गई है। परन्तु, तो भी, वे आगे बढ़ते ही गये।

अभी तक जो रास्ता पार हुआ था वह कितना कठिन था यह बताया जा चुका है। परन्तु अन्त के छः सौ गज़ और भी भयङ्कर थे। पञ्जाबी सिपाही आगे बढ़ते ही गये और गिरते-पड़ते, मरते-मारते, जर्मन-खाइयों से केवल ८० गज़ की दूरी पर जा पहुँचे। एक झपट और कर पाते तो जर्मनों की खाइयों पर वे कूद ही जाते। फिर तो एक एक पञ्जाबी या एक एक पठान दस दस जर्मनों की ख़बर लेता। जर्मन लोग तलवार अथवा सँगीन की लड़ाई में हिन्दुस्तानी फ़ौज के सामने नहीं ठहर सकते, यह बात सभी को विदित है। अतएव जब जर्मनों ने देखा कि सँगीन गोलों, तोपों और बन्दूकों द्वारा उन्हें नहीं रोक सकते तब उन्होंने एक अमानुषीय अस्त्र का प्रयोग किया, अर्थात् ज़हरीली गैस छोड़ी।

गैस छूटने के पहले ४७ नं० का क्या हाल था, यह भी सुन लेना चाहिए। अँगरेज़ अफ़सरों में मेजर ह्यूहान, कप्तान मेक-काई और कप्तान वेन्कम् मारे गये थे। हिन्दुस्तानी अफ़सरों में सूबेदार बधावासिंह और जमादार कृपासिंह भी काम आये थे। सूबेदार फ़तहजंग बहादुर, जमादार उजागरसिंह, जमादार हयात ख़ाँ और जमादार काले ख़ाँ घायल होकर गिर गये थे। सिपाही कितने मारे गये या घायल हुए थे, इसकी संख्या लेखक को ज्ञात नहीं। परन्तु उस पल्टन का ओर हो गया था, यह निश्चय समझना चाहिए। हर पल्टन में लड़ाई के समय १५ अँगरेज़ और १६ हिन्दुस्तानी अफ़सर रहते हैं। उनमें से उस हमले में कितने गये, इसकी भी ख़बर नहीं। अन्दाज़न अधिक से अधिक ५, ६ रह गये होंगे। अँगरेज़-अफ़सरों में केवल दो ऐसे बचे थे जो चल-फिर सकते थे। उनमें से कप्तान माहन घायल तो हो गये थे, परन्तु ज़िद करके साथ बने थे। लफ़्टिनेन्ट हीडम भी बिना आँच खाये न बचे थे। उन्हें भी ज़हरीली गैस का ठसका बैठ गया था; परन्तु अपूर्व धैर्य के साथ वे गिरते गिराते एक झोंपड़ी में जा घुसे और ४, ५ सिपाहियों की सहायता से झोंपड़ी की आड़ से जर्मनों को सँगीन गन की मार देने लगे। हिन्दुस्तानी अफ़सरों में भी केवल ३ बचे थे। वे भी थोड़ा बहुत घायल थे। इतने में शत्रुओं ने पूर्वोक्त अमानुषीय पेंच खेला। सिपाहियों के पास उस गैस से बचने का कोई उपाय न था। किसे आशा थी कि जर्मनों के सदृश सभ्य लोग आधुनिक धर्म-युद्ध की नीति के विरुद्ध इस नीच प्रयोग का उपयोग करेंगे! यदि अँगरेज़ी सेना के सिपाही दूर होते तो वहाँ तक पहुँचने में गैस का बल कुछ कम हो जाता। परन्तु ४७ नं० के सिपाही केवल ८० गज़ की दूरी पर थे। उन्हें ताज़े से ताज़े गैस की सेंक सहनी पड़ी। इस गैस के नाक मुँह में जाने से जो कष्ट मनुष्यों तथा पशुओं को होता है उसका ठीक ठीक वर्णन करना बहुत कठिन है। उसका ठसका लगते ही गला घुटने, मुँह सूखने और जलन उठने लगती है और

प्राणी हाथ पैर पछाड़ कर धरती पर गिर पड़ता है। यदि गैस तेज़ अथवा ताज़ी हुई तो गला घुट कर प्राण निकल जाते हैं। यदि गैस से कोई मरा नहीं तो औषध सेवन करने पर भी अच्छे होने में कई हफ़्ते लग जाते हैं। बीमारी की दशा में भी मरीज़ का कष्ट असहनीय होता है।

इस आपत्ति से बचने के लिए अब तो सिपाही एक पट्टी और एक विशेष औषध से तर रुई की गद्दी रखते हैं। परन्तु उस समय इस प्रकार का कोई प्रबन्ध न था।

नं० ५७ पल्टन में एक तो अफ़सरों की कमी थी, दूसरे आदमी भी बहुत कम बचे थे, तीसरे इस पैशाचिक गैस का सामना करना पड़ा! आफ़त पर आफ़त! गला घुटने लगा। इस कारण बेहोश हो कर बचे खुचे आदमी धड़ाधड़ गिरने लगे। उनके बाईं तरफ़ जो गोरा पल्टन तथा फ़रासीसी बेड़ा बढ़ रहा था उसे भी गैस के कारण बहुत हानि उठा कर लौटना पड़ा। पंजाबियों का वहाँ रहना अब व्यर्थ था। लाचार हो कर नं० ५७ को भी अपने असीम पराक्रम का फल, जो प्रायः मिलने ही को था, छोड़ कर लौटना पड़ा। रास्ते में मुर्दों तथा घायलों के ढेर के ढेर उन्हें छोड़ने पड़े।

नं० ५८ के जमादार मीर दोस्त ने (जो खाइयों की रक्षा के लिए पीछे छोड़ दिये गये थे) देखा कि घायल पीछे रह गये हैं और उन्हें गैस के कारण असह्य कष्ट हो रहा है। यह उनसे न देखा गया। बचे खुचे सिपाही, जो लौट कर आये थे, गैस के मारे तड़फड़ा रहे थे। उनमें कुछ ऐसे भी थे जिन पर गैस ने कम असर किया था। उन्हें दवा आदि सुँघाने पर जब होश आया तब उन्हें मीर दोस्त ने अपने साथ चलने को कहा और उनकी सहायता से घायल अफ़सरों तथा सिपाहियों को उठा लाने का काम उन्होंने आरम्भ किया। उन्होंने उन पर भी गोली चलाना आरम्भ किया। मीर दोस्त को चोट भी लगी, परन्तु उन्होंने इस काम को न छोड़ा। खोज खोज कर वे घायलों को लाते रहे। इस विलक्षण बहादुरी के उपलक्ष में जमादार साहिब सूबेदार बनाये गये और उन्हें विक्टोरिया क्रास का प्रतिष्ठा चिह्न मिला।

[illegible] की बहादुरी देखिए। [illegible] के अंग्रेज़ी सिपाही [illegible] के घेरे पर, हमले के आरम्भ में ही, एक [illegible] था। उसने बहुत [illegible] जा रहा था; परन्तु उसका कप्तान साहिब के [illegible] हुक्म था। सो वह अपने घाव की परवा न करके पीछे पीछे बना रहा। परन्तु बहुत रक्त बह जाने से वह धीरे धीरे बलहीन होता जाता था। इतने में साहिब मारे गये। तब वह सिपाही उनकी लाश पर लाद कर डेरे की ओर लौटा। परन्तु निर्बलता के कारण बहुत दूर न जा सका। लाश उतारनी पड़ी। तलवार आदि लेकर वह गिरता पड़ता डेरे पर पहुँचा। सेवक मानसिंह को भी एक विशेष तमग़ा दिया गया।

जमादार मङ्गलसिंह की भी बात सुन लीजिए। [illegible] का ठोकर लगने से वे बेहोश होगये और [illegible] मैदान में ही पड़े रह गये। जमादार मीर दोस्त [illegible] उठा लाये। परन्तु ज्योंही उन्हें होश आया कि [illegible] दुख भूल गये और झट कर दूसरों की सहायता [illegible] लिए लौट गये। वे स्वयं बड़े कष्ट में थे, परन्तु [illegible] न करके दूसरों की चिन्ता करते रहे। इस [illegible] भी दूसरे दर्जे के आर्डर आफ़ मेरिट का तमग़ा [illegible] अँगरेज़-अफ़सरों में कप्तान साहिब तथा लफ़्टेनेंट [illegible] वीरता का वर्णन हम कर चुके हैं। लफ़्टेनेंट मीन ने [illegible] पराक्रम दिखलाया। इनका काम केवल यह था [illegible] बढ़ते हुए सिपाहियों को गोली-बारूद पहुँचाने [illegible] इस पर भी साफ़ साफ़ कर निशाना जमाने [illegible] गोलियों की परवा न करके ये अपना काम करते [illegible] में जब देखा कि अँगरेज़ अफ़सर गिर गये तब आप [illegible] सिपाहियों के साथ हमले में ये भी शामिल हो [illegible] जब इन्हों ने देखा कि गोली-बारूद देने का [illegible] शिथिल होगया है तब दौड़ कर उसका प्रबन्ध [illegible] यह ठीक हो गया कि दौड़ कर गिर पड़ने लगे। [illegible] का उत्साह दिलाने के कारण इन्हें भी मिलिटरी [illegible] तमग़ा मिला है।

यहीं पर ४७ नं० पल्टन के वीर पुरुषों की [illegible] समाप्त होती है। इस युद्ध में हिन्दुस्तानी [illegible] काम कर दिखाये हैं। अँगरेज़ी, फ़रासीसी, [illegible] सेनाओं की बहादुरी पल्टनों ने भी ऐसे ऐसे [illegible] कर दिखलाये हैं कि अब उनका इतिहास लिखने [illegible] लिखेंगी तब सारी पृथ्वी पर उनका यश गूँज

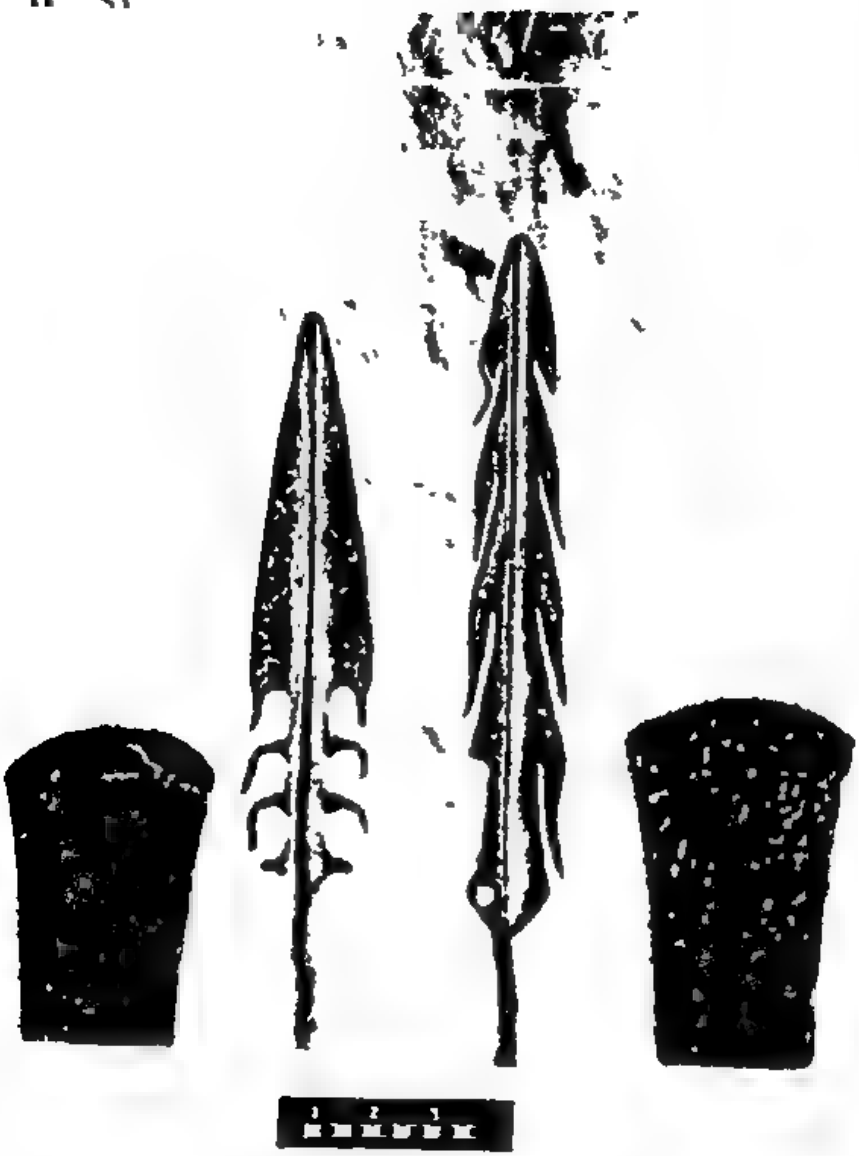

ताबे के प्राचीन बरछे और कुल्हाड़ियां।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

ी अशा है कि उन प्रसिद्ध वीरता सूचक घटनाओं में हिन्दुस्तानी पल्टनों के बहुतेरे कार्यों का वर्णन भी । होगा ।

१० २७ ने ऐसा विलक्षण धैर्य, ऐसी अतुल वीरता, ऐसी ान्ति और सेना-सम्बन्धिनी ऐसी आज्ञाकारिता का ण दिखाया है कि उसके समान दूसरा उदाहरण इतिहास में भी मिलना कदाचित् कठिन होगा। पल्टन ने ईरान की लड़ाई में अपना प्रायः सर्वनाश लिया है। पञ्जाब और सीमा-प्रान्त के सैकड़ों घरों ख़ाली गया होगा। न जाने कितनी औरतें विधवा ाई होंगी। कितने बालक अनाथ हो गये होंगे कितनी माताओं को पुत्र-शोक सहना पड़ा होगा। इन वीर पुरुषों ने स्वार्थ नहीं देखा, केवल यश के अपने प्राण होम दिये। उन्होंने सच्चा क्षत्रिय-धर्म ाहा। उन्होंने हिन्दुस्तानियों का नाम उज्ज्वल कर दिया और जगत् को यह दिखा दिया है कि इस देश के निवासी पड़ने पर क्या कर सकते हैं और क्या करने की हिम्मत । है। यदि इस देश के वासी उनके गुणों का अनुकरण और अपने छोटे छोटे बच्चों को उनकी वीरत्व-सूचक ें सुना कर उन्हें वैसा ही वीर बनाने की चेष्टा करें, तो यह कहेंगे कि इन सिपाहियों के प्राण व्यर्थ नहीं गये, या जो घायल हो गये उन्होंने अपने घावों का कष्ट व्यर्थ । भोगा ।

लज्जाशङ्कर झा ।

---

# कोर्ट आव् वार्ड्स ।

[ २ ]

## प्रबन्ध ।

कोर्ट आव् वार्ड्स के समस्त अधिकार बोर्ड आव् रेविन्यू को प्राप्त हैं। बोर्ड के अफ़सर कमिश्नरों की मारफ़त प्रत्येक ज़िले का काम ज़िले के हाकिम से लेते हैं या उसकी निगरानी में कोर्ट के मैनेजर से कराते हैं। इस प्रकार प्रत्येक ज़िले का काम ज़िले के हाकिम ही के ताल्लुक़ होता है। काम का प्रबन्ध दो तरह होता है। एक प्रबन्ध "स्पेशल स्कीम" कहाता है। उसमें ज़िले के हाकिम की सहायता के लिए एक मैनेजर दिया जाता है। उस मैनेजर को निश्चित अधिकार प्राप्त रहते हैं। दूसरा प्रबन्ध "आर्डिनेरी स्कीम" कहाता है। उसमें समस्त अधिकार ज़िले के हाकिम के ही हाथ में रहते हैं। मालगुजारी वसूल करने इत्यादि की देख भाल के लिए उसे एक असिस्टेंट मैनेजर दिया जाता है। पहला "स्कीम" बड़े बड़े इलाक़ों में या ऐसे ज़िले में जारी होता है जहाँ अनेक इलाक़े मिल कर एक बड़े इलाक़े के बराबर हो जाते हैं। प्रायः १½ या २ लाख वार्षिक आमदनी तक के इलाक़ों में "आर्डिनेरी स्कीम" जारी होता है। आमदनी इससे अधिक होने से "स्पेशल स्कीम" का आश्रय लिया जाता है। पर कभी कभी इसके प्रतिकूल भी कार-रवाई होती है। जिस ज़िले में कोर्ट की आमदनी बहुत ही कम होती है वहाँ असिस्टेंट मैनेजर भी नहीं दिया जाता। काम की देख भाल सरकारी अमलों ही को करनी पड़ती है।

ज़िले के हाकिम से लेकर बोर्ड तक जो देख-भाल होती है उसको श्रेष्ठ निरीक्षण अर्थात् "सुपी-रियर सुपरविज़न" कहते हैं। इस निरीक्षण, निगरानी या देख-भाल के लिए जो अमले या अफ़सर रहते हैं उनका ख़र्च निकालने के लिए कोर्ट आव् वार्ड्स कर लगाता है। यह कर हर साल समस्त इलाक़ों की आमदनी के अनुसार घटा बढ़ा करता है। परन्तु आर्डिनेरी स्कीम में ५) सैकड़ा और स्पेशल स्कीम में ३) सैकड़ा से अधिक नहीं हो सकता। आज कल यह कर आर्डिनेरी स्कीम में २½ और स्पेशल स्कीम में १½ रुपया सैकड़ा के लगभग लिया जाता है। कोर्ट आव् वार्ड्स इस बात की जाँच-पड़ताल करता रहता है कि प्रबन्ध का ख़र्च आवश्यकता से अधिक न हो जाय। यह शायद ही कभी ऐसा ख़र्च स्वीकार करता है जो सब मिला कर १०) सैकड़ा से अधिक हो जाय।

## बजट का चिट्ठा।

अंग्रेज़ी-राज्य की सुव्यवस्था के लिए कोर्ट आव् वार्ड्स प्रत्येक रियासत के लिए बजट का चिट्ठा तैयार कराता है। उसकी पूरी छानबीन होती है। जब तक कोई सूबे इस बजट में दर्ज करके पेशी से मंज़ूर नहीं करा लिया जाता तब तक उसे करने का अधिकार किसी को नहीं होता। अंग्रेज़ी अमलदारी में इस बजट का कुल सूबे मिलने के सभी इलाकों पर, उनकी आमदनी के अनुसार, बाँट दिया जाता है। तब उस बाँटी हुई रक़म के आधार पर प्रत्येक इलाके का एक और बजट बनता है। जब वह भी मंज़ूर हो जाता है तब उसका सूबे होता है। इस बजट में कोर्ट आव् वार्ड्स तब तरह के सूबे दर्ज करा देता है। जैसे बाढ़ का सूबे, मुक़दमों का सूबे, मकानात बनाने का सूबे, इत्यादि। इससे इस बात का भी अनुमान हो जाता है कि वर्ष में कितनी आमदनी होगी।

अब बजट बनाने का रिवाज उन रियासतों में भी हो गया है जो कोर्ट के अधीन नहीं हैं। बजट बनाना सुगम बात नहीं। ऐसा बजट बनाने में, जिसके बदलने की साल भर आवश्यकता न हो, बड़ी दूरदर्शिता की आवश्यकता है। अनेक ज़मींदारों को यह तो ज्ञात रहता है कि उनके इलाके की वार्षिक निकासी कितनी है, परन्तु उस निकासी को वार्षिक आमदनी समझ लेना भूल है। साल में कुछ न कुछ घटी-बढ़ी लगी ही रहती है। लगान में इज़ाफ़ा होता है; फ़सल बिगड़ जाती है; लगान वसूल नहीं होता—इत्यादि। इन सब बातों पर विचार करके और मौसम की दशा देख कर यह अनुमान करना पड़ता है कि इस वर्ष इतनी आमदनी हो सकेगी। ख़र्च का ठीक ठीक अनुमान करना तो और भी कठिन है। क्योंकि अमलों (नौकर-चाकरों) को छोड़ कर और सारे ख़र्च अनियमित होते हैं। यथा—इसका अन्दाज़ करना कि अमुक [illegible]

मुक़दमा कहाँ तक होगा और उसमें कितने रुपये निकल जायँगे। ऐसे ऐसे अनेक प्रश्नों का हल करना पड़ता है। इस दशा में कोई बजट ठीक ठीक बनना तो दूर रहा, अनुमान तक ठीक होना कठिन है। और और बातों को छोड़ कर कोर्ट आव् वार्ड्स के अधीन इलाकों के बजटों की ओर ही दृष्टि डालिए। स्वाधीन इलाकों के बजटों की ओर तो इलाकों में दो ही चार बजट बनता हो नहीं, और इलाका अगर हुआ भी तो देखा जाता है कि उसके अनुसार एक दिन भी काम नहीं हो सकता। बहुत-से ऐसे इलाके देखे हैं जिनमें साल भर बजट के अनुसार ही काम होता।

परन्तु बालक में बजट बड़ा उपयोगी [illegible] है। बिना उसके गैबेरी कोठरी में हाथ डालना जहाँ मैनेजर मुक़र्रर है और मालिक के हाथ केवल देख-भाल है वहाँ तो बजट ही के सहारे की देख-भाल हो सकती है। मैनेजर इलाके आमदनी और ख़र्च का बजट देता है। तदनु ही उसे ख़र्च करने का अधिकार दे दिया [illegible] है। उससे अधिक वह नहीं ख़र्च कर सक मालिक का काम केवल इतना रह जाता देखता रहे कि उससे अधिक ख़र्च तो मैनेजर कर रहा। आमदनी का भी यही हाल है। जि दर्ज की गई आमदनी का ज़िम्मेदार भी मैनेजर उसे उतनी आमदनी करनी ही चाहिए। उसमें होने पर मालिक को यह देखना चाहिए कि के जो कारण मैनेजर बताता है वे ठीक हैं या और उसे पूरा करने का क्या उपाय है। ऊपर बता चुके हैं कि कोर्ट आव् वार्ड्स, अमलों के के लिए, प्रति वर्ष कर लगाता है। जिन इलाक़े प्रबन्ध ज़मींदार ख़ुद करता है उनमें, "प्राइवेट" रियासतों में, यह कर नहीं लगता

## डेट अर्थात् हिसाब-किताब की जाँच।

कोर्ट आव् वार्ड्स बड़े बड़े इलाक़ों के हिसाब की जाँच-पड़ताल के लिए और अधिकांश यह देखने के लिए कि कोई अमला या नौकर बेईमानी से रुपया तो नहीं लेता, हर साल एक आडिटर, अर्थात् जाँच करने वाला, भेजता है। यदि उसे कुछ गड़बड़ मिलती है तो वह बता देता है। उसका प्रबन्ध हो जाता है। सरकारी आडिटरों की फ़ीस, मालगुज़ारी निकाल कर, आमदनी पर ॥) सैकड़ा होती है। आडिटर लोग एक में तीन चार महीने का हिसाब बड़ी बारीकी से देखते हैं। यदि उसमें कुछ गड़बड़ पाते हैं तो और देखते हैं—नहीं तो नहीं। प्राइवेट अर्थात् मालिक के प्रबन्धाधीन रियासतों में अब तक इस जाँच का प्रचार नहीं है। अतएव यह रुपया भी बचत रहता है। परन्तु यह बचत न करना ही अच्छा है। क्योंकि जाँच से मालिक को अपने मैनेजर के काम का पूरा पूरा हाल ज्ञात होता रहता है। अब अनेक लोग मित्र के तौर पर भी आडिटरों का काम करने लगे हैं। उनको सरकार से ऐसा करने के सर्टिफ़िकट मिले हैं। क्या ही अच्छा हो यदि प्राइवेट रियासतें भी इन लोगों से काम लें। इससे रियासतों की धार्मिक उन्नति या अवनति का ठीक ठीक पता उन्हें लग सकता है। यह काम थोड़े ख़र्च से हो सकता है। आज कल प्राइवेट रियासतों में बहुत दग़ाबाज़ी होती है। यह इस जाँच से अधिक बन्द हो सकती है। एक ही आडिटर से हर साल जाँच कराने की अपेक्षा नये नये आडिटर को बुलाना अच्छा है। रियासत के मुस्तक़िल नौकरों की कारगुज़ारी का असर नये आदमी पर कम पड़ेगा और मालिक को सच्चा हाल ज्ञात हो जायगा। आडिटर किसी नामी कम्पनी का आदमी होना चाहिए और उसकी रिपोर्ट पर मालिक को पूरा पूरा ध्यान देना चाहिए। यह काम मैनेजर के सिपुर्द न करना चाहिए। क्योंकि आडिटर की रिपोर्ट में मैनेजर ही के काम की जाँच का उल्लेख रहता है। ऐसा न करने से आडिटर को दिया गया ख़र्चा व्यर्थ जाता है। आडिटर की रिपोर्ट मालिक के इत्मीनान के लिए होती है और सब कहीं ख़ुफ़िया समझी जाती है।

आडिटर के ख़र्च के सिवा पोस्टेज का ख़र्च, फ़ारमों आदि की छपाई और स्टेशनरी (काग़ज़, क़लम, दावात आदि) का ख़र्च भी इसी प्रबन्ध के लिए निकाले गये रुपये से होता है। ज़िले के दफ़्तर का किराया, डाक ले जाने वाले हरकारों की तनख़्वाह और मैनेजर के दफ़्तर के पंखाकुली आदि का ख़र्च तथा उनका सफ़र-ख़र्च भी इसी मद से होता है। प्राइवेट रियासतें, दफ़्तर के किराये, डाक के ख़र्च (क्योंकि रियासतों में बेगारी, या बलहर, या गुड़ैत यह काम करते हैं) और मैनेजर के दफ़्तर के गर्मी के मौसम के ख़र्च से बरी होती हैं।

## सदर-ख़र्च।

जैसा ऊपर लिखा जा चुका है, कोर्ट, आव् वार्ड्स प्रबन्ध-सम्बन्धी कुल ख़र्च को १०) सैकड़ा से बढ़ने नहीं देता। प्राइवेट रियासतों में थेउ निरिक्षण या निगरानी (सुपीरियर सुपरविज़न) का ख़र्च नहीं। ऊपर गिनाये हुए ख़र्च भी उन्हें नहीं करने पड़ते। इस दशा में हमारी राय है कि उनके सदर दफ़्तर का ख़र्च दो या ढाई रुपया सैकड़ा होना चाहिए। तफ़सील यह है—

मैनेजर की तनख़्वाह और सफ़र-ख़र्च ॥) सैकड़ा से ॥।) तक।

बाक़ी अमलों की तनख़्वाह ॥) सैकड़ा से ॥।) तक।

आडिटर का ख़र्च ॥) सैकड़ा से ॥।) तक।

अन्य ख़र्च ।) सैकड़ा।

इसका टोटल निकालो तो २) सैकड़ा से—२॥) तक हुआ।

थोड़ी तनख़्वाह के नौकर रखना बड़ी भूल है। ऐसे नौकरों के कारण अनेक रियासतें अधोगति को प्राप्त हो गई हैं। थोड़ी तनख़्वाह के आदमी ईमानदारी से अपना निर्वाह नहीं कर सकते। इसका बराबर ध्यान

## बजट या चिट्ठा।

जाँच-परताल की सुगमता के लिए कोर्ट आव् वार्ड्स प्रत्येक ज़िले के ख़र्च का बजट या चिट्ठा तैयार कराता है। उसकी ख़ूब छान-बीन होती है। जब तक कोई ख़र्च इस बजट में दर्ज करके बोर्ड से मंज़ूर नहीं करा लिया जाता तब तक उसे करने का अधिकार किसी को नहीं होता। स्पेशल स्कीम में इस बजट का कुल ख़र्च ज़िले के सभी इलाक़ों पर, उनकी आमदनी के अनुसार, बाँट दिया जाता है। तब उस बँटी हुई रक़म के आधार पर प्रत्येक इलाके का एक और बजट बनता है। जब वह भी मंज़ूर हो जाता है तब रुपया ख़र्च होता है। इस बजट में कोर्ट आव् वार्ड्स सब तरह के ख़र्च दर्ज करा देता है। जैसे वार्ड का ख़र्च, मुक़द्दमों का ख़र्च, मकानात बनाने का ख़र्च, इत्यादि। इससे इस बात का भी अनुमान हो जाता है कि वर्ष में कितनी आमदनी होगी।

अब बजट बनाने का रिवाज उन रियासतों में भी हो गया है जो कोर्ट के अधीन नहीं हैं। बजट बनाना सुगम बात नहीं। ऐसा बजट बनाने में, जिसके बदलने की साल भर आवश्यकता न हो, बड़ी दूरदर्शिता की आवश्यकता है। अनेक ज़मींदारों को यह तो ज्ञात रहता है कि उनके इलाके की वार्षिक निकासी कितनी है, परन्तु उस निकासी को वार्षिक आमदनी समझ लेना भूल है। साल में कुछ न कुछ घटी-बढ़ी लगी ही रहती है। लगान में इज़ाफ़ा होता है; कृषक भाग जाता अथवा मर जाता है; फ़सल बिगड़ जाती है, लगान वसूल नहीं होता—इत्यादि। इन सब बातों पर विचार करके और मौसम की दशा देख कर यह अनुमान करना पड़ता है कि इस वर्ष इतनी आमदनी हो सकेगी। ख़र्च का ठीक ठीक अनुमान करना तो और भी कठिन है। क्योंकि अमलों (नौकर-चाकरों) को छोड़ कर और सारे ख़र्च अनियमित होते हैं। यथा—इसका अन्दाज़ करना कि अमुक वर्ष अमुक मुक़द्दमा लड़ना पड़ेगा और उसमें इतना ... विवाह आदि के इतने न्योते देने पड़ेंगे, ... नान पर इतना ख़र्च पड़ेगा—बड़ी ... काम है। इस दशा में यदि बजट ठीक ठी बनता तो या तो उसके अनुसार काम ... होना या उसे रोज़ रोज़ बदलना पड़ता। कोर्ट आव् वार्ड्स के अधीन इलाक़ों के ... यह दशा है तब अपने ही अर्थात् निज ... स्वाधीन इलाक़ों के बजटों की कौन ... इलाक़ों में या तो बजट बनता ही नहीं, ... इलाक़ा ऋणी हुआ तो ऐसा कड़ा बजट ... जाता है कि उसके अनुसार एक दिन भी ... हो सकता। कदाचित् ही कुछ इलाक़े ... जिनमें साल भर बजट के अनुसार ही ... होगा।

परन्तु वास्तव में बजट बड़ा उपयोगी ... है। बिना उसके अँधेरी कोठरी में हाथ ... जहाँ मैनेजर मुक़र्रर है और मालिक के ... केवल देख-भाल है वहाँ तो बजट ही के ... की देख-भाल हो सकती है। मैनेजर ... आमदनी और ख़र्च का बजट देता है। ... ही उसे ख़र्च करने का अधिकार दे दि ... है। उससे अधिक वह नहीं ख़र्च कर ... मालिक का काम केवल इतना रह जा ... देखता रहे कि उससे अधिक ख़र्च तो मैने ... कर रहा। आमदनी का भी यही हाल है ... दर्ज की गई आमदनी का ज़िम्मेदार भी मै ... उसे उतनी आमदनी करनी ही चाहिए। उ ... होने पर मालिक को यह देखना चाहिए ... के जो कारण मैनेजर बताता है वे ठीक ... और उसे पूरा करने का क्या उपाय है। ऊपर ... बता चुके हैं कि कोर्ट आव् वार्ड्स, ... के लिए, प्रति वर्ष कर लगाता है। ... प्रबन्ध ज़मींदार ख़ुद करता ... "प्राइवेट" रियासतों में यह कर ... बचत में जाता है।

दान के बदले कोर्ट आव वार्ड्स ने प्रावीडेंड जारी कर रक्खा है। उसमें १०) से ऊपर ६ पानेवालों को ~) फ़ी रुपया हर महीने देना पड़ता है। कोर्ट उसमें ~)॥ रुपया अपने पास से कर डाकख़ाने में जमा करा देती है, या किसी बैंक आदि में रख देती है। वहाँ वह रुपया सूद से बढ़ा करता है। नौकरी छोड़ने के समय सारा रुपया ब्याज समेत नौकरों को मिल जाता है। नौकरी छोड़ने पर बुढ़ापे में कर्म्मचारियों को सहारा मिलता है।

प्राइवेट रियासतों में भी इस फंड के जारी किये जाने की आवश्यकता है। इससे उनको अच्छे नौकर भी मिलने में सुभीता होगा और बुड्ढों को मरते दम तक, बल्कि उनकी सन्तान को पुश्त-दर-पुश्त, पेंशन लायक़ हों चाहे नालायक़—नौकर रखने की आवश्यकता न रह जायगी। इसमें बहुत ख़र्च ज़रूर नहीं। परन्तु कर्म्मचारियों को इससे बड़ा सहारा मिलता है।

## कोर्ट आव् वार्डस का असर।

नाबालिग़ ज़मींदारों, अर्थात् वार्डों, को नियत किया रुपया ख़र्च के लिए मिलता है। उससे अधिक न तो वे कोर्ट से पाते हैं और न उन्हें कोई मिलता है। अतः लाचार हो कर उन्हें अपना ख़र्च कम करना पड़ता है। जो कुछ उन्हें मिलता है उसीसे उन्हें अपना काम चलाना पड़ता है। इसका असर उनकी आदतों और व्यवहारिक बातों पर पड़ना चाहिए। मनमाना ख़र्च करने की लालसा रोकने से फ़िज़ूलख़र्ची की आदत कम हो जानी चाहिए। पर कुछ समझदार वार्डों को छोड़ कर औरों के विषय में यह बात प्रायः नहीं देखी जाती। कोर्ट से मनमाना रुपया न पा कर वे मन ही मन दुखी होते हैं और कोर्ट से झगड़ा बखेड़ा खड़ा करने की कोशिश करने लगते हैं। इस प्रकार वे बहुत कुछ ख़र्च भी करते हैं।

अधिकांश वार्डों को अवसर न मिलने से बड़ा कष्ट होता है। वे सदा ही किसी न किसी बहाने कोर्ट से रुपया झटका करते हैं और उसी मनुष्य को अपना मित्र समझते हैं जो उनको रुपया दिलाता है। ऐसे वार्ड मैनेजरों से प्रायः अप्रसन्न रहते हैं। क्योंकि रुपया न मिलने का एक मात्र कारण वे मैनेजर ही को समझते हैं।

बहुत कम उम्र के शिशु-वार्डों पर भी कोर्ट का कुछ अच्छा असर नहीं पड़ता। निज के नौकरों का प्रबन्ध उन्हीं के हाथ में होने से ख़ुशामदी नौकर उनके चारों ओर एकत्र हो जाते हैं। वे उनके मन में लड़कपन ही से अहङ्कार का बीज बो देते हैं और बुरी आदतों में फँसा देते हैं। फ़िज़ूलख़र्ची का स्वभाव भी अल्पवय ही से ये डाल देते हैं। इस कारण वे कोर्ट के समय ही में, इलाक़ा कोर्ट से छूटने पर रुपया देने का वचन देकर, ऋण लेने लगते हैं। फल यह होता है कि कोर्ट छूटने के थोड़े ही दिन बाद रियासत पर इतना ऋण हो जाता है कि फिर भी रियासत कोर्ट में आजाती है।

लेखक की राय है कि बहुत ही छोटी उम्र के शिशु-वार्डों के लिए छोटी तनख़ाह वाले निरीक्षक (गारजियन) नियत न होने चाहिए। वार्ड की देख-भाल का भार या तो मैनेजर ही के ऊपर रक्खा जाया करे, या कुछ वार्डों को एकत्र करके उन सबके लिए एक ही स्थान पर एक अच्छी तनख़ाहवाला निरीक्षक (गारजियन) नियत किया जाया करे। यह प्रबन्ध बहुत अच्छा है। मैनेजर या निरीक्षक को वार्ड के नौकरों पर पूरा अधिकार होना चाहिए और यह नियम हो जाना चाहिए कि जहाँ तक सम्भव हो वार्ड के पास उसी के इलाक़े के नौकर न रक्खे जायँ। इस तरह के नौकर प्रायः लाभ के लोभ में वार्डों को पहले ही से बिगाड़ते हैं। इलाक़े ही के निवासी होने के कारण ये वार्डों से डरते भी रहते हैं। इस कारण ये बुरी आदतों से उन्हें रोक भी नहीं सकते। जहाँ तक सम्भव हो छोटी उम्र के वार्डों के पास वृद्ध और पुराने नौकर रखना अनुचित।

कोर्ट का असर रिआया पर बहुत ही अच्छा पड़ता है। हर कोर्ट के ज़माने में लूट रहती है

ने का भय भी विशेष नहीं होता। वे उतना काम नहीं कर सकते जितना अच्छी शिक्षा पाये हुए ग कर सकते हैं। क्योंकि उनको उतनी लियाक़त नहीं होती। कहीं कहीं दीवान साहब की तनख़्वाह पल १२) है। उनको घोड़ा भी चाहिए। पर, ड़े का ख़र्च २०) मासिक होता है। ऐसा दमी १२) पर कैसे निर्वाह करेगा। ईमानदार र ज़िम्मेदार आदमी अच्छी तनख़्वाह पर ही मिल कता है। पर उसे रखने से परिणाम लाभदायक होता है।

## वार्षिक रिपोर्ट।

कोर्ट आव् वार्ड्स अपने मैनेजरों के काम की च करने के लिए और हर इलाक़े का हाल जानने लिए हर साल एक वार्षिक रिपोर्ट प्राप्त करता है र उसकी ख़ुद देख-भाल करता है। उससे उसे ल भर के काम का अनुमान हो जाता है और भी ज्ञात हो जाता है कि मैनेजर ने कैसा काम या। उसमें अनेक बातें होती हैं। यथा—

-कृषि की दशा।
-वार्षिक आमदनी।
(अ) वार्षिक आमदनी में न्यूनाधिकता।
(ब) लगान कितना वसूल हुआ—वसूल होने में ठनाइयाँ आदि।
(स) पिछले साल की बाक़ी और उसका ूल होना।
(द) क़र्ज़ का वसूल।
(य) तक़ावी का वसूल।
(फ) दूसरी आमदनी।
-वार्षिक ख़र्च—
(अ) लगान या भूमि-कर।
(ब) प्रबन्ध का ख़र्च—
(स) वार्डों अर्थात् नाबालिग़ ज़मींदारों का ख़र्च ुज़ारा आदि)।
(द) वार्डों की शिक्षा का ख़र्च।
(य) कुएँ, बाँध आदि का बनवाना।
(फ) बन्दे।
(ग) तक़ावी।
(ह) मुक़द्दमों का ख़र्च।
४—ऋण का भुगतान—
(ज) सूद वग़ैरह पर रुपया लगाना।
(क) तोशेख़ाने में जमा रुपया।
५—कृषकों की अवस्था या दशा का वर्णन
६—मुक़द्दमों का उल्लेख और उनके लिए पैरवी।
७—हिसाब की जाँच।
८—नौकरों के काम की चर्चा।

ऐसी रिपोर्ट देखने से ही ज्ञात हो जा रियासत में कितनी उन्नति हुई। प्राइवेट में भी ऐसी वार्षिक रिपोर्टों की आवश्य जिन रियासतों में महाजनी का काम होता वार्षिक चिट्ठा बनता भी है। परन्तु यह केवल सारांश होता है। ऊपर दी हुई कुछ बातों इयकता प्राइवेट रियासतों में नहीं। उन कुछ और बातें शामिल की जा सकती हैं।

हर रियासत को अपनी अपनी अ अनुसार रिपोर्ट के विषयों में न्यूनाधिक चाहिए। बहुधा मालिक कृषि और कृषकों जानते ही हैं। अतएव उस पर रिपोर्ट में ज़रूरत नहीं। इसी तरह मालिकों को बहु इसमें और नौकरों के काम काज का भी ज्ञा है। इन मदों को छोड़ने से साल भर के म का खातेवार चिट्ठा रह जाता है। यह चिट्ठा ही लाभदायक वस्तु है। इसमें एक ऐसा और बढ़ाना चाहिए जिससे मालिक को यह हो जाय कि वर्ष के भीतर इलाक़े की आमदनी कितनी घटी-बढ़ी हुई।

## प्राविडेन्ट फंड।

कोर्ट के नौकरों को पेन्शन नहीं दि बुढ़ापे में, काम-काज के लायक़ न रह ज नौकरी से अलग होने पर, उनका बसर न हो लिए सरकार अपने कर्मचारियों को पेन्श

शन के बदले कोर्ट आव वार्ड्स ने प्रायी-
ड जारी कर रक्खा है। उसमें १०) से ऊपर
ह पानेवालों को -) फ़ी रुपया हर महीने देना
क है। कोर्ट उसमें ॥) रुपया अपने पास से
डाकखाने में जमा करा देती है, या किसी
आदि में रख देती है। यहाँ यह रुपया
बढ़ा करता है। नौकरी छोड़ने के समय
ब्याज समेत नौकरों को मिल जाता है।
करी छोड़ने पर बुढ़ापे में कर्म्मचारियों को
हारा मिलता है।
वेट रियासतों में भी इस फंड के जारी किये
आवश्यकता है। इससे उनको अच्छे
मिलने में सुभीता होगा और बुड्ढों को मरते
क, बल्कि उनकी सन्तान को पुश्त-दर-पुश्त,
लायक हो चाहे नालायक—नौकर रखने
वश्यकता न रह जायगी। इसमें बहुत खर्च
हीं। परन्तु कर्म्मचारियों को इससे बड़ा
मिलता है।

## कोर्ट आव् वार्डस का असर।

ालिए ज़मींदारों, अर्थात् वार्डों, को नियत
क रुपया खर्च के लिए मिलता है। उससे
न तो वे कोर्ट से पाते हैं और न उन्हें
ही मिलता है। अतः लाचार हो कर
अपना खर्च कम करना पड़ता है। जो
उन्हें मिलता है उसीसे उन्हें अपना काम
ना पड़ता है। इसका असर उनकी आदतों और
ारिक बातों पर पड़ना चाहिए। मनमाना
करने की लालसा रोकने से फ़िज़ूलख़र्ची की
कम हो जानी चाहिए। पर कुछ समझदार
को छोड़ कर वार्डों के विषय में यह बात
नहीं देखी जाती। कोर्ट से मनमाना रुपया
कर वे मन ही मन दुखी होते हैं और कोर्ट से
ा छुड़ाने की कोशिश करने लगते हैं। इस
ये बहुत कुछ खर्च भी करते हैं।
वार्डों का असर न
है। ये बड़ा

कोर्ट से रुपया झटका करते हैं और उसी मनुष्य को अपना मित्र समझते हैं जो उनको रुपया दिलाता है। ऐसे वार्ड मैनेजरों से प्रायः असन्तुष्ट रहते हैं। क्योंकि रुपया न मिलने का एक मात्र कारण वे मैनेजर ही को समझते हैं।

बहुत कम उम्र के शिशु-वार्डों पर भी कोर्ट का कुछ अच्छा असर नहीं पड़ता। निज के नौकरों का प्रबन्ध उन्हीं के हाथ में होने से ख़ुशामदी नौकर उनके चारों ओर एकत्र हो जाते हैं। वे उनके मन में लड़कपन ही से अहङ्कार का बीज बो देते हैं और बुरी आदतों में फँसा देते हैं। फ़िज़ूल-ख़र्ची का स्वभाव भी अल्पवय ही से ये डाल देते हैं। इस कारण वे कोर्ट के समय ही में, इलाक़ा कोर्ट से छूटने पर रुपया देने का वचन देकर, ऋण लेने लगते हैं। फल यह होता है कि कोर्ट छूटने के थोड़े ही दिन बाद रियासत पर इतना ऋण हो जाता है कि फिर भी रियासत कोर्ट में आजाती है।

लेखक की राय है कि बहुत ही छोटी उम्र के शिशु-वार्डों के लिए छोटी तनख़ाह वाले निरीक्षक (गारजियन) नियत न होने चाहिए। वार्ड की देख-भाल का भार या तो मैनेजर ही के ऊपर रक्खा जाया करे, या कुछ वार्डों को एकत्र करके उन सबके लिए एक ही स्थान पर एक अच्छी तनख़ाहवाला निरीक्षक (गारजियन) नियत किया जाया करे। यह प्रबन्ध बहुत अच्छा है। मैनेजर या निरीक्षक को वार्ड के नौकरों पर पूरा अधिकार होना चाहिए और यह नियम हो जाना चाहिए कि जहाँ तक सम्भव हो वार्ड के पास उसी के इलाक़े के नौकर न रक्खे जायँ। इस तरह के नौकर प्रायः सब स्थान में लोभ में वार्डों को पहले ही से बिगाड़ते हैं। इलाक़े ही के निवासी होने के कारण वे वार्डों से डरते भी नहीं [illegible]

और नादिहन्दी छोड़ देती है। ज़मींदार के अनेक नियम-विरुद्ध करों से वह छुटकारा पा जाती है और अन्य महकमों के अत्याचार से भी बची रहती है। कोर्ट आव् वार्ड्स उनको शिक्षा देने में, उनसे सफ़ाई का लिहाज़ रखाने में, उनका इलाज मुआ-लजा कराने में और उनको और तरह के लाभ पहुँचाने में भी सहायता देता है। रुपये की रसीद और खेतों का पट्टा यथासमय पा जाने से प्रजा के हक़ की रक्षा होती है। इसे प्रजा बहुत पसन्द करती है। हाँ, अलबत्ता, अपने अधिकार जान जाने से वह किसी के नाजाइज़ दबाने से कम दबती है। अतः बहुत से मुलाज़िम प्रजा की यह स्वतन्त्रता नहीं पसन्द करते। इलाक़ा छूट जाने पर ज़मींदार से भी यह कुछ समय तक कम दबती है। अतएव प्रजा को उसके अधिकार बता देने के कारण कोर्ट को ज़मींदार धन्यवाद का पात्र नहीं समझते।

इलाक़े पर कोर्ट का सबसे अच्छा असर पड़ता है। निकासी बढ़ जाती है। प्रजा प्रसन्नता से समय पर लगान देने लगती है, बक़ाया नहीं रहने पाता। ज़मीन की हैसियत अच्छी हो जाती है। कुएँ, तालाब आदि बन जाते हैं। प्रायः सभी क़ाबिल काश्त ज़मीन जुत जाती है। झोल-झाँकर, पड़ती आदि सभी से कुछ न कुछ आमदनी होने लगती है। पूरा लग जाते हैं। माले पाट दिये जाते हैं। पंध जाते हैं। ज़मीन की उन्नति के लिए और अनेक काम हो जाते हैं। यही कारण है जो कोर्ट आव् वार्ड्स खानगी से अच्छा बुका देता है, रक्षा कर देता है, और इलाक़ा भी कभी बना देता है।

कोर्ट का प्रबन्ध इन्तज़ाम, बाग़ात और मुक़द्दमात पर बहुत अच्छा नहीं पड़ता। प्रायः देखा गया है कि इन्तज़ाम ठीक नहीं होता और ख़र्च बढ़ जाता है। यदि ठेके पर काम दिया जाता है तो ठेकेदार बहुत सा रुपया खा जाते हैं। यदि ठेके पर काम न दिया जाय तो ठीक काम नहीं होता। [illegible] ठीक नहीं होता। [illegible] ठीक नहीं होता।

हो सकती। यदि बाड़ों को मरम्मत दिया जाता है तो वे ख़ुश भी रहते रहने का सुभीता भी करा लेते हैं। समझ में जब तक कोई विशेष बाधा न के साथ ही वार्ड से कह देना चाहिए। मकान का ख़र्च भी उसमें शामिल लिहाज़ से गुज़ारा मुक़र्रर करना चाहि पक्का काम कोर्ट के प्रबन्ध से अच्छा होता सम्बन्ध में ख़र्च का तजरिबा लेखक को नहीं

बाग़ात का इन्तज़ाम या तो कोर्ट के कर्म के हाथ में होता है या वार्ड के ही सिपुर्द कर जाता है। दोनों दशाओं में बाग़ात की दशा नहीं रहती। कोर्ट के नौकर उससे आमदनी और ख़र्च कम करना चाहते हैं। इससे उसकी बिगड़ जाती है। बाग़ तो दौलत की चीज़ है, दनी की चीज़ नहीं। उसका ख़र्च बरदाश्त ख़र्च की तरह समझना चाहिए, जिससे कुछ नहीं मिल सकता। यह आमदनी का ज़रिया

मुक़द्दमात की पैरवी भी कोर्ट ठीक तौर कर सकता। क्योंकि अदालतों के नाज़ायज़ दबा गवाहों की ख़ातिरदारी के ख़र्च कोर्ट को इससे न तो गवाह ही प्रसन्न रहते हैं और न हरी के मुलाज़िम ही। इसका कोई [illegible] की समझ में नहीं आता।

---

## भगवद्गीता-रहस्य।

[illegible]

[illegible] की पुस्तक है जिसे [illegible] महाराष्ट्र विद्वान् ने [illegible] या जेल जिसकी [illegible] [illegible] महीनों की [illegible] [illegible] में लिखी गई है। जिस [illegible] इस [illegible] [illegible] की [illegible] की है। [illegible]

हनत है। इसका स्वीकार करने में सङ्कोच हमें केवल
बात का है कि यह पुस्तक हमारे पास समालोचना के
आई है। पर इसकी आलोचना करने की पर्य्याप्त
हम में नहीं। हमारी समझ में तो इसके गुण-दोषों
विचार करने की शक्ति विरले ही विद्वानों में होगी।
भारतवर्ष के मुख्य मुख्य सभी शास्त्रों का अध्ययन
मनन किया है, और जिसने पाश्चात्य तत्ववेत्ताओं के
ान की भी अभिज्ञता प्राप्त की है वही इस पुस्तक के
ब्यों पर अच्छी तरह विचार कर सकता है। यही नहीं,
गीता पर आज तक जितने प्रसिद्ध प्रसिद्ध भाष्य और
लिखे गये हैं उन सब से भी परिचय रखने वाला
ही इस पुस्तक की समालोचना करने का अधिकारी
सकता है। इन गुणों में से एक भी गुण हम में नहीं।
इस इसकी आलोचना करने के अधिकारी नहीं।
तिलक महाशय की आज्ञा को शिरसा धारण करके
इसकी कुछ बातों का उल्लेख मात्र करेंगे।

बङ्ग-भाषा और मराठी में आज तक गीता पर अनेक
लिखी जा चुकी हैं। कई पुस्तकें तो हमने ऐसी
हैं जिनमें गीता के प्रायः सभी भाष्य प्रकाशित करके
सब का उद्देश और भिन्न भिन्न दृष्टि से उनका आशय
समझाया गया है। परन्तु इस तरह की सभाष्य पुस्तकों
रोष करके विद्वान् ही अधिक लाभ उठा सकते हैं।
ब्यों का आशय सर्व-साधारण जनों की समझ में बहुत
आता है। हां, बँगला में एक छोटी सी पुस्तक ऐसी
मारे देखने में आई है जिसे साधारण पढ़े-लिखे लोग
ही तरह समझ सकते हैं और बहुत कुछ लाभ उठा
हैं। गीता का प्रधान उद्देश क्या है, यह बात उस
-पुस्तक में दो कल्पित व्यक्तियों के कथोपकथन-रूप में
की गई है। उसके लेखक की भाषा और उसके सम
ली शैलि ऐसी अच्छी है कि पढ़नेवाला, बिना प्रयास
ये बातें समझता चला जाता है। ये सब उसके हृदय
जाती हैं। इस बँगला-पुस्तक का नाम भी "गीता-
" है। तिलक महाशय के "गीता-रहस्य" के अन्त में
मूल गीता है, वैसे ही उसके भी अन्त में है। पर वह
थोड़ा है और यह प्रकाण्ड ग्रन्थ है। बँगला की पूर्वोक्त
समय हमारे पास नहीं। हम इस लेख को एक
गांव में बैठे लिख रहे हैं। पर जहां तक हमें याद है वह
किसी कालेज—शायद कटक-कालेज—के किसी प्रोफ़ेसर
की लिखी हुई है और आठ ही दस आने मूल्य की है।

तिलक महाशय ने अपने इस ग्रन्थ की रचना में जो
पाण्डित्य, और जो विचारशीलता, और जो लेखन-कौशल
दिखाया है वह अद्भुत है। यह ग्रन्थ आपके कोई चालीस
वर्षों के विचार और शास्त्र-चिन्तन का फल है। इसकी
तैयारी में आपने संस्कृत, मराठी और अंगरेज़ी के सैकड़ों
गहन ग्रन्थों का मनन किया है।

इस ग्रन्थ को आपने दो भागों में विभक्त किया है।
पहले भाग में गीता का रहस्य है, दूसरे में मूल गीता तथा
उसका मराठी अनुवाद। पहला भाग १६ प्रकरणों में विभक्त
है—यथा, विषय प्रवेश, कर्म्म जिज्ञासा, कर्म्म-योग शास्त्र,
आधिभौतिक सुखवाद, सुखदुःख विवेक, क्षेत्राक्षेत्र-विचार,
कापिल सांख्यशास्त्र, जगत् की उत्पत्ति और नाश, अध्यात्म,
आत्मस्वातन्त्र्य, संन्यास और कर्म्मयोग, सिद्धावस्था और
व्यवहार, भक्तिमार्ग, गीता के अध्यायों की संगति, उप-
संहार और गीता की बहिरङ्ग परीक्षा। अन्तिम यही भाग
इस ग्रन्थ का सबसे अधिक मूल्यवान् अंश है। इसमें से
भी पहला और अन्तिम, ये दो प्रकरण उन लोगों के लिए
बड़े ही महत्त्व के हैं जो गीता के सम्बन्ध की विशेष विशेष
बातें जानना चाहते हों। गीता और महाभारत का कर्तृत्व,
गीता और उपनिषदों की परस्पर तुलना, गीता और ब्रह्म-
सूत्रों की पूर्वोत्तरता, गीता का समय, गीता और बौद्धधर्म,
गीता और ब्राह्मविद आदि का विवेचन अन्तिम प्रकरण में
है। इतिहास और पुरातत्त्व के प्रेमियों के जानने योग्य इसमें
बहुत कुछ सामग्री है। इस प्रकरण के अन्त में यह सम्भा-
वना की गई है कि ईसाई धर्म्म के तत्त्व बहुत करके बौद्ध
धर्म्म से ही लिये गये हैं। और, बौद्ध धर्म्म ने उन्हें लेना
अपने समकालीन वैदिक धर्म्म या गीता से लेना है। तिलक
महाशय ने ग्रन्थ का रचना काल ईसवी सन् से ३०० वर्ष पूर्व
स्थिर किया है।

ग्रन्थ के दूसरे अंश में अर्थात् गीता के मूल-श्लोक
और उनके मराठी में अनुवाद में इतना अन्तर है। पर मूल में
जो बातें बड़ी और जिनका समझना आवश्यक था उन्हें

और नादिहन्दी छोड़ देती है। ज़मींदार के अनेक नियम-विरुद्ध करों से वह छुटकारा पा जाती है और अन्य महकमों के अत्याचार से भी बची रहती है। कोर्ट आव् वार्ड्स उनको शिक्षा देने में, उनसे सफ़ाई का लिहाज़ रखाने में, उनका इलाज मुआलजा कराने में और उनको और तरह के लाभ पहुँचाने में भी सहायता देता है। रुपये की रसीद और खेतों का पट्टा यथासमय पा जाने से प्रजा के हक़ की रक्षा होती है। इसे प्रजा बहुत पसन्द करती है। हाँ, अलबत्ता, अपने अधिकार जान जाने से वह किसी के नाजाइज़ दबाने से कम दबती है। अतः बहुत से मुलाज़िम प्रजा की यह स्वतन्त्रता नहीं पसन्द करते। इलाक़ा छूट जाने पर ज़मींदार से भी प्रजा कुछ समय तक कम दबती है। अतएव प्रजा को उसके अधिकार बता देने के कारण कोर्ट को ज़मींदार धन्यवाद का पात्र नहीं समझते।

इलाक़े पर कोर्ट का सबसे अच्छा असर पड़ता है। निकासी बढ़ जाती है। प्रजा प्रसन्नता से समय पर लगान देने लगती है, बक़ाया नहीं रहने पाता। ज़मीन की हैसियत अच्छी हो जाती है। कुवें, तालाब आदि बन जाते हैं। प्रायः सभी क़ाबिल ज़रायत ज़मीन जुत जाती है। झील-झाँकर, पड़ती आदि सभी से कुछ न कुछ आमदनी होने लगती है। ऊसर लग जाते हैं। नाले पाट दिये जाते हैं। बाँध बँध जाते हैं। ज़मीन की उन्नति के लिए और भी अनेक काम हो जाते हैं। यही कारण है जो कोर्ट आव् वार्ड्स आमानी से अस्त चुका देता है। बराबर इकट्ठा कर लेता है, और इलाक़ा भी कभी कभी बढ़ा देता है।

कोर्ट का प्रबन्ध मकानात, बाग़ात और मुक़दमात पर बहुत अच्छा नहीं पड़ता। प्रायः देखा गया है कि मरम्मत मकानात ठीक नहीं होती और ऐन ज़िलहिज पड़ जाता है। ठेके पर काम कराया जाता है तो ठेकेदार ही बहुत सा रुपया खा जाता है। यदि काम मजदूरों द्वारा होता है तो काम ज़िलहिज होने से उसकी ठीक निगरानी नहीं हो सकती। यदि वार्डों को मरम्मत का दिया जाता है तो वे ख़ुश भी रहते हैं और रहने का सुभीता भी करा लेते हैं। लेकिन समझ में जब तक कोई विशेष बाधा न हो, के साथ ही वार्ड से कह देना चाहिए कि मकान का ख़र्च भी उसमें शामिल लिहाज़ से गुज़ारा मुक़र्रर करना चाहि पक्का काम कोर्ट के प्रबन्ध से अच्छा होता सम्बन्ध में ख़र्च का तजरिबा लेखक को नहीं

बाग़ात का इन्तज़ाम या तो कोर्ट के के हाथ में होता है या वार्ड के ही सिपुर्द कर जाता है। दोनों दशाओं में बाग़ात की दशा नहीं रहती। कोर्ट के नौकर उससे आमदनी और ख़र्च कम करना चाहते हैं। इससे उसकी बिगड़ जाती है। बाग़ तो शौक़ की चीज़ है, दनी की चीज़ नहीं। उसका ख़र्च अस्तबल के ख़र्च की तरह समझना चाहिए, जिससे कुछ नहीं मिल सकता। यह आमदनी का ज़रिया

मुक़द्दमात की पैरवी भी कोर्ट ठीक ठीक कर सकता। क्योंकि अदालतों के नाजायज़ ख़र्च गवाहों की ख़ातरदारी के ख़र्च कोर्ट नहीं इससे न तो गवाह ही प्रसन्न रहते हैं और हरी के मुलाज़िम ही। इसका कोई की समझ में नहीं आता।

---

## भगवद्गीता-रहस्य।

[ भाषा मराठी, पृष्ठ-संख्या ११—८१६, त्रिपुल डबल क्राउन, मूल्य ३ रुपये, प्राप्ति-स्थान—केसरी-बुकडिपो, पूना ]

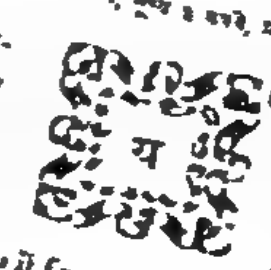

यह पुस्तक है जिसे बंबई गङ्गाधर तिलक ने प्रकाशित किया था और जिसकी [illegible] महीनों [illegible] आवृत्तियों हो चुकी हैं। [illegible] ने इस पुस्तक [illegible] की है। [illegible]

लिए ज़रूरी है उन सब को मार्केट के भीतर देकर तिलक ने कथासूत्र की ऐसी सङ्गति लगा दी है कि पढ़ने वालों को उपन्यास, इतिहास या अन्य साधारण पुस्तक पढ़ने का सा आनन्द आता है। उन्हें यह भासित ही नहीं होता कि वे अनुवाद पढ़ रहे हैं। विषय इतना गहन होने पर भी तिलक महाशय ने उसे ऐसी अच्छी तरह और ऐसी प्राञ्जल भाषा में समझाया है कि साधारण विद्या-बुद्धि के आदमी भी आपके कथन का आशय सहज ही में हृदयङ्गम कर सकते हैं। आपकी लेखनशैली के प्रधान गुण स्पष्टता और शुद्धता हैं। आपने अपने मन के भावों को इस तरह व्यक्त किया है कि आपके कथन का तात्पर्य्य समझने में ज़रा भी प्रयास नहीं पड़ता।

अच्छा तो इस गीता की रचना हुई क्यों? भारतीय युद्ध के लिए कौरवों और पाण्डवों की सेना ने कुरुक्षेत्र में मोरचे डाल दिये। प्रत्येक पक्ष अपने विरोधी पक्ष का संहार करने के लिए उद्यत हो गया। तब अपने ही बन्धु-बान्धवों को संहारोन्मुख देख अर्जुन को बड़ा विषाद हुआ। उन्होंने हथियार रख दिये। वे बोले—बाज़ आये हम उस राज्य से जिसकी प्राप्ति के लिए हमें अपने ही वंशजों का नाश करना पड़े। कहाँ युद्ध की तैयारी, कहाँ यह विरक्ति! काम बिगड़ता देख कृष्ण ने अर्जुन को गीता में गाया गया उपदेश सुनाया। उसे सुन कर अर्जुन का सन्देह दूर हो गया। उनका विषाद जाता रहा। वे युद्ध करने पर राज़ी हो गये। जिस गीता का उद्देश अर्जुन को युद्ध के लिए उद्युक्त करना था उसमें सांख्य, योग, वेदान्त—ब्रह्मज्ञान—और भक्ति का बखेड़ा क्यों? इसी प्रश्न का तर्क-सम्मत उत्तर देने और पूर्ववर्ती भाष्यकारों का भ्रम दिखाने के लिए ही तिलक ने गीता के रहस्य का उद्घाटन किया है। आज कल जितने विख्यात व्याख्याकार—शङ्कर, चिद्घनानन्द, रामानुज, निम्बार्क आदि—हो गये हैं किसी ने इस बात का ठीक ठीक उत्तर नहीं दिया। किसी ने इस बात को सप्रमाण और युक्ति-सङ्गत तर्क द्वारा नहीं सिद्ध किया कि जो मनुष्य कर्म्म से निवृत्त हो रहा है—जिसके हृदय में विरक्ति की भावना प्रबल हो रही है—उसे एक मात्र कर्म्मोन्मुख करने की चेष्टा छोड़ कर श्रीकृष्ण ने ब्रह्मज्ञान सिखाने का क्यों प्रयास किया? उन्हें अर्जुन से शस्त्र-ग्रहण कराना था। इस काम उनका कर्त्तव्य

था कि वे उन्हें प्रवृत्ति का मार्ग दिखाते, सांख्य, यो
वेदान्त की बातें छेड़ कर निवृत्ति का मार्ग दि
क्या आवश्यकता थी? तिलक ने इसी प्रश्न का उत्त
है और ऐसा उत्तर दिया है कि शायद ही कोई
खण्डन कर सके। उनकी युक्तियाँ और उनकी सङ्ग
इतनी हेतुमूलक, इतनी सरल और इतनी प्रमाणपू
देख कर आश्चर्य्य होता है कि पूर्ववर्ती विद्वान् इसे
छोड़ कर अन्यत्र कैसे चले गये। तिलक ने गीता
यह सिद्धान्त स्थिर किया है कि गीता निवृत्ति पर
वह प्रवृत्ति पर है। अर्थात् उसका मुख्य उद्देश कर्म
निष्काम कर्म्म की—प्रधानता दिखाना है। इसी
कर्म्मयोग का विवेचन है। उसमें जहाँ कहीं "योग"
है वहाँ उसका आशय "कर्म्म-योग" है। इसी
आपने इस ग्रन्थ का पूरा नाम "श्रीमद्भगवद्गीता-सू
कर्म्मयोग-शास्त्र" रक्खा है। तथापि आप यह नहीं
गीता में ब्रह्मज्ञान और भक्ति आदि निवृत्तिमूलक
का निरूपण ही नहीं। है अवश्य और उसकी
आवश्यकता भी है; क्योंकि शुद्धबोधस्वरूप परम
ज्ञान-सम्पादन करके अपने अन्तःकरण को शु
निर्म्मल करना तथा परिणाम या फल की इच्छा
न करके अपने कर्तव्य कर्म्म का निर्वाह करना ही
का परम कर्तव्य है। परन्तु निवृत्ति-मार्ग की
बातें गीता में हैं वे गौण हैं; निवृत्ति-मार्ग का
देना गीता का मुख्य उद्देश नहीं। मुख्य
निष्काम कर्म्म करने का उपदेश देना है। इस
बाहर की बातें क्यों लिखी गईं, प्रधान विषय से
कैसा सम्बन्ध है और उनकी सन्धि एक
प्रकार मिलती गई है, यह देखने और जानने की
रखने हो वे तिलक महाराज के ग्रन्थ को ध्यान से पढ़ें।

गीता के सम्बन्ध में ग्रन्थकार की जो राय है
में, कुछ कुछ उन्हीं के शब्दों में, सुन लीजिए:—

"अर्जुन का मोह दूर करने के लिए श्रीकृष्ण ने,
वेदान्तशास्त्र के आधार पर, कर्म्म और अकर्म्म का
साथ ही, मोक्षप्राप्ति के उपायों का विवेचन गीता में कि
है। श्रीकृष्ण का उपदेश है कि कर्म्म कभी छूटने
और उन्हें छोड़ना भी न चाहिए। पर उन्हें बुद्धि

लेडी हारडिंग हास्पिटल ( भीतरी दृश्य )

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

चाहिए। योग्य-युक्ति-प्रयोग द्वारा कर्म्म-सम्पादन
। मनुष्य पाप-भागी नहीं होता। ऐसे कर्म्म-सम्पादन
त में, मोक्ष की भी प्राप्ति होती है। इस युक्ति का
ज्ञानमूलक और भक्तिप्रधान कर्म्मयोग। गीता में
र्म्मयोग का प्रतिपादन है।"

लेखक के कथन का यही सार है। गीता में जितने
किंवा जितने सिद्धान्तों का वर्णन है उन सब का
। रीति से प्रकरणशः विभाग करके उनमें से मुख्य
युक्तिवादों का निरूपण आपने गीता-रहस्य में किया
मा करने में आपने अपने मत की पुष्टि के लिए न
। कितने ग्रन्थों के प्रमाण, जगह जगह पर, दिये हैं।
ही आपने पाश्चात्य देशों के तत्त्वज्ञेताओं के भी सिद्धान्तों
ल्लेख किया है और गीता के रहस्यों से उनकी तुलना
है। पश्चिमी विद्वानों की राय है कि कर्म्माकर्म्मविवेक
नीतिशास्त्र पर सब से पहला ग्रन्थ अरिस्टाटल का है।
लक ने तुलनापूर्वक यह दिखाया है कि इन लोगों
ह मत ठीक नहीं। गीता में अरिस्टाटल की भी अपेक्षा
व्यापक और अधिक तात्त्विक दृष्टि से नीति-शास्त्र के
का विचार किया गया है, और गीता अरिस्टाटल के बहुत
ले की है। इसी तरह आपने सार्जेंटीज़, मिल, स्पेंसर,
, ग्रीन और स्टोइक पन्थ के ग्रीक पण्डितों के सिद्धान्तों
वर्णन करके यह दिखाया है कि इन सभी के सिद्धान्तों
ीता अन्तर्भूत है, प्रत्युत गीता की विचारपद्धति इन
लोगों की विचारपद्धति से भी अधिक युक्तिपूर्ण और
ह है।

गीता-रहस्य में जहां जहां पर प्राचीन भाष्यकारों का
दिखाया गया है वहां वहां रहस्यकार की विचार-सरणि
कोटि-क्रम देख कर बड़ा कौतूहल होता है और साथ
आपकी व्यापक दृष्टि पर आश्चर्य भी होता है।
न को आपने इतनी निर्दयता से किया है जिसकी
ना नहीं। पर साथ ही आपने इस खण्डन के लिए ऐसी
ाली का अवलम्ब किया है कि आपको कोई दोषी नहीं
ा सकता। आपने बड़ी ही योग्यता से यह दिखाया है
प्राचीन विद्वानों के भाष्यों की उत्पत्ति किस प्रकार हुई।
र आपने यह बताया है कि देश, काल, पात्र और तत्का-
न सामाजिक व्यवस्था के अनुसार ही पूर्ववर्ती भाष्यों का
प्रणयन हुआ है। उस समय वैसे ही भाष्य बन सकते थे। अतएव उन भाष्यकारों से जो भ्रम हो गये हैं उसमें उनका कुछ भी दोष नहीं। परन्तु अब वह समय नहीं। अब अनेक नई नई बातें और नई नई विद्यायें मालूम हो गई हैं। बहुत प्राचीन काल का इतिहास भी अब अधिक उपलब्ध है। अतएव इस ज्ञानवृद्धि के काल में उन पुराने भाष्यों में विवेचन किये गये रहस्य स्वीकार नहीं किये जा सकते। इस दशा में अपनी त्रुटियों के लिए भाष्यकार दोषी नहीं। इस प्रकार, बड़े ही अनोखे ढँग से, आपने प्राचीन पण्डितों और प्राचीन ग्रन्थों के पृष्ठपोषक लोगों के कोप को शान्त करने की चेष्टा की है।

लिखा है—"गीता सुगीता कर्त्तव्या किमन्यैः शास्त्र-विस्तरैः"। यह बहुत ठीक है। अकेली गीता का अच्छी तरह अध्ययन कर लेना ही बस है। और सारे शास्त्रों के अध्ययन में व्यर्थ कालक्षेप करने की क्या आवश्यकता? गीता समग्र शास्त्रों का सार है। उसमें ब्रह्मविद्यान्तर्गत (कर्म्म-)योग-शास्त्र का निरूपण है। ब्रह्मविद्या और भक्ति के जो मूलतत्त्व हैं उन्हीं के आधार पर नीति और सत्कर्म के भवन का भी निर्म्माण हुआ है। ज्ञान, संन्यास, कर्म्म और भक्ति के समुचित मेल का आश्रय लेकर मनुष्य को किस प्रकार अपना जीवन सफल करना चाहिए, इसका विवेचन गीता से बढ़ कर अन्यत्र नहीं। इसी से लेखक महोदय की राय है कि उनकी वर्णित पद्धति का अनुसरण करके पुनरावृत्ति से ही गीता का परिशीलन और चिन्तन करना चाहिए। दुबारे में गीता पढ़ने से उतना श्रम नहीं हो सकता। निष्काम कर्म्म करने का अभ्यास थोड़ी बहुत से ही करना उचित है। हिन्दू-धर्म्म और नीतिशास्त्र के मूलतत्त्वों का ज्ञान जितना ही शीघ्र हो जाय उतना ही अच्छा। हमारी समझ में तो गीता-रहस्य के तत्त्व धर्म्म, समाज और नीति शास्त्र आदि में सभी कहीं चरितार्थ हो सकते हैं।

लेखक के इस अनुपम ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद हो रहा है। श्रीयुत आप्टेजी उसे, बी० ए० कर रहे हैं। यह बात हिन्दी के सौभाग्य की सूचक है।

---

लेडी हार्डिंग हास्पिटल ( भीतरी दृश्य )

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# "व" का प्रचार।

क समाचारपत्र-सम्पादक महाशय ने "व" (और) के घटते हुए प्रयोग पर दुःख प्रकट करते हुए बड़ी उत्कण्ठा से उसका प्रचार बढ़ाने की सलाह दी है। लेखक की राय में यह "व" थोड़े में बहुत अर्थ देता है, इस लिए इसका प्रचार बढ़ाना आवश्यक है। जहाँ तक हमें स्मरण है, इस सलाह का खण्डन-मण्डन किसी ने नहीं किया और न इस सलाह के अनुसार इस उपयोगी "व" का प्रचार ही बढ़ा है। ऐसी अवस्था में इस शब्द के विषय में कुछ विचार किया जाना अनुचित न होगा।

"व" हिन्दी अथवा संस्कृत का शब्द नहीं है, किन्तु यावनी है। इसका प्रचार उर्दू में अधिक है और उस भाषा में यह, (वाव) के रूप में लिखा जाता है, पर इसका उच्चारण बहुत कुछ "वो" का होता है। यह उच्चारण उर्दू के "नामो-निशान" सदृश समासों में स्पष्ट सुनाई देता है। जिन लोगों ने हिन्दी में इस "व" का प्रचार किया है उन्होंने, (वाव) के केवल व्यञ्जन कार्य पर ध्यान दिया है, और उसी के अनुसार उसे "व" लिखना आरम्भ कर दिया है। यदि इसके अधिक प्रचलित स्वरोच्चारण पर ध्यान दिया जाता तो हिन्दी में ध्वनि के अनुसार इसका उच्चारण और रूप "वो" होता।

हिन्दी में इस "व" के ह्रास का कारण इस शब्द के इतिहास ही में पाया जाता है। इसका प्रयोग न पुराने शिष्ट लेखकों ने किया है और न आधुनिक शिष्ट लेखक ही करते हैं। हिन्दी-गद्य की उत्पत्ति के बहुत समय पीछे तक इसका प्रचार नहीं हुआ और आज कल दो चार गिने साधारण लेखकों को छोड़ कर किसी को भी इसके प्रयोग की आवश्यकता नहीं जान होती। लेखक महाशय का अर्थ कुछ ही इस बात का प्रतीत होता है कि हिन्दी के लिए लेखक इस "व" के प्रयोग के योग्य नहीं समझते। हिन्दी में "व" किन्तु भिन्नार्थी एक शब्द "व" (या) है, कभी भूल से लोग "व" समझ लेते हैं वे "व" का प्रयोग नहीं करते। जो लो यावनी शब्द का प्रयोग करते हैं वे बहुधा के अर्थ में भी भूल से लिख देते हैं, जि के अर्थ में एक प्रकार की अस्थिरता सी और शिष्ट लेखक भ्रम के निवारण के लि के प्रयोग से बचने की चेष्टा करते हैं। की आवश्यकता नहीं है कि "व" केवल प्रयुक्त होता है। अपढ़ लोग तो इसे बहु ही नहीं।

मध्यप्रदेश के कुछ लेखक इस "व" के जान पड़ते हैं। उनके इस प्रेम से उत्पन्न हु का एक उदाहरण मध्यप्रदेशीय हिन्दी पहली के उनतीसवें पाठ में पाया जाता है, जहाँ महाशय ने "स्वच्छता व सफ़ाई" लिखा इस वाक्यांश में "व" का अर्थ "और" है प्रत्यक्ष भूल है, क्योंकि "स्वच्छता" और "स अलग अलग दो भावनायें नहीं हैं, और, का अर्थ "वा" (या) है तो समझना क इस "व" से बूढ़े ग्रन्थकार की अपेक्षा विद्यार्थी को, जिसके लिए पहली पुस्तक लि है, अवश्य ही अधिक मति-भ्रम होता होगा।

संयुक्त-प्रदेश के एक कवि महाशय अलग ही पन्थ निकाला है। उन्हें "व" से प्रेम है कि उन्होंने, (वाव) के दोनों अ मिलाकर "व" को "वो" करके "गगन हो लिख डाला है। इस "वो" का अर्थ क्या समझ लिया गया है, पर यह ध्वनि हिन्दी में नहीं है। यदि ये कवि चाहते तो इस व निकाल कर "वो" के प्रयोग से अपनी अधिक ललित कर सकते थे।

हिन्दी में इस "व" के प्रयोग की कोई आवश्यकता भी नहीं है, क्योंकि हमारी भाषा में "एवं", "तथा"—तीन तीन शब्द विद्यम

अवस्था में "व" के घटते हुए प्रयोग पर खेद
वृथा है, उसके प्रचार की आशा करना वृथा
सके प्रचार के लिए शिष्ट लेखकों को फुस-
वृथा है और उसका प्रचार करना वृथा है।

यदि किसी को "वैर" के उच्चारण में समय
चत करनी है अथवा उसे पूरा लिखने के लिए
नहीं है तो वह "बैर" क्यों न लिखे और
—बोलने में "वैर" के बदले बहुधा जल्दी के
"बैर" सुनाई देता है; परन्तु व्यर्थ ही एक
लित विदेशी शब्द को, जिसके कारण भाषा
ाम के बदले हानि अधिक है, पुनर्जीवित करना
ल है।

यहाँ पर हम उर्दू के उन सामासिक शब्दों के
प में भी कुछ लिखते हैं जिनमें यह "व" आता
र जिनको हमारे कुछ शिष्ट लेखक तत्सम रूप
िन्दी में लिखते हैं। "नामो-निशान" (نام و نشاں)
ा-दवा (آب و ہوا) आदि शब्दों में जो "व"
) आता है वह हिन्दी में द्वन्द्व-समास के नियम
नुसार अशुद्ध है और जब ये शब्द हिन्दी में
ए तब इन्हें हिन्दी के नियमों का पालन करना
दायक है। जो लोग उर्दू पढ़े हैं वे अपनी भाषा-
ता के सहारे पूर्वोक्त शब्दों में "व" का अस्तित्व
सकते हैं, पर केवल हिन्दी जानने वाले न
को पहचानते हैं और न "नामो-निशान",
वो-दवा", आदि बोलते हैं। उनके लिए "नाम-
ान" वैसा ही शुद्ध है जैसा "नाम-रूप" है।
यती सम्पादक की तरह जो शुद्धता-वादी लेखक
प्रकार के विदेशी शब्दों को अविकृत रूप में
ाते हैं उनसे हिन्दी-व्याकरण को यह डर लगा
ा है कि वे किसी दिन "दालो रोटी", "दाथो-
", आदि न लिखने लगें।

कामताप्रसाद गुरु।

निवेदन—"नामोनिशां" का "नामो-निशान" और
दो दवा"—ये उर्दू के मुहावरे हैं और ज्यों के
हिन्दी में आ गये हैं। उर्दू में "दालो-रोटी"
"दाथो-दाँत" लिखने का रिवाज नहीं। अत-
एव यदि वे इस तरह लिखे जायँ तो उर्दू में भी
अशुद्धप्रयोग समझे जायँ, हिन्दी में तो समझे ही
जायँ। सरस्वती-सम्पादक।

---

# व्यर्थ कोप।

क्या दुख
। कौन सा
करने वाला
है अगर वह दुःख से पड़ा पड़ा चीखता
और पुकारता रहे यहाँ तक कि रोग
उसके मृत्यु का कारण हो जाय, समझ-
दार मनुष्य उसे कुछ दोष न देंगे और क्षमा योग्य जानेंगे।
परन्तु जो अपने रोग का ज्ञाता हो उसके कारण को समझता
हो और औषध पास रखा होने पर उसके हाथ न लगाता
हो ऐसे रोगी को कौन क्षमा योग्य मानेगा और उस पर किस
बुद्धिमान् को दया आवेगी? बड़े शोक की बात है कि
हमारा हिन्दुस्तान पिछले प्रकार का रोगी है। जानता है
कि उसकी दुर्दशा का कारण क्या है, परन्तु काम वही
करता है जिस से रोग को सहायता प्राप्त हो और वह निर्बल
होने की अपेक्षा प्रबल हो।

मूल की सरस्वती में एक उदाराशय महाशय का एक
लेख प्रकाशित हुआ है। वह मुसलमानों से अत्यन्त क्षोभित
है कि उन्होंने संस्कृत-शब्दों का अशुद्ध उच्चारण केवल
इस लिए किया कि हिन्दी का तिरस्कार करें—यह हमारे
महाशय की कोरी विचार-रहित कल्पना है। सम्भव है कि मुसल-
मानों ने आज पर्यन्त कभी न किया होगा। इनके
अशुद्ध उच्चारण का कारण हम आगे चल कर बतावेंगे।
उदाराशय जी अगर क्रोध के वशीभूत न होते तो वह हमारे
सहमत होते कि मुसलमान क्षमा योग्य हैं। अगर न भी
सही तो इतना खेद अवश्य थोड़ा और हार्दिकता
अधिक है। किसी खेद के लिखने और उसके प्रकाशित
करने का केवल यही प्रयोजन है कि लोगों को इस
से कष्ट प्राप्त हो। जिस खेद का यह इसके सिवा है या
खेद की उत्पत्ति का कष्ट करने वाला और अपराध यही
कि शब्दों को शुद्ध उच्चारण करता है। सम्पादकी

# "व" का प्रचार।

क समाचारपत्र-सम्पादक महाशय ने "व" (और) के घटते हुए प्रयोग पर दुःख प्रकट करते हुए बड़ी उत्कण्ठा से उसका प्रचार बढ़ाने की सलाह दी है। लेखक की राय में यह "व" थोड़े में बहुत अर्थ देता है, इस लिए इसका प्रचार बढ़ाना आवश्यक है। जहाँ तक हमें स्मरण है, इस सलाह का खण्डन मण्डन किसी ने नहीं किया और न इस सलाह के अनुसार इस उपयोगी "व" का प्रचार ही बढ़ा है। ऐसी अवस्था में इस शब्द के विषय में कुछ विचार किया जाना अनुचित न होगा।

"व" हिन्दी अथवा संस्कृत का शब्द नहीं है, किन्तु यावनी है। इसका प्रचार उर्दू में अधिक है और उस भाषा में यह, (वाव) के रूप में लिखा जाता है, पर इसका उच्चारण बहुत कुछ "वो" का होता है। यह उच्चारण उर्दू के 'नामो-निशान' सदृश समासों में स्पष्ट सुनाई देता है। जिन लोगों ने हिन्दी में इस "व" का प्रचार किया है उन्होंने, (वाव) के केवल व्यञ्जन-कार्य पर ध्यान दिया है, और उसी के अनुसार उसे "व" लिखना आरम्भ कर दिया है। यदि इसके अधिक प्रचलित स्वरोच्चारण पर ध्यान दिया जाता तो हिन्दी में ध्वनि के अनुसार इसका उच्चारण और रूप "वो" होता।

हिन्दी में इस "व" के ह्रास का कारण इस शब्द के इतिहास ही में पाया जाता है। इसका प्रयोग न पुराने शिष्ट लेखकों ने किया है और न आधुनिक शिष्ट लेखक ही करते हैं। हिन्दी-गद्य की उत्पत्ति के बहुत समय पीछे तक इसका प्रचार नहीं हुआ और आज कल दो चार इने गिने साधारण लेखकों को छोड़ कर किसी को भी इसके प्रयोग की आवश्यकता नहीं ज्ञात होती। लेखक महाशय का व्यर्थ दुःख ही इस बात का परोक्ष साक्षी है कि हिन्दी के शिष्ट लेखक इस "व" के प्रयोग के योग्य नहीं समझते। हिन्दी में "व" का किन्तु विद्यार्थी एक शब्द "व" (या) है, जिसे कभी भूल से लोग "व" समझ लेते हैं और ये "व" का प्रयोग नहीं करते। जो लेखक यावनी शब्द का प्रयोग करते हैं वे बहुधा इसे के अर्थ में भी भूल से लिख देते हैं, जिससे के अर्थ में एक प्रकार की अस्थिरता सी और शिष्ट लेखक भ्रम के निवारण के लिए के प्रयोग से बचने की चेष्टा करते हैं। यह की आवश्यकता नहीं है कि "व" केवल लिखे प्रयुक्त होता है। अपढ़ लोग तो इसे बहुधा ही नहीं।

मध्यप्रदेश के कुछ लेखक इस "व" के जान पड़ते हैं। उनके इस प्रेम से उत्पन्न हुई का एक उदाहरण मध्यप्रदेशीय हिन्दी पहली के उनतीसवें पाठ में पाया जाता है, जहाँ इस महाशय ने "स्वच्छता व सफ़ाई" लिखा है। इस वाक्यांश में "व" का अर्थ "और" है तो प्रत्यक्ष भूल है; क्योंकि "स्वच्छता" और "सफ़ाई" अलग अलग दो भावनायें नहीं हैं, और, यदि, का अर्थ "वा" (या) है तो समझना चाहिए इस "व" से बूढ़े ग्रन्थकार की अपेक्षा विद्यार्थी को, जिसके लिए पहली पुस्तक लिखी है, अवश्य ही अधिक मति-भ्रम होता होगा।

संयुक्त-प्रदेश के एक कवि महाशय ने अलग ही पन्थ निकाला है। उन्हें "व" से प्रेम है कि उन्होंने, (वाव) के दोनों अ मिलाकर "व" को "वो" करके "सगन वो लिख डाला है। इस "वो" का अर्थ और समझ लिया गया है, पर यह ध्वनि हिन्दी में नहीं है। यदि ये कवि चाहते तो इस अ निकाल कर "वो" के प्रयोग से अपनी अधिक ललित कर सकते थे।

हिन्दी में इस "व" के प्रयोग की दो दयकता भी नहीं है, क्योंकि हमारी भाषा में "एवं", "तथा"—तीन तीन शब्द विद्यम

अवस्था में "व" के घटते हुए प्रयोग पर खेद वृथा है, उसके प्रचार की आशा करना वृथा इसके प्रचार के लिए शिष्ट लेखकों को फुसवृथा है और उसका प्रचार करना वृथा है।

यदि किसी को "पैर" के उच्चारण में समय व्यय करना है अथवा उसे पूरा लिखने के लिए कहाँ है तो वह "पैा" क्यों न लिखे पैर —बोलने में "पैर" के बदले बहुधा जल्दी के "पैा" सुनाई देता है; परन्तु व्यर्थ ही एक लित विदेशी शब्द को, जिसके कारण भाषा ाम के बदले हानि अधिक है, पुनर्जीवित करना ल है।

यहाँ पर हम उर्दू के उन सामासिक शब्दों के में भी कुछ लिखते हैं जिनमें यह "व" आता र जिनको हमारे कुछ शिष्ट लेखक तत्सम रूप ्दी में लिखते हैं। "नामो-निशान" (نام و نساں) ·दया (آب و ہوا) आदि शब्दों में जो "व" आता है वह हिन्दी में द्वन्द्व-समास के नियम नुसार अशुद्ध है और जब ये शब्द हिन्दी में हैं तब इन्हें हिन्दी के नियमों का पालन करना यक है। जो लोग उर्दू पढ़े हैं वे अपनी भाषा ा के सहारे पूर्वोक्त शब्दों में "व" का अस्तित्व सकते हैं, पर केवल हिन्दी जानने वाले न को पहचानते हैं और न "नामो निशान", ा-दया", आदि बोलते हैं। उनके लिए "नाम· न" वैसा ही शुद्ध है जैसा "नाम-रूप" है। ारी सम्पादक की तरह जो शुद्धता-वादी लेखक ार के विदेशी शब्दों को अविकृत रूप में ते हैं उनसे हिन्दी-व्याकरण को यह डर लगा है कि वे किसी दिन "दालो रोटी", "हाथो· , आदि न लिखने लगें।

कामताप्रसाद गुरु।

रिवेदन—"नामोनिशां" का "नामो-निशान" और ा दया"—ये उर्दू के मुहावरे हैं और इन को ्दी में ला गये हैं। उर्दू में "दालो-रोटी" "हाथो-पाँव" लिखते नहीं। इन पद यदि वे इस तरह लिखे जायँ तो उर्दू में भी अपप्रयोग समझे जायँ, हिन्दी में तो समझे ही जायँ। सरस्वती-सम्पादक।

---

## व्यर्थ कोप।

क्या दुख । कौन सा करने वाला पड़ा चीखना और पुकारता रहे यहाँ तक कि रोग उसके मृत्यु का कारण हो जाए, समझदार मनुष्य उसे कुछ दोष न देंगे और क्षमा योग्य जानेंगे। परन्तु जो अपने रोग का ज्ञाता हो उसके कारण को समझता हो और औषध पास रखा होने पर उसके हाथ न लगाता हो ऐसे रोगी को कौन क्षमा योग्य मानेगा और उस पर किस बुद्धिमान् को दया आवेगी? बड़े शोक की बात है कि हमारा हिन्दुस्तान बिलकुल इसी प्रकार का रोगी है। जानता है कि उसकी दुर्दशा का कारण क्या है, परन्तु काम वही करता है जिस से रोग को सहायता प्राप्त हो और वह निर्बल होने की अपेक्षा प्रबल हो।

मूल की सामग्री में एक इलाहाबाद महाशय का एक लेख प्रकाशित हुआ है। वह मुसलमानों से अत्यन्त क्षोभित है कि उन्होंने फ़ारसी-शब्दों का अशुद्ध उच्चारण केवल इस लिए किया कि हिन्दी का तिरस्कार करें—पर हमारे महाशय की कोई विचार-शीलता है। सम्भव है कि मुसलमानों ने आज तक कर लेना कभी न किया होगा। उनके अशुद्ध उच्चारण का कारण हम आगे चल कर बतावेंगे। इलाहाबाद जी अगर क्रोध के वशीभूत न होते तो वह हमारे सम्मत होते कि मुसलमान क्षमा के पात्र हैं। आज न सही तो इसका लेख अत्यावश्यक जरूर और हानिकारक अधिक है। हिन्दी लेख के लिखने और उसके प्रकाशित करने का केवल यही प्रयोजन है कि साधारण लोग उसे पढ़ कर समझ सकें। जिस लेख का पढ़ना इसके विपरीत है वह लेखक की स्याही का व्यर्थ करने वाला और अनावश्यक वही कि कागज़ को हानि पहुँचाने वाला है। सम्पादकी

## "व" का प्रचार।

क समाचारपत्र-सम्पादक महा ने "व" (बैार) के घटते प्रयोग पर दुःख प्रकट करते बड़ी उत्कण्ठा से उसका प्रचा बढ़ाने की सलाह दी है। लेख की राय में यह "व" थोड़े में बहुत अर्थ देता है, इस लिए इसका प्रचार बढ़ाना आवश्यक है। जहा तक हमें स्मरण है, इस सलाह का खण्डन-मण्डन किसी ने नहीं किया बैार न इस सलाह के अनुसार इस उपयोगी "व" का प्रचार ही बढ़ा है। ऐसी अवस्था में इस शब्द के विषय में कुछ विचार किया जाना अनुचित न होगा।

"व" हिन्दी अथवा संस्कृत का शब्द नहीं है, किन्तु यावनी है। इसका प्रचार उर्दू में अधिक है बैार उस भाषा में यह, (याय) के रूप में लिखा जाता है; पर इसका उच्चारण बहुत कुछ "बे" का होता है। यह उच्चारण उर्दू के "नामे-निशान" सदृश समासों में स्पष्ट सुनाई देता है। जिन लोगों ने हिन्दी में इस "व" का प्रचार किया है उन्होंने, (याय) के केवल व्यञ्जन कार्य पर ध्यान दिया है, बैार उसी के अनुसार उसे "व" लिखना आरम्भ कर दिया है। यदि इसके अधिक प्रचलित स्वरोच्चारण पर ध्यान दिया जाता तो हिन्दी में ध्वनि के अनुसार इसका उच्चारण बैार रूप "बे" होता।

हिन्दी में इस "व" के ह्रास का कारण इस शब्द के इतिहास [illegible] में पाया जाता है। इसका प्रयोग न पुराने शिष्ट लेखकों ने किया है बैार न आधुनिक शिष्ट लेखक ही करते हैं। हिन्दी-गद्य की उत्पत्ति के बहुत समय पीछे तक इसका प्रचार नहीं हुआ बैार आज कल
लेखकों को छोड़
की आवश्यकता
का अर्थ दुःख ही
कि हिन्दी के शिष्ट

जून १९१४, पृष्ठ ३४७ ) आपके पण्डित दत्तीनाथ लिखते हैं। बङ्ग के ढंग की कुछ कविता करने पुंड़ के बल लिखते हैं। ( सरस्वती. जून १९१४, २७ )

[illegible]
यही सङ्गीत को यों दुर्दशा—

| | | | |
|---|---|---|---|
| [illegible] | फ़ाड़िमानुन | मङ्गलु | फ़ाड़िमानुन |
| [illegible] | ए स्वरूप | मयरो ब | माया नु ने |

[illegible] इसका करके इसकी सङ्गीत को कीजिये देखए कि एक की दुम बड़ी जाती है कि नहीं ?

[illegible]
हिन्दी और संस्कृत अगर इतने मायावे' हैं तो किसी से नहीं बिगाड़ सकतीं और न उन का तिरस्कार ता है।

जो रहीम हो लघु करो, नहि रहीम घट जाहि।
गिरधर मुरलीधर करे, कछु दुख मानत नाहि।

( रहीम )

सलीम जफ़र—
मुन्शी फ़ालिम

---

## '—जातीय एक नया सम्प्रदाय।

रतवर्ष के आदिम निवासी अनार्य्य कहलाते हैं। इन अनार्य्यों की कई जातियाँ हैं। इन्हीं में से कोल (Kolarian) भी हैं। पहले पहल ये जङ्गलों में रहते और फल, मूल तथा पशुओं के मांस से अपना जीवन-निर्वाह करते। न तो इनके रहने को घर थे और न पहनने को कपड़े। जहाँ पाते वहीं ये अपना डेरा जमा लेते और वर्षा तथा धूप से बचने के लिए छाया-वृक्षों की डालियों से झोपड़ियाँ बना लेते थे। उस समय ये एक प्रकार के पशु थे। पर अब इनकी दशा में कुछ सुधार होने लगा है। अब ये सभ्य हुए तब घर बनाने और कपड़े पहनने तभी से ये 'हो' कहलाने लगे। अब इनकी जाति का नाम ही 'हो' हो गया है। इनकी भाषा में 'हो' मनुष्य को कहते हैं।

आज कल ये सिंहभूमि ज़िले में अधिक पाये जाते हैं। इस ज़िले में सरकार ने इनकी शिक्षा का कुछ विशेष प्रबन्ध कर रक्खा है। बिना फ़ीस दिये ही ये इस ज़िले के स्कूलों में पढ़ सकते हैं। किसी किसी को तो वज़ीफ़ा भी मिलता है। कोई कोई अब नौकरी-चाकरी भी करने लगे हैं। इन सब का रहन सहन निराला ही है। ये दल बाँध कर बाज़ारों में घूमते हैं। इनकी स्त्रियाँ भी इकट्ठी हो कर बाज़ार जाती हैं। युवक-युवतियाँ कभी कभी एक साथ परस्पर हाथ मिलाये बाजारों में फिरती हैं। स्त्रियों में एक विलक्षणता यह है कि जहाँ उनमें से कोई हँसी वहाँ बिना कारण भी अन्य सभी विकट हँसी हँसने लगती हैं।

अब ये गाँवों में घर बना कर बसते और खेती-बारी तथा मज़दूरी से अपना पेट पालते हैं। जब किसी के यहाँ बालक पैदा होता है तब आस पास के सब लोग उसके यहाँ आकर इकट्ठे होते हैं और दावत खा खाकर आनन्द मनाते हैं। लड़का जब युवावस्था को प्राप्त होता है तब उसकी शादी की तैयारी की जाती है। पर इस जाति में ब्याह करना बड़ा कठिन काम है। वर के पिता को बहुत ख़र्च करना पड़ता है। उसे कन्या के पिता को दस से बीस तक बैल और बहुत सा चावल, दाल इत्यादि अन्न देना पड़ता है। इसमें असमर्थ होने पर शादी रुक जाती है। शादी न होने के कारण ही यहाँ की बहुत सी स्त्रियाँ कुलटा हो जाती हैं। जब किसी की शादी होने लगती है तब आस पास के सब 'हो' स्त्री-पुरुष उसके यहाँ इकट्ठे होते हैं। एक भोज दिया जाता है। भोज में खाने पीने का अच्छा प्रबन्ध रहता है। ऐसे समय ये हँड़िया (भात से बनाया हुआ मद्य) ख़ूब पीते हैं और मतवाले होकर ख़ूब नाचते गाते हैं। सारी युवतियाँ एक साथ मिल कर मण्डप में घूमती और नाचती हैं। आदमी बजाते. मांदल (एक प्रकार का ढोलक) नगारा,

के लेख से लिखा इसके कि हिन्दू मुसलमान एक दूसरे से घृणा करें और कोई लाभ नहीं हो सकता। अगर थोड़े से मुसलमानों ने, जो हिन्दी-भाषा न थे, कुछ शब्दों को ठीक ठीक न लिखा या न बोला तो कौन सा अन्धेर हो गया और अगर हुआ भी तो बताइए कि क्या उनका लेख अब उनसे ठीक ठीक शब्द कहला लेगा और अगर उसने कहला भी लिया तो इसका फल क्या होगा। उनके क्रोध भरे लेख ने सरस्वती के हिन्दू और मुसलमान पाठकों का जी दुखाया और हिन्दू मुसलमानों को मिलाना तो मिला ना उनमें भेद और बढ़ा दिया। अगर यह यह लेख न लिखते तो यह भेद घटता नहीं तो जहाँ का तहाँ स्थिर अवश्य रहता। अब उसने भाषा की तुच्छ सेवा कर के देश की बहुत बड़ी हानि की। यह अच्छा न किया।

पहला विज्ञापन स्पष्ट यह बात बता रहा है कि मुसलमान हिन्दी के ज्ञाता न थे। अगर होते तो उनको क्या आवश्यकता थी कि जिस मार्ग पर वह अपने पिछले विज्ञापन बाँटने के समय चले उसे पहला विज्ञापन बाँटते समय न स्वीकार करते। ऐसा ज्ञात होता है कि सभासदों में एक आध इतनी हिन्दी जानता था कि उर्दू को नागरी अक्षरों में लिख दे। उसने अपने संस्कृत-प्रेमी मित्रों से जो दो चार शब्द सुने थे उनको लिख मारा। इस विज्ञापन से जब प्रयोजन सिद्ध न हुआ तो यह समझ में आया कि विज्ञापन की भाषा बदल दें। भाषा बदलने में मौलवी साहब की स्वयं आर्य्य-साहित्य ने सहायता की। जिन लोगों ने आर्य्य धार्मिक लिटरेचर उर्दू में देखा है वह इस बात को बहुत अच्छे प्रकार जानते हैं कि हमारे महाशयों ने कहाँ तक उर्दू में संस्कृत के शब्द मिलाये हैं। इन पुस्तक रचने वालों ने अपने विचार और धर्म को तो उर्दू में प्रकाशित करने का सम्बन्ध किया, परन्तु उसके गले पर उलटी छुरी फेरी। एक तो भाषा वह वर्ती जो उर्दू पढ़ने लिखने वाले न जानते थे। पेट भर कर संस्कृत शब्द भर दिये और उस पर अपराध यह किया कि इन शब्दों पर एराब न लगा कर पाठकों को ठीक ठीक उच्चारण न सिखाया। उर्दू वाले अनाथ अब क्या कर सकते थे। जो उच्चारण उनको भला प्रतीत हुआ उसी को स्वीकार कर लिया। यह फ़ारसी शब्द न थे जिन्हें ग़यासुल्लुग़ात में देख लेते और न अरबी के कि सुराह काम देती। तीसरे विज्ञापन के हैडिंग का प्रथम शब्द ही साहब की विद्वत्ता को अच्छे प्रकार प्रगट कर रहा है यदि हिन्दी जाना होते तो यह शब्द ठीक देते "मौजिज़ा" शब्द का रूप पाठकों को यों दिखाते "मुअजिज़ः"। मौलवी साहब से मुसलमानों को यह जाना चाहिए कि उन्होंने उनके धार्मिक साहित्य का अशुद्ध लिख कर उनका और उनके धर्म का सिरका यह भी सम्भव है कि संस्कृत के जो शब्द ठीक हैं उसका कारण छापेखाने वालों की कृपा हो, क्यों देखने में आया है कि अगर कोई शब्द पुस्तक लिखने में अशुद्ध लिख दिया तो कम्पोजीटर उसे ठीक कर उपाध्याय जी ने अपने लेख में यह कहीं नहीं बताया लकचरर्स में से कोई मुसलमान ऐसा भी था जिसने हिन्दी में कुछ कहा हो। यह दूसरा प्रमाण है कि वहाँ कितनी हिन्दी जानते थे जिन्होंने विज्ञापन बाँट कर मिश्र को अप्रसन्न किया।

उपाध्याय जी के कोप का दूसरा कारण शब्दों का उच्चारण है। हमारे महाशय इस बात को तो जानते होंगे कि अभ्यास भी इस संसार में कोई पदार्थ है। जो कुछ अभ्यास से कर लेता है वह बिना अभ्यास कर सकता। इसमें कोई सन्देह नहीं कि फ़ारसी और की लिपि में प्रायः वह अक्षर विद्यमान हैं जो हिन्दी में पाये जाते हैं। परन्तु उर्दू, फ़ारसी और अरबी में कोई अक्षर नहीं जो "ण" से मिलता हो। उदाहरण देखिए हम आप को अभ्यास का एक खेल दिखावें। यह तो बताइए कि आपने "मुर्दे" को "मुर्दे" (हाय से) क्यों लिखा (सरस्वती, जून १९१४, पृष्ठ पैराग्राफ २)? क्या आप इस शब्द के ठीक ठीक करने की योग्यता नहीं रखते, या संस्कृत और हिन्दी उच्चारण ऐसा है कि आप के लिए इस शब्द का कठिन हो गया? आप के लेख से तो ऐसा बोध होता कि आप फ़ारसी भी जानते हैं। फिर यह क्यों!

जैसे अब मुसलमानों से बिगड़ गये, आज्ञा हो तो हम भी कुछ कहें। हम आप को हिन्दी वालों का अपराध बताते हैं। मिस्टर गुलेरी "ग्रोमचे" लिखने हैं (सरस्वती, १९१२, पृष्ठ ३७१) और "पड़दे" बोलने हैं (

जून १९१२, पृष्ठ ३४२ ) आपके पण्डित बदरीनाथ लिखते हैं। 'दू' के ढंग की कुछ कविता करने के बल गिनते हैं। ( सरस्वती, जून १९१२, ४ )

[illegible]
इसकी तक़्तीअ़ तो यों हुई—

| | | | |
|---|---|---|---|
| फ़ाइलातुन | मफ़ऊ़लु | फ़ाइलातुन | |
| ए स्वम्भू | सबको व | नाथा तू ने | |

अ इसका करके इसकी तक़्तीअ़ तो कीजिये देखिए कि एक ी ठीक बड़ी जाती है कि नहीं ?

[illegible]
ही और संस्कृत अगर 'सम भाषाये' हैं तो किसी ं नहीं बिगाड़ सकतीं और न उन का तिरस्कार ा है।

जो कबीर को गुरु कहीं, नहि रहीम पढ़ जाहि।
तिनके मुखन पैसरे, कछु दुख मानत नाहि।

( रहीम )

सलीम जफ़र—
मुन्शी ज़ालिम

---

## —जातीय एक नया सम्प्रदाय।

रतवर्ष के आदिम निवासी अनार्य्य कहलाते हैं। इन अनार्य्यों की कई जातियाँ हैं। इन्हीं में से कोल (Kolarian) भी हैं। पहले पहल ये जङ्गलों में रहते और फल, मूल व पशुओं के मांस से अपना जीवन-निर्वाह ते। न तो इनके रहने को घर थे और न पहनने कपड़े। जहाँ पाते वहीं ये अपना डेरा जमा र धूप तथा धूप से बचने के लिए छाया ड़ों की डालियों से झोपड़ियाँ बना लेते थे। समय ये एक प्रकार के पशु थे। पर अब दशा में कुछ सुधार होने लगा है। अब ये भ्य हुए तब घर बनाने और कपड़े पहनने भी से ये 'हो' कहलाने लगे। अब इनकी जाति का नाम ही 'हो' हो गया है। इनकी भाषा में 'हो' मनुष्य को कहते हैं।

आज कल ये सिंहभूमि ज़िले में अधिक पाये जाते हैं। इस ज़िले में सरकार ने इनकी शिक्षा का कुछ विशेष प्रबन्ध कर रक्खा है। बिना फ़ीस दिये ही ये इस ज़िले के स्कूलों में पढ़ सकते हैं। किसी किसी को तो वज़ीफ़ा भी मिलता है। कोई कोई अब नौकरी-चाकरी भी करने लगे हैं। इन सब का रहन-सहन निराला ही है। ये दल बाँध कर बाज़ारों में घूमते हैं। इनकी स्त्रियाँ भी इकट्ठी हो कर बाज़ार जाती हैं। युवक-युवतियाँ कभी कभी एक साथ परस्पर हाथ मिलाये बाजारों में फिरती हैं। स्त्रियों में एक विलक्षणता यह है कि जहाँ उनमें से कोई हँसी वहाँ बिना कारण भी अन्य सभी विकट हँसी हँसने लगती हैं।

अब ये गाँवों में घर बना कर बसते और खेती-बारी तथा मज़दूरी से अपना पेट पालते हैं। जब किसी के यहाँ बालक पैदा होता है तब आस पास के सब लोग उसके यहाँ आकर इकट्ठे होते हैं और दावत खा खाकर आनन्द मनाते हैं। लड़का जब युवावस्था को प्राप्त होता है तब उसकी शादी की तैयारी की जाती है। पर इस जाति में ब्याह करना बड़ा कठिन काम है। वर के पिता को बहुत ख़र्च करना पड़ता है। उसे कन्या के पिता को दस से बीस तक बैल और बहुत सा चावल, दाल इत्यादि अन्न देना पड़ता है। इसमें असमर्थ होने पर शादी टूट जाती है। शादी न होने के कारण ही यहाँ की बहुत सी स्त्रियाँ कुमारी रह जाती हैं। जब किसी की शादी होने लगती है तब आस पास के सब 'हो' स्त्री-पुरुष उसके यहाँ इकट्ठे होते हैं। एक भोज दिया जाता है। भोज में खाने पीने का अच्छा प्रबन्ध रहता है। ऐसे समय ये हँड़िया (भात से बनाया हुआ मद्य) ख़ूब पीते हैं और मतवाले होकर ख़ूब नाचते गाते हैं। सारी युवतियाँ एक साथ मिल कर मण्डल में घूमती और नाचती हैं। आदमी बजाते. मांदल (एक प्रकार का ढोलक) मजाते,

मानने लगते हैं। अच्छे नट का यही कर्तव्य है कि जब तक वह रङ्ग-भूमि में रहे तब तक प्रेक्षकों के मन पर अपना पूर्ण प्रभाव जमाये रहे। उदाहरण के लिए जिस समय मराठी के सन्त तुकाराम नाटक में तुकाराम हरिकीर्तन करता है उस समय सारे दर्शक अपने आपको भूल कर उसका अनुयायी समझने लगते हैं और उसके शब्दों पर ताली बजा बजा कर खुद भी हरिनाम स्मरण करने लगते हैं। इसी तरह "प्रेम-संन्यास" में कमलाकर की दुष्टता को देख कर सब लोग इतने दुखी हो जाते हैं कि उनका मन यही चाहने लगता है कि रङ्ग-मञ्च पर चढ़ कर कमलाकर का अन्त कर दें। इससे स्पष्ट है कि नाटक मनुष्यों के हृदयों पर कैसा प्रभाव डालता है।

## नाटक कैसे हों ?

नाटक-रचना कोई आसान बात नहीं। नाटक में वे गुण चुन चुन कर रखने चाहिए जो मनुष्यों के हृदयों पर उन्नति की छाप जमायें। ऐसा न करने से नाटकों का परिणाम विपरीत और भयङ्कर होता है। हिन्दी के नाटकों और नाटक मण्डलियों का ख्याल आते ही बड़ा दुःख होता है। हिन्दी की अच्छी नाटक मण्डलियां तो हैं ही नहीं। लोग पारसी नाटक-मण्डलियों को ही हिन्दी की नाटक-मण्डलियां समझ कर अपनाते हैं। "गुलेबकावली" या "इन्द्र सभा" के तमाशे देख कर ये अपने आपको परिस्थान का दूत-दूत समझ बैठते हैं। रङ्ग-भूमि में अश्लील और अनुचित बातों का बहुधा अभिनय करके इस तरह की ये मण्डलियां में नाटक को बदनाम किया करती हैं। हिन्दी-प्रेमी तो इन मण्डलियों के नाटकों में बहुत ही कम होता है। और तो और "हरिश्चन्द्र-नाटक" में जब हरिश्चन्द्र को सर्प काटता है तब वह तो कह दिखाता है — "हाय मारयो, मारयो रे"! [illegible] हिन्दी के कुछ [illegible] नाटक पुस्तकें, [illegible] हजारों से [illegible] कर [illegible] हिन्दी रङ्ग-[illegible] [illegible] [illegible] [

सरस्वती

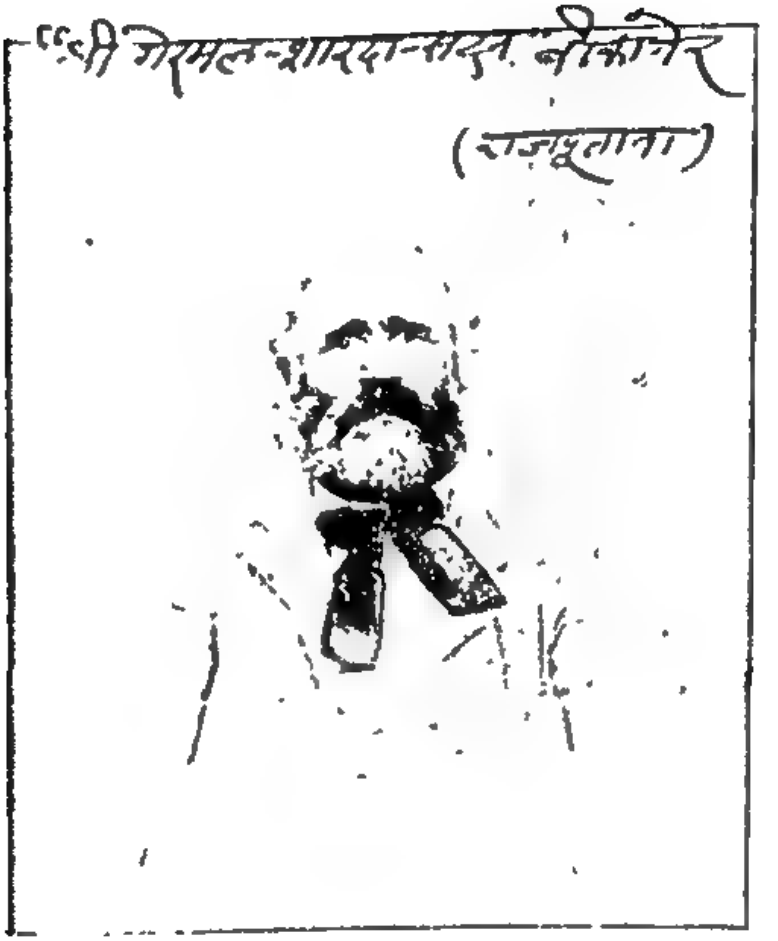


मिस्टर बेरे हार्डी ।

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

ा-चलना भी नहीं जानते। पर, पारसी मण्ड-
के नाटक देखने देखने ये अब उर्दू के ऐसे
र और फ़िक़रे कहते और बोलते हैं कि सुन
ह रह जाना पड़ता है। इसका कारण यह है कि
शाला में लोग एकाग्र-चित्त होकर अभिनय देखते
समें जो कोई नवीन घटना या अच्छा भाषण
उसे समझने की सब चेष्टा करते हैं। इस
धीरे धीरे ये उन शब्दों को आसानी से
ने लगते हैं। इसी तरह यदि बहुत सी हिन्दी-
-मण्डलियाँ देश में अपने अभिनय दिखाने
तो क्या हिन्दी-भाषा का प्रभाव लोगों पर न
अवश्य ही पड़े। छोटी मोटी बातों में जहाँ
फ़ारसी के बड़े बड़े लफ़्ज़ काम में लाते हैं,
के सरल और मधुर शब्दों का वे अवश्य
ग करने लगें। इस प्रकार सर्व-साधारण में
-नाटकों के द्वारा हिन्दी-भाषा का प्रचार सर-
से हो सकता है।

## हिन्दी के उपन्यास।

किसी कल्पित कहानी या किसी मनुष्य के चरित्र
ऐसे वाक्यों में बाँध कर या ऐसे विस्तार के
लिखना कि पाठकों के मन में उसका चित्र
त हो जाय, यही उपन्यास है। यही उपन्यास
क कहा जाता है जिसको पढ़ने में, आदि से अन्त
, मनुष्य का मन न ऊबे। केवल इतना ही नहीं,
कार के उद्देशों से सहानुभूति और जिस
र्ग से पाठकों को चलाने की वह इच्छा रखता
उस पर चलने की प्रबल इच्छा—अधिक नहीं
पढ़ने समय तक—बनी रहे। यदि वह इतना करने
समर्थ है तो समझना चाहिए कि उपन्यासकार
अपना कर्तव्य अच्छी तरह पालन कर दिया।
उपन्यास में हर बात का वर्णन उत्तम रीति से किया
ा हो। वर्तमान समय में लोगों की रुचि अस्वा-
विक बातों से जाती रही है। इसलिए उपन्यासों
ऐसी बातें न लिखी जायँ तो अच्छा। हिन्दी में
ों की तरह उपन्यासों की भी बुरी दशा है।
दी के वर्तमान उपन्यास जासूसी और तिलिस्म
के भाण्डार हैं। उनके लेखक तिलिस्म के फन्दे में
ऐसे फँस गये हैं कि उन्हें भाषा का ध्यान ही नहीं
रह गया है। कुछ लोगों का ध्यान अवश्य अब इस
ओर आकृष्ट हुआ है। अब वे उपन्यासों की रचना
में भाषा पर भी उचित ध्यान देने लगे हैं। नये
प्रकाशित उपन्यासों में बहुत से ऐसे हैं जो दूसरी
भाषाओं से अनुवादित हैं। हिन्दी में जासूसी
उपन्यासों का आधिक्य तो है, पर सामाजिक
उपन्यासों की बहुत ही कमी है। बालकों और
बालिकाओं के पढ़ने योग्य उपन्यास तो हैं ही नहीं।
अन्यान्य भाषाओं में बालक-बालिकाओं के पढ़ने योग्य
उपन्यास लिखने का बड़ा प्रयत्न हो रहा है। बहुत
अच्छा हो यदि हिन्दी-प्रेमी भी इस ओर ध्यान दें।
एक अँगरेज़ का कथन है—"Child is the father
of man."—अर्थात् बालक-बालिकायें ही समय
पर पिता और माता के पदों पर पहुँचेंगी। यदि
अच्छे और शिक्षाप्रद उपन्यासों-द्वारा उनके अपरि-
पक्व मन पर उत्तम गुणों का प्रभाव डाला जाय
तो होनहार सन्तति का कितना बड़ा उपकार हो।
अँगरेज़ी, मराठी और बँगला आदि भाषाओं में इस
प्रकार की पुस्तकें बहुत हैं और बहुत बनती जा रही
हैं। पर, हिन्दी में लोगों का इस ओर ध्यान ही नहीं।
अँगरेज़ी के—"Basket of Flowers"—के ढँग पर
यदि हिन्दी में कुछ उपन्यास लिखे जायँ तो बालकों
का बड़ा उपकार हो। आप यह न समझें कि हिन्दी
में मराठी और अँगरेज़ी के समान बड़े बड़े लेखक
नहीं। एक से एक एम० ए०, बी० ए० विद्वान् लेखक
मौजूद हैं। क्षमा कीजिए, कहने में भूल हुई। हमारे
एम० ए० और बी० ए० सज्जनों को इतना अवकाश
ही नहीं कि वे हिन्दी में पुस्तकें या लेख लिखने का
प्रयत्न करें। उनके हृदयों में तो रुपया, रेलवाहन,
इण्डियनसन् और कार्ज़ी आदि पुरस्कार उपन्यास
कारों के वर्णित दृश्य देखियमान हो रहे हैं। फिर
भला, बेचारी हिन्दी को वे क्यों पूछें? बहुत से अँग-
रेज़ीदाँ लोग यह समझते हैं कि हिन्दी में लेख लिखना
अपने और अपने हिन्दी की हरजत्त कम करना है।

## भेद-भाव।

अब विचार यह करना है कि नाटकों और उपन्यासों में भेद क्या है? नाटक में जिस तरह अङ्क होते हैं उसी तरह उपन्यास में परिच्छेद आदि होते हैं। नाटक में बहुधा जब कोई बड़ी घटना हुई, या किसी ने किसी का ख़ून किया, या किसी को बचाया, तब यवनिका-पतन (Drop Scene) होता है। उपन्यास में भी इसी तरह जहाँ कहीं विचित्र घटना आई कि परिच्छेद का अन्त हुआ। आगे चल कर फिर दो तीन परिच्छेद तक पहली घटना का कुछ सम्बन्ध ही नहीं मिलता। ये सब बातें मनुष्य की आतुरता को बढ़ाने के लिए हैं। नाटक में हम दर्शकों के सामने एक बात को प्रत्यक्ष रूप में अभिनय करके दिखला देते हैं और उपन्यास में हम उसी को वर्णन और कल्पना के द्वारा पाठकों के हृदय के भीतर चित्र की तरह अङ्कित कर देते हैं।

## वाक्य-रचना।

यहाँ पर इन दोनों की वाक्य-रचना के सम्बन्ध में भी कुछ कहना उचित है। नाटक में जहाँ तक हो सके सरल और छोटे वाक्य रक्खे जायँ। ऐसे वाक्यों का प्रभाव ज़ोरदार होता है। गूढ़ और तत्त्व-ज्ञान-सम्बन्धी वाक्यों की अधिकता न होनी चाहिए। क्योंकि, नाट्यशाला में, उस समय, लोगों को मनन करने का अवकाश नहीं रहता। इसके विपरीत, उपन्यास में चाहे जितने बड़े और उत्तम वाक्य लिखे जा सकते हैं। वाक्यों को समझ कर लोग उनके भीतरी रहस्यों को जितना ही अवगत करेंगे उतना ही उन्हें आनन्द मिलेगा। जो विषय उपन्यास में पूर्ण रूप से और विस्तार-पूर्वक आता है वही नाटक में संक्षेप से आता है। क्योंकि, नाटक में हृदय-विशेष ज़रा देर ही देखा जा सकता है। पर उपन्यास में मनन करने का भी सुभीता रहता है।

विपिनबिहारी धीयालय।

## आशा।

जब दिल दुख से घबराता है, भय से शरीर काँपे।
जब साहस पीठ दिखाता है, पद बढ़ना का हर नापे।
तब तू ढाढ़स बँधवाती है।
क्या सब्ज़ बाग़ दिखलाती है॥१॥

जब घोर विपद्-घन घिरते हैं, सिर पर दुख ओले गिरें।
नर बने बावले फिरते हैं, प्रिय प्राण डूबते तिरें।
तब तू ही उन्हें बचाती है।
नौका बन कर आ जाती है॥२॥

दौर्भाग्य-दुष्ट जब आता है, नित चाहें आपदा करे।
मन सुहृदों का फिर जाता है, आँखें हर एक दिखाएँ।
तब प्राण-सञ्जिनी बनती है।
तुझ से बस गाड़ी चलती है॥३॥

जब जब नर व्याकुल होता है, खाना दुख-सर में ग़ोते।
अपने अभाग्य पर रोता है, जब हाथ धैर्य से धोए।
तब करुणा तुझको आती है।
तू उसका मन बहलाती है॥४॥

जब चिन्ता-चिता धधकती है, पीड़ा की लपट लपटें।
मुँह खोल मृत्यु पथ तकती है, कर बल बुद्धि भी थकें।
तब झट चुपके से आती है।
तू आश्वासन दे जाती है॥५॥

जब व्यथा व्यथित मन करती है, दुरवाञ्छा सुख सब हरें।
जब भूख प्यास भी मरती है, निद्रा भी आने डरे।
तब आकर थपकी देती है।
सब मनो-व्याधि हर लेती है॥६॥

दुख मुझे लिखा क्या थोड़ा था, क्या विधि का धोखा होता।
दिल दुखों ने यों तोड़ा था, मैं ने सिर अपना धोता।
यदि आशा तू न पकड़ लेती।
निज-बन्धन में न जकड़ लेती॥७॥

अब कुटिया में दुख पाता हूँ, आशा के महल बनाता।
पद पीछे नहीं हटाता हूँ, जब तुझे दाहने पाता।
तुझ पर वारूँ तन मन आशा।
तू ही है जीवन-धन आशा॥८॥

मनोरी।

# री अमेरिका में "सीपोहो-कानुमा-कोहकी" नामक जाति।

सभ्य संसार जानता है कि अमेरिका के मूल-निवासियों का नाम नेटिव अमेरिकन या अमेरिकन इन्डियन है। जब कोलम्बस ने इस नई दुनिया का पता लगाया था तब यही जाति यहाँ पर बसती थी। तभी से इसको इन्डियन कहते हैं। अपनी जन्म-भूमि की रक्षा के लिए ये लोग खूब लड़े थे और अब भी कभी कभी लड़ जाया करते हैं। पर सूर्य के सामने दीपक का प्रकाश नहीं ठहरता। बहुत से इसी तरह लड़ भिड़ कर मर गये। बचाये खोचे से रह गये हैं। ये अब कुछ पढ़ने लिखने भी लगे हैं। अमेरिका की सरकार इनके खर्च भी करती है। पर, तो भी, ये लोग अधिकतर जङ्गलों में ही रहते हैं। इनके खाने पीने का ढङ्ग, रस्म-रिवाज, भाषा इत्यादि सभी जुदा है। ये कई दलों में विभक्त हैं। हर दल का नाम अलग अलग है। यहाँ उन इन्डियन लोगों के विषय में कुछ न लिखा जायगा जो सभ्य हो चुके हैं या होते जा रहे हैं। जो जङ्गलों में रहते हैं और जिनके रीति-रिवाज अभी तक नहीं बदले उन्हीं की बाबत इस लेख में की जायगी। अमेरिका के एक विद्वान ने इन जातियों की बस्तियों में खूब भ्रमण किया है। उन्हीं के लेख के आधार पर मैं यह लेख लिख रहा हूँ।

इन लोगों के एक दल का नाम है "सीपोहो-कानुमा-कोहकी"। इसका अर्थ है ऐसे लोग जो बेधड़क घूमते रहें।

दूसरे दलों का खान पान, रस्म-रिवाज करीब करीब इसी जाति का सा है। पर भाषा इत्यादि कई बातों में कुछ फ़रक है। अतएव यह जाति बसती इस खंड का नाम मन्दसन या मन्दसव है। इस वास्ते अमेरिका वाले इनको "मेन्डसन-इन्डियन" भी कहते हैं। इन लोगों की संख्या तीन हज़ार से अधिक नहीं। ये लोग दूसरे दलों की तरह इधर उधर भ्रमण नहीं करते। दूसरे दलों के लोग भ्रमणकारी होते हैं—जैसे हमारे देश में नागा लोग। एक दल दूसरे का जानी दुश्मन होता है। धनुष-बाण, भाला, चाकू इत्यादि इनके हथियार हैं। इनका धनुष, लकड़ी या हड्डी का होता है। धनुष की लम्बाई ढाई फीट से लेकर तीन फीट तक होती है। प्रत्येक व्यक्ति एक धनुष-बाण, चाकू और भाला हर समय अपने पास रखता है। पहले ये लोग पत्थर या सींग का बाण बनाते थे। पर अब लोहे का बना बनाया खरीद लेते हैं। घोड़े की सवारी ये खूब जानते हैं। जिस तराई में ये लोग बसते हैं, वहाँ भैंसे बहुत पाये जाते हैं। यही इनकी मुख्य खूराक है। ये भैंसे हमारे देश की तरह के नहीं होते। इनकी गर्दन पर शेर की तरह लम्बे लम्बे बाल होते हैं। रङ्ग भूरा, काला और सफ़ेद भी होता है। अमेरिका के सभी अजायबघरों में इनके नमूने रक्खे हैं। इन्हीं भैंसों का "मन्दसन" लोग शिकार करते हैं। बहादुर ये इतने होते हैं कि देखते ही देखते भैंसे का काम तमाम कर डालते हैं। बाण ये इतनी तेज़ी से छोड़ते हैं कि वह भैंसे के बदन को छेद कर आर-पार निकल जाता है। कभी कभी ऐसे शिकारों में शिकारी भी भैंसों के शिकार हो जाया करते हैं। ये लोग जब कभी पैदल शिकार करते हैं तब भैंसे की खाल पहन लेते हैं। उसमें सींग भी लगे रहते हैं। फिर ये सिर झुका कर भैंसों के झुण्ड में चले जाते हैं। तब इनके बाण छूटने लगते हैं। एक मिनट में बीस से लेकर पचीस तक बाण ये लोग छोड़ सकते हैं। यदि बाण भैंसे के कलेजे में लगा तो दो ही मिनट में उसका काम तमाम हो जाता है। नहीं तो खूब घमासान लड़ाई होती है। भैंसे इनके दर्जनों को मार कर गिरा देते हैं। यदि पैदल शिकार होता है तो शिकारियों को बहुत चोटें आती हैं। पर मरते बहुत कम हैं। ये लोग खाल की बनी

काम करते हैं। शिकार समाप्त होने पर खूब नाच-गान होता है। भैंसे की खाल को ये स्त्रीलोग छीलते हैं और मांस काट कर खाते हैं। साल में यह शिकार दो ही तीन दफ़े होता है, क्योंकि भैंसे खेती तराई में चरकर लगाया करते हैं। जब जिस गाँव के निकट पहुँचते हैं तभी वहाँ इनका शिकार होता है। हर शिकार में बहुत से भैंसे मारे जाते हैं। उनका मांस धूप में सुखा कर ये लोग कूट डालते हैं। उसका आटा बना डालते हैं। इसी आटे की रोटी बना कर ये खाते हैं। चर्बी से ये तेल बनाते हैं। यही इनका मक्खन या घी है।

ये लोग भैंसे ही की खाल पहनते हैं। उसीसे डेरे (Tent) भी बनाते हैं। भैंसे की जीभ को ये अद्भुत पदार्थ समझते हैं। भोज इत्यादि के मौक़े पर उसकी बड़ी इज़्ज़त होती है। अमेरिका के पूर्वोक्त महाशय के साथ इन लोगों ने कैसा बर्ताव किया, इसका भी हाल उन्हीं की ज़बानी सुन लीजिए:—

"मुझे एक दफ़े नेवता मिला। मैं गया। बैठने के लिए मृग-चर्म बिछा दिया गया। मैं, वहाँ की रस्म के अनुसार, पालथी मार कर (Cross-legged) बैठ गया। तब गाँव के मुखिया ने मुझे एक लम्बा पाइप (हुक्का) दिया। मैंने उसे पिया। इनकी तम्बाकू भी भैंसे ही की हड्डी की होती है। खाने के लिए तीन तश्तरियों में, जो लकड़ी की थीं, भैंसे की जीभ, भैंसे के मांस से बनी हुई रोटी और चर्बीवाला मक्खन आया। नमक किसी में भी नहीं। ये लोग नमक नहीं खाते। मुखिया मेरे सामने बैठ गया और हुक्का पीने लगा। जब मैं हुक्का पी चुका तब मुखिये ने मांस का एक टुकड़ा लिया। उसे "होपेने-ची-चापा-दी"—यह मन्त्र पढ़ कर उसने सामने रक्खी हुई आग में डाल दिया। फिर उसने इशारा किया कि आप भोजन करें। मैं भोजन करता जाता था और मुखिया बैठा बैठा हुक्का पीता जाता था। उस समय और कोई खाता न था। भोजन करते समय कोई बोलता भी न था। वहाँ पर बहुत से स्त्री-बच्चे बैठे थे, पर सब चुपचाप मैं खा चुका तब मुखिया ने फिर वही हुक्का दिया। चलते समय वही मुख-खाला, जिस पर बैठा था, मुझे भेंट में दिया गया। मैंने धन्यवाद-पूर्वक उसको स्वीकार किया। मैंने उसने हाथ मिलाया और फिर आने के लिए इच्छा प्रकट की। डेरे पर आ कर मैंने अपने साथी से पूछा कि भोजन करने के पहले मुखिया क्या पढ़ता है और मांस को आग में क्यों फेंक देता है? उत्तर मिला कि मैं ठीक ठीक अर्थ तो मुखिया के सिवा और कोई नहीं जानता, पर तुम्हारी तरफ़ से उसने अपने देवता को याद किया था। खाने के पहले देवता को नैवेद्यानुकूल बात है।"

जिस पदार्थ या जिस बात के विषय में ये कुछ नहीं जानते या इनके लिए वह अद्भुत मालूम होती है उसे ये ऐसे नाम से पुकारते जिसका अर्थ गुप्त होता है। इन लोगों के फ़ान्सीसी सौदागर कारोबार करते हैं। सौदा लोग उस शब्द की जगह "मेडिसिन" का प्रयोग करते हैं। पर दर असल उस शब्द का क्या होता है, यह नहीं बताया जा सकता। और लेख में ऐसे शब्द की जगह "मेडिसिन" का प्रयोग किया जायगा। मेडिसिन की एक एक हर व्यक्ति के पास होती है। यह लम्बी होती इसमें हड्डी, खोपड़ी, शंख, सीप इत्यादि जड़े हैं। जब बालक १५ या १६ वर्ष का हो जाता तब उसके मुखिया उससे पूछते हैं कि तू किस की झोली चाहता है। तब वह बालक दो दिन तक किसी महती शक्ति या महान् (Great Spirit) के नाम ले लेकर चिल्लाता जब उसको स्वप्न में किसी जानवर या चिड़िया रक्षक-रूप दिखाई देता है तब उसी जानवर को कर उसी की खाल की झोली बनाई जाती है। झोली के विषय में कुछ टोना-टटका भी किया जाता है। यह एक अमूल्य चीज़ समझी जाती और जान से भी अधिक प्यारी होती है। यह

ाय हर व्यक्ति के साथ रहती है। यदि संयोग-
ा खेा जाय या लड़ते समय फट फुट जाय तो
या संस्कार होता है। परन्तु दूसरा संस्कार
क नहीं होता जब तक होली पाने वाला
दुश्मन को रण में मार न डाले। जब वह
में किसी दूसरे दल के आदमी को मार
है तब उसको दूसरी होली मिलती है।
सने रण में दुश्मन से कोई होली छीन ली
उसकी हो जाती है। यह होली प्राण रक्षक
की सदा पूजा होती है। इसका नाम "मेडि-
ा" (जादू की होली) है। यह होली ही इन
ा ईश्वर है।

## त्योहार।

ना जो समय शिकार में जाता है उसे छोड़
ी समय में ये लोग त्योहार मनाया करते
त्योहार का नाम है मैसा नाच इस त्योहार
ोग भैंसे की खाल पहन कर इकट्ठे होते हैं।
ग भैंसे मान लिये जाते हैं और कुछ
। प्रत्येक शिकारी के हाथ में धनुष-बाण
। हर साल इसमें लड़ाई का होता है
क पर मुद्दा रहता है इनके बड़े शिकार

लगता है वह मैदान से हटा दिया जाता है।
तरह जब तक एक दल का बिलकुल ही
नाश नहीं हो जाता लड़ाई हुआ करती है। गर्मि
के महीने इसी तरह कट जाते हैं। जो दल जीत
है उसको मुर्गियां इनाम देता है। उस दल के
बहादुर समझे जाते हैं।

इन लोगों के चैत भी कई त्योहार हैं। पर,
में यही लड़ाई भिड़ाई होती है। साल में इनका
मुख्य त्योहार होता है चैत कई दिन तक मन
जाता है। इसका भी नाम "मेडिसिन" रक्खा
है। इसमें मनुष्य का बलिदान भी होता है।
जान से कोई नहीं मारा जाता। जिस आदमी
चढ़ाना होता है उसकी बड़ी दुर्गति होती
हर साल दो आदमियों के साथ ऐसा अन्याय कि
जाता है। उनको बाँधकर ये लोग लटका देते
फिर उनका बदन चाकू से काटते चैत चम
खींचते हैं। जिन आदमियों की यह दुर्गति होती
ये मेडिसिन-मैन (जादूगर या परमात्मा)
पुकारते हैं। वे कहते हैं कि हे सदर्प बड़े "मेडिसि
हम तुम्हारे नाम पर इतनी बड़ी वेदनायें सह
हैं हमारी रक्षा करो स्त्री-पुरुष सभी इ
सम्मिलित होते हैं। इन में इन दोनों की

कम करते हैं। शिकार खतम होने पर खूब नाच-गान होता है। भैंसे की खाल को ये खींच लेते हैं और मांस चट कर जाते हैं। साल में यह शिकार दो ही तीन दफ़े होता है, क्योंकि भैंसे सारी नराई में चक्कर लगाया करते हैं। जब जिस गाँव के निकट पहुँचते हैं तभी वहाँ इनका शिकार होता है। हर शिकार में बहुत से भैंसे मारे जाते हैं। उनका मांस धूप में सुखा कर ये लोग कूट डालते हैं। उसका आटा बना डालते हैं। इसी आटे की रोटी बना कर ये खाते हैं। चर्बी से ये तेल बनाते हैं। यही इनका मक्खन या घी है।

ये लोग भैंसे ही की खाल पहनते हैं। उसीसे डेरे (Tent) भी बनाते हैं। भैंसे की जीभ को ये अद्भुत पदार्थ समझते हैं। भोज इत्यादि के मौके पर उसकी बड़ी इज़्ज़त होती है। अमेरिका के पूर्वोक्त महाशय के साथ इन लोगों ने कैसा बर्ताव किया, इसका भी हाल उन्हीं की ज़बानी सुन लीजिए:—

"मुझे एक दफ़े नेवता मिला। मैं गया। बैठने के लिए मृग-चर्म बिछा दिया गया। मैं, वहाँ की रस्म के अनुसार, पालथी मार कर (Cross-legged) बैठ गया। तब गाँव के मुखिया ने मुझे एक लम्बा पाइप (हुक्का) दिया। मैंने उसे पिया। इनकी तम्बाकू भी भैंसे ही की हड्डी की होती है। खाने के लिए तीन तश्तरियों में, जो लकड़ी की [illegible] पर बहुत से स्त्री-बच्चे बैठे थे, पर सब चुप थे। मैं खा चुका तब मुखिया ने फिर वही [illegible] दिया। चलते समय वही मृग-छाला, जिस पर बैठा था, मुझे भेंट में दिया गया। मैंने धन्यवाद पूर्वक उसको स्वीकार किया। तब उसने [illegible] मिलाया और फिर आने के लिए इच्छा प्रकट की। डेरे पर आ कर मैंने अपने साथी से पूछा कि भोजन करने के पहले मुखिया क्या पढ़ता है और मांस आग में क्यों फेंक देता है? उत्तर मिला कि मैं ठीक ठीक अर्थ तो मुखिया के सिवा और कोई नहीं जानता, पर तुम्हारी तरफ़ से उसने अपने इष्ट देव को याद किया था। खाने के पहले ऐसा करना नियमानुकूल बात है।"

जिस पदार्थ या जिस बात के विषय में ये लोग कुछ नहीं जानते या इनके लिए वह अद्भुत मालूम होती है उसे ये ऐसे नाम से पुकारते हैं जिसका अर्थ गुप्त होता है। इन लोगों के [illegible] फ़ान्सीसी सौदागर कारोबार करते हैं। सौदागर लोग उस शब्द की जगह "मेडिसिन" का प्रयोग करते हैं। पर दर असल उस शब्द का क्या अर्थ होता है, यह नहीं बताया जा सकता। खैर, लेख में ऐसे शब्द की जगह "मेडिसिन" का प्रयोग किया जायगा। मेडिसिन की एक एक [illegible] हर व्यक्ति [illegible] होती है। यह लम्बी होती है, इसमें हर [illegible] इत्यादि जड़े [illegible]

य हर व्यक्ति के साथ रहती है। यदि संयोग-
ह खो जाय या लड़ते समय फट फुट जाय तो
या संस्कार होता है। परन्तु दूसरा संस्कार
क नहीं होता जब तक झोली पाने वाला
दुश्मन को रण में मार न डाले। जब यह
में किसी दूसरे दल के आदमी को मार
है तब उसको दूसरी झोली मिलती है।
सने रण में दुश्मन से कोई झोली छीन ली
उसकी देा जाती है। यह झोली प्राण-रक्षक
की सदा पूजा होती है। इसका नाम "मेडि-
ग" (जादू की झोली) है। यह झोली ही इन
का ईश्वर है।

## त्योहार।

का जो समय शिकार में जाता है उसे छोड़
की समय में ये लोग त्योहार मनाया करते
क त्योहार का नाम है भैंसा-नाच। इस त्योहार
लोग भैंसे की खाल पहन कर इकट्ठे होते हैं।
ोग भैंसे मान लिये जाते हैं और कुछ
ो। प्रत्येक शिकारी के हाथ में धनुष-बाण
है। यह बाण अकसर लकड़ी का होता है
ोक पर मुड़ा रहता है। इसके बाद शिकार
लगता है। जिसके कलेजे के पास बाण लग
ह मरा समझा जाता है। बाण लगते ही
र पड़ता है। इसी तरह कई घण्टे तक झूठा
र होता रहता है।

ूसरा त्योहार भी इसी प्रकार का है। पर उसमें
दस से लेकर पन्द्रह वर्ष तक के लड़के झूठी
लड़ते हैं। गर्मी के दिनों में यह कवायद प्रति
सवेरे होती है। हर लड़के के हाथ में लकड़ी का
-बाण रहता है। बाण भद्दा होता है, जिसमें
के चुभे नहीं। खेल के पहले सब लड़के
कर दिये जाते हैं। वे दो दलों में बाँट दिये
हैं। एक दल दूसरे को दुश्मन मान लेता है
लड़ाई आरम्भ हो जाती है। गाँव का मुखिया
दूसरे लोग भी तमाशा देखते हैं। जिसके बाण
लगता है वह मैदान से हटा दिया जाता है। इसी
तरह जब तक एक दल का बिलकुल ही कृत्रिम
नाश नहीं हो जाता लड़ाई हुआ करती है। गर्मियों
के महीने इसी तरह कट जाते हैं। जो दल जीतता
है उसको मुखिया इनाम देता है। उस दल के लोग
बहादुर समझे जाते हैं।

इन लोगों के यहाँ भी कई त्योहार हैं। पर, सब
में यही लड़ाई भिड़ाई होती है। साल में इनका एक
मुख्य त्योहार होता है और कई दिन तक मनाया
जाता है। इसका भी नाम "मेडिसिन" रक्खा गया
है। इसमें मनुष्य का बलिदान भी होता है। पर,
जान से कोई नहीं मारा जाता। जिस आदमी को
चढ़ाना होता है उसकी बड़ी दुर्गति होती है।
हर साल दो आदमियों के साथ ऐसा बर्ताव किया
जाता है। उनको बाँधकर ये लोग लटका देते हैं।
फिर उनका बदन चाकू से काटते और चमड़ा
खींचते हैं। जिन आदमियों की यह दुर्गति होती है
वे "मेडिसिन-मैन" (जादू-गर या परमात्मा) को
पुकारते हैं। वे कहते हैं कि हे सबसे बड़े "मेडिसिन"
हम तुम्हारे नाम पर इतनी कड़ी वेदनायें सह रहे
हैं; हमारी रक्षा करो। स्त्री-पुरुष सभी इसमें
शामिल होते हैं। अन्त में उन दोनों की उँगलियाँ
काटकर "मेडिसिन" पर चढ़ा दी जाती हैं। तब
सब मिलकर नाचते, कूदते और गाते हैं। और
किसी भी त्योहार में स्त्रियाँ नाचने-कूदने में पुरुषों
का साथ नहीं देतीं। उनके धर्म्म धर्म्म पुरुषों से
भिन्न हैं। पर वे पुरुषों के त्योहारों को देख अवश्य
सकती हैं। इस त्योहार में अग्नि में मांस इत्यादि भी
भूना जाता है। जहाँ यह जलसा होता है वहाँ
सबके बीच में अग्नि जलाई जाती है और जब तक
त्योहार समाप्त नहीं होता जलती रहती है।
त्योहार के समय उपवास भी करना पड़ता है।

## रहन-सहन।

रहने के लिए ये लोग डेरे गाड़ते हैं। इनका
डेरा भैंसे की खाल का होता है। जब डेरे का भी

कम करते हैं। शिकार ख़तम होने पर ख़ूब नाच-गान होता है। भैंसे की खाल को ये खींच लेते हैं और मांस चट कर जाते हैं। साल में यह शिकार दो ही तीन दफ़े होता है, क्योंकि भैंसे सारी तराई में चक्कर लगाया करते हैं। जब जिस गाँव के निकट पहुँचते हैं तभी वहाँ इनका शिकार होता है। हर शिकार में बहुत से भैंसे मारे जाते हैं। उनका मांस धूप में सुखा कर ये लोग कूट डालते हैं। उसका आटा बना डालते हैं। इसी आटे की रोटी बना कर ये खाते हैं। चर्बी से ये तेल बनाते हैं। वही इनका मक्खन या घी है।

ये लोग भैंसे ही की खाल पहनते हैं। उसीसे डेरे (Tent) भी बनाते हैं। भैंसे की जीभ को ये अद्भुत पदार्थ समझते हैं। भोज इत्यादि के मौके पर उसकी बड़ी इज़्ज़त होती है। अमेरिका के पूर्वोक्त महाशय के साथ इन लोगों ने कैसा बर्ताव किया, इसका भी हाल उन्हीं की ज़बानी सुन लीजिए:—

"मुझे एक दफ़े नेवता मिला। मैं गया। बैठने के लिए मृग-चर्म बिछा दिया गया। मैं, वहाँ की रस्म के अनुसार, पालथी मार कर (Cross-legged) बैठ गया। तब गाँव के मुखिया ने मुझे एक लम्बा पाइप (हुक्का) दिया। मैंने उसे पिया। इनकी तश्तरी भी भैंसे ही की हड्डी की होती है। खाने के लिए तीन तश्तरियों में, जो लकड़ी की थीं, भैंसे की जीभ, भैंसे के मांस से बनी हुई रोटी और चर्बीवाला मक्खन आया। नमक किसी में भी नहीं। ये लोग नमक नहीं खाते। मुखिया मेरे सामने बैठ गया और हुक्का पीने लगा। जब मैं हुक्का पी चुका तब मुखिये ने मांस का एक टुकड़ा लिया। उसे "हापेने-चो-यापा-दो"—यह मन्त्र पढ़ कर उसने सामने रक्खी हुई आग में डाल दिया। फिर उसने इशारा किया कि आप भोजन करें। मैं भोजन करता जाता था और मुखिया बैठा बैठा हुक्का पीता जाता था। इस समय और कोई खाता न था। भोजन करते समय कोई बोलता भी न था। वहाँ पर बहुत से स्त्री-बच्चे बैठे थे, पर सब चुप थे। जब मैं खा चुका तब मुखिया ने फिर वही हुक्का मुझे दिया। चलते समय वही मृग-छाला, जिस पर मैं बैठा था, मुझे भेंट में दिया गया। मैंने धन्यवाद-पूर्वक उसको स्वीकार किया। तब उसने हाथ मिलाया और फिर आने के लिए इच्छा प्रकट की। डेरे पर आ कर मैंने अपने साथी से पूछा कि भोजन करने के पहले मुखिया क्या पढ़ता है और मांस आग में क्यों फेंक देता है? उत्तर मिला कि मन्त्र का ठीक ठीक अर्थ तो मुखिया के सिवा और कोई न जानता, पर तुम्हारी तरफ़ से उसने अपने इष्ट-देव को याद किया था। खाने के पहले ऐसा करना नियमानुकूल बात है।"

जिस पदार्थ या जिस बात के विषय में ये लोग कुछ नहीं जानते या इनके लिए यह अद्भुत सी मालूम होती है उसे ये ऐसे नाम से पुकारते हैं जिसका अर्थ गुप्त होता है। इन लोगों के साथ फ़ान्सीसी सौदागर कारोबार करते हैं। सौदागर लोग उस शब्द की जगह "मेडिसिन" का प्रयोग करते हैं। पर दर असल उस शब्द का क्या अर्थ होता है, यह नहीं बताया जा सकता। और, इस लेख में ऐसे शब्द की जगह "मेडिसिन" का ही प्रयोग किया जायगा। मेडिसिन की एक एक छोटी हर व्यक्ति के पास होती है। यह लम्बी होती है। इसमें हड्डी, खोपड़ी, शंख, सीप इत्यादि जड़े रहती हैं। जब बालक १५ या १६ वर्ष का हो जाता है तब उसके मुखिया उससे पूछते हैं कि तू किस तरह की झोली चाहता है। तब यह बालक दो तीन दिन तक किसी महती शक्ति या महान् आत्मा (Great Spirit) के नाम ले लेकर चिल्लाता है। जब उसको स्वप्न में किसी जानवर या चिड़िया का रूप-रूप दिखाई देता है तब उसी जानवर को मार कर उसी की खाल की झोली बनाई जाती है। इस झोली के विषय में कुछ टोना-टटका भी किया जाता है। यह एक अमूल्य चीज़ समझी जाती है और जान से भी अधिक प्यारी होती है। यह झोली

र समय हर व्यक्ति के साथ रहती है। यदि संयोग-
ा यह खो जाय या लड़ते समय फट फुट जाय तो
र नया संस्कार होता है। परन्तु दूसरा संस्कार
ब तक नहीं होता जब तक झोली पाने वाला
किसी दुश्मन को रण में मार न डाले। जब वह
ड़ाई में किसी दूसरे दल के आदमी को मार
ालता है तब उसको दूसरी झोली मिलती है।
दि उसने रण में दुश्मन से कोई झोली छीन ली
ा वही उसकी हो जाती है। यह झोली प्राण-रक्षक
। इसकी सदा पूजा होती है। इसका नाम "मेडि-
सन-बैग" (जादू की झोली) है। यह झोली ही इन
ोगों का ईश्वर है।

## त्योहार।

इनका जो समय शिकार में जाता है उसे छोड़
र बाकी समय में ये लोग त्योहार मनाया करते
। एक त्योहार का नाम है भैंसा-नाच। इस त्योहार
सब लोग भैंसे की खाल पहन कर इकट्ठे होते हैं।
ुछ लोग भैंसे मान लिये जाते हैं और कुछ
ोकारी। प्रत्येक शिकारी के हाथ में धनुष-बाण
हता है। यह बाण अकसर लकड़ी का होता है
ार नोक पर मुड़ा रहता है। इसके बाद शिकार
ाने लगता है। जिसके कलेजे के पास बाण लग
या वह मरा समझा जाता है। बाण लगते ही
ह गिर पड़ता है। इसी तरह कई घण्टे तक झूठा
ोकार होता रहता है।

दूसरा त्योहार भी इसी प्रकार का है। पर उसमें
केवल दस से लेकर पन्द्रह वर्ष तक के लड़के झूठी
ड़ाई लड़ते हैं। गर्मी के दिनों में यह कवायद प्रति
दिन सवेरे होती है। हर लड़के के हाथ में लकड़ी का
धनुष-बाण रहता है। बाण भद्दा होता है, जिसमें
किसी के चुभे नहीं। खेल के पहले सब लड़के
ड़े कर दिये जाते हैं। वे दो दलों में बाँट दिये
जाते हैं। एक दल दूसरे को दुश्मन मान लेता है
ार लड़ाई आरम्भ हो जाती है। गाँव का मुखिया
ार दूसरे लोग भी तमाशा देखते हैं। जिसके बाण
लगता है वह मैदान से हटा दिया जाता है। इसी
तरह जब तक एक दल का बिलकुल ही कृत्रिम
नाश नहीं हो जाता लड़ाई हुआ करती है। गर्मियों
के महीने इसी तरह कट जाते हैं। जो दल जीतता
है उसको मुखिया इनाम देता है। उस दल के लोग
बहादुर समझे जाते हैं।

इन लोगों के यहाँ भी कई त्योहार हैं। पर, सब
में यही लड़ाई भिड़ाई होती है। साल में इनका एक
मुख्य त्योहार होता है और कई दिन तक मनाया
जाता है। इसका भी नाम "मेडिसिन" रक्खा गया
है। इसमें मनुष्य का बलिदान भी होता है। पर,
जान से कोई नहीं मारा जाता। जिस आदमी को
चढ़ाना होता है उसकी बड़ी दुर्गति होती है।
हर साल दो आदमियों के साथ ऐसा बर्ताव किया
जाता है। उनको बाँधकर ये लोग लटका देते हैं।
फिर उनका बदन चाकू से काटते और चमड़ा
खींचते हैं। जिन आदमियों की यह दुर्गति होती है
वे "मेडिसिन-मैन" (जादू-गर या परमात्मा) को
पुकारते हैं। वे कहते हैं कि हे सबसे बड़े "मेडिसिन"
हम तुम्हारे नाम पर इतनी कड़ी वेदनायें सह रहे
हैं; हमारी रक्षा करो। स्त्री-पुरुष सभी इसमें
शामिल होते हैं। अन्त में उन दोनों की उँगलियाँ
काटकर "मेडिसिन" पर चढ़ा दी जाती हैं। तब
सब मिलकर नाचते, कूदते और गाते हैं। और
किसी भी त्योहार में स्त्रियाँ नाचने-कूदने में पुरुषों
का साथ नहीं देतीं। उनके कर्म्म धर्म्म पुरुषों से
भिन्न हैं। पर वे पुरुषों के त्योहारों को देख अवश्य
सकती हैं। इस त्योहार में अग्नि में मांस इत्यादि भी
भूना जाता है। जहाँ यह जलसा होता है वहाँ
सबके बीच में अग्नि जलाई जाती है और जब तक
त्योहार समाप्त नहीं होता जलती रहती है।
त्योहार के समय उपवास भी करना पड़ता है।

## रहन-सहन।

रहने के लिए ये लोग डेरे गाड़ते हैं। इनका
डेरा भैंसे की खाल का होता है। अब कपड़े का भी

बनने लगा है। इनके बसने का ढङ्ग निराला ही है। इनकी छोलदारियाँ गोलाकार गाड़ी जाती हैं। गाँव का हर कुटुम्ब अपनी अपनी छोलदारी अलग बनाता है। सारे डेरे वृत्ताकार डाले जाते हैं। बीच में कुछ मैदान खुला छोड़ दिया जाता है। हर डेरे का द्वार मैदान की तरफ़ होता है। मैदान में भैंसे की खोपड़ी एक ऊँचे लट्ठे से टाँग दी जाती है। खोपड़ी में कुछ जादू किया जाता है। गाँव के लोग इस खोपड़ी से अपनी रक्षा समझते हैं। लाल, पीली झण्डियाँ भी गाड़ी जाती हैं। "मेडिसिन" नामक प्रधान त्योहार इसी गोलाकार मैदान में मनाया जाता है। खेमे के भीतर हड्डियाँ, खोपड़ियाँ इत्यादि टँगी रहती हैं। ये लोग दिन में दो दफ़े भोजन करते हैं। पर भूख लगने पर किसी समय भी खा सकते हैं। स्त्री-पुरुष एक साथ भोजन नहीं करते। ऐसा करना अनुचित समझा जाता है।

खाना पकाना स्त्री का ही कर्तव्य है। पुरुष पहले भोजन करते हैं। बाद को स्त्रियाँ। बच्चे किसी भी समय खा सकते हैं। कोई भी पुरुष या स्त्री किसी के खेमे में बे-रोकटोक जा सकती है। इच्छा होने से वहाँ भोजन भी खुशी के साथ मिल सकता है। स्त्री-पुरुष एक साथ स्नान नहीं करते। स्त्रियों के लिए अलग तालाब होता है। इस तालाब के चारों तरफ़ कुछ ऊँची दीवार होती है। जब स्त्रियाँ नहाने जाती हैं, रखवाले धनुष-बाण लेकर दीवार से कुछ दूर बैठते हैं। गर्मियों में हर रोज़ स्नान होता है। यहाँ पुरुष नहीं जा सकते। यह केवल बच्चों और स्त्रियों के लिए है। स्त्रियाँ शायद नङ्गी होकर नहाती हैं और खूब जल-क्रीड़ा करती हैं। जाड़ों में कभी कभी गरम पानी से स्नान होता है।

गाँव में एक आदमी मुखिया मान लिया जाता है। वही पुरुष मुखिया हो सकता है जिसने रण में अधिक दुश्मन मारे हों। मुखिये को भेड़िये की पदवी प्रदान की जाती है। उसके नीचे दूसरा

मुखिया होता है। उसको [illegible] है। ऐसे ही तीस चालीस छो[illegible] जाते हैं। उन्हींके आज्ञानुसार [illegible] जो जितना ही रण-बाँकुरा है [illegible] इज़्ज़त होती है। हर व्यक्ति [illegible] पगड़ी पहनता है। पगड़ी में त[illegible] घोंघे, घुँघचियाँ, सीपें इत्यादि [illegible] सबसे अधिक बहादुर होता है [illegible] सींग भी लगाने का अधिकार है। [illegible] नहीं लगा सकते। दाढ़ इत्यादि [illegible] सूचित किया जाता है कि इसने [illegible] हैं। उन्हीं की यह निशानी है। गा[illegible] लाल चिह्न बनाते हैं। जो पुरुष जित[illegible] रण में घायल करता है वह उतने [illegible] पर लगाता है। स्त्रियाँ भी गालों पर [illegible] हैं, पर वे केवल सुन्दरता के लिए होते [illegible] के केश लम्बे लम्बे होते हैं, यहाँ तक [illegible] चलती हैं तब बाल ज़मीन छूते रहते हैं [illegible] माँग भी काढ़ती हैं। सिर के बालों को वे [illegible] में बाँट देती हैं। मत्थे पर बड़ी सुन्दरता [illegible] वे लाल चिह्न बनाती हैं। पुरुषों के भी ब[illegible] बड़े होते हैं, पर गर्दन के नीचे बढ़ते ही [illegible] डाले जाते हैं। पुरुष भी माँग निकालते हैं, पर [illegible] चिह्न नहीं लगाते। सवेरे उठते ही स्त्री, पुरुष, [illegible] अपने अपने बालों में तेल की मालिश करते [illegible] तेल रीछ के गुर्दे से बनाया जाता है।

स्त्रियाँ पुरुष की दासी समझी जाती हैं [illegible] भोजन पकाना, घर का सब काम सँभालना उन[illegible] धर्म्म है। वे लड़ाई-भिड़ाई करना नहीं जानतीं। खेती का काम स्त्रियाँ भी करती हैं। भैंसे का सींग हर स्त्री अपने पास रखती है। उसीसे खेत गोड़ा जाता है। खेत में मकई बोई जाती है। उसका भुट्टा (बाल) मनुष्य के अँगूठे से बड़ा नहीं होता। जब कभी पानी नहीं बरसता तब बड़े बड़े देवता रचे जाते हैं। इस विषय में अमेरिका के पुरातत्व महाशय का कथन सुनिए:

"खेत सूखा जा रहा था। स्त्रियाँ बेहाल थीं। ाने गाँव के मुखिये से पानी बरसाने के लिए ना की। मुखिये ने सब सरदारों को इकट्ठा ा। फिर सब ग्राम-वासी मैदान में जमा हुए। एक मञ्च बनाया गया। उस पर एक मनुष्य ा हो गया। वह श्रोता-जनों से कहने लगा— मित्रो! मुझमें बड़ी बड़ी शक्तियाँ हैं। मैं ज़रूर ी बरसाऊँगा। जिसने हमको बनाया है और ाहो कोई नहीं जानता वह ज़रूर पानी बरसा- । इसके बाद उसने बादल की तरफ़ तीर ना शुरू किया। सब लोग ज़ोर ज़ोर चिल्लाने । यह कारवाई सूर्योदय से आरम्भ हुई और ास्त तक होती रही। पर पानी न बरसा। रे रोज़ दूसरा मनुष्य मञ्च पर चढ़ा। उसने केसी महती शक्ति को याद कर करके बादलों तीर मारे। पर, फिर भी पानी न बरसा। ीसरे रोज़ भी यही तमाशा हुआ। पर, फल कुछ ुआ। तब गाँव के स्त्री-पुरुषों ने कहा, इन लोगों यह महती शक्ति प्रसन्न नहीं। चौथे रोज़ एक आदमी उतारू हुआ। उसने चिल्ला चिल्ला कर ना आरम्भ किया—हे शक्तिसम्पन्न! हे बादलों वश में कर लेने वाले! हे सूर्य्य को बनाने ! तुम हमारी रक्षा करो। तुम्हारे नाम पर बड़े बड़े दुख उठा रहे हैं—इत्यादि। संयोगवश ाम को पानी बरसने लगा। बिजली कड़कने । मैं हैरान हुआ कि यहाँ किस वैज्ञानिक कला ाम किया। इस जाति का कहना है कि जब पानी नहीं बरसता तब तब यही तरकीब की ी है। कभी पानी बरस जाता है, कभी नहीं। ाहुआ बिना बरसे नहीं रहना"।

## विवाह।

दिन और वर्ष की गणना करना ये लोग नहीं ने। जब लड़की सयानी हो जाती है तब उसका ाह होता है। लड़के का विवाह भी बड़े होने होता है। लड़की का विवाह अन्दाज़न बारह वर्ष से लेकर पन्द्रह वर्ष तक की उम्र में होता है। लड़के का भी विवाह इसी उम्र में होता है। पर जब तक वह लड़ना न सीख ले तब तक कुँवारा रहता है। लड़की पिता के वश में होती है। पिता लड़की को बेचता है। सुन्दर से सुन्दर लड़की की क़ीमत दो घोड़े, भैंसे की खाल, मृगचर्म इत्यादि है। अब इन लोगों को विवाह में ह्विस्की (शराब) भी मिल जाती है। लड़के की तरफ़ से दो गैलन के क़रीब शराब दी जाती है। लड़के के पिता को भी खिलाने पिलाने में कुछ ख़र्च करना पड़ता है। व्यभिचार से ये लोग बहुत दूर रहते हैं। स्त्री को पुरुष के अधीन रहना पड़ता है। बिना पुरुष की आज्ञा के वह कुछ नहीं कर सकती। पर स्त्रियाँ ख़ुश रहती हैं और अपने काम में लगी रहती हैं। गाँव के सरदार कई स्त्रियाँ रख सकते हैं। और लोग भी चाहें तो कई स्त्रियाँ रख सकते हैं। पर सब ऐसा नहीं करते।

## अन्त्येष्टि-संस्कार।

ये लोग मुर्दे को गाड़ते नहीं, फूँकते भी नहीं। मर जाने पर भैंसे की ताज़ी खाल से शव को लपेट देते हैं। उसके बदन पर ख़ूब तेल चुपड़ दिया जाता है। मुर्दे के बदन के साथ धनुष-बाण, भाला, झोली इत्यादि सब सामान बाँध दिया जाता है। फिर उसको ग्राम से कुछ दूर, एक मञ्च पर, रख देते हैं। यह मञ्च इतना ऊँचा होता है कि कुत्ता, भेड़िया आदि कोई जानवर उसके ऊपर नहीं पहुँच सकता। इसी मञ्च पर मुर्दा सूख जाता है। जब उसका मांस इत्यादि गल जाता है तब उसकी खोपड़ी तोड़ दी जाती है और वह घेरे के पास मैदान में रक्खी जाती है। इसी तरह हर पुरुष-स्त्री का संस्कार होता है। शरीर की अन्य हड्डियाँ गाड़ दी जाती हैं। स्त्री अपने पति की खोपड़ी के पास नित्य जाती है। रोना धोना बड़े दुःख के साथ होता है। प्रति दिन शव को खाने के लिए भोजन दिया जाता है। ऐसा ही वर्ष

खोपड़ी के साथ भी किया जाता है। पति के मरने पर स्त्री अपने केश कटा डालती है। और किसी के मरने पर पुरुष अपने अपने बाल कटाते हैं, पर बिलकुल मुंडाते नहीं।

## अमेरिका के पूर्वोक्त महाशय की राय।

"सभ्य संसार इन इन्डियन लोगों को जानवर समझता है। इनको यह अज्ञानी समझना है। पर यह सरासर भूल है। ये लोग ज्ञान-शक्ति रखते हैं। ये ईश्वर के उपासक हैं। हर बात में ये किसी अलौकिक शक्ति को याद करते हैं। जो कुछ ये करते हैं, किसी सिद्धान्त के अनुसार करते हैं। स्वर्ग-नरक को भी ये मानते हैं। इनका कहना है कि पृथ्वी पर आदिम मनुष्य हमीं हैं। स्त्रियों और बच्चों से ये हार्दिक प्रेम रखते हैं। क्या हम लोगों में ऐब नहीं? क्या सभ्य कहाने वाले सभी महात्मा हैं? इन्डियन कभी इस पर बहस नहीं करते कि अमेरिका वाले लम्बा कोट क्यों पहनते हैं? पतलून क्यों पहनते हैं? कोट के पीछे बटन क्यों ये फ़ायदा लगाते हैं? पर हम उनकी पोशाक को जङ्गली समझ कर ही उनसे घृणा करते हैं। ये लोग चोरी नहीं करते, जेब नहीं काटते। यदि कोई बुराई इनमें है तो यह कि ये आपस में बहुत लड़ा-भिड़ा करते हैं। इसी लड़ाई से इनकी संख्या दिन पर दिन कम होती जाती है। इसी लड़ाई के कारण ही इन लोगों में बहु-विवाह की चाल जारी हो गई है। क्योंकि लड़ाइयों में पुरुष मरते रहते हैं। इस कारण युवतियों की संख्या बहुत बढ़ जाती है। यदि ये ऐसा न करें तो करें ही क्या? क्या व्यभिचार इससे अच्छा है? हम लोगों को इनकी रक्षा करनी चाहिए। ये भी मनुष्य हैं और थोड़े ही दिनों में सभ्य हो सकते हैं। इनके हाथ हिस्की (शराब) बेच बेचकर हम लोगों ने इनको और भी बिगाड़ डाला है। कितने ही स्त्री-पुरुष इस शराब के शिकार हो जाते हैं। यही इस भूमि के असली स्वामी हैं। खुशी की बात है कि हमारी सरकार इनमें शिक्षा का प्रचार कर रही है। ये हमारे हैं। ये भी अमेरिका के नागरिक हैं। इनको उतने अधिकार मिलना चाहिए जितना हमको मिला।

पूर्वोक्त महाशय की यह राय मैंने उन्हीं शब्दों में लिख दी है।

यदि कोई भारतवासी इन जातियों की देख भाल करे तो इनके संस्कार इत्यादि के विषय में उसे बहुत कुछ जानकारी हो जाय। यद्यपि यह जाति जङ्गली और असभ्य कही जाती है, पर इसमें कन्या का विवाह-संस्कार बारह वर्ष की उम्र में होता है। परन्तु सभ्यता का दम भरने वाले हम अभी तक यही प्रस्ताव "पास" कर रहे हैं कि रजोदर्शन के पहले ही कन्या का विवाह हो जाना चाहिए। इस विषय में तो हमारी अपेक्षा ये जङ्गली ही भले हैं।

धीरसेनसिंह
(अमेरिका)

---

## महाकवि श्रीहर्ष।

संस्कृत का काव्यसाहित्य एक ऐसी रमणीक वाटिका है जिसमें मन लुभाने वाली वाटिका है जिसमें स्वरसलोलुप भ्रमर हर तरह के रस का स्वाद लेता हुआ विहार कर सकता है। कालिदास, भवभूति, माघ, भारवि, दण्डी, श्रीहर्ष इत्यादि कवियों के काव्य इस वाटिका की अनेक सुन्दर सुन्दर क्यारियां हैं। इन क्यारियों में श्रीहर्ष-कृत नैषध-चरित एक ऐसी क्यारी है जिसमें हृदय की मीठी और तीखी सुवास काव्य-रस-लोलुप विद्वान् पाठकों को अपनी ओर अनायास आकर्षित कर लेती है। इस लेख में इसी काव्य का थोड़ा सा गुण-दोष विवेचन करने और इसके कर्त्ता महाकवि श्रीहर्ष का कुछ परिचय देने का प्रयत्न किया जायगा।

### श्रीहर्ष का परिचय और स्थितिकाल।

श्रीहर्ष कन्नौज के राजा जयचन्द की सभा के सभा-पण्डित थे। इनकी माता का नाम मामल्लदेवी और पिता का नाम हीर था, जैसा कि उन्होंने इस श्लोकार्द्ध में लिखा है—

श्रीहर्षः कविराजराजिमुकुटालङ्कारहीरः सुतं
श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामल्लदेवी च यम्।

शास्त्रार्थ में किसी पण्डित से हार कर इनके पिता इतने लज्जित हुए कि राजा की नौकरी छोड़ बैठे। यह हार उन्हें यहाँ तक असरी कि इसी के कारण वे सुरधाम सिधार गये। अपने मृत्यु-समय अपने पुत्र श्रीहर्ष को अपने पास बुला कर उन्होंने कहा कि तुम हमारा बदला उस पण्डित से शास्त्रार्थ में अवश्य लेना। श्रीहर्ष ने वैसाही किया भी। अपने कुटुम्ब का सारा भार भाई-बन्धुओं को सौंप कर आप विद्या पढ़ने के लिए विदेश चले गये। ऐसी किंवदन्ती है कि किसी महात्मा से चिन्तामणि मन्त्र का उपदेश लेकर और उसे जप कर ये सरस्वती देवी के कृपापात्र हो गये। उसी मन्त्र के प्रभाव से इन्होंने शास्त्रार्थ में अपने पिता को परास्त करने वाले पण्डित को जीता और कवि-कल्पना तथा दार्शनिक ज्ञान में अद्वितीय विद्वान् हुए। कन्नौज के राजा के यहाँ ये अपने पिता के स्थान पर फिर नियुक्त किये गये और राजा ही के कहने से इन्होंने नैषध-चरित महाकाव्य, बाईस सर्गों का, बनाया। उसमें विदर्भ देश के राजा भीम की राजकुमारी दमयन्ती पर नल के अनुराग और उन दोनों के स्वयंवर आदि का वर्णन है। इस किस्से को कवि ने बड़ी उत्कृष्ट कविता में लिखा है। यह ग्रन्थ इतना उत्तम समझा गया कि काव्य की बृहत्त्रयी में पण्डितों ने इसे मुख्य स्थान दिया।

काव्यप्रकाशकार मम्मट भट्ट ने अपने काव्यप्रकाश में सब कवियों के काव्यों से उदाहरण दिये हैं। इस समय तक माघ, भारवि आदि जो कवि हो चुके थे, गुण दोष-निरूपण द्वारा, उन सभी की कविता की साधारण समालोचना मम्मट ने की है। पर श्रीहर्ष के नैषध का एक भी श्लोक कहीं पर उन्होंने उदाहरण में नहीं दिया। इससे निश्चय होता है कि मम्मट के बाद श्रीहर्ष ने नैषधीय चरित निर्माण किया। किंवदन्ती है कि श्रीहर्ष मम्मट के भानजे थे। जब मम्मट काव्यप्रकाश बना चुके तब श्रीहर्ष की भेंट उनसे हुई। श्रीहर्ष ने नैषधचरित उन्हें दिखलाया और कहा कि आपने काव्यप्रकाश में सब कवियों की समालोचना करके उनके गुण-दोष-निरूपण किये, हमारे नैषध की समालोचना क्यों नहीं की। तब मम्मट ने जवाब दिया कि हमारे पास जो जो ग्रन्थ थे उनका गुण दोष-निरूपण किया गया। यदि तुम्हारा काव्य भी उस समय बना होता तो उसकी भी समालोचना हो गई होती। अच्छा अब दिखाओ। मम्मट ने उसे पूरा पढ़ कर श्रीहर्ष से कहा कि यदि तुम अपने इस काव्य को लिख कर कुछ पहले हमको दिखलाते तो बहुत अच्छा होता। काव्यप्रकाश में दोषों के उदाहरण देने के लिए जो हमने अनेक ग्रन्थों से दूषित पद्य संग्रह किये हैं उसमें हमको बहुत परिश्रम पड़ा है। यदि तुम्हारा नैषध हमारे सामने होता तो हमारा बहुत परिश्रम बच जाता, क्योंकि अकेले इसीमें सब दोषों के उदाहरण भरे पड़े हैं। इस पर श्रीहर्ष ने कहा कि एक दोष दिखाइए तो सही। इस पर मम्मट ने दूसरे सर्ग के बासठवें श्लोक को पढ़ सुनाया। उसमें नल ने हंस को दमयन्ती से अपना सन्देश सुनाने के लिए विदा करते समय उसे आशीर्वाद दिया है। इस श्लोक का प्रथम चरण है—"तव वर्त्मनि वर्ततां शिवम्" अर्थात् तुम्हारा मार्ग सुखकर हो। इस पर मम्मट ने कहा कि ऐसा पदच्छेद क्यों न किया जाय—"तव वर्त्म निवर्तनां शिवम्" अर्थात् तुम्हारा मार्ग सुख से रहित हो। इस पर श्रीहर्ष उदास हो कर चुप हो रहे।

भोजराजकृत सरस्वती कण्ठाभरण में नैषध के श्लोक उदाहरण में नहीं दिये गये। इससे भी सिद्ध है कि श्रीहर्ष भोज के पीछे हुए हैं। भोज का समय १०२५ से १०८३ ईसवी तक स्थिर किया गया है। अतएव श्रीहर्ष का समय ग्यारहवीं शताब्दी के उपरान्त होना चाहिए। डाक्टर बूलर ने अनेक प्रमाणों से सिद्ध किया है कि श्रीहर्ष बारहवीं शताब्दी के उत्तर भाग में विद्यमान थे। यही समय राजा जयचन्द का भी है।

## श्रीहर्ष का पाण्डित्य।

श्रीहर्ष सिर्फ़ कवि ही न थे, किन्तु दर्शन-शास्त्र के पूरे पण्डित और ग्रन्थकार थे। इसका उन्हें अभिमान भी था कि मैं केवल कवि ही नहीं, प्रतिभा शाली कवियों से बहुत आगे बढ़ा हुआ हूँ। इसी ध्यान में उन्होंने कई ऐसे श्लोक रच डाले हैं जिनमें अभिमान और गर्व टपक रहा है। संस्कृत-साहित्य का कोई अंग नहीं जिस पर श्रीहर्ष की प्रखर बुद्धि न गई हो। इनका दूसरा ग्रन्थ खण्डन-खण्ड खाद्य है, जो दर्शन का बड़ा अद्भुत और कठिन ग्रन्थ है। इसे

लगाने में पण्डितों के दांतों पसीना आता है। उसमें श्रीहर्ष ने अन्य मतों का खण्डन विचित्र ढँग से करके वेदान्त मत का मण्डन किया है। विजयप्रशस्ति, अर्णववर्णन, नवसाहसाङ्क-चरित-चम्पू आदि कई ग्रन्थ और भी श्रीहर्ष-कृत हैं, जो अब तक नहीं छपे। जिनको श्रीहर्ष के पाण्डित्य की टटोल करना हो उन्हें चाहिए कि नैषध का दसवाँ, तेरहवां और सत्रहवां सर्ग देखें। दसवें सर्ग में कवि ने सरस्वती के अङ्ग-प्रत्यङ्ग के वर्णन में विलक्षण चातुरी दिखाई है। सर्व-विद्यामयी सरस्वती का वर्णन बड़े ही नये ढँग का है। उसमें श्रीहर्ष की कविता का परम प्रकर्ष है। तेरहवें सर्ग में पञ्चनली का वर्णन है। नल के रूप में इन्द्र आदि चार देवता और पांचवें नल, सब, एक साथ बैठे हैं। जो श्लोक वहां पर हैं उनसे दुहरा अर्थ निकलता है। एक तो यह अर्थ निकलता है कि "यह नल है" और दूसरा यह अर्थ निकलता है कि "ये इन्द्र हैं, या वरुण हैं, या अग्नि हैं, या यम हैं। कहीं इन्हें न वर लेना, ये झूठे नल हैं। देवता लोग नल के रूप में आ बैठे हैं। धोखे में न आ जाना; नहीं तो पछताना पड़ेगा"। इन श्लोकों के श्लेषपूर्ण शब्दों में श्रीहर्ष ने अपने पाण्डित्य का अन्त कर डाला है। सत्रहवां सर्ग भी श्रीहर्ष के पाण्डित्य का बहुत अच्छा प्रमाण है। इस सर्ग में बौद्ध नास्तिक तथा निरीश्वरवादियों का मत कई श्लोकों में बड़ी विद्वत्ता के साथ प्रतिपादित किया गया है।

श्रीहर्ष संस्कृत-भाषा को अपने वश में किये हुए थे। ऐसा मालूम होता है कि भाषा उनके सामने हाथ जोड़े खड़ी रहती थी। ये जैसा चाहते थे भाषा का उपयोग करते थे। यद्यपि श्रीहर्ष ने अपने काव्य में अधिकतर क्लिष्ट और जटिल भाषा का प्रयोग किया है तथापि कई स्थलों में उन्होंने बहुत ही सरल भाषा भी लिखी है, जिससे सिद्ध होता है कि श्रीहर्ष का भाषा के ऊपर सम्पूर्ण अधिकार था। इस तरह की सरल भाषा के उदाहरण प्रथम सर्ग में राजा नल द्वारा पकड़ लेने पर हंस का विलाप है, जो बहुत ही हृदय-विदारक और कारुणिक है। इसी तरह तृतीय सर्ग में हंस और दमयन्ती का संवाद है।

श्रीहर्ष की सरल भाषा के दो एक उदाहरण हम भी यहां पर उद्धृत करते हैं—

मुहूर्तमात्रं भवनिन्दया दयासखाः सखायः सवदुश्रुवो मम।
निवृत्तिमेष्यन्ति परं दुरुत्तरस्त्वयैव मातः! सुतशोकसागरः॥

अर्थात्—मेरे स्नेही मित्र—"संसार की ऐसी ही गति है"—यह कह कर और थोड़ी देर तक मेरे लिए आंसू बहा कर मुझे भूल जायँगे। इस तरह उनका शोक तो दूर हो जायगा, किन्तु हे माता! तुझसे सुतशोकरूपी सागर कैसे पार किया जायगा?"

कथं विधातर्मयि पाणिपङ्कजात्तव प्रियारौद्यमृदुत्वशिक्षितैः
वियोक्ष्यते वल्लभयेति निर्गता लिपिर्ललाटंतपनिष्ठुराक्षरा॥

अर्थात्—हे विधाता! जिन तुम्हारे कर कमलों से मेरी प्रिया के शीतल और कोमल अङ्गों की रचना हुई है, उन्हीं तुम्हारे हाथों से "वल्लभा से मेरा वियोग होगा" ये अक्षर मेरे विषय में कैसे निकले?

श्रीहर्ष की भाषा में यह खूबी है कि वह रस के अनुकूल है। जिस रस का वर्णन वे करते हैं वह रस उनकी भाषा से टपकने लगता है। श्रीहर्ष की रसानुकूलता के कुछ उदाहरण लीजिए—

पृथ्वीश एष नुदतु त्वदनङ्गतापं
मालिंग्य कीर्तिवयचामरचारुचापः।
संग्रामसङ्गतविरोधिशिरोधिदण्ड-
खण्डिस्फुरप्रसरसंप्रसरन्प्रतापः॥

इस एक ही श्लोक में दो प्रकार की भाषा का प्रयोग किया गया है। पहले अर्द्धभाग में मधुर और कोमल शब्द रक्खे गये हैं, क्योंकि उसमें शृङ्गार-रस का वर्णन है। किन्तु दूसरे अर्द्धभाग में वीर-रस है। इसलिए उसमें रस के अनुकूल कर्णकटु शब्दों का प्रयोग किया गया है।

एतेनोत्कृत्तकण्ठप्रतिसुभटनटारब्धनाट्याद्भुतानां
कष्टं द्रष्टेव नाभूद् भुवि समरसमालोकिलोकान्तरेषु।
अश्वैरश्वैरवेगैः कृतसुरसुरलीमद्भुविक्षुभ्यमान-
क्ष्माक्षुण्णोच्छिष्टदन्यक्करणरणपुरोरेणुधारान्धकारात्॥

यह श्लोक वीर-रस-पूर्ण है। इस के प्रत्येक शब्द में वीर-रस टपक रहा है।

## श्रीहर्ष की गर्वोक्ति।

कालिदास को छोड़ कर प्रायः सभी कवियों ने अभिमान और गर्व से भरी हुई बातें कही हैं। बाण, भवभूति

पण्डितराज जगन्नाथ इत्यादि कोई भी इस दोष से बचे नहीं। सर्वोक्ति में श्रीहर्ष इन सब से बढ़ चढ़ कर थे। श्रीहर्ष को अपनी विद्वत्ता और कवित्व शक्ति का बहुत बड़ा गर्व था। इसी गर्व में आ कर उन्हों ने कई ऐसे श्लोक लिख मारे हैं जिन में बेहद अभिमान टपक रहा है; जैसे—

यया यूनस्तुल्यस्मरमणीयापि रमणी
कुमाराणामन्तःकरणहरणं नैव कुरुते।
मदुक्तिस्वेदन्तर्मदयति सुधीभूय सुधियः
किमस्या नाम स्यादरसपुरुषानादरमरेः॥

अर्थात्—परम मनोहारिणी सुन्दरी रमणी युवा पुरुष के चित्त को जिस तरह आकर्षित करती है, उसी तरह निरे रसिक के चित्त को नहीं आकर्षित करती। इसी तरह मेरी कविता यदि परिपक्व-बुद्धि विद्वानों के चित्त को प्रमुदित करती तो नीरस और रूखी तबीयत वालों की निन्दा से क्या?

साम्राज्यद्वयमासनञ्च लभते यः कान्यकुब्जेश्वराद्
यः साक्षात्कुरुते समाधिषु परं ब्रह्मप्रमोदार्णवम्।
यत्काव्यं मधुवर्षि धर्षितपरप्रत्यर्थिपर्षत्सु यस्योक्तयः
श्रीश्रीहर्षकवेः कृतिः कृतिमुदे तस्याभ्युदीयादियम्॥

अर्थात्—जिसे कन्नौज के राजा से दो पान और आसन मिलता है, जो समाधि में ब्रह्म का साक्षात्कार करता है; जिसका काव्य शहद के समान मीठा है; जिसने तर्कशास्त्र में अपने प्रतिपक्षियों को परास्त कर दिया है; उस श्रीहर्ष कवि की यह कृति विद्वान् पुरुषों को आनन्द देने वाली हो!

दिशि दिशि गिरिप्रावाणः स्वां वमन्तु सरस्वतीं
भुवनमियन्त्यामापातस्फुरद्ध्वनिडम्बराम्।
स परमपरः क्षीरोदन्वान्यदीयमुदीयते
मथितुरमृतं खेदच्छेदि प्रमोदनमोदनम्॥

इस श्लोक में तो श्रीहर्ष ने सर्वोक्ति का चरमोत्कर्ष कर दिया। इसमें उन्होंने अपने को अमृत का उत्पन्न करने वाला क्षीरसागर बनाया है, और शेष सब कवियों को जल्द सूख जाने वाली नदियों को उत्पन्न करने वाले पहाड़ी पत्थर!

## श्रीहर्ष और कालिदास।

पदलालित्य, ओज और अतिशयोक्ति में श्रीहर्ष बहुत बढ़े चढ़े हैं। इनकी वर्णनशैली के विस्तार का ओर छोर नहीं। किन्तु प्रसाद-गुण, सरलता, मनुष्य-हृदय-सम्बन्धी बातों का ज्ञान, गठीले पदविन्यास में एक अनोखी चातुरी आदि गुण जो कालिदास की रचना में पाये जाते हैं, वे श्रीहर्ष के काव्य में नहीं। कहीं कहीं पर श्रीहर्ष ने नैषध को जान-बूझ कर ऐसा क्लिष्ट कर डाला है कि वह पत्थर का एक टुकड़ा सा मालूम पड़ता है, जिस पर अच्छे अच्छे विद्वानों की बुद्धि भी वैसी ही टकराती है जैसे कि सद्गतरात्रा का हथोड़ा पत्थरों के टुकड़ों पर टकराता है। कालिदास का काव्य सरस, सरल, भावपूर्ण और नैसर्गिक है, इसी से उनकी कविता पाठकों के हृदयों में चुभती है—सिर्फ़ दिमाग़ ही में नहीं रह जाती। स्वाभाविक और सरल कविता ही यथार्थ कविता है। उसी से आत्मा तन्मय और मन प्रसन्न होता है। यह गुण कालिदास के काव्य में पूरी तौर से पाया जाता है। इसके विपरीत नैषध-काव्य में अतिशयोक्ति, क्लिष्ट-कल्पना अस्वाभाविक और दीर्घ वर्णन अधिक पाये जाते हैं। इसी से नैषध की कविता हृदय में नहीं चुभती, वह सिर्फ़ चित्त को प्रसन्न करके दूर हो जाती है। किन्तु श्रीहर्ष की कल्पनाओं और अतिशयोक्तियों में एक ऐसा अनोखा चमत्कार है कि उनको बार बार पढ़ने की इच्छा होती है। कालिदास और श्रीहर्ष में क्या तारतम्य है, यह वही सहृदय काव्यरसप्रेमी जान सकते हैं जो दोनों के काव्यों का अच्छी तरह अनुशीलन किये हुए हैं। श्रीहर्ष और कालिदास में क्या अन्तर है, यह हम दो एक उदाहरण देकर यहाँ पर बतलाते हैं।

दूसरे सर्ग में हंस नल से दमयन्ती के रूप और गुणों की प्रशंसा करता है। रूप के वर्णन में कवि ने दमयन्ती के नख-शिख का वर्णन नये ढँग से किया है। अपने भर सक श्रीहर्ष ने दमयन्ती के नख-शिख-वर्णन में प्रतिभा का अन्त कर दिया है। पर कुमारसम्भव में कालिदास ने पार्वती के नख-शिख का जो स्वाभाविक, सरल, तथा क्लिष्ट-कल्पना-रहित वर्णन किया है उसको श्रीहर्षकृत दमयन्ती का वर्णन नहीं पाता। यह बात दोनों वर्णनों का मिलान करके पढ़ने से साफ़ प्रकट हो जाती है।

दसवें, ग्यारहवें और बारहवें सर्ग में दमयन्ती के स्वयंवर का वर्णन बड़े विस्तार के साथ किया गया है। यद्यपि इन तीन सर्गों में श्रीहर्ष ने शब्दाडम्बर द्वारा अपना प्रौढ़ पाण्डित्य खूब दिखाया है, पर जिसे कविता का रस कहते हैं वह इसमें बहुत ही थोड़ा है। कवि ने कालिदासकृत

लगाने में पण्डितों के दांतों पसीना आता है। उसमें श्रीहर्ष ने अन्य मतों का खण्डन विभिन्न ढंग से करके अद्वैत मत का मण्डन किया है। विजयप्रशस्ति, अर्णवर्णन, नवसाहसाङ्क-चरित-चम्पू आदि कई ग्रन्थ और भी श्रीहर्ष-कृत हैं, जो अब तक नहीं छपे। जिनको श्रीहर्ष के पाण्डित्य की टटोल करना हो उन्हें चाहिए कि नैषध का दसवाँ, तेरहवां और सत्रहवां सर्ग देखें। दसवें सर्ग में कवि ने सरस्वती के अङ्ग-प्रत्यङ्ग के वर्णन में विलक्षण चातुरी दिखाई है। सर्व-विद्यामयी सरस्वती का वर्णन बड़े ही नये ढंग का है। उसमें श्रीहर्ष की कविता का परम प्रकर्ष है। तेरहवें सर्ग में पञ्चनली का वर्णन है। नल के रूप में इन्द्र आदि चार देवता और पांचवें नल, सब, एक साथ बैठे हैं। जो श्लोक यहां पर हैं उनसे दुहरा अर्थ निकलता है। एक तो यह अर्थ निकलता है कि "यह नल है" और दूसरा यह अर्थ निकलता है कि "ये इन्द्र हैं, या वरुण हैं, या अग्नि हैं, या यम हैं। कहीं इन्हें न वर लेना, ये झूठे नल हैं। देवता लोग नल के रूप में आ बैठे हैं। धोखे में न आ जाना; नहीं तो पछताना पड़ेगा"। इन श्लोकों के श्लेषपूर्ण शब्दों में श्रीहर्ष ने अपने पाण्डित्य का अन्त कर डाला है। सत्रहवां सर्ग भी श्रीहर्ष के पाण्डित्य का बहुत अच्छा प्रमाण है। इस सर्ग में बौद्ध नास्तिक तथा निरीश्वरवादियों का मत कई श्लोकों में बड़ी विद्वत्ता के साथ प्रतिपादित किया गया है।

श्रीहर्ष संस्कृत-भाषा को अपने वश में किये हुए थे। ऐसा मालूम होता है कि भाषा उनके सामने हाथ जोड़े खड़ी रहती थी। वे जैसा चाहते थे भाषा का उपयोग करते थे। यद्यपि श्रीहर्ष ने अपने काव्य में अधिकतर क्लिष्ट और जटिल भाषा का प्रयोग किया है तथापि कई स्थलों में उन्होंने बहुत ही सरल भाषा भी लिखी है, जिससे सिद्ध होता है कि श्रीहर्ष का भाषा के ऊपर सम्पूर्ण अधिकार था। इस तरह की सरल भाषा के उदाहरण प्रथम सर्ग में राजा नल के पकड़ लेने पर हंस का विलाप है, जो बहुत ही हृदय-विदारक और कारुणिक है। इसी तरह तृतीय सर्ग में हंस और दमयन्ती का संवाद है।

श्रीहर्ष की सरल भाषा के दो एक उदाहरण हम यहां पर उद्धृत करते हैं—

मुहूर्तमात्रं भवनिन्दया दयामयाः सन्तु सदैव सन्तः।
निमीलितेऽप्यक्षि परं दुनोति सम्यग्विधेः मानः! सुतरोऽयमासीत्॥

अर्थात्—मेरे स्नेही मित्र—"संसार की ऐसी ही गति है"—यह कह कर और थोड़ी देर तक मेरे लिए आंसू बहा कर मुझे भूल जायंगे। इस तरह उनका शोक तो दूर हो जाय, किन्तु हे माता! तुझसे सुतशोकरूपी सागर कैसे पार किया जायगा?"

कथं विधातर्मयि पाणिपद्मजात्तव प्रियायोग्यमृदुत्वशिक्षितैः।
वियोज्यते वल्लभयेति निर्गता लिपिर्ललाटात्तवनिष्ठुराक्षरा॥

अर्थात्—हे विधाता! जिन तुम्हारे कर कमलों ने मेरी प्रिया के शीतल और कोमल अङ्गों की रचना की है, उन्हीं तुम्हारे हाथों से "वल्लभा से मेरा वियोग होगा" ये अक्षर मेरे विषय में कैसे निकले?

श्रीहर्ष की भाषा में यह खूबी है कि वह रस के अनुकूल है। जिस रस का वर्णन वे करते हैं वह रस उनकी भाषा से टपकने लगता है। श्रीहर्ष की रसानुकूलता के कुछ उदाहरण लीजिए—

पृथ्वीश एष नुदतु स्वदनङ्गताप-
मालिङ्ग्य कीर्तिवपुषामरचारुचापः।
संग्रामसङ्गतविरोधिशिरोधिदण्ड-
खण्डिच्छुरप्रसरसंप्रसरन्प्रतापः॥

इस एक ही श्लोक में दो प्रकार की भाषा का प्रयोग किया गया है। पहले अर्द्धभाग में मधुर और कोमल शब्द रक्खे गये हैं, क्योंकि उसमें शृङ्गार-रस का वर्णन है। किन्तु दूसरे अर्द्धभाग में वीर-रस है। इसलिए उसमें रस के अनुकूल कर्णकटु शब्दों का प्रयोग किया गया है।

एतेनोत्कृत्तकण्ठप्रतिसुभटनटारब्धनाट्याद्भुतानां
कष्टं द्रष्टैव नाभूद् भुवि-समरसमालोकिलोकाप्रपेदे।
अश्वैरस्वैरवेगैः कृतखुरखुरलीमिश्रचुक्षुद्यमान-
क्ष्माधूलीचित्रदन्धकरणरणधुरारेणुधारान्धकारात्॥

यह श्लोक वीर-रस-पूर्ण है। इस के प्रत्येक शब्द से वीर-रस टपक रहा है।

## श्रीहर्ष की गर्व

कालिदास को छे
मान और गर्व

तीयते हीविधुः स्वजेतृं श्रुत्वा विधुन्तस्य मुखं मुखाब्जः।
समुद्रस्य कदापि पूरे, कदाचिदभ्रभ्रमदभ्रगर्भे ॥

अर्थात्—यह सुन कर कि मेरी शोभा का जीतने वाला का मुख है, चन्द्रमा लज्जित होकर कभी तो सूर्यमण्डल छिपता है, कभी अभ्रपटल में लुकता फिरता है, समुद्र के जल में मारे लज्जा के जा डूबता है।

तरो न हृदापि मया धृतः प्रतिरितीव नलं हृदयेशयम्।
विविशुर्नि बोधयति स्म सा विरहपाण्डुतया निजशुद्धताम् ॥

अर्थात्—सीता ने अग्नि में प्रवेश करके अपनी शुद्धता की थी। इसी से दमयन्ती भी कामाग्नि में अपना जलाती है, जिससे हृदय-स्थित नल को विदित होजाय ने स्वप्न में भी कभी दूसरे पति की इच्छा नहीं की।

ज्ञा न पृथुर्दवथुस्तथा विरहजैव पृथुर्यदि नेदृशम्।
माशु विशन्ति कथं स्त्रियः प्रियमनासुमुपासितुमुद्यताः ॥

र्थात्—अग्नि की दाह-व्यथा कोई व्यथा नहीं। विर-से उत्पन्न व्यथा ही वास्तव में विषम व्यथा है। यदि होता तो किसी की भी परवा न करके मृत पति के जलती अग्नि में क्यों स्त्रियां प्रवेश कर जातीं?

ोगिभृवधपातकैर्भ्रमिमराप्य दिवः खलु पात्यते।
लगादयदि स्फुटन्मुपतनकणगणाधिकतारकिनाम्बरः ॥

र्थात्—इस चन्द्रमा ने जो अनेक विरहिणी स्त्रियों कर पार किया है उसी से फिरा कर अंधेरी रात-पथ-शिला के ऊपर, आकाश से, यह पटका जाता टकने पर यह खण्ड खण्ड हो जाता है। उस समय ो ऊपर को उड़ते हैं उन्हीं से अंधेरी रात का आकाश तारे से परिपूर्ण हो जाता है। अंधेरी रात में जो तारे दिखाई पड़ते हैं उसका यही कारण है।

ुलमालदकाङ्कुरं शशिकुरङ्गमुखे सखि! निःक्षिप।
दुन्दिलिमः स्वयंवरमुं स यदि तेन समुच्चुकर्मिमि खदम् ॥

र्थात्—हे सखि! मेरा कर्णभूषण जो तमाल-पल्लव है चन्द्रमा के गोद में स्थित हिरन के मुख में रख दे। वह उस पल्लव को खा कर मोटा हो जायगा खाता होकर इस पापी चन्द्रमा को हड़प लेगा। उसके से यह है एक भर सांस तो ले सकूंगी। चन्द्रमा के ने पर मेरी पीड़ा कुछ तो कम होगी।

ऋजुदृशः कथयन्ति पुराविदो मधुभिदं किल राहुशिरश्छिदम्।
विरहिमूर्द्धभिदं निगदन्ति न कं नु शशी यदि तज्जठरानलः ॥

अर्थात्—सीधे सादे ऋषि लोग विष्णु को राहुशिरश्छिद् अर्थात् राहु का सिर काटने वाला कहते हैं। उनको चाहिए कि राहुशिरश्छिद् के स्थान में विरहिमूर्द्धभिद् अर्थात् विरही-जनों के सिर काटने वाले के नाम से विष्णु को पुकारें। क्योंकि यदि वे राहु का सिर न काट लेते तो, ग्रहण के समय, चन्द्रमा उसके उदर में जाकर जठराग्नि में गल गया होता!

हृदयमाश्रयसे यत मामकं ज्वलयसीत्यमनङ्ग तदेव किम्।
स्वयमपि क्षणदग्धनिजेन्धनः क्व भवितासि हताश! हुताशवत् ॥

अर्थात् रे काम! यदि तू मेरे हृदय में वास करता है तो अपने रहने के स्थान मेरे हृदय को क्यों इतना जला रहा है? रे पापी! तू बड़ा मूर्ख है। तू अग्नि के समान अपने आश्रयस्थान को क्षण भर में जला कर रहेगा कहां? जैसे अग्नि अपने आश्रय काठ को जला कर कहीं का नहीं रहता वैसे ही तू भी अपने निवासस्थान, मेरे हृदय, को जला कर फिर कहां वास करेगा?

पद्माकरसन्मानसवेश्य लक्ष्मीमेकस्य विष्णोः शयनाय सख्यौ।
आस्येन्दुमस्या भजने जिताब्जं सरस्वती तद्विजिगीषया किम् ॥

अर्थात्—लक्ष्मी और सरस्वती—विष्णु की दो स्त्रियां हैं और लक्ष्मी का वास कमल में है। किन्तु दमयन्ती के मुख-चन्द्र ने कमल की शोभा को जीत लिया। इसीसे क्या सरस्वती दमयन्ती के मुख में वास करती है कि मैं अपनी सौत लक्ष्मी से बदला लूं?

त्रिलोकिताम्बा मुखमुज्झता किं वेधसेदं गृहमागमाशी।
एषापुरूपा वदिदृक्षवे ऽक्षाण्यि त्रिभिः प्रसादात्रिदशेश्वरेण ॥

ब्रह्मा के तीन मुख हैं। उस पर कवि इन्हेक्षा करता है। एक एक अङ्ग की शोभा का निर्माण समाप्त होने पर, ब्रह्मा ने चौथे मुख से दमयन्ती को देख कर जो देखा कि वह कैसी बनी, तो चौथे के स्थान को वहीं खड़ा मुख में बना रह गया।

विलम्बसे किं दृढ़ दूत सत्वरस्त्वं हरेर्विलोलम्।
अरातिवन्दीव सुरद्रुमस्रग्वक्षःस्थलं मे शरणम् ॥

दमयन्ती—अरे दूत! तुझसे नल का स्थान, मेरा हृदय, देखकर मैं क्या करूं है। फिर तू क्यों देर कर रहे हो? क्यों झटपट वहां नहीं जाते? क्या जानते नहीं कि मेरा

रघुवंश के इन्दुमती-स्वयंवर में अज की जगह नल को रक्खा है। पर वह छटा और रस, जो कालिदास के शब्दों में है, नैषध में नहीं। दमयन्ती-स्वयंवर में श्रीहर्ष ने बहुधा कालिदास ही की नकल की है। वहाँ इन्दुमती के स्वयंवर में सुनन्दा राजाओं का वर्णन करती है यहाँ सरस्वती राज-समाज का वर्णन करती है। पर असल और नक़ल में क्या अन्तर है, यह दोनों को साथ पढ़ने से मालूम हो जाता है।

## श्रीहर्ष की कल्पना और अतिशयोक्ति की बानगी।

श्रीहर्ष की कल्पनाशक्ति बहुत ऊँचे दर्जे की है; वह ख़ूब ऊँची उड़ती है। अतिशयोक्ति कहने में श्रीहर्ष की बराबरी कोई कवि नहीं कर सकता। श्रीहर्ष के काव्य में स्वभावोक्ति बहुत कम पाई जाती है। यहाँ पर हम कुछ पद्य नैषध से ऐसे उद्धृत करते हैं जिनसे पता लग जायगा कि श्रीहर्ष की कल्पनाशक्ति किस दर्जे की है और उनकी अत्युक्तियाँ कितनी विलक्षण हैं—

यदस्य यात्रासु चतोरदूतं रजः स्फुरत्प्रतापानलधूममञ्जिमम्।
तदेव गत्वा पतिमं सुधाम्बुधौ दधाति पङ्कीभवदूढतां विधौ॥

अर्थात्—नल की दिग्विजय-यात्रा में, उसके प्रकाशमान प्रतापरूपी अग्नि के धुएँ के समान, सेना के चलने से रास्ते में जो धूल उड़ी वही सुधासमुद्र में गिर कर कीचड़ हो गई और आज तक चन्द्रमा में कलङ्क के रूप में विद्यमान है। अर्थात् सुधासमुद्र से जब चन्द्रमा निकला था तब समुद्रमन्थनी कीचड़ उसमें लगी हुई थी। अतएव वह कलङ्क नहीं, वही कीचड़ है जो नल की सेना के पैरों से उड़ी हुई धूल के समुद्र में गिरने से बनी थी।

अहोऽमुष्यस्मात्सः स्फुरदरिदिवा सृष्टिरिति किं
कुतो वेधाः कुर्वन्नहरहरनल्पान्विदधते।
अनेनैवालेखि प्रतिदिवसमेतावदिति किं
पुरावृत्तावृत्तिव्यतिकरविधिर्नूतनतया॥

अर्थात्—दिन और रात दोनों को प्रकाशित करने के लिए नल के प्रताप का सूर्य और यश का चन्द्रमा सो विद्यमान ही था, फिर इन प्रत्यक्ष सूर्य और चन्द्र को मैंने क्यों बनाया? यह सोच कर जब ब्रह्मा के मन में खेद हुआ तब वह सूर्य और चन्द्रमा, इन दोनों के आगे और प्रत्यक्ष प्रकट हो गए हैं, ऐसे कोई अपनी भूल प्रकट करने को ब्रह्मा के आगे ऐसा कह दे। जिसने में जो भूल हो जाती है उसके चारों ओर ऐसा देने की चाल पहले समय में थी। सूर्य और चन्द्र आस पास कभी कभी मण्डल देख पड़ता है, इसी से कवि ने "यदा यदा" कहा। कवि ने इसमें और यश का वर्णन बिलकुल ही निराले ढंग का किया।

प्रयातुमस्माकमियं कियत्पदं धरा तदम्भोधिरियं स्वतल्पवत्
इतीव बाहूर्निजयेगदर्पितैः पयोधिरोधश्चमभुर्विभोः॥

अर्थात्—हमारी गति इतनी है कि यह पृथ्वी हमारे लिए कुछ भी चीज़ नहीं। इसे तो हम थोड़ी ही देर में पार कर जायँगे। इसलिए टापों से धूल उड़ाते हुए घोड़े समुद्र को पाटने की फ़िक्र में हैं। मतलब यह कि समुद्र के स्थल हो जायगा तो चलने के लिए भूमि मिल जायगी।

हसमारमियेन्दुमण्डलं दमयन्तीवदनाय वेधसा
कृतमल्पविलं विलोक्यते प्रतिगम्भीरमनीरमम्बुधिम्॥

अर्थात्—चन्द्रमण्डल की शोभा का जो हंस था उसी को लेकर विधाता ने दमयन्ती का मुख बनाया। इसी से जितना भाग चन्द्रमण्डल का निर्जल था उतना गड्ढा अब तक चन्द्रमा में मालिपन के बहाने दिखाई देता है। अर्थात् चन्द्रमा के बीच में छिद्र हो जाने से उसके बीच आकाश की नीलिमा जो दिखाई देती है वही कलङ्क है।

सुषमाविषये परीक्षणे निहितं पद्मभवेन यन्मुखम्
अधुनापि न भद्रलक्षणं सलिलोन्मज्जनमुज्झति स्फुटम्॥

अर्थात्—कमलों के साथ जो इसके मुख की परीक्षा की गई तो वे सब हार कर मारे लज्जा के अब तक जल में डूबे रहने का उन्हें जो अभ्यास है उसी के कारण है।

धिक् तं विधेः पाणिमजातलक्षणं निर्मातरि यः परिभूय दृश्यते
मन्ये स विज्ञैः स्मृतसम्भ्रमैः कृतार्थमानन्दपदं पदं व्रजेत्॥

अर्थात्—ब्रह्मा के उस हाथ को धिक्कार है जो सब मुख-चन्द्र निर्माण करके फिर भी पद पद में इन्दु पूर्ण चन्द्रमा बनाता है। नहीं नहीं, ब्रह्मा ऐसा मूर्ख ब्रह्मा निरा जड़ नहीं है। कभी कभी इसकी भूल पर भी देखने को मिलता है। क्योंकि ब्रह्मा के [illegible] जब नल के मुख की [illegible] समुद्र में [illegible] होता है।

अर्थात्—देखिए, चन्द्रमा की नायिका रात्रि की द्वारपालिका का काम सायङ्कालीन सन्ध्या कर रही है। अस्त होने में सूर्य की लम्बी लम्बी किरणावली लाल रङ्ग से रँगी हुई उसकी छड़ी है। वह दिन को प्रवेश करने से रोक रही है। यह सन्ध्याकाल का वर्णन है।

आदाय दण्डं सकलासु दिक्षु योऽयं परिभ्राम्यति भानुभिक्षुः।
कार्ष्ण्यं निमज्जत्तिव तापसोऽयं सन्ध्याभ्रकाषायमधत्त सायम्॥

अर्थात्—यह सूर्यरूपी परिव्राजक दण्ड लेकर और सब दिशाओं में घूम कर सन्ध्यासमय स्नान करने के लिए पश्चिम समुद्र में डूब कर, सायङ्कालीन लाल-आकाशरूपी काषायमय वस्त्र धारण कर रहा है।

कार्ष्ण्यं गोदोहदीप्तैः कामुदीभिः क्षीरस्य धाराभिरिव क्षणेन।
प्रक्षाल्य शीघ्रं रुचिरस्वरूपा तमोमयीयं रजनीरजक्या॥

अर्थात्—हे दमयन्ती, रातरूपी धोबिन ने दूध की धारा के समान चाँदनी से आकाश में फैले हुए अन्धकाररूपी कपड़े को इसी तरह धो डाला जिस तरह कि धोबिन कपड़ों के काले दाग़ को दूध से क्षणमात्र में धो डालती है। अर्थात् चाँदनी से आकाश निर्मल हो गया।

नैषध का प्रातःकाल और सन्ध्याकाल-वर्णन उतना उत्तम और अनूठा नहीं, जितना शिशुपालवध के नवम और द्वादश सर्ग में माघ कवि का किया हुआ वर्णन है।

## उपसंहार।

इस लेख में हमने महाकवि श्रीहर्ष और उनके काव्य के सम्बन्ध में अपने कुछ विचार प्रकट किये हैं। संस्कृत-साहित्य के इस अनिद्य महाकवि के सम्बन्ध में हमें जो कुछ कहना था हमने विद्वद्वर्ग और सहृदय पाठकों की सेवा में निवेदन कर दिया। श्रीहर्ष में कवित्व-शक्ति और पाण्डित्य की पराकाष्ठा थी, इसमें कोई सन्देह नहीं। पर उनमें काव्य-रसज्ञता न थी। हमारा यही विचार है। आशा है, हमारे इस विचार से सहमत न हों। अस्तु।

जगदीश भट्ट।

---

# सहज-ज्ञान और स्वभाव।

शिक्षा का महत्त्व किसी से छिपा नहीं। प्रत्येक गृहस्थ अपने बच्चों को शिक्षित करने में यत्न कर रहा है। परन्तु शिक्षा देना कब और किस नियत समय पर ही क्यों आरम्भ करना चाहिए—इत्यादि प्रश्नों का उत्तर मनोविज्ञान (Psychology) से ही मिल सकता है। यह शास्त्र मानवधर्म-शास्त्र के सदृश केवल बहुत से आदेशों को ही देनेवाला नहीं किन्तु उन आदेशों के कारणों को भी स्पष्टतया बतानेवाला है। अतएव उन आदेशों का पालन करने में किसी प्रकार की शङ्का नहीं रह जाती।

आज मैं उक्त शास्त्र से सम्बन्ध रखनेवाले सहज ज्ञान और स्वभाव (Instinct and Habit) के विषय में कुछ निवेदन करने का साहस करूँगा और यह दिखलाऊँगा कि उनका प्रयोग केवल बच्चों ही में नहीं, किन्तु बुड्ढों तक में हो सकता है।

आवश्यक कार्य करने की उस शक्ति का नाम सहज ज्ञान है जिसमें कर्ता को अपने कार्य का परिणाम न ज्ञात हो और जिसके करने की विधि उसने कभी पहले न सीखी हो। जब बच्चे के मुख में कोई वस्तु रख दी जाती है तब वह उसे बिना पूर्व ज्ञान के काटने लगता है। जब उसका प्यार किया जाता है तब वह मुसकराने लगता है। जब उसे भूख लगती है तब वह रोने लगता है। जब कोई भयानक वस्तु देखता है तब वह भय से भागता है। यहाँ काटना, रोना, भागना इत्यादि कार्यों को बच्चा बिना पूर्व-ज्ञान के और बिना परिश्रम ज्ञान के करता है। इसलिए ये सब सहज ज्ञान के उदाहरण हैं।

सहज-ज्ञान की सहायता से प्राणी का निर्वाह करने में समर्थ होता है। यह देखा गया है कि दो तीन दिन के मुर्गी के बच्चे किसी भी प्रकार के खाद्य पदार्थ का उपभोग करने लगते हैं। इसलिए वे अपने अन्न को खोजना सीख लेते हैं। इस प्रकार

सुख भोगने की आशा लगी हुई है? कहाँ का आलस्य तुम्हें घेरे हुए है जो तन से जल्दी नहीं निकल जाते। जब घर में आग लगती है तब उसमें कोई नहीं रहता; जल्द बाहर निकल जाता है।

ममादरीदं विदरीतुमान्तरं तदर्थिकल्पद्रुम! किञ्चिदर्थये।
भिदां हृदि द्वारमवाप्य मैव मे हतासुभिः प्राणसमैः समं गमः॥

अर्थात्—हे याचकों के कल्पद्रुम! मेरा हृदय विदीर्ण होना ही चाहता है। इससे मैं तुम से एक प्रार्थना करती हूँ। वह प्रार्थना यह है कि मेरा हृदय फटने पर दरार-रूपी जो द्वार हो जायगा उस द्वार से, मेरे पापी प्राणों के साथ, मेरे हृदय से कहीं तुम भी न चले जाना।

यत्कस्यामपि भानुमान्न ककुभि स्थेयानमालम्बते—
जातं यद् घनकाननैकशरणप्राप्तेन दावाग्निना।
एषैतद्भुजतेजसा विजितयोस्तावत्तयोरौचिती—
धिक्कं वाडवमम्भसि द्विपि भिया येन प्रविष्टं पुनः॥

अर्थात्—सूर्य किसी दिशा में भी स्थिर नहीं रहता, सदा भ्रमण किया करता है। दावाग्नि घने वन की शरण लेती है। इस राजा के भुजा के तेज से जीते गये इन दोनों के लिए यह उचित ही है। क्योंकि अभिमानी जन शत्रु से जीते जाने पर लज्जा के मारे एक देश में वास नहीं करते, किन्तु सर्वत्र घूमा करते हैं, अथवा डर के मारे घने वन में भाग कर शरण लेते हैं। अतएव सूर्य और दावाग्नि ने जो किया वह उचित ही किया। किन्तु उस वाडवाग्नि को धिक्कार है जो इसके भुजा के तेज से डर कर अपने सहज-शत्रु समुद्र के जल में घुस कर बैठा है। अभिमानी जन पराभव होकर भी किसी वैरी की शरण नहीं जाते। वाडवाग्नि ने ऐसा किया, अतएव उसे धिक्कार!

वरस्य पाणिः परपातकौतुकी वधूकरः पङ्कजकान्तितस्करः।
मुराजितो तौ सख विद्रुमण्डले सनौ निबद्धौ किमु कङ्कणैः कुशैः॥

अर्थात्—वर का हाथ पर (शत्रु) की हिंसा करने वाला है और वधू का हाथ कमल की कान्ति का चुराने वाला है। क्या इसी लिए वधू और वर दोनों के हाथ कङ्कण कुशों से बाँधे गये हैं? विद्रुमंडल में सुराजय है—अतएव यहाँ चोर और परहिंसाकारक के अवश्य ही हथकड़ी पड़नी चाहिए। दमयन्ती के पाणिग्रहण के समय का यह श्लोक है। कन्यादान के समय वर और वधू दोनों के हाथ कुश से बाँध दिये जाते यह देशाचार है। उसी हस्त-बन्धन पर यह उत्प्रेक्षा है

नभसि महसां ध्वान्तध्वांक्षप्रमापणपक्षिणः
मिह विहरणैः श्येनंपातां खेरवधारयन्।
शशविशसनत्रासादाशामयाबरमां शशी
तदधिगमनात्तारापारावतैरुदडीयत॥

अर्थात्—अन्धकाररूपी कौवों को मार कर सूर्य-रूपी बाज़ को आकाश में भ्रमण करता देख, चन्द्रमा ने कि सूर्य शिकार के लिए निकला है। इस कारण (चन्द्रमा) अपने शश (खरगोश) के मारे जाने के डर से दिशा को भाग गया और यही समझ कर तारारूपी उड़ गये। यह वर्णन प्रभात-काल का है।

धयतु मलिने माध्वीकं वा न याभिनवागत
कुमुदमकरन्दौघैः कुक्षिंभरिभ्रमरोत्करः।
इह तु लिहते रात्रीतर्षं रथाङ्गविहङ्गमा
मधु निजवधूवक्त्राभोजेऽधुनाधरनामकम्।

अर्थात्—प्रभात-समय आ कर भ्रमर के झुण्ड का मकरन्द का पान करें या न करें, क्योंकि वे रात्रि में के मकरन्द से अपना पेट भर कर तृप्त हो गये हैं। किन्तु चाक पक्षी, जो रात भर प्रिया के वियोग में प्यासे रहे हैं, प्रिया के मुखरूपी कमल में अधररूपी मधु का आ बड़े आनन्द से प्रातःकाल कर रहे हैं।

दिनमिव दिवाकीर्तेर्लक्ष्मीक्षणैः सुरैः सचिवैः कौ-
न्निमिरकवरीलूनां कृत्वा निशां निरवग्रहात्।
स्फुरति परितः केशाम्भोमैस्ततः पतयालुभि-
र्ध्रुवमधवलं तत्तच्छायच्छलादवनीतलम्॥

अर्थात्—दिनरूपी नाई ने सूर्य के किरणरूपी से निशा के अन्धकाररूपी केशसमूह को मुड़ा कर सभी बाहर निकाल दिया जिस तरह कि व्यभिचारिणी को मुड़ा कर देश से बाहर निकाल दी जाती है। पृ वृक्षादि वस्तुओं की जो छाया पड़ती है वही मुण्डन आकाश में गिरे हुए केशसमूह हैं।

परय दुनाम्ब्रनगूर्धनिर्यत्करप्रती हंसवंशराय।
निपिण्यमानाहनि सन्ध्यवाति सन्निर्दशारारदेहिकस्य

अर्थात्—देखिए, चन्द्रमा की नायिका रात्रि की द्वारपालिका का काम सायङ्कालीन सन्ध्या कर रही है। अस्त होते हुए सूर्य की लम्बी लम्बी किरणावली लाल रङ्ग से रँगी हुई उसकी छड़ी है। वह दिन को प्रवेश करने से रोक रही है। यह सन्ध्याकाल का वर्णन है।

प्रदाय दण्डं सकलासु दिक्षु योऽयं परिभ्राम्यति भानुभिक्षुः।
इमौ निमज्जन्निव तापसोऽयं सन्ध्याभ्रकाषायमधत्त सायम्॥

अर्थात्—यह सूर्यरूपी परिव्राजक दण्ड लेकर और सब दिशाओं में घूम कर सन्ध्यासमय स्नान करने के लिए पश्चिम समुद्र में डूब कर, सायङ्कालीन लाल-आकाशरूपी काषाय वस्त्र धारण कर रहा है।

अभिमृष्टेन्दोदरि कौमुदीभिः क्षीरस्य धाराभिरिव क्षणेन।
प्रक्षालि नीलो रुचिरम्बरस्था समोमयीयं रजनीरजस्या॥

अर्थात्—हे दमयन्ती, रातरूपी धोबिन ने दूध की धारा के सदृश चाँदनी से आकाश में फैले हुए अन्धकाररूपी काले कपड़े को उसी तरह धो डाला जिस तरह कि धोबिन कपड़े के काले दाग़ को दूध से क्षणमात्र में धो डालती है। अर्थात् चाँदनी से आकाश निर्मल हो गया।

नैषध का प्रातःकाल और सन्ध्याकाल-वर्णन उतना उत्तम और आदर्शिक नहीं, जितना शिशुपालवध के नवम और एकादश सर्गों में माघ कवि का किया हुआ वर्णन है।

## उपसंहार।

इस लेख में हमने महाकवि श्रीहर्ष और उसके काव्य के सम्बन्ध में अपने कुछ विचार प्रकट किये हैं। संस्कृत भाषा के इस प्रसिद्ध महाकवि के सम्बन्ध में हमें जो कुछ [illegible] पाठकों की सेवा [illegible]

[illegible]

[illegible]

# सहज-ज्ञान और स्वभाव।

शिक्षा का महत्त्व किसी से छिपा नहीं। प्रत्येक गृहस्थ अपने बच्चों को शिक्षित करने में यत्न कर रहा है। परन्तु शिक्षा देना कब और किसी नियत समय पर ही क्यों आरम्भ करना चाहिए—इत्यादि प्रश्नों का उत्तर मनोविज्ञान ( Psychology ) से ही मिल सकता है। यह शास्त्र मानवधर्म-शास्त्र के सदृश केवल बहुत से आदेशों को ही देनेवाला नहीं, किन्तु उन आदेशों के कारणों को भी स्पष्टतया बतानेवाला है। अतएव उन आदेशों का पालन करने में किसी प्रकार की शङ्का नहीं रह जाती।

आज मैं उक्त शास्त्र से सम्बन्ध रखनेवाले सहज-ज्ञान और स्वभाव ( Instinct and Habit ) के विषय में कुछ निवेदन करने का साहस करूँगा और यह दिखलाऊँगा कि उनका प्रयोग केवल बच्चों ही में नहीं, किन्तु बुड्ढों तक में हो सकता है।

आवश्यक कार्य करने की उस शक्ति का नाम सहज ज्ञान है जिसमें कर्ता को अपने कार्य का परिणाम न ज्ञात हो और जिसके करने की रीति उसने कभी पहले न सीखी हो। जब बच्चे के मुख में कोई वस्तु रख दी जाती है तब वह उसे बिना पूर्व ज्ञान के काटने लगता है। जब उसका प्यार किया जाता है तब वह मुसकराने लगता है। जब उसे चोट लगती है तब वह रोने लगता है। जब कोई भयानक वस्तु देखता है तब वह भय से भागता है। यही काटना, रोना, भागना इत्यादि कार्यों को बच्चा बिना पूर्व-ज्ञान के और बिना परिणाम ज्ञान के करता है। इसलिए ये सब सहज ज्ञान के उदाहरण हैं।

सहज-ज्ञान की सहायता से प्राणी आत्मरक्षा करने में समर्थ होता है। यह देखा गया है कि दो सप्ताह के बच्चे किसी भी बड़े किसी पदार्थ का अनुसरण करने लगते हैं। इसीलिए वे [illegible]

का सहज-ज्ञान उनको भोजन की प्राप्ति में भी सहायक होता है।

मनो-विज्ञान के जाननेवालों ने इन सहज-ज्ञानों के विषय में निम्नलिखित दो नियम निर्दिष्ट किये हैं—

(१) सहज-ज्ञान अल्पकाल तक ही रहता है।

(२) स्वभावोदय से सहज-ज्ञान का नाश हो जाता है।

(१) प्राणियों में सहज-ज्ञान केवल थोड़े काल तक रहता है। उस उतने ही समय के भीतर यदि प्राणी उसे प्रयोग में न लाये तो वह नाश को प्राप्त हो जाता है। जब मुर्ग़ी के बच्चे अपनी माता को देखने से दस दिन तक वञ्चित रक्खे जाते हैं तब वे फिर अपनी माता को देख कर उसके पास नहीं जाते। जब दूध पीने वाले जानवरों के बच्चे अपनी माता का दूध, सहज-ज्ञान की उपस्थिति के समय, नहीं पाते तब वे फिर अपनी माता का दूध नहीं पीते। इन उदाहरणों से विदित होता है कि बच्चों में सहज ज्ञान थोड़े ही काल तक रहता है। फिर वह नष्ट हो जाता है।

(२) स्वभावोदय अर्थात् आदत पड़ जाने से सहज-ज्ञान का नाश हो जाता है। मतलब यह कि जब प्राणी पुनः पुनः अपने सहज-ज्ञान का प्रयोग करता है तब उसे वैसा करने का स्वभाव पड़ जाता है और सहज-ज्ञान नष्ट हो जाता है। अपने सहज-ज्ञान से जिस जगह पशु रहने लगता है उसे वह फिर नहीं छोड़ता। जहाँ वह चरने के लिए जाना आरम्भ कर देता है वहीं जाया करता है। इन उदाहरणों से यह प्रकट है कि स्वभाव पड़ जाने पर सहज-ज्ञान नष्ट हो जाता है, क्योंकि उस समय पशु अपने सहज-ज्ञान की प्रेरणा से दूसरे स्थान में जाने के अयोग्य हो जाता है।

इन दोनों नियमों का व्यवहार किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षक का धर्म है कि वह अपने शिष्यों के सहज-ज्ञानों का शीघ्र अनुसन्धान करके उनको स्वभाव में परिणत कर दे। जिन स्वभावों का आधार सहज-ज्ञान होता है वे चिरस्थायी और दृढ़ होते हैं। अतः वे बड़े महत्त्व समझे जाने चाहिए।

मनुष्यों की बाल्यावस्था में सहज-ज्ञान बहुत होते हैं। माता-पिता को चाहिए कि वे उनको उस समय अच्छे विषयों में लगा दें। बहुत से लो अपने छोटे बच्चों को खेलने से रोकते हैं और कहते हैं कि जब वे बड़े होंगे तब खेल लेंगे; अभी उन्हें खूब पढ़ना चाहिए। लोगों का ऐसा विचार अत्यन्त हानिकारक है, क्योंकि जब लड़के बड़े होने पर खेलने से डरते हैं और पढ़ने में अधिक आसक्त हो जाने से अपने शारीरिक स्वास्थ्य को खो बैठते हैं। छोटे छोटे लड़कों को भूत-प्रेतों की कहानियों से भय-भीत करना भी अनुचित है। ऐसी कहानियों से वे अधिक कायर हो जाते हैं।

स्वभाव किसे कहते हैं, यह बात प्रायः सभी को ज्ञात है। उठना, बैठना, कपड़े पहनना, कपड़े उतारना, खाना, पीना इत्यादि सभी स्वभाव से ही होते हैं।

कोई कार्य पुनः पुनः करने से जब उसे करने का स्वभाव पड़ जाता है तब उस स्वभाव से निम्नलिखित दो प्रकार के लाभ होते हैं:—

(१) काम करने में अधिक परिश्रम नहीं पड़ता, काम भी अच्छा होने लगता है। और,

(२) सावधानता की विशेष आवश्यकता नहीं रहती। जो काम प्रारम्भ में बड़ी सावधानता से करना पड़ता है वह स्वभाव पड़ जाने पर सहज हो जाता है।

स्वभाव पड़ जाने और अन्यमनस्क होने पर मनुष्य कभी कभी अत्यन्त हास्योत्पादक काम कर बैठता है। यथा—एक प्रोफ़ेसर साहब रास्ते में चले जाते थे। अकस्मात् वे एक गाय से टकरा गये। उन्होंने फ़ौरन अपनी टोपी उतारी और कहने लगे "I beg your pardon, madam" (देवी क्षमा कीजिए)!

स्वभाव का भी बड़ा महत्त्व है। स्वभाव अच्छे या बुरे होने ही से मनुष्य सुशील अथवा

"श्री गिरमल-शारदा-सदन" बीकानेर

आश्विन ।

प्रथम सिन्धु हित प्रकट विमल जलज पर अवि ।
चतुरानन वर पुत्रि रचन चतुरन हि कवि ॥
कमलु है दिनिमान मैन मुख मैं सेव पण्डित ।
केशवदास कहाइ चतन चक-चक्र चल-पण्डित ॥
रचनाल रचनि रचनीय-धनि रचा रचन्तु राज रति ।
कमलेने-कल्याण कमल वदि कमल व कवहु विदेह-पति ॥

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

शील हो जाता है। उन्नति का एक मात्र आधार स्वभाव है। यदि मनुष्य में स्वभाव पड़ जाने की शक्ति न होती तो यह कदापि विद्वान् अथवा सुज्ञ हो सकता। वर्णमाला लिखने का अभ्यास करने में यदि उसे लिखने का स्वभाव न पड़ जाता तो मनुष्य विशेष न लिख सकता, क्योंकि लिखना सीखने के समय जिस तरह उसे धीरे धीरे हस्त-संचालन और श्रम करना पड़ा था उसी तरह उसे सदा ही करना पड़ता।

बहुत से मनुष्यों को प्रायः कोई न कोई बुरी आदत पड़ जाती है। वे उन आदतों को छोड़ना चाहते हैं। ऐसा करने में उन्हें परिश्रम तथा यत्न की आवश्यकता होती है। किसी मनुष्य को कदापि ऐसा न समझना चाहिए कि वह अपने बुरे स्वभावों को दूर न कर सकेगा। मनोविज्ञान का यह नियम है कि जब मन में दो प्रकार के विचारों में युद्ध छिड़ जाता है तब अधिक बलवान् ही विजयी होता है। अतः जिस स्वभाव को छोड़ना हो उसके विरुद्ध स्वभाव को सर्वदा ध्यान में रखना चाहिए और विचार द्वारा उसे पुष्ट करते रहना चाहिए। अन्त में बुरा स्वभाव अवश्य ही छूट जायगा।

शिवदयालु गुप्त।

---

## विविध विषय।

### १—महकमा कोरट।

आज बाइंस के सम्बन्ध में एक लेख गत माह की सरस्वती में निकल चुका है। दूसरा इस संख्या में प्रकाशित है। इन लेखों के लेखक "अभिज्ञ" महाशय से हमारी कुछ प्रार्थना है। आप से यह निवेदन है कि आप दो तीन लेख और लिखने की कृपा करें। एक लेख में तो आप यह बतावें कि कोर्ट आव वार्ड्स के अधीन इलाक़ा होने से, सब बातों को देखते, हानि होती है या लाभ। दूसरे लेखों में तो दोनों बातें सूचित होती हैं। विशेषतः कोर्ट में चली जाने से यदि कुछ लाभ होता है तो कुछ हानि भी होती है। कुछ मदों में ख़र्च अधिक होता है, यह बात तो "अभिज्ञ" महाशय ने स्वयं ही स्वीकार की है। इसके सिवा और भी कुछ हानियों का उल्लेख आपने किया है। अतएव हानि-लाभों की तुलना करके और उनके गौरव-लाघव पर ध्यान देकर आपको यह बताना चाहिए कि रियासतों का कोर्ट में जाना अच्छा है या बुरा। दूसरे लेख में आप इस बात की मीमांसा करें कि वार्डों—ज़मींदारों और तअल्लुक़ेदारों के लड़कों—को शिक्षा किस तरह की मिलनी चाहिए। उनकी वर्त्तमान शिक्षा का क्रम अच्छा है या नहीं। उसमें कुछ रद्दो-बदल की ज़रूरत है या नहीं। लखनऊ में जो स्कूल इन लोगों की शिक्षा के लिए है उसमें इन्हें सभी आवश्यक बातें सिखाई जाती हैं या नहीं। इन लोगों को क्रिकेट, फुटबाल, घोड़े की सवारी और साधारण शिक्षा के सिवा कुछ विशेष शिक्षा की भी ज़रूरत है। सबसे अधिक महत्त्व की शिक्षा, जो इन्हें मिलनी चाहिए, यह है कि ये अपनी रियाया को नोच-घसोट की चीज़ न समझें। इसी रियाया ही की बदौलत इन्हें लाखों रुपये की आमदनी होती है। अतएव इनकी आराम-तकलीफ़ का ख़याल रखना इनका सबसे बड़ा कर्त्तव्य है। इस बात की इन्हें दृढ़ शिक्षा देनी चाहिए। अपना ख़र्च और सरकारी मालगुज़ारी निकाल कर बाक़ी रुपये को इन्हें ऐसे कामों में लगाना चाहिए जिससे रियाया में अन्न-धन की वृद्धि हो, इनकों की दशा सुधरे, शिक्षा की उन्नति हो, बीमारी घटे। इस निमित्त इन्हें सड़क और अन्नागार बनवाने, कुएँ, तालाब और बाँध बनवाने, देहाती बैंक खोलने, ऊसर हेत में खेती कराने आदि का उपदेश स्कूल में मिलना चाहिए। कानून लगान (Rent Act), कानून मालगुज़ारी—(Land Revenue Act) और अपना दीवानी (Civil Procedure Code) की भी विशेष विशेष बातों की शिक्षा इन्हें मिलनी चाहिए।

कोर्ट आव वार्ड्स के सम्बन्ध में हमें कुछ और भी निवेदन करना है—

(१) वार्डों और ईस्टेटों की कुछ संख्या निश्चित होनी चाहिए। इन्हें ईस्टेटों और इन वार्डों को, जो निश्चित की हुई संख्या से [illegible] या निश्चित संख्या से

या बदइन्तज़ामी के कारण कोर्ट में आ गया है, एक दूसरे से मिलने और प्रबन्ध-सम्बन्धी बातें करने का अवसर मिलना चाहिए। ऐसी सभा एक दफ़े स्थापित हुई भी थी, परन्तु न मालूम क्यों बन्द हो गई।

(२) जो इलाक़े ख़राबी होने जाते हैं या जिनका प्रबन्ध अच्छा नहीं ये, यदि उस ज़िले में मैनेजर मुक़र्रर है तो, उसकी निगरानी में दे दिये जायँ। वह उनका बजट बना दे और समयानुकूल सलाह मशविरा देता रहे। वर्ष के अन्त में वह गवर्नमेंट को रिपोर्ट करे कि बजट की पाबन्दी की गई या नहीं और नहीं तो क्यों नहीं? प्रबन्ध सँभलता है या बिगड़ता जाता है? यह उन रियासतों की बात है जो यथार्थ में कोर्ट के अधीन नहीं।

(३) कोर्ट आव् वार्ड्स एक पत्र चन्दे से निकाले। वह उर्दू और हिन्दी में निकले। उसमें प्रबन्ध-विषयक तथा अन्य उपयोगी लेख निकला करें। कोई मैनेजर ही उसका सम्पादक नियत किया जाय।

(४) कोर्ट आव् वार्ड्स की मुलाज़िमत "प्राविन्शल" कर दी जाय, जिससे लोगों को तरक़्क़ी मिलने और कारगुज़ारी दिखाने का अवसर मिले। ऐसा करने के पहले कोर्ट आव् वार्ड्स को चाहिए कि एक मैनेजर और एक आडिटर नियत करे। वे सब जगह घूम कर देखें कि कम से कम कितने आदमी ऐसे हैं जिनकी मुलाज़िमत "प्राविन्शल" हो सकती है। इस समय तो कहीं आवश्यकता से कम मुलाज़िम हैं, कहीं अधिक।

(५) यह नियम कर देना चाहिए कि २५) से अधिक वेतन पर, इन्ट्रेन्स से कम लियाक़त का आदमी न नियत होगा। आज कल तो ये लोग कोर्ट में नौकर होते हैं जिनको और कहीं नौकरी नहीं मिलती, क्योंकि कोर्ट में एक तो तरक़्क़ी की विशेष आशा नहीं, दूसरे इसका ठिकाना नहीं कि कब ये बरख़ास्त हो जायँगे।

(६) मैनेजरों और असिस्टेंट मैनेजरों को कानपुर के कृषि-कालेज में या कहीं और जगह सर्वे और कृषि का काम कम से कम छः महीने तक सीखना चाहिए।

(७) ख़ास ख़ास वार्डों को छोड़ कर बाक़ी की सीर मैनेजर के हाथ में रहनी चाहिए। उसका इन्तिज़ाम महकमे डाइरेक्टरी से होना चाहिए। ख़र्च देकर उसमें जो बचत हो वह वार्ड को मिलनी चाहिए। ऐसा करने से कोर्ट के जो "फ़र्म" रोपने पड़ते हैं उसकी आवश्यकता न रहेगी। दूसरे, वार्ड को अलग कर्मचारी रखने की ज़रूरत न पड़ेगी। इससे वह बुरे परामर्श से बचने रहेंगे। सीर में ख़र्च कम होगा। वार्ड मुनाफ़े में रहेगा।

(८) कोर्ट के मैनेजरों को डिप्टी कमिश्नरी के सब सम्बन्धी अधिकार दे देना चाहिए। ऐसा करने से उनकी ज़िम्मेदारी बढ़ जायगी और काम अच्छा होगा।

"अभिज्ञ" महाशय से प्रार्थना है कि एक लेख में आप इन सूचनाओं पर भी विचार करें और लिखें कि हमें ये लाभदायक समझते हैं या नहीं।

## २—भारत के अति-प्राचीन ताँबे के शस्त्रास्त्र

कालभेद के अनुसार विद्वानों ने कुछ ऐसे युगों की कल्पना की है जिनमें कुछ विशेष विशेष धातुओं की प्रधानता थी। प्रस्तर-युग में पत्थर के, लोह-युग में लोहे के, ताम्र-युग में ताँबे के ही हथियारों और औज़ारों की प्रधानता थी। हमारे देश, भारत, में भी यही बात थी। इस सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने, समय समय पर, अनेक लेख प्रकाशित किये हैं। हाल में श्रीपण्डित हीरानन्द शास्त्री, एम० ए, एम० ओ० एल० का एक लेख एशियाटिक सोसायटी आव् बेङ्गाल के जर्नल में निकला है। इस लेख में शास्त्री ने ताँबे के बहुत पुराने किन्तेही औज़ारों की प्राप्ति का हाल लिखा है। विन्सेंट स्मिथ आदि जिन पुरातत्त्वज्ञों ने इस देश के ताँबे के शस्त्रास्त्रों पर लेख लिखे हैं उनके कुछ लेखों का आपने हवाला दिया है। उनके तथा स्वयं प्राप्त किये और देखे हुए कुछ नये औज़ारों और शस्त्रों के चित्र भी आपने दिये हैं। यात्री जब ब्रह्मावर्त जाते हैं तब वहाँ के राधाकृष्ण के मन्दिर के, और परिहार के मन्दिर के भी, पुजारी भाले का फल और घड़ियाल मारने के की या बहुत दिखाते हैं और कहते हैं कि ये अर्जुन के बाणों के फल हैं। इन औज़ारों और अन्य शस्त्रों का संक्षिप्त वर्णन और उनके चित्र देकर शास्त्रीजी ने उनकी तौल भी लिखी है। ये सब ताँबे के हैं और बहुत पुराने हैं। कानपुर, इलाहाबाद, बुलन्दशहर और हरदोई में इस तरह के अनेक शस्त्र मिले हैं। इनमें से कुछ तो लखनऊ के अजायब-घर में रक्खे हैं, कुछ विलायत में हैं, कुछ कहीं हैं, कुछ कहीं। जिस समय ताँबे

का प्राधान्य था उस समय तलवारें, ढालें, भाले, बाण के तूण, कुल्हाड़ियां, फरसे या परशु आदि सब प्रायः सोने ही के बनते थे। मगर, युद्धस्थल और कसरत आदि करने के लिए लोहे के ही कांटे या बाण उस समय लोग व्यवहार करते थे। वे बनते तो लोहे के थे, पर ऊपर लकड़ी ही के लगते थे। ऐसे दो कांटों और कुल्हाड़ियों के चित्र अन्यत्र इसी संख्या में प्रकाशित हैं। ये सारी चीजें पूर्वोक्त शास्त्रीजी ने, १९११ ईसवी में, अहाबने ( विट्टर ) से प्राप्त की थीं।

## ३—राजाओं की गुण-ग्राहकता।

जिनके सिर पर पेट-पूजा की चिन्ता सवार रहती है उनसे सरस्वती की पूजा नहीं बन पड़ती। बन भी पड़ती है तो अच्छी तरह साङ्गोपाङ्ग नहीं बन पड़ती। पुराने ज़माने की याद कीजिए। जितने बड़े बड़े विद्वान, कवि और ग्रन्थकार इस देश में हो गये हैं उनमें से अधिकांश किसी न किसी राजा या महाराजा के आश्रित अवश्य थे। उनको रुपये-पैसे की कमी न थी। उनके लिए सब तरह के आराम का प्रबन्ध था। इसी से वे सदा विद्याभ्यासक्त में ही लगे रहते थे और नये नये ग्रन्थों और काव्यों आदि की रचना कर के लोक-कल्याण करते थे। साथही वे अपना नाम भी अमर कर जाते थे और अपने आश्रयदाता का भी। बड़े बड़े राजाओं ही के दरबार में विद्वान् पण्डित और कवि न रहते थे। छोटे छोटे ठाकुरों और सअल्लुकेदारों के भी यहां एक आध कवि अवश्य रहता था। हमारे आमदानी प्रसिद्ध कवि सुखदेव मिश्र का इस प्रान्त के कई राजा-रईसों के यहां आवागमन था। एक नवाब साहब तक इनका आदर करते और इन्हें बहुत कुछ देते थे। मिश्र जी इनके नाम से फ़ाज़िलअली-प्रकाश नाम का एक ग्रन्थ छोड़ गये हैं। पर अब ये सब बातें स्वप्न हो गई हैं। इसमें कुछ अपराध हमारा भी है। यथेष्ट योग्यता प्राप्त किये बिना ही हम सम्पादक, ग्रन्थकार और कवि बनना चाहते हैं। पर विद्याविषयक ढोंग सब कहीं नहीं चल सकता। जिन नरेशों और रईसों में विद्या है वे ऐसे ढोंगियों की कदर करने से रहे। जिनमें विद्या और गुण-ज्ञान नहीं उनके लिए तो लेखकों और ग्रन्थकारों का होना और न होना दोनों तुल्य हैं। उनको इनसे क्या लाभ और क्या काम? तथापि, फिर भी, हिन्दी लिखने वालों में कितने ही ऐसे योग्य लेखक हो गये हैं जो इन लक्ष्मीपतियों की कृपा के पात्र थे। अब भी इस तरह के कितने ही लेखक विद्यमान हैं। पर शायद ही कभी किसी की दृष्टि इनकी ओर खिंची हो।

सन्तोष की बात है कि ऐसे ज़माने में भी उर्दू के प्रेमी रईसों का ध्यान उर्दू-लेखकों की ओर है। कितने ही नवाबों और रईसों के यहां अब भी अच्छे अच्छे शायर और अरबी फ़ारसी के विद्वान् हैं। भूपाल की बेगम साहबा ने बहुत रुपया खर्च कर के कुछ पुस्तकें लिखाई हैं। हैदराबाद के निज़ाम साहब ने हज़ारों रुपया उर्दू के लेखकों, सम्पादकों और कवियों को दे डाला है। सुनते हैं, अभी हाल में, उन्होंने लाहोर के पैसा अख़बार के सम्पादक को २७०० रुपया साल देना मंज़ूर किया है। हैदराबाद के "मुशीर" नामक उर्दू-पत्र को वे २०० रुपया और बम्बई के इस्लामिक मेल नामक अंगरेज़ी पत्र को १०० रुपया महीना देते हैं। वर्तमान युद्ध के समाचार प्रकाशित करने के लिए सिकन्दराबाद से "बुलेटीन" नाम का एक पत्र निकलता है। वह दैनिक है। उसे निज़ाम सरकार से १००० रुपया महीना मिलता है।

## ४—शिक्षा-सम्बन्धी खर्च।

गवर्नमेंट की एक रिपोर्ट से मालूम हुआ कि सन् १९१३–१४ ईसवी में ७१ लाख छात्रों ने इस देश के सब प्रकार के विद्यालयों में शिक्षा पाई। इन इतने छात्रों को शिक्षा देने में कोई १० करोड़ रुपया खर्च हुआ। किस प्रान्त में कितना खर्च पड़ा इसकी तफ़सील नीचे देखिए।

| | |
|---|---|
| बङ्गाल में | २ करोड़ २१ लाख |
| मदरास में | १ करोड़ ८० लाख |
| बम्बई में | १ करोड़ १० लाख |
| संयुक्त प्रान्त में | १ करोड़ २८ लाख |
| जोड़ | ६ करोड़ ८९ लाख |

बाक़ी रुपया और और प्रान्तों में खर्च हुआ। शिक्षा में हमारा प्रान्त और प्रान्तों की अपेक्षा बहुत पिछड़ा हुआ है, पर आबादी में नहीं। बङ्गाल, मदरास और बम्बई से यहां की आबादी कम नहीं, अधिक है। अतएव यह हमारा दुर्भाग्य ही समझना चाहिए जो यहां शिक्षा के सदृश परमोपयोगी काम में, इसकी अत्यन्त आवश्यकता होने पर भी, इतना कम खर्च किया गया। पूर्वोक्त वर्ष में जो खर्च शिक्षा के लिए किया गया उसका—

२६ फ़ी सदी माध्यमिक शिक्षा के लिए
२६ फ़ी सदी प्राथमिक शिक्षा के लिए
६ फ़ी सदी कालेज की शिक्षा के लिए

हुआ। बाक़ी ५२ फ़ी सदी और और प्रकार की शिक्षा तथा शिक्षा-सम्बन्धी और कामों में ख़र्च हुआ। सब प्रकार के स्कूलों और कालेजों में फ़ी छात्र, साल भर में, जितना ख़र्च पड़ा उसकी तख़मीनी नापें फ़ी जाती हैं—

| | रुपया | आना | पाई |
|---|---|---|---|
| प्रारम्भिक मदरसों में | ४ | १३ | ० |
| माध्यमिक स्कूलों में | २२ | ० | ० |
| ट्रेनिङ्ग-स्कूलों में | १२१ | ११ | ० |
| सामूली कालेजों में | ११२ | १३ | ० |
| व्यवसाय-सम्बन्धी कालेजों में | ३३१ | ० | ० |

सन् १९१३—१४ में सब मिला कर विद्यालयों की तादाद १, ८६, ००० थी। उनमें शिक्षा पाने वाले छात्रों का औसत ख़र्च, साल में, फ़ी छात्र १०८) पड़ा।

## ५—लड़ाई में रुई का ख़र्च।

रुई से कपड़े ही नहीं बनते। और भी कितनी ही चीज़ों के सिवा, यह बारूद—बिना धुयें वाली बारूद—बनाने के भी काम आती है। जर्मनी में जो रुई जाती है उसका अधिकांश अमेरिका से ही जाता है। अँगरेज़ी बेड़े की बदौलत अब वह नहीं जाने पाती। तटस्थ देशों की मारफ़त अब तक कुछ कुछ रुई जर्मनी पहुँच जाती थी। पर अब अँगरेज़ी बेड़े ने उसके अवरोध को और भी कड़ा कर दिया है। जर्मनी वाले जो यह कहते हैं कि हमारे व्यापार का अवरोध करके अँगरेज़ी गवर्नमेंट हमें भूखों मार डालना चाहती है उसमें बहुत कम तथ्य है। उन्हें खाद्य पदार्थों की कमी उतनी नहीं खलती जितनी कि रुई की आमदनी की रोक खलती है। यह सारा हाहाकार रुई के ही लिए है। लड़ाई के मैदान में जर्मनी की सेना को कभी कभी एक घंटे में दो लाख फ़ैर करनी पड़ती हैं। सुनते हैं, ढाई लाख फ़ैर करने के लिए काफ़ी गोले वहाँ रोज़ तैयार होते हैं। एक फ़ैर में २ सेर रुई ख़र्च हो जाती है। इस हिसाब से ढाई लाख फ़ैरों के लिए पाँच लाख सेर, अर्थात् १२२० मन, रुई रोज़ चाहिए! इसके सिवा गोलियों के लिए रुई अलग चाहिए; फ़ौज की वर्दी के लिए भी अलग। ख़ैर, उसे जाने दीजिए। बड़ी तोपों के लिए जो बारूद तैयार करने के लिए दो हज़ार मन की रोज़ दरकार होती है। अर्थात् एक महीने के लिए ६० हज़ार और साल भर के लिए ७ लाख २० हज़ार!! इस रुई का आना बन्द हो जाय तो जर्मनी को घुटने टेकते देर न लगे। इसके होने योग्य और अत्यन्त अत्यावश्यक विविध व्यापारी जहाज़ों को डुबोने का सब से बड़ा कारण यही है। यदि इसके व्यापार का अवरोध और भी सख़्ती से किया जाय तो युद्ध की समाप्ति शीघ्र ही हो जाय। इसे विद्वान् के एक युद्ध-विशारद की यही राय है।

## ६—प्लेग से सरनाश।

सर्वसाधारण प्रजा की रक्षा करना राजा का काम है। इसी से सरकार, पूरा प्रमाण मिलने पर, नर-हत्या करने वाले को फाँसी देती है। अत्यन्त नीच मानी गई जाति के मनुष्य की हत्या के लिए भी उसने यही दण्ड नियत किया है जो अत्यन्त उच्च मानी गई जाति के मनुष्य की हत्या के लिए है। इस सम्बन्ध में उसने अमीर और ग़रीब दोनों को एक ही कांटे से तोला है। यही उचित भी है। उसकी दृष्टि में प्रजा के सब अङ्ग एक से हैं। और तो क्या, भूण हत्याकारी तक के लिए उसने कड़ा दण्ड दिये जाने का विधान कर रक्खा है। प्रजा की प्राण-रक्षा और स्वास्थ्य रक्षा के लिए ही उसने अस्पताल और दवाख़ाने खोले हैं। इसी लिए उसने सफ़ाई का भी एक महकमा अलग बना रक्खा है। गवर्नमेंट के इतना यत्नशील होने पर भी प्लेग से आज तक न मालूम कितना मनुष्य-संहार इस देश में हो चुका है। उस दिन कौंसिल के एक मेम्बर के पूछने पर गवर्नमेंट ने बताया कि इस प्रान्त में हैज़े और प्लेग से, सिर्फ़ तीन वर्षों में, कई लाख आदमी मर गये। हिसाब नीचे देखिए:—

| | हैज़े से | प्लेग से |
|---|---|---|
| १९१२ | १८,८१४ | १,१४,६४२ |
| १९१३ | ६०,४२७ | १,०७,६८३ |
| १९१४ | ३२,४६८ | १,०३,६२४ |
| जोड़ | १,११,८१९ | ३,२६,२८२ |

देखिए, एक लाख बारह हज़ार के लगभग मनुष्य तो हैज़ा खा गया और सवा तीन लाख के ऊपर प्लेग! यह अकेले एक सूबे का हिसाब है और तीन ही वर्ष का है।

ने की कोशिश कीजिए। प्लेग ने तो आज तक सारे देश की मिलाकर जन-संख्या कम कर दी। लाखों नहीं, शायद करोड़ों आदमी इसकी विकराल दाढ़ के शिकार हो गये! इस सर्वनाश को रोकने के उपाय गवर्नमेंट अवश्य करती है। पर, जान पड़ता है, वे उपाय काफ़ी नहीं। काफ़ी होते तो अब के मृत्यु-संख्या बहुत कम हो जाती। योरप के वर्तमान युद्ध में जितने सैनिक आज तक मारे गये हैं उनसे कहीं अधिक मनुष्य इस देश में प्लेग से मर चुके हैं और अब भी हज़ार आगे चले जा रहे हैं। इस सर्वनाश को रोकने के लिए गवर्नमेंट को कुछ अधिक सचेष्ट होना चाहिए। प्लेग के निवारण के लिए उसे विशेष उपायों की योजना करनी चाहिए।

## ७—इंडियन सोल्जर्स फंड।

हिन्दुस्तानी सेना के जो सैनिक आज १९१४ से फ्रांस, बेलजियम, अफ़रीदा, गैलीपोली, फ़ारिस की खाड़ी और भूमध्य सागर में लड़ रहे हैं उनके आराम के लिए—उन्हें कपड़े-लत्ते और खाने-पीने की चीज़ें पहुँचाने तथा घायल होने पर उनकी सेवा-शुश्रूषा करने के लिए—विलायत में एक कोश (फंड) खोला गया है। उसका नाम है—इंडियन सोल्जर्स फंड। ईसाई धर्म के—आर्डर आव् सेंट जान आव् जेरूसलम—नामक सम्प्रदाय के प्रबन्ध से यह फंड खुला है। इस फंड की, अक्टोबर १९१४ से मार्च १९१५ तक की, एक सचित्र रिपोर्ट हमें मिली है। उसमें इस फंड से सम्बन्ध रखने वाली कार्य्यावली का वर्णन है। इस फंड के तीन उद्देश हैं:—

(१) घायल सैनिकों के लिए अस्पताल खोलना।

(२) सरकारी अस्पतालों में भेजे गये घायलों को आराम पहुँचाना।

(३) हिन्दुस्तानी सेना के आराम के लिए आवश्यक कपड़े-लत्ते तथा अन्य चीज़ें पहुँचाना।

इस फंड की कमिटी में विलायत के अनेक नामी नामी लोग शामिल हैं। बड़े बड़े घरों की कितनी ही स्त्रियां भी हैं। भावनगर की महारानी, रतन ताता और आगाख़ां का भी नाम कमिटी के सभासदों में है।

रिपोर्ट से मालूम हुआ कि पहले छः महीने में इस कमिटी को १६ लाख से भी अधिक रुपया चन्दे में मिला। उसमें से कोई ६ लाख ख़र्च हुआ। १३ लाख के क़रीब बाक़ी रहा। अकेले आर्डर आव् सेंट जान सम्प्रदाय ने ही डेढ़ लाख रुपया दिया। हमारे वाइसराय, लार्ड हार्डिंग, ने इम्पीरियल इंडियन रिलीफ़ फंड से एक लाख रुपया भेजा। लार्ड कर्ज़न की अपील पर ४½ लाख रुपया इसे मिला। इसके सिवा और सैकड़ों दानियों से इसने लाखों रुपया प्राप्त किया। इस दान की तफ़सील रिपोर्ट के अन्त में दी हुई है। उसमें दो तीन भारतीय राजाओं के भी नाम हैं। गे डाल के ठाकुर साहब के नाम पर १२ हज़ार रुपया दर्ज है।

इस फंड की कमिटी ने जो अस्पताल खोला है उसका नाम है—लेडी हार्डिंग हास्पिटल। उसमें आठ दस सुयोग्य डाक्टर और सर्जन नियत हैं। कितनी ही दाइयां भी हैं। घायलों के इलाज मुआलजे के सिवा उनके रहने के लिए, उनके मनोरञ्जन के लिए और उनके खाने पीने के लिए भी बड़ा अच्छा प्रबन्ध है। इस अस्पताल में सैकड़ों घायलों की चिकित्सा होती है।

घायलों के लिए गवर्नमेंट ने जो अस्पताल खोल रक्खे हैं उनकी संख्या तीस चालीस के लगभग है। कुछ फ्रांस में हैं, कुछ इँगलेंड में, कुछ ईजिप्ट में, कुछ भूमध्य सागर में, कुछ कहीं, कुछ कहीं। इन अस्पतालों के हिन्दुस्तानी घायलों को आवश्यक वस्तुएँ पहुँचाने के लिए इस फंड की कमिटी ने सरकारी अफ़सरों की सलाह से बड़ा अच्छा प्रबन्ध कर रक्खा है। जहां जिन चीज़ों की ज़रूरत होती है वहां वे चीज़ें पहुँचा दी जाती हैं। इस काम के लिए कमिटी ने अलग अलग छोटी छोटी कमिटियां बना रक्खी हैं। उनको इसने सब काम बांट दिया है। इन सब कमिटियों के मेम्बरों की संख्या साढ़े सत्तर से कम नहीं।

जो सैनिक घायल नहीं—जो लड़ाई पर हैं—उनकी भी सहायता यह कमिटी करती है। उन्हें भी आज तक लाखों रुपये के मोज़े की चीज़ें यह दे चुकी है। यही नहीं, किन्तु यदि कोई किसी ख़ास सैनिक के लिए कोई पदार्थ—कोई पारसल—भेजता है तो यह उसे भी लेकर पाने वाले के पास पहुँचा देती है। रिपोर्ट में उन सब चीज़ों की तालिका दी हुई है जो इस कमिटी ने आज तक हिन्दुस्तानी सैनिकों को पहुँचाई हैं। उन्हें देख कर आश्चर्य होता है

और साथ ही ईसाई धर्म्म के इस सम्प्रदाय की दयाशीलता और परोपकार पर आनन्द भी होता है। इस तालिका में सैकड़ों चीज़ें हैं। कुछ की तफ़्सील नीचे दी जाती है:—

| | |
|---|---|
| १—मोज़े | २२,२२३ |
| २—कमीज़ | १०,८४० |
| ३—पायजामे | १,१०१ |
| ४—कम्बल | १,२०१ |
| ५—रूमाल | ६ ७१३ |
| ६—पगड़ी का कपड़ा | २१,२६४ गज़ |
| ७—मिश्री | ६,००० सेर |
| ८—मिठाई | १४,००० सेर |
| ९—तम्बाकू | २,००० सेर |
| १०—सिगरेट | २७,०३,७६० |
| ११—लिखने का काग़ज़ | ६२,६७० तस्ते |
| १२—लिफ़ाफ़े | ६२,४०० |

कहाँ तक गिनावें—नमक, मिर्च, मसाले, तेल, फल, मेवे, कपड़े, कत्था, सुपारी आदि ऐसी सैकड़ों उपयोगी वस्तुयें सिपाहियों को इस कमिटी की बदौलत मिली हैं जिनका मिलना और किसी तरह बहुत ही कम सम्भव था। कुरान और ग्रन्थ साहब की सैकड़ों कापियाँ भी इसने बाँटी हैं। पर रामायण का कहीं नाम न देख कर आश्चर्य्य हुआ।

लोक-सेवा और परोपकार इसे कहते हैं।

## ८—पुरातत्त्व-विभाग की रिपोर्ट।

भारतीय पुरातत्त्व-विभाग के डाइरेक्टर-जनरल, सर जान मार्शल, की वार्षिक रिपोर्ट के पहले भाग की एक कापी गवर्नमेंट ने कृपा करके सरस्वती के लिए भी भेजी है। यह रिपोर्ट १९१२—१३ की है। इसमें किसी और का कोई लेख नहीं। सारी रिपोर्ट डाइरेक्टर जनरल ही की ओर से है। इसमें साल भर के काम का विवरण है। अनेक चित्रों से रिपोर्ट का महत्त्व बढ़ गया है। इसे देखने से जान पड़ता है कि यह महकमा कितना और कैसा काम कर रहा है। भारत के प्राचीन इतिहास आदि की जितनी रक्षा इसकी बदौलत हो रही है उतनी और किसी तरह नहीं। जिन इमारतों, जिन पुस्तकों, जिन सिक्कों, जिन वस्तुओं और जिन राजाओं के नाम तक का पता न था—जिनके अस्तित्व तक का ज्ञान किसी को न था—उनका पताही इस महकमे ने नहीं लगाया, उनकी रक्षा का प्रबन्ध भी इसने किया, उनके दर्शन भी इसने करा दिये हैं, और उनमें जानने योग्य ऐतिहासिक तत्त्वों का उद्घाटन भी इसने कर दिया है। यह बराबर करता जा रहा है। यदि यह महकमा न होता तो हमारे पूर्वजों के सैकड़ों स्मृति-चिह्न पृथ्वी के पेट में ही पड़े रहते। अतएव भारतवासियों को इस महकमे का, और उसकी प्रतिष्ठा करने वाले ब्रिटिश राज्य का, कृतज्ञ होना चाहिए।

इस रिपोर्ट में और और बातों के सिवा तक्षशिला, पाटलिपुत्र और साँची की खुदाई के काम का विवरण दर्ज है। पाटलिपुत्र में जो खुदाई हो रही है वह श्रीयुत रतन ताता की उदारता का फल है। उसका, वर्णन सरस्वती में हो चुका है। साँची के स्तूपों की खुदाई का काम भूपाल की बेगम साहिबा के खर्च से हुआ है। यह जगह भूपाल रियासत में, भिलसा के पास, है। स्वयं डाइरेक्टर साहब ने वहाँ दो-तीन महीने रह कर अपनी ही निगरानी में खुदाई का काम कराया है। साँची के स्तूप बहुत पुराने हैं। वे सन् ईसवी से भी बहुत पहले के हैं। उन पर कई लेख और पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। पर उन लेखों और पुस्तकों में बहुत बातें भ्रमपूर्ण लिख गई हैं। वर्तमान खोज से उनमें से कितने ही भ्रमों का निराकरण हो गया और कितनी ही नई नई बातें मालूम हुई हैं। इन स्तूपों में और उनके आस पास, ब्राह्मी लिपि में, अब तक २८० लेख मिल चुके थे। अब के ३०० से भी अधिक लेख और मिले हैं। ये सब लेख अँगरेजी और फ्रेंच भाषाओं में पुस्तकाकार प्रकाशित किये जायँगे। पुस्तक में कोई १०० फोटो भी रहेंगे। जिन इमारतों से इनका सम्बन्ध है उनका वर्णन तथा और भी अनेक ऐतिहासिक तत्त्वों का विवरण इसमें रहेगा। यह पुस्तक बड़े ही महत्त्व की होगी। इसके सम्पादन और प्रकाशन में बहुत रुपया खर्च होगा। वह सब भूपाल-दरबार देगा।

जिस साल की यह रिपोर्ट है उस साल सबसे अधिक महत्त्व का काम तक्षशिला के खँडहरों की खुदाई का हुआ। इस खुदाई के विषय में भी एक लेख, कुछ समय पूर्व, सरस्वती में निकल चुका है। अतएव उसके रिव्यू की आवश्यकता नहीं। तक्षशिला बहुत पुरानी जगह है। वह सिकन्दर की चढ़ाई के पहले उसकी क्या दशा थी और

के राज्य में शामिल था, अथवा वहाँ कौन कौन राजे हुए —इसका कुछ पता नहीं। इस विषय में सिर्फ़ इतनाही जा सकता है कि तक्षशिला में उस समय एक बहुत बड़ा विद्यालय था और वह कला-कौशल, विज्ञान तथा विद्या कारण बहुत प्रसिद्ध था। ईसा के ३२६ वर्ष पहले वह कन्दर के अधिकार में आया। इसके चार वर्ष बाद चन्द्र-मौर्य्य ने उसे सिकन्दर के अधिकारियों से छीन लिया। ोक के समय तक इस पर मौर्य्य वंश की सत्ता रही। नन्तर, बाक्ट्रिया के राजा ऐन्टियोकस के दामाद डेमिट्रि-स ने इस पर दखल कर लिया। उसने और उसके वंशजों कोई डेढ़ सौ वर्ष तक तक्षशिला में राज्य किया। इसके क और पह्लव-राजाओं का राज्य हुआ। उनके बाद, ॉ० ६० ईसवी के लगभग, कनिष्क आदि कुशन-वंशी ाओं ने तक्षशिला पर शासन किया। इस प्रकार कोई ० वर्ष के भीतर, भिन्न भिन्न पाँच राज्यों की सत्ता तक-ला पर रही। चौथी शताब्दी में, जब कुशन-वंशी राजाओं प्रभुत्व का ह्रास और गुप्तवंशी राजाओं के प्रभुत्व का विकास ा तब से, तक्षशिला की अवनति का आरम्भ हुआ। वीं सदी में जब चीन का परिव्राजक ह्वेन-सांग वहां या तब वहां की बड़ी बड़ी इमारतें उजाड़ हो गई थीं और कश्मीर के अधिपति का रक्षित राज्य हो गया था।

तक्षशिला के खँडहर और टीले रावलपिण्डी से २० मील । अपनी उन्नति के समय वहां तीन नगर थे। वे एक दूसरे ायः मिले हुए थे। वे कोई १२ वर्ग मील में थे। खोदने वहां न मालूम कितने स्तूपों और मन्दिरों का पता चला । अनेक सिक्के, मूर्त्तियां, रत्न, चांदी-सोने के आभूषण दि भी प्राप्त हुए हैं। सिक्कों की गिनती ६०० के ऊपर । ये सब बहुत पुराने सिक्के हैं—कुशन-वंशी राजाओं के ले के हैं। जिनको इस विषय में अधिक जानने की इच्छा वे इस रिपोर्ट को पढ़ें। उसका मूल्य केवल २) है।

## ९—आस्ट्रिया की "स्कोडा" नामक तोप।

जर्मनी की तोपों की बड़ी प्रशंसा है। इनका गोला बीस म मील दूर जाता है। जर्मनी ने अपने मोरचों से फ्रान्स इनके नामक नगर पर जो गोलाबारी दो तीन दफ़े की वह ऐसी ही तोपों से की है। लोगों का ख़याल था कि बेलजियम के लीज, नामूर और ऐंटवर्प आदि बड़े ही मज़बूत क़िलों को जर्मनी ने इन्हीं तोपों से तोड़ा था। पर यह बात अब ग़लत साबित हुई है। विलायत के अख़बारों ने इस बात को सप्रमाण सिद्ध किया है कि इन क़िलों को तोड़नेवाली तोपें जर्मनी की बनी हुई न थीं। वे आस्ट्रिया की थीं। और भी कई पत्रों ने यही बात लिखी है। आस्ट्रिया में एक जगह पिलस्न है। उसी के निकट तोप-बन्दूक़ आदि का एक कारख़ाना है। उसका नाम है—"स्कोडा वर्क्स"। इसी कारख़ाने में बनी हुई तोपों से पूर्वोक्त क़िले तोड़े गये थे। १९०७ में इस तरह की तोपें बनाने का विचार आस्ट्रिया वालों के मन में उत्पन्न हुआ। तदनुसार बड़े धड़ाके से काम शुरू किया गया और १९१० के जुलाई महीने में पहली "स्कोडा" तोप बन कर तैयार हुई। परीक्षा करने पर वह सब बातों में ठीक निकली। तबसे आज तक और भी अनेक तोपें तैयार हो चुकी हैं। इस तोप के मुँह का व्यास १२ इंच है। यह कोई ११ मन वज़नी गोला खाती है। इसका गोला एक सेकंड में ३७२ गज़ के हिसाब से उड़ता है। इसमें एक मिनट में एक गोला दागा जाता है। इसके गोले में यह विशेषता है कि क़िले की जिस दीवार या बुर्ज पर यह मारा जाता है उसमें घुस जाने के बाद यह फटता है। फटते ही दीवार या बुर्ज के टुकड़े टुकड़े हो जाते हैं। ऐंटवर्प का क़िला बहुत ही मज़बूत समझा जाता था। पर इस तोप की कुछ ही बाढ़ों ने उसे तोड़-फोड़ डाला। सात मील दूर से ऐंटवर्प के एक गुम्बज़ पर चलाया गया इसका एक गोला ठीक निशाने पर जा कर लगा और उसके भीतर धँस गया। यह तोप इस तरह बनाई गई है कि इसके टुकड़े टुकड़े अलग किये जा सकते हैं और सिर्फ़ चालीस मिनट में फिर, जहां इरादा हो, जोड़ दिये जा सकते हैं। तीन मोटरकारों पर लाद कर यह एक जगह से दूसरी जगह पहुँचाई जाती है। १०० घोड़े की ताक़त का एंजिन इन मोटरकारों को खींचता है और १२ मील फी घंटे के हिसाब से चलता है। इन तोपों के गोले भी आस्ट्रिया ही में बनते हैं। अमेरिका के "साइंटिफिक अमेरिकन" नामक पत्र ने लिखा है कि कुछ "स्कोडा" तोपें १६ इंच व्यास के मुँह की भी बनाई गई हैं। फ्रेंच और ब्रिटिश सेना में भी भीषण कालमर्दिनी तोपों की कमी नहीं।

## १८—शङ्कराचार्य्य का समय।

जुलाई मास की सरस्वती में महाशय रामकर्ण का जो लेख श्रीशङ्कराचार्य्य के विषय में निकला है उसमें उक्त लेखक ने स्वामी दयानन्द सरस्वती की भूल सिद्ध की है। उन्होंने यह दिखाया है कि शङ्कराचार्य्य का समय ईसा की आठवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध है। लेकिन यह लेख ऐतिहासिक दृष्टि से अप्रामाणिक है। इसकी प्रमाणता के लिए कि स्वामी दयानन्द सरस्वती का लेख ठीक है, केवल इतना ही लिखना पर्य्याप्त है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने शृङ्गेरी मठ में रक्खे हुए ताम्रपत्र के अनुसार २२०० वर्ष लिखा है। संस्कृत-चन्द्रिका और वेदप्रकाश ने भी यही समय माना है। वेदप्रकाश के लेख का उतना अंश नीचे दिया जाता है:—

"जिनका समय सत्यार्थप्रकाश में २२०० वर्ष के लगभग स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी ने लिखा है, जिसको ३० वर्ष हुए, उसका ओर इस संस्कृत-चन्द्रिका से लेकर इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं, जिनके विषय में अनेक लेख जो देशप के विद्वानों का मत लेते हैं, जो केवल सातवीं ईसवी सदी (शताब्दी) में होने से १२०० वर्ष से भी कम आता है। इनको प्राचीनों और नवीन विद्वानों के मत में किसी का पक्षपात नहीं है परन्तु प्रमाणों के अनुसार जो सिद्ध हो उसी का पक्ष है। ईसवी इसवीं सदी में शङ्कराचार्य्य को शिष्यपरम्परा में वृद्धिलाभजी हुए हैं जो द्वारकापुरी के शारदा-पीठ पर विराजमान हुए, जिनको गुर्जरदेशाधिपति श्रीमान् राजा सर्वसिद्धजी ने ताम्रपत्र समर्पण किया था। यह ताम्रपत्र अब तक द्वारकापुरी में वर्तमान है। शङ्कराचार्य्यजी ने जिस सुरेश्वराचार्य्य को द्वारका की गद्दी पर स्थापित किया था तब से वृद्धिलाभजी तक २८ आचार्यों के काल का क्रम यह है—

| नाम | युधिष्ठिर-संवत् | | अनुशासनकाल |
|---|---|---|---|
| १—श्रीसुरेश्वराचार्य्य | २६४८ से २६६१ | तक | ४२ वर्ष |
| २—श्रीपद्मपादाचार्य्य | २६६१ से २७११ | ,, | २३ ,, |
| ३—श्रीहस्तामलकाचार्य्य | २७११ से २७७३ | ,, | ६८ ,, |
| ४—श्रीत्रोटकाचार्य्य | २७७३ से २८२३ | ,, | ६० ,, |
| ५—श्रीज्ञानपुञ्जाचार्य्य | २८२३ से २८६० | ,, | ६० ,, |
| ६—श्रीमधुसूदनाचार्य्य | २८६० से २८८२ | ,, | १२ ,, |
| ७—श्रीविद्याकराचार्य्य | २८८२ से २९६१ | ,, | २३ ,, |
| ८—श्रीविश्वरूपाचार्य्य | २९६१ से ३००८ | ,, | ४३ ,, |
| ९—श्रीसुरेश्वरद्वितीयाचार्य्य | ३००८ से ३०३० | ,, | २२ ,, |
| १०—श्रीआनन्दविधानाचार्य्य | ३०३० युधिष्ठिर-संवत् से | | |
| | ९ कलियुग तक | | २१ ,, |
| ११—श्रीज्ञानशिवाचार्य्य | ९ से ८२ | ,, | ७३ ,, |
| १२—श्रीचित्सुखाचार्य्य | ८२ से ११९ | ,, | ३७ ,, |
| १३—श्रीविष्णुबोधानन्दाचार्य्य | ११९ से १६३ | ,, | ४४ ,, |
| १४—श्रीपरमशिवाचार्य्य | १६३ से १९१ | ,, | २८ ,, |
| १५—श्रीसदाशिवाचार्य्य | १९१ से २२१ | ,, | ३० ,, |
| १६—श्रीसर्वज्ञशिवाचार्य्य | २२१ से २५१ | ,, | ३० ,, |
| १७—श्रीसर्वज्ञनारायणाचार्य्य | २५१ से २८१ | ,, | ३० ,, |
| १८—श्रीसर्वज्ञोत्तमाचार्य्य | २८१ से ३११ | ,, | ३० ,, |
| १९—श्रीसर्वज्ञशङ्कराचार्य्य | ३११ से ३६१ | ,, | ५० ,, |
| २०—श्रीविद्यातीर्थाचार्य्य | ३६१ से ३८३ | ,, | २२ ,, |
| २१—श्रीभारतीकृष्णाचार्य्य | ३८३ से ४०८ | ,, | २५ ,, |
| २२—श्रीसर्वज्ञनृसिंहाचार्य्य | ४०८ से ४१८ | ,, | ११ ,, |
| २३—श्रीज्ञानघनेन्द्राचार्य्य | ४१८ से ४१९ | ,, | ११ ,, |
| २४—श्रीसत्यबोधाश्रमाचार्य्य | ४१९ से ४४९ | ,, | ३० ,, |
| २५—श्रीज्ञानघनाश्रम | ४४९ से ४९६ | ,, | ४७ ,, |
| २६—श्रीविष्णुगुप्ताश्रम | ४९६ से ५०१ | ,, | ५ ,, |
| २७—श्रीविद्याघनाश्रम | ५०१ से ५११ | ,, | १० ,, |
| २८—श्रीदेवसिंहाश्रम | ५११ से ५१० | ,, | ९ ,, |
| | | योग | १११० |

सवत् ५१० विक्रमीय से आगे अति प्रसिद्ध समय से आचार्यों की परम्परा लिखने से क्या लाभ है। इस सूची में जो अनुशासन के वर्ष दिये गये हैं वे महीने नहीं लौटे हैं। महीने जोड़ने से कुछ न्यूनाधिक हो सकता है। इसमें वही पक्षपाती और अशिष्ट स्वभाव के लोग कहेंगे कि जो लेख हमने यहाँ उद्धृत नहीं किया।

राजा सुधन्वा ने जिस आदि-शङ्कराचार्य को ताम्रपत्र अर्पण किया उसने युधिष्ठिर-संवत् ३१६९ लिखा है।

इन २८ आचार्यों में तेरहवें आचार्य श्रीगोविन्दाचार्य की आयु बहुत बढ़ी हुई, क्योंकि ११९ वर्ष तक उनका गद्दी पधारने से अलग समय है। दो वर्ष भी पहले लगाएँ तो १३५ वर्ष होते हैं जिससे उनके समय का गोविन्दाचार्य का आधिक्य आना जाता है। वास्तव में गोविन्दाचार्य ही रहते हैं।

इस प्रकार सतां हि सन्देहपदेषु० इत्यादि कालिदास-वचन के श्रीकुमारिल-भट्ट प्रणीत तन्त्रवार्तिक-ग्रन्थ में वर्तमान होने से सिद्ध है कुमारिल भट्ट के शङ्कराचार्य समकालीन होने से और शङ्कराचार्य के युधिष्ठिर-संवत् में जन्म लेने से स्पष्ट है कि कालिदास, कुमारिल, शङ्कराचार्य इन तीनों का समय २३०८ वर्ष समझना है। जो लोग ईसवी सन् से ३१०० वर्ष पूर्व युधिष्ठिर-संवत् और कलियुगारम्भ मान कर कलियुग को ३००० वर्ष मात्र कह बताते हैं वे इस प्रमाणों से भले प्रकार निरुत्तर हैं। कलियुग को वास्तव में ५००० वर्ष से ऊपर व्यतीत हो चुका है।

गोवर्धन-पीठ पर आज तक १०१ आचार्य विराजमान हुए। स्थूल २० वर्ष प्रति आचार्य के समय का मध्य मान (औसत) मानने से भी २०२० वर्ष के ऊपर समय आता है"।

अतः हमारी सम्मति में भी शङ्कराचार्य वर्ष हो गये, क्योंकि नृसिंहाश्रम का

क्रम-संवत् है और आज कल १९७२ संवत् है। अतः आज से १०१२ वर्ष नृसिंहाश्रम को हुए हो गये। उसमें से आचार्यों का अनुशासनकाल १३३० वर्ष था। अतः सब मिला कर २३०० वर्ष हो गये। इस प्रकार ऐतिहासिक दृष्टि से शङ्कराचार्य्य ईसवी के ३०० वर्ष के पूर्व विद्यमान थे।

दिवाकर शुक्ल (गुरुकुल, वृन्दावन)

## ११—केर हार्डी साहब की मृत्यु।

केर हार्डी साहब ग़रीब के लड़के थे। १७ वर्ष तक होश मज़दूरी की। सात ही आठ वर्ष की उम्र में ये कोयले खान में भरती हुए। वहाँ वे मज़दूरी भी करते थे और ने लिखने की चेष्टा भी करते थे। कोयले और लकड़ी के ड़ों से उन्होंने ज़मीन पर अँगरेज़ी वर्णमाला और अँगरेज़ी दसे लिखना सीखा। धीरे धीरे वे ख़ूब लिख पढ़ लेने ।। खान के काम में भी उन्होंने बराबर उन्नति की। का पद और वेतन दोनों बढ़ते गये। २४ वर्ष की उम्र उन्होंने वहाँ काम किया। मज़दूर उन्हें अपना नेता ने लगे। फल यह हुआ कि वे मज़दूरों की तरफ़ से लियामेंट के मेम्बर हो गये। १२ वर्ष तक उन्होंने हाउस कामन्स में मजदूरों के प्रतिनिधि बन कर काम किया। समय तक उन्होंने एक पत्र का सम्पादन कार्य्य भी या। केयर-स्टार्मर नाम का एक पत्र भी उन्होंने निकाला। ने पार्लियामेंट में भारत का सदा पक्ष लिया। भारत-सियों के साथ उनकी इतनी सहानुभूति थी कि १९०० ी में वे ख़ुद भारतवर्ष आये। वहाँ घूम घूम कर उन्होंने ी व्यवस्था स्वयं देखी और भारतवासियों के दुख-दर्द की स्वयं सुनी। इस देश की उन्नति के लिए आपने बड़ा ब यत्न किया। एतदर्थ यह देश उनका सदा ऋणी रहेगा। गत मास, ६० वर्ष की उम्र में, उनका ान्त हुआ।

---

## पुस्तक-परीक्षा।

१—श्रीसत्यार्थप्रकाश—इस उत्तम पुस्तक की रचना स्वामी दयानन्दजी ने की है। इसे अजमेर मिशन ने—"दी सत्यार्थ-प्रकाश के प्रचार कार्यालय के लिए—विभाग"—ने। इसका आकार बड़ा, पृष्ठ-संख्या सात सौ के ऊपर और मूल्य १॥) है। जिल्द बँधी हुई है। छपाई नवलकिशोर प्रेस की है और साधारण है। काग़ज़ भी साधारण है। बनारस में भारतधर्म्म महामण्डल का निज का छापाख़ाना है। मालूम नहीं, फिर क्यों यह पुस्तक और छापेख़ाने में छपाई गई और मण्डल का रुपया मण्डल ही में न रख कर अन्यत्र ख़र्च किया गया। इसके टाइटिल पेज पर लिखा है कि इसका एक "राज-संस्करण" भी है, जिसका मूल्य ४) है। यह संस्करण शायद "स्वाधीन नरपतियों" और महामण्डल के नामी नामी पृष्ठ-पोषकों के लिए है। हिन्दी के टुटपुँजिये समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं के लिए सस्ते, डेढ़ रुपये वाले, संस्करण की ही कापी उनकी स्थिति के अनुकूल समझी गई है, काम चाहे उनके समालोचना-रूप विज्ञापन से सौ रुपये का भले ही निकल जाय। महा-मण्डल में महती उदारता होनी चाहिए। पर इसकी छोटी छोटी बातें भी बहुधा खटकने वाली होती हैं। पुस्तक भेजने वाले महाशय ने पुस्तक के साथ एक लम्बा चौड़ा विज्ञापन भेजा है और अपने पत्र में हमारा ध्यान उसकी ओर दिलाया है। वह हमारे "सुभीते" के लिए है—शायद इस लिए कि हमें पुस्तक देखने का कष्ट न उठाना पड़े, विज्ञापन में की गई प्रशंसा की नक़ल छप कर "सर्व-साधारण इसे (पुस्तक को) ख़रीद कर लाभ उठा सकें"। सर्व-साधारण को लाभ हो जाय, महा मण्डल को लाभ हो जाय, पर समालोचक पत्र या पत्रिका को लाभ न होने पावे। विज्ञापन न छपाया जाय, विज्ञापन का काम समालोचना से निकल जाय, पर मूल्य हो सिर्फ़ डेढ़ रुपये मूल्य की एक कापी!!! अस्तु।

पुस्तकारम्भ में धर्म्मवीर श्रीयुत् लालाजपतराय जिन का लिखा हुआ चार पृष्ठों का एक लेख अँगरेज़ी में है। उसमें धर्म्म की, धर्म्मसंस्थापक के सम्बन्ध में स्वामी दयानन्दजी की कैसी उत्तम पुस्तक की प्रशंसा है। इसके आगे उक्त महाशय की भूमिका है। भूमिका में लिखा है कि इस पुस्तक के दो भाग कभी कभी प्रकाशित होंगे। समालोच्य पुस्तक प्रथम भाग है। इस भाग में चौदह अध्याय हैं। उनके जिन जिन विषयों का विवेचन है उनकी तालिका नीचे दी जाती है—

१—(क) धर्म्म
(ख) दान-धर्म्म
(ग) तपो-धर्म्म
(घ) कर्म्म-यज्ञ
(ङ) उपासना-यज्ञ
(च) ज्ञान-यज्ञ
(छ) महा-यज्ञ

२—(क) वेद
(ख) वेदाङ्ग
(ग) उपाङ्ग अर्थात् दर्शन-शास्त्र
(घ) स्मृति-शास्त्र
(ङ) पुराण-शास्त्र
(च) तन्त्र-शास्त्र
(छ) उपवेद
(ज) ऋषि और पुस्तक

३—(क) साधारण धर्म्म और विशेष धर्म्म
(ख) वर्ण-धर्म्म
(ग) आश्रम-धर्म्म
(घ) पुरुष धर्म्म से नारी-धर्म्म की विशेषता

इस प्रकार यह पुस्तक ३ समुल्लासों और १६ अध्यायों में विभक्त है। इसमें जिन बातों का वर्णन है वे सभी सनातनधर्म्मावलम्बियों के जानने योग्य हैं। जिन ग्रन्थों के आधार पर ये लिखी गई हैं वे सभी को सुलभ नहीं। सुलभ भी हों तो उनका तत्त्व समझना केवल कुछ ही लोगों के वश की बात है। अतएव इस पुस्तक के लाभदायक होने में सन्देह नहीं। इसकी रचना में रचनाकार ने अपनी बुद्धि और अपने निज के विचारों से भी काम लिया है। इस कारण पुस्तक की उपादेयता और भी बढ़ गई है। जो बातें साधारण आदमियों की समझ में अच्छी तरह नहीं आ सकतीं वे पुस्तक-प्रणेता के विवेचन से खूब स्पष्ट हो गई हैं। जगह जगह संस्कृत-ग्रन्थों के प्रमाण भी उद्धृत कर दिये गये हैं। इससे लेखक महाशय का कथन पुष्ट हो गया है। यह बात सनातन-धर्म्मावलम्बी सरल-हृदय सज्जनों की श्रद्धा का कारण भी हो सकती है। पुस्तक की भाषा न बहुत सरल और न बहुत क्लिष्ट है।

समष्टि-रूप से यह पुस्तक अच्छी है। जिन लोगों के लिए इसकी रचना है उन्हें, उनके काम की बहुत बातें इसमें हैं। जो नहीं हैं वे अगले खण्डों में बहुत करके आ जायँगी। भिन्न भिन्न ग्रन्थों से सनातन-धर्म्म की बिखरी हुई बातों का सङ्कलन करके और उन्हें अच्छे ढङ्ग से लिख कर पुस्तककार स्वामीजी ने बड़ा काम किया है। अतएव सनातन-धर्म्म के अनुयायियों के आप अवश्य ही कृतज्ञता-भाजन हैं। हमारी मन्द बुद्धि में धर्म्म की भित्ति श्रद्धा है।

में विज्ञान ढूँढ़ना सरासर भूल है। वैज्ञानिक का आविष्कार देव-समाज के अग्निहोत्रीजी को ही मु हो। श्रद्धा और विश्वास की दृष्टि से तो धर्म्म के यह और सभी सिद्धान्त मान्य हो सकते हैं। प बीसवीं शताब्दी में सभी श्रद्धालु नहीं। अधिकांश वि मनुष्य बुद्धि और विवेक को ताक पर नहीं रख सकते लोगों से स्वामी दयानन्दजी का यह कहना कि—

"पुराण वेद के व्याख्या-ग्रन्थ हैं। अतः सर्वथा मुख्य हैं"—

इन्हें कहाँ तक मान्य होगा, कुछ नहीं कह स्वामीजी ने ऐसी ऐसी सैकड़ों बातें इस पुस्तक में कही वे तर्क और विचार के आगे नहीं ठहर सकतीं। हमें उनमें से दस पाँच का भी उल्लेख करने की अवकाश नहीं। सबसे अधिक आश्चर्य तो हमें स्वामी विवेचन से हुआ जिसमें आपने वेदों के आविर्भाव उनकी अपौरुषेयता पर विचार किया है। सुनते हैं, स्वा अच्छे वक्ता हैं। पर इस सम्बन्ध में आपकी वि उक्तियाँ पढ़ कर विश्वास नहीं होता कि वे श्रोताओं प्रमाण-पुष्ट उक्तियों के द्वारा हँसाते, रुलाते या उन्हें मु करते होंगे। हृदय में भावावेश उत्पन्न करके लोगों को मु करना और उन्हें अपनी अभीष्ट दिशा की ओर झुका जाना एक बात है और गोखले की तरह न काटी जाने यो युक्तियों और प्रमाणों के द्वारा उन्हें अपने पक्ष का पो बना लेना दूसरी बात है। आपके कथन में, कई जगह, दूसरी बात की हमें कमी मिली—

"न हि सत्यात्परो धर्मः"

के भरोसे ही हमने अपने मन की यह सच बात लि का साहस किया है। आशा है, इस स्पष्टोक्ति के लिए स्व दयानन्दजी हमें क्षमा करेंगे।

२—तीन अच्छी पुस्तकें—यह देख कर सन्तोष सुख होता है कि हिन्दी-साहित्य की वृद्धि अब दिन पर दि अधिकाधिक हो रही है। दस वर्ष पहले, सत्य में मुश्कि [illegible] पुस्तकें [illegible] पर अब वहाँ सैक [illegible] पुस्तकें निकलती हैं [illegible] है; अच्छा ही [illegible] [illegible] [illegible]

है। इसमें से पहली का नाम है—भारतीय शासन-पद्धति, प्रथम भाग। इसकी पृष्ठ-संख्या ३१० और मूल्य १ रुपया आने है। छपाई साफ़ सुथरी और काग़ज़ अच्छा है। इसे पण्डित अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी ने अँगरेज़ी की कई पुस्तकों के आधार पर लिखा है। अँगरेज़ी में इस विषय की अनेक पुस्तकें हैं। इस प्रान्त के भी एक सज्जन ने इस विषय की एक पुस्तक लिखी है। उसे प्रकाशित हुए कई साल हुए। पर हिन्दी में एक भी पुस्तक इस विषय की अब तक न थी। इस अभाव की अब अंशतः पूर्ति हो गई; अगले भाग मिलने पर पूर्णतः हो जायगी। "भारत का शासन किस रीति से होता है और किस अधिकारी को कितने और कैसे अधिकार प्राप्त हैं, यही इसमें बताया गया है"। पुस्तक सात अध्यायों में विभक्त है— उपोद्घात, इँगलैंड में भारत की शासन-व्यवस्था, भारत सरकार, प्रान्तिक सरकारें, ज़िले की शासन-व्यवस्था, न्यायालयों के कार्य्य और अधिकार, पुलिस और जेल। इस अध्याय-सूची से ही इसकी उपयोगिता का अनुमान अच्छी तरह किया जा सकता है। समाचारपत्रों के सम्पादक, लेखक और पाठक ही नहीं, विद्यार्थी तथा अन्य लोग भी इससे बहुत सी ज्ञातव्य बातें जान सकते हैं। इसके मिलने का पता—पण्डित प्रतापनारायण वाजपेयी, ३३, श्रीनाथराय लेन, कलकत्ता। दूसरी पुस्तक का नाम है—भारतीय आत्मत्याग। इसकी पृष्ठ संख्या १२१ और मूल्य १० आने है। छपाई और काग़ज़ दोनों चीज़ें अच्छी हैं। इसे रियासत करौली के श्रीयुत ईश्वर नारायणसिंह ने लिखा है। उन्हीं को लिखने से यह मिल सकती है। अँगरेज़ी में एक पुस्तक—A Book of Golden Deeds नाम की है। उसी को आदर्श मान कर इसकी रचना की गई है। इसमें हम्मीर, चूड़ा जी, हाडा हम्मू, बाजी प्रभु देशपाण्डे और बालाजी पन्त आदि बीस पचीस उदाराशय, स्वामिभक्त, देश-भक्त, वीरशिरोमणि पुरुषों के आत्मत्याग का वर्णन है। पन्ना धाय और कृष्णकुमारी का भी वर्णन है। विशेष कर के राजपूताने के इतिहास से ही इसकी सामग्री ली गई है। बाबू मैथिलीशरण गुप्त आदि की लिखी हुई कवितायें भी यत्र तत्र इसमें उद्धृत हैं। बड़े महत्त्व की पुस्तक है। अपने देश के आत्मत्यागी पुरुषों के अनेक जीवनचरित अन्यदेशों में लिखे गये हैं। वहाँ ऐसे पुरुषों का सदा नाम-स्मरण किया जाता है और उनके चरित बड़े प्रेम से पढ़े जाते हैं। कुँवरजी की कृपा से एक ऐसी पुस्तक हिन्दी में भी हो गई। तीसरी पुस्तक है—भारतीय नीति-कथा इसकी पृष्ठ-संख्या १७० और मूल्य १२ आने है। पण्डित शिवसहाय चतुर्वेदी ने इसे लिखा है। मिलने का पता—हिन्दी-हितैषी कार्य्यालय, देवरी, सागर। महाभारत में आदि-पर्व से लेकर उद्योग पर्व तक जितनी सुनीतिसूचक कथायें हैं उन सब का सारांश इसमें है। इन कथाओं में अनेक प्रकार की शिक्षायें मिलती हैं। इसमें कृष्ण, भीष्म, अर्जुन, कर्ण, द्रोण, कुन्ती, द्रौपदी, युधिष्ठिर, विदुर आदि का बहुत कुछ हाल भी है और उनके गुणों का उल्लेख भी। अतएव यह पुस्तक लड़कों, लड़कियों और स्त्रियों के लिए विशेष उपयोगिनी है।

३—वेदान्तसमुच्चयः। इसका आकार मँझोला और पृष्ठ संख्या तीन सौ के ऊपर है। जिल्द बँधी हुई है। छपाई निर्णयसागर प्रेस की है; वह बहुत ही उत्तम, सुन्दर और साफ़ है। टाइप बड़ा और काग़ज़ अच्छा है। मूल्य २॥) है। मिलने का पता—श्रीसरस्वती डीपो, कपेश्वर की पोल, सामे बाड़ीया, अहमदाबाद। इस पुस्तक को देख कर और यत्र तत्र इसे पढ़ कर चित्त बहुत प्रसन्न हुआ। इस सङ्ग्रह के सङ्कलनकर्त्ता महर्षि हरेराम शर्म्मा को अनेक साधुवाद। वेदान्ती विद्वानों और वेदान्त-प्रेमियों के लिए आपने वेदान्त-विषय के अनेक संस्कृत-स्तोत्रों और ग्रन्थों का सङ्ग्रह इसमें प्रकाशित किया है। इसका नाम है यद्यपि वेदान्त-समुच्चय तथापि योग और भक्ति-सम्बन्धी छोटे छोटे स्तोत्र-ग्रन्थ भी इसमें शामिल कर दिये गये हैं। इसमें लिखा है कि यह सङ्ग्रह श्रीमदादिशङ्कराचार्य्य के ग्रन्थों ही का सङ्ग्रह है। पर इसमें उन रचनाओं के सिवा जो शङ्कराचार्य्य के नाम से प्रसिद्ध हैं, औरों की रचनायें भी सम्मिलित हैं। उदाहरणार्थ—श्रीमद्भगवद्गीता और ब्रह्मसूत्र भी इसमें सङ्गृहीत हैं। त्रोटकाचार्य्य-प्रणीत श्रुतिसार-समुद्धरणम् नाम का स्तोत्र भी रख दिया गया है। इसके सिवा यह भी सम्भव है कि जो स्तोत्र शङ्कराचार्य्य के नाम से इसमें छपे हैं उनमें से भी कितने ही स्तोत्र आदि शङ्कराचार्य्य के रचे हुए न हों। पर इससे कुछ भी हानि नहीं। महर्षिजी ने इस प्रकार के सभी उत्तमोत्तम स्तोत्रों और पुस्तकों

को एकत्र कृपा कर बड़ा काम किया। शङ्कराचार्य के प्रसिद्ध ग्रन्थ उपदेशसाहस्री, शतश्लोकी, विवेकचूड़ामणि आदि ग्रन्थ सब इसमें आ गये हैं। शङ्कराचार्य की रचना में एक अलौकिक रस है। उनकी भाषा बहुत ललित और सरल है। वेदान्त सदृश क्लिष्ट विषय को उन्होंने विवेकचूड़ामणि में ऐसे सरस और सरल संस्कृत पद्यों में वर्णन किया है कि थोड़ी संस्कृत जानने वाले भी उनका भाव समझ सकते हैं। सौन्दर्य्यलहरी और आनन्दलहरी आदि के पाठ में तो वही आनन्द मिलता है जो महाकवियों के काव्यों से मिलता है। इस सङ्ग्रह में सब मिला कर चालीस प्रबन्ध हैं। यह बहुत ही उपयोगी सङ्ग्रह है—आदरणीय है, अवलोकनीय है, सङ्ग्रहणीय है।

⁂

४—राणा जङ्गबहादुर। काशी की नागरी-प्रचारिणी सभा जो "मनोरञ्जन पुस्तकमाला" निकाल रही है उसकी यह सातवीं पुस्तक है। इसकी पृष्ठ-संख्या २०० और मूल्य १ रुपया है। पुस्तक पर पतली जिल्द है। छपाई साफ़ सुथरी और काग़ज़ अच्छा है। इसके लेखक बाबू जगन्मोहन वर्म्मा हैं। इसमें नेपाल के प्रधान अमात्य जनरल जङ्गबहादुर का जीवनचरित है। यह चरित अब तक अंग-रेज़ी जानने वालों ही के लिए सुलभ था। अब हिन्दी के सौभाग्य और वर्म्मा महाशय की कृपा से केवल हिन्दी जानने वालों के लिए भी सुलभ हो गया। चरित सरल भाषा में योग्यतापूर्वक लिखा गया है। जङ्गबहादुर बड़े नामी और बड़े वीर पुरुष थे। उनके वीरोचित कार्य्यों का इसमें बड़ा ही सुन्दर वर्णन है। और और बातों के सिवा नेपाल के षड्चक्र, तिब्बत पर चढ़ाई, १८५७ के बलवे में अँगरेज़ों की सहायता, जङ्गबहादुर की योरप-यात्रा, उनकी राजनीतिज्ञता, उनका सुप्रबन्ध—आदि विषयों का भी वर्णन इस पुस्तक में है। इससे उस समय की अनेक ऐतिहासिक बातों का भी ज्ञान हो सकता है। बड़ी अच्छी—बड़े महत्त्व की—पुस्तक है। खूब मनोरञ्जक भी है। इसकी भूमिका के आरम्भ में जो श्लोक है उसका चौथा चरण—

"महाजनो येन गता स पंथा"

ठीक नहीं। वह—महाजनो येन गतः स पन्थाः—होना चाहिए। यह मूल प्रूफ़ देखते समय शायद दृष्टि-दोष से रह गई है।

५—मारवाड़ी-सहायक-समिति का विवरण। कलकत्ते में इस नाम की जो सभा दो ढाई वर्ष से स्थापित है उसका यह दूसरा वार्षिक विवरण है। समाचारपत्रों में प्रकाशित रिपोर्टों और इस विवरण से प्रकट होता है कि यह समिति अपने नाम के अनुसार ही काम कर रही है। इसका प्रधान उद्देश लोक-सेवा है। हरद्वार और कुम्भ के मेलों के समय इसने बहुत अच्छा काम किया। हज़ारों यात्रियों को इसने सहायता दी। और भी अनेक मेले-ठेलों में इसके प्रतिनिधियों ने लोगों को सहायता पहुँचाई। विद्या-प्रचार और हिन्दी के ग्रन्थ-साहित्य की वृद्धि करना भी इसका उद्देश है। इस उद्देश की सिद्धि के लिए भी इसने अपनी शक्ति भर काम किया। एक और भी बड़ा लाभदायक काम यह कर रही है। इसने कलकत्ते में एक औषधालय खोल रक्खा है। उसमें सर्व-साधारण को मुफ़्त दवा मिलती है। जिस साल की यह रिपोर्ट है उस साल इस औषधालय से कोई सत्तर अस्सी हज़ार आदमियों ने फ़ायदा उठाया। अकेले इस औषधालय के लिए इसे कोई पाँच सौ रुपया महीना ख़र्च करना पड़ता है। इसका सारा काम चन्दे से चलता है। ऐसी उपयोगिनी और लोक सेवा रत समिति को धन से सहायता देना सभी समर्थ भारतवासियों का कर्तव्य है।

⁂

६—पञ्चोली पुस्तकावली। भरतपुर के स्कूल के पण्डित गङ्गाशङ्कर पञ्चोली हेड मास्टर हैं। आपने अपने यहाँ से एक पुस्तक-मालिका निकालने का आरम्भ किया है। उसी इस मालिका की दो पुस्तकें आपने हमें भेजी हैं। पहली पुस्तक का नाम है—कृषि-विद्या, भाग १। इसमें दूध से सम्बन्ध रखने वाली वैज्ञानिक, व्यावहारिक और व्यापारिक बातें हैं। दूध का व्यवहार यद्यपि सभी करते हैं, परन्तु दूध क्या पदार्थ है, उसमें कौन कौन से भौतिक तत्त्व मिले हैं और अच्छा दूध कितना हानिकारक है—यह बहुत कम लोग जानते हैं। यही तथा और अनेक लाभदायक बातों का वर्णन इसमें है। यन्त्रों के कई चित्रों से पुस्तक की उपयोगिता बढ़ा दी गई है। पृष्ठ-संख्या ३२ और मूल्य ४ आने है। दूसरी पुस्तक का नाम है—कृषिविद्या, भाग २। यह पुस्तक और भी काम की है। इसमें हेर की किस्में बोने और सींचने आदि की प्रणाली, और उसमें लगने

कर बनाने की रीति बताई गई है। अँगरेज़ी, मराठी, गुजराती और बँगला में इस तरह की न मालूम कितनी ही छोटी पुस्तकें हैं। पर हिन्दी में बहुत कम हैं। अतएव ऐसी पुस्तकों की बड़ी आवश्यकता है। इनका ख़ूब प्रचार होना चाहिए। इसकी पृष्ठ-संख्या २० और मूल्य आने है। लेखक ही को लिखने से शायद ये दोनों पुस्तकें मिली है।

❋

७—सनातन धर्म्म के सरल नियम। आकार छो, पृष्ठ-संख्या ३२, मूल्य डेढ़ आना; लेखक पण्डित-आनन्दकाद मिश्र, वेद पण्डित, सनातन-धर्म्म स्कूल, इटावा। बिलकुल ही नये ढँग की पुस्तक है। इसमें कथोपकथन रूप में साधारण धर्म्म की शिक्षा दी गई है। बीच बीच में स्मृति से छोटे छोटे वाक्य और श्लोक उद्धृत कर के, पुस्तकान्त में इनका हिन्दी अनुवाद भी देकर इसमें निम्नलिखित नियमों का निर्देश किया गया है।

उदाहरण—

(१) आद्ये गुहूर्ते पुरुषेत
(२) समयं न हुद्यात्
(३) नोत्तमैर्विरुध्येत
(४) सत्यं ब्रूयात्
(५) न कुर्य्यात् पापम्

बच्चों को ये वाक्य बहुत शीघ्र याद हो सकते हैं और समझने पढ़ने पर प्रमाणवत् व्यवहार हो सकते हैं। यह ढङ्ग इसके पूर्वोक्त रूप में पढ़ाई जाती है। जिन स्कूलों में धर्म्म शिक्षा देने का नियम है उनमें ऐसी पुस्तकें होने चाहिए।

❋

८—सम्मादित्य-ग्रन्थ माला। इस माला के सम्बन्ध में पहले सरस्वती में लिखा चुका है। इसके सञ्चालक पण्डित रामदहिन मिश्र काव्यतीर्थ हैं। काशी कविपुर के निवासी श्रीयुत पण्डित हैं। इस माला की दो पुस्तकें प्रकाशित हो गई। एक का नाम है—सूक्ति-सुधाकर। आकार डेमीपेजा, पृष्ठ-संख्या ६० और मूल्य ४ है। इसमें पण्डित रामचरित उपाध्याय की भिन्न भिन्न विषयों पर लिखी गई, २० कविताओं का संग्रह है। जितने कवियों की कविताएँ सरस्वती में छपी हैं वे उनके स्वाद अवश्य ही जानते होंगे। कविताएँ प्रायः सभी सुन्दर और सरस हैं। भाषा बोलचाल की है। विषय उपयोगी हैं और उनमें से कितनेही सामयिक हैं। दूसरी पुस्तक का नाम है—निर्भय-भीम-व्यायोग। इसकी पृष्ठ-संख्या २४ और मूल्य दो आने है। आकार पहली पुस्तक के सदृश है। बारहवीं सदी में रामचन्द्र विजय सूरि नाम के एक कवि हो गये हैं। उन्हों ने सौ ग्रन्थों की रचना की थी। यह पुस्तक उन्हीं की लिखी हुई है। मूल संस्कृत में है। इसका यह हिन्दी-अनुवाद है। व्यायोग एक प्रकार का रूपक है। इसमें एकही अङ्क होता है। धनञ्जयविजय को छोड़ कर अब तक और कोई व्यायोग हिन्दी में न था। इसके मूल संस्कृत पद्यों का अनुवाद बाबू मैथिलीशरण गुप्त का किया हुआ है। पद्यांश में प्रायः वीर रस है। अच्छी पुस्तक है। इसमें भीमसेन के द्वारा बक राक्षस का वध वर्णन है। दोनों पुस्तकों की छपाई है, पर, कहीं कहीं अशुद्धियाँ रह गई हैं। सम्पादित-ग्रन्थमाला के स्थायी ग्राहक होने वालों को ये दोनों पुस्तकें यूँ आने में ही मिल सकती हैं। अर्ज़ यह है कि ग्राहकों के रजिस्टर में नाम लिखाई की फ़ीस आठ आने और वी॰पी॰ खर्च दो आने साथ ही भेजा जाय।

❋

९—सदोक अनुशासन। आकार डेमीपेजा, पृष्ठ-संख्या १३१ + ३२ + ३, मूल्य १॥ रुपया, लेखक श्रीमान्यवर मुनि श्री आत्मारामजी महाराज, एम॰ ए॰, लाहौर। जैनों के अन्तिम तीर्थङ्कर श्री महावीर स्वामी के मुखारविन्द से निकले हुए उपदेशों का संग्रह इस पुस्तक में किया गया है। [illegible] इसमें [illegible] के अनुशासनों का मूल पाठ संस्कृत में तथा [illegible] हिन्दी में इसका अनुवाद, [illegible] टिप्पणी दी गई है। [illegible] है। [illegible] हुए [illegible] है। [illegible] है। [illegible] है।

निवृत्ति के लिए उसकी चेष्टा आदि का अच्छा प्रमाण मिलता है। ऐसी पुस्तक की हिन्दी में भी बड़ी आवश्यकता है।

❊

१०—रचना-विचार। आकार डिमेमाला, पृष्ठ-संख्या २००, मूल्य १२ आने, लेखक-पण्डित रामदहिन मिश्र काव्यतीर्थ और बाबू महावीरसिंह, जिससे का पता—गुप्तोपन्यासमाला कार्यालय, बांकीपुर। इस तरह की छोटी छोटी कितनी ही पुस्तकें हिन्दी में प्रकाशित हो चुकी हैं। पर इसमें विशेषता है। यह बिहार की नई शिक्षा प्रणाली के अनुसार लिखी गई है। यहां मैट्रिकुलेशन से बी० ए० तक के और ट्रेनिंग स्कूलों के भी छात्रों को हिन्दी-रचना (Composition) सिखाई जाती है। इन्हीं के लिए यह लिखी गई है। पुस्तक पांच अध्यायों में विभक्त है—(१) हिन्दी-भाषा का इतिहास (२) शब्द-प्रकरण (३) वाक्य-प्रकरण (४) मिश्र प्रकरण (५) प्रबन्ध-प्रकरण। इनमें से पहले और पांचवें प्रकरण के विषय बड़े महत्त्व के हैं। लेखक महाशय ने पुस्तक को बड़े परिश्रम से लिखा है और प्रबन्ध लिखने तथा रचना-निर्म्माण की रीतियां आदि यथाशक्ति खूब अच्छी तरह समझाई हैं। अतएव यह पुस्तक बिहार के स्कूलों में जारी करने लायक है।

❊

११—सन्तबानी-संग्रह। यह संग्रह इलाहाबाद के बेलवेडियर प्रेस ने, दो भागों में, प्रकाशित किया है। पहले भाग का मूल्य १ रुपया और दूसरे का १॥) है। दोनों पर काग़ज़ की पतली जिल्द है। टाइप बड़ा और स्पष्ट है; काग़ज़ साधारण। पहले भाग में कबीर, रैदास, गुरु नानक, दादू दयाल आदि २४ महात्माओं की साखियां हैं। इसके सिवा, कुछ फुटकर साखियां भी हैं। प्रत्येक महात्मा की साखियों के आरम्भ में उसका कुछ जीवन वृत्त भी है। दूसरे भाग में २५ महात्माओं—साधु-सन्तों—के "शब्द" हैं। इनमें से अनेक महात्मा पहुँचे हुए साधु थे। उनके वचनों में ब्रह्मज्ञान—अध्यात्म-विद्या—के तत्त्व भरे हुए हैं। इन साधुओं ने जो कुछ कहा है प्रायः अपने अनुभव के आधार पर कहा है। इनका वेदान्त-ज्ञान पुस्तक प्राप्त ज्ञान न था। अतएव इनकी साखियां और शब्द बड़े महत्त्व के क्या, अनमोल, हैं। अब तक इनके वचन बिखरे हुए यत्र तत्र पड़े थे। प्रकाशकों ने उनका संग्रह निकाल कर बड़े उपकार का काम किया। सुना है, बेलवेडियर प्रेस ने साधु सन्तों की और भी अनेक पुस्तकावली प्रकाशित किये हैं। पर वे अभी हमारे देखने में नहीं आये।

❊

१२—भ्रमभ्रान्त प्रेम। इस नाम की एक पुस्तक बँगला में है। श्रीयुत चन्द्रशेखर मुखोपाध्याय उसके लेखक हैं। उसे उन्होंने अपनी पत्नी के वियोग से व्यथित होकर लिखा था। उसमें वियोग-जन्य व्यथाओं के उद्गार हैं। इन उद्गारों में यत्र तत्र तत्त्वज्ञान, राजनीति, समाजनीति, प्रेम और धर्म्म के भी तत्त्व निहित हैं। बङ्गदेश में यह बड़ा आदर है। यह एक प्रकार का गद्य काव्य है। पुस्तक उसी का हिन्दी-अनुवाद है। अनुवादक हैं—श्रीयुत द्वारकानाथ मैत्र और वासुदेव आचार्य। वाद मज़े का है, अच्छी तरह समझ में आ जाता है। मूल में जो रस है उसकी अनुवाद में कुछ कमी है। हर की भाषा में एक प्रकार की अपूर्णता है। अतएव उस में उसका प्रतिबिम्ब उतारना सहज या भी नहीं। पृ की पृष्ठ-संख्या १३३ और मूल्य ८ आने है। मिलने पता—उपासनी पेंड कम्पनी, चोर बागान, कल भ्रमभ्रान्त प्रेम का एक और हिन्दी-अनुवाद बांकीपुर से नि है। उसका परिचय अगली संख्या में देने का विचार है।

❊

१३—विचार-शक्ति। आकार डिमेमाला, पृष्ठ-सं ५५; मूल्य ६ आने; अनुवादक—पण्डित रामेश्वरदत्त "संस्कृत टीचर" सुनीपत—से प्राप्य। बाबू निहालचन्द थॉट-पावर (Thought Power) नाम की एक पु का अनुवाद उर्दू में किया है। उसी का यह हिन्दी-रूप है। इसमें इच्छा-शक्ति के प्राबल्य, माहात्म्य, साधन और आदि का अच्छा वर्णन है। पुस्तक का विषय अच्छा, भाषा गड़बड़ है।

❊

१४—सयाजी-चरितामृत। पृष्ठ-संख्या १८ मूल्य १ रुपया; लेखक—पण्डित श्रीरामशर्म्मा, प्रकाशक-पण्डित भगवद्दत्त शर्म्मा, कारेली बाग़, बड़ौदा से प्राप्य यह पुस्तक अच्छे टाइप में, अच्छे काग़ज़ पर, छपी है। हाफ़टोन चित्रों से विभूषित है। आदर्श-नरेश महाराज गायकवाड़, सर सयाजीराव, का इसमें जीवन-चरित है

आपकी विद्याभिरुचि, प्रजाप्रेम, न्यायशीलता आदि सर्वश्रुत हैं। कलाकौशल, शिक्षा, व्यापार-व्यवसाय आदि की वृद्धि के लिए आपने अपने राज्य में जो कुछ किया है वह अन्य राजाओं के लिए सर्वथा अनुकरणीय है। आपने अपने राज्य में प्रारम्भिक शिक्षा मुफ़्त कर दी है और दूसरी देशी भाषा के रूप में हिन्दी को भी पाठशालाओं में स्थान दिया है। ऐसे उदार-चरित और यशस्वी राजा का चरित सभी के पढ़ने योग्य है।

❋

१५—स्यादिशब्दसमुच्चयः। गुजरात के धवलक्क (धोलका ?) नगर में वीसलदेव नामक एक राजा हो गया है। उसका समय विक्रम-संवत् १३००—१८ है। उसके आश्रय में अमरचन्द्र सूरि नामक एक महाकवि था। वह जैन था। इस कवि का संक्षिप्त वर्णन राजशेखर-सूरि-कृत प्रबन्धकोश नामक ग्रन्थ में है। प्रस्तुत संस्कृत-पुस्तक उसी कवि की रचना है। इसमें २१ श्लोक, अनुष्टुप् छन्द में, हैं। उनमें वर्णक्रम से लिङ्ग-निर्णय है। पहले स्वरान्त शब्दों का लिङ्ग-निर्देश है, फिर व्यञ्जनान्त शब्दों का, फिर सर्वनामगणवर्ती शब्दों का, और, अन्त में, संख्याशब्दक शब्दों का। इसके अनन्तर ग्रन्थकार की की हुई टीका है। उसमें हेमचन्द्र के व्याकरण के सूत्र उद्धृत करके निर्दिष्ट शब्दों की सिद्धि भी करके दिखाई गई है। इस छोटी सी पुस्तक के मूल श्लोक कण्ठ कर लेने से संस्कृत शब्दों का लिङ्ग-ज्ञान होने में बड़ी सहायता मिल सकती है। इसका रचयिता सचमुच ही महाकवि था। पुस्तक की भूमिका में इसके सम्बन्ध का जो लेख प्रबन्ध-कोश से नक़ल किया गया है उससे सूचित होता है कि कठिन से कठिन समस्याओं की तत्काल पूर्ति कर देना इसके लिए एक मामूली बात थी। यह आशु-कवि था। प्रबन्ध-कोश के अनुसार इसने २१ दिन तक तपस्या करके सरस्वती से वर पाया था। सरस्वती का वर था—"सिद्धकविर्भव कि रेफनखनिभृङ्गारवितरवधि"। पुस्तक की पृष्ठ-संख्या १० और मूल्य १० आने है। इसका संशोधन पं० लालचन्द्र भगवान ने किया है। उन्हीं से यह मिल सकती है। पता—जैनधर्म्म शाला, बनारस।

❋

३—कार्ड्स। ये कार्ड पण्डित मटेरत्न रामदत्त एकोजी (सिकन्दर-गंज, जबलपुर) से मिलते हैं। तीन 'सेट' दो दो आने के हैं, दो 'सेट' ढाई ढाई आने के और एक डेढ़ डेढ़ आने का। पिछले में ६ कार्ड और बाक़ी सब में बारह बारह हैं। इनमें मनुष्यों, पशुओं, पक्षियों, फूल-पत्तों और तितली आदि पतङ्गों के क्रम विकसित चित्र हैं। कुछ कार्ड चित्रों के भी हैं। ये सब "ड्राइंग्" सीखने वालों के लिए बहुत उपयोगी हैं। कार्डों के साथ एक छोटी सी पुस्तक भी है। उसमें इन कार्डों का परिचय और ड्राइंग् की रीति आदि का वर्णन है।

❋

१७—सन्ततिरत्न—आकार मँझोला; पृष्ठ-संख्या ६०; मूल्य २½ आने; अनुवादक पण्डित जीवराजनलाल पेन्शनर, कटनी मुड़वारा—से प्राप्य। यह एक मराठी-पुस्तक का अनुवाद है। लड़कों को किस प्रकार रखना चाहिए, उनको किस तरह और कैसी शिक्षा देनी चाहिए, उनके शील-स्वभाव आदि की रक्षा के लिए क्या करना चाहिए—इन तथा और भी ऐसी ही अनेक लाभदायक बातों का वर्णन इसमें है। पति-पत्नी की परस्पर बात चीत के द्वारा लेखक ने अपना वक्तव्य प्रकट किया है। यह ढंग बहुत रोचक है। पुस्तक अच्छी है। छपाई और कागज़ बहुत साधारण है। भाषा कहीं कहीं क्लिष्ट है, मराठी मुहावरे ज्यों के त्यों रख दिये गये हैं। पाठशाला, मदरसा, स्कूल या मकतब के लिए "शाला" शब्द का प्रयोग किया गया है। महाराष्ट्र-देश के निवासी ही प्रायः इस शब्द का व्यवहार मदरसे के अर्थ में करते हैं।

❋

१८—स्वामी दयानन्द और जैन धर्म्म। पृष्ठ संख्या १२०; मूल्य ८ आने; कपड़े और छपाई उत्तम, लेखक पण्डित हंसराज शास्त्री, प्राप्ति-स्थान—जैन सिद्धान्त लाइब्रेरी, अमृतसर। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने सत्यार्थप्रकाश नामक ग्रन्थ में जैन धर्म्मानुयायी ग्रन्थकारों तथा सम्प्रदाय आदि के विषय में जो कटूक्तियाँ लिखी हैं उनकी एक आलोचना इस पुस्तक के आरम्भ में है। तदनन्तर जैन धर्म्म पर स्वामीजी के द्वारा किये गये आक्षेपों और आरोपों की समालोचना है। समालोचना पुक्तिपूर्ण है। इसमें यूरोप आदि देशों का उदाहरण है। पुस्तक सभी के देखने योग्य है।

❋

१९—हिन्दी-निबन्ध। मूल्य १॥१ की सामग्री में पृष्ठ १८१ पर ६ नम्बर की समालोचना देखिए। सम्पादक

सीताराम शास्त्री के इस हिन्दी-निरुक्त का दूसरा भाग भी प्रकाशित होगया। इसमें निरुक्त का दूसरा अध्याय समाप्त है। जैसा कि लिखा जा चुका है, यह पुस्तक बड़े महत्त्व की है। अतएव संग्रह करने योग्य है।

※

२०—आरोग्य-रक्षा। आकार मँझोला; पृष्ठ-संख्या १४४; मूल्य ८ आना; छपाई और काग़ज़ अच्छा; लेखक—श्रीयुत कल्याणसिंह वैद्य, प्राप्ति-स्थान—हिन्दू-औषधालय, नया-बाज़ार, अजमेर। इसके विषयों की संख्या १० है—(१) स्वस्थ मनुष्य (२) दिनचर्य्या (३) रात्रि-चर्य्या (४) ऋतु-चर्य्या (५) प्रकृति (६) सदाचार (७) महामारी या वबा (८) वबाई बीमारियाँ (९) आकस्मिक घटनायें (१०) दुर्व्यसन। इस पुस्तक के अन्तिम चार प्रकरण विशेष उपयोगी हैं। उनसे बहुत कुछ लाभ उठाया जा सकता है। और प्रकरणों में कही गई भी अधिकांश बातें शिक्षा-दायक हैं। पर तीसरे प्रकरण, रात्रि-चर्य्या, में कुछ बातें ऐसी हैं जिनकी कोई ज़रूरत न थी।

※

नीचे जिनके नाम दिये गये हैं वे पुस्तकें भी पहुँच गई हैं। भेजने वाले महाशयों को धन्यवाद—

(१) अनाथ पुकार—लेखक, अध्यापक पं० गणपति उपाध्याय, बाँकीपुर

(२) श्रीबदरीविशाल का फोटो और स्तुति—प्रेषक, पं० महीधर शर्म्मा, बदरिकाश्रम, गढ़वाल

(३) समस्यापूर्ति-पयोनिधि—प्रेषक, साहित्य-संवर्द्धिनी सभा, बहराइच

(४) ख़ूब इलाज किया } प्रेषक, आदुम्बर शर्मा
(५) पुण्यहीन घोड़ा }

(६) गुरुघंटाल का व्याख्यान—प्रेषक, जैन साधु मुनि विमलविजय, सूरत

(७) जायसवाल महाजन हितकारिणी सभा, कलकत्ता, का प्रथम त्रैमासिक रिपोर्ट } प्रकाशक, हरगोविन्द दास गुप्त, कलकत्ता

(८) सार्वजनिक हित, भाग १—लेखक, मुनी शान्ति

(९) मँझली बहू—अनुवादक, पं० पारसनाथ त्रिपाठी काव्यतीर्थ, शाहपुर पट्टी, छपरा

(१०) शिव-महापूजा—प्रकाशक, पं० विजयशङ्कर जयदेव शर्म्मा, राजकोट

---

## चित्र-परिचय।

### (१)
### गणेश

इस संख्या का पहला रङ्गीन चित्र गणेशजी का है। चित्र एक नामी चित्रकार का बनाया हुआ है। पण्डित हरिनारायण शर्म्मा की कृपा से यह हमें जयपुर से प्राप्त हुआ है।

---

### (२)
### आश्विन

इस चित्र में दिखाये गये दृश्य का वर्णन उसीके नीचे छपे हुए छप्पय-छन्द में है।

---

Printed and published by Apurva Krishna Basu, at the Indian Press, Allahabad

## विज्ञापन

भजन, साखी, उपदेश चौबीस महात्माओं के देश देशान्तर से दुर्लभ लिपियों की नक़ल कर अलग अलग जीवन-चरित्र और टिप्पनी सहित छापे गये हैं—कबीर साहिब, तुलसी साहिब (हाथरसवाले) दादू दयाल, पलटू साहिब, जगजीवन साहिब, चरनदासजी, गरीबदासजी, रैदासजी, धरनी साहिब, मीरा बाई, सहजो बाई, इत्यादि।

एक संग्रह साखियों का और दूसरा शब्दों का छापा गया है। जिस में ऊपर लिखे हुए महात्माओं के थोड़े थोड़े भजन और साखियों के सिवाय सूरदासजी, गुसाईं तुलसीदासजी, काष्ठजिह्वा स्वामी आदि आठ महात्माओं की चुनी हुई बानी संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित छपी है।

जो रसिक जन चाहें पूरी फ़िहरिस्त बेलवेडियर प्रेस इलाहाबाद के मैनेजर को लिख कर मंगा लें॥

चित्रोंसे युक्त।

# साप्ताहिक हिन्दीकेसरी

*[ सम्पादक—श्रीयुत गङ्गाप्रसाद गुप्त। ]*

लीजिये! 'हिन्दी-केसरी' साप्ताहिक होगया और इसके लिये ज़मानत भी ली गई है!—यदि देशसे भक्ति है, हिन्दी भाषासे प्रेम है, महात्मा तिलकके तथा अन्य विद्वत्तापूर्ण ज़ोरदार लेख सम्पादकीय विचार तथा दूसरी अनेक उपयोगी बातें पढ़नेका शौक़ है और संसारकी समस्त मुख्य मुख्य घटनाओंका ताज़ लड़ाईके सिलसिलेवार समाचार तथा बड़े बड़े चित्र देखनेका अनुराग है तो तुरन्त ग्राहक हो जाइये। जूनसे पाक्षिक निकल रहा था, ७ अक्तूबर से साप्ताहिक। तौभी अभी जो ग्राहक हो जायँगे उनसे वही २) दो रुपया वार्षिक मूल्य लिया जायगा, वी. पी. से २-)। उपहारमें स्वदेशी आन्दोलन दे० दादाभाईनोरोजी या म० गोखलेकी सचित्र जीवनी इन तीनोंमें से कोई एक पुस्तक बिना मूल्य। शीघ्र ग्राहक बन तथा मित्रोंको बनाकर स्वदेश और स्वभाषाकी सहायता कीजिये। नमूनेके लिये ॥) का टिकट अवश्य भेजना चाहिये।

☞ पता—मैनेजर हिन्दी-केसरी, आर्ट प्रेस, बनारस सिटी।

## हिन्दी इङ्गलिश टीचर

यह इतनी सहल है कि बिना गुरु ३ महीना अंग्रेज़ी लिखना पढ़ना और बात चीत करना सीख लेंगे मू० १) तीन २॥)

पता—बाबू राजाराम, बुकसेलर,

अलीगढ़ सिटी नं० २

## काश्मीरी केशर

पवित्र और सर्वथा उत्तम, पूजन और खाने में वर्तने योग्य ॥=) तो०, खालिस कस्तूरी २-) तो०, शुद्ध सिलाजीत ॥) तो०, बंगुरी हींग ४) सेर, सुगंधित जीरा ८) सेर, ब्यादेष्ट मुरब्बा बादाम १) सेर, लोई, पट्टू, पश्मीना आदि वस्तु बहुत किफ़ायत से, काश्मीर स्टोर्स, श्रीनगर नं० ४६

## ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पु

### मानस-कोश।

अर्थात्

"रामचरितमानस" के कठिन कठिन शब्दों का सरल अर्थ।

हमने काशी की नागरी-प्रचारिणी सभा के द्वारा सम्पादित करा कर यह "मानसकोश" नामक पुस्तक प्रकाशित की है। इस "मानसकोश" को सामने रखकर रामायण के अर्थ समझने में हिन्दीप्रेमियों को अब बड़ी सुगमता होगी। इसमें उत्तमता यह है कि एक एक शब्द के एक एक दो दो नहीं, कई कई पर्यायवाचक शब्द देकर उनका अर्थ समझाया गया है। इसमें अकारादि क्रम से ६०४५ शब्द हैं। मूल्य केवल १) रुपया रक्खा गया है, जो पुस्तक की लागत और उपयोगिता के सामने कुछ भी नहीं है। अब मँगाइए।

### *सचित्र हिन्दी महाभारत*

( मूल आख्यान )

५०० से अधिक पृष्ठ  बड़ी साँची  १९ चित्र

अनुवादक—हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी।

महाभारत ही आर्यों का प्रधान ग्रन्थ है, यही आर्यों का सच्चा इतिहास है और यही सनातन धर्म का बीज है। इसी के अध्ययन से हिन्दुओं में धर्म-भाव, सत्पुरुषार्थ और समयानुसार काम करने की शक्ति आजतक होती आई है। यदि इस बूढ़े भारतवर्ष का ५ सहस्र वर्ष पहले का सच्चा इतिहास जानना हो, यदि भारतवर्ष में स्त्रियों को सुशिक्षित करके पातिव्रत धर्म का पुनरुद्धार करना अभीष्ट हो, यदि बालब्रह्मचारी भीष्मपितामह के पावन चरित्र को पढ़कर ब्रह्मचर्य्य रक्षा का महत्त्व देखना हो, यदि भगवान् कृष्णचन्द्र के उपदेशों से अपने आत्मा को पवित्र और श्रेष्ठ बनाना हो, तो इस "महाभारत" ग्रन्थ को मँगा कर अवश्य पढ़िए। इसकी भाषा बड़ी सरल, बड़ी सुललित और बड़ी मनोहारिणी

है। प्रत्येक पढ़ी लिखी
महाभारत मँगा कर
लाभ उठाना चाहिए।

( कविरत्न श्री

### दयानन्द

हिन्दी-

जिसके देखने के
उत्कण्ठित हो रहे थे,
सैकड़ों संस्कृतज्ञ विद्वा
जिसकी सरल, मधुर
सहस्रों आर्यों की आ
महाकाव्य छप कर तैया
समाज के लिए बड़े गौर
का भूषण कहें तो अत्युक्ति
ग्रन्थों को छोड़ कर आज
छोटे बड़े ग्रन्थ बने हैं
ऊँचा है। प्रत्येक वैदिक
ग्रन्थ लेकर अपने घर
चाहिए। यह महाकाव्य २
मूल ग्रन्थ के रायल आ
हैं। इसके अतिरिक्त ५७
का परिचय, विषयानुक्रम
सूचिपूर्ति, ग्रन्थालय-प्रद
आदि अनेक विषयों का

उत्तम सुनहरी जिल्द
का मूल्य सर्वसाधारण के
चार रुपये ही रक्खा है।

### सौभाग्य

पढ़ी लिखी स्त्रियों को
चाहिए। इसके पढ़ने से
सहज कर सकती हैं। मू

## ईंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें

### कविता-कलाप

( सम्पादक—पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

इस पुस्तक में सरस्वती से आरम्भ करके ४६ कवियों की सचित्र कविताओं का संग्रह किया गया है। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि राय देवीप्रसाद बी० ए०, पूर्ण, पण्डित नाथूराम शङ्कर शर्म्मा, पण्डित रामप्रसाद गुप्त, बाबू मैथिलीशरण गुप्त और स्वर्गीय महावीरप्रसाद द्विवेदीजी की ओजस्विनी लेखनी से लिखी गई कविताओं का यह अपूर्व संग्रह है। हिन्दी-भाषाभाषी को मँगाकर पढ़ना चाहिए। इसके कई चित्र रंगीन भी हैं। ऐसी उत्तम सचित्र पुस्तक का मूल्य केवल २) दो रुपये।

( सचित्र )

### हिन्दी-कोविदरत्नमाला।

दो भाग

( बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए० द्वारा सम्पादित )

पहले भाग में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र और स्वामी दयानन्द सरस्वती से लेकर वर्तमान काल के हिन्दी के नामी नामी प्रसिद्ध लेखकों और कवियों के सचित्र संक्षिप्त जीवन-चरित दिये गये हैं। दूसरे भाग में पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी और पण्डित माधवराव सप्रे, बी० ए० आदि विद्वानों ने कई विदुषी स्त्रियों के जीवनचरित लिखे गये हैं। हिन्दी में ये पुस्तकें अपने ढंग की अकेली ही हैं। स्कूलों में ऊँची कक्षाओं में पढ़नेवाले छात्रों को पुस्तकें पारितोषिक में देने योग्य हैं। प्रत्येक हिन्दी-भाषा भाषी को यह 'रत्नमाला' मँगाकर अपने पास अवश्य सुशोभित करना चाहिए। प्रत्येक भाग में ४० से अधिक चित्र दिये गये हैं। मूल्य प्रत्येक भाग १।) डेढ़ रुपया, एक साथ दोनों भागों का मूल्य तीन रुपये।

स्त्रीशिक्षा का एक सचित्र, नया और अनूठा ग्रन्थ

### सीता-चरित।

अभी तक ऐसी पुस्तक की बड़ी आवश्यकता थी जिसमें आरम्भ से अन्त तक मुख्यतया सती सीता जी की अनुकरणीय जीवन-घटनाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन हो, जिसमें सीताजी के जीवन की प्रत्येक घटना पर स्त्रियों के लिए लाभदायक उपदेश दिया गया हो। इसी अभाव को दूर करने के लिए हमने 'सीता-चरित' नामक पुस्तक प्रकाशित की है। इसमें सीताजी की जीवनी तो विस्तारपूर्वक लिखी ही गई है किन्तु साथ ही उनकी जीवन-घटनाओं का महत्त्व भी विस्तार के साथ दिखाया गया है। यह पुस्तक अपने ढंग की निराली है। भारतवर्ष की प्रत्येक नारी को यह पुस्तक अवश्य मँगा कर पढ़नी चाहिए। इस पुस्तक से स्त्रियाँ ही नहीं पुरुष भी अनेक शिक्षायें प्राप्त कर सकते हैं। क्योंकि इसमें केवल सीतासम्बन्धिनी ही नहीं है, पूरा रामचरित भी है। आशा है, स्त्री शिक्षा के प्रेमी महाशय इस पुस्तक का प्रचार करके स्त्रियों को पातिव्रत धर्म की शिक्षा से अलंकृत करने में पूरा प्रयत्न करेंगे।

पृष्ठ संख्या ३००। कागज मोटा। सजिल्द। पर, जो भी सर्वसाधारण के सुभीते के लिए मूल्य बहुत ही कम। केवल १) रुपया।

### कविता-कुसुम-माला।

इस पुस्तक में विविध विषयों पर सरल भाषा में अनेक विविध विषयों की कविताओं का संग्रह है। [illegible] का सरल है। [illegible] का [illegible] सरल भाषा में [illegible]। मूल्य [illegible] रुपये।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम

(महाकवि कालिदासकृत)

### रघुवंश

का गद्यात्मक हिन्दी-अनुवाद

(श्री० पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी लिखित)

इस अनुवाद में एक दो नहीं अनेक विशेषतायें हैं। इसमें कालिदास के लिखे केवल शब्दों का ही अनुगमन नहीं किया गया है, किन्तु उन शब्दों के प्रयोग द्वारा महाकवि कालिदास ने जो अनुपम भाव दरसाये हैं उन्हीं भावों को, उन्हीं भीतरी मर्मों को, महाकवि की उन्हीं प्रतिभा प्रदीप्त कल्पनाओं तथा लोकोत्तरानन्ददायिनी उक्तियों के गूढ़ रहस्यों को, समझे, समझने योग्य हिन्दी भाषा में, विशद रूप से प्रकाशित किया गया है।

जो आनन्द संस्कृतज्ञ विद्वानों को मूल रघुवंश के पढ़ने में आता है वही आनन्द हिन्दी जानने वालों को इससे प्राप्त होगा। हमारे इस कथन में अत्युक्ति का लेश भाव भी न समझिए 'दाप-कंगन को आरसी कहा?' जब आप इस अपूर्व ग्रन्थ को देखेंगे तभी आपको इसके ऊपर मालूम होंगे।

सुन्दर चित्रों से सुशोभित। पृष्ठ कुल मिलाकर २००। सुन्दर छपाई। जिल्द। मूल्य केवल २)

### विनयपत्रिका।

(अमरीकी पं० जार्जग्रियर्सन का सर [illegible])

[illegible]

विनयपत्रिका के [illegible]
सी० आई० ई० के पा
उन्होंने विलायत से पंडि

*True copy of*
*George A. Grierso*
*England, to the ad*
*Vinaya Pattrika.*

DEAR SIR,

Forgive a stran
write to say how hi
cellent edition of th
I obtained from the
ago. It is a worthy
of the [illegible], and
I have long felt. Th
cult work, but I thi
poems written by T
studied by every d
found it of great ass
cult passages.

May I hope that y
work, and bring out
[illegible] and of the [illegible]
[illegible], both of which a
[illegible] is most import
light on the life of the

[illegible]

जापान-

([illegible])

[illegible]
का मुख [illegible]
[illegible]
[illegible]
[

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## चरित्रगठन ।

जो नवयुवक विद्यार्थी चरित्रगठन के अभिलाषी हैं वे तो इसे अवश्य ही पढ़ें, और विशेष कर उन्हीं के लिए यह पुस्तक बनाई गई है। वे इस पुस्तक को पढ़ कर आप तो लाभ उठायेंगे ही, किन्तु अपने भावी सन्तानों को भी विशेष लाभ पहुँचा सकेंगे। इस पुस्तक के सभी विषय सुपाठ्य हैं। जिस कर्तव्य से मनुष्य अपने समाज में आदर्श बन सकता है उसका उल्लेख इस पुस्तक में विशेष रूप से किया गया है। शक्ति, उदारता, सुशीलता, दया, क्षमा, प्रेम, प्रतियोगिता आदि अनेक विषयों का वर्णन उदाहरण के साथ किया गया है। अतएव क्या बालक, क्या वृद्ध, क्या पुमा, क्या स्त्री सभी इस पुस्तक को एक बार अवश्य एकाग्र मन से पढ़ें और इससे पूर्ण लाभ उठायें। २३२ पृष्ठ की ऐसी उपयोगी पुस्तक का मूल्य नाममात्र के लिए केवल ॥) बारह आना है।

## कुमारसम्भवसार ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

कवि-कुलगुरु कालिदास के "कुमार-सम्भव" काव्य का यह मनोहर सार छप कर तैयार हो गया। प्रत्येक हिन्दी-कविता-प्रेमी को द्विवेदी जी की यह मनोहारिणी कविता पढ़ कर आनन्द प्राप्त करना चाहिए। कविता बड़ी रसवती और प्रभावशालिनी है। मूल्य केवल ।) चार आने।

## भारतवर्ष में पश्चिमीय शिक्षा ।

श्रीमान् पण्डित मनोहरलाल जुत्शी, एम० ए० के नाम को कौन नहीं जानता। आप उर्दू और अँगरेज़ी के प्रसिद्ध लेखक हैं। आपने "एजुकेशन इन ब्रिटिश इंडिया" नामक एक पुस्तक अँगरेज़ी में लिखी है और उसे इंडियन प्रेस, प्रयाग ने छापकर प्रकाशित किया है। पुस्तक बड़ी खोज के साथ लिखी गई है। उक्त पुस्तक का सारांश हिन्दी और उर्दू में भी छप गया है। आशा है हिन्दी और उर्दू के पाठक इस उपयोगी पुस्तक को मँगाकर अवश्य लाभ उठावेंगे। मूल्य इस प्रकार है :—

एजुकेशन इन ब्रिटिश इंडिया ( अँगरेज़ी में ) २॥)
भारतवर्ष में पश्चिमीय शिक्षा ( हिन्दी में ) ।=)
हिन्द में मगरबी तालीम ( उर्दू में ) ।=)

## कर्मयोग ।

स्वामी विवेकानन्दजी के कर्मयोग-सम्बन्धी व्याख्यानों का हिन्दी-अनुवाद करा कर यह "कर्मयोग" नामक पुस्तक छापी गई है। इसमें सात अध्याय हैं। उनमें क्रमशः—१—कर्म का मनुष्य चरित्र पर प्रभाव, २—निष्काम कर्म का महत्त्व, ३—धर्म क्या है ?, ४—परमार्थ में स्वार्थ, ५—वैराग्य रहना ही सच्चा त्याग है, ६—मुक्ति और ७—कर्मयोग का आदर्श—इन विषयों का वर्णन बहुत ही ओजस्विनी भाषा में किया गया है। अध्यात्मविद्या या कर्मयोग के जिज्ञासुओं को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य केवल ।=)

## संक्षिप्त इतिहासमाला ।

लीजिए, हिन्दी में जिस चीज़ की कमी थी उसकी पूर्ति का भी प्रबन्ध हो गया। हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पण्डित श्यामबिहारी मिश्र, एम० ए० और पण्डित शुकदेवबिहारी मिश्र, बी० ए० के सम्पादकत्व में पृथ्वी के सभी प्रसिद्ध प्रसिद्ध देशों के हिन्दी में संक्षिप्त इतिहास तैयार होने का प्रबन्ध किया गया है। यह समस्त इतिहासमाला कोई २०, २२ संख्याओं में पूर्ण होगी। इसकी क्रमशः एक एक पुस्तक इंडियन प्रेस, प्रयाग, से प्रकाशित होती रहेगी। अब तक ये ६ पुस्तकें छप चुकी हैं :—

| | | |
|---|---|---|
| १—अर्मनी का इतिहास | . | ।=) |
| २—फ्रांस का इतिहास | ... | ।=) |
| ३—रूस का इतिहास | ... | ।=) |
| ४—इंगलैंड का इतिहास | ... | ।=) |
| ५—जापान का इतिहास | ... | ।) |
| ६—स्पेन का इतिहास | | ।=) |

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# ❊ ❊ ❊ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ❊ ❊ ❊

## सीतावनवास ।

सुप्रसिद्ध पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर लिखित "सीतार-वनवास" नामक पुस्तक का यह हिन्दी-अनुवाद "सीतावनवास" छप कर तैयार है। इस पुस्तक में श्रीरामचन्द्रजी-कृत गर्भवती सीताजी के परित्याग की विस्तारपूर्वक कथा बड़ी ही रोचक और करुणारस-भरी भाषा में लिखी गई है। इसे पढ़ सुन कर आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगती है और पाषाण-हृदय भी मोम की तरह द्रवीभूत हो जाता है। मूल्य ॥)

## गारफील्ड ।

इस पुस्तक में अमरीका के एक प्रसिद्ध प्रेसीडेंट "जेम्स एबरम गारफील्ड" का जीवनचरित लिखा गया है। गारफ़ील्ड ने एक साधारण किसान के घर जन्म लेकर, अपने उत्साह, साहस और संकल्प के कारण, अमरीका के प्रेसीडेंट का सर्वोच्च पद प्राप्त कर लिया था। भारतवर्ष के नव युवकों को इस पुस्तक से बहुत अच्छा उपदेश मिल सकता है। मूल्य ॥)

## हिन्दीभाषा की उत्पत्ति ।

(लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी)

यह पुस्तक हर एक हिन्दी जाननेवाले को पढ़नी चाहिए। इसके पढ़ने से मालूम होगा कि हिन्दी भाषा की उत्पत्ति कहाँ से है। पुस्तक बड़ी खोज के साथ लिखी गई है। हिन्दी में ऐसी पुस्तक, हमारी राय में, अभी तक कहीं नहीं छपी। एक हिन्दी ही नहीं इसमें और भी कितनी ही हिन्दुस्तानी भाषाओं का विचार किया गया है। मूल्य।)

## शकुन्तला नाटक ।

कविशिरोमणि कालिदास के नाम को कौन नहीं जानता? शकुन्तला नाटक, उन्हीं कविचूड़ामणि कालिदास का रचा हुआ है। इस नाटक पर यहाँ वाले नहीं विदेशी विद्वान् भी लट्टू हैं। संस्कृत जैसा बढ़िया यह नाटक हुआ है वैसा ही मनो यह हिन्दी में लिखा गया है। कारण यह कि हिन्दी के सच्चे कालिदास राजा लक्ष्मणसिंह अनुवादित किया है। लीजिए, देखिए तो इसके प में कैसा अनुपम आनन्द आता है। मूल्य।)

## मुकुट ।

यह बँगला के प्रसिद्ध लेखक श्रीअरविन्द बाबू बँगला उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। भाई भ में परस्पर अनबन होने का परिणाम क्या होता इस छोटे से उपन्यास में यही बड़ी विलक्षणता साथ दिखलाया गया है। इसे पढ़ कर लोग अप मन को वैमनस्य के दोषों से बचा सकते हैं। मूल्य

## युगलांगुलीय ।

अर्थात्

दो अँगूठियाँ

बँगला के प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक बंकिम बाबू नाम से सभी शिक्षित जन परिचित हैं। उन्हीं परमोत्तम और शिक्षाजनक उपन्यास का यह सर हिन्दी-अनुवाद छपकर तैयार है। यह उपन्यास क स्त्री, क्या पुरुष सभी के पढ़ने और मनन करने योग्य है। मूल्य ≈)

## स्वर्णलता ।

(रोचक और शिक्षादायक सामाजिक उपन्यास)

यह उपन्यास प्रत्येक गृहस्थ को पढ़ना चाहिए। इस उपन्यास को गृहस्थाश्रम का सच्चा सखा समझना चाहिए। बँगला में इस उपन्यास की इतनी प्रतिष्ठा हुई है कि १९०८ तक इसके १४ संस्करण निकल चुके हैं। इस उपन्यास की शिक्षा बड़े महत्व की है। हिन्दी में यह उपन्यास अनुपम है। ३९१ पृष्ठ की पोथी का मूल्य १।)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें

### कर्तव्य-शिक्षा ।

अर्थात्

महात्मा चेस्टर फ़ील्ड का पुत्रोपदेश ।

( अनुवादक—पं० अयोध्यानाथ भट्ट, बी० ए०, प्राज्ञ )

हिन्दी में ऐसी पुस्तकों की बड़ी कमी है जिनको पढ़ कर हिन्दी-भाषा-भाषी बालक शिष्टाचार के सिद्धान्तों को समझ कर नैतिक और सामाजिक विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सकें । चाहे कोई कितना ही विद्वान् क्यों न हो, यदि उसको सांसारिक नियमों का ज्ञान नहीं, यदि उसको नैतिक और सामाजिक रीतियों का बोध नहीं तो तण्डुलरहित तुषों के समान उसकी विद्वत्ता निष्प्रयोजन है । हमारी हिन्दी का बालकोपयोगी साहित्य अभी ऐसी पुस्तकों से ख़ाली पड़ा है । इसी अभाव की पूर्ति के लिए हमने यह पुस्तक अँगरेज़ी से सरल हिन्दी में अनुवादित करा कर प्रकाशित की है ।

जो लोग अपने बालकों को कर्तव्यशील बनाकर नीति-निपुण और शिष्टाचारी बनाना चाहते हैं उनको "कर्तव्य-शिक्षा" की पुस्तक मँगा कर अपने बालकों के हाथ में ज़रूर देनी चाहिए । बालकों को ही नहीं, यह पुस्तक हिन्दी जाननेवाले मनुष्यमात्र के काम की है । पौने तीन सौ पृष्ठ की भारी पोथी का मूल्य केवल १) एक रुपया ।

### प्रकृति ।

यह पुस्तक पण्डित रामेन्द्रसुन्दर त्रिवेदी, एम० ए० की बँगला 'प्रकृति' का हिन्दी-अनुवाद है । बँगला में इस पुस्तक की बहुत प्रतिष्ठा है । विषय वैज्ञानिक है । हिन्दी में यह पुस्तक अपने ढँग की एक ही है । इस पुस्तक को पढ़ कर हिन्दी जाननेवालों को अनेक विज्ञान-सम्बन्धी बातों से परिचय हो जायगा । इसमें संसार जगत् की उत्पत्ति, आकाशतरंग, पृथिवी की आयु, मृत्यु, आर्यजाति, परमाणु, प्रलय आदि, १४ विषयों पर बड़ी उत्तमता से निबन्ध लिखे गये हैं । आशा है, हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को बड़े चाव के साथ मँगाकर पढ़ेंगे और अनेक लाभ उठावेंगे । मूल्य १) एक रुपया ।

### राजर्षि ।

हिन्दी-अनुरागियों को यह सुन कर विशेष हर्ष होगा कि श्रीयुत बाबू रवीन्द्रनाथ ठाकुर के "बँगला राजर्षि" उपन्यास का अनुवाद हिन्दी में दुबारा छपकर अपने प्रेमी पाठकों की प्रतीक्षा कर रहा है । इस ऐतिहासिक उपन्यास के पढ़ने से बुरी वासना चित्त से दूर होती है, प्रेम का निश्छल भाव हृदय में उमड़ पड़ता है । हिंसा-द्वेष की बातों पर घृणा होने लगती है और ऊँचे ऊँचे ख़यालात से दिमाग़ भर जाता है । इस उपन्यास को स्त्री-पुरुष दोनों निःसङ्कोच भाव से पढ़ सकते हैं और इसके महान उद्देश्य को भली-भाँति समझ सकते हैं । उपन्यास पढ़ने पर जो हर्ष होगा, जो शिक्षा मिलेगी और जो हृदय में पवित्र भाव का संचार होगा, उसके आगे इस इतने बड़े ओजस्वी उपन्यास का ॥=) आना मूल्य कुछ नहीं के बराबर ही समझना चाहिए ।

सचित्र

### शरीर और शरीर-रक्षा ।

पण्डित चन्द्रमौलि सुकुल, एम० ए० की लिखी हुई किताबें कैसी अच्छी और लाभप्रद होती हैं यह बताने की ज़रूरत नहीं । जिन्होंने उनकी लिखी हुई किताबें पढ़ी हैं, वे ख़ुद जानते होंगे । यह पुस्तक भी उन्हीं पण्डित जी की कलम की करामात है । इस में शरीर के बाहरी और भीतरी अङ्गों की बनावट तथा उनके काम व रक्षा के उपाय लिखे गये हैं । इसमें ऐसी मोटी मोटी बातों का वर्णन किया गया है और ऐसी सरल भाषा में लिखा गया है, कि हर एक मनुष्य पढ़ कर समझ सके और बहुत लाभ उठा सके । मनुष्य के अङ्गावयव सम्बन्धी २१ चित्र भी इस में छापे गये हैं । यह पुस्तक सर्वथा उपादेय है । मूल्य केवल ॥) आने है ।

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ※ ※ ※

## मानस-दर्पण

( लेखक—श्री० पं० चन्द्रमौलि शुक्ल, एम० ए० )

इस पुस्तक को हिन्दी-साहित्य का अलङ्कारग्रन्थ समझना चाहिए। इसमें अलङ्कारों आदि के लक्षण संस्कृत-साहित्य से और उदाहरण रामचरितमानस से दिये गये हैं। प्रत्येक हिन्दी-पाठक को यह पुस्तक अवश्य ही पढ़नी चाहिए। मूल्य ।=)

## माधवीकंकण।

मिस्टर आर० सी० दत्त की चमत्कारिणी लेखनी के चमत्कार को कौन नहीं जानता। "माधवीकङ्कण" नाम का बँगला उपन्यास उन्हीं के क़लम की करामात है। बड़ा रोचक, बड़ा शिक्षादायक और बड़ा मनोरञ्जक उपन्यास है। हृदय-हारिणी घटनाओं से भरपूर है। वीर और करुणा आदि अनेक रसों का समावेश इसमें किया गया है। उपन्यास का उद्देश पवित्र और शिक्षादायक है। मूल्य ॥।)

## हिन्दी-व्याकरण।

( बाबू माणिक्यचन्द्र जैनी बी० ए० कृत )

यह हिन्दी-व्याकरण अँगरेज़ी ढंग पर बनाया गया है। इसमें व्याकरण के प्रायः सब विषय ऐसी अच्छी रीति से समझाये गये हैं कि बड़ी आसानी से समझ में आ जाते हैं। हिन्दी-व्याकरण के जानने की इच्छा रखनेवालों को यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। मूल्य =)॥

## हिन्दी-व्याकरण।

( बाबू गंगाप्रसाद एम० ए० कृत )

यह भी नये ढंग का व्याकरण है। इसमें भी व्याकरण के सब विषय अँगरेज़ी ढंग पर लिखे गये हैं। उदाहरण देकर हर एक विषय को ऐसी अच्छी तरह से समझाया है कि बालकों की समझ में बहुत जल्द आ जाता है। मूल्य =)

## योगवासिष्ठ-सार।

( वैराग्य और मुमुक्षु-व्यवहार प्रकरण )

योगवासिष्ठ ग्रन्थ की महिमा हिन्दू-मात्र से छिपी नहीं है। इस ग्रन्थ में श्रीरामचन्द्रजी और गुरु वसिष्ठजी का उपदेशमय संवाद लिखा हुआ है। जो लोग संस्कृत-भाषा में इस भारी ग्रन्थ को नहीं पढ़ सकते उनके लिए हमने योगवासिष्ठ का सार रूप यह ग्रन्थ हिन्दी में प्रकाशित किया है। अब साधारण हिन्दी जानने वाले भी इस ग्रन्थ को पढ़ कर धर्म, ज्ञान और वैराग्यविषयक उत्तम शिक्षाओं से लाभ उठा सकते हैं। मूल्य ॥=)

## हिन्दी-मेघदूत।

कविकुल-कुमुद-कलाधर कालिदास कृत मेघ दूत का समवृत्त और समश्लोकी हिन्दी-अनुवाद मूल श्लोक सहित—मूल्य नाम मात्र के लिए।=)

हिन्दी-साहित्य में यह ग्रन्थ अपने ढंग का अकेला है। कविता-प्रेमियों—विशेष कर के बङ्गला की हिन्दी-कविता के रसिकों—को यह हिन्दी-मेघदूत अवश्य देखना चाहिए। बड़ी मनोहर पुस्तक है। पुस्तक के आरम्भ में अनुवादक पंडित लक्ष्मीधर वाजपेयी का हाफ़टोन चित्र दिया गया है। इसके अतिरिक्त विरही यक्ष और विरहिणी यक्षपत्नी के दो सुन्दर रंगीन चित्र भी यथास्थान दिये गये हैं। पुस्तक की शोभा देखते ही बनती है। "अवसि देखिए देखन जोगू"।

## बालापत्रबोधिनी

यह पुस्तक लड़कियों के बड़े काम की है। इसमें पत्र लिखने के नियम आदि बताने के अतिरिक्त नमूने के लिए पत्र भी ऐसे ऐसे छपाये गये हैं कि जिनसे 'एक पंथ दो काज' की कहावत चरितार्थ हो जाती है। इस पुस्तक से लड़कियों को पत्र आदि लिखने का तो ज्ञान होगा ही, किन्तु अनेक उपयोगी शिक्षायें भी प्राप्त हो जायँगी। मूल्य ।=)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

नई पुस्तक !

# हिन्दी-शेक्सपियर

छः भाग

शेक्सपियर एक ऐसा प्रतिभाशाली कवि हुआ जिस पर योरप देश के रहने वाली गौराङ्ग जाति ही नहीं किन्तु संसार भर के मनुष्य मात्र को अभिमान करना चाहिए। असल में आज तक जो कीर्ति शेक्सपियर को प्राप्त हुई है और जितना प्रचार शेक्सपियर की किताबों का संसार में हुआ है उतने यश का प्राप्त करनेवाला कोई नहीं हुआ, और न वैसा किसी की किताब का ही प्रचार हुआ। उसी जगत्प्रतिष्ठित कवि के शेक्सपियर का हिन्दी अनुवाद किया गया है। हिन्दी सरल और सरस तथा सब के समझने योग्य है। यह पुस्तक छः भागों में विभाजित है। प्रत्येक भाग का मूल्य ॥) आने और छहों भाग एक साथ लेने पर ३) तीन रुपया है। जल्दी मँगाइए।

# श्रीगौरांगजीवनी

मूल्य =) दो आने

चैतन्य महाप्रभु का जन्म बङ्गाल में हुआ। उनका नाम बङ्गाल ही में नहीं किन्तु भारत के कोने कोने में फैला हुआ है। वे वैष्णव धर्म के प्रवर्तक और श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे। उनके जीवन-चरित्र अनेक भाषाओं में छपे हुए हैं। हिन्दी-भाषा में उनके जीवन-चरित की बड़ी ज़रूरत थी। इस छोटी सी पुस्तक में उन्हीं गौराङ्ग महाशय की जीवन-घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन है। पुस्तक साधारणतया मनुष्य मात्र के काम की है, किन्तु वैष्णव धर्मावलम्बियों को तो उसे अवश्य एक बार पढ़ना चाहिए।

नई पुस्तक !  नई पुस्तक !!

# इन्साफ़-संग्रह

दूसरा भाग।

मुंशी देवीप्रसाद जी मुंसिफ़ की बनाई हुई 'इन्साफ़-संग्रह, पहला भाग' पुस्तक पाठकों ने पढ़ी होगी। ठीक उसी ढँग पर यह दूसरा भाग भी मुंशीजी ने लिखा है। इसमें ३७ न्यायकर्त्ताओं द्वारा किये गये ७० इन्साफ़ छापे गये हैं। इन्साफ़ पढ़ते समय तबीयत बहुत ख़ुश होती है। मूल्य केवल ।=) छः आने।

सचित्र

# हिन्दीकोविदरत्नमाला।

दूसरा भाग

( सम्पादक—बाबू श्यामसुन्दर दास, बी० ए० )

इस भाग में भी पहले भाग की तरह नामी नामी चालीस हिन्दी-लेखकों के संक्षिप्त जीवन-चरित छापे गये हैं। हिन्दी के धुरन्धर लेखक पण्डित महावीर-प्रसादजी द्विवेदी और पण्डित माधवराव सप्रे बी० ए० आदि विद्वानों के जीवनचरित पढ़कर प्रत्येक हिन्दी-भाषा-भाषी को लाभ उठाना चाहिए। इस पुस्तक में भी चरितनायकों के ४० हाफ़टोन चित्र दिये हैं। जिल्द-बँधी हुई पुस्तक का मूल्य केवल १॥) रुपया।

बाला-पत्र-कौमुदी

मूल्य =) दो आने

यह बड़े आनन्द की बात है कि भारत वर्ष के सभी प्रान्तों में कन्यापाठशालायें खुल गई हैं और उनमें हज़ारों कन्यायें शिक्षा पा रही हैं। स्त्री शिक्षा से भारत का सौभाग्य समझना चाहिए। इस छोटी सी पुस्तक में लड़कियों के योग्य अनेक छोटे छोटे पत्र लिखने के नियम और पत्रों के नमूने दिये गये हैं। कन्यापाठशालाओं में पढ़ने वाली कन्याओं के लिए पुस्तक बड़े काम की है। अवश्य मँगाइए।

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## बालसखा-पुस्तकमाला।

इंडियन प्रेस, प्रयाग से "बालसखा-पुस्तकमाला" नामक सीरीज़ में जितनी किताबें आज तक निकली हैं वे सब हिन्दी-पाठकों के लिए, विशेष कर बालक-बालिकाओं और स्त्रियों के लिए, परमोपयोगी प्रमाणित हो चुकी हैं। इस 'माला' की सब किताबों की भाषा ऐसी सरल—सबके समझने योग्य—रक्खी है कि जिसे थोड़े पढ़े लिखे बालक भी बड़ी आसानी से पढ़ कर समझ लेते हैं। इस 'माला' में अब तक जितनी पुस्तकें निकल चुकी हैं उनका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जाता है:—

### बालभारत—पहला भाग।

१—इसमें महाभारत की संक्षेप से कुल कथा ऐसी सरल हिन्दी भाषा में लिखी गई है कि बालक और स्त्रियाँ तक पढ़कर समझ सकती हैं। यह पाण्डवों का चरित बालकों को अवश्य पढ़ाना चाहिए। मूल्य ॥) मूल्य आठ आने।

### बालभारत—दूसरा भाग।

२—इसमें महाभारत से छाँट कर बीसियों ऐसी कथायें लिखी गई हैं कि जिनको पढ़कर बालक अच्छी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। हर कथा के अन्त में कथानुरूप शिक्षा भी दी गई है। मूल्य वही ॥)

### बालरामायण—सातों काण्ड।

३—इसमें रामायण की पूरी कथा बड़ी सीधी भाषा में लिखी गई है। इसकी भाषा की सरलता में इससे अधिक और क्या प्रमाण दें कि गवर्नमेंट ने इस पुस्तक को सिविलियन लोगों को पढ़ने के लिए नियत कर दिया है। मातृभाषियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य ॥)

### बालमनुस्मृति।

४—[illegible] प्राचीन धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक नियम-रूपों को न जान कर कैसे घोर अन्धकार में धँसती [illegible] रही है सो किसी भी विचारशील से छिपा [illegible] इसी दोष के दूर करने के लिए 'मनुस्मृति' उत्तम उत्तम श्लोकों को छाँट छाँट कर उनका हिन्दी में अनुवाद लिखा गया है। मूल्य ।)

### बालनीतिमाला।

५—नीतिविद्या बड़े काम की विद्या है। हमारे चार नीतिज्ञ बड़े प्रसिद्ध हो गये हैं। शुक्र, चाणक्य और कणिक। इन्हीं के नाम से चार विख्यात हैं। शुक्रनीति, विदुरनीति, [illegible] और कणिकनीति। ये सब पुस्तक संस्कृत हिन्दी जाननेवालों के उपकार के लिए इन चारों पुस्तकों का संक्षिप्त हिन्दी-अनुवाद [illegible] इसकी भाषा बालकों और स्त्रियों तक के लायक़ है। मूल्य ॥)

### बालभागवत—पहला भाग।

६—लीजिए, 'श्रीमद्भागवत' की कथा [illegible] सरल हिन्दी-भाषा में बन गई। जो लोग [illegible] नहीं जानते, केवल हिन्दी-भाषा ही जानते हैं, अब श्रीमद्भागवत की भक्ति-रस-भरी कथा [illegible] स्वाद चख सकते हैं। इस 'बालभागवत' में [illegible] गवत' की कथाओं का सार लिखा गया [illegible] इसकी कथायें बड़ी रोचक, बड़ी शिक्षादायक [illegible] भक्ति रस से भरी हुई हैं। हर एक हिन्दी-प्रेमी [illegible] को इस पुस्तक की एक एक कापी ज़रूर [illegible] चाहिए। मूल्य ॥) आने

### बालभागवत—दूसरा भाग।

अर्थात्
श्रीकृष्णलीला।

७—श्रीकृष्ण के प्रेमियों को यह बालभा[illegible] का दूसरा भाग ज़रूर पढ़ना चाहिए। श्रीमद्भागवत में वर्णित श्रीकृष्ण भगवान् की लीलाओं की कथायें लिखी गई हैं। मूल्य [illegible]

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## बालगीता ।

१—गीता की एक एक शिक्षा, एक एक बात मनुष्यों को मुक्ति और मुक्ति की देनेवाली है। ऐहिक और पारमार्थिक सुख चाहने वालों को गीता के उपदेशों से ज़रूर शिक्षा लेनी चाहिए। गीता में जगद्गुरु ऐसा अमृतमय उपदेश भराहुआ है कि जिसके पान से मनुष्य अमर-पदवी तक पा सकता है। कृष्णचन्द्र महाराज के मुखारविन्द से निकले हुए उपदेश को कौन हिन्दू न पढ़ना चाहेगा? अपने बच्चों को पवित्र और बलिष्ठ बनाने के लिए यह "बालगीता" ज़रूर पढ़नी चाहिए। इसमें पूरी गीता का सार बड़ी सरल भाषा में लिखा गया है। मूल्य ॥)

## बालोपदेश ।

२—यह पुस्तक बालकों को ही नहीं युवा, वृद्ध, स्त्री सभी को उपयोगी तथा चतुर, धर्मात्मा और बलसम्पन्न बनाने वाली है। राजा भर्तृहरि के विमल अन्तःकरण में जब संसार से वैराग्य उत्पन्न हुआ था तब उन्होंने एक दम भरा पूरा राज-पाट छोड़ कर संन्यास ले लिया था। उस परमानन्दमयी अवस्था में उन्होंने वैराग्य और नीति-सम्बन्धी दो शतक बनाये थे। इस 'बालोपदेश' में उन्हीं भर्तृहरि-कृत नीति-शतक का पूरा और वैराग्यशतक का संक्षिप्त हिन्दी अनुवाद छापा गया है। यह पुस्तक स्कूलों में बालकों के पढ़ने के लिए बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।)

## बालउपन्यास (सचित्र) चारों भाग।

३-१३—दिलचस्प क़िस्से कहानियों के लिए दुनिया भर के उपन्यासों में अरबियन नाइट्स का नम्बर सबसे पहला है। इसमें से कुछ रमणीय कहानियों को निकाल कर, यह विशुद्ध संस्करण निकाला गया है, इसलिए, अब, यह किताब क्या स्त्री, क्या पुरुष सभी के पढ़ने लायक है। इसके पढ़ने से हिन्दी-भाषा का प्रचार होगा, मनोरञ्जन होगा, घर बैठे दुनिया की सैर होगी, बुद्धि और विचार-शक्ति बढ़ेगी, चतुराई सीखने में आवेगी, साहस और हिम्मत बढ़ेगी। कहाँ तक कहें, इसके पढ़ने से अनेक लाभ होंगे। मूल्य प्रत्येक भाग का ॥)

## बालपंचतंत्र ।

१४—इसके पाँचों तंत्रों में बड़ी मनोरंजक कहानियों के द्वारा सरल रीति पर नीति की शिक्षा दी गई है। बालक-बालिकायें इसकी मनोरंजक कहानियों को बड़े चाव से पढ़ कर नीति की शिक्षा ग्रहण कर सकती हैं। यह "बालपंचतंत्र" विष्णुशर्मा कृत असली पंचतंत्र का सरल हिन्दी में सार है। यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दीपाठक और विशेष कर बालकों के पढ़ने के योग्य है। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

## बालहितोपदेश ।

१५—इस पुस्तक के पढ़ने से बालकों की बुद्धि बढ़ती है, नीति की शिक्षा मिलती है, मित्रता के लाभों का ज्ञान होता है और शत्रुओं के पंजे में न फँसने और फँस जाने पर उससे निकलने के उपायों और कर्त्तव्यों का बोध हो जाता है। यह पुस्तक, पुरुष हो या स्त्री, बालक हो या बूढ़ा, सभी के काम की है। इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य आठ आने।

## बालहिन्दीव्याकरण ।

१६—यदि आप हिन्दी-व्याकरण के गूढ़ नियमों को सरल और सुगम रीति से जानना चाहते हैं, यदि आप हिन्दी शुद्ध रूप से लिखना और बोलना जानना चाहते हैं, तो "बालहिन्दीव्याकरण" पुस्तक मँगा कर पढ़िए और अपने बाल-बच्चों को पढ़ाइए। स्कूलों में लड़कों के पढ़ाने के लिए यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।) बारह आने।

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * **

## बालविष्णुपुराण ।

१७—विष्णुपुराण में कितनी ही ऐसी विचित्र और शिक्षाप्रद कथायें हैं कि जिनके जानने की हिन्दी वालों को बड़ी ज़रूरत है। इस पुराण में कलियुगी भविष्य राजाओं की वंशावली का बड़े विस्तार से वर्णन किया गया है। जो लोग संस्कृत भाषा में विष्णुपुराण की कथाओं का आनन्द नहीं लूट सकते, उन्हें 'बालविष्णु-पुराण' पढ़ना चाहिए। इस पुस्तक को विष्णुपुराण का सार समझिए। मूल्य ।)

## बाल-स्वास्थ्य-रक्षा ।

१८—यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दी जाननेवाले को पढ़नी चाहिए। प्रत्येक गृहस्थ को इसकी एक एक कापी अपने घर में रखनी चाहिए। बालकों को तो आरम्भ से ही इस पुस्तक को पढ़कर स्वास्थ्य-सुधार के उपायों का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। इसमें बतलाया गया है कि मनुष्य किस प्रकार रह कर, किस प्रकार का भोजन करके, नीरोग रह सकता है। इसमें प्रति दिन के बर्ताव में आनेवाली खाने की चीज़ों के गुण-दोष भी अच्छी तरह बताये गये हैं। कहाँ तक कहें, पुस्तक मनुष्य-मात्र के काम की है। इतनी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल ॥) आठ आना रक्खा है।

## बालगीतावलि ।

१९—महाभारत में क्या नहीं है। उसमें सभी कुछ मौजूद है। महाभारत को रत्नों का सागर कहना चाहिए, शिक्षा का भण्डार कहना चाहिए। आप जानते हैं "बालगीतावलि" में क्या है? इसमें महाभारत में से ९ गीताओं का संग्रह किया गया है। इन गीताओं में ऐसी उत्तम उत्तम शिक्षायें हैं कि जिनके अनुसार बर्ताव करने से मनुष्य का परम कल्याण हो सकता है। हमें पूरी आशा है कि समस्त हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को पढ़ कर उत्तम शिक्षा का लाभ करेंगे। मूल्य ॥) आठ आने।

## बालनिबन्धमाला ।

२०—इसमें कोई ३५ शिक्षादायक विषयों पर बड़ी सुन्दर भाषा में, निबन्ध लिखे गये हैं। बालकों के लिए तो यह पुस्तक उत्तम गुरु का काम देती है। ज़रूर मँगाइए। मूल्य ।=)

## बालस्मृतिमाला ।

२१—हमने १८ स्मृतियों का सार-संग्रह करके यह "बालस्मृतिमाला" प्रकाशित की है। आशा है सनातनधर्म के प्रेमी अपने अपने बालकों के हाथ में यह धर्मशास्त्र की पुस्तक देकर उनको धर्मिष्ठ बनाने का उद्योग करेंगे। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

## बालपुराण ।

२२—पुराणों में बहुत सी ऐसी कथायें हैं जिनसे मनुष्यों को बहुत कुछ उपदेश मिल सकता है। पर पुराण इतने अधिक और बड़े हैं कि उन सबका पढ़ना प्रत्येक मनुष्य के लिए असम्भव नहीं तो महाकष्ट साध्य अवश्य है। इसलिए सर्वसाधारण के सुभीते के लिए हमने अठारह महापुराणों का सारूप 'बाल पुराण' तैयार करा कर प्रकाशित किया है। इसमें अठारहों पुराणों की संक्षिप्त कथासूची दी गई है और यह भी बतलाया गया है कि किस पुराण में कितने श्लोक और कितने अध्याय आदि हैं। पुस्तक बड़े काम की है। इतनी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल ॥)

## बालभोजप्रबन्ध ।

२३—राजा भोज का विद्याप्रेम किसी से छिपा नहीं है। संस्कृत भाषा के "भोजप्रबन्ध" नामक ग्रन्थ में राजा भोज के संस्कृत-विद्याप्रेम-सम्बन्धी अनेक आख्यान लिखे हुए हैं। ये बड़े मनोरञ्जक और शिक्षादायक हैं। उसी भोजप्रबन्ध का सारूप यह "बाल-भोजप्रबन्ध" छपकर तैयार हो गया। सभी हिन्दी-प्रेमियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य बहुत ही कम केवल ॥) आठ आने।

---

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## धोखे की टट्टी ।

इस उपन्यास में एक अनाथ लड़के की नेकनीयती
र नेकचलनी और एक सनाथ और धनाढ्य
ड़के की बदनीयती और बदचलनी का फोटो
ींचा गया है। हमारे भारतीय नवयुवक इसके
ढ़ने से बहुत कुछ सुधर सकते हैं, बहुत कुछ शिक्षा
हण कर सकते हैं। ज़रा मँगाकर देखिए तो कैसी
ोखे की टट्टी" है। मूल्य ।=)

## पार्वती और यशोदा ।

इस उपन्यास में स्त्रियों के लिए अनेक शिक्षायें दी
हैं। इसमें दो प्रकार के स्त्री-स्वभावों का ऐसा
ख फोटो खींचा गया है कि समझते ही बनता
। स्त्रियों के लिए ऐसे ऐसे उपन्यासों की अत्यन्त
वश्यकता है। 'सरस्वती' के प्रसिद्ध कवि पण्डित
मताप्रसाद गुरु ने ऐसा शिक्षादायक उपन्यास
करके हिन्दी पढ़ी लिखी स्त्रियों का बहुत उपकार
या है। हर एक स्त्री को यह उपन्यास अवश्य
ना चाहिए। मूल्य ।=)

## सुशीला-चरित ।

आज कल हमारे देश के स्त्री-समाज में ऐसे ऐसे
ग, दुर्व्यसन और दुराचार घुसे हुए हैं जिनके
रण स्त्री-समाज ही नहीं पुरुष-समाज भी नाना
ार के दुःखजालों में फँस कर घोर नरक-यातना
ा रहा है। यदि भारतवासी अपने देश, धर्म और
ति की उन्नति करना चाहते हैं तो सब से पहले,
प्रकार की उन्नतियों के मूल स्त्री-समाज का
ार करना चाहिए। फिर देखिए, आपकी सभी
मनायें आप से आप ही सिद्ध हो जायँगी। स्त्री-
ाज के सुधार की शिक्षा देने में 'सुशीलाचरित'
क बहुत ही उपयोगी है। प्रत्येक पढ़ी लिखी स्त्री
सुशीला-चरित अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य ।)

## बाला-बोधिनी ।

( पाँच भाग )

लड़कियों के पढ़ने के लिए ऐसी पुस्तकों की बड़ी आवश्यकता थी जिनमें भाषाशिक्षा के साथही साथ लाभदायक उपयोगी उपदेशों के पाठ हों और उनमें ऐसी शिक्षा भरी हो जिनकी, वर्तमान काल में, लड़कियों के लिए अत्यन्त आवश्यकता है। हमारी बालाबोधिनी इन्हीं आवश्यकताओं के पूर्ण करने लिए प्रकाशित हुई हैं। क्या देशी और क्या सरकारी सभी पुत्री-पाठशालाओं की पाठ्य-पुस्तकों में बाला-बोधिनी को नियत करना चाहिए। इन पुस्तकों के कवर-पेज ऐसे सुन्दर रङ्गीन छापे गये हैं कि देखते ही बनता है। मूल्य पाँचों भागों का ।।) और प्रत्येक भाग का क्रमशः =), ३), ।), ।=), ।=), है।

## समाज ।

मिष्टर आर सी दत्त लिखित बँगला उपन्यास का हिन्दी-अनुवाद बहुत ही सरल भाषा में किया गया है। पुस्तक बड़े महत्त्व की है। यह सामाजिक उपन्यास सभी हिन्दी जाननेवालों के बड़े काम का है। एक बार पढ़ कर अवश्य देखिए। मूल्य ॥)

## सुखमार्ग ।

इस पुस्तक का जैसा नाम है इसमें सुख भी वैसा ही है। इस पुस्तक के पढ़ते ही सुख का मार्ग दिखाई देने लगता है। जो लोग दुखी हैं, सुख की खोज में दिन रात सिर पटकते रहते हैं उनको यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। मूल्य केवल ।)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## बालविनोद ।

प्रथम भाग ⁻) द्वितीय भाग ⁻)॥ तृतीय भाग ⁼) चौथा भाग ।⁼) पाँचवाँ भाग ।⁼) ये पुस्तकें लड़के लड़कियों के लिए प्रारम्भ से शिक्षा शुरू करने के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। इसमें से पहले तीनों भागों में एक और भी विशेषता है कि रंगीन-तसवीरें भी दी गई हैं। इन पाँचों भागों में सदुपदेशपूर्ण अनेक कवितायें भी हैं। बंगाल की टैक्स्ट बुक कमेटी ने इनमें से पहले तीनों भागों को अपने स्कूलों में जारी कर दिया है।

## उपदेश-कुसुम ।

यह गुलिस्ताँ के आठवें बाब का हिन्दी-अनुवाद है। यह पढ़ने लायक़ और शिक्षा-दायक है। मूल्य ⁼)

## मुअल्लिम नागरी ।

उर्दू जाननेवालों को नागरी सीखने के लिए इसे कल समझिए। इसमें उर्दू और नागरी दोनों छापी गई हैं। इससे बड़ी जल्दी नागरी पढ़ना लिखना आ जाता है। मूल्य ॥)

## भाषा-पत्र-बोध ।

यह पुस्तक बालकों और स्त्रियों के ही उपयोगी नहीं सभी के काम की है। इसमें हिन्दी में पत्रव्यवहार करने की रीतियाँ बड़ी उत्तम रीति से लिखी गई हैं। इस किताब को पढ़ कर छोटे छोटे बालक भी अच्छी तरह पत्र-व्यवहार करना सीख जाते हैं। मूल्य ⁻)॥

## व्यवहार-पत्र-दर्पण ।

काम-काज के दस्तावेज़ और अदालती काग़ज़ों का संग्रह।

यह पुस्तक काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के आज्ञानुसार उसी सभा के एक सभासद द्वारा लिखी गई है। इसमें एक प्रसिद्ध वकील की सह अदालत के सैकड़ों काम-काज के काग़ज़ों के छापे गये हैं। इसकी भाषा भी वही रक्खी गई अदालतों में लिखी पढ़ी जाती है। इसकी सह से लोग अदालत के ज़रूरी कामों को नागरी सुगमता से कर सकते हैं। क़ीमत ॥)

## कादम्बरी ।

यह कविवर बाणभट्ट के सर्वोत्तम उपन्यास का अत्युत्तम हिन्दी-अनुवाद, प्रसिद्ध लेखक स्वर्गवासी बाबू गदाधरसिंह वर्मा ने है। कथा तो सर्वोत्तम प्रसिद्ध है ही भाषा भी बड़ी शुद्ध, मधुर और सरस है। सर्वथा पठन-योग्य समझ कर कलकत्ता की यूनिवर्सिटी ने एफ० ए० क्लास के कोर्स में सम्मि कर लिया है। यह उपन्यास हिन्दी-प्रेमियों के योग्य है। दाम ॥), संक्षिप्त संस्करण में ।॥)

## पाकप्रकाश

इसमें रोटी, दाल, कढ़ी, भाजी, पकौड़ी, रा चटनी, अचार, मुरब्बा, पूरी, कचौरी, मिठाई, पुआ, आदि के बनाने की रीति लिखी गई है पुस्तक स्त्रियों के बड़े काम की है। मूल्य ⁼)

## जल-चिकित्सा-( सचित्र )

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

इसमें, डाक्टर लुई कूने के सिद्धान्तानु जल से ही सब रोगों की चिकित्सा का वर्णन गया है। मूल्य ।)

## अर्थशास्त्र-प्रवेशिका ।

सम्पत्तिशास्त्र के मूल सिद्धान्तों के समझने लिए इस पुस्तक को ज़रूर पढ़ना चाहिए। मोलिए, बड़े काम की पुस्तक है। मूल्य ।)

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग, की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

### पारस्योपन्यास ।

जिन्होंने "आरब्योपन्यास" अर्थात् अरेबियन नाइट्स की कहानियाँ पढ़ी हैं उनके सामने यह कहने की आवश्यकता नहीं कि पारस्योपन्यास की कहानियाँ कैसी मनोरञ्जक और अद्भुत हैं। सर्वदेशीय सहस्र-रजनी-चरित्र के पढ़ने वालों को एक बार पारस्य उपन्यास भी अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य १)

### भाषाव्याकरण ।

श्रीयुत पण्डित चन्द्रमौलि शुक्ल, एम. ए असिस्टेंट हेडमास्टर, गवर्नमेंट हाईस्कूल, प्रयाग-रचित। हिन्दी भाषा की यह व्याकरण-पुस्तक व्याकरण जानेवाले अध्यापकों के बड़े काम की चीज़ है। विद्यार्थी भी इस पुस्तक को पढ़ कर हिन्दी-व्याकरण का बोध प्राप्त कर सकते हैं। मूल्य ≡)

### कालिदास की निरङ्कुशता ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी जी ने "सरस्वती" पत्रिका के बारहवें भाग में "कालिदास की निरङ्कुशता" नामक जो लेख-माला प्रकाशित की थी वह, अनेक हिन्दी-प्रेमियों के आग्रह करने पर, पुस्तकाकार प्रकाशित कर दी गई। आशा है सभी हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को मँगा कर अवश्य पढ़ेंगे। मूल्य केवल ।) चार आने।

### आरोग्य-विधान ।

नीरोग रहने के सुगम उपायों का वर्णन। मूल्य =)

### दुर्गा सप्तशती ।

इसमें यह दुर्गा की पोथी बड़ी सुन्दर छपी है। काग़ज़ भी इसका मोटा और दबदबा है। बड़े अक्षर हैं। चश्मा लगानेवाले बिना चश्मा लगाये ही इसका पाठ कर सकते हैं। बड़ी शुद्ध छपी है। कीलक, कवच, अङ्गन्यास, करन्यास, रहस्य और विनियोग आदि सभी बातें इसमें मौजूद हैं। इसमें यह भी लिखा गया है कि किस काम के लिए किस मंत्र का संपुट लगाना चाहिए। ऐसी अत्युत्तम पोथी का दाम केवल ॥=)

तार्किकमोहभङ्गप्रकाश (कुतर्कियों का मुँहतोड़ जवाब) १)
रसरहस्य ( प्रेमियों के देखने योग्य ) ... ॥)
प्रीतमविहार ( श्रीरामचन्द्र जी के प्रेमभजन ) ।=)
दृष्टान्तसमुच्चय (उपदेश भरे दृष्टान्तों का संग्रह) ≡)
महिम्नस्तोत्र ... ... ... ... =)
एकमुखी हनुमत्कवच ... ... ... =)

### नूतनचरित्र ।

( बाबू रवीन्द्र बी० ए० वकील हाईकोर्ट प्रयाग लिखित )

यों तो उपन्यास-प्रेमियों ने अनेक उपन्यास देखे होंगे पर हमारा अनुमान है कि शायद उन्होंने ऐसा उत्तम उपन्यास आज तक कहीं नहीं देखा होगा। इसलिए हम बड़ा ज़ोर देकर कहते हैं कि इस 'नूतनचरित्र' को अवश्य पढ़िए। मूल्य १)

### षोडशी ।

बँगला के प्रसिद्ध आख्यायिकालेखक श्रीयुत प्रभातकुमार बाबू की प्रभावशालिनी लेखनी से लिखी गई १६ आख्यायिकाओं का यह संग्रह बँगला में बड़ा प्रसिद्ध है। उसी षोडशी का यह हिन्दी अनुवाद तैयार है। ये कहानियाँ हिन्दी में एकदम नई हैं और पढ़ने योग्य हैं। मूल्य १२३ पृष्ठ की पोथी का १)

### विनिमय-मुक्तहार ।

बँगला के प्रसिद्ध लेखक श्रीयुत द्विजेन्द्रलाल राय महाशय लिखित "कल्याणकुमारीर हार" नामक बँगला उपन्यास का यह हिन्दी अनुवाद 'विनिमय-मुक्तहार' के नाम से तैयार हो गया। उपन्यास जितना रोचक है, इसकी घटनाएँ जितनी अद्भुत हैं, उपन्यास का अन्त जैसा उत्तम है, पात्रों पर इसकी घटनाओं का जैसा प्रभाव पड़ता है इत्यादि बातें उपन्यास के पढ़ने से स्वयं विदित हो जायँगी। मूल्य ॥)

लिखने का पता— मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# ❋ ❋ ❋ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें

मिस्टर आर० सी० दत्त-लिखित

## महाराष्ट्र-जीवन-प्रभात

का

हिन्दी अनुवाद छप कर तैयार हो गया। इसमें महाराष्ट्रवीर शिवाजी की वीरता-पूर्ण ऐतिहासिक कथायें लिखी गई हैं। वीररसपूर्ण उपन्यास है। हिन्दी पढ़ने वालों को एक बार इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य ॥=)

मिस्टर आर० सी० दत्त-लिखित

## राजपूत-जीवन-सन्ध्या।

का भी अनुवाद तैयार हो गया। इसमें राजपूतों की वीरता कूट कूट कर भरी है। पर, साथ ही राजपूतों के वीरता-पूर्ण जीवन की सन्ध्या के वर्णन को पढ़ कर आपको दो आँसू ज़रूर बहाने पड़ेंगे। उपन्यास पढ़ने योग्य है। मूल्य ॥)

## शेखचिल्ली की कहानियाँ।

इस पुस्तक की अँगरेज़ी में हज़ारों कापियाँ बिक गईं, बँगला में भी खूब बिक रही हैं। लीजिए, अब हिन्दी में भी यह किताब छप कर तैयार हो गई। बड़े मज़े की किताब है। इन कहानियों की प्रशंसा में इतना ही कह देना बहुत होगा कि इन्हें शेखचिल्ली ने लिखा है। सरस्वती में जो हीरा और लाल की कहानी छपी थी उसे इस किताब की कहानियों की बानगी समझिए। मूल्य ॥)

## भारतीय विदुषी।

इस पुस्तक में भारत की कोई ४० प्राचीन विदुषी देवियों के संक्षिप्त जीवन-चरित लिखे गये हैं। इसके देखने से मालूम होगा कि पहले स्त्रियाँ कैसी कैसी विदुषी होती थीं। स्त्रियों को तो यह पुस्तक पढ़नी ही चाहिए, क्योंकि इसमें स्त्री-शिक्षा की अनेक उपयोगी बातें ऐसी लिखी गई हैं कि जिन के पढ़ने से स्त्रियों के हृदय में विद्यानुर हो जाता है, किन्तु पुरुषों के कितनी ही नई बातें मालूम हो

## रॉबिन्सन क्रू

कहानी की कहानी बड़ी मने कर्षक और शिक्षादायक है। तो यह पुस्तक इतनी उपयो वर्णन नहीं हो सकता। प्रत्येक यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए उत्साह, असीम साहस, अद्भु परिश्रम और विकट वीरता के पाठक के हृदय पर ऐसा विचि कि जिसका नाम नहीं। कूपमण्ड पर ही पड़े पड़े सड़ने वाले आलसि पढ़ कर अपना सुधार करना बड़े काम की है। मूल्य १।)

## क्षय-रोग।

( जनसाधारण की बीमारी तथ

(अनुवादक, पण्डित बालकृष्

क्षयरोग की भयङ्करता जग बड़ा बुरा संक्रामक रोग है। नहीं प्राणी प्रतिवर्ष इस रोग-राक्षस के इस लोक से चल बसते हैं। ड डाक्टरों और विद्वानों ने एक सभ इस रोग से बचने के उपायों पर पढ़े गये थे। एक निबन्ध सर्वोत्तम उसी को पारितोषिक भी मिला था का अनुवाद अब तक कोई २२ भाष है। यह पुस्तक उसी निबन्ध का अनु बताये गये उपायों के द्वारा अब रोगियों को आराम होने लगा है काम की है। सब के पढ़ने लायक़ सरल है। मूल्य ।=)

# ❀ इंडियन प्रेस, प्रयाग, के रंगीन चित्र ❀

चित्रकला, संगीतविद्या और कविता, इनमें देखा जाय तो परस्पर
त ही लगाव मिलेगा। जैसे अच्छे कवि की कविता मन को मोह लेती
अच्छे गवैये का संगीत हृदय को प्रफुल्लित कर देता है वैसेही चतुर
त्रकार का बनाया चित्र भी सहृदय को चित्र-लिखित सा बना देता है।
बड़े लोगों के चित्रों को भी सदा अपने सामने रखना परम उपकारी
ता है। ऐसे उत्तम चित्रों के संग्रह से अपने घर को, अपनी बैठक को
जाने की इच्छा किसे न होगी? अच्छे चित्रों को बनानेवाले ही एक तो
म मिलते हैं, और अगर एक आध खोज करने से मिला भी तो चित्र
नवाने में एक एक चित्र पर हज़ारों की लागत बैठ जाती है। इस कारण
न को बनवाना और उनसे अपने भवन को सुसज्जित करने की अभिलाषा
ण करना हर एक के लिए असंभव है। हमारे यहाँ से प्रकाशित होने
ली सरस्वती मासिक पत्रिका में जैसे सुन्दर मनोहर चित्र निकलते हैं
ी बतलाने की ज़रूरत नहीं है। हमने उन्हीं चित्रों में से उपयोगी उत्तम
ने हुए कुछ चित्र (बँधा कर रखने के लायक़) बड़े आकार में छपवाये हैं।
चित्र सब नयनमनोहर, आठ आठ दस दस रंगों में सफ़ाई के साथ छपे हैं।
क बार हाथ में लेकर छोड़ने को जी नहीं चाहता। चित्रों के नाम, दाम
ार परिचय नीचे लिखा जाता है। शीघ्रता कीजिए, चित्र थोड़े ही छपे हैं—

### शुक-शूद्रक-परिचय

(१४ रंगों में छपा हुआ)

आकार—१०½" × १७" दाम १) रु०

संस्कृत कादम्बरी की कथा के आधार पर यह
त्र बना है। महा प्रतापी शूद्रक राजा की भारी
भा लगी हुई है। एक परम सुन्दरी चाण्डाल-
या राजा को अर्पण करने के लिए एक तोते को
ंजरा लेकर आती है। तोते का मनुष्य की बातों
आशीर्वाद देना देख कर सारी सभा चकित हो
ती है। उसी समय का दृश्य इसमें दिखाया गया है।

### शुक-शूद्रक-संवाद

(१४ रंगों में छपा हुआ)

आकार—२१" × १८½" दाम १) रु०

संस्कृत कादम्बरी की कथा के आधार पर यह
चित्र भी बना है। इस चित्र में राजमहल—अर्थात् पूरा
का दृश्य बहुत अच्छे ढंग से दिखाया गया है।
राजा शूद्रक बैठा है। सामन्तगण बैठे हैं। मन्त्री भी
उपस्थित है। चाण्डालकन्या के दिए हुए सोने
से राजा के चरण-पूजन करने का सुन्दर दृश्य दिखाया
गया है।

चित्रों के मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# * इंडियन प्रेस, प्रयाग, के रंगीन चित्र *

## भक्ति-पुष्पांजलि

आकार—१३½" × ९½" दाम ॥-)

एक सुन्दरी शिवमन्दिर के द्वार पर पहुँच गई है। सामने ही शिवमूर्ति है। सुन्दरी के साथ एक बालक है और हाथ में पूजा की सामग्री है। इस चित्र में सुन्दरी के मुख पर, इष्टदेव के दर्शन और भक्ति से होने वाला आनन्द, श्रद्धा और सौम्यता के भाव बड़ी ख़ूबी से दिखलाये गये हैं।

## चैतन्यदेव

आकार—१०½" × ९" दाम ।-) मात्र

महाप्रभु चैतन्यदेव बंगाल के एक अनन्य भक्त वैष्णव हो गये हैं। वे कृष्ण का अवतार और वैष्णव धर्म के एक आचार्य माने जाते हैं। वे एक दिन घूमते विचरते जगन्नाथपुरी पहुँचे। वहाँ गरुड़स्तम्भ के नीचे खड़े होकर दर्शन करते करते वे भक्ति के आनन्द में बेसुध होगये। उसी समय के सुन्दर दर्शनीय भाव इस चित्र में बड़ी ख़ूबी के साथ दिखलाये गये हैं।

## बुद्ध-वैराग्य

आकार—१८½" × २१" दाम २) ८०

संसार में अहिंसा-धर्म का प्रचार करने वाले महात्मा बुद्ध का नाम जगत् में प्रसिद्ध है। उन्होंने राजसम्पत्ति को लात मार कर वैराग्य ग्रहण कर लिया था। इस चित्र में महात्मा बुद्ध ने अपने राज-चिह्नों को निर्जन में जाकर त्याग दिया है और अपने अनुचर से उन्हें उठाकर घर ले जाने के लिए कह रहे हैं। उस समय के, बुद्ध के मुख पर, वैराग्य और अनुचर के मुख पर आश्चर्य के चिह्न इस चित्र में बड़ी ख़ूबी के साथ दिखलाये गये हैं।

## अहल्या

आकार—१३½" × १८½" दाम १) ९०

अहल्या अलौकिक सुन्दरी थी। वह गौत की स्त्री थी। इस चित्र में यह दिखाया गय अहल्या वन में फूल चुनने गई है और प हाथ में लिये खड़ी कुछ सोच रही है। सोच देवराज इन्द्र के सौन्दर्य को—उन पर व प्रकार से मोहित सी होगई है। इसी अव इस चित्र में चतुर चित्रकार ने बड़ी कारी साथ दिखलाया है। चित्र बहुत ही बना है।

## शाहजहाँ की मृत्युशय्या

आकार—१४" × १०" दाम ॥)

शाहजहाँ बादशाह को उसके कुपुत्र औरंगज़ेब ने धोखा देकर क़ैद कर लिया उसकी प्यारी बेटी जहाँनारा भी बाप के पा की हालत में रहती थी। शाहजहाँ का मृ निकट है, जहाँनारा सिर पर हाथ रक्खे हुए वि हो रही है। उसी समय का दृश्य इस चित्र में लाया गया है। शाहजहाँ के मुख पर मृत्यु-का दशा बड़ी ही ख़ूबी के साथ दिखलाई गई है।

## भारतमाता

आकार—१०½" × १" दाम ।-)

इस चित्र का परिचय देने की अधिक आ करना नहीं। जिसने हमको पैदा किया है, जो पालन कर रही है, जिसके हम कहलाते हैं, और हमारा सर्वस्व है उसी जननी जन्मभूमि भारत का सर्वश्रेष्ठ वेश में यह दर्शनीय चित्र ब गया है। प्रत्येक भारतवासी को यह चित्र घर में, अपनी आँखों के आगे रखना चाहिए।

मिलने के ठिकाने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग, की सर्वोत्तम पुस्तकें * **

## यवनराजवंशावली ।

( लेखक—मुंशी देवीप्रसादजी मुंसिफ़ )

छोटी होने पर भी पुस्तक बड़े काम की है। इस पुस्तक से आप को यह बात विदित हो जायगी कि भारतवर्ष में मुसलमानों का पदार्पण कब से हुआ। किस किस बादशाह ने कितने दिन तक कहाँ कहाँ राज्य किया और यह भी कि कौन बादशाह किस सन् संवत् में हुआ। यही नहीं बल्कि बादशाहों की मुख्य मुख्य जीवन-घटनाओं का भी इसमें उल्लेख किया गया है। हिन्दीवालों और विशेष कर इतिहास-प्रेमियों के लिए यह पुस्तक परम उपयोगी है। मूल्य ॥)

## विक्रमाङ्कदेवचरितचर्चा ।

यह पुस्तक सरस्वती-सम्पादक पण्डित महावीर-प्रसाद द्विवेदी जी की लिखी हुई है। बिल्हण कवि-रचित 'विक्रमाङ्कदेवचरित' काव्य की यह आलोचना है। इसमें विक्रमाङ्कदेव का जीवनचरित भी है और बिल्हण-कवि की कविता के नमूने भी जहाँ तहाँ दिये हुए हैं। इनके सिवा इसमें बिल्हण-कवि का भी संक्षिप्त जीवनचरित लिखा गया है। पुस्तक पढ़ने योग्य है। मूल्य ॥)

## आघातों की प्रारम्भिक चिकित्सा ।

[ ठाकुर दलभञ्जन सिंह पुस्तकावली नं० १ ]

जब किसी आदमी के चोट लग जाती है और शरीर की कोई हड्डी टूट जाती है तब उसको बड़ा कष्ट होता है। जहाँ डाक्टर नहीं हो वहाँ और भी दिक्कत होती है। इन्हीं सब बातों को सोचकर, इन्हीं सब दिक्कतों को दूर करने के लिए, हमने यह पुस्तक प्रकाशित की है। इसमें सब प्रकार की चोटों की प्रारम्भिक चिकित्सा, घावों की चिकित्सा और विषचिकित्सा का बड़े विस्तार से वर्णन किया गया है। इस पुस्तक में आघातों के अनुसार शरीर के भिन्न भिन्न अंगों की ६५ तसवीरें भी छाप कर दी गई हैं। पुस्तक बड़े काम की है। मूल्य ।)

## नाट्य-शास्त्र ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

मूल्य ।) चार आने

नाटक से सम्बन्ध रखनेवाली—रूपक, उपरूपक, पात्र-कल्पना, भाषा, रचनाचातुर्य, वृत्तियाँ, अलङ्कार, लक्षण, जवनिका, परदे, वेशभूषा, दृश्य काव्य का कालविभाग आदि—अनेक बातों का वर्णन इस पुस्तक में किया गया है। हिन्दी-प्रेमियों को और विशेषकर उन सज्जनों को, जो नाटकमण्डलियाँ स्थापित करके अच्छे अच्छे नाटकों द्वारा देश में सुरुचि का बीजारोपण कर रहे हैं, यह नाट्य-शास्त्र अवश्य ही देखना चाहिए।

## लड़कों का खेल ।

( पहली किताब )

ऐसी किताब हिन्दी में आज तक कहीं उठी ही नहीं। इसमें कोई ८४ चित्र हैं। हिन्दी पढ़ने के लिए बालकों के बड़े काम की किताब है। कैसा ही चिलबड़ा बालक क्यों न हो और कितना ही पढ़ने से जी चुराता हो तो भी यह इस किताब को हिन्दी पढ़ना लिखना बहुत जल्द सीख सकता है। मूल्य ॥)

## खेलतमाशा ।

यह भी हिन्दी पढ़नेवाले बालकों के लिए बड़े मज़े की किताब है। इसमें सुन्दर सुन्दर तसवीरों के साथ साथ गद्य और पद्य भाषा लिखी गई है। इसे बालक बड़े चाव से पढ़कर याद कर लेते हैं। पढ़ने का पढ़ना और खेल का खेल है। मूल्य ॥)

## हिन्दी का खिलौना ।

इस पुस्तक को देखकर बालक खुशी के मारे फूले समाते हैं और पढ़ने का भी इतना शौक हो जाता है कि घर के आदमी मना करते हैं पर वे किताब हाथ से रखते ही नहीं। सचित्र, बच्चों के लिए एक किताबों का झूठा ही है हिन्दी का। मूल्य ।)

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

॥ श्रीः ॥

विलक्षण प्रतिभा ! दैवी शक्ति ! ! जागता जादू ! ! !

# ॥ अद्भुत साहित्य-संसार ॥

अमृत की वर्षा, आनन्द का समुद्र, स्वर्ग का नंदन कानन, मोक्ष का द्वार, शिक्षाओं का भंडार चमत्कार का आगार, बिलकुल नया आविष्कार,

## अर्थात् देवकर जी के रचित उपन्यास ।

आज हम बड़े हर्ष से अपने विद्या-रसिक पाठकों को यह शुभ संवाद सुनाते हैं कि आज के नागरी जगत् में रंग भाषा जैसे उपन्यासों का जो अभाव था उसकी पूर्ति के लिए हम श्रीयुत बाबू लाल राम देवकरजी के उपन्यासों का जिन्हें प्रधान २ नागरी रसिकों, विद्वानों, एवं शिक्षा-समितियों ने सर्वोपयोगी सिद्ध किया है, मुद्रित करना प्रारम्भ कर दिया है। ये उपन्यास चित्ताकर्षण, हृदयरंजन तथा सच्चे हितोपदेश के अतिरिक्त उच्च कोटि की शिक्षा देते हैं। अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं, पाठक स्वयं पढ़ कर देख लें कि "गागर में सागर" वाली कहावत कहां तक सत्य करके दिखलाई गई है :—

१—आदर्शमित्र—पंजाब टेक्स्ट बुक कमेटी द्वारा स्वीकृत, संसार का मित्र, नव-युवकों का सच्चा सखा, वीरता, प्रतिज्ञता, दुर्व्यसनों के परिणाम की भयानकता, धर्मनिष्ठ न्यायकारियों की न्यायपरायणता और आदर्श मित्रों का विचित्र रहस्य। मूल्य सजिल्द १) सादी ॥)

२—मनमोहिनी—अपने ढङ्ग का निराला आश्चर्य, कौतूहलयुत, तथा स्त्री-शिक्षा के उच्च आदर्शों से परिपूर्ण सजिल्द ॥=) सादी ।=)

३—पानी का बुड़बुड़ा—संसार की निःसारता, प्रकृति का सौन्दर्यनिदर्शन, भूगर्भ की सैर और चमत्कारिक घटनायें मूल्य ।=)

४—भयंकर दुर्दशा—चुहचुहाते हुए हास्य रस का अनमोल रत्न पढ़ कर हृदय को प्रफुल्लित कीजिए। मूल्य =)

५—मायामरीचिका—संसार की विचित्रता, मोक्ष का मार्ग, निदर्शन। एक रमणी का सच्चा आत्म त्याग, चरित्रबल बढ़ाने का उपाय। अत्यन्त रोचक व मनोरंजक। मू० ।=)

६—रामचरित्र रामायण—सातों काण्ड अत्यन्त मनोरंजक काव्य-रस परिपूर्ण राम-रहस्य, सुललित दोहा, चैपाई, सोरठा, छन्दों इत्यादिक में निर्मापित है। सजिल्द १) सादी ॥)

७—नवरत्नगीता—ध्यान, कर्म, योगादि क्रियाओं का निर्भ्रान्त वर्णन। महत्त्व-पूर्ण ग्रन्थ है। मूल्य सजिल्द ॥) सादी ॥)

८—हास्यतरङ्ग—चे हू हँसें, न हँसें कबहूँ। और जो नित्य हँसें सो हँसा ही करेंगे। यथा नाम तथा गुण; मूल्य =)

९—चन्द्रप्रभा वैद्यक—उपदंश अर्थात् गर्मी के उत्तमोत्तम नुसखों का संग्रह (देशी चिकित्सा) सर्वोपयोगी है। मू० ।)

विशेष द्रष्टव्यः—इकट्ठी पुस्तकों के खरीदने वाले बुकसेलरों को उचित कमीशन देवेंगे।

पत्रव्यवहार तथा पुस्तकों के मिलने का पताः—

मैनेजर—साहित्य-बन्धु पुस्तकालय

जबलपुर सी० पी०।

## नई पुस्तकें !

# रामचरितमानस

सेंपकरहित असली रामायण

### दुबारा छप कर तैयार होगया ।

आज तक भारतवर्ष में जितनी रामायण छपीं
र आज कल छप कर बिक रही हैं वे सब नक़ली हैं,
ोंकि उनमें कितने ही दोहे-चौपाइयाँ लोगों ने
छे से लिखकर मिला दिये हैं। असली रामायण
केवल इंडियन प्रेस की छपी रामचरित-मानस
है। क्योंकि इसका पाठ गुसाईं जी के हाथ की
ी पोथी से मिला कर शोधा गया है। और भी
तनी ही पुरानी लिखित पुस्तकों से पाठ मिला
ला कर इसमें से कूड़ा-करकट अलग निकाल दिया
ा है। यही विशुद्ध रामायण हमने बड़े सुन्दर और
यम अक्षरों में, बढ़िया काग़ज़ पर, छापी है।
द भी बँधी हुई है। मूल्य केवल २) दो रुपये।

# ारतवर्ष के धुरन्धर कवि

( लेखक, लाला कन्नोमल एम० ए० )

इस पुस्तक में आदि-कवि वाल्मीकि मुनि से लेकर
अब कवि तक संस्कृत के २६ धुरंधर कवियों का
र चन्द कवि से आरम्भ करके राजा लक्ष्मणसिंह
हिन्दी के २८ कवियों का संक्षिप्त वर्णन है।
न कवि किस समय हुआ यह भी इसमें बतलाया
ा है। अब तक कवियों के सम्बन्ध में जितनी पुस्त-
लिखी गई हैं उन से इसमें कई तरह की नवीनता
पुस्तक छोटी होने पर भी बहुत काम की है।
य केवल ।) चार आने।

### तारा

ह कथा

है। बँगला में "दौदाघसहचरी"
। लेखक ने उसी के अनुकरण
., शिक्षा-
में छापा
.. ।।।=

# सूचना

मेरे ग्रन्थ 'गीताय ईश्वरवाद' को हिन्दी में अनुवाद करने का एकमात्र हक़ किसौल, मुरादाबाद के ज्वालादत्त शर्मा को है। किसी और महाशय को दी हुई अनुवाद की आज्ञा को मैं इस सूचना द्वारा मंसूख़ करता हूँ। यदि कोई और मनुष्य उक्त ग्रन्थ का अनुवाद करेगा तो वह हर्जे का देनदार होगा।

१३९ कार्नवालिस स्ट्रीट
कलकत्ता
५ अगस्त १५ ई०

हीरेन्द्रनाथ दत्त ।

## नई पुस्तकें !!

# संक्षिप्तं वाल्मीकीय-रामायणम्

[ संपादक श्री डाक्टर सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ]

आदि-कवि वाल्मीकिमुनिप्रणीत वाल्मीकीय रामायण संस्कृत में बहुत बड़ी पुस्तक है। मूल्य भी उसका अधिक है। सर्वसाधारण उससे लाभ नहीं उठा सकते। इसी से संपादक महाशय ने असली वाल्मीकीय को संक्षिप्त किया है। ऐसा करने से पुस्तक का सिलसिला टूटने नहीं पाया है। यही इसमें बुद्धिमत्ता की गई है। पुस्तक यों तो संस्कृत जानने वाले सर्वसाधारण के काम की है ही, पर कालिज के विद्यार्थियों और संस्कृत की परीक्षा देने वाले विद्यार्थियों के बड़े काम की है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल १) रुपया।

### तरलतरंग

इंडियन प्रेस, प्रयाग, से जो इतिहासमाला निकल रही है उसके सहायक सम्पादक पण्डित सोमेश्वरदत्त शुक्ल, बी० ए० को पाठक जानते ही होंगे। उन्हीं की लिखी हुई यह 'तरलतरंग' पुस्तक संग्रह-रूप में है। इसमें—चूर्ण विलास का अथम उल्लास—एक बढ़िया उपन्यास है। और—शारिवा सम्पादन नाटक तथा चन्द्रहास नाटक—ये दो नाटक हैं। यह पुस्तक विशेष मनोरंजन ही की सामग्री नहीं किन्तु शिक्षाप्रद और उपदेशपूर्ण भी है। मूल्य ॥=) रुपया चार आने।

जर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

॥ श्रीः ॥

विलक्षण प्रतिभा ! दैवी शक्ति ! ! जागता जादू ! ! !

# ॥ अद्भुत साहित्य-संसार ॥

अमृत की वर्षा, आनन्द का समुद्र, स्वर्ग का नंदन कानन, मोक्ष का द्वार, शिक्षाओं का भंडार चमत्कार का आगार, बिलकुल नया आविष्कार,

## अर्थात् देवकर जी के रचित उपन्यास ।

आज हम बड़े हर्ष से अपने विद्या-रसिक पाठकों को यह शुभ संवाद सुनाते हैं कि आज तक नागरी जगत् में बंग भाषा जैसे उपन्यासों का जो अभाव था उसकी पूर्त्ति के लिए हम श्रीयुत बाबू गोकुल राम देवकरजी के उपन्यासों का जिन्हें प्रधान २ नागरी रसिकों, विद्वानों, एवं शिक्षा-समितियों ने सर्वोपयोगी सिद्ध किया है, मुद्रित करना प्रारम्भ कर दिया है। ये उपन्यास चित्ताकर्षण, हृदयरंजन तथा सत्य हितोपदेश के अतिरिक्त उच्च कोटि की शिक्षा देते हैं। अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं, पाठक इसे पढ़ कर देख लें कि "गागर में सागर" वाली कहावत कहां तक सत्य करके दिखलाई गई है :—

१—आदर्शमित्र—पंजाब टेक्ट बुक कमेटी द्वारा स्वीकृत, संसार का मित्र, नव-युवकों का सच्चा सखा, वीरता, प्रतिज्ञता, दुर्व्यसनों के परिणाम की भयानकता, धर्मनिष्ठ न्यायकारियों की न्यायपरायणता और आदर्श मित्रों का विचित्र रहस्य। मूल्य सजिल्द १) सादी ॥।)

२—मनमोहिनी—अपने ढङ्ग का निराला आश्चर्य, कौतूहलयुत, तथा स्त्री-शिक्षा के उच्च आदर्शों से परिपूर्ण सजिल्द ॥=) सादी ।=)

३—पानी का बुड़बुड़ा—संसार की निःसारता, प्रकृति का सौन्दर्यनिदर्शन, भूगर्भ की सैर और चमत्कारिक घटनायें मूल्य ।=)

४—भयंकर दुर्दशा—चुहचुहाते हुए हास्य रस का अनमोल रत्न पढ़ कर हृदय को प्रफुल्लित कीजिए। मूल्य =)

५—मायामरीचिका—संसार की विचित्रता, मोक्ष का मार्ग, निदर्शन। एक रमणी का सच्चा आत्म त्याग, चरित्रबल बढ़ाने का उपाय। अत्यन्त रोचक व मनोरंजक। मू० ।=)

६—रामचरित्र रामायण—सातों काण्ड अति मनोरंजक काव्य-रस परिपूर्ण राम-रहस्य, सुललित दोहा, चौपाई, सोरठा, छन्दों इत्यादिक में लिखित है। सजिल्द १) सादी ॥।)

७—नवरङ्गगीता—ध्यान, कर्म, योगादि क्रिया का निर्भ्रान्त वर्णन। महत्त्व-पूर्ण ग्रन्थ है। मू० सजिल्द ॥।) सादी ॥)

८—हास्यतरङ्ग—ये हु हँसें, न हँसें कभी और जो नित्य हँसें सो हँसा ही करेंगे। यथा नाम तथा गुण; मूल्य =)

९—चन्द्रप्रभा वैद्यक—उपदंश अर्थात् गर्मी उत्तमोत्तम नुसखों का संग्रह (देशी चिकित्सा सर्वोपयोगी है। मू० ।)

विशेष द्रष्टव्यः—इकट्ठी पुस्तकों के खरीदने वाले बुकसेलरों को उचित कमीशन देवेंगे।

पत्रव्यवहार तथा पुस्तकों के मिलने का पता :—

मैनेजर—साहित्य-बन्धु पुस्तकालय

जबलपुर सी० पी०

SARASVATI—Reg. No. A248

भाग १६, खण्ड २ ]  नवम्बर, १९१५  [ संख्या ५, पूर्ण संख्या १९१

# सरस्वती

वार्षिक मूल्य ४) ]  सम्पादक—महावीरप्रसाद द्विवेदी  [ प्रति संख्या ।=)

इंडियन प्रेस, प्रयाग, में छप कर प्रकाशित।

## महाराजा की राय।

राजा दलगञ्जनसिंह देव बहादुर फ़ुलडटरी
पटना स्टेट बोलांगिर, ज़िला सम्बलपुर से

—

र। आपकी भेजी हुई खाँसी की दवा के
हूँ। इस दवा से हमारी खाँसी बिलकुल
। मैंने इसके कुल सात ही ख़ुराक पीये,
ी की दरकार न रही। खाँसी मुझे कई
सताती रहती थी, इसलिये पुनः आपको
ता हूँ।

## फ वो खाँसी की दवा

ड़ी शीशी १) छोटी शीशी ॥)
० म० ।=) वी ।=) आने।

दवा सब जगह बिकती हैं।

## महाराजकुमार की राय।

महाराजकुमार एकदेश्वरसिंह, शङ्कपुर बोलांगिर से लिखते हैं—

यह दूसरा मौक़ा है; आपकी दाद की मलहम ने जादू सा असर दिखाया, जिससे मैंने हर वक़्त की तकलीफ़ से नजात पाई। मैं आपका दिल से मश-कूर हूँ।

## दाद की मलहम।

मोल—।) चार आने डिबिया १ से ६ तक
म० ।-, १२ डिबिया तक ।=)

नक़ली दवा से सावधान!

बराबर स्त्री-जाति की सेवा करनेवाली
में स्त्री शिक्षा की सबसे अच्छी, सस्ती
चित्रों से विभूषित मासिक पत्रिका

## गृहलक्ष्मी

प्रति मास १०
छप रही है

प्रशंसा न कर हम यही अनुरोध करते हैं
गृहलक्ष्मी, प्रयाग, से नमूना भेंगा देखिए

ी के ग्राहकों को भेंगे जिनसे स्त्री-शिक्षा-सम्बन्धी
न्धें इसलिए जिनसे विज्ञापन से मिलती है—
ाक कैसे से मुफ़्त गृहलक्ष्मी के ग्राहकों से

| | | | |
|---|---|---|---|
| ... | ॥) | ... | ।=) |
| ... | ॥) | ... | ।=) |
| दुर्विपाक | १) | ... | ।=) |
| ... | ।=) | .. | ॥) |
| ... | ।=) | ... | ।) |
| ... | ।=) | ... | ।=) |
| | ।) | ... | ।=) |
| | ।) | ... | ।=) |

र, गृहलक्ष्मी, इलाहाबाद।

नई पुस्तक! नई पुस्तक!!

सचित्र

## अद्भुत कथा

यह पुस्तक बाबू श्यामाचरण दे-प्रणीत बँगला के 'बङ्गेर उपकथा' नामक पुस्तक का अनुवाद है। इसमें ११ कहानियाँ हैं। बालक-बालिका एवं सभी मनुष्य स्वभावतः क़िस्से-कहानी सुनने और पढ़ने के अनुरागी होते हैं। इस पुस्तक में ऐसी विचित्र विचित्र हृदयाकर्षक और मनोरञ्जक कहानियाँ हैं जिन्हें सब लोग बड़े चाव से सुनें और पढ़ेंगे। साथ ही साथ उन्हें अनेक तरह की शिक्षा भी मिलेगी। इस में कहानियों के अनुरूप रङ्गने वाले कई चित्र भी दिये गये हैं। मूल्य ॥) डाक्ट आने।

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

महारानी की उदारता

# स्त्री-शिक्षा की तीन हज़ार ३००० पुस्तकें मुफ़्त

१॥) मूल्य की श्रीमती यशोदादेवी कृत ६ पुस्तकें विना दाम मिलेंगी।

१–पातिव्रत धर्ममाला (शास्त्र शिक्षा) ।) २–पातिव्रत धर्म दर्पण ।) ३–सच्चा पति प्रेम ।) ४–घर का वैद्य ।) ५–वनिता-पत्रदर्पण ।) ६–सच्ची सहेली ।)

हमें एक धार्मिका उदार महारानी साहबा ने स्त्रीधर्मशिक्षक के प्रचार के लिये स्त्रियों में सर्वगुण सम्पन्न बढ़िया और धार्मिक पुस्तकों के प्रचार के लिये धनकी सहायता दी है अतएव ऊपर लिखी हुई ६ पुस्तकें बाँटने का निश्चय किया है पुस्तकें छपकर तैयार हैं। जो सज्जन स्त्रीधर्म-शिक्षक के ग्राहक होंगे और ३१ दिसम्बर तक ग्राहकों में नाम लिखवायेंगे उन्हीं को पुस्तकें विनादाम मिलेंगी।

१॥) वार्षिकमूल्य स्त्रीधर्म-शिक्षक और ।)॥ पुस्तकों और पत्र का डाक खर्च कुल १॥) मनीआर्डर से भेजकर या वी. पी. द्वारा मँगा लीजिये। शीघ्रता कीजिये केवल पाँच पाँच सौ प्रतियाँ कुल पुस्तकों की छपी जावेंगी इस प्रकार छहों पुस्तकों की तीन हजार प्रतियाँ मुफ़्त बटेंगी पुस्तकें बँट जानेपर पछताना पड़ेगा क्योंकि पुस्तकों का गुण नाम से ही समझ लीजिये ऐसी उपयोगी पुस्तकें स्त्रियों के लिये दूसरी जगह न मिलेंगी और यह अवसर चूक जाने से फिर कभी मँगाने से हमारे यहाँ भी १॥)में मिलेंगी।

# स्त्रीधर्म-शिक्षक

स्त्री-शिक्षा का सचित्र मासिक पत्र

## सम्पादिका–श्रीमती यशोदादेवी,

भारतवर्ष में इससे सस्ता सरल और उपयोगी स्त्रियों के लिये हिन्दी ही नहीं संसार की किसी भाषा में भी दूसरा कोई पत्र नहीं है।

वार्षिक मूल्य १॥) पुस्तकों का डाकखर्च ।)॥ कुल १॥)

इस समय बीसों हजार स्त्रियाँ इसे पढ़कर लाभ उठा रही हैं।

श्रीमती धार्मिका विदुषी हिन्दी-हितैषिणी नारी-महारानियों द्वारा संरक्षित.

स्त्री-धर्म-शिक्षक में–धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, वैद्यकशास्त्र, ज्योतिष, पुराण, इतिहास, सद्गुणों की चर्चा, भूगोल, विज्ञानशास्त्र, कथा, कहानी, पहेली, चित्रविचित्र, समस्यापूर्ति, ज्ञानवर्धक लेख और शिक्षायुक्त मनोहर उपन्यास, सनातनधर्म, सद्ग्रन्थ और उत्तमोत्तम लिखने के ही लेख रहते हैं

पत्र–श्रीमती यशोदादेवी स्त्री-धर्म-शिक्षक (मासिक) कर्नलगंज, इलाहाबाद।

हमारे यहाँ धोतियों की हर प्रकार की बढ़िया बनावट सस्ती दाम की २० पुस्तकें ११॥) मूल्य की ।) में ही मिलती हैं स्त्रीधर्म शिक्षक के ग्राहकों को—मँगाकर काम उठावें।

विज्ञापन आने सितम्बर की सरस्वती में स्त्रीधर्म शिक्षक के विज्ञापन से देखिए।

## लेख-सूची।


(१) तुलसीदास और रामायण—[ लेखक, पण्डित बदरीनाथ भट्ट, बी० ए० ... ... २६१
(२) परलोकवासी सी० बी० एन० कामा—[ले०, श्रीयुत ब्रजमोहनलाल वर्म्मा ... ... २६१
(३) उज्जैन—[ ले०, ठाकुर कन्हैयालाल ... २६४
(४) ताज़िया—[ ले०, पण्डित रामचीज़ तिवारी २७१
(५) तुलसीदास—[ले०, बाबू मैथिलीशरण गुप्त २७४
(६) मन की दृढ़ता—[लेखिका, "वङ्ग-महिला" २७५
(७) भोजन—[ ले०, पण्डित हीरावल्लभ जोशी २७६
(८) सुमन—[ ले०, श्रीयुत रामचन्द्र टंडन ... २८५
(९) भवाली का स्वास्थ्य-निकेतन—[ ले०, पण्डित ज्वालादत्त शर्म्मा ... ... २८६
(१०) हिन्दुस्तानी सिपाहियों की वीरता [२]—[ले०, अध्यापक लज्जाशङ्कर झा, बी० ए० ... २८७
(११) सबल और निबल—[ ले०, पं० अयोध्या-सिंह उपाध्याय ... ... ... २९०
(१२) तिब्बत के दलाई लामा—[ ले०, पण्डित मातादीन पाण्डेय ... ... ... २९१
(१३) भारतवर्ष—[ले०, पं० रामचरित उपाध्याय २९३
(१४) कृत्रिम नेत्र—[ले० पं० दयाशङ्कर झा, बी० एस-सी०, एल-एल० बी० ... ... २९३
(१५) युद्ध और ब्रिटिश-जाति की क्षमता—[ले०, श्रीयुत सॅट निहालसिंह, लन्दन ... २९५
(१६) दुःख और सुख—[ले०, श्रीगोपाल ब्रह्मचारी ३०१
(१७) पौराणिक राज-वंशों का समय-निरूपण [५]—[ले०, ॰ हरि रामचन्द्र दिवेकर, एम० ए० ... ... ... ... ३०१
(१८) दिनों का नामकरण किसने किया (प्रत्युत्तर)—[ले०, पण्डित हीरानन्द शास्त्री, एम० ए०, एम० ओ० एल० ... ... ३०२
(१९) "व्यर्थ कोप" की शान्ति—[ ले०, पण्डित त्रिविक्रम उपाध्याय ... ... ... ३०६
(२०) अन्तर्जातीय क़ानून—[ले०, पं० अम्बिका-प्रसाद पाण्डेय, एम० एस-सी०, एल-एल बी० ३०९
(२१) भगवद्गीता कब बनी—[ले०, लाला कन्हैया-लाल, एम० ए० ... ... ... ३१२
(२२) विविध विषय ... ... ... ३१५
(२३) पुस्तक-परिचय ... ... ... ३१७
(२४) चित्र परिचय ... ... ... ३१८


## चित्र-सूची।


(१) रावण-भिक्षा } रङ्गीन
(२) कार्तिक }
(३) परलोकवासी सी० बी० एन० कामा, एम० एल-एल० एम०, आई० सी० एस०।
(४) भर्तृहरि की गुफा, उज्जैन।
(५) कालियादेह का महल और कुण्ड, उज्जैन।
(६) सरकारी कोठी, उज्जैन।
(७) वेधशाला ( उत्तरी ध्रुव देखने का स्थान ) उज्जै
(८) चौबीस खम्भे का दरवाज़ा, उज्जैन।
(९) महाकालेश्वर का मन्दिर, उज्जैन।
(१०) भवाली के स्वास्थ्य-निकेतन के कर्म्मचारी, रोगी और दर्शक आदि।
(११) लफ़्टेंट जे० सी० स्माइथ।
(१२) माननीय कप्तान उमर-हयात ख़ाँ तिवाना, आई० ई०
(१३) नं० २३ सिक्ख-पायनियर्स पल्टन के अफ़सर सिपाही।
(१४) तिब्बत के दलाई लामा।
(१५) तिब्बत के ताशी लामा।
(१६) लामों का नाच।
(१७) गोरा, गोर्खा और सिक्ख।
(१८) सिद्धार्थ का गृह-त्याग।
(१९) गोवर्धन का मेला।



## नये चित्र

श्री श्री रामकृष्ण परमहंस देव
आकार—२८" × १८" मूल्य डेढ़ रुपया।

वनविलासिनी
आकार—१८" × १३" मूल्य एक रुपया।

मन्दिर-पथ में एक रमणी
आकार—१८" × १३" मूल्य एक रुपया।

नक़शा मैदान जंग
यह हमने हिन्दी-उर्दू में छपाया है। घर बै लड़ाई की सैर कीजिए। मूल्य आठ आने।

मिलने का पता—
मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

छप गया ! छप गया !! छप गया !!!

भानु-कवि-कृत

# छन्दःप्रभाकर

अर्थात् हिन्दी भाषा का सटीक, सरल और अपूर्व पिङ्गल

❁ तृतीय संस्करण ❁

( नूतन परिशोधित एवं परिवर्धित )

छन्दप्रभाकर की प्रभा, रवि सम कहत बनै न ।
रवि चमकैं दिन बीचहीं, ये चमकैं दिन रैन ॥

पं० गंगाप्रसाद अग्निहोत्री ।

जिस ग्रंथ के लिए हमारे पास नित्य बीसों पत्र आते हैं, जिस ग्रंथ का पहला और दूसरा संस्करण हाथों हाथ बिक चुका है, जिस ग्रंथ ने गुरुतुल्य शिक्षा देकर हिन्दी-संसार में अनेक सुकवि उत्पन्न कर दिये हैं, जिस ग्रंथ की प्रशंसा में क्या हिन्दी क्या अङ्गरेज़ी के पत्रों ने अपने कालम के कालम रंग डाले हैं, जिस ग्रंथ की प्रशंसा संस्कृत, मराठी और बङ्गला तक के विद्वानों ने मुक्त-कंठ से की है, जो ग्रंथ हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-परीक्षा की कोर्स की पुस्तकों में चुना गया है, जिस ग्रंथ को सी. पी. और यू. पी. के गवर्नमेन्ट ने उसकी उपयोगिता के लिहाज़ से स्कूल-लाइब्रेरी में रखने और पारितोषिक देने के लिए मंज़ूर किया है, वही ग्रंथ छंदःप्रभाकर अबकी बढ़िया टाइप में, पुष्ट कागज़ पर, मनोहारी टाइटिल पेज सहित, तीसरी बार अब फिर से छप कर तैयार है। इस संस्करण में विशेषता यह है कि जब इस ग्रंथ के प्रथम और द्वितीय संस्करण छपे, उस समय भानु-कवि महोदय बन्दोबस्त जैसे गुरुतर और जटिल कार्य में संलग्न थे, किन्तु अब आपने पेंशन ले ली है और इस संस्करण को बड़े परिश्रम के साथ शोध कर अत्यंत शुद्ध कर दिया है, साथ ही इस में नये वृत्त भी जोड़े हैं, तथा कविता-सम्बन्धिनी नाना प्रकार की शंकाओं का समाधान भी किया है। अतएव, हम उन पाठकों से भी जिनके पास इस ग्रंथ का प्रथम अथवा द्वितीय संस्करण मौजूद है, ज़ोर के साथ सिफ़ारिश करते हैं कि इस परिशोधित एवं परिवर्धित संस्करण का भी अवलोकन कर अवश्य लाभ उठावें। यह ग्रंथ विद्यार्थी और नवशिक्षित कवि के लिए तो कल्पतरु है ही, किन्तु, प्रौढ़ कवि भी इससे लाभ उठाये बिना न रहेंगे। अध्यापक और पाठकों का तो इसे सर्वस्व ही समझें। पृष्ठ-संख्या डयोढ़ी बढ़ जाने पर भी मूल्य वही १॥), डाक खर्च अलग।

पुस्तक-विक्रेताओं को उचित कमीशन मिलेगा, इसके लिए वे पत्र-व्यवहार करें।

मिलने का पता :—

बाबू जगन्नाथप्रसाद, प्रोप्राइटर—जगन्नाथ प्रेस,

बिलासपुर, सी. पी.

छोटे बच्चों के लिए

# डोंगरे का

## बालामृत.

शीशी का दाम १२ आना

डा० म० ४ आना

## प्रशंसा-पत्र

मि० प्राणशंकर मार्कंडेय, सनवार के महाराजा साहेब के मार्कंडेय लिखते हैं कि:—

"हमारा लड़का इतना दुबला हो गया था कि उसके जीने की भी आशा हमने छोड़ दी थी डोंगरे, डोंगरे का बालामृत पीने से यह लड़का अच्छा हो गया है।"

मि० करीमबहमद, एम० ए० एल्एल० बी हेड मास्टर जूनागढ़ हाई स्कूल लिखते हैं कि:—

"हमारे घर में बच्चों के वास्ते डोंगरे का बालामृत हमेशा लिया जाता है. इस बालामृत 'बालामृत'—'बालों का अमृत'—पर बराबर सार्थ लिखा है।"

पता—वे० टी० डोंगरे कं०, गिरगाँव, मुम्बई।

# चंद्रमुखीकरण

यह दवा विलायती ख़ुशबूदार फूलों की बनी है, इसे विलायत के एक मशहूर डाक्टर ने बनाकर अभी अभी रवाना की है। सात दिन बदन और चेहरे पर मल कर न्हाने से, स्याह रंगत भी गुलाब के फूल की भाँति सुर्ख़ व सफ़ेद, मक्खन की माफ़िक मुलायम हो जाती है। जिस्म से ख़ुशबू की प्यारी २ लहर निकलने लगती हैं, शीतला माता के दाग, आँखों और गालों के स्याह दाग, झाँई छोप झुर्रियाँ मुहासे आदि को मिटा कर ऐसी ख़ूबसूरती आ जाती है कि चेहरा चाँद की माफ़िक चमकने लगता है। तारीफ़ यह है कि जो रंग और ख़ूबसूरती इससे पैदा होती है हमेशा क़ायम रहती है क्योंकि यह घट पोडर नहीं है जिसे बाज़ारी दवायें लगाकर घड़ी दो घड़ी को सफ़ेद चमड़ी कर लेती हैं। अपनी प्राणप्यारी को चन्द्रमुखी बनाना है तो इसे अवश्य मँगाइये। क़ीमत फ़ी बोतल १॥) तीन बोतल एक साथ लेने से पारसल ख़र्चा माफ़।

मिलने का पता—

रमेशचंद्र एण्ड को०,

स्वामीघाट ( की सांव ) मथुरा।

सुनिए ! सुनिए !!

दो रुपये में तीन रत्न

# हीरा ! मोती ! पन्ना !

देर मत कीजिये झटपट पं० रमाकान्त व्यास, राजवैद्य कटरा, प्रयाग के बनाये हुए रत्नों को मँगा कर परीक्षा कीजिये।

१—यदि आपके सिर में दर्द हो, सिर घूमता हो, मस्तिष्क की गरमी और कमज़ोरी आदि हों और जब किसी तेल से भी फ़ायदा न हो तो समझिये कि सिर्फ़ व्यासजी का बनाया हुआ "हिमसागर तैल" ही इसकी अक्सीर दवा है।

यदि अधिक पढ़ने में अधिक मानसिक परिश्रम से थक जाते हों और परीक्षा में पास हुआ चाहते हों तो हिमसागर तैल रोज़ लगायें इससे मस्तिष्क ठण्डा रहेगा। घंटों में समझनेवाली बातें मिनटों में समझ सकोगे। दाम ॥) डाक्टरी।

२—पौष्टिक चूर्ण—शीत ऋतु के लिए अत्युपयोगी। दाम १) डिब्बा।

३—यदि आपको मन्दाग्नि हो, भूख न लगती हो, भोजन के बाद वायु से पेट फूलता हो, जी मचलाता हो, कब्ज़ रहता हो तो "पीयूष गुटी" अथवा पाचक गुटी मँगा कर सेवन कीजिये। यह डिब्बी जिस में ५० गोली रहती है। मूल्य ॥)

दूसरी दवाओं के लिए हमारा बड़ा सूचीपत्र मँगवाकर देखिये।

दवा मंगाने का पता—

पं० रमाकान्त व्यास, राजवैद्य

कटरा—इलाहाबाद।

लो साहब अब तो .खुश हो जाइये

# मुफ़्त लुटाते हैं

# मुफ़्त लुटाते हैं

.खुशबूदार रमेशसाबुन एक वैज्ञानिक रीति से बनाया जाता है जो सिर्फ़ ३-४ मिनट में जलन या तकलीफ़ के बालों को उड़ाकर जिल्द को मुलायम और ऐसा चमकदार कर देता है मानो यहाँ कभी थे ही नहीं। रमेशसाबुन दाद, खाज, और ज़हरीले जानवरों के विष को भी बात की बात देता है इसी सबब रमेशसाबुन के हज़ारों बक्स बिक रहे हैं। रमेश साबुन बड़े बड़े राजे महाराजे साहूकारों के मकान तक आदर पा चुका है। तीन टिकिया मय .खूबसूरत बक्स ।॥) बारह वी० पी० खरचा ।-) लेकिन जो साहब चार बक्स क़ीमती ३) तीन रुपया एक साथ ख़रीदेंगे उनको मेज़ पर रखने की निहायत मज़बूत .खूबसूरत पायेदार फैसनेबिल घड़ी मुफ़्त नज़र करेंगे। वी० खरचा ॥=)

पता—एल० आर० गुप्ता
( बी ब्रांच ) स्वामीघाट, मु

## व्यापार-प्रकाश

तार का काम, चांदी सोने की मुलम्मा घड़ी-साज़ी, फोटोग्राफ़ी, हर क़िस्म की स्याही, कपड़े रंगने का रंग, दियासलाई, सिगरेट, कपड़ा धोने, नहाने और बाल उड़ाने का साबुन, सिज़ाब, रबर की मुहर, बवासीर और ताक़त की दवा ऐसे १३० नुसखे हैं मू० ॥)

## गुप्तविद्या-प्रकाश

मेस्मेरिज़म सायकुरजी मेस्मेरिज़म की मेज़ क्रिस्टो हिप्नोटिज़म मेस्मेरिज़म से दूरदेश का हाल मृतक आत्माओं को बुलाकर बात पूछना, मनुष्य को वेहोश कर बात पूछना। मू० ॥)

## श्री.परोपकारी कार्यालय

## असल मोती का सुरमा

असल मोती तथा और और नेत्रोपयोगी बूटियों द्वारा यह सुरमा तैयार किया गया है। लिये आँखों के लिये बहुत गुणकारक है। आँख की जलन, सुर्खी, पानी का गिरना, धुन्ध दि देना, आँख का खुजलाना आदि आँख के सब रोग हो जाते हैं; जिनको आँख में कोई रोग नहीं है, यह इस सुरमे को हमेशा लगावें तो उनकी तर रहेगी, कोई रोग न होगा; इसके लगाया हु सफ़ेद सुरमा आँख की धुन्धी, फूला, माड़ा आदि लिए रामबाण का काम करता है। हम अपने मुख अपनी चीज़ की बड़ाई करना नहीं अपनी आँखों को आज़मा

४) ६

लो साहब अब तो ख़ुश हो जाइये

# मुफ़्त लुटाते हैं

ख़ुशबूदार रमेशसायुन एक वैज्ञानिक रीति से बनाया जाता है जलन या नक़ली क़ैं के छाला को उड़ाकर जिल्द को मुलायम और ऐसा नर्म यहां कमी थे ही नहीं। रमेशसायुन दाद, खाज, और ज़हरीले जानवरों के विष देता है इसी समय रमेशसायुन के हज़ारों बक्स बिक रहे हैं। रमेश सायुन साहूकारों के मकान तक अन्दर पा चुका है। तीन टिकिया मय ख़ूबसूरत पी० पी० सरचा।-) लेकिन जो साहब चार बक्स क़ीमती 3) तीन रुपया पर मेज़ पर रखने की लहायत मजमून ख़ूबसूरत पायेदार फ़ीसनेबिल घड़ी मुफ़्त सरचा ॥-)

पता—एल० ए
(बी बी

# विज्ञापन

भजन, साखी, उपदेश चौबीस महात्माओं के देश देशान्तर से दुर्लभ लिपियों की नक़ल कर अलग अलग जीवन-चरित्र और टिप्पणी सहित छापे गये हैं—कबीर साहिब, तुलसी साहिब (हाथरसवाले) दादू दयाल, पलटू साहिब, जगजीवन साहिब, चरनदासजी, गरीबदासजी, रैदासजी, मीरा बाई, सहजो बाई, इत्यादि।

एक संग्रह साखियों का और दूसरा शब्दों का छापा गया है। जिस में ऊपर लिखे हुए महात्माओं के थोड़े थोड़े भजन और साखियों के सिवाय सूरदासजी, गुसाईं तुलसीदासजी, कबीरदासजी और आठ महात्माओं की चुनी हुई बानी सहित जीवन-चरित्र सहित छपी है।

जो सज्जन चाहें पूरी फ़िहरिस्त वेलवेडियर प्रेस इलाहाबाद के मैनेजर को लिख कर लें।

## ज़रा इधर देखिये

मंजन के सेवन करने से दांत की चमक हो जाती है, ख़ून का निकलना, मसूढ़े सूजे लगाते लगाते न मालूम कहां गये। दांत मोती के समान उजले और मज़बूत हो जाते हैं।

तेल के लगाने से चाहे कैसा पुराना सिर का दर्द क्यों न पड़ गये हों पर आराम हो जाता है। नोटिस-बोर्ड पर लिखना व्यर्थ है। एक बार हमारे परीक्षण को सफल करें।

कालिकानाथ शर्म्मा

पता सथयाड़ा, फ़र्रुख़ाबाद।

## ब्राह्मण की स्थापना

[illegible] की जीवनी

[illegible])

[illegible] महापुरुष का मूलचरित्र [illegible] ।।)

## नरकिन्नरी।

नरत्वको के उद्धार की अनूठी मासिक पत्रिका।

रङ्गीन चित्रों, उत्तम लेखों और कविताओं से सुसज्जित।

वार्षिक मूल्य ३ रुपया

अभी ग्राहक भरती होने वाले सज्जनों को [illegible]। और एक सचित्र नया रङ्गीन [illegible] भेजा जाएगा।

पता—नरकिन्नरी कार्यालय

[illegible]।

## सचित्र आयुर्वेद

इस पुस्तक में रोगों के [illegible] लाभ सहित और [illegible] के लिये, दवा को [illegible] सरलता और [illegible] के [illegible] लिखे हैं। [illegible] मूल्य [illegible] ।)

## सचित्र पंचांग

[illegible]

[illegible]

[illegible]

## गृहस्थ ऐसी औषधि सब

### को पास रखनी चाहिये

एक ही औषधि मात्रा २-४ बूंद और न केवल लगभग सब रोगों का जो घरों में बहुधा बूढ़ों, बच्चों, जवानों, स्त्री वा पुरुषों को होते रहते हैं, हुक्मी इलाज है, वरन् पशु-रोगों में भी गुण-कारी है ॥

हर जेब, हर घर म, हर ऋतु में मौजूद रहनी चाहिये,

रजिस्टर्ड] **अमृतधारा** [रजिस्टर्ड

अपने प्रकार का दुनिया भर में नवीन आविष्कार है, जिसने एक बार आजमाया, सदा यार बनाया, सैंकड़ों दुर्गों और सैकड़ों के गर्व से इस की एक शीशी क्या सकती है।

कीमत ॥) बड़ी शीशी १।। नमूना ॥। है

## २० हज़ार प्रशंसापत्र मौजूद हैं

सविस्तर वृत्तान्त के वास्ते "अमृत" पु मुफ़्त मँगावें। दो तीन नीचे पढ़िये:—

### मिसिज़ एच, पैटरसन साहि अमेरिका से लिखती हैं:—

"अमृतधारा को ने कुटुम्ब में सेवन करा अन्तःकरण से अनुमोदन करती हूँ कि जिन रोगों वास्ते लिखा है, यह लाभदायक प्रमाणित हुई है

### श्रीमहात्मा मुन्शीरामजी गुरुकु कांगडी से लिखते हैं:—

"प्रिय महाशय पं० ठाकुरदत्तजी, नमस्ते!

२९ नवम्बर की रात को मेरे पेट में दर्द हु ३० नवम्बर की सुबह ५ बजे तक होता रहा, आप से लेकर "अमृतधारा" पी, इससे कुछ ठहरा, दूसरी बार पीने से सर्वथा दूर होगया"।

### श्रीस्वामी नित्यानन्दजी सरस्वत राजोपदेशक शान्तिकुटी शिमला:—

"आप की बनाई अमृतधारा को मैंने और म सज्जनों ने सेवन करके देखा है। सचमुच राम औषधि है, जिन रोगों को आप ने लिखा है उनमें कुछ एक पर सेवन किया तो लेखा लिखा है, वैसा ही पाया। मेरी सम्मति में प्रत्येक मनुष्य के पा अमृतधारा रहनी चाहिए"।

विज्ञापक—

मैनेजर—"अमृतधारा" औषधालय, "अमृतधारा" भवन, "अमृतधारा" सड़क, "अमृ धारा" डाकखाना, लाहौर।

पत्र व्यवहार के वास्ते हमारा पता लिखिये है:— अमृतधारा (सी ग्रांच) लाहौर।

# विज्ञापन

भजन, साखी, उपदेश धार्मिक महात्माओं के देश देशान्तर से दुर्लभ लिपियों की नक़ल करा कर अलग अलग जीवन-चरित्र और टिप्पनी सहित छापे गये हैं—कबीर साहिब, तुलसी साहिब (हाथरसवाले) दादू दयाल, पलटू साहिब, जगजीवन साहिब, चरनदासजी, गरीबदासजी, रैदासजी, दरिया साहिब, मीरा बाई, सहजो बाई, इत्यादि।

एक संग्रह साखियों का और दूसरा शब्दों का छापा गया है। जिस में ऊपर लिखे हुए महात्माओं के थोड़े थोड़े भजन और साखियों के सिवाय सूरदासजी, गुसाईं तुलसीदासजी, काष्ठजिह्वा स्वामी आदि आठ महात्माओं की चुनी हुई बानी संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित छपी है।

जो रसिक जन चाहें पूरी फ़िहरिस्त बेलवेडियर प्रेस इलाहाबाद के मैनेजर को लिख कर मँगवा लें॥

## ज़रा इधर देखिये

दन्तोज्ज्वल चूर्ण के सेवन करने से दाँत की सब बीमारियाँ दूर हो जाती हैं, ख़ून का निकलना, जड़ों का हिलना आदि बातें लगाते लगाते न मालूम कहाँ चली जाती हैं। दाँत सीप के समान उजले और वज्र के समान पुष्ट हो जाते हैं।

खाजनाशन तेल के लगाने से चाहे कैसा पुराना खाज क्यों न हो उसमें घाव भलेही पड़ गये हों पर वह आन की आन में आराम हो जाता है। नोटिस-बाज़ी के ज़माने में अधिक लिखना व्यर्थ है। एक बार इसकी परीक्षा कर मेरे परिश्रम को सफल करें।

आपका काशिनाथ शर्म्मा

मुहल्ला सथवाड़ा, फ़र्रुख़ाबाद।

## जर्मन साम्राज्य की स्थापना

### प्रिंस बिस्मार्क की जीवनी

(सचित्र)

लेखक—श्रीइन्द्रवेदालङ्कार

योरप के वर्तमान महायुद्ध का मूल-कारण जानना हो तो इस ग्रन्थ को अवश्य पढ़ो। मूल्य १॥)

प्रबन्धकर्ता—

आदित्यपुस्तक भंडार, गुरुकुल हरिद्वार।

## तरङ्गिणी।

सरस्वती के टक्कर की अनूठी मासिक पत्रिका।

रङ्गीन चित्रों, उत्तम लेखों और कविताओं से सुसज्जित।

वार्षिक मूल्य ३) रुपया

अभी आर्डर भेजने वालों से २॥) लिया जायगा। और एक सचित्र तथा रङ्गीन तरङ्गिणी-कैलेण्डर मुफ़्त दिया जायगा।

पता—तरङ्गिणी कार्यालय

बनारस छावनी।

## सचित्र आयुःशास्त्र

इस पुस्तक में स्त्री-पुरुषों के जाति-भेद, लक्षण, सहवास और गर्भाधान के नियम, यंत्र, मंत्र, तंत्र मनचाही सन्तान पैदा करने के उपाय, वशीकरण-विद्या, सैकड़ों गुप्त बातें जो ढूंढ़े न मिलेंगी १२२ पृष्ठ मय वशीकरण-यंत्र मू० १) पोस्टेज ≈) दो आना।

## सचित्र पंचरत्न

इसमें कोकविद्या, मैस्मरेज़िम, रसायन, मंत्र, गान-विद्याओं का वर्णन किया है ८४ पृष्ठ मूल्य ॥) महसूल ≈) आना।

पता:—स्वतंत्र आफ़िस

मु० दरियापुर (सर) पोष्ट—हाथरस अंकलान यू० पी०

# ...रहे ऐसी औषधि सब

## को पास रखनी चाहिये

एक ही ओषधि मात्रा २-४ बूंद और न केवल लगभग सब रोगों का जो घरों में बहुधा बूढ़ों, बच्चों, जवानों, स्त्री वा पुरुषों को होते रहते हैं, हुक्मी इलाज है, वरन् पशु-रोगों में भी गुण-कारी है ॥

हर जेब, हर घर म, हर ऋतु में मौजूद रहनी चाहिये,

रजिस्टर्ड] **अमृतधारा** [रजिस्टर्ड

अपने प्रकार का दुनिया भर में नवीन आविष्कार है, जिसने एक बार आजमाया, सदा यार बनाया, बीसों दुखों और सैकड़ों के ख़र्च से इस की एक शीशी बचा सकती है।

क़ीमत २॥) आधी शीशी १।) नमूना ॥) है

## २० हज़ार प्रशंसापत्र मौजूद हैं

सविस्तर वृत्तान्त के वास्ते "अमृत" मुफ़्त मँगावें। दो तीन नीचे पढ़िये।—

### मिसिज़ एच, पेटरसन सां० अमेरिका से लिखती हैं:—

"अमृतधारा को मैं ने कुटुम्ब में सेवन कर अन्तःकरण से अनुमोदन करती हूँ कि जिन रोगों वास्ते लिखा है, यह लाभदायक प्रमाणित हुई।

### श्रीमहात्मा मुन्शीरामजी गुरुकुल कांगड़ी से लिखते हैं:—

"प्रिय महाशय पं० ठाकुरदत्तजी, नमस्ते!

२९ नवम्बर की रात को मेरे पेट में दर्द हुआ ३० नवम्बर की सुबह ५ बजे तक होता रहा, तब आप से लेकर "अमृतधारा" पी, इससे कुछ ही ठहरा, दूसरी बार पीने से सर्वथा दूर होगया"।

### श्रीस्वामी नित्यानन्दजी सरस्वती राजोपदेशक शान्तिकुटी शिमला:—

"आप की बनाई अमृतधारा को मैंने और अन्य सज्जनों ने सेवन करके देखा है। सचमुच रामबाण औषधि है, जिन रोगों को आप ने लिखा है उनमें से कुछ एक पर सेवन किया तो जैसा लिखा है, वैसा ही पाया। मेरी सम्मति में प्रत्येक मनुष्य के पास अमृतधारा रहनी चाहिए"।

विज्ञापक—

मैनेजर—"अमृतधारा" औषधालय, "अमृतधारा" भवन, "अमृतधारा" सड़क, "अमृतधारा" डाकख़ाना, लाहौर।

पत्र व तार के वास्ते इतना पता पर्य्याप्त है:— अमृतधारा (सी आंच) लाहौर।

# निःसन्देह ऐसी ओषधि सब को पास रखनी चाहिये

एक ही ओषधि मात्रा २-४ बूंद और न केवल लगभग सब रोगों का जो घरों में बहुधा बूढ़ों, बच्चों, जवानों, स्त्री वा पुरुषों को होते रहते हैं, हुक्मी इलाज है, वरन् पशु-रोगों में भी गुणकारी है ॥

हर जेब, हर घर म, हर ऋतु में मौजूद रहनी चाहिये,

रजिस्टर्ड] **अमृतधारा** रजिस्टर्ड]

अपने प्रकार का दुनिया भर में नवीन आविष्कार है, जिसने एक बार आजमाया, सदा यार बनाया, बीसों दुखों और सैकड़ों के खर्च से इस की एक शीशी बचा सकती है।

कीमत २॥) आधी शीशी १।) नमूना ॥) है

## २० हज़ार प्रशंसापत्र मौजूद हैं

सविस्तर वृत्तान्त के वास्ते "अमृत" पुस्तक मुफ़्त मँगावें। दो तीन नीचे पढ़िये:—

### मिसिज़ एच, पैटरसन साहिबा अमेरिका से लिखती हैं:—

"अमृतधारा को मैं ने कुटुम्ब में सेवन कराया, अन्तःकरण से अनुमोदन करती हूँ कि जिन रोगों के वास्ते लिखा है, यह लाभदायक प्रमाणित हुई है"।

### श्रीमहात्मा मुन्शीरामजी गुरुकुल कांगडी से लिखते हैं:—

"प्रिय महाशय पं० ठाकुरदत्तजी, नमस्ते!

२९ नवम्बर की रात को मेरे पेट में दर्द हुआ, ३० नवम्बर की सुबह ५ बजे तक होता रहा, तब आप से लेकर "अमृतधारा" पी, इससे कुछ दर्द ठहरा, दूसरी बार पीने से सर्वथा दूर होगया"।

### श्रीस्वामी नित्यानन्दजी सरस्वती राजोपदेशक शान्तिकुटी शिमला:—

"आप की बनाई अमृतधारा को मैंने और अन्य सज्जनों ने सेवन करके देखा है। सचमुच रामबाण औषधि है, जिन रोगों को आप ने लिखा है उनमें से कुछ एक पर सेवन किया तो जैसा लिखा है, वैसा ही पाया। मेरी सम्मति में प्रत्येक मनुष्य के पास अमृतधारा रहनी चाहिए"।

## विज्ञापक—

मैनेजर—"अमृतधारा" औषधालय, "अमृतधारा" भवन, "अमृतधारा" सड़क, "अमृतधारा" डाकख़ाना, लाहौर।

पत्र व तार के वास्ते इतना पता पर्याप्त है:— अमृतधारा (सी ब्रांच) लाहौर।

# विज्ञापन

भजन, साखी, उपदेश चौबीस महात्माओं के देश देशान्तर से दुर्लभ लिपियों की नक़ल करा कर अलग अलग जीवन-चरित्र और टिप्पनी सहित छापे गये हैं—कबीर साहिब, तुलसी साहिब (हाथरसवाले) दादू दयाल, पलटू साहिब, जगजीवन साहिब, चरनदासजी, गरीबदासजी, रैदासजी, दरिया साहिब, मीरा बाई, सहजो बाई, इत्यादि।

एक संग्रह साखियों का और दूसरा शब्दों का छापा गया है। जिस में ऊपर लिखे हुए महात्माओं के थोड़े थोड़े भजन और साखियों के सिवाय सूरदासजी, गुसाईं तुलसीदासजी, काष्ठजिह्वा स्वामी आदि आठ महात्माओं की चुनी हुई बानी संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित छपी है।

जो रसिक जन चाहें पूरी फ़िहरिस्त बेलवेडियर प्रेस इलाहाबाद के मैनेजर को लिख कर मँगवा लें॥

## ज़रा इधर देखिये

दन्तोज्ज्वल चूर्ण के सेवन करने से दाँत की बीमारियाँ दूर हो जाती हैं, ख़ून का निकलना, दाँत का हिलना आदि बातें लगाते लगाते न मालूम कहाँ चली जाती हैं। दाँत सीप के समान उजले और मोती के समान पुष्ट हो जाते हैं।

मुखजनाशन तेल के लगाने से चाहे कैसा पुराना दर्द क्यों न हो उसमें घाव भलेही पड़ गये हों पर घाव की आन में आराम हो जाता है। मोटिफ़-लेने के ज़माने में अधिक लिखना व्यर्थ है। एक बार ही परीक्षा कर मेरे परिश्रम को सफल करें।

आपका काशिनाथ शर्म्मा

मुरला सथवाड़ा, पूर्वखानदेश।

## जर्मन साम्राज्य की स्थापना

### प्रिंस बिस्मार्क की जीवनी

(सचित्र)

लेखक—श्रीरामचन्द्रदेवदत्त

जर्मन के वर्तमान महापुरुष का मूल-वृत्तान्त जो हो तो इस ग्रन्थ को अवश्य पढ़ो। मूल्य ।=)

प्रबन्धकर्ता—

आदित्यपुस्तक भंडार, मुरादाबाद।

## तरङ्गिणी।

सरस्वती के टक्कर की अनूठी मासिक पत्रिका।

रङ्गीन चित्रों, उत्तम लेखों और कविताओं से सुसज्जित।

वार्षिक मूल्य ३) रुपया

अभी आर्डर भेजने वालों से ॥) लिया जायगा। और एक सचित्र तथा रङ्गीन तरङ्गिणी कैलेण्डर मुफ़्त दिया जायगा।

पता—तरङ्गिणी कार्यालय

अलवर छावनी।

## सचित्र आयुःशास्त्र

इस पुस्तक में स्त्री पुरुषों के जाति भेद, स्वभाव, सहवास और गर्भाधान के नियम, पुंस, मंथ, संभ्र प्रसवकाल, सन्तान पैदा करने के उपाय, परीक्षाकरण विधि, सैकड़ों गुप्त बातें जो कहीं न मिलेंगी १२० पृष्ठ मय बहुमूल्य यंत्र मू० १) पोस्टेज ≈) दो आना।

## सचित्र पंचरत्न

इसमें कोकशास्त्र, वैद्यकशास्त्र, स्त्रीधर्म, पत्र, पत्रविलेखों का वर्णन किया है ८० पृष्ठ मूल्य ॥) महसूल ≈) अलग।

एजेन्ट—स्वतन्त्र कार्यालय

मु० इलाहाबाद। अन्य देश—डाकव्यय अतिरिक्त पृ० ही

मृत्यु के समय आप भारत में मध्यप्रदेश के नर्मदा-डिवीज़न के सेशन्स जज थे।

आप पारसी थे। आपका जन्म बम्बई के प्रसिद्ध कामा-वंश में हुआ था। आपके पितामह श्रीयुत एच० बी० कामा, सी० आई० ई०, का बनवाया हुआ बम्बई में एक प्रसिद्ध अस्पताल है। इस अस्पताल का नाम कामा-अस्पताल है। श्रीयुक्त सी० बी० एन० कामा के पिता का नाम एन० पी० कामा था। ये बम्बई हाई-कोर्ट के प्रसिद्ध बैरिस्टर थे।

सी० बी० एन० कामा और उनके भाई का जन्म एक साथ ही हुआ था। ये दोनों भाई यमज थे। इन दोनों के रूप, रङ्ग और आकार-प्रकार में अद्भुत समानता थी। स्वभाव भी दोनों का बिलकुल एक दूसरे से मिलता था। यहाँ तक कि दोनों भाइयों की बुद्धि में भी कोई विभिन्नता न थी। दोनों एक ही तरह लिखते, एक ही तरह पढ़ते और एक ही तरह की कल्पनायें किया करते थे। परीक्षा के समय अलग अलग बिठा कर उत्तर लिखाने पर भी इनके उत्तर एक दूसरे के उत्तर से ज्यों के त्यों मिल जाते थे। लोगों को इनकी इस समानता पर बड़ा आश्चर्य होता था। इन दोनों भाइयों के जन्म के थोड़े ही दिनों बाद एक ज्योतिषी ने इनकी माता से कहा था कि ये दोनों भाई असाधारण बुद्धिमान् होंगे। इन दोनों की शारीरिक बनावट के साथ मानसिक प्रवृत्ति भी ठीक एक ही सी होगी। पर, एक भाई की थोड़ी ही अवस्था में अचानक मृत्यु हो जायगी।

ये दोनों भाई मैट्रिक्स पास करके कालेज में पढ़ने लगे। चार ही वर्ष में दोनों ने बम्बई-विश्वविद्यालय की एम० ए० परीक्षा पास कर ली। बी० ए० की परीक्षा के समय सी० बी० एन० हो सके। एम० ए० व प्रथम हुए। अतएव गवर्न छात्रवृत्ति प्राप्त हुई। छा उच्च शिक्षा की प्राप्ति रवाना हुए।

इँगलैंड में गणित-वि होती है। उसमें पास हो प्रतिष्ठित उपाधि मिलती है और उनके भाई दोनों इसी के विश्वविद्यालय में भरती भाई परीक्षा में उत्तीर्ण हो इन्होंने परीक्षकों को इस कि हम दोनों भाइयों की ले कल्पना-शक्ति एक ही सी दिखाई देने पर हम दोनों किया जाय कि वे एक दू लिखे गये हैं। इस पर परी को दूर दूर बिठाया। पर, लिखे हुए उत्तर देखे तब उ न रहा। दोनों के उत्तर एक वर्णन करने में दोनों ने एक चित्तवृत्ति और मानसिक श हद हो गई। फल यह हु नम्बर मिले और दोनों का न बाकेट के भीतर, रक्खा गया

रेंगलर परीक्षा में पास भारतीय सिविल-सर्विस की हुए। उसमें भी दोनों भाई इसी समय थोड़े से गिर कर मृत्यु हो गई।

सिविल-सर्विस परीक्षा में बी० एन० कामा "सर आइ

सरस्वती "श्री" गरमल [illegible]

ओनरेर

इलाहाबादी सी० बी० एस० डाक्टर एम० ए०,
एल-एल० एम० डाई० सी० एस०

इण्डियन प्रेस, प्रयाग।

मृत्यु के समय आप भारत में मध्यप्रदेश के नर्मदा-डिवीज़न के सेशन्स जज थे।

आप पारसी थे। आपका जन्म बम्बई के प्रसिद्ध कामा-वंश में हुआ था। आपके पितामह श्रीयुत एच० बी० कामा, सी० आई० ई०, का बनवाया हुआ बम्बई में एक प्रसिद्ध अस्पताल है। इस अस्पताल का नाम कामा-अस्पताल है। श्रीयुक्त सी० बी० एन० कामा के पिता का नाम एन० पी० कामा था। ये बम्बई हाई-कोर्ट के प्रसिद्ध बैरिस्टर थे।

सी० बी० एन० कामा और उनके भाई का जन्म एक साथ ही हुआ था। ये दोनों भाई यमज थे। इन दोनों के रूप, रङ्ग और आकार-प्रकार में अद्भुत समानता थी। स्वभाव भी दोनों का बिलकुल एक दूसरे से मिलता था। यहाँ तक कि दोनों भाइयों की बुद्धि में भी कोई विभिन्नता न थी। दोनों एक ही तरह लिखते, एक ही तरह पढ़ते और एक ही तरह की कल्पनायें किया करते थे। परीक्षा के समय अलग अलग बिठा कर उत्तर लिखाने पर भी इनके उत्तर एक दूसरे के उत्तर से ज्यों के त्यों मिल जाते थे। लोगों को इनकी इस समानता पर बड़ा आश्चर्य्य होता था। इन दोनों भाइयों के जन्म के थोड़े ही दिनों बाद एक ज्योतिषी ने इनकी माता से कहा था कि ये दोनों भाई असाधारण बुद्धिमान् होंगे। इन दोनों की शारीरिक बनावट के साथ मानसिक प्रवृत्ति भी ठीक एक ही सी होगी। पर, एक भाई की थोड़ी ही अवस्था में अचानक मृत्यु हो जायगी।

ये दोनों भाई एन्ट्रेंस पास करके कालेज में पढ़ने लगे। चार ही वर्ष में दोनों ने बम्बई-विश्वविद्यालय की एम० ए० परीक्षा पास कर ली। बी० ए० की परीक्षा के समय सी० बी० एन० कामा का स्वास्थ्य कुछ ख़राब था। किन्तु दूसरे वर्ष कालेज के प्रिन्सिपल और बम्बई-विश्वविद्यालय की उदारता से आप बी० ए० और ए० एम० दोनों कक्षाओं की परीक्षाओं में एक ही साथ सम्मिलित हो सके। एम० ए० की परीक्षा में दोनों भाई प्रथम हुए। अतएव गवर्नमेंट से दोनों भाइयों को छात्रवृत्ति प्राप्त हुई। छात्रवृत्ति प्राप्त करके दोनों उच्च शिक्षा की प्राप्ति के लिए इंगलैंड को रवाना हुए।

इंगलैंड में गणित-विषयक एक उच्च परीक्षा होती है। उसमें पास हो जाने पर रैंगलर की प्रतिष्ठित उपाधि मिलती है। सी० बी० एन० कामा और उनके भाई दोनों इसी परीक्षा के लिए केम्ब्रिज के विश्वविद्यालय में भरती हुए। यथासमय दोनों भाई परीक्षा में उत्तीर्ण हो गये। परीक्षा के पहले इन्होंने परीक्षकों को इस बात की सूचना दी थी कि हम दोनों भाइयों की लेखन-शैली, विचार और कल्पना-शक्ति एक ही सी है। अतएव समानता दिखाई देने पर हम दोनों के उत्तरों पर सन्देह न किया जाय कि वे एक-दूसरे की कापी देख कर लिखे गये हैं। इस पर परीक्षकों ने दोनों भाइयों को दूर दूर बिठाया। पर, जब उन्होंने दोनों के लिखे हुए उत्तर देखे तब उनके आश्चर्य्य का ठिकाना न रहा। दोनों के उत्तर एक से थे। एक फूल का वर्णन करने में दोनों ने एक ही सी ग़लती की थी। चित्तवृत्ति और मानसिक शक्ति की समानता की हद हो गई। फल यह हुआ कि दोनों को तुल्य नम्बर मिले और दोनों का नाम एक ही ब्रैकेट के भीतर, रक्खा गया।

रैंगलर परीक्षा में पास होकर दोनों भाई भारतीय सिविल-सर्विस की परीक्षा में सम्मिलित हुए। उसमें भी दोनों भाई पास हो गये। पर इसी समय घोड़े से गिर कर एक भाई की अचानक मृत्यु हो गई।

सिविल-सर्विस परीक्षा में उत्तीर्ण होकर सी० बी० एन० कामा "सर आइज़क न्यूटन" नाम की छात्रवृत्ति प्राप्त करने के लिए उम्मेदवार हुए। यह छात्रवृत्ति गणित और ज्योतिष के प्रौढ़ विद्वान् को मिलती है। कितने ही वर्षों से यह किसी अँगरेज़ को भी न मिली थी। सी० बी० एन० कामा

सरस्वती "श्री" जरमल-[illegible]
ओंकोर

परलोकवासी सी० बा० एस० कामा एम० ए०,
एल-एल० एम० बार-ऐट-ला सी० एस०

इण्डियन प्रेस, प्रयाग।

मृत्यु के समय आप भारत में मध्यप्रदेश के नर्मदा-डिवीज़न के सेशन्स जज थे।

आप पारसी थे। आपका जन्म बम्बई के प्रसिद्ध कामा-वंश में हुआ था। आपके पितामह श्रीयुत एच० बी० कामा, सी० आई० ई०, का बनवाया हुआ बम्बई में एक प्रसिद्ध अस्पताल है। इस अस्पताल का नाम कामा-अस्पताल है। श्रीयुक्त सी० बी० एन० कामा के पिता का नाम एन० पी० कामा था। ये बम्बई हाई-कोर्ट के प्रसिद्ध बैरिस्टर थे।

सी० बी० एन० कामा और उनके भाई का जन्म एक साथ ही हुआ था। ये दोनों भाई यमज थे। इन दोनों के रूप, रङ्ग और आकार-प्रकार में अद्भुत समानता थी। स्वभाव भी दोनों का बिलकुल एक दूसरे से मिलता था। यहाँ तक कि दोनों भाइयों की बुद्धि में भी कोई विभिन्नता न थी। दोनों एक ही तरह लिखते, एक ही तरह पढ़ते और एक ही तरह की कल्पनायें किया करते थे। परीक्षा के समय अलग अलग बिठा कर उत्तर लिखाने पर भी इनके उत्तर एक दूसरे के उत्तर से ज्यों के त्यों मिल जाते थे। लोगों को इनकी इस समानता पर बड़ा आश्चर्य्य होता था। इन दोनों भाइयों के जन्म के थोड़े ही दिनों बाद एक ज्योतिषी ने इनकी माता से कहा था कि ये दोनों भाई असाधारण बुद्धिमान् होंगे। इन दोनों की शारीरिक बनावट के साथ मानसिक प्रवृत्ति भी ठीक एक ही सी होगी। पर, एक भाई की थोड़ी ही अवस्था में अचानक मृत्यु हो जायगी।

ये दोनों भाई एन्ट्रेंस पास करके कालेज में पढ़ने लगे। चार ही वर्ष में दोनों ने बम्बई-विश्वविद्यालय की एम० ए० परीक्षा पास कर ली। बी० ए० की परीक्षा के समय सी० बी० एन० कामा का स्वास्थ्य कुछ ख़राब था। किन्तु दूसरे वर्ष कालेज के प्रिन्सिपल और बम्बई-विश्वविद्यालय की उदारता से आप बी० ए० और ए० एम० दोनों कक्षाओं की परीक्षाओं में एक ही साथ सम्मिलित हो सके। एम० ए० की परीक्षा में दोनों प्रथम हुए। अनएव गवर्नमेंट से दोनों भाइयों छात्रवृत्ति प्राप्त हुई। छात्रवृत्ति प्राप्त करके उच्च शिक्षा की प्राप्ति के लिए इँगलैंड रवाना हुए।

इँगलैंड में गणित-विषयक एक उच्च परी होती है। उसमें पास हो जाने पर रैंगलर प्रतिष्ठित उपाधि मिलती है। सी० बी० एन० क और उनके भाई दोनों इसी परीक्षा के लिए कें के विश्वविद्यालय में भरती हुए। यथासमय दो भाई परीक्षा में उत्तीर्ण हो गये। परीक्षा के प इन्होंने परीक्षकों को इस बात की सूचना दी कि हम दोनों भाइयों की लेखन-शैली, विचार कल्पना-शक्ति एक ही सी है। अतएव समा दिखाई देने पर हम दोनों के उत्तरों पर सन्दे किया जाय कि वे एक-दूसरे की कापी देख लिखे गये हैं। इस पर परीक्षकों ने दोनों भा को दूर दूर बिठाया। पर, जब उन्होंने दोनों लिखे हुए उत्तर देखे तब उनके आश्चर्य्य का ठिक न रहा। दोनों के उत्तर एक से थे। एक फूल वर्णन करने में दोनों ने एक ही सी ग़लती की थ चित्तवृत्ति और मानसिक शक्ति की समानता हद हो गई। फल यह हुआ कि दोनों को तु नम्बर मिले और दोनों का नाम एक ही श्रेणी ब्राकेट के भीतर, रक्खा गया।

रैंगलर परीक्षा में पास होकर दोनों भ भारतीय सिविल-सर्विस की परीक्षा में सम्मिलि हुए। उसमें भी दोनों भाई पास हो गये। इसी समय घोड़े से गिर कर एक भाई की अचान मृत्यु हो गई।

सिविल-सर्विस परीक्षा में उत्तीर्ण होकर सी० बी० एन० कामा "सर आइज़क न्यूटन" नाम छात्रवृत्ति प्राप्त करने के लिए उम्मेदवार हुए। यह छात्रवृत्ति गणित और ज्योतिष के प्रौढ़ विद्वा को मिलती है। कितने ही वर्षों से यह किसी अँगरेज़ को भी न मिली थी। सी० बी० एन० का

सरस्वती "श्री" गरमल-[illegible]
बीकानेर

परलोकवासी सी० वी० एन० कामा एम० ए०,
एल-एल० एम० आई० सी० एस०

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

सकी प्रवेश-परीक्षा पास करके वृत्ति प्राप्त ली। इसके बाद आपने बैरिस्टरी की परीक्षा ा की। इसी बीच में आपने यूरोप की भिन्न र कई एक भाषाओं का अध्ययन भी कर ा। सन् १९०४ ईसवी में, केवल २६ वर्ष की में, आप विलायत से भारत लौट आये।

भारत आकर आप मध्य-प्रदेश की सिविल-र्विस में प्रविष्ट हुए। उस प्रान्त में आप नरसिंह-, छिंदवाड़ा, रायपुर, अमरावती और होशङ्गा द आदि ज़िलों के असिस्टेंट कमिश्नर, डिस्ट्रिक्ट और सेशन्स जज आदि पदों पर काम ते रहे।

यहाँ आकर आपने देशी भाषाओं का अध्ययन ारम्भ किया। सिविल-सर्विस के मुलाज़िमों को त्तवर्ष की एक न एक भाषा सीखना आवश्यक । किन्तु आपने भारत की एक नहीं अनेक ाषायें सीख लीं। हिन्दी, उर्दू, गुजराती, बँगला, ड़िया, मराठी आदि मुख्य मुख्य प्रचलित भाषाओं अतिरिक्त आपने संस्कृत, पाली, अरबी और ारसी का भी उत्तम ज्ञान प्राप्त कर लिया। इन ब भाषाओं की परीक्षायें आपने सानन्द के साथ स कर लीं। इस कारण आपको कोई २६ हज़ार पया इनाम में मिला। आपने अरबी पढ़ाने के लिए ाहब से एक मौलवी बुलाया था। संस्कृत और ारसी भी आपने अच्छे अच्छे विद्वानों की सङ्गति में सीखा था। इस प्रकार कोई २० भाषाओं आप पूरे पण्डित थे। उनमें आप बख़ूबी लिख र और बात-चीत कर सकते थे।

सी० बी० एन० कामा भारत के बड़े भक्त थे। ारत का प्रचार के लिए आप बड़े ही उत्साही थे। आपका हृदय यहाँ की कविता देख कर विकच ो जाता था। आप कहा करते थे कि यदि इङ्गलैण्ड के का प्रारम्भिक शिक्षा-विभाग इस देश की भारत की कविता कोश ही दूर हो जाती। प्रान्त में एक स्वतन्त्र विश्वविद्यालय स्थापित ने के आप बड़े पक्षपाती थे।

आपकी सुयोग्यता के कारण बड़े बड़े सरकारी अफ़सर आपकी इज़्ज़त करते थे। विद्या के लिहाज़ से आप मध्य-प्रदेश में सबसे प्रथम आसन ग्रहण करते थे। सिविल-विभाग की सूची से पता चलता है कि आप जैसा बहुभाषाभिज्ञ पदाधिकारी इस समय सिविल-सर्विस में और कोई नहीं। आपकी न्याय-शीलता, उदारता और दया को वही जानते हैं जिन्हें कभी आपसे काम पड़ा है या जिन्होंने आपके अधीन काम किया है।

प्रचलित भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर लेने के बाद आपने पुरातन और लुप्त भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करना आरम्भ किया था। आपने मृत्यु के कुछ मास पहले से चैल्डियन* (Chaldian), असीरियन (Assyrian) और तिब्बती भाषाओं का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया था।

आप कलकत्ते की रायल एशियाटिक सोसायटी के फेलो (सभासद्) थे। मृत्यु के एक दिन पहले आपने उसे अपनी कोई ७ हज़ार पुस्तकें दान कर दीं। इन ७ हज़ार पुस्तकों में से एक भी ऐसी नहीं जिसे आपने आद्योपान्त न देखा हो और जिसमें आपके लिखे नोटस न हों। गत जनवरी में आप, सिंदवाड़े के पारसी ग्यारेलालजी मिश्र वैरिस्टर-एट-ला के बनवाये हुए, हिन्दी के प्रसिद्ध कवि तुलसीदासजी की रामायण का अध्ययन कर रहे थे। आप और दो विद्वानों के साथ मिलकर उसका एक संस्करण करने के विचार में थे।

कोई ६ वर्ष हुए, आपने विवाह नागपुर के प्रसिद्ध पारसी सज्जन, सर कावसजी दादाभाई, की कन्या से हुआ था। आपकी कामा विदुषी कन्या है। इसने अपने पिता से भी अधिक मुख्यता इस देश में प्राप्त की है।

* [illegible]

श्रीयुत कामा ने काफी राइट एक पर एक पुस्तक लिख कर विलायत भेजी थी। इस पर वहाँ से आप को 'मास्टर आव् ला' की उच्च उपाधि मिली। युद्ध छिड़ जाने पर आप सेंसर (Censor) के आफ़िस में काम करने के लिए बुलाये गये थे। पर आपने जाने से अनिच्छा प्रकट की।

श्रीयुत कामा को मरते समय इस बात का बड़ा शोक रहा कि वे अपनी विदुषी और सुशीला गृहिणी से इतनी जल्दी जुदा हो गये*।

कामा महाशय ने जिन जिन ज़िलों में काम किया वहाँ वहाँ के लोग आप पर बड़ी श्रद्धा और प्रीति रखते थे। आपका हर काम विचारपूर्ण और पक्षपातरहित होता था। मध्य-प्रदेश के निवासी आपके सदृश उदारहृदय और पक्षपातहीन न्याय-कर्त्ता के न्याय से बहुत सन्तुष्ट थे। शोक है कि यह अधखिला फूल असमय में ही मुरझा गया।

मर्ज़े मर्ग से आजिज़ है ख़ुदाई सारी।
सद फलातूं को यहाँ हाथ ही मलते देखा।

ब्रजमोहनलाल वर्म्मा।

---

## उज्जैन।

मध्य-हिन्दुस्तान में मालवा-प्रान्त बहुत बड़ा है। उसमें अनेक राजा, महाराजा, रईस और जागीरदार हैं। वे इन्दौर के पोलिटिकल एजेंट के अधीन हैं। मालवे में महाराजा ग्वालियर का राज्य अधिक है। मालवे की भूमि आस पास की भूमि से बहुत ऊँची है। यहाँ की मुख्य नदी चम्बल है। उसमें कई एक छोटी छोटी सहायक नदियाँ हैं। विन्ध्याचल पर्वत भी दूर तक फैला हुआ है। यहाँ की भूमि बड़ी ही उपजाऊ है। भिन्न भिन्न प्रकार का अधिकता से उत्पन्न होता है। गेहूँ, ज्वार, बाजरा, म अलसी, चना, रुई, अफ़ीम, गन्ना इत्यादि बहुत चीज़ें से दूर देशों को भेजी जाती हैं। कहीं कहीं जङ्गल भी उनसे इमारत की लकड़ी अधिक मिलती है।

आज कल मालवे की बोली हिन्दी, मराठी, गुज और मारवाड़ी का मिश्रण है। इसको मालवी भाषा कहते इस भाषा में आज तक कोई ग्रन्थ नहीं लिखा गया। प यही-खाते, लेन देन के लेख और कुछ खेल की कि इस भाषा में हैं। यहाँ के प्राचीन निवासी भील, ग और सांसी हैं। बनजारे और कालबेलिये (साँप वाले) इन्हीं में से निकले हैं। बरगुण्डों की बोली निराली वह और किसी बोली से नहीं मिलती। मालवे के बड़े सीधे, दयालु, मिलनसार और शान्त-स्वभाव वाले हैं। इन्हें पगड़ी बाँधने का बड़ा शौक़ है। स्त्रियों में प परदा नहीं। जैनी, मारवाड़ी बनिये, और बोहरे बड़े व्या और दूकानदार होते हैं। पहले यहाँ का व्यापार द गुजरात और पूरब के देशों से अधिक था। पञ्जाब से ब लोग मेवा लाया करते थे। इस बात का पता पुराने और पड़ावों से लगता है।

मुझे उज्जैन का हाल लिखना है। इस लिए म का थोड़ा सा इतिहास पहले लिखे देता हूँ। मा मुख्य नगर—उज्जैन, राजगढ़, नरसिंहगढ़, भूपाल, इ धार, जावरा, महेश्वर, नीमच आदि हैं। परन्तु इतिहा लिए बहुत पुराने और प्रसिद्ध स्थान ये हैं—साँची, उ उज्जैन (अवन्तिका), रायसिन, (भूपाल के निकट) म (देवास के पहाड़ों में) और मारूपुर।

मालवे का पुराना इतिहास नहीं मिलता। मुसल के लिखे इतिहास से भी इस विषय में कुछ पता चलता। हिन्दुओं के लेख और इतिहास तो नष्ट हैं। यहाँ शिलालेख और ताम्रपत्र बहुत कम मिलने सम्भव है, यदि प्राचीन स्थान खुदाये जायँ तो यह म पूरी हो जाय। अवन्तिकाखण्ड नामक ग्रन्थ में केवल स्थान, मन्दिर, तीर्थयात्रा और दान-पुण्य का वर्णन इसमें इतिहास कुछ भी नहीं। मुहम्मद क़ासिम फ़रिश्ता

---

* "Though not afraid of dying I leave behind me such a good gentle soul devoted to me and my family as such a tender life to me [illegible]"

मर्कंडेश्वर की गुफा ( प्रकाश ) ।

अखण्डेश्वर ( प्रकाश ) ।

चित्र प्रेस, प्रयाग ।

वेधशाला, उत्तरी ध्रुवदेखने का स्थान ( उज्जैन )।

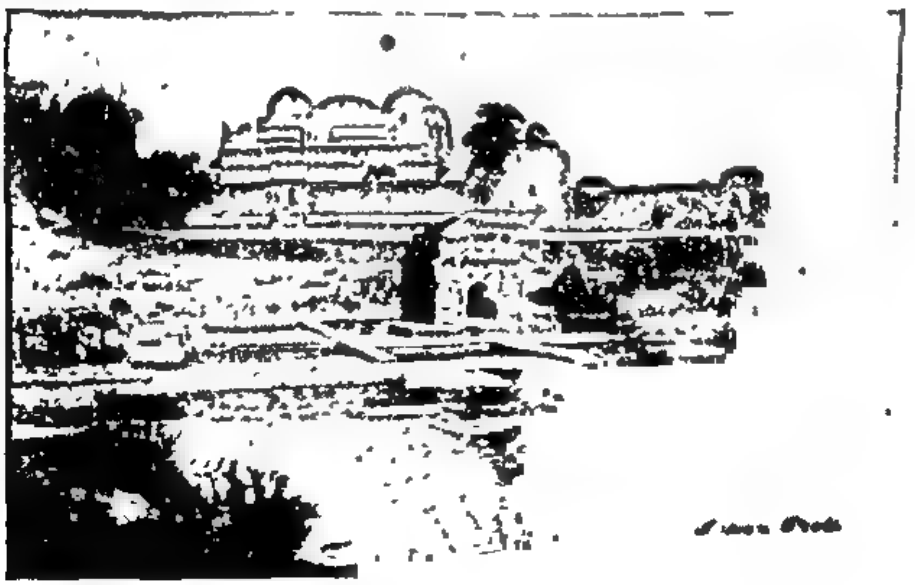

कालियादेह का महल और कुण्ड ( उज्जैन )।

( इंडियन प्रेस, प्रयाग।

फ़रिश्ता ने मालवे का हाल लिखा है। उसने हिन्दू मुसलमान शासकों के नाम भी लिखे हैं। परन्तु उसके में बहुत अन्तर मालूम पड़ता है। इन्दौर के पोलिटिकल ट इंजी साहब के समय में एक मुन्शी ने मालवे का हास लिखा था। वह कुछ तो अँगरेज़ी ढँग का है और फ़रिश्ता के ढँग का। राजाओं की वंशावली में भी द है।

मालवे का कुछ थोड़ा सा इतिहास अँगरेज़ी मराठी दों की किताबों में मिलता है। उससे यह पता ता है कि पहले मालवे की दो राजधानियाँ थीं—मांडू अवन्तिका। कभी कोई राजा मांडू में रहता, कभी न्तिका में। अशोक का राज्य उज्जैन में था। उसके द पुत्र राजा हुए। इस वंश का राज्य सन् ४०१ ईसवी रहा। फिर हूण-जाति ने यहां राज्य किया। इसके छे, कन्नौज के राजा हर्षवर्द्धन का राज्य हुआ। इस समय तक बौद्ध-धर्म्म का भारत में बड़ा ज़ोर था। तदनन्तर मालवे में परमार-राजाओं का राज्य प्रारम्भ हुआ। उनमें ज आदि बड़े बड़े प्रतापी राजा हुए। यशोवर्मा के समय एक शिलालेख का अर्धांश उज्जैन में एक मसजिद के म मिला है। वह संस्कृत में है। उसमें लिखा है कि सन् ११३१ में मालवाधीश यशोवर्मा पर अनहिलपट्टण राजा जयसिंह ने चढ़ाई करके उसे हरा दिया और मालवे अपना अधिकार कर लिया।

मालवे में परमार-वंश का राज्य सन् १३०० ईसवी तक हा। अब भी मालवे में कई जगह परमारों का राज्य है। मारों के बाद अलाउद्दीन ख़िलजी ने मालवा फ़तह किया। उसके बाद यहां के मुसलमान सूबेदार स्वतन्त्र हो गये और सन् १४०१ से सन् १५६१ तक राज्य करते रहे। उनमें शरिफ़ीन और दिलावरख़ाँ ग़ोरी बड़े प्रसिद्ध हो गये हैं। बहादुरशाह गुजराती ने भी कुछ दिन तक मालवे पर राज्य किया। उसके बाद शेरशाह का झण्डा उड़ा। शेरशाह के बाद मालवा अकबर के हाथ लगा। औरङ्गज़ेब के समय में ह जयपुर के राजाओं के अधीन था। कुछ दिन तक निज़ाम ी भी यहां अधिकार रहा। सन् १७१० ईसवी में बालाजी जीराव पेशवा को दिल्ली के बादशाह की तरफ़ से मालवे के धिकार की सनद मिली। तब शेनोई सेन्धिया पेशवों की ार से मालवे के अधिपति हुए।

उज्जैन हिन्दुओं की सात पवित्र पुरियों में से है। उसके अनेक नाम हैं—अमरावती, अवन्तिका, कनकशृङ्ग, कुमुद्वती, कुशस्थली, पद्मावती, प्रेतकल्पा, शिवपुरी, विशाला इत्यादि। स्कन्दपुराण और अवन्ति खण्ड में इस नगर की अपूर्व महिमा वर्णित है। हिन्दू मानते हैं कि भग महाकाल यहां सदा ही निवास करते हैं। सिप्रा में स्नान करना बड़ा पुण्य माना जाता है। यहां मुण्डन करवाने और पिण्डदान करने से पितृगण तृप्त होते हैं। चम्बल से सिप्रा मिल कर उज्जैन के दक्षिण से उत्तर की ओर बहती है। उसके किनारे किनारे सुन्दर घाट और मन्दिर हैं। कुछ स्थलों का विवरण नीचे दिया जाता है।

## सिद्धवट।

जैसे प्रयाग में अक्षयवट है उसी तरह यहां सिद्धवट है। वह सिप्रा के किनारे एक सुन्दर घाट पर है। उसके सामने ही सिद्धनाथ महाराज की मूर्त्ति है। स्थान बड़ा रमणीय है। जल अथाह भरा हुआ है। अनेक जलचर जलक्रीड़ा करते रहते हैं। उन्हें यहां चबेना आदि मिला करता है। बड़े बड़े विशाल घाट बने हैं। यहीं पर मुण्डन होता है और पिण्डदान किया जाता है। यात्रियों के ठहरने के लिए एक बड़ी धर्मशाला है। इसको, २० वर्ष हुए, सेठ रामचन्द्रजी ने बनवाया था। कार्त्तिक शुक्ला १३ और १४ को यहां बड़ा मेला लगता है। मालवे और निमाड़ प्रान्त के बहुत यात्री यहां आते हैं। सिप्रा नदी पार करके सिद्धवट के घाट को जाना पड़ता है। मेले के समय एक कच्चा पुल बनवा दिया जाता है। कभी कभी पुल के न होने से लोग नावों द्वारा आते जाते हैं। गाड़ी-घोड़े वाले बड़ा चक्कर काट कर यहां पहुँच सकते हैं। यदि एक पक्का पुल बनवा दिया जाय तो लोगों को इतना कष्ट न हो। सिद्धवट के निकट सरकारी संस्कृत जेल है। उसमें चप्पलें, चरखे, दरियां और कालीन बुने जाते हैं। कुछ दूर चल कर कालभैरव का मन्दिर है। इस मन्दिर का दरवाज़ा बड़ा सुन्दर है।

## कालियादेह।

सिद्धवट से करीब दो मील के अन्तर पर, नदी के निकट, उत्तर की ओर, कालियादेह नामक स्थान है। यहां नदी की दो धारें हो गई हैं। बीच में एक टापू सा है।

काल की है। इस मसजिद के एक ओर बहुत से बिल्लोची लोग बसते थे। इस लिए इस महल्ले का नाम बिलोचीपुरा हो गया है। आज कल जो अनन्तनारायण का मन्दिर है वह नेया है। वह इस मसजिद के पीछे नदीतट पर है।

## घाट।

नदी के इस तरफ़ सिंह-पर्व में उदासी साधु ठहरते हैं। उस पार गुरु दत्त का अखाड़ा है। उसमें गुसाईं साधु ठहरते हैं। कुछ दूर बागीचों में दूसरे साधु, निर्मले और दादूपन्थी आदि, ठहरते हैं। सिंहस्थ में बड़ा आनन्द आता है। यह मेला हर बारहवें बरस उज्जैन में हुआ करता है। एक महीने तक बड़ी धूमधाम रहती है। वैशाख-शुक्ला पूर्णिमा को अन्तिम स्नान होता है। वैरागी और उदासी इस ओर, गुसाईं उस ओर, स्नान करते हैं। संवत् १९६६ के मेले में महाराजा ग्वालियर ने लाखों रुपया ख़र्च करके मेले का अच्छा प्रबन्ध कराया था। अन्त में साधुओं को दान-दक्षिणा देकर वे हर्षपूर्वक विदा किये गये। इस मेले में हज़ारों साधु, सन्त और भिखारी आते हैं। हज़ारों गृहस्थ भी साधुओं के दर्शन और इस शुभ अवसर पर सिप्रा-स्नान के लिए यहां आते हैं।

## हरसिद्धि देवी।

यह परमार-राजपूतों की कुल-देवी समझी जाती है। उज्जैन में यही मुख्य देवी है। पर इसका मन्दिर बिलकुल नया है। मालूम होता है कि इसका पुराना मन्दिर तोड़ दिया गया। कहते हैं, राजा विक्रम और शालिवाहन दोनों ही इस देवी की पूजा किया करते थे। इस मन्दिर के सामने दो दीपमालिकायें बनी हैं। यहां कभी कभी रोशनी होती है। इन दीप-स्तम्भों में बड़ी भारी कारीगरी है। हर दीवट में बेल-बूटे हैं। पशुओं और पक्षियों की मूर्त्तियां भी हैं। एक दीप-स्तम्भ कुछ पुराना सा मालूम होता है। उसकी बनावट में भी कुछ अन्तर है। इस मन्दिर के पास की एक बावड़ी में एक छोटा सा खम्भा है। उसमें चारों ओर बड़ा बारीक काम है। उस पर संवत् १४४७ खुदा हुआ है।

## सरदारसिंह की छतरी।

इसी मन्दिर के बाहर दक्षिण की ओर पिरजोदा मोता नामक मैन्यान के महाराज सरदारसिंहजी की एक छोटी सी छतरी है। मालूम होता है कि वे संवत् [illegible] में यहां पर लड़ाई में मारे गये थे।

## महाकाल।

हरसिद्धि के दर्शन करके महाकाल में आइए। [illegible] मुक़ाम बहुत प्राचीन है और आस पास की ज़मीन से ऊंचा है। इस स्थान को कोट (गढ़) कहते हैं। इस चारों ओर बड़ी बड़ी दीवारें थीं और दीवारों के पास [illegible] का बड़ा ख़न्दक था। एक तरफ़ हरसिद्धि [illegible] तालाब सुनते हैं, यह मन्दिर राजा विक्रम ने बनवाया था। कालिदास ने भी अपने ग्रन्थों में इस मन्दिर की, इसके आस पास राज-भवनों की और यहां के राजाओं की प्रशंसा लिखी है।

इस मन्दिर के चौक में बड़ी बड़ी धर्मशालायें और पाठशालायें थीं। बड़े बड़े पण्डित, शास्त्री और ज्योतिषी यहां रहा करते थे। साधु-संन्यासी भी रहते थे। दूर से विद्यार्थी यहां विद्याभ्यास के लिए आया करते थे। हिन्दू-राजाओं के महल भी यहीं थे। अभी तक उनके चिह्न बने हैं। एक दो जगह बौद्ध-मूर्त्तियां भी देखी जाती हैं।

सन् १२३० ईसवी में सुलतान अल्तमश ने इस नगर पर चढ़ाई की। उसने तमाम मन्दिर तुड़वा डाले; मूर्त्तियां खण्डित करवा दीं। इसी ने महाकाल का भी मन्दिर तुड़वाया और उसके आस पास की दीवारें गिरवा दीं। अब भी दीवारों के कुछ अंश शेष हैं। महाकाल की मूर्त्ति के टुकड़े वह दिल्ली ले गया। सब बड़ी बड़ी इमारतें ढहा दी गईं। मुसलमानों का ज़ोर बढ़ता गया। पास ही इन्होंने एक महल बनवाया और पूर्वोक्त तालाब के निकट ही इसे खुदवाया। बाग़ीचे लगे और महाकाल के मन्दिर के स्थान पर मसजिद बनवाई गई। कुण्ड को अतीत हम्माम के पानी में लाते रहे। हम्माम के निशान अब तक मौजूद हैं। बहुत दिनों तक महाकाल की यात्रा बन्द रही। जो मसजिद मुसलमानों ने बनवाया था उसको आमगुम्बज कहते थे। उसमें मालवे के सुलतान और दिल्ली के बादशाह के सूबे रहा करते थे। कुंवे को अब तक इसी नाम से पुकारते हैं। सौभाग्य से मालवा बालाजी बाजीराव के हाथ आया। उसने रामचन्द्र नामक एक शेणवई ब्राह्मण को यहां का [illegible] बनाया। उसे महाकाल और हरसिद्धि के मन्दिर

बाने का हुक्म भी उसने दिया। ये दोनों मन्दिर उसी समय में, सन् १७४२ में, बने।

आनन्दराम महल खँडहर हो गया है। महाराज हजारी सेन्धिया का महल भी यहाँ बना हुआ है। अन्यान्य यह प्रसिद्ध सरदारों के महल भी यहाँ हैं। महाकाल मन्दिर मालवे में बहुत प्रसिद्ध है। यहाँ का शिवलिङ्ग भारत के १२ ज्योतिर्लिङ्गों में से है। श्रावण में और दूसरे समय महाकाल की सवारियाँ बड़े धूमधाम से निकलती हैं। यह मन्दिर बड़ा सुन्दर है। शिखर की बनावट अद्भुत है। मानों ८४ लिङ्गों के मुकुट महाकाल पर हैं। पर, नीचे के खम्भों में बड़ा अन्तर दीखता है। एक प्रकार का है, दूसरा दूसरे प्रकार का। महाकाल गुफा में विराजते हैं। दूसरी ओर एक और मन्दिर है। महाकाल का पुराना मन्दिर कहते हैं। इस मन्दिर के ऊपर, दो तीन और मन्दिर हैं। उनमें बौद्ध और जैन लोगों की कारीगरी दृष्टिगोचर होती है। उनकी छतों में बड़ी सुन्दर चित्रकारी है। पुराने मन्दिर के पास एक बहुत बड़ा खँडहर है। उसके पत्थरों से ज्ञात होता है कि यहाँ किसी समय कुछ भवन थे। यदि यह स्थान खोदा जाय तो कुछ बातें मालूम हों।

इसी कोट (गढ़) की हद में एक बहुत पुराना दरवाज़ा है जिसे लदाव का बना हुआ है। कमानी का नाम निशान नहीं। पत्थर बहुत बड़े बड़े हैं। दरवाज़े की छत ज़मीन से ५० फुट ऊँची मालूम होती है। आश्चर्य है, इतनी ऊँचाई पर पत्थर कैसे ले गये होंगे। दरवाज़ा बहुत ऊँचा है। हाथी के हौदी समेत भीतर जा सकता है। यह ११०० वर्ष का पुराना दीखता है। पत्थरों के जोड़ों में कहीं गारा नहीं। दरवाज़े में बड़े बड़े चौबीस खम्भे हैं। दरवाज़े के बाहरी खम्भों की पूजा होती है। खम्भों पर बड़ा भैंसे काटे जाते हैं। कहते हैं, राजा भोज का प्रधान था। उसी ने यह दरवाज़ा बनवाया। इस दरवाज़े पर किसी समय बहुत्तरियों की चौकी थी। अब भी कालिका के मन्दिर में और इस ऐसी दूसरी कन्याओं की मूर्तियों में सुई चुभो कर खून निकाला जाता है। यह देवी पर चिढ़ाना जाता है। ऐसा करने से रक्त निकलता है। ऐसे के समय दो घर बाद के सब दरवाज़ों पर कहीं भैंसे, कहीं बकरे, काटे जाते हैं। शराब की भी अविच्छिन्न धारा बहती है।

लदाव का यह बड़ा दरवाज़ा २४ खम्भों की देवी का दरवाज़ा कहलाता है। इसके खम्भों में कहीं कोई लेख भी होगा। पर, सिन्दूर के मारे उसका पता नहीं लगता। यह भवन विक्रम के समय का नहीं, किन्तु परमार-राजपूतों के समय का है। नहीं मालूम मुसलमान अत्याचार के पञ्जे से यह कैसे बच गया। सम्भव है, पुराने समय में लोग और महाकाल के मन्दिर को लोग इसी दरवाज़े से आते जाते रहे हों।

## बेगम का बाग़।

कोट (गढ़) के बाहर दक्षिण दिशा में बेगम का बाग़ है। यह बाग़ सागर के किनारे है। बनावट से यह बहुत पहिला मालूम होता है। इस समय मदरसे, हम्माम, सराय और अच्छे अच्छे बागीचे थे। मीठे और शीतल जल के कुँवे भी बड़े हैं। मुग़लानी नामक एक सुदेहा इसमें रहती थी। जब उसकी बेटी का देहान्त हुआ तब उसने बेटी की याद्गार में एक दरगाह बनवाई। इस काम को हुए २२२ वर्ष का समय हुआ। आज कल हिन्दू और मुसलमान स्त्रियाँ इस दरगाह पर अक्सर जाती हैं और चढ़ावे चढ़ाती हैं। अब यह स्थान धूल में मिल गया है। केवल दरगाह ही इसी दशा में रह गई है। इस मक़बरे के हर तरफ़ संगमरमर की पट्टियों पर अरबी और फ़ारसी भाषाओं में बहुत अच्छे अच्छे लेख खुदे हैं। इन लेखों में दरगाह की तारीफ़ और तारीख़ है। इस तरह पुरुषों की दरगाह में आने की मनाही है। पर स्त्रियाँ जैसा चाहा होगा जब मुक़द्दमा बड़ा मुक़द्दमा की मौत करता होगा। अक्सर, ऐसा कर मुक़द्दमा, ऐसा कर मुक़द्दमा।

## शनैश्चर।

कुछ दूर पर एक मन्दिर, एक बावड़ी और एक बाग़ है। यह मन्दिर शनैश्चर महाराज का है। मन्दिर के सामने एक हौज़ और बना है। हौज़ में फ़व्वारा लगा है। इस हौज़ से एक कुँवे का रास्ता बड़ा पहुँचाया गया है। इस कुँवे का जल बहुत है।

महात्मा मुहम्मद साहब एक मरतबा हुए तब उनके सिर हुसैन करने के मालिक को भेज कर उनसे पूछताछ की उनके बाद खलीफा का अधिकारी कौन होगा। वही साहब ने कहा कि पहले अधिकारी मुकर्रर होंगे, उनके पीछे हसन के पुत्र हसन, तत्पश्चात् हसन के पुत्र उसमान। इस पर मालिक ने सिर पूछा कि तीसरा खलीफा कौन होगा। उत्तर मिला कि पुत्रों का ज्ञाता होगा।

मुहम्मद साहब के परलोक होने पर उनके कथनानुसार उपर्युक्त तीनों महानुभाव खलीफा हुए। हजरत उसमान के मरने पर मालिक ने खलीफा का पता किया। क्योंकि मुहम्मद साहब ने उसमान के पश्चात् पूछने वाले को ही अधिकारी बताया था और पूछने वाले वही हजरत मालिक थे। इस बात से कहा कि हो सकता है कि मैं भी खलीफा कर भेजा जा। अतः उस समय खलीफा के पूछने जाता हूँ या और मुझे ही खलीफा नियुक्त कर दिया।

हजरत अली मुहम्मद साहब के दामाद थे और शिष्य भी थे। सम्भव है कि यही साहब से उनको भी पूछने जाना कहा हो। अली के ये पहले पुत्र थे। अली ने ही मालिक को उनके पास भेजा था। मालिक, महान विद्वानों के समकक्ष थे। ये हुआ कि मालिक अपने अधिक काल से ले लेते रहे। इनके उपरान्त, हजरत अली और उनके बेटे साले खलीफाओं के अधिकारी हुए। मालिक के बेटा बाजी को अधिकारी होने का एक यह भी कारण होगा कि मालिक के पुत्र मालिक के समकक्ष हुए। ये जैसे हजरत अली के बेटे ही थे। ये जैसे हजरत अली के बेटे ही थे। ये जैसे हजरत अली के बेटे ही थे।

दिनों के नियुक्त किये हुए इब्न मुलजिम नामक घातक के हाथ से मसजिद में नमाज़ पढ़ते घायल हुए। घातक ने तलवार से उनके कन्धे पर गहरा घाव कर दिया। तत्काल ही इमाम के सहचरों द्वारा वह पकड़ा गया। हजरत अली ने उसी दम उसे मार डालना चाहा। इमाम साहब ने ऐसा करना अन्याय बता कर कहा कि—"यदि मैं जीता बच जाऊँ तो उसके साथ कोई बुरा बरताव न किया जाय। पर अगर मैं भी इसका छोड़ देना ही अच्छा है। तुम लोग अपने क्रोध को न बढ़ने देना। यदि मेरे मरने के बाद तुम भी उसी तलवार से उतना ही बदला लेना चाहो, तो मेरे मरने के पश्चात् ही लेना। उसने मुझ पर कि एक ही वार किया है"। इमाम साहब के कथनानुसार दो एक दिन में घातक के कथनानुसार घातक ने एक ही वार किया। उसके बाद यह भी मर गया।

अलबत्ता अली के बाद हजरत हसन ही खलीफा हुए। ये अली के बड़े पुत्र थे। अली ने, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, अपने पुत्रों से कहा कि मालिक इनके अधिकारी होंगे। इससे साबित होता है कि हसन मालिक से बड़े थे।

हसन के दस लोग कर इसन ही के कथनानुसार यह भी कारण होगा कि मालिक के पुत्र मालिक के समकक्ष हुए। ये जैसे हजरत अली के बेटे ही थे। ये जैसे हजरत अली के बेटे ही थे।

ी, अर्थात् जहां जय प्राप्त हुआ है। यह नगर सिप्रा के
ने तट पर दक्षिण और उत्तर दिशा में बसा हुआ है। सिप्रा
धारी में आ जाने और आस पास सैकड़ों वृक्षों और
ु बागीचों के होने से यह नगर दूर से बिलकुल ही
दिखाई देता। लम्बाई इसकी चौड़ाई से अधिक है।
के बीचों बीच एक बहुत बड़ा राज-मार्ग है। उसके
ोर हर तरह की दूकानें हैं। इसी को बड़ा बाज़ार
है। परन्तु इस बाज़ार के हर एक भाग का अलग
नाम है। सर्राफ़ा बाज़ार बड़ा सुन्दर है। यहां
ही साहूकार, महाजन, व्यापारी, हुण्डीवाल और सेठ
हैं। अफ़ीम का व्यापार यहां बहुत होता था, पर,
अब बाज़ार में फीकापन नज़र आने लगा है। रुई
ापार धीरे धीरे उन्नति कर रहा है। आशा है, वह
के घाटे को शीघ्र ही भुला देगा। उज्जैन में देशी
बहुत बनता था। कई एक कारखाने और बहुत सी
थीं। वे सब अब नाम-शेष हैं। छीपी लोग अभी
ाई और दुपट्टों पर रँगाई का काम करते हैं। छपाई
ी है। पर, वह बात नहीं जो पहले थी। आमनुमा
ां बहुत अच्छे बनते हैं। इन्हें यहां वाले "केरी"
। इनकी बड़ी मांग है। ये दूर दूर तक भेजे जाते
ी लोग देसी जूते बहुत बढ़िया बनाते हैं। कंघे
भी बहुत अच्छी बनती है और बाहर भेजी जाती
सुरम और धूप उत्तम मिलती है। बेला के सफ़ेद
र कलियों से बड़े सुन्दर और मनोहर हार बनते
प्रकार के हार और कहीं नहीं गूँथे जाते। गुड़
यहां बहुत होती थी, पर बाहर का माल अब यहां
ता है। इस कारण गुड़ कम बोया जाता है।
पड़ों से साड़ियां और मोटा कपड़ा अब तक यहां
ता है।

से महाराजा माधवराव सिंधिया ग्वालियर की
विराजे तब से उज्जैन की काया पलट गई है। एक
लेज बन गया है और कई एक अन्य पाठशालायें
गई हैं। उनमें हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू,
फ़ारसी और संस्कृत भाषायें पढ़ाई जाती हैं।
ोग्राफ़, इतिहास आदि विषय भी सिखलाये
ते हैं। एक अजायबघर बहुत अच्छा बना है। उसमें
रोगियों की अधिक सुधि ली जाती है। सरकारी पलटन
की छावनी भी यहां है। महाराजा साहब की कोठी देखने
लायक़ है। उसके समीप एक सुन्दर बाग़ीचा भी है। रुई
के सोलह सत्रह कारख़ाने यहां हैं। दो पुतलीघर भी हैं।
कुछ समय पहले उज्जैन हैज़े का घर समझा जाता था।
पर, महाराजा साहब की कृपा से अब नगर में निर्मल जल
के नल लग गये हैं। इससे महामारी का खटका अब
बिलकुल मिट गया है।

उज्जैन की लोक-संख्या प्रायः ३१,००० है। मुसलमानों
से हिन्दू अधिक हैं। सब जाति के ब्राह्मण यहां बसते हैं।
बोहरे लोग, जो बड़े बड़े दूकानदार और व्यापारी हैं, शिया-
पन्थ के मुसलमान हैं। उनका पहनावा बहुत पुराना और
बादशाही ढंग का है। उनकी स्त्रियां हिन्दुओं का जैसा पहनावा
पहनती हैं। ये लोग गुजराती बोली बोलते हैं। उज्जैन में
इन लोगों का बहुत बड़ा पेशा है।

उज्जैन के आस पास दो चार रणभूमियां भी हैं। पर
उनका वर्णन यहां नहीं किया जाता। सुनते हैं कि प्राचीन
काल में यहां १०,००० मन्दिर थे। परन्तु अब तो केवल
२००० अथवा २१०० देवस्थान रह गये हैं। २० या २५
बड़ी बड़ी धर्मशालायें हैं। यहां हज़ारों यात्री ठहर सकते
हैं। ४—५ अन्नसत्र भी हैं। यहां सैकड़ों साधु सन्तों,
भिखारियों और दीन-दुखियों को नित्य भोजन मिला करता
है। नगर में एक गोशाला है। उसमें अनेक गायों की रक्षा
होती है। पहले तो अनेक शिवा बनी हो गई हैं उनके
कई एक स्तम्भ अब तक यहां खड़े हैं।

दामोदर कृष्णचन्द्र (उज्जैन)

## ताज़िया।

ग्वालियर के प्रायः सभी पाठकों ने एक न एक बार ताज़ियादारी अवश्य देखी होगी। पर अधिकांश लोग शायद यह न जानते होंगे कि ताज़िये शब्द में क्या है और ये क्यों उठाये जाते हैं। अतएव इनके अर्थ-निरूपणादि द्वारा हम ताज़ियों का ऐतिहासिक वृत्तान्त सुनाते हैं।

## जयसिंहपुरा।

उज्जैन के एक कोने में, दक्षिण ओर, यह महल्ला है। जयपुरनरेश राजा जयसिंह का कुछ दिन तक यहां अधिकार था। राजा गिरधर यहां का हाकिम था। राजा जयसिंह की बनवाई वेधशाला यहां पर है। इस वेधशाला को यहां वाले यन्त्रमहल कहते हैं। दिल्ली, काशी, मथुरा और जयपुर में भी इसी प्रकार की वेधशालायें हैं। यह सन् १७३३ ईसवी की है। वेधशाला के सब स्थान अभी तक बने हुए हैं। पर वे खँडहर से हो गये हैं। यह मुहल्ला भी राजा जयसिंह के नाम से ही जयसिंहपुरा कहाता है। शत्रुओं के हमले रोकने के लिए उज्जैन के आस पास नगर-कोट भी बनवाया गया था। वेधशाला के पास नदी में दो कुँवे हैं। ये पहले नदी के किनारे खेत में थे। पर, मिट्टी के कटने और धार के बदलने से अब बीच में आ गये हैं। बड़े पक्के हैं। ऊपर शिखर पर पत्थरों में रस्सियों के चिह्न हैं। एक कुआ आधा है और दूसरा समूचा। ये छः सात सौ वर्ष के पुराने मालूम होते हैं।

## कारवान सराय।

यह सराय बीच नगर में है। बहुत बड़ी है। निरी पत्थर की है। कहते हैं कि अकबर बादशाह के समय में यह बनी थी। नीचे छत में बहुत भारी खम्भे हैं। ऊपर बड़े बड़े पत्थर पटे हैं। कुछ भाग नष्ट हो गया है, परन्तु अधिक भाग मौजूद है। इसके सब के सब पत्थर हिन्दू-मन्दिरों के हैं।

## पञ्चक्रोशी।

यह यात्रा वैशाख मास में होती है। वैशाख बदी दशमी के दिन लोग नागचन्द्रेश्वर के दर्शन करके यात्रा प्रारम्भ करते हैं। नगर से पाँच कोस दूर चारों दिशाओं में चार सिद्धलिङ्ग हैं। एक एक सिद्धलिङ्ग के दर्शन करके यात्री आगे बढ़ते जाते हैं। चार दिन में चारों लिङ्गों की यात्रा करके ये नगर को लौट आते हैं। कुछ लोग रोज़ रोज़ एक एक लिङ्ग की यात्रा करके घर चले आते हैं। अमावास्या के दिन सब यात्री यात्रियों का स्नान और दर्शन करके मङ्गलघाट पर मेले में एकत्र होते हैं। वे फिर नागचन्द्रेश्वर के दर्शन करके घर चले जाते हैं। पञ्चक्रोशी का बड़ा माहात्म्य है। दूर दूर से लोग यहां आते हैं। मेले में बड़ी भीड़ रहती है। सरकारी बन्दोबस्त रहता है। पथिक राह न भूलें, इस लिए मार्ग में चिह्न बना दिये जाते हैं। दिन में लोग वृक्षों की शीतल छाया के तले पड़ाव करते हैं। रात में ठण्डे ठण्डे चलते हैं। रात को वहीं शिव-मन्दिरों के निकट विश्राम करते हैं। सवेरा होते ही स्नान, दर्शन करके दूसरी ओर चल देते हैं। भारत में केवल दो ही पञ्चक्रोशी में पञ्चक्रोशी की यात्रा होती है। एक काशी में, दूसरी अवन्तिका में।

## कालियादह का दरवाज़ा।

यह दरवाज़ा बाज़ार में कालियादह गांव की ओर है। दुर्गा-अष्टमी पर यहां बकरा चढ़ता है। हिन्दू लोग विवाह शुभ कार्य्य के समय अथवा कोई शुभ कार्य्य करके इस द्वार से नहीं आते जाते। शव लेकर भी यहां से नहीं निकलते। नित्य साधारण काम-काज के लिए ही लोग जाते हैं। मुसलमान आदि तो सब काम के लिए इसी द्वार से निकलते हैं। हिन्दू लोग समझते हैं कि इस द्वार में कोई प्रेत या पिशाच वास करता है। कुछ लोग कहते हैं कि हिन्दुओं और मुसलमानों में एक बार यहां लड़ाई हो गया था। किसी किसी का मत है कि यहां शराब और गोश्त की दुकानें थीं। पर, अब यह बात नहीं।

## गोपालमन्दिर।

बीच बाज़ार में गोपालजी का मन्दिर है। बिल्कुल पत्थर का है। बड़ा सुन्दर है। संवत् १८१२ में महाराज दौलतराव सेन्धिया की रानी बैजाबाई ने इस मन्दिर को बनवाया था। ऊपर का गुम्बज़ सङ्गमरमर का है। भीतर किवाड़ों और देहली में चांदी का काम है।

## सात सागर।

अब जब अधिक मास आता है तब तब सात सागर अर्थात् सात तालाबों में लोग स्नान करते हैं। ये सातों को दान दक्षिणा भी देते हैं। एक भारी मेला इन सातों सागरों के घाटों पर बड़ा लगता है।

## उज्जैन की वर्त्तमान दशा।

उज्जैन शब्द के दो अर्थ हैं—(१) ज + ऊँचा, जिसका मतलब यह कि—जहां ऊँचा धर्म्म का नाश हुआ है। (२) ज

सरस्वती

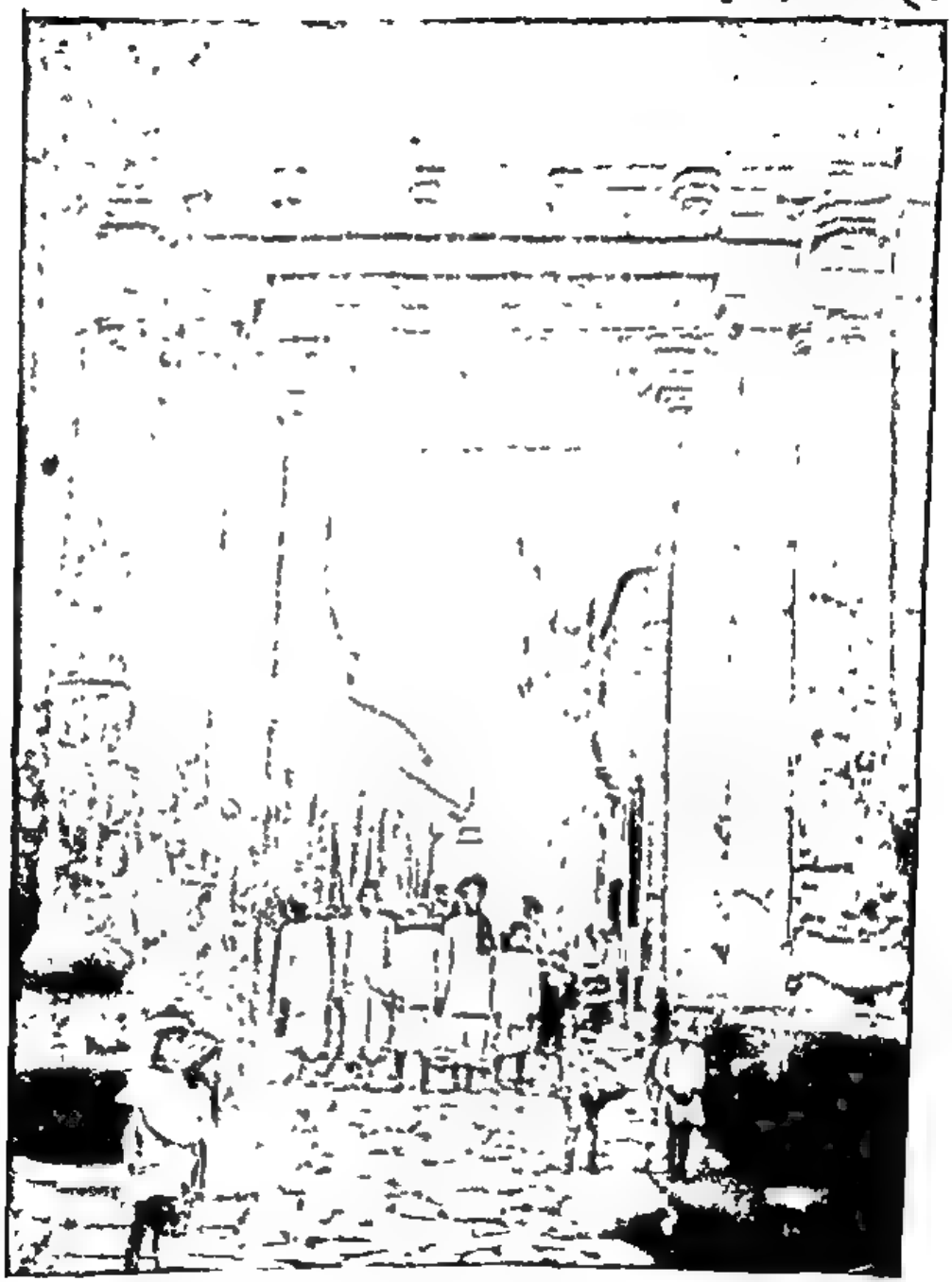

बीसों खंभे का दरवाज़ा ( सजैन )।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

महात्मा मुहम्मद साहब जब मरणासन्न हुए तब उनके शिष्य हज़रत अली ने मावियां को भेजकर उनसे पुछवाया कि उनके बाद ख़लाफ़त का अधिकारी कौन होगा। नबी साहब ने कहा कि पहले अधिकारी अबूबकर सिद्दीक़ होंगे, उनके पीछे खत्ताब के पुत्र उमर, तत्पश्चात् अफ़्फ़ान के पुत्र उसमान। इस पर मावियां ने फिर पूछा कि तदनन्तर ख़लीफ़ा कौन होगा। जवाब मिला कि पूछने वाला होगा।

मुहम्मद साहब के प्राणान्त होने पर उनके कथनानुसार उपर्युक्त तीनों महानुभाव ख़लीफ़ा हुए। इमाम उसमान के मरने पर मावियां ने ख़लाफ़त का दावा किया। क्योंकि मुहम्मद साहब ने उसमान के पश्चात् पूछने वाले को ही अधिकारी बताया था और पूछने वाले यही हज़रत मावियां थे। हज़रत अली ने कहा कि मैंने आपको अपना दूत बनाकर भेजा था। अतः उस समय वास्तविक पूछने वाला मैं था और मुझे ही ख़लाफ़त मिलनी चाहिए।

हज़रत अली मुहम्मद साहब के दामाद थे और शिष्य भी थे। सम्भव है कि नबी साहब ने उनको ही पूछने वाला कहा हो। क्योंकि वे जानते भी थे कि अली ने ही मावियां को उनके पास भेजा था। जो हो, बहुत वितण्डावाद के अनन्तर यह निश्चित हुआ कि मावियां अपने जीवन काल में ख़लीफ़ा रहें। इसके उपरान्त, हज़रत अली और उनके बेटे पीछे ख़लाफ़त के अधिकारी होंगे। मावियां के बाद हज़रत अली के बेटे दोनों का अधिकारी निश्चित होने का एक यह भी कारण लिखा है कि उस समय मावियां के पुत्र यज़ीद अपने बुरे आचरणों से समाज के सामने ख़लाफ़त पाने के अयोग्य प्रमाणित हो चुके थे। ये लोग इतिहासों में ऐसे ही बदनाम हैं। उन्होंने एक बार एक बदचलनी की, जिसके दण्ड को हज़रत अली ने तिलाञ्जलि की बराबर है मार डाला था, इसलिए कि वह किसी दल या दोनों साहबों का हाथ कटने का बदला है। [illegible] हज़रत अली वाली बदचलनी के लिये नियुक्त किये हुए इब्न मुलजिम नामक घातक के हाथ से मसजिद में नमाज़ पढ़ते समय आहत हुए। घातक ने तलवार से उनके कन्धे पर एक गहरा घाव कर दिया। तत्काल ही इमाम साहब के सहचरों द्वारा वह पकड़ा गया। हज़रत के सम्बन्धियों ने उसी दम उसे मार डालना चाहा। परन्तु इमाम साहब ने ऐसा करना अन्याय बताकर फ़रमाया कि—"यदि मैं जीता बच जाऊँ तो इसके साथ कोई बुरा बरताव न किया जाय। और मैं मर जाऊँ तो भी इसका छोड़ देना ही अच्छा होगा। कदाचित् तुम लोग अपने क्रोध को न रोक सको, इसे दण्ड देना ही चाहो, तो मेरे मरने के पीछे इसके कन्धे पर भी उसी तलवार से उतना ही घाव करो देना जितना कि इसने मुझ पर किया था। बस यही न्याय-दण्ड है"। इमाम साहब उसी घाव की यन्त्रणा के कारण दो एक दिन में सुरलोक सिधार गये। उनके कथनानुसार घातक के कन्धे पर भी ठीक उतना ही गहरा घाव किया गया। दो चार दिन कष्ट भोगने के बाद वह भी इस लोक से चल बसा।

यज़ीद की यह करतूत प्रकट हो जाने पर देश भर में खलबली मच गई। लोगों ने मावियां की ख़लाफ़त के विरुद्ध विद्रोह करना चाहा। हज़रत अली के बड़े पुत्र हसन ने, जो मुहम्मद साहब के नाती थे, मावियां से कहा कि आप शाम प्रान्त में आकर शासन कीजिए और यह प्रान्त मेरे लिए छोड़ दीजिए। इससे सहमत होकर मावियां दमिश्क चले गये और मदीना-प्रान्त हज़रत हसन के हाथ रहा गया।

यज़ीद ने यह सोच कर कि मेरे पिता के पश्चात् शाम प्रान्त भी हसन ही को मिलेगा, हसन को विष खिलवा दिया कि यह अपने पति को किसी प्रकार मार डाले। मावियां प्रबल होगी है। यह इस [illegible] में था नहीं। इमाम हसन को [illegible] पिलाया गया। पर कुछ न हुआ। मावियां ने उसका [illegible]

ना सुने न रहा। हसन के अनुयायियों को सब
ें मालूम हो गई। इस बार उनकी वीरता जागी
ी। यज़ीद को इसका प्रतिफल चखाने के लिए
ी सोच कर वे डट गये हुए। रण की दुन्दुभी
ने लगी। नक्कारे शब्द करने लगे। "या अली!"
धूम मच गई। वृक्ष का टहना भी वज्र कर
ाड़ा फाड़ने लगा। वीर घोड़े आज्ञा के
ा इमाम हुसैन के फाटक पर पहुँचे। परन्तु
ा इमाम हुसैन! धन्य तुम्हारी सहिष्णुता!
ा तुम्हारी उदारता! उन्होंने कापुरुषता से नहीं
ी मौत से नहीं, धनलाभ के भय से भी नहीं,
ी हिंसा के डर से, एक के लिए अनेक के
ए होने के भय से, अपने बन्धु-बान्धवों का कारण
ेष्टा बना कर मीठे वचनों से सब को शान्त
ा सब लोग क्रोध को पीकर अपने अपने घर
गये।

इसके उपरान्त हुसैन अपने मृत भाई हसन के
र प्रतिष्ठित हुए। इन्हीं दिनों माविया का पर-
्यास हो जाने से उसका अधिकार यज़ीद को
ुआ। यज़ीद ने हुसैन से उनका मुरीद बनने
ए कहला भेजा। हुसैन साहब ने उत्तर दिया
कि वे सच्चरित्र तथा निर्दोष होते तो अवश्य
की शिष्यता स्वीकार कर लेता। किन्तु वे
नहीं हैं। उनके समान अपवित्र, भ्रष्ट-चरित्र
क्रूर व्यक्ति का मैं कदापि मुरीद नहीं हो
ा। उत्तर ठीक ही था, पर यज़ीद को इससे
ी चोट लगी। हुसैन साहब भी यह जान गये।
यह भी भली भाँति मालूम हो गया कि लोगों
माड़ कर उसके विरुद्ध खड़ा करने का सन्देह
ज़ीद ने मुझ पर किया है, जो किसी प्रकार
नहीं हो सकता। अतः वह अवश्य उपद्रव
ा। इन कारणों से खलाफ़त छोड़ कर शान्ति-
जीवन व्यतीत करने के लिए वे बाल-बच्चों-
मदीना से काबे शरीफ़ को चले गये।

कूफ़ा के लोगों ने यह समाचार पाकर उनको
वहाँ रहने के लिए आग्रहपूर्वक बुला भेजा।
हुसैन साहब ने पहले अपने चचेरे भाई मुसलिम
को बाल-बच्चों-समेत वहाँ भेजा। मुसलिम ने वह
पहुँच कर, कुछ दिन बाम करने के उपरान्त, हुसैन
साहब को लिखा कि आप निर्भय चले आवें। यहाँ
के अधिवासियों के हृदयों में निःसन्देह आप के विषय
में अपूर्व भक्ति है। पत्र पढ़कर हुसैन साहब कुफ़ा
जाने को तैयार हुए और वहाँ वालों को इसकी
सूचना दे दी।

गुप्तचरों से यह समाचार पाते ही यज़ीद ने
ओबैदुल्ला को, १२ हज़ार सिपाहियों का सेनापति
बनाकर, कूफ़ा की ओर भेजा। कुफ़ा में उस
समय हुसैन साहब के आगमनोपलक्ष्य में नाना
प्रकार के उत्सव हो रहे थे। लोगों की एक बृहत्
संख्या सभा-मण्डप में एकत्र थी। नाच गान हो
रहा था। चतुर ओबैदुल्ला, हुसैन साहब का कपट-
वेश बना कर तथा उन्हीं की सी पोशाक पहन कर,
नगर में घुसा और सभा में जा पहुँचा। सभा के
लोगों ने हुसैन साहब के भ्रम से बड़े आदर के साथ
उसको लिया। अवसर देख कर ओबैदुल्ला ने सीटी
बजाई। उसके सिपाहियों ने तुरन्त ही वहाँ पर
उपस्थित सभी मनुष्यों को पकड़ लिया। सब के
पीछे मुसलिम साहब भी पकड़े गये और बाल-बच्चों-
सहित मारे गये। तब हुर ने ओबैदुल्ला के आदेश
से कई हज़ार सिपाही लेकर काबे शरीफ़ की ओर
यात्रा की। मार्ग में हुसैन साहब को उसने घेर
लिया और अपने मालिक का संदेसा कह सुनाया।
किन्तु इमाम साहब ने यज़ीद का शिष्य बनना
स्वीकार न किया। उन्होंने कहा कि मैं करबला
चलता हूँ; वहाँ चल कर जो चाहना सो करना।
ज्यों ही उन्होंने करबला में प्रवेश किया त्यों ही
शत्रुओं ने उन्हें फिर घेर लिया। बाहर से रसद
का भी भीतर जाना बन्द कर दिया। करबला
के नीचे बहती हुई फ़रात नदी का जल भी रोक
दिया। वहाँ कोई दूसरा जलाशय न था जिससे
हुसैनी दल की प्राण-रक्षा होती। निदान जल
के बिना प्यास से तड़प तड़प कर लोग मरने

सरस्वती "श्रीं गरसन-शारदा-सदन" बीकानेर.

महाकालेश्वर का मन्दिर—उज्जैन।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

[illegible] हुए। इसके कुछ दिनों बाद उन्हें [illegible] हो गया। इस कारण [illegible] हो गई। [illegible] को इसका [illegible] करने के लिए [illegible] बैठ कर वे रोने लगे। [illegible] रोने लगी। [illegible] करने लगे। "हा [illegible]!" ही मुख से [illegible] कुरान का [illegible] कर [illegible] पढ़ने लगा। [illegible] दोनों [illegible] के [illegible] हुसैन के [illegible] पर पहुँचे। परन्तु [illegible] इमाम हुसैन! [illegible] मुसलमानी [illegible]! [illegible] मुसलमानी [illegible]! उन्होंने कादुसया से नहीं [illegible] के [illegible] से मारी, [illegible] के [illegible] में भी नहीं [illegible] हिंसा के [illegible] थे, एक के लिए अनेक के [illegible] होने के [illegible] से, अपने बन्धु-वर्ग का कारण [illegible] बना कर मीठे [illegible] से सब को [illegible] किया सब लोग [illegible] को [illegible] अपने अपने घर [illegible] गये।

इसके उपरान्त हुसैन अपने मृत भाई हसन के [illegible] पर प्रतिष्ठित हुए। इसी बीच [illegible] का परलोक-वास हो जाने से उसका अधिकार यज़ीद को प्राप्त हुआ। यज़ीद ने हुसैन से उसका मुरीद बनने के लिए कहला भेजा। हुसैन साहब ने उत्तर दिया कि यदि वे सच्चरित्र तथा निर्दोष होते तो अवश्य ही उनकी शिष्यता स्वीकार कर लेता। किन्तु वे वैसे नहीं हैं। उनके समान अपवित्र भ्रष्ट-चरित्र तथा क्रूर व्यक्ति का मैं कदापि मुरीद नहीं हो सकता। उत्तर ठीक ही था, पर यज़ीद को इससे गहरी चोट लगी। हुसैन साहब भी यह जान गये। इनको यह भी भली भाँति मालूम हो गया कि लोगों को उभाड़ कर उसके विरुद्ध खड़ा करने का सन्देह भी यज़ीद ने मुझ पर किया है, जो किसी प्रकार दूर नहीं हो सकता। अतः वह अवश्य उपद्रव करेगा। इन कारणों से खलाफ़त छोड़ कर शान्ति-पूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए वे बाल-बच्चों-समेत मदीना से कावे शरीफ़ को चले गये।

कुफ़ा के लोगों ने यह समाचार पाकर उनको अपने यहाँ रहने के लिए आग्रहपूर्वक बुला भेजा। हुसैन साहब ने पहले अपने चचेरे भाई मुसलिम को बाल-बच्चों-समेत वहाँ भेजा। मुसलिम ने वहाँ पहुँच कर कुछ दिन याम काने के उपरान्त, हुसैन साहब को लिखा कि आप निर्भय चले आवें। यहाँ के अधिवासियों के हृदयों में निःसन्देह आप के विषय में अपूर्व भक्ति है। पत्र पढ़कर हुसैन साहब कुफ़ा जाने को तैयार हुए और वहाँ वालों को इसकी सूचना दे दी।

गुप्तचरों से यह समाचार पाते ही यज़ीद ने ओबैदुल्ला को, १२ हजार सिपाहियों का सेनापति बनाकर, कुफ़ा की ओर भेजा। कुफ़ा में उस समय हुसैन साहब के आगमनोपलक्ष्य में नाना प्रकार के उत्सव हो रहे थे। लोगों की एक बृहत् संख्या सभा-मण्डप में एकत्र थी। नाच गान हो रहा था। चतुर ओबैदुल्ला, हुसैन साहब का कपट-वेश बना कर तथा उन्हीं की सी पोशाक पहन कर, नगर में घुसा और सभा में जा पहुँचा। सभा के लोगों ने हुसैन साहब के भ्रम से बड़े आदर के साथ उसको लिया। अवसर देख कर ओबैदुल्ला ने सीटी बजाई। उसके सिपाहियों ने तुरन्त ही वहाँ पर उपस्थित सभी मनुष्यों को पकड़ लिया। सब के पीछे मुसलिम साहब भी पकड़े गये और बाल-बच्चों-सहित मारे गये। तब हुर ने ओबैदुल्ला के आदेश से कई हजार सिपाही लेकर कावे शरीफ़ की ओर यात्रा की। मार्ग में हुसैन साहब को उसने घेर लिया और अपने मालिक का संदेसा कह सुनाया। किन्तु इमाम साहब ने यज़ीद का शिष्य बनना स्वीकार न किया। उन्होंने कहा कि मैं करबला चलता हूँ, वहाँ चल कर जो चाहना सो करना। ज्यों ही उन्होंने करबला में प्रवेश किया त्यों ही शत्रुओं ने उन्हें फिर घेर लिया। बाहर से रसद का भी भीतर जाना बन्द कर दिया। करबला के नीचे बहती हुई फ़रात नदी का जल भी रोक दिया। वहाँ कोई दूसरा जलाशय न था जिससे हुसैनी दल की प्राण-रक्षा होती। निदान जल के बिना प्यास से तड़प तड़प कर लोग मरने

लगे। हुसैन साहब ने हूर को बहुत समझाया और कहा कि—"जल का मार्ग छोड़ दो। जल के बिना लोग मर रहे हैं। मेरे लिए इतने प्राणियों का संहार क्यों करते हो? मैंने ख़लाफ़त छोड़ ही दी। मदीना भी त्याग दिया। अब क्या चाहते हो? केवल फ़क़ीर की तरह मुझे जगत् में जीने की इच्छा है।" पर हाय! उस निर्दयी को तनिक भी दया न आई।

हुसैन के साथ केवल डेढ़ सौ मनुष्य और हूर के साथ हज़ारों लड़ाकू थे। लाचार उभय पक्ष में घोर संग्राम हुआ। दोनों पक्ष के ढेर के ढेर मनुष्य शहीद हुए। हुसैनी पक्ष के सब लोग खेत रहे। केवल हुसैन साहब और उनके रोगी पुत्र ज़ैनुल-आबदीन बच रहे। पुत्र ने पिता से कहा कि अब पहले मुझे ही युद्ध में जाकर अपनी रक्षणावस्था का अन्त करने दीजिए। पीछे आप जाइएगा। परन्तु पुत्र-वत्सल हुसैन से ऐसा कब हो सकता था। वे राज़ी न हुए। इसी समय, अवसर पाकर, लूट-पाट करने के लिए शत्रु लोग डेरे में प्रवेश करने लगे। फिर क्या था। इमाम साहब की शान्ति भङ्ग हो गई; आँखें अङ्गारे की तरह चमकने लगीं। भुजायें फड़कने लगीं। सारे शरीर का रुधिर उबलने लगा। क्रोध से अधीर होकर शत्रुओं पर सिंह के समान वे टूट पड़े। दो दिन तक अकेले घोर युद्ध किया। निदान दूसरे दिन सन्ध्या को शस्त्राघातों से विवश होकर भूतल-शायी हुए। हूर की आज्ञा से एक सिपाही ने उनका सिर काट कर यज़ीदुल्ला के पास पहुँचाया। यज़ीदुल्ला एक सुन्दर तश्तरी में रख-कर उसे शाम ले गया और यज़ीद को भेंट किया। पापी यज़ीद ने हुसैन साहब के उस शून्य मुख पर छड़ी मार कर अनेक अभ्यर्थनायें कीं। इधर को ज़ैनुलआबदीन, जो क़ैद करके लाये गये थे, बुलाये गये। यज़ीद ने उनसे पूछा कि अब तुम क्या चाहते हो। इमाम पुत्र ने कहा कि पिता का सिर मुझे मिल जाय। सिर उनको दे दिया गया, उसको लेकर उन्होंने विधिपूर्वक दफ़न किया। यज़ीद ने ज़ैनुल-आबदीन को बाल-बच्चों समेत छोड़ दिया। वे वहाँ से मदीना चले आये और वहीं रहने लगे।

कहते हैं कि हुसैन साहब के अनुयायियों के पीछे यज़ीद और अबैदुल्ला को भी इसी प्रकार से काट कर मार डाला।

पहले पहल तुर्किस्तान के बादशाह तैमूरलङ्ग ने एक ताज़िया बनाकर इस घटना का स्मारक स्थापित किया। फिर तो पूछना ही क्या है। मुसलमानों में यह जगद्व्यापी त्योहार हो गया। दिन दूना रात चौगुना बढ़ कर अब तो यह इतना सर्वव्यापक हो गया है कि जहाँ मुसलमानों का एक भी घर है वहाँ भी प्रति वर्ष कम से कम एक ताज़िया अवश्य उठता है। हिन्दुओं में भी बहुत लोग यह त्योहार मनाते हैं।

रामचीज़ तिवारी

---

## तुलसीदास।

(१)

देख कर सबको हमारी साधना क्रियमाण—
जिस कमण्डलु के अमृत से थे बचाते प्राण
वह तुम्हारे हाथ में था साधु तुलसीदास!
जी उठी फिर भावना, दृढ़ हो गया विश्वास।

(२)

जब समोमय शून्य में मग्न रत्न थे सब ओर
जब अज्ञानों की पताकें कर रही थीं शोर।
तब तुम्हीं ने था किया अनन्त-सत्य-विकास,
कवि कहें या रवि तुम्हें है अमर तुलसीदास!

(३)

हो गया जब आदि-कवि का मार्ग दुर्गमतीर्ण
सुगम सुख से ही किया करके सभी कमनीय।
मुक्त जीवन-पथ किये हो आपने इस बार
देखता रह जायगा गिरता-पतन संसार।

(४)

हम समर्पित भी तुम्हें हुआ कृतकार्य,
आरती देते हैं लिये तुम आर्य-वीर अनार्य।

काव्य से इतिहास है, इतिहास से है तन्त्र,
तन्त्र से फिर हैं तुम्हारे वाक्य वैदिक मन्त्र!

( ५ )

पैठ संस्कृत-सिन्धु में पाये जहाँ जो रत्न—
प्रथित करने में उन्हें करके अलौकिक यत्न।
हाय जो तुमने दिये इस देश को उपहार—
कर सकेगा कौन उनके मूल्य का निर्धार?

( ६ )

प्रस्फुटित करके हमारा पुण्य पूर्णादर्श
हृदय को तुम ने दिया है अमृत-हर्षस्पर्श।
राम राजा ही नहीं, पूर्णावतार पवित्र;
पर न हमसे भिन्न है साकेत का गृहचित्र॥

( ७ )

है हमारे अर्थ बस आदर्श ही आराध्य,
और साधन भी उसी का है हमारा साध्य।
जो हमारे सामने करदे उसे प्रतिभात
है वही तुम-सा हमारा विश्व-कवि विख्यात॥

( ८ )

प्रकृति-पट पर धन्य वह अन्तर्जगत का दृश्य;
धन्य वह सङ्गीतमय साकाव्य हृदय स्पृश्य।
धन्य भारतवर्ष का प्रतिभा-प्रकाश-विलास,
धन्य रामचरित्र मानस, धन्य तुलसीदास!

मैथिलीशरण गुप्त।

---

## मन की दृढ़ता।

( १ )

उस दिन मिस्टर मोहनलाल बैरिस्टरी की परीक्षा पास करके और साथ ही एक गोरी बीबी को अपनी धर्मपत्नी बना कर अपने देश को लौटे उस दिन उनकी मित्र मण्डली में बड़ी खलबली थी। बहुत लोगों ने तो उन्हें मूर्ख ठहराया, और भविष्यत् जीवन बड़ा दुखदायी होगा, यह जान कर हार्दिक दुःख प्रकट किया। एक सोहनलाल ही ऐसे थे जो उन्हें बड़ा भाग्यवान् समझते थे। ऐसा समझने का कारण था। सोहनलाल के मन में बहुत दिनों से यह गुप्त आकांक्षा थी कि मैं एक मेम साहिबा को अपनी सहधर्मिणी बनाऊँ। बेचारे सोहन इसी सोच-विचार में थे कि इसी बीच उनकी माता ने एक किशोरी के साथ उनका विवाह कर दिया। भग्न मनोरथ सोहन अपने अदृष्ट के अनुकूल चलने का प्रयत्न कर ही रहे थे कि इतने में मित्र-वधू 'रोज़' बीबी ने आ कर उनसे हाथ मिलाया। सोहन के सारे शरीर में बिजली सी दौड़ गई। उनकी सारी चेष्टायें व्यर्थ हो गईं।

वसन्त-काल आ जाने से जैसे पत्रहीन पेड़ों पर नवीन पत्रोद्गम हो जाता है उसी तरह सोहन की मुरझाई हुई आशालता फिर से नई हो गई। बाला वधू ललिता से अब उनका चित्त विमुग्ध होने लगा। रोज़ के साथ बात-चीत करने से ललिता अब उन्हें एकदम गँवार जँचने लगी। हिन्दू-कुलाङ्गना के सङ्कोच पूर्ण सलज्ज भाव से सोहन को घृणा पैदा हो गई। प्रति दिन सोहन के बँगले पर आने जाने से रोज़ के साथ उनकी जितनी ही घनिष्ठता होती गई उतना ही वे ललिता का साथ छोड़ने लगे। अन्त में, भीतर अपने कमरे में सोना छोड़ कर वे बाहर सोने लगे। बेचारी ललिता अब अपने पतिदेव के दृष्टान्तों से भी वञ्चित हुई। पर वह बेचारी इसका कुछ कारण न समझ सकी। किन्तु सोहन की दूर-दर्शिनी माता को विदित हो गया कि पुत्र के चरित्र में अवश्य ही कुछ दोष उत्पन्न हुआ है। सोहन की माता अत्यन्त बुद्धिमती और अनुभवशालिनी थी। उसने एक दिन सोहन को बुला कर कहा—"क्यों सोहन तुझे हो क्या गया है? सारे दिन तू बाहर ही रहता है। घर क्या समाधा है? तू समझता है कि मैं कुछ जानती ही नहीं।" सोहन ने कुछ सङ्कोच से उत्तर दिया। बात यह पड़ी दिन है कि सम्पूर्ण ने अपनी माता के साथ कैसे कैसे की इसने कहा "अरे क्या? सुन

ाहों की बातें पसन्द नहीं। मैं चाहे जहाँ रहूँ तुम्हें
क्या" ? पुत्र की ऐसी रूखी बातें माता को असह्य
हो गईं। "मेरे सामने ये बातें करते तुझे लज्जा भी
न आई। तेरे जैसे कुपूत का मुँह भी न देखना
चाहिए"। यह कहती हुई माता अपने कमरे में जा
कर बिछौने पर लेट गई। पुत्र-वधू ललिता त्रस्त
होकर सास के पैर-तले बैठ गई। वह उसके पैरों
पर हाथ फेरती हुई पूछने लगी—"माँ, आप आज
अभी क्यों सो रहीं ? क्या तबीयत कुछ ख़राब है" ?
बहू के इन ममता-भरे वचनों से सास की आँखों
से आँसू की धारा बह चली। ललिता ने उसके इस
रोने का कारण कुछ न समझा। तथापि वह शान्ति
की चेष्टा करने लगी।

( २ )

भारत में आने के पहले रोज़ के मन में यह
धारणा थी कि भारतवासी सभी काले और कुरूप
होते हैं। इसका कारण शायद यह हो कि मोहन नाम
ही के मोहन थे। सूरत-शकल से नाम का कोई
सम्बन्ध न था। पर, यहाँ आकर सोहन को देखने
से रोज़ की वह धारणा बिलकुल ही जाती रही।
सोहन की अनिन्दित अनुपम सुन्दरता देख कर रोज़
उन पर मुग्ध हो ही रही थी अब उनके सौजन्य-पूर्ण
व्यवहार से वह उनकी ओर एकदम ही आकृष्ट हो
गई। साथ ही सोहन भी उस पर ऐसे मोहित हो
रहे थे जैसे भक्त अपने आराध्य देवता का स्वरूप
देख कर उस पर मोहित हो जाता है। नित्य ही उस
गौरी देवी के दर्शन और उसके कर-कमलों में अपनी
प्रेमाञ्जलि अर्पण करना सोहन का मुख्य कर्तव्य
कर्म हो रहा था। सोहन प्रति दिन सायङ्काल रोज़
को साथ लेकर मोहन के बँगले की फुलवाड़ी में टह-
लते थे। उस समय उन दोनों में परस्पर अत्यन्त मधुर
स्वर से अपूर्व अनुरागभरी बातें हुआ करती थीं।
किसी किसी दिन मोहन भी उन दोनों के साथ हो
जाया करते, किन्तु बड़े ही गिरे हुए मन से। सोहन
के साथ रोज़ की इतनी घनिष्ठता उन्हें बिलकुल
सामर्थ्य के बाहर था। किन्तु पति के सामने
का इस प्रकार दुराचरण उन्हें एक दम असह्य
हो गया। एक दिन उन्होंने रोज़ से साफ़ साफ़
दिया कि मैं नहीं चाहता कि तुम सोहन के
किसी प्रकार का सम्बन्ध रक्खो। उसे मैं
अपने बँगले पर आने से मैं रोक दूँगा और
उससे अब न मिल पाओगी। रोज़ यह क्यों
लगी। उस योरुपियन लेडी ने तीव्र भाव से
बात का प्रतिवाद करके उनसे कहा—"
समय तुमसे कुछ ऐसी लिखा-पढ़ी तो हु
कि मैं किसी के साथ बात-चीत न कर
फिर तुम्हारे देश की स्त्रियों की तरह
दासी नहीं कि जो आज्ञा करो वही मैं
मैं तुम्हें सावधान किये देती हूँ कि अ
स्वतन्त्रता पर हस्तक्षेप न करना"।

गौरी बीबी और काले साहब की
रही थीं कि इतने में हँसते हुए सोहनल
दोनों को गुड् बाई किया। पति को अ
करने की इच्छा से रोज़ तुरन्त ही से
पकड़ कर बाग़ में टहलने चली गई।

( ३ )

रोज़ के इस अनुचित व्यवहार
के मारे पागल से हो गये। कमरे
एक पिस्तौल रक्खी थी। मोहन
देखने लगे। उनके मन में आया
रोज़ और सोहन की हत्या करके
बदला ले लूँ। पर, कुछ सोच-
उसे वहीं रख दिया। जब रात
लेकर मोहन बाग़ीचे की तरफ़ च

रोज़ और सोहन दोनों बाग़ी
मन में चिन्ता होने के कारण
साथ बात-चीत करने में कुछ अ
भाव को देख कर सोहन प्रेम
लगे—"रोज़, आज तुम्हें क्या
इस प्रकार बातें कर रही हो
हैं" ? "नहीं, आज मेरा चित्त
कह कर रोज़ ने सारा हाल

मुँह पर ही ऐसी स्पष्ट बातें कहना ठीक
। पर शोक ! तुम्हारे साथ मेरी जो दो चार बातें
करती थीं शायद वे भी अब बन्द हो जायँ"।
कर मोहन कातर-दृष्टि से रोज़ की ओर
लगे। "नहीं अब इसका कुछ निपटारा ही करके
गी। उसका क्या अधिकार जो मुझे तुमसे न
ने"—यह कहती हुई रोज़ ने आदर के साथ
का हाथ पकड़ लिया। ठीक उसी समय
को ताक कर मोहन ने पिस्तौल उठाई। पर
चलाते समय उनका हाथ काँपने लगा।
कारण, कुछ सोच समझ कर, मोहन वहाँ
ले गये। जाते समय मन ही मन ये कहने
"नहीं, इन दोनों को जी से न मारूँगा। इस
मारने से इन दोनों से अच्छी तरह बदला
गा"।

स घटना के थोड़े ही दिनों बाद रोज़ और
विवाहबन्धन तोड़ कर अलग हो गये। इस
र अधिक शोरगुल मचाना मोहन को अच्छा
। इसी कारण उन्होंने बिना किसी झगड़े-बखेड़े
बाप और बड़े भाई के मत के विरुद्ध गोरी बीबी
ह करके जो पाप उन्होंने किया था, मानों
प्रायश्चित्त कर डाला। रोज़ के कारण
माँ-बाप, भाई-बहिन सबको छोड़ दिया था।
ई वर्ष बाद मोहन अपने घर लौटे और गुरु-
ा चरण छू कर उनसे क्षमा माँगी।

ोहन की बहुत दिनों की मनोकामना अब पूरी
जिस दिन रोज़ और सोहन की शादी हुई
देन रात को मोहन ने भी एक किशोरी का
ग्रहण किया।

ोहन चाहते तो रोज़ और सोहन की शादी में
डाल सकते थे। क्योंकि, इसके पहले ही सोहन
याह हो चुका था। यह बात मोहन को मालूम
दि कहीं रोज़ को इस बात का पता लग
तो वह सोहन से बात भी न करती, ब्याह तो
ा। पर, न जाने क्या सोच कर मोहन ने रोज़
बात छिपा रक्खी। विवाह हो जाने के बाद दो
महीने तक मोहन ने रोज़ के साथ बड़े ही सुख से अपने दिन काटे। सोहन ने स्वप्न में भी न सोचा था कि उनके इस आनन्द में कभी बाधा पड़ेगी। मोहन का परिणाम देख कर भी उन्हें यह सन्देह न हुआ था कि रोज़ और भी किसी की अनुरागिनी बन कर उन्हें भी "डाईवोर्स" कर सकती है। उनके मन में दृढ़विश्वास था कि रोज़ आज उन पर जैसी प्रीति रखती है सदा ही वह उन पर वैसी ही प्रीति बनाये रक्खेगी। पर हाय! आज उनकी वही प्रेममयी रोज़ उनके लिए सहसा चामुण्डा सी हो गई। दोनों आँखें लाल लाल करके वह उनसे कहने लगी—"तुमने मेरे साथ बड़ी दग़ाबाज़ी की। मुझे कभी यह ख़याल न था कि तुम ऐसे दग़ाबाज़ निकलोगे। अगर पहले यह बात मुझे मालूम हो जाती तो मैं तुम्हें कुत्ते की तरह दुरियाती"। यह सुन कर सोहन कुछ देर तक अवाक् से रह गये। अन्त में रुकी हुई आवाज़ से वे कहने लगे—"मैंने तुमसे कौन सी दग़ाबाज़ी की"? "बस, बस, अब चुप रहो। तुम यह अच्छी तरह समझ रक्खो कि हम लोग जैसे 'लव', अर्थात् प्यार, करना जानती हैं वैसे ही अपमान का बदला भी लेना जानती हैं। छिः छिः तुम कैसे बेहया हो। एक बीबी के रहते तुम्हें दूसरी से शादी करते शर्म न आई"। अब सोहन की समझ में सारी बातें आगईं। उनका शरीर काँपने लगा। वे बहुत सँभल कर बोले—"बात झूठ है। इसके पहले कभी मेरी शादी नहीं हुई। तुम्हारे ही साथ मेरी पहली शादी हुई है"। इस जवाब को सुनते ही रोज़ एक विकट हँसी हँस कर बोली—"इस बात की जाँच अदालत में होगी। मैं तुम्हें सहज में छोड़नेवाली नहीं"। रोज़ घृणा की दृष्टि से सोहन की ओर देखती हुई वहाँ से चली गई।

अब तो सोहनलाल करम ठोक कर बैठ गये। उन्होंने निरपराधिनी ललिता तथा प्रिय मित्र मोहनलाल को जैसा मानसिक कष्ट पहुँचाया था उसका फल उन्हें हाथों हाथ मिल रहा है।

× × × × ×

( ४ )

सोहनलाल की माँ और ललिता को भी इस की ख़बर लग गई। माता के हृदय में पुत्रस्नेह की

नदी फिर बह चली। सोहन का परिणाम सोच कर वह अकुला उठी। उसे धन की कमी न थी। सोहन की ओर से उसने तीन प्रसिद्ध बैरिस्टरों को पैरवी करने के लिए नियत किया। पर उसके मन में सोहन के छूटने की आशा तिल भर भी न थी। बैरिस्टर भी कह रहे थे कि भर सक हम सब उनको छुड़ाने की चेष्टा करेंगे, पर छूटने की आशा बहुत कम है। बेचारी ललिता की दशा अधिक शोचनीय थी। वह सास से पूछने लगी—"माँ, यदि मैं इस समय मर जाऊँ तो वे निर्दोषी ठहराये जायँगे या नहीं"—"नहीं, बेटी, ऐसी बातें न कर। तू मेरे घर की लक्ष्मी है। शायद तुझ पर ही दया करके भगवान् मेरे बच्चे की रक्षा करें"। यह कह कर सोहन की माता ने पुत्रवधू को अपनी गोद में खींच लिया। ललिता के फिर वैसा ही प्रश्न करने पर वह कहने लगी—"तू बिलकुल ही पगली है! अरे तुझे कितना समझाऊँ? एक स्त्री के रहते जब सोहन ने उस चुड़ैल के साथ ब्याह किया तभी वह दोषी ठहर चुका"। ललिता रोती हुई बोली—"हाय, यदि मैं इसके पहले ही मर गई होती"। अब तो सासबहू की आँखों से गङ्गा-यमुना की धारा बहने लगी।

दो तीन दिन बाद आँखें पोंछती हुई ललिता ने आ कर सास से कहा—"माँ, मेरे नाम सम्मन आया है। मुझे गवाही देने के लिए कचहरी जाना होगा। आप उन्हें आशीर्वाद दें। आपके पुण्य-बल से ही शायद वे छूट जायँ"। यह की इस बात से, यद्यपि दुःखित होने पर भी, सास को हँसी आ गई। वह अपने मन में कहने लगी—"इसे इतना भी ज्ञान नहीं कि इसकी गवाही तो सोहन के लिए और भी विपदा-जनक होगी"।

( २ )

आज कचहरी में बड़ी भीड़ है। ऐसी भीड़ शायद ही कभी हुई होगी। दोनों ओर से बड़े बड़े नामी बैरिस्टर नियत किये गये हैं। सोहनलाल हँसते हुए चेहरे से अपने बैरिस्टर से बातें कर रहे हैं। उस समय मैजिस्ट्रेट ने सोहनलाल से सवाल किया—"तुम दोषी

है"। सोहनलाल ने जवाब दिया—"मैं निर्दोषी हूँ। इसके पहले मेरी शादी नहीं हुई। रोज़ एक रेज-युवक की अनुरागिनी बन कर मुझ पर मिथ्या दोष लगा रही है"। इस जवाब को सुन रोज़ के बैरिस्टर ने मुसकराते हुए कहा—"इस मा में मेरे प्रधान गवाह हाज़िर हैं। मैं उन्हें पेश क का हुक्म चाहता हूँ। उनकी गवाही से झूठ का पता लग जायगा"। इस पर, न्यायाधीश आज्ञानुसार, घूँघट काढ़े एक स्त्री अदालत में गई। उसने आते ही थोड़ा सा घूँघट हटा चारों तरफ़ देखा। कुछ दूर कठघरे के भी ललिता के आराध्य देव सोहनलाल उसे दिख पड़े। चार आँखें होते ही सोहन का चेहरा फ़ पड़ गया। पर, उनके दर्शनों से ललिता का सर दूना हो गया। पति को निर्दोष ठहराने का सा करके वह यहाँ आई है। अतएव ललिता ने सा दूर कर दिया। उसने पूरे तौर से मुँह खोल दिया उसे देख कर सोहन सोचने लगे—"मोहन के तरह क्या ललिता भी मुझसे बदला लेने आई है पर, इसमें उसका कुछ दोष नहीं। मैंने उस बेचारी पर बड़ा अत्याचार किया है। अब उसकी बारी है वह क्यों छोड़ने लगी"?

अदालत आदमियों से खचाखच भरी रहने पर भी इस समय चारों ओर ऐसा सन्नाटा छाया हुआ है कि यदि एक सुई भी ज़मीन पर गिरे तो उसकी आवाज़ साफ़ साफ़ सुनाई दे। सबसे पहले सोहन के पैरवीकार ने खड़े होकर सोहन की तरफ़ इशारा करके ललिता से सवाल किया—"आप इन्हें पहचानती हैं"? ललिता ने पति की ओर देख कर स्पष्ट स्वर में जवाब दिया—"पहचानती क्यों नहीं? यही हमारे आराध्यदेव और स्वामी हैं"। यह सुन कर रोज़ मुसकराने लगी। उसके पास की दूर बैठी हुई रोज़ की सखी ने भी सोहनलाल की तरफ़ कटाक्ष-पूर्ण दृष्टि से देखा। सोहनलाल घबड़ा उठे। सोहन से बदला लेने का इन्हें ठीक मौक़ा मिल गया है न? इसी से उनके आनन्द का पार न था।

बैरिस्टर साहब ने फिर ललिता से सवाल
या—"तब तो आप उनका नाम भी जानती होंगी ?
ुनाइए क्या नाम है" ?

ललिता ने फिर अपने आराध्य देव का दर्शन
या। पति का मुँह देखते ही उस पर मानों
ज़ली सी दौड़ गई। उसके दुर्बल हृदय में नवीन
ेम का सञ्चार हो उठा। पर, हिन्दू ललना हो
यह पति का नाम कैसे उच्चारण करे ? किन्तु पति
बचाने के लिए उसे आज सब कुछ करना पड़ेगा।
मोहनलाल ने धीमी आवाज़ से बैरिस्टर बैरि
र से कहा—"आप ऐसा सवाल उनसे न करें।
यह आपको मालूम नहीं कि हिन्दू स्त्रियाँ पति
नाम नहीं लेतीं"। बैरिस्टर साहब हँस कर
ला से बोले—"इस सवाल का जवाब देने में
ोई कुछ एतराज़ हो तो रहने दीजिए"। ललिता
ढ़ता-पूर्वक कहा—"नहीं, ज़रा भी एतराज़
। इनका नाम है, बाबू सोहनलाल वर्मा"।

ललिता की इस बात पर मोहन तथा अदालत
उपस्थित सभी लोग आश्चर्य युक्त हो गये।
मलाल भी बहुत विचलित हुए। बैरिस्टर साहब
फिर सवाल किया—"आपके साथ बाबू सोहन-
जी की शादी हुए कितने दिन हुए" ? ललिता
मन होकर बोली—"मेरे साथ शादी ! आप यह
कह रहे हैं ? मेरा इतना सौभाग्य कहाँ कि वे
साथ शादी करें"।

इस जवाब पर रोज़ के पक्षवाले घबरा से
। बैरिस्टर साहब भी एक गँवार
। करते बड़ी
ज से हाकर
ो। अच्छा
का

# भोजन ।

ज्य ही हमें भोजन करने की आवश्यकत
पड़ती है। अतएव इस विषय पर विचा
करना आवश्यक है कि हमारा भोजन कैस
होना चाहिए। हम अच्छी तरह जानते है
कि निराहार रहना हमें बहुत बुरा मालूम
होता है। साथ ही हम यह भी स्वीकार करते हैं कि यदि
जीवित रहना चाहते हैं तो हमें अवश्य भोजन करना पड़ेगा।
इस पर भी हम में से बहुत कम लोग इस बात पर विचार
करने का कष्ट उठाते हैं कि हमें

## भोजन की आवश्यकता

क्यों है ? कल्पना कीजिए, हमारा शरीर एक वाष्प-यन्त्र
(Engine) है। यन्त्र का बाइलर (Boiler) या बटलोई
जल से भरी हुई है और यन्त्र के सब भागों में अच्छी तरह
तेल दिया हुआ है। इतना होने पर भी यन्त्र अपना कार्य
नहीं कर सकता, अर्थात् वह चल नहीं सकता। बात यह है कि
जब तक बाइलर के नीचे आग न सुलगाई जायगी तब तक
वह कदापि न चल सकेगा। भाफ के द्वारा इञ्जिन चलने
लगता है। भाफ पैदा करने अर्थात् शक्ति का सञ्चार
करने के लिए ईंधन की आवश्यकता अवश्य
पड़ती है।

मनुष्य के शरीर की भी यही दशा है। हमारी शक्ति
शरीर के भिन्न भिन्न भागों के जलने अथवा व्यय होने
( ) से उत्पन्न होती है। भोजन इसके लिए
रेता है। एक बार यन्त्र का चलना प्रारम्भ
ात होता है कि कोयले अथवा ईंधन
े धीरे कुछ विश्राम से
े कोयले के स्थान
ना है। इसी प्रकार
होता है उसकी
रपूरकता पड़ती है।
ार पुष्टा-वस्था में हमारा
है। इस बढ़ाव के लिए
की आवश्यकता पड़ती है।

## शरीर के ताप (Temperature) की स्थिति

के लिए भी भोजन आवश्यक है। शरीर में धातुओं के सदा व्यय होते रहने पर ताप की प्राकृतिक उष्णता ९८ दरजे से कुछ अधिक रहती है। हमें मालूम है कि जब हम बीमार पड़ते हैं तब डाक्टर हमारे मुँह या बग़ल में एक छोटा सा यन्त्र लगाता है। इस यन्त्र को थर्मामीटर (Thermometer) अर्थात् उष्णता-मापक यन्त्र कहते हैं। डाक्टर जानता है कि हमारे शरीर की प्राकृतिक उष्णता सर्वदा कितनी रहनी चाहिए। इतनी उष्णता के कम होने या बढ़ जाने पर वह फ़ौरन जान जाता है कि हम रोगी हैं या नीरोग।

शीत-प्रधान देशों में यदि शरीर के ताप को यथास्थित रखने का कोई उपाय न हो—पेट को भोजन न मिले—तो मनुष्य-शरीर धीरे धीरे ठण्डा पड़ जाय और शीघ्र ही वह मृत्यु का ग्रास बन जाय। उष्ण-प्रधान देशों में भी यही परिणाम होता है। हम लोगों को अच्छी तरह मालूम है कि मृत्यु के समय उष्णता कम होते होते देह ठण्डी पड़ जाती है। अतएव यह सिद्ध हुआ कि भोजन करना नीचे लिखे हुए चार मुख्य कारणों से आवश्यक है:—

(१) काम करने की शक्ति उत्पन्न करने के लिए।
(२) शरीरस्थ धातुओं की व्यय-पूर्ति के लिए।
(३) अङ्गों की बाढ़ और पुष्टता के लिए।
(४) देह में उष्णता उत्पन्न करने के लिए।

अब हमें देखना चाहिए कि किस प्रकार का भोजन हमारी इन आवश्यकताओं की पूर्ति उत्तमता के साथ कर सकता है। साथ ही हमें यह भी जानना चाहिए कि इस प्रकार के खाद्य पदार्थ किस नियम से एक दूसरे के साथ मिलाये जाकर सेवन किये जा सकते हैं।

इस बात को जानने के लिए हमें पहले

## शरीर की रचना

पर कुछ विचार करना चाहिए। हमें मालूम है कि मनुष्य-शरीर भिन्न भिन्न अङ्गों और उन अङ्गों के अवयवों से बना हुआ है। हमारे सारे यन्त्र और अवयव रासायनिक पदार्थों के संयोग से बने हुए हैं।

शरीर का प्रायः दो तिहाई भाग जल से बना हुआ है। यह जलीय पदार्थ हाइड्रोजन (उदजनक वायु) और ऑक्सिजन (प्राणप्रद वायु) का यौगिक पदार्थ है। इस जल के कारण हमारे शरीर की रगें कोमल हैं और इसीके द्वारा खाद्य पदार्थ, जो हम सेवन करते हैं, हमारे शरीर के प्रत्येक भाग में पहुँच जाते हैं। शरीर का अवशिष्ट तिहाई भाग रासायनिक तत्त्वों से बना हुआ है। रासायनिक तत्त्वों में मुख्य ये हैं—

(१) आक्सिजन
(२) हाइड्रोजन
(३) नाइट्रोजन
(४) कोयला (Carbon)
(५) गन्धक (Sulphur)
(६) फ़ासफ़ोरस (Phosphorous)

इनमें से पहले तीन तत्त्व प्राकृतिक अवस्था में वायु में पाये जाते हैं। पर अन्तिम तीन ठोस हैं। अलग अलग अवस्था में जब मनुष्य-देह में इन तत्त्वों का संयोग होता है तब इनसे कुछ और पदार्थ उत्पन्न होते हैं। इन पदार्थों को आरगेनिक (Organic) कहते हैं।

ऐसे पदार्थ दो प्रकार के होते हैं। प्रथम वे जो कार्बन, नाइट्रोजन और आक्सिजन के संयोग से बनते हैं, जैसे चर्बी। इन्हें उष्णता या शक्तिवर्द्धक (Non-Nitrogenous) पदार्थ कहते हैं। दूसरे वे जो नाइट्रोजन, आक्सिजन, हाइड्रोजन और कोयले के संयोग से बनते हैं। ऐसे पदार्थों में कभी कभी थोड़ा सा गन्धक या फ़ासफ़ोरस भी मिला रहता है। इन्हें मांसवर्द्धक (Nitrogenous) पदार्थ कहते हैं।

शरीर में कई प्रकार के खनिज पदार्थ भी हैं—जैसे लवण जो शरीर के प्रत्येक भाग में है, चूना जो हड्डियों में और लोहा जो रक्त में है। उपर्युक्त पदार्थ शरीर में इस हिसाब से मौजूद हैं:—

| | | | |
|---|---|---|---|
| जल | ... | ६१.० | फ़ी सदी |
| चर्बी | ... | १५.४ | ,, ,, |
| खनिज पदार्थ | ... | ५.५ | ,, ,, |
| अन्य पदार्थ | ... | १८.१ | ,, ,, |

इससे यह सिद्ध है कि ज्यों ज्यों ये पदार्थ शरीर में व्यय होते जाते हैं त्यों त्यों इनके स्थान पर ऐसे ही

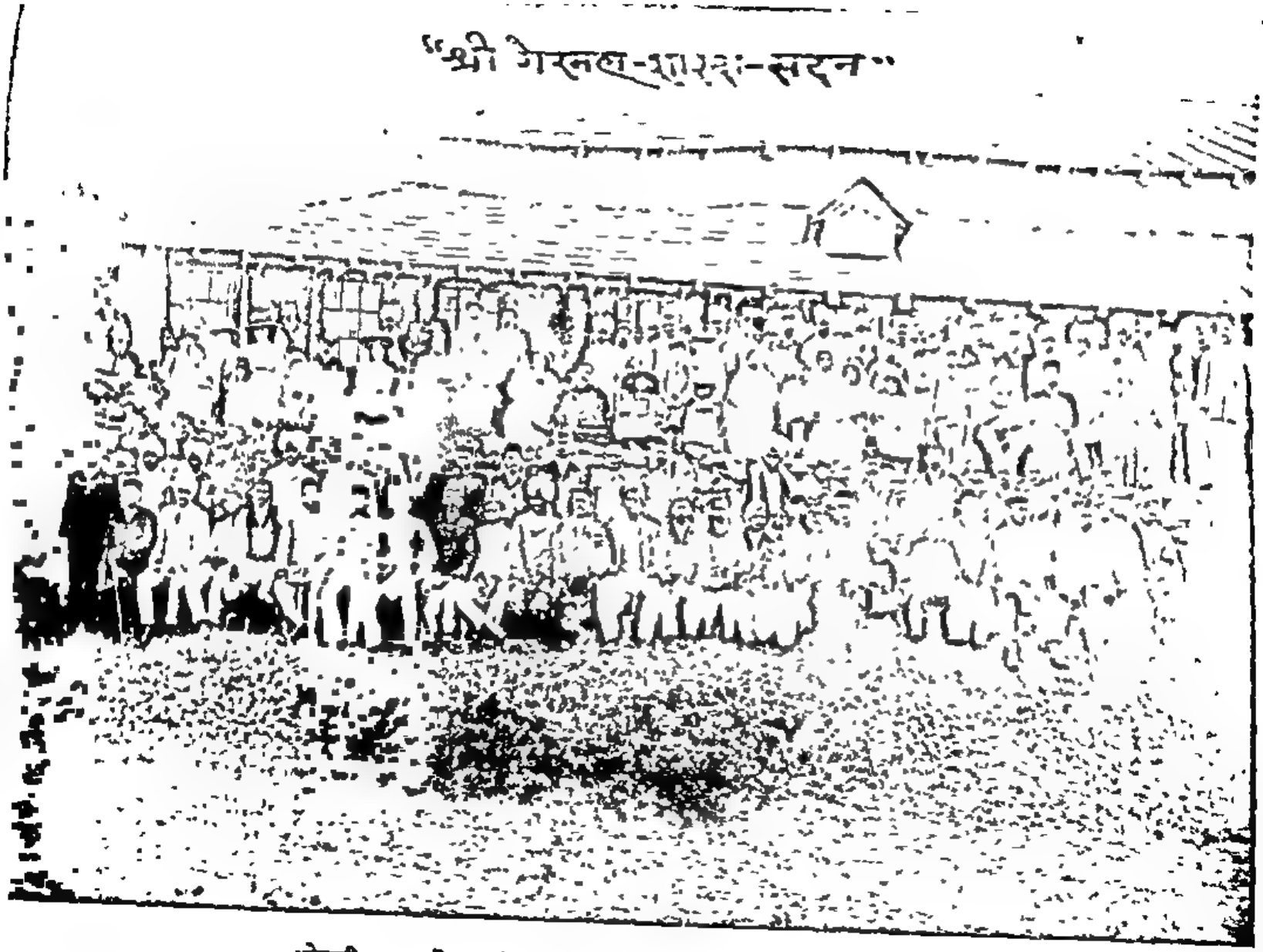


भोपाली स्वास्थ्य निवास ( मनोरोगालय ) के कार्यालयी, रोगी और अन्य

लफ़्टेन्ट जे० सी० स्माइथ ।

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

श्रम करने पर भी नहीं थक सकते। इस बात की खूब परीक्षा हो चुकी है। चर्बी से देह की उष्णता भी बनी रहती है। उष्ण-प्रदेशों में चाहे यह बात विशेष आवश्यक न भी हो, पर शीत-प्रदेशों में तो मनुष्य इसका बहुत अधिक उपयोग करते हैं। अतएव चर्बी तीन कारणों से अधिक लाभकारी है—

(१) वह पाचन-शक्ति को बढ़ाती है, जिससे देह पुष्ट होती है। (२) वह बल को भी बढ़ाती है और (३) शरीर को गरम रखती है।

यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि यदि अधिकता से चर्बी काम में लाई जाय तो वह देह में इकट्ठी हो जाती है। अतएव मनुष्य स्थूल हो जाता है। मनुष्य की पाचन-शक्ति घट जाती है और उसका कलेजा बिगड़ जाता है।

बिना चर्बी वाले पदार्थों में भी न्यूनाधिक अंश में कौरबन, हाइड्रोजन और आक्सिजन रहता है। ऐसे पदार्थों में हाइड्रोजन का भाग आक्सिजन से ठीक दूना रहता है, जैसे जल में। ऐसे पदार्थ केवल वनस्पति के रूप में पाये जाते हैं—जैसे, शक्कर, गोंद, मांड़ी (निशास्ता) आदि। आलू, चावल, मकई, कटहल, आरारोट आदि में मांड़ी (Starch) सब से अधिक मात्रा में रहती है। मांड़ी ठंडे पानी में नहीं घुलती। पर गर्म पानी में फूट कर निकले हुए इसके नन्हें नन्हें दानों से एक प्रकार की लेई सी बन जाती है। पकाये हुए मांड़ीदार पदार्थ पाचक होते हैं, किन्तु उन्हें कच्चा पचाना कठिन होता है।

शक्कर भी पौधों से प्राप्त होती है, विशेषतः ईख और गुलकन्द से। इसके गुण भी मांड़ीदार पदार्थों के समान हैं। पर, मनुष्य के लिए इन पदार्थों की इतनी आवश्यकता नहीं।

यह न समझना चाहिए कि इन दो प्रकार के पदार्थों से ही हमारा काम पूरा हो सकता है या हमारी शरीर का सारे प्रकार निर्वाह हो सकता है। देह में मांस आदि पदार्थों का नया संयोग होता रहता है। इस कारण मांसबर्द्धक पदार्थ, किसी न किसी रूप में, प्रतिदिन के भोजन में अवश्य रहने चाहिए।

## भिन्न भिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ।

[illegible] कि भिन्न भिन्न

खाद्य पदार्थों की आधी छटाँक मात्रा में कितने ग्रेन कार्बन और कितने ग्रेन नाइट्रोजन रहता है। एक औंस में आधी छटाँक में कोई ४३८ ग्रेन होते हैं। इस हिसाब से वज़न में एक ग्रेन दो रत्ती से कुछ कम हुआ—

| | | नाइट्रोजन | कार्बन |
|---|---|---|---|
| कच्चा मांस | ... | १४.३ | ३२ |
| पका हुआ मांस | ... | १६.३ | ११० |
| मछली | ... | १२.६ | ४८ |
| मुरग़ी इत्यादि | ... | १४.७ | २० |
| रोटी (मैदे की) | ... | ५.५ | १११ |
| गेहूँ का आटा | ... | ७.७ | १६१ |
| जव का आटा | ... | ८.१ | १७३ |
| चावल | ... | ३.५ | १७२ |
| मकई | ... | ७.० | १११ |
| आरारोट | ... | ०.६ | १६२ |
| मटर | ... | १२.४ | १२१ |
| आलू | ... | १.४ | ४२ |
| घी | ... | ०.७ | २११ |
| अण्डा | ... | ६.४ | ६८ |
| दूध | ... | २.८ | ३० |
| मक्खन | ... | १.१ | १०१ |
| शक्कर | ... | — | १७८ |

मांस और अण्डे आदि से हम घृणा करते हैं। इस कारण उनके विषय में अधिक लिखना व्यर्थ है। पर इतना कह देना आवश्यक है कि मांस बहुत देर में हज़म होता है। मांस खाना भारतवर्ष के सदृश उष्ण देश में अनावश्यक नहीं, हानिकारक भी है। यदि मांस खाना ही हो तो कच्चा खाना अच्छा है। अण्डा बहुत पौष्टिक होता है और सहज ही पच जाता है।

अण्डे और मांस की अपेक्षा दूध खाना अच्छा है। यदि केवल दूध ही का सेवन किया जाय तो मनुष्य अच्छी तरह जीवित रह सकता है। क्योंकि, जीवन-रक्षा के लिए आवश्यक पदार्थ आवश्यक हैं वे सब दूध में मौजूद हैं। उसमें मांसबर्द्धक पदार्थ, चर्बी, शक्कर, खनिज पदार्थ सब [illegible] है। [illegible] है।

ही चाहिए। उसके द्वारा शरीर बढ़ता, बल प्राप्त करता और मोटा होता है। ताज़ा दूध सब से अधिक बलवर्द्धक और पाचक है। बच्चों के लिए तो दूध बहुत ही लाभदायक है। रुग्णावस्था में तो दूध के बिना काम ही नहीं चल सकता। क्योंकि उसमें अधिक पाचक पदार्थ और दूसरा नहीं। उसकी बनावट इस प्रकार है:—

| | गाय | स्त्री |
|---|---|---|
| मांसोत्पादक पदार्थ ... | ४·१ | ३·३५ |
| चर्बी ... | ३·६ | ३·३४ |
| शक्कर ... | ५·२ | ३·७७ |
| नमक ... | ०·८ | — |
| जल ... | ८६·० | ८६·२४ |
| | १००·० | १००·० |

इन खाद्य पदार्थों के सिवा जो प्राणियों से हमें प्राप्त होते हैं और भी ऐसे पदार्थ हैं जिनमें नाइट्रोजन अधिक होता है। ये वनस्पति-जन्य पदार्थ हैं। इनमें गेहूँ मुख्य है। इससे हम रोटी तैयार करते हैं। आटे में फी सदी ७ नाइट्रोजन और ६६·६ कारबन रहता है। बिना छना हुआ आटा यद्यपि शक्तिवर्द्धक होता है, तथापि वह पाचक कम होता है।

गेहूँ की रोटी बना लेने से उसके नाइट्रोजन और कारबन का कुछ भाग नष्ट हो जाता है। पर पाचक शक्ति उसकी बढ़ जाती है। रोटी में एक दोष है। यद्यपि उसमें कारबन और नाइट्रोजन आवश्यकतानुसार वर्तमान रहता है, तथापि चर्बी और नमक का भाग बहुत कम रहता है। रोटी के साथ घी मक्खन आदि का उपयोग करने से यह दोष दूर हो जाता है।

रोटी शीघ्र नहीं पचती। पर वह पूड़ियों से अधिक पाचक होती है। बात यह है कि सेंकने से गेहूँ की माड़ी के दाने फूट जाते हैं।

चावल भी अच्छा खाद्य पदार्थ है। परन्तु, उसमें नाइट्रोजन का भाग बहुत कम, मांड़ी का अधिक है। साथ ही चर्बी उसमें होती ही नहीं। इस कारण रोटी से वह कम बलवर्द्धक है। पर वह पच शीघ्रता से जाता है।

कहीं कहीं दीन-दरिद्र लोग गेहूँ के बदले मकई काम में लाते हैं। इसकी भी रोटी खाई होती है। क्योंकि इसमें चर्बी, नाइट्रोजन, कारबन तीनों पाये जाते हैं।

आलू अब हमारे देश में अधिकता से पैदा होता है उसमें सब से अधिक भाग मांड़ी का रहता है। उसमें कारबन का हिस्सा नाइट्रोजन से चालीस गुना अधिक है।

मटर, चना, अरहर, उड़द आदि दाल वाले पदार्थ भी पौष्टिक खाद्य हैं। उनमें, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, नाइट्रोजन का भाग अधिक रहता है—करीब करीब उतना ही जितना मांस में। दाल-चावल का खाना पूरा वैज्ञानिक भोजन है। क्योंकि, चावल से अधिक मांड़ी और दाल से अधिक नाइट्रोजन प्राप्त होता है। घी, मक्खन, तेल आदि का उपयोग भी, जहाँ तक सम्भव हो, करना उचित है।

भोजन के साथ कुछ शक्कर, गुड़ आदि के उपयोग की भी बड़ी आवश्यकता है। पर बहुत नहीं। चाय और दूध में जितना मीठा पड़ता है उतना ही काफ़ी है।

वनस्पति भी हमारे खाद्य पदार्थ हैं। शाक, गोभी, मूली, गाजर, शलजम, बैंगन, भिंडी और पालक इत्यादि से हमें नमक और एक प्रकार का तेजाब मिलता है। शरीर-रक्षा के लिए इन पदार्थों की बड़ी ज़रूरत है। यदि ये हमें न मिलें तो हमारे शरीर में एक प्रकार का रोग (scurvy) पैदा हो जाय।

इन पदार्थों के सिवा कई प्रकार के मसाले भी खाने के काम आते हैं—जैसे नमक, मिर्च, राई, ज़ीरा, हलदी इत्यादि। लाल मिर्च को लोग कम काम में लाते हैं। यद्यपि वे हमारे आहार नहीं, तथापि इनसे हमारा भोजन सुस्वादु हो जाता है, उसमें रुचि बढ़ती है और वह शीघ्र पच जाता है। पर, बहुत मसालेदार भोजन करना हानिकारक है।

## मिश्रित भोजन की आवश्यकता।

भिन्न भिन्न खाद्य पदार्थों में कारबन और नाइट्रोजन का क्रम एक सा नहीं रहता। शरीर के लिए नाइट्रोजन और कारबन का कुछ आवश्यक क्रम होना चाहिए। इस कारण हमारा आहार मिश्रित हो तो अच्छा है। जैसा कि ऊपर लिखा गया है, शरीर के लिए प्रति दिन ४,२०० ग्रेन कारबन और १०० ग्रेन नाइट्रोजन की आवश्यकता है। इसलिए, यदि इस क्रम से भोजन हो तो ४००

प्रेन नाइट्रोजन की प्राप्ति के निमित्त प्रायः डेढ़ सेर रोटियाँ हमारे लिए प्रति दिन होनी चाहिए। पर, इस दशा में हम कारबन आवश्यकता से अधिक खा जायँगे। इस कारण एक सेर रोटी के साथ ६ छटाँक तरकारी खाना अच्छा है। इससे कारबन और नाइट्रोजन का यथेष्ट अंश मिल सकता है। इसी प्रकार यदि केवल चावल ही काम में लाया जाय तो नाइट्रोजन का यथेष्ट अंश न मिलने से पेट फूट जाय और अजीर्ण हो जाय। इसी लिए चावल-दाल का मिश्रित भोजन बहुत अच्छा है। एक ही प्रकार का भोजन करने से रुचि कम हो जाती है, भूख भी घट जाती है और मिर्च आदि खाने का अभ्यास बढ़ जाता है।

**नीरोग मनुष्य का दैनिक आहार** साधारणतः इस प्रकार का होना चाहिए—

| | | | |
|---|---|---|---|
| मांसवर्द्धक पदार्थ | ... | २·१६ | छटाँक |
| चर्बीयुक्त पदार्थ | ... | १·६ | ,, |
| माँड़ीयुक्त पदार्थ | ... | ५·८ | ,, |
| नमक | ... | ·५ | ,, |
| | | १०·०६ | ,, |

इसके सिवा प्रायः दो सेर जल।

जिस मनुष्य को परिश्रम नहीं करना पड़ता उसके लिए प्रति दिन आठ छटाँक भोजन काफ़ी है। पर, परिश्रमी मनुष्य के लिए १३ छटाँक से एक सेर तक अन्न की आवश्यकता है।

भारतवर्ष के सदृश जल-वायु वाले देश में परिश्रमी मनुष्य का भोजन साधारणतः इस प्रकार होना चाहिए—

| | | | |
|---|---|---|---|
| चावल या रोटी | ... | ६ | छटाँक |
| तरकारी | ... | २½ | ,, |
| घी, तेल, मसाला | ... | १ | ,, |
| नमक | ... | ½ | ,, |
| दाल | ... | ४ | ,, |

पर, प्रत्येक मनुष्य अपनी इच्छा और रुचि के अनुसार खाने की सामग्री तथा मात्रा को घटा बढ़ा भी सकता है।

## भोजन-जन्य रोग

अधिक भोजन से पेट में विकार पैदा होता है; मेदे में भोजन पचाने की शक्ति नहीं रह जाती। इससे पेट भारी हो जाता है और सुस्ती मालूम होती है। बदहज़मी, अनी-सार, संग्रहणी और पाण्डुरोग आदि भी हो जाते पर जितना खाने की इच्छा हो उससे कुछ खाना चाहिए।

बहुत कम अन्न खाने अथवा उपवास करने से बुरा होता है। उससे शरीर क्षीण हो जाता है, जाती है और अन्त में मृत्यु हो जाती है। पदार्थ न मिलें तो भी यही दशा होती है। बहु खाने से भी मनुष्य बीमार पड़ जाता है।

## भोजन करने का समय

नियत समय पर भोजन करना भी बहुत आवश्य भोजन विधि-पूर्वक करना चाहिए। प्रातःकाल जल्द भोजन कर लेना चाहिए। १० या ११ बजे दि भोजन करना और सन्ध्या को ५ या ७ बजे खा चाहिए। रात्रि में, जहाँ तक हो सके, हलका ही करना उचित है। कारण यह कि भरपेट भोजन के सोना हानिकारक है। ठीक समय पर भोजन न करना नहीं। भोजन पचने के उपरान्त दूसरी बार भोजन पहले पेट को कुछ विश्राम लेने की आवश्यकता है नियत समय पर भोजन न करना या और कुछ खा हानिकारक है। खाने के पदार्थ खूब चाब कर और धीरे खाना उचित है। भोजन के साथ अधिक लेना भी हानिकारक है।

## पकाना

भोजन पकाया हुआ क्यों खाना चाहिए, इसके कारण हैं—

(१) पका हुआ खाद्य देखने में अच्छा और अधिक सुस्वादु होता है।

(२) वह शीघ्रता से पच जाता है।

(३) पकाये हुए खाद्य को पचाने में मेदे को मिहनत करनी पड़ती है।

(४) पकाने से रोग के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं।

(५) पकाये हुए पदार्थ शीघ्र सड़ते या बिगड़ते नहीं

## पेय पदार्थ

पेय पदार्थों के मुख्यतः दो प्रकार हैं। पहला म दूसरा अमादक।

प्रमादक पदार्थों में दूध, जल, चाय और क़हवा आदि मुख्य हैं।

चाय एक पौधे की पत्तियों से तैयार की जाती है। वह चीन, भारत और लङ्का में विशेषता से पैदा होती है। हरी पत्तियां तैयार करने पर काली हो जाती हैं। चाय बनाने की तरकीब प्रायः सभी जानते हैं। इससे उसका वर्णन करने की ज़रूरत नहीं। चाय की पत्तियां उबलते हुए पानी में बहुत देर तक न रखनी चाहिए। क्योंकि, देर तक रखने से उनमें से एक प्रकार का रस (Tannin) निकल आता है। वह पेट के लिए हानिकारक है। साधारणतः चाय कोई भोजन नहीं। पर थोड़ी सी अच्छी बनी हुई चाय पीने से शरीर में कुछ फुर्ती आजाती है। वह रगों और पुट्ठों के लिए शक्ति-वर्द्धक होती है। वह मादक नहीं और न वह शिथिलता ही उत्पन्न करती है। पर, यदि अधिकता से उसका सेवन किया जाय या यदि वह विधि-पूर्वक न बनाई जाय तो उससे भूख न लगना, अजीर्ण, निद्रानाश, हृदय का धड़कना और रगों की शिथिलता आदि रोग उत्पन्न हो सकते हैं। दूध मिला चीनी पड़ जाने पर वह अधिक गुणकारी हो जाती है।

काफ़ी (अर्थात् क़हवा) एक प्रकार के पौधे के बीज से बनती है। वह अरब, अफ़्रीका आदि उष्ण प्रदेशों में पैदा होती है। क़हवे के बीज भून कर उनका चूर्ण बना लिया जाता है। इस पर खौलता हुआ पानी डाल देते हैं। इससे वह पीने लायक़ हो जाती है। एक प्याले क़हवे के लिए एक आधी चटांक चूर्ण डालना चाहिए। इसके भी गुण चाय के समान हैं। यह थकावट को दूर करती है।

मादक पदार्थ—मीठे अथवा खट्टे-मुख पदार्थों के सड़ने से उनमें एक प्रकार का रासायनिक (Fermentation) विकार उत्पन्न हो जाता है। इसीसे मद्य बन जाता है। योरपीय देशों में [illegible] का सेवन जाने से शरीर की कुछ उष्णता निकल जाती है। यह समझना भूल है कि ठंडे दिनों में मद्य पीने से शरीर गरम रहता है। चमड़े में रक्त भर जाने से कुछ समय तक गर्मी अधिक अवश्य रहती है। पर, उसके बाहर निकलते ही शरीर की प्राकृतिक उष्णता कम हो जाती है। मद्य पीने के उपरान्त शिथिलता आती है। यदि अधिक मद्य पिया जाय तो पुट्ठों और रगों पर बुरा असर पड़ता है। इस दशा में मनुष्य को अपने आप को सँभालना कठिन हो जाता है। न बोलने की शक्ति रहती है और न अच्छे फिर सकने ही की। मदिरा यदि अधिक मात्रा में पी जाय तो उससे मृत्यु का होना भी सम्भव है। जिस मनुष्य को मद्य पीने का अभ्यास पड़ जाता है उसकी बड़ी दुर्दशा होती है।

मद्य पीना अनावश्यक ही नहीं, किन्तु बहुत हानिकारक भी है। बहुत बलहीन हो जाने अथवा वृद्धावस्था में इससे कुछ लाभ शायद हो सकता हो। रुग्णावस्था में यदि वैद्य की आज्ञा हो तो बताई हुई मात्रा में मद्य पान किया जा सकता है। पर यह और देशों की बात है। हमारे देश में तो मद्य पान की कुछ भी आवश्यकता नहीं।

[ विज्ञान परिषद् की ओर से ]

हीरालाल गोयली।

---

## सुमन।

[ बङ्गला शब्द ]

सुमन! आज तू पड़ा हुआ है धरती तल पर।
सभी आ रहे, हाय! तुझे वे कुचल कुचल कर।
वह कल्पना तेरी कहाँ चली वह गया प्रभाता?
कल तो था तू मुकुल कली वह गया प्रभाता।
कहाँ कहाँ वह हास तेरा कहाँ गया तू आज।
वह तेरा वैभव कहाँ गया है आज सब?

[illegible]

और तीरे की लड़ाइयों में बहुत नाम पाया है। परन्तु वर्तमान युद्ध के मुक़ाबले में उन लड़ाइयों में लड़ना मानो लात मार कर पापड़ तोड़ना था। आज कल यह फ्रांस में लड़ रही है।

१७ मई १९१५ को, रात के समय, इस पल्टन की एक कम्पनी को आज्ञा मिली कि "ग्लोरी होल" नाम की एक खाई के कुछ भाग पर क़ब्ज़ा करो और "गार्डन हाइलेन्डर्स" नाम की घाँघरे वाली गोरा पल्टन को, जो वहाँ थी, वापस भेजो। "हाइलेन्डर्स" के सिपाही कई दिनों से बराबर लड़ रहे थे। उन्होंने जर्मन लोगों की एक खाई में घुस कर और उन्हें वहाँ से भगा कर उस पर अपना क़ब्ज़ा भी कर लिया था। इसी जीती हुई खाई पर अपना दख़ल जमाये रखने के लिए सिक्ख-कम्पनी को हुक्म हुआ। परन्तु, अभाग्यवश, उसके बाईं तरफ़, पास ही, जो खाई थी उस पर जर्मनों ही का क़ब्ज़ा था। उन लोगों ने अपनी और सिक्ख-खाई के बीच छोटे मोटे वृक्ष, लकड़ आदि डाल कर एक प्रकार की आड़ बना ली थी। जब किसी खाई पर पहले पहल क़ब्ज़ा किया जाता है तब सिपाही लोग पहला काम यह करते हैं कि नई खाई से अपने पीछे की खाइयों में जाने के लिए एक गहरी नाली खोद लेते हैं। उसी के भीतर से गोला, बारूद, रसद आदि भेजी जाती है। खुले मैदान से आना जाना असम्भव होता है। परन्तु सिक्ख लोग यह काम नहीं कर सके। क्योंकि वे आधी रात को पहुँचे थे।

समय तीन बजे तड़के का था। अभी उजेला न हुआ था। इस समय कप्तान बेंट्ज़ ने देखा कि शत्रु की फ़ौज बाईं तरफ़ की खाई में छिपे छिपे आ रही है। सिक्खों ने तुरन्त बाँयीं बग़ल को सम्भालना आरम्भ किया। परन्तु सुबह का उजाला कब होता है, इसकी ओर किसी के कारण ध्यान न हो सकी। जब पौ फटने का समय आया तब देखा गया कि बाईं तरफ़ की खाई में जर्मनों की संख्या बहुत ज़्यादह है। उन लोगों ने यह भी निश्चय किया कि हम पर घुस कर ही हमला करेंगे। वे लोग इस अभिप्राय से थे ही कि इतने में अनेक सवारों से परिपूर्ण बस्ते लिये आये। सिक्खों ने उन बस्तों में बम भरकर प्रहार किया। इस प्रकार बम की खाई दो बार तय हो चुकी। सिक्ख लोग जो थे न डिगे। शत्रु की खाई में सैनिक बहुत ज़्यादह थे। इस कारण वे लोग मनमाने बम्ब फेंक सकते थे। उनकी रसद का सम्बन्ध भी पीछे से नाली द्वारा था। सो उनको बराबर मिलता जाता था और काम पड़ने पर कुमक भी आ सकती थी। सिक्ख लोग इने गिने कुल सौ जवान थे। वे एक प्रकार से एक कुवे में बन्द से थे। पीछे से कुमक आने का कोई रास्ता न था। तथापि वे निडर होकर डटे लड़ते रहे। जब दो पहर का समय निकट आया तब मालूम हुआ कि सूखे बम्ब बहुत कम रह गये हैं। बहुत सब गीले हैं, जिन्हें फेंकने से कुछ भी लाभ नहीं। तब पीछे की खाइयों को सङ्केत द्वारा समाचार भेजे गये। वहाँ "गार्डन हाइलेन्डर्स" की वही पल्टन थी जो रात को वापस गई थी। उसके अफ़सरों ने दो बार गोलों के बस्ते भेजने का प्रयत्न किया; परन्तु दोनों बार उनकी चेष्टा व्यर्थ गई। जो टुकड़ियाँ भेजी गईं उनको बहुत हानि उठानी पड़ी। उनके अफ़सर भी मारे गये। लाचार उनको वापस जाना पड़ा। और अधिक प्रयत्न करना व्यर्थ समझा गया।

इधर खाई में बम्ब के गोले प्रायः चुक गये थे। यदि और न आये तो जर्मनों को रोकने का कोई उपाय नहीं। और यदि वे खाई में घुस आये तो नाक कट जायगी। इस कारण सिक्ख-कम्पनी के कप्तान ने सिपाहियों से पूछा कि कौन कौन आदमी खुले मैदान में जाकर गोलों के सन्दूक़ लाने को तैयार हैं। इस काम के लिए जाना मानो मौत को बुलाना था। परन्तु प्रत्येक सिपाही ने हाथ उठा दिया कि हम तैयार हैं। कप्तान साहब ने दस सिपाही चुन लिये और उनके साथ लफ़्टेंट स्माइथ को भेजा। स्माइथ साहब की उम्र केवल २१ वर्ष की है; अभी रङ्गरूट में निकले हैं। सिख पर भी बड़े साहसी हैं। ये भी वहाँ जाने में सिपाहियों के साथ चले। येन केन प्रकारेण ये लोग पीछे पल्टन की खाइयों में कुशलपूर्वक जा पहुँचे। पहुँचना तो कुछ कम कठिन था, परन्तु लौटती बार उनके सिर पर भारी भारी सन्दूक़ लादना था। प्रत्येक सन्दूक़ में ६६ बम्ब थे। उनको उठाने के लिए चार चार आदमियों की आवश्यकता थी।

दो बजे दोपहर को लौटना शुरू हुआ। ३०० गज़ तक तो सब लोग पीछे की खाई में पहुँचना था। मैदान बम

माननीय कप्तान मलिक उमर हयातखां तिवाना, सी० आई० ई०
[ युद्धस्थल में ए० डी० सी० का काम कर रहे हैं। ]

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

२३ नंबर सिक्ख-पायनियर्स पलटन के अफ़सर और सिपाही

आड़ बाड़ कुछ न थी। लाचार सिपाहियों ने घसटते घसटते चलना आरम्भ किया। परन्तु दूर भारी थे। वे किस प्रकार उठें? सिपाहियों ने अपने साफ़े खोले। उनका एक छोर तो उन्होंने दूसरे की कड़ियों से बाँधा और दूसरा अपनी कमर से। इस प्रकार वे आगे खिसकते चले। पीछे से दो चार सिपाही दूसरे को ढकेलने लगे। "हाइलेन्डर" पल्टन की खाई मोर्चे से कुछ दूरी पर एक कम गहरी नाली थी। लड़ाई के समय "हाइलेन्डर" लोगों ने जब बम्ब पहुँचाने का प्रबन्ध किया था तब इनका बहुत नुक़सान हुआ था। सैनिकों को भी इसी रास्ते से आना पड़ा था। इसमें अब यह नाली लाशों से भरी हुई थी। सिपाहियों को लाशों के ऊपर से खिसकते जाना पड़ा। जब वे मुर्दों के ऊपर होकर खिसकते तब उनका बदन जर्मन लोगों को दिख जाता और वे ताक ताक कर निशाना मारते। यदि गोली निकल भी जायँ तो सन्दूक़ कैसे निकलें? मुर्दों के बीच में आ जाने के कारण वे अटक जाते। यदि अटका हुआ सन्दूक़ खींचें तो ठोकर खाने का भय और ठोकर लगने पर फूटने और सब के वहीं उड़ जाने की शङ्का! यदि दूसरे लाशों के ऊपर आ जाय तो जर्मन लोग और भी अधिक मार मारें। कारण यह कि यदि गोली सन्दूक़ में आ जाय तो बिना प्रबन्ध के ही सब सिपाहियों का नाश हो जाय। ऐसा विकट प्रसङ्ग! कैसे सन्दूक़ खाइयों में पहुँचें?

उधर जर्मन लोगों ने देखा कि सिपाही बम्ब ला रहे हैं। फिर क्या था। गोलियों की झड़ी लग गई। लोगों के आस पास गिर कर फूटने लगे। सिपाहियों की जहाँ दृष्टि पड़ती वहीं कराल काल मुँह फाड़े खड़ा दिखाई देता। साधारण आदमी तो उस भयङ्कर अग्निवर्षा को देख भय के मारे वहीं मर जाता। परन्तु ये ११ मनुष्य साधारण मनुष्य न थे। ये महावीर थे। ये धीरे धीरे आगे बढ़ते ही जाते थे। मारने वाले से बचाने वाला जबरदस्त है, इस महावाक्य की सत्यता ये घोषणा करते जाते थे।

ये केवल बीस गज़ आगे न बढ़े थे कि इतने में सिपाही [illegible] गिर [illegible] गज़ पहुँचते [illegible] सिंह सिपाही और गोली लगने के कारण बेकाम होकर गिर गये। रह गये ६ सिपाही और लफ़्टेंट साहब। एक सन्दूक़ के लिए कम से कम ४ मनुष्य चाहिए। तो भी अपूर्व पराक्रम दिखला कर छः ही मनुष्य दोनों सन्दूक़ों को ले चले। उन्हें अपनी फ़िक्र न थी। फ़िक्र इस बात की थी कि बम्ब न पहुँचने से खाई वाले अपने साथियों की क्या गति होगी। ख़ैर किसी तरह वे लोग उस नाली के छोर तक पहुँचे। परन्तु रास्ते में नारायणसिंह और सम्पूरनसिंह, दो सिपाही और, मारे गये। नायक मङ्गलसिंह और सिपाही गङ्गासिंह तथा हरनामसिंह घायल हो गये। बचे लफ़्टेंट साहब और लालसिंह सिपाही। एक सन्दूक़ तो छोड़ना ही पड़ा। दूसरे को भी ले जाना असम्भव मालूम होने लगा। पर इन दोनों वीरों के लिए कोई बात असम्भव न थी। आगे नाली की भी आड़ न थी। खुले मैदान में सरकने, खींचने, घसीटने, पसीने से लथपथ वे आगे बढ़े। उधर जर्मनों ने और भी अधिक मार मारनी शुरू कर दी। परन्तु हम ऊपर कह आये हैं कि मारने वाले से बचाने वाला जबरदस्त है। इनके एक भी चोट न लगी और वे अपनी खाई के पास एक साथ में जा पहुँचे। पर उसमें पानी इतना था कि वहाँ से उतरने में सन्दूक़ के भीग जाने का डर था। नाला पार होते ही जर्मन लोगों की गोलियाँ, आड़ या आगे के कारण, न पहुँच सकतीं। घबराये हुए मनुष्यों को तो प्राणों की पड़ी और वे सीधे चले आते। परन्तु इन्हें तो सन्दूक़ पहुँचाना था। और उसके भीग जाने से सब काम बिगड़ जाता। इस लिए वे नदी के इसी पार रहे और इसकी आड़ ढूँढ़ने लगे। कुछ देर में वह मिल भी गई। पर इतनी देर तक जर्मनों ने इनके नाश का कोई उपाय न उठा रक्खा। ईश्वर ने इनकी रक्षा की और ये नदी पार करके अपनी खाई में उतर गये। अपनी खाई! अपने भाई! अपने गुरुजी के! की ध्वनि से भूमि उठी। वहाँ पहुँच कर इन वीरों की जो कैफ़ियतें देनी पड़ीं उससे मालूम हुआ कि ये सिपाहियों के देने से परिपूर्ण हैं। फिर भी ईश्वर की कृपा से ये बच कर आ गये।

लफ़्टेंट साहब को इस कार्य [illegible] के कारण विक्टोरिया क्रास नामक [illegible] सूबेदार को इस विलक्षण युद्ध के लिए [illegible]

का तमग़ा। खेद की बात है कि वीर लालसिंह खाई में पहुँचने पर थोड़ी देर के बाद मारा गया। लफ़्टेन्ट साहब सचमुच ही भाग्यवान् हैं। एक बार वे चुरट सुलगा कर हाथ में लिये खड़े थे कि गोली लगने से चुरट उड़ गया, पर उनकी उँगलियों को आँच भी न लगी।

यही १५ नं० सिक्ख पल्टन की वीरतासूचक कथा है। धन्य है उस पञ्जाब-भूमि को जहाँ ऐसे ऐसे वीर उत्पन्न होते हैं।

लज्जाशङ्कर झा।

---

## सबल और निबल।

चौपदे

मर मिटे पिट गये सहा सब कुछ।
पर निबल की सुनी गई न कहीं।
है सबल के लिए बनी दुनिया।
है निबल का यहाँ निबाह नहीं॥ १॥

जान पर बीतती किसी की है।
और कोई है जी को बहलाता।
एक को धूल में मिला करके।
दूसरा है कमाल दिखलाता॥ २॥

घर किसी का उजाड़ होता है।
और बनते महल किसी के हैं।
है किसी गेह का दिया बुझता।
और कहीं दीये जलते घी के हैं॥ ३॥

दूसरों का बिगाड़ करके ढंग।
ढंग अपना सभी जमाते हैं।
एक के नाम को मिटा करके।
दूसरे लोग नाम पाते हैं॥ ४॥

क्या करें बात इन अनीतों की।
हार होंगे दुखी इसे सुन के।
बेकसों का गला दबा देना।
खेल है बाँयें हाथ का इनके॥ ५॥

करें न दावे किसी पर कोई।
करें न करना सभी तै कर दें।
पर उन्हें क्या, करेंगे मन मानी।
जब कि पुतले-सितम कभी ऐंठे॥ ६॥

काम से काम है उन्हें रहता।
वे भला कब हुए किसी के हैं।
और पिसते को पीस देना ही।
नित्त के चोचले धनी के हैं॥ ७॥

चैन कितने लोग पाते ही नहीं।
जान कितनी जो न हाथों से गई।
नित कलेजा सैकड़ों कुचले बिना।
पाँव सीधे पड़ नहीं सकते कई॥ ८॥

क्या कहें, जी है धड़क उठता बहुत।
फूँक और उजाड़ घर फूले फले।
लालसायें राज या धन मान की।
आज भी हैं रेतती लाखों गले॥ ९॥

बे-बसी जिन पर बरसती है बहुत।
आँख से आँसू बहा करके घड़ों।
गेंद जैसे हैं लुढ़कते धूल में।
ठोकरें खा खा गिरे सिर सैकड़ों॥ १०॥

छिन गये सुख, चाह मिट्टी में मिली।
और कलेजों ने बुरी डेसें सहीं।
लोग लाखों लुट गये सरबस गया।
और हुआ क्या? एक की बातें रहीं॥ ११॥

दूसरों की पीर कब समझी गई।
और के दुख की हुई परवाह कब।
बात कहते गरदनें कितनी नपीं।
माँ चढ़ा बेटा कोई बे-पीर जब॥ १२॥

जी सभी का मांस से ही है बना।
है कलेजा दूसरों के पास भी।
कौन सुन जाता नहीं जितना गँवा।
पर समझना यह नहीं कोई कभी॥ १३॥

अयोध्यासिंह उपाध्याय।

---

# तिब्बत के दलाई लामा।

तिब्बत के लोग दलाई लामा को ईश्वर का अवतार मानते हैं। उनका विश्वास है कि मनुष्य से जो कुछ पाप पुण्य होता है उसका निर्णय यही करते हैं। अपने निर्णय के अनुसार मनुष्य को नरक या स्वर्ग देना भी इन्हीं का काम है। एक दलाई लामा की मृत्यु के बाद नये दलाई लामा उनके स्थान पर नियत किये जाते हैं। दलाई लामा के चुनाव में बड़ी कठिनता होती है।

जब दलाई लामा मरने लगते हैं तब वे कुछ चिह्न बतला देते हैं कि मैं अमुक रूप से अमुक स्थान में अवतार लूँगा। उनके मरने के बाद पैदा होने वाले लड़कों का नाम और पता लिख कर तिब्बत के अफ़सर तिब्बत की राजधानी लासा को भेज देते हैं।

कुछ दिनों बाद इस विषय में जाँच-पड़ताल होती है। जाँच पड़ताल हो चुकने पर दलाई लामा बतलाये हुए चिह्न जिन लड़कों में पाये जाते हैं उनके नाम लिख लिये जाते हैं। इसके बाद एक नियत तिथि को कुछ लोग एकत्र होते हैं। इनमें तेचुङ्-गोम्पा का ज्योतिषी, बड़े बड़े अफ़सर, कुछ चीना और अम्बा नामक चीन का राजदूत- ये सब रहते हैं। ये लोग पुटाला नामक महल के एक बड़े कमरे में इकट्ठे होकर विचार करते हैं। लड़कों के चुने हुए नाम अलग अलग काग़ज़ के टुकड़ों पर लिखे जाते हैं। यह काम बड़ी सावधानी से किया जाता है। काग़ज़ के सभी टुकड़े एक ही तरह मोड़े जाते हैं। उनके मोड़ आदि में ज़रा सा भी भेद भाव नहीं देखा जाता। इन सब मुड़े हुए टुकड़ों को एक सोने के प्याले में रख कर बोधिसत्व नामक अधिकारी बुद्धदेव की मूर्ति के सामने घुटनों के बल बैठ जाता है। वह मूर्ति से प्रार्थना करता है कि इस लोग दलाई लामा के चुनाव में सफल-मनोरथ हों। प्रार्थना करके वह काग़ज़ के उन टुकड़ों को प्याले में इस तरह घुमाता है कि सब इकट्ठे हो जायँ। इसके अनन्तर प्याला मेज़ पर रख दिया जाता है। दो लकड़ियों के सहारे उससे काग़ज़ का एक टुकड़ा निकाला जाता है। ऐसा करते समय अम्बा अपनी आँखें बन्द कर लेता है। जो टुकड़ा निकलता है उस पर लिखा हुआ नाम सब लोगों को सुनाया जाता है। बस, इसी नाम का लड़का दलाई लामा की गद्दी का हकदार समझा जाता है। यह काम ठीक उसी तरह होता है जिस तरह हमारे यहाँ किसी वस्तु पर चिट्ठी डाली जाती है।

पर वर्त्तमान दलाई लामा के विषय में ये बातें कुछ भी नहीं हुई थीं। पहले दलाई लामा के बतलाये हुए सारे चिह्न इनमें जन्म से ही मिल गये थे। तेचुङ्-गोम्पा के एक ज्योतिषी ने भी इन्हें दलाई लामा का अवतार बतलाया था।

वर्त्तमान दलाई लामा के पहले १२ दलाई लामा और हो गये हैं। ये तेरहवें हैं। इनका जन्म १८७६ ईसवी में हुआ था। इनका पूरा नाम है—ग्यात्सो थुपतेन ग्यात्सो—अर्थात् बुद्धधर्म का प्रज्ञासागर समुद्र। लामा का अर्थ है पुजारी, और दलाई लामा का, सबसे बड़ा पुजारी। तिब्बत में दलाई लामा को ग्यात्सो रिम्पोछे अर्थात् दार्शनिक रिम्पोछे कहते हैं। आजकल लोग इन्हें अवलोकितेश्वर अर्थात् सारी सृष्टि का प्रभु भी कहते हैं।

दलाई लामा के रहने के लिए लासा शहर के बाहर पोटाला नामक स्थान में जो राजमहल है, अर्थात् लाल महल नामक एक प्रासाद है। इसे बने लगभग १०० वर्ष हुए। इसमें तीन सौ से ऊपर कमरे हैं। सबसे ऊपर की छत में सोने के पत्र मढ़े हुए हैं।

वर्त्तमान दलाई लामा का जन्म लासा नगर से १०० मील पूर्व की ओर एक ग्राम में हुआ था। इनके माता-पिता की दशा इस समय बहुत ही हीन हो गई है। ये बेचारे लड़कपन ही में

कर अपने कुटुम्ब का भरण-पोषण करते थे। दलाई लामा के दो बड़े भाई थे। उनमें से एक अभी तक मौजूद हैं। वे पोटाला-गोम्पा में प्रधान अध्यापक का काम करते हैं। दूसरे भाई का कुछ पता नहीं।

वर्तमान दलाई लामा तीन वर्ष के थे तभी इन्हें यह पदवी दी गई थी। जब ये छः वर्ष के हुए तब चीन-सरकार की स्वीकृति से इनकी शिक्षा-दीक्षा का काम देपुन-गोम्पा के पुजारी को सौंपा गया। शिक्षा समाप्त करके धीरे धीरे इन्होंने तिब्बत के शासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली। राज्य-प्रबन्ध इनके हाथ आते ही तिब्बत की उन्नति होने लगी। चीन को यह बात अच्छी न लगी। क्योंकि, चीन का जो राजदूत तिब्बत में रहता था वही वहाँ का परोक्षरूप से शासक भी था। वर्तमान दलाई लामा ने उक्त राजदूत की परवा न की। वे तिब्बत की उन्नति में लग गये।

कहते हैं कि भूतपूर्व दलाई लामा जब राज्यकार्य चलाने लायक़ हो जाते थे तब चीन के अधिकारी गुप्तरूप से उनका काम तमाम कर डालते थे। इस प्रकार शासन का भार चीन के राजदूत ही के ऊपर रहता था। इस बात की सत्यता असत्यता का हाल भगवान् ही जाने।

चीन के तिब्बत से रुष्ट होने का प्रधान कारण यह बतलाया जाता है—वर्तमान दलाई लामा का राजतिलकोत्सव देखने के लिए रूस का एक फ़ौजी अफ़सर लासा जाना चाहता था। उसने चीन-सरकार के पास आवेदन-पत्र भेज कर जाने की अनुमति माँगी। चीन ने उसकी यात्रा के प्रबन्ध के लिए तिब्बत के ग्यावो नामक अधिकारी को आज्ञा दी। पर तिब्बत की मन्त्रिसभा ने इसे स्वीकार न किया। उसने अपने यहाँ किसी विदेशी का आना अच्छा न समझा। इसी मन्त्रिसभा और ग्यावो के हाथ में तिब्बत का शासन-सूत्र था।

इस उत्तर से चीन-सरकार को बुरा लगा। वह अपने को तिब्बत का मालिक समझती थी। सन् १८१४ ईसवी में, नेपाल और तिब्बत की ल के समय उसने तिब्बत को सहायता भी दी। तभी से तिब्बत की सीमाओं पर चीनी फ़ौजें रहने लगी थीं। तिब्बत वालों ने उस समय बात का कुछ भी विरोध न किया था।

अब चीन-सरकार ने तिब्बत को दण्ड ठाना। वह तिब्बत पर अपना पूरा अधिकार का उपाय सोचने लगी। अन्त में सन् १९ चीन और तिब्बत में लड़ाई छिड़ ही गई।

दलाई लामा का विचार था कि लड़ाई से का व्यर्थ ही तहस-नहस न किया जाय। पर ति वालों के जोश को वे शान्त न कर सके। अत दलाई लामा तिब्बत छोड़ कर अँगरेज़-सरकार छत्रच्छाया में हिन्दुस्तान चले आये। यहाँ उन शिमला, कलकत्ता, बनारस आदि स्थानों में ठ किया और दो वर्ष तक दार्जिलिङ्ग में रहे। अ में तिब्बत की जीत हुई और दलाई लामा हिन्दुस्त से अपने देश को लौट गये।

इस पराजय से चीन-सरकार का क्रोध और भी बढ़ा। पर ब्रिटिश गवर्नमेंट ने दोनों के पारस्परिक झगड़े को मिटा देना चाहा। कुछ समय पहले शिमले में राज-कर्मचारियों की ए बैठक हुई थी। उसमें तिब्बत और चीन के राज भी थे। चीन-सरकार ने मेल के प्रस्ताव का शाय विरोध किया। इसी से शायद मेल न हो सका सुनते हैं, अब फिर चीन और तिब्बत में लड़ाई छिड़ी है।

तिब्बत वाले कहते हैं कि वर्तमान दलाई लामा के बाद अब और कोई दलाई लामा न होगा।

दलाई लामा से उतर कर ताशी लामा हैं। इनका दरजा दलाई लामा से कुछ ही कम है। दलाई लामा की आज्ञा का पालन करना ये अपना कर्तव्य समझते हैं। तिब्बत के निवासियों पर इनका भी बड़ा प्रभाव और प्रभुत्व है। शानसी की पश्चिम दिशा में शिगासी नामक एक नगर है। वहीं आप रहते हैं।

निधन में लामाओं, अर्थात् पुरोहितों, का ही आधिपत्य है। राज्य-सञ्चालन, धर्म-व्यवस्था, धर्म और विद्या प्रचार सब इन्हीं के हाथ में है। कोई भी धार्मिक उत्सव बिना इनके नहीं होता। उत्सवों के समय ये नाचते भी हैं। इनका यह धार्मिक नृत्य बड़ा ही कौतूहलवर्धक होता है।

मातादीन पाण्डेय।

---

## भारतवर्ष।

जहाँ होते थे मनुज जहाँ के करते थे कुछ पाप नहीं;
पशु पक्षी तक क्षुधा-अनल का सहते थे सन्ताप नहीं।
जहाँ आज भी पतित-पावनी बहती गङ्गा-धारा है—
सब देशों में पूत पूज्य वह भारत-वर्ष हमारा है॥ १॥

नश्वर समझ जगत को जिसने केवल दिया धर्म पर ध्यान,
पर अपनी यह वस्तु अन्य की, ऐसा जिसको हुआ न ज्ञान।
प्राणों को भी दे कर जिसने अपना धर्म उबारा है—
सब देशों में धर्म-धुरन्धर भारत वही हमारा है॥ २॥

पर-पीड़न को पाप समझ कर, परोपकार समझ निज धर्म,
दुष्टों के भी साथ आज तक जिसने किया न कुत्सित कर्म।
हिंसा-रहित दया से पूरित जिसकी नीति उदारा है—
सब देशों में स्वार्थ-शून्य वह भारतवर्ष हमारा है॥ ३॥

मानव दानव देनोंही का जिसने सुभग विभाग किया।
अध्यापन-अध्ययन-कार्य में केवल जिसने भाग लिया।
विश्वोन्नति प्रलय का कारण जिसने ठीक विचारा है—
सब देशों में ज्ञान-गेह वह भारतवर्ष हमारा है॥ ४॥

जिसने साथ कृषि-कर्म, कला-कौशल का जो है जन्म-स्थान,
जग का जड़ता-तिमिर हटा कर चमका है जो सूर्य समान।
मानव-जीवन का पृथ्वी पर जिसने चित्र उतारा है—
सब देशों में सभ्य-शिरोमणि भारत वही हमारा है॥ ५॥

पर कामों में सब के आगे चलता था जो सहित विवेक,
वही आज सब के पीछे हो भोग रहा है कष्ट अनेक।
निज गौरव को तदपि चित्त से जिसने नहीं बिसारा है—
सब देशों में मान-धनी वह भारतवर्ष हमारा है॥ ६॥

दुखी देख कर अन्य विश्व को जिसने ज्ञान-निधान दिया,
अन्य देशों को भी जिसने शिक्षित सभ्य-समान किया।
मुक्ति-स्वत्व का देने वाला जिसने धर्म प्रचारा है—
सब देशों का उपदेशक वह भारतवर्ष हमारा है॥ ७॥

धोखा देकर के परस्व का लेना आया जिसे नहीं;
चींटी तक को भी दुख देना मन में भाया जिसे नहीं।
सदा न्याय के लिए सत्य का जिसने लिया सहारा है।
सब देशों में सत्य सिन्धु वह भारतवर्ष हमारा है॥ ८॥

शस्य-श्यामला धरा सदा थी षट् ऋतुओं के साथ जहाँ,
पारस तक बँटते रहते थे नरनाथों के हाथ जहाँ।
सुरपति ने भी जिसके आगे आ कर हाथ पसारा है—
सब देशों का मौलि-मुकुट वह भारतवर्ष हमारा है॥ ९॥

हे जगदीश! दीन दुख-हारक, दुर्मति-नाशक, दया-निधान,
धर्म-ग्लानि बढ़ रही है नित निज प्रण पर कुछ दीजे ध्यान।
आर्त स्वर से आज व्यग्र हो जिसने तुम्हें पुकारा है—
सब देशों में दीन दुखी वह भारतवर्ष हमारा है॥ १०॥

रामचरित उपाध्याय

---

## कृत्रिम नेत्र।

सरस्वती के पाठकों को मालूम ही होगा कि अन्धे मनुष्यों के पठन-पाठन के निमित्त एक विशेष प्रकार की उभरेवाली पुस्तकें आज कल प्रचलित हैं। उन पुस्तकों के पन्नों पर हाथ फेरने से अँगुलियों पर जो असर होता है उसी के ज्ञान से अक्षरों का बोध होता है। इस परिपाटी में अनेक कठिनाइयाँ हैं। उसके सीखने में समय बहुत लगता है। इन पुस्तकों की कीमत भी इतनी अधिक रखनी पड़ती है कि मामूली आदमी उनको मोल भी नहीं ले सकते। इसीलिए वैज्ञानिक लोग कई वर्षों से एक सहज तरकीब ढूँढ़ने का प्रयत्न कर रहे थे। दो-चार यन्त्रों का आविष्कार भी हो चुका था, पर उनसे पूरी कामयाबी न हुई थी। पर अमेरिका-निवासी अध्यापक ब्राउन के अक्लान्त परिश्रम से अब एक ऐसा कृत्रिम नेत्र बन गया है जिसके द्वारा कोई भी अन्धा मनुष्य किसी भी पुस्तक अथवा समाचार-पत्र को सहज

के सारे उपकरण और साधन झपाटे से काम में लाये जाने लगे। ब्रिटिश गवर्नमेंट को कौन कौन काम तत्काल ही करने पड़े, इसका दिग्दर्शन नीचे किया जाता है।

**पहला काम।** जितनी फ़ौज इकट्ठी की जा सके उतनी इकट्ठी करना। फिर उसे क़वायद, परेड इत्यादि सिखा कर युद्ध-विद्या में अच्छी तरह शिक्षित कर देना।

**दूसरा काम।** सारी जल और थल-सेना के लिए गोले-गोलियां, बारूद, तोप, बन्दूक़ आदि युद्ध की जितनी सामग्री है सब जमा करना।

**तीसरा काम।** इस इतनी बड़ी सेना के खाने-पीने और कपड़े-लत्ते का प्रबन्ध करना।

**चौथा काम।** नये रँगरूट भरती करके उन्हें क़वायद, परेड सिखाना और यह देखते रहना कि उनकी तन्दुरुस्ती तो नहीं बिगड़ती। इसके सिवा लड़ाई के मैदान से लौटे हुए घायलों का इलाज करना और अच्छे हो जाने पर फिर उन्हें लड़ाई पर भेजना।

**पाँचवाँ काम।** कई लाख फ़ौज युद्ध के लिए तैयार करके जल, थल और आकाश में महीनों नहीं, बरसों लड़ाई जारी रखना। अतएव प्रति दिन करोड़ों रुपये के ख़र्च का पहले ही से प्रबन्ध करना।

**छठा काम।** खेत-खलिहान में, कारख़ानों में, दूकानों में और दफ़्तरों में काम करनेवाले लाखों आदमियों को वहाँ से खींचकर फ़ौज में भरती करना। उनमें गोले, बारूद और हथियार बनवाना तथा लड़ाई से सम्बन्ध रखनेवाले और सैकड़ों काम भी कराना। इस दशा में खेती, व्यापार, तथा अन्यान्य धन्धों में लगे हुए इन लोगों की जगह पर और आदमियों का प्रबन्ध करके सब काम पूर्ववत् जारी रखना।

**सातवाँ काम।** शत्रुओं के देशों से जो माल आता था उसके बन्द हो जाने से उत्पन्न हुई असुविधा को दूर करना। और देशों से आवश्यकीय माल से लदे हुए जहाज़ों को शत्रु द्वारा डुबाये जाने से बचाना। लड़ाई के लिए रेल, सड़क, जहाज़, मोटर, इत्यादि पर अधिकार करके इनसे युद्ध-सम्बन्धी सैकड़ों काम लेना। ये सब देशी कामों की जिनके कारण विदेशों से अनेक प्रकार की सहायता ले सकते हैं। इन सबको दूर करना।

**आठवाँ काम।** लड़ाई के कारण लाखों आदमी को विपत्ति-ग्रस्त होना पड़ता है। कितने ही कुटुम्ब भूखों मरने की नौबत आती है। ऐसे लोगों के लिए से अनन्त धनराशि एकत्र करके उन्हें सहायता पहुँचाना

ये सब आवश्यकतायें मैंने बहुत थोड़े शब्दों में दी की हैं। इनकी पूर्ति के लिए ब्रिटिश गवर्नमेंट और ब्रि जाति ने जो दूरदर्शिता, जो अध्यवसाय और जो प्रबन्ध हैं उन पर विचार करने से मन आश्चर्य-सागर में निमग्न जाता है। इन सब बातों की सफलता के लिए जो विलायत में किया गया उसका संक्षिप्त वर्णन भी इस छोटे लेख में नहीं हो सकता। तथापि इन कार्य्यों के सम्ब में क्या क्या कार्रवाई हुई, यह मैं बहुत ही थोड़े श में बतलाने की चेष्टा करूँगा।

## सेना की वृद्धि।

युद्ध के कारण ब्रिटिश गवर्नमेंट को अपनी सेना बढ़ा कर बहुत बड़ी सेना तैयार करनी पड़ी। युद्ध पहले उसकी नियमित सेना में केवल ४,१३,४१ सैनिक थे। इसके अतिरिक्त ७७,२०० गोरे सैनिक भारतवर्ष में थे। उनका ख़र्च भारत ही को देना पड़ता था। वे इस संख्या में शामिल नहीं। पर अब देखिए, इतने थोड़े समय में ब्रिटिश नमेंट ने एकदम अपनी सेना के सैनिकों की संख्या बढ़ा कर ३० लाख कर दी है। कुछ ही समय के भीतर यह संख्या बढ़ कर ३० से ४० लाख हो जानेवाली है।

ब्रिटिश गवर्नमेंट ने एकदम इतनी बड़ी सेना कैसे इक्ट्ठी कर ली यह बतलाने के पहले यहाँ पर यह भी बता देना उचित है कि उसने युद्ध के पहले इतनी कम सेना रखी क्यों थी। बात यह है कि ब्रिटेन के सम्मिलित राज्यों की भौगोलिक स्थिति कुछ ऐसी है कि उन पर जलमार्ग से ही आक्रमण होने की सम्भावना रहती थी। इसीसे यह आवश्यक हुआ कि वह एक ऐसी नौ-सेना और लड़ाकू जहाज़ों का ऐसा बड़ा बेड़ा सदैव तैयार रक्खे जो अद्वितीय हो। ब्रिटेन के सम्मिलित राज्यों को स्थल मार्ग से कोई डर था ही नहीं। इसीसे उसने थल-सेना पर ब्रिटिश सरकार ने ध्यान दिया।

ब्रिटिश सरकार के अनुभवी विचारकों की यह धारणा थी कि पूरे के बड़ों को हाथ में लेकर आप लड़ते हैं। पूरे के बड़ों में से वे देखेंगे कि ब्रिटेन का संयुक्त राज्य की

द्वीपों का समूह है। उन द्वीपों का क्षेत्रफल कोई १,२१, ००० वर्ग मील है। सन् १९१४ ईसवी की मनुष्य गणना के अनुसार उनकी आबादी ४ करोड़ ६४ लाख ७ हज़ार ३७ है। इन द्वीपों में ग्रेट-ब्रिटेन और आयरलेंड सबसे बड़े हैं। ग्रेट-ब्रिटेन अलग अलग तीन विभागों में विभक्त है—इँगलेंड, स्काटलेंड और वेल्स। संयुक्त राज्यों के सभी द्वीप चारों ओर समुद्र से घिरे हुए हैं। इनकी रक्षा के लिए, अन्यान्य देशों के साथ इनका जो व्यापार है उसकी रक्षा के लिए, तथा संयुक्त राज्य के जो उपनिवेश तथा अधीन राज्य हैं उनकी रक्षा के लिए बड़ी भारी नौ-सेना रखना ब्रिटिश गवर्नमेंट के लिए कितना आवश्यक था, इस बात को सभी जान सकते हैं। ब्रिटिश गवर्नमेंट बाहर किसी से लड़ना नहीं चाहती थी। इसी कारण उसने स्थल-सेना अधिक नहीं रक्खी। ब्रिटिश जाति का बहुत दिनों से यह निश्चय रहा है कि उसे इतनी नाविक शक्ति रखनी चाहिए जो और किसी भी राज्य की नाविक शक्ति से दूनी हो। साथ ही वह खूब तैयार भी रहे। उसमें किसी बात की कमी न रहे। स्थल-सेना बढ़ाने की कोई आवश्यकता ही नहीं समझी गई। इसीसे ब्रिटिश गवर्नमेंट ने सन् १९१३-१४ में नौसेना-विभाग में जहां ५० करोड़ ३१ लाख ५० हज़ार खर्च किये वहां स्थल-सेना-विभाग में उसने केवल ४२ करोड़ ३३ लाख ही रुपये खर्च करना उचित समझा। लड़ाई शुरू होने के समय ब्रिटिश नाविक शक्ति संसार की सभी नाविक शक्तियों से बढ़ी-चढ़ी थी। यही नहीं, वह तत्काल ही अपना काम करने के लिए तैयार भी थी। इसका कारण नौ-सेना-विभाग की दूरदर्शिता थी।

परन्तु कुछ समय से लोगों के ध्यान में यह आने लगा कि ब्रिटिश गवर्नमेंट को भी अपनी स्थल-सेना की शक्ति बढ़ानी चाहिए। उन्होंने गवर्नमेंट पर दबाव भी डाला। उन्होंने कहा, देखिए अन्यान्य देश अपनी अपनी सेना बढ़ाने में लगे हैं। हर देश में सब की सेना में भरती होना वहां क़ानून से अनिवार्य कर दिया गया है। अब दशा पहले की जैसी नहीं। बहुत सम्भव है कि हमें योरप की किसी शक्ति से किसी दिन लड़ना पड़े। अतएव हमें भी स्थल-सेना बढ़ाना चाहिए। आम के भूतपूर्व कमांडर-इन-चीफ़ फ़ील्ड-मार्शल लार्ड रॉबर्ट्स इस मत के पोषक थे। इनके अनुयायी भी बहुत लोग हो गये थे। लार्ड रॉबर्ट्स ने सेना बढ़ाने और सेना में भरती होना अनिवार्य करने के लिए बहुत परिश्रम और प्रयत्न भी किया।

तथापि विलायत का अधिकांश प्रजा मत स्थल-सेना की वृद्धि के पक्ष में न था। उन्होंने कहा कि हम योरप के किसी देश के साथ झगड़ा करें ही क्यों, जो हमें स्थल-सेना बढ़ानी पड़े। जब हम किसी से लड़ना चाहते ही नहीं तो व्यर्थ सेना बढ़ाने की क्या ज़रूरत? यदि आवश्यकता ही हुई तो हम लोग ख़ुशी से सेना में भरती होंगे। क़ानून बना कर लोगों को ज़बरदस्ती सेना में भरती करना अनावश्यक है। यही कारण था कि स्थल-सेना की वृद्धि के विषय में लार्ड रॉबर्ट्स जैसे नामी पुरुष का भी प्रस्ताव सफल न हुआ।

कुछ वर्ष हुए, विलायत में स्थल-सेना की वृद्धि के लिए एक नई सेना तैयार की गई। इसका नाम "टेरिटोरियल" सेना रक्खा गया। यह नियमित सेना न थी। इसे बलमंदों की सेना कहना चाहिए। जो लोग इसमें ख़ुशी से भरती होते थे, उन्हें साल में कुछ ही समय तक क़वायद परेड आदि सीखना पड़ता था। इन लोगों को वर्दी आदि भी मिलती थी। कुछ रुपये भी मिलता। निर्दिष्ट समय तक फ़ौजी काम करके ये लोग अपने अपने घर चले आते थे और अपने अपने व्यवसाय में लग जाते थे। इनके रखने का यह प्रयोग था कि यदि कोई शत्रु विलायत पर हमला करे तो इनकी सेना तुरन्त सङ्गठित कर दी जाय और ये लोग देश की रक्षा करें। इनकी संख्या युद्ध शुरू होने के पहले १,२१,११२ थी। इनकी यह संख्या ब्रिटिश सेना की इसी संख्या के अन्तर्गत थी जो हम ऊपर बता आये हैं। इसका ख़र्च भी स्थल-सेना के ख़र्च में ही सम्मिलित था। अस्तु।

"टेरिटोरियल" नाम की यह दो लाख सेना बढ़ाने से भी ब्रिटिश गवर्नमेंट की स्थल और जल-सेना सम्बन्धिनी नीति में कोई विशेष परिवर्तन न हुआ। यह नीति पूर्ववत् बनी रही। "लिबरल आर्म्स सीरीज़" नामक ग्रन्थ-माला के सम्पादक, मेजर लिंच, इत्यादि दो चार लोगों को छोड़ कर अन्य सभी समाचार-पत्रों के लिखने वाले यही कहते थे। वे भी गवर्नमेंट की इसी नीति के समर्थक थे। विलायत के [illegible] की [illegible]

रवाना हुए। जितने विश्वविद्यालय हैं उन सब में शिक्षा पाने वाले बी० ए० और एम० ए० क्लासों के छात्र हज़ारों की संख्या में दौड़ पड़े। ऐसे शायद कुछ ही कुटुम्ब रह गये होंगे जिनका कोई भी निकट या दूर का सम्बन्धी इस समय अपने देश की रक्षा के लिए युद्ध के मैदान में न लड़ रहा हो।

ग्रेट ब्रिटेन के संयुक्त राज्य में दो करोड़ पुरुष हैं। उनमें से इस समय ३० लाख के लगभग युद्धस्थल में शस्त्र-सञ्चालन कर रहे हैं। इस सम्बन्ध में ध्यान रखने योग्य सब से बड़ी बात यह है कि फ़ौज में भरती होने के लिए इन में से एक आदमी पर भी बलप्रयोग नहीं किया गया। सब लोग अपने ही मन से ख़ुशी ख़ुशी फ़ौज में भरती हुए हैं। भरती होना अब तक बन्द नहीं। हर रोज़ हज़ारों रँगरूट नाम लिखाते हैं।

यह सब होने पर भी कुछ लोगों की राय है कि जो जवान अब तक सेना में नहीं भरती हुए उन्हें बलपूर्वक भरती करना चाहिए। इनका कहना है कि कुछ लोग इस बात की राह देख रहे हैं कि अब तक उनसे कर न कहा जाता कि तुम्हारा देश तुम्हारी सेवा का मुहताज है अब तक वे सेना में नाम न लिखावेंगे। ऐसे लोग आप-बधे आने नहीं, उनकी आवश्यकता भी नहीं है। ये लोग पुरज़ोर ऐसे क़ानून की राह देख रहे हैं जो इन्हें सेना में भरती होने के लिए मजबूर करे। किसी ही सामयिक इस बात के पक्षपाती भी हैं। ये कहते हैं कि ऐसे क़ानून के जारी होने की आवश्यकता है। [illegible] इनकी सम्मति है कि जिस दर से अब तक सेना की संख्या बढ़ाई गई है वह पर्याप्त नहीं। उससे [illegible] और अधिक आवश्यकता है। ऐसे कठोर उपायों से [illegible] यह कहना अत्युक्ति नहीं। [illegible]

[illegible] अफ़सरों और सैनिकों से सहायता कर रहे हैं। यद्यपि ठीक नहीं मालूम कि कैनाडा, आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड ने कितनी सेना भेजी है, तथापि इनमें से प्रत्येक भेजी गई सेना की संख्या कम नहीं। दक्षिणी ने पहले शत्रु जर्मनों को परास्त कर उनसे वह लिया जो दक्षिण-पश्चिमी अफ़्रीका कहाता है। सि साम्राज्य की रक्षा के इरादे से बहुत सी सेना योरप स्थल में भेजने का निश्चय किया। यह सेना वहाँ जा रही है। आशा है, शीघ्रही यह योरप में पहुँच

भारत से भेजी गई जो सेना अपने सम्राट् इस समय योरप में लड़ रही है उसके सिपाहियों और अफ़सरों से मिलने का मुझे मौक़ा मिला है। की रक्षा के लिए अपना रुधिर बहाने में ये लोग कम नहीं। ब्रिटिश जाति और ब्रिटिश जातियों के जिस उत्साह से लड़ रहे हैं, हमारे भारतीय वीरों उस से रत्ती भर भी कम नहीं। जिन जिन लोगों से मैं ने यही कहा कि योरप में जाकर अपने राजा के से लड़ने का हमें बहुत बड़ा गर्व है। जिस उत्साह से वीर इस समय युद्ध के मैदान में लड़ रहे हैं, इसका बढ़ कर प्रमाण देने के लिए मैं सरदार बहादुर के एक पत्र से कुछ वाक्य उद्धृत करता हूँ। सरदार २३ सवार लिये पार्लामेण्ट्री गार्डस की में भेजर थे। अभी हाल ही में वे आग में घायल हुए हैं। जिस समय मैंने [illegible] एक सम्बन्धी को, जो लन्दन में [illegible] रहे हैं, एक पत्र लिखा। इसी उपलक्ष को इन सरदार साहब का पत्र देखने को मिला है। आपने सरदार साहब लिखते हैं—

[illegible]

इसके बाद [illegible] सरदार साहब ने [illegible] है, [illegible]

भारतीय सेना का युद्ध के मैदान में भेजा जाना भी बड़ी बुद्धिमानी का काम हुआ। इसका बहुत कुछ श्रेय लार्ड किचनर और उनके सहकारियों को है। वर्तमान युद्ध में यदि भारतीय सैनिक न शामिल होते तो भारत के हृदय में अत्यन्त ही चोट लगती। जर्मनी यह समझता था कि भारतीय सैनिक युद्ध में न शामिल किये जायँगे। आश्चर्य है, कितने ही भारत-प्रवासी ब्रिटिश नागरिकों का भी यही विचार था। उनकी राय थी कि यह युद्ध ईसाइयों में ही लड़ा जा रहा है। अन्य धर्म्म के अनुयायियों को उसमें शामिल करना उचित नहीं। सन्तोष की बात है, लार्ड किचनर और सम्राट् के मन्त्रियों ने इस बकवाद पर ध्यान न दिया।

भारत के लिए यह बड़े गौरव की बात है कि उसकी सेना कनाडा, आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड आदि उपनिवेशों की सेना के पहले ही युद्धस्थल में पहुँच गई। उसकी संख्या भी थोड़ी नहीं। सारे उपनिवेशों की सेना की सम्मिलित संख्या से वह अधिक नहीं तो उतनी अवश्य है। फिर, भारतीय सेना ने जो बहादुरी इस युद्ध में दिखाई है वह भी किसी अन्य देश या अन्य जाति की सेना की बहादुरी से कम नहीं। लार्ड किचनर ने एक और भी बड़ा ही अश्रुतपूर्व काम किया। उन्होंने भारत और उपनिवेशों की सेना की रवानगी इतनी गुप्त रक्खी कि शत्रु को उसकी ख़बर भी कानोंकान न लगी। फल यह हुआ कि सारी सेना युद्ध के लिए नियत स्थलों में सुरक्षित पहुँच गई। एक भी सैनिक कम नहीं गया। सेनावाहक जहाज़ों को डुबाने की ताक में रहने पर भी शत्रु का प्रयत्न निष्फल गया। हाँ, अभी राह में, योरपियन जाने वाली सेना को कुछ हानि अवश्य पहुँची। पर वह हानि नगण्य है।

जो सेना तैयार थी उसे लार्ड किचनर ने फ्रांस रवाना कर दिया, जिसमें वह शीघ्र ही युद्ध के मैदान में पहुँच गई। इधर तो यह किया इधर विलायत में रँगरूट भर्ती करने का आश्चर्यकारक प्रबन्ध शुरू कर दिया। चारों तरफ़ इश्तिहार और व्याख्यानदाता आदि भेज दिये गये। कम से कम पाँच में भरती होने लगे। तरह तरह के चित्रों से हर जगह का कोना कोना भर गया। भारतीय अपमान का बदला लेने के लिए लोगों का ध्यान आकृष्ट किया जाने लगा। अमीर-ग़रीब, व्यापारी और कारीगर सभी युद्ध में शामिल होने के लिए उत्साहित किये गये। अपने राजा, अपनी जननी जन्म भूमि, अपने घर और अपनी स्त्री-जाति की रक्षा के लिए ब्रिटिश नागरिकों को शत्रु के विरुद्ध तलवार उठाने की उत्तेजना दी गई।

जो लोग फ़ौज में भरती होने योग्य नहीं उनसे यह प्रार्थना की गई कि आप और तरह अपने देश—अपनी मातृ-भूमि—की रक्षा करें। आप अपने मित्रों, अपने भाइयों, अपने निकट सम्बन्धियों को उत्तेजित कीजिए कि वे अपनी जन्म-भूमि की रक्षा के लिए शत्रु के विरुद्ध में शस्त्र धारण करें; अपने देश और अपने राजा के प्रति उनका जो कर्तव्य है उसका वे पालन करें। देखिए, शत्रु कैसी क्रूरता कर रहा है—वह निर्बल स्त्रियों और अबोध बच्चों पर भी दया नहीं दिखाता है। बड़े बड़े प्राचीन शहरों को जलाता और प्रार्थना-मन्दिरों तक को भूमिसात् कर रहा है। ऐसे अत्याचारी और निर्दयी शत्रु को उसके अन्याय का दण्ड देना प्रत्येक ब्रिटिश नागरिक का कर्तव्य है।

स्त्रियों से यह प्रार्थना की गई कि तुम अपने पतियों और पुत्रों को उत्साहित करके सेना में भरती कराने की चेष्टा करो। जो शत्रु पवित्र स्त्री जाति का भी अपमान कर रहा है उससे बदला लेना तुम्हारा भी कर्तव्य है।

इस प्रकार की अपीलों और उत्साह पूर्ण प्रार्थनाओं से ग्रेटब्रिटेन का शहर शहर, गांव-गांव गूँज उठा। मकानों में, दूकानों में, गलियों में, रेलों में, होटलों में, दफ़्तरों में, यहाँ तक कि खिड़कियों तक में विज्ञापन चिपके हुए दिखाई देने लगे। अख़बारों और सामयिक पुस्तकों की तो बात ही नहीं। चिट्ठियों, पोस्टकार्डों, डाकख़ाने की टिकटों की छोटी छोटी पुस्तकों तक में रङ्ग बिरङ्गे विज्ञापन प्रकाशित हुए। सारा ग्रेट ब्रिटेन विज्ञापनमय हो गया।

इन अपीलों और प्रार्थनाओं का फल भी आश्चर्यजनक हुआ। इनने मित्रों के हृदय में आनन्द का मेला लगा दिया और शत्रुओं का दिल दहला दिया। छोटे मोटे आदमियों की तो बात ही नहीं, अमीरज़ादों, करोड़पतियों और बड़े बड़े लार्डों के कुटुम्बी भी लार्ड किचनर की सेना में भरती होने लगे। शाहज़ादेजादे के बड़े शाहज़ादे तथा अन्य अनेक भी फ़ौज में भरती हो कर तुरन्त ही

स्टेड साहब ने इसका उल्लेख कई दफ़े अपने पत्र में किया था। राज्य-सञ्चालन सम्बन्ध में विलायत के उदार दल की ही प्रभुता १९०५ ईसवी से अब तक अविच्छिन्न चली आती है। यह दल लोगों को ज़बरदस्ती सेना में भरती करने का सदा ख़िलाफ़ रहा है। इसी से गवर्नमेंट की सेना-सम्बन्धिनी नीति में परिवर्तन नहीं हो सका।

थल-सेना बढ़ाने के सम्बन्ध में गवर्नमेंट ने यद्यपि अपनी नीति नहीं बदली तथापि सेना बढ़ाने और न बढ़ाने की चर्चा बराबर होती ही रही। इस सम्बन्ध में वाद-प्रतिवाद हो ही रहा था कि जुलाई १९१४ के अन्त में युद्ध के बादल उमड़ते हुए दिखाई दिये। ग्रेट-ब्रिटेन ने देखा कि इस युद्ध में शामिल हुए बिना स्वार्थ ही की हानि नहीं, किन्तु प्रतिष्ठा की भी हानि है। अतएव अपने मान और हित की रक्षा के लिए उसने युद्ध में शामिल होना ही अपने लिए उचित समझा। और शक्तियों के साथ, जिनमें जर्मनी भी शामिल था, वह सन्धि-पत्र द्वारा वचन-बद्ध हो चुका था कि पड़ोसी देशों पर आक्रमण करने के इरादे से कोई देश अपनी सेना बेलजियम से न ले जा सकेगा। जर्मनी ने इस अभिवचन को तोड़ना चाहा। उसने अपनी पूर्व-प्रतिज्ञा को तोड़ कर बेलजियम की भूमि से सेना बढ़ा ले जाने और फ्रांस को बरबाद कर देने का सङ्कल्प किया। ग्रेट-ब्रिटेन से यह न देखा गया। यदि ब्रिटिश गवर्नमेंट चुप रहती और जर्मनी को फ्रांस तथा बेलजियम को बरबाद कर देने देती तो संसार के सामने वह मुँह दिखाने लायक़ न रहती। उस पर पवित्र प्रतिज्ञा तोड़ने का पाप लगता। इसके सिवा एक बात और भी थी। यदि बेलजियम और फ्रांस को जीत कर जर्मनी इन दोनों देशों को पादाक्रान्त कर लेता तो उसकी शक्ति बहुत बढ़ जाती। इस दशा में, सम्भव था, कि वह किसी दिन अपनी बढ़ी हुई शक्ति से ग्रेट-ब्रिटेन को भी नीचा दिखाने की चेष्टा करे। इन्हीं कारणों से ग्रेट-ब्रिटेन को बेलजियम, फ्रांस और रूस का साथ देना पड़ा। उनको सहायता देना उसके लिए अनिवार्य हो गया। जर्मनी ने एकदम ही इन तीनों देशों के साथ युद्ध की घोषणा कर दी। इस दशा में इँगलैंड को लाचार होकर पूर्वोक्त तीनों देशों का पक्ष ग्रहण करना पड़ा।

बेलजियम और फ्रांस को सहायता देने, और अत्याचारी शत्रु जर्मनी के प्रयत्न को विफल करने, के लिए ग्रेट-ब्रिटेन को सहसा बहुत बड़ी सेना जमा करने की आवश्यकता पड़ी। परन्तु ऐसे सङ्कट के समय भी उसने किसी को सेना में भरती करना उचित न समझा। उस विषम सङ्कट के समय सारी ब्रिटिश जाति उसे टालने की जान से चेष्टा करेगी। उसका यह विश्वास सच निकला। ब्रिटिश टापुओं के प्रत्येक कोने से हज़ारों की संख्या फ़ौज में भरती होने लगे। रँगरूटों के ताँते बँध गये। यह हुआ कि वर्ष ही सवा वर्ष में ब्रिटिश-सेना की ३०—४० लाख हो गई। इस सम्बन्ध में ब्रिटिश जाति को जो सफलता प्राप्त हुई है वह अद्वितीय है। इस भूमण्डल में और किसी देश या राज्य को कभी ऐसी सफलता नहीं हुई। इस सफलता के कारणों में से तीन मुख्य हैं—

पहला कारण, भारत के भूतपूर्व कमांडर-इन-चीफ़ लार्ड किचनर की योग्यता है। रँगरूट भरती करने में उन्होंने जिन युक्तियों से काम लिया वे उनके सिवा और किसी दूसरे को सूझतीं।

दूसरा कारण, ब्रिटिश-जाति का स्वार्थ-त्याग। अमीर-ग़रीब, छोटे-बड़े सभी ने न अपने आराम की न तकलीफ़ की। निडर होकर और अपना व्यवसाय छोड़ कर सब लोग ख़ुशी ख़ुशी फ़ौज में भरती हो गये।

तीसरा कारण, भारतवर्ष तथा ब्रिटिश साम्राज्य के अन्यान्य अंशों की सहानुभूति है। इन सबने बड़ी बड़ी अपनी अपनी सेनायें साम्राज्य की रक्षा के लिए भेजीं।

कुछ ही महीनों में यह इतनी बड़ी प्रचण्ड सेना तैयार हो गई, इस बात पर बड़ा आश्चर्य होता है। इस सङ्ग्रह से सम्बन्ध रखनेवाली कुछ बातों का उल्लेख किया जाता है।

लार्ड किचनर को युद्ध का मन्त्री बनाने में सब मन्त्रियों ने अपूर्व बुद्धिमानी की। लार्ड किचनर पर सेना ही की श्रद्धा नहीं है। सारी ब्रिटिश जाति की है। विषयों के वे पूर्ण ज्ञाता हैं। सेना-सङ्गठन में तो कोई उनकी बराबरी नहीं कर सकता। यह उन्हीं के प्रभाव की महिमा है जो थोड़ी सेना सत्काल ही अपने अपने स्थान पर पहुँच गई।

भारतीय सेना का युद्ध के मैदान में भेजा जाना भी बड़ी बुद्धिमानी का काम हुआ। इसका बहुत कुछ श्रेय लार्ड किचनर और उनके सहकारियों को है। वर्तमान युद्ध में यदि भारतीय सैनिक न शामिल होते तो भारत के हृदय में बड़ी गहरी चोट लगती। जर्मनी यह समझता था कि भारतीय सैनिक युद्ध में न शामिल किये जायँगे। आश्चर्य है, कितने ही भारत प्रवासी ब्रिटिश नागरिकों का भी यही ख्याल था। उनकी राय थी कि यह युद्ध ईसाइयों में ही छिड़ा हुआ है। अन्य धर्म्म के अनुयायियों को उसमें शामिल करना उचित नहीं। सन्तोष की बात है, लार्ड किचनर और सम्राट् के मन्त्रियों ने इस बकवाद पर ध्यान न दिया।

भारत के लिए यह बड़े गौरव की बात है कि उसकी सेना कनाडा, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलेंड आदि उपनिवेशों की सेना के पहले ही युद्धस्थल में पहुँच गई। उसकी संख्या भी थोड़ी नहीं। सारे उपनिवेशों की सेना की सम्मिलित संख्या से वह अधिक नहीं तो उतनी अवश्य है। फिर, भारतीय सेना ने जो बहादुरी इस युद्ध में दिखाई है वह भी किसी अन्य देश या अन्य जाति की सेना की बहादुरी से कम नहीं। लार्ड किचनर ने एक और भी बड़ा ही अच्छा काम किया। उन्होंने भारत और उपनिवेशों की सेना की रवानगी इतनी गुप्त रक्खी कि शत्रु को उसकी खबर भी न लगी। फल यह हुआ कि सारी सेना युद्ध के बिलकुल निकट स्थलों में सुरक्षित पहुँच गई। एक भी सैनिक मारा नहीं गया। सेनावाहक जहाज़ों को डुबाने की ताक में रहने पर भी शत्रु का प्रयत्न निष्फल गया। हाँ, अभी हाल में, दार्दानियाल जाने वाली सेना को कुछ हानि अवश्य पहुँची। पर वह हानि नगण्य है।

जो सेना तैयार थी उसे लार्ड किचनर ने अच्छा रवाना कर दिया, जिसमें वह शीघ्र ही युद्ध के मैदान में पहुँच जाय। उधर तो यह किया इधर विजयार्थ में रंगरूट भरती करने का आश्चर्यकारक प्रबन्ध शुरू कर दिया। अपने हवाई जहाज़ और व्यायामदाता आदि भेज दिये गये। नये नये सैनिक फ़ौज में भरती होने लगे। तरह तरह के विज्ञापनों से देश का कोना कोना भर गया। आवश्यक धनराशि की पूर्ति के लिए लोगों का ध्यान आकृष्ट किया जाने लगा। अमीर-ग़रीब, व्यापारी और कारीगर सभी युद्ध में शामिल होने के लिए उत्साहित किये गये। अपने राजा, अपनी जननी जन्म भूमि, अपने घर और अपनी स्त्री-जाति की रक्षा के लिए ब्रिटिश नागरिकों को शत्रु के विरुद्ध तलवार उठाने की उत्तेजना दी गई।

जो लोग फ़ौज में भरती होने योग्य नहीं उनसे यह प्रार्थना की गई कि आप औरों की तरह अपने देश—अपनी मातृ-भूमि—की रक्षा करें। आप अपने मित्रों, अपने भाइयों, अपने निकट सम्बन्धियों को उत्तेजित कीजिए कि वे अपनी जन्म-भूमि की रक्षा के लिए शत्रु के विरुद्ध में शस्त्र धारण करें; अपने देश और अपने राजा के प्रति उनका जो कर्तव्य है उसका वे पालन करें। देखिए, शत्रु कैसी क्रूरता कर रहा है—वह निर्बल स्त्रियों और अबोध बच्चों पर भी दया नहीं दिखाता है। बड़े बड़े प्राचीन शहरों को जलाता और प्रार्थना-मन्दिरों तक को भूमिसात् कर रहा है। ऐसे अत्याचारी और निर्दयी शत्रु को उसके अन्याय का दण्ड देना प्रत्येक ब्रिटिश नागरिक का कर्तव्य है।

स्त्रियों से यह प्रार्थना की गई कि तुम अपने पतियों और पुत्रों को उत्साहित करके सेना में भरती कराने की चेष्टा करो। जो शत्रु पवित्र स्त्री जाति का भी अपमान कर रहा है उससे बदला लेना तुम्हारा भी कर्तव्य है।

इस प्रकार की अपीलों और इश्तहार पूर्ण प्रार्थनाओं से इंग्लैंड के शहर शहर, गाँव गाँव गूँज उठा। सड़कों में, चौराहों में, गलियों में, रेलों में, ट्रामों में, बड़ी सड़क तक में विज्ञापन चिपके हुए दिखाई देने लगे। अख़बारों और सामयिक पुस्तकों की तो बात ही नहीं। बिस्कुटों, पेंसिलों, साबुनों की डिबियों की छोटी छोटी पुस्तकों तक में ये विज्ञापन प्रकाशित हुए। सारा देश विज्ञापनमय हो गया।

इन अपीलों और प्रार्थनाओं का फल भी आश्चर्यजनक हुआ। उनसे लोगों के हृदय में आवेश का बड़ा ज़ोरदार वेग उत्पन्न हो गया। देश और जातियों, सभ्यताओं और धर्मों के बड़े बड़े झगड़ों को लोग लिवरपूल की सभा में तय करने लगे। [illegible] अपने देश की रक्षा के लिए शत्रु सेना से लड़ने को फ़ौज में भरती हो गये। [illegible]

रवाना हुए। जितने विश्वविद्यालय हैं उन सब में शिक्षा पाने वाले बी० ए० और एम० ए० क्लासों के छात्र हज़ारों की संख्या में दौड़ पड़े। ऐसे शायद कुछ ही कुटुम्ब रह गये होंगे जिनका कोई भी निकट या दूर का सम्बन्धी इस समय अपने देश की रक्षा के लिए युद्ध के मैदान में न लड़ रहा हो।

ग्रेट-ब्रिटेन के संयुक्त राज्य में दो करोड़ पुरुष हैं। उनमें से इस समय ३० लाख के लगभग युद्धस्थल में शस्त्र-सञ्चालन कर रहे हैं। इस सम्बन्ध में ध्यान रखने योग्य सब से बड़ी बात यह है कि फ़ौज में भरती होने के लिए इन में से एक आदमी पर भी बलप्रयोग नहीं किया गया। सब लोग अपने ही मन से ख़ुशी ख़ुशी फ़ौज में भरती हुए हैं। भरती होना अब तक बन्द नहीं। हर हफ़्ते हज़ारों रँगरूट नाम लिखाते हैं।

यह सब होने पर भी कुछ लोगों की राय है कि जो जवान अब तक सेना में नहीं भरती हुए उन्हें बलपूर्वक भरती करना चाहिए। उनका कहना है कि कुछ लोग इस बात की राह देख रहे हैं कि जब तक उनसे यह न कहा जायगा कि तुम्हारा देश तुम्हारी सेवा का मुहताज है तब तक वे सेना में नाम न लिखायेंगे। ऐसे लोग बाल-बच्चे वाले नहीं, उनकी आमदनी भी ज़्यादा है। ये लोग चुपचाप ऐसे क़ानून की राह देख रहे हैं जो इन्हें सेना में भरती होने के लिए मजबूर करे। कितने ही राजनीतिज्ञ इस राय के क़ायल भी हैं। वे कहते हैं कि ऐसे क़ानून के जारी होने की ज़रूरत है। तथापि अधिकांश ब्रिटिश नागरिक इसका विरोध करते हैं। उनकी सम्मति है कि जिस दङ्ग से आज तक सेना की संख्या बढ़ाई गई है वह बुरा नहीं। उससे यथेष्ट कामयाबी हुई है और आगे भी होगी। उसे बदलना अच्छा नहीं। मेरा निज का यही मत है। पर युद्ध-क्षेत्र का विस्तार बढ़ने से शायद यह ढँग बदलना पड़े।

सेना की संख्या बढ़ाने में ब्रिटिश साम्राज्य के और और देशों ने भी ख़ूब उत्साह दिखाया है। उन्होंने भी हज़ारों दक्षिण देशों को सेना में भरती करके युद्धस्थल को भेजा है। शायद ही [illegible] मनुष्यों में [illegible] दक्षिणी अफ़्रीका का नहीं है। आस्ट्रेलिया से भेजी गई सेना का [illegible] ही का हुआ है। [illegible] हमारे [illegible] के बड़े [illegible] [illegible] के [illegible]

अफ़सरों और सैनिकों से सहायता कर रहे हैं। यद्यपि ठीक नहीं मालूम कि केनाडा, आस्ट्रेलिया और न्यूज़ी ने कितनी सेना भेजी है, तथापि इनमें से प्रत्येक भेजी गई सेना की संख्या कम नहीं। दक्षिणी ने पहले शत्रु जर्मनों को परास्त कर उनसे वह लिया जो दक्षिण-पश्चिमी अफ़्रीका कहाता है। सि सामाज्य की रक्षा के इरादे से बहुत सी सेना योर स्थल में भेजने का निश्चय किया। यह सेना वहाँ जा रही है। आशा है, शीघ्रही वह योरप में पहुँच

भारत से भेजी गई जो सेना अपने सम्राट् इस समय योरप में लड़ रही है उसके कितने और अफ़सरों से मिलने का मुझे मौक़ा मिला है। की रक्षा के लिए अपना रुधिर बहाने में ये लोग कम नहीं। ब्रिटिश जाति और ब्रिटिश उपनिवेशों के जिस उत्साह से लड़ रहे हैं, हमारे भारतीय वीरों उस से रत्ती भर भी कम नहीं। जिन जिन लोगों से सब ने यही कहा कि योरप में आकर अपने राजा के से लड़ने का हमें बहुत बड़ा गर्व है। जिस उत्साह से वीर इस समय युद्ध के मैदान में लड़ रहे हैं, इसका बढ़ कर प्रमाण देने के लिए मैं सरदार बहादुर दुर के एक पत्र से कुछ वाक्य उद्धृत करता हूँ। साहब २३ नम्बर सिख पायोनियर्स नामक पलटन में मेजर थे। अभी हाल ही में वे अरब में वीर-गति हुए हैं। जिस समय लड़ाई छिड़ी उस समय उन्हों एक सम्बन्धी को, जो लन्दन में बारिस्टरी की रहे हैं, एक पत्र लिखा। इन्हीं महाशय की कृपा सरदार साहब का पत्र देखने को मिला है। अपने सरदार साहब लिखते हैं—

"[illegible] [illegible] [illegible] [

सरस्वती [illegible]

तिब्बत के दलाई लामा।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

तिब्बत के ताशी लामा ।

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

...रे का-लिये बड़ी खुशी होती है कि अपने पर आने के लिए मेरी प्रार्थना में तुरन्त हो गया। इस लेख बहुत जल्द रवाना होने। मैं इसके आगे ...ही बच्चों या कामों में लिखूंगा। अब इस लेखों का तात्पर्य है ये आपने ...ैर हस्तक्षेप को रोका करने का लिखा हमें भी लिख गया।"

इस युद्ध के समय भारत ने जिस उत्साह से ब्रिटिश ...नेट और ब्रिटिश साम्राज्य का साथ दिया है, उससे ब्रिटिश ...ियों के हृदय पर बहुत बड़ा असर पड़ा है। उन्हें अब ...ात का ख़्याल हुआ है कि ये भारतवासियों का ...ख कर सकते हैं। वे लोग अब भारतवासियों के साथ ...भाई के सदृश बर्ताव कर रहे हैं।

---

## दुःख और सुख।

...ख को है क़रार न दुख को क़रार है।
...ीब है दुनिया में वह सब बेक़रार है॥ १॥
...र में चार आये चार उठ खड़े हुए।
...यह कब से तार यहां बरक़रार है॥ २॥
...ब सवार किश्तिये उम्रे रवां में हां।
...है कोई पार कोई जाता पार है॥ ३॥
...न्नये हस्ती पे है चौसर बिछी हुई।
...है कहीं जीत कहीं होती हार है॥ ४॥
...न जीत तेरी अवस ऐ सिकन्दरा।
...जहां से दार ना पैदा किनार है॥ ५॥
...है कहीं चहे नाले कहीं मचे।
...ा है कहीं हवा कहीं लालाज़ार है॥ ६॥
...र कहीं बरा है कहीं शादी की है धूम।
...कहीं खिज़ां है कहीं पर बहार है॥ ७॥
...कहीं क़ब्रें कहीं मातमे पड़ें।
...मतें कहीं है कहीं मार मार है॥ ८॥
...खाने जहां में कहीं गुल है कहीं ख़ार।
...है कोई शाद कोई सोगवार है॥ ९॥
...यही दस्तूर तो फिर ग़म में क्यों मरे।
...खिज़ां है वहां जहां आती बहार है॥ १०॥
...अलम मसूद है तेरा ऐ शहंशाह।
...होते हैं उन्हें जिन्हें ख़ुशियों से प्यार है॥ ११॥

श्रीगोपाल ब्रह्मचारी।

---

# पौराणिक राज-वंशों का समय-निरूपण।

[ लेखक—श्रीयुत हरि रामचन्द्र दिवेकर, एम० ए० ]

## (५)

## विदेह-कुल

सूर्य-वंश के वर्णन में लिखा गया है कि इक्ष्वाकु के निमि नाम का एक और पुत्र था। निमि के जेठे भाई विकुक्षि से, जो शशाद के नाम से भी प्रसिद्ध था, सूर्य-वंश, अर्थात् अयोध्या के राजाओं का वंश, चला। निमि अयोध्या से पूर्व की ओर बड़ा और स्वतन्त्र होकर राज्य करने लगा। एक यज्ञ में उसने वसिष्ठ को निमन्त्रण दिया। इस निमन्त्रण का स्वीकार करके भी वसिष्ठ ने लोभ से एक और यज्ञ में जाने का निमन्त्रण स्वीकार कर लिया और निमि को यहीं यज्ञ में उपस्थित होने के लिए आज्ञा दी। निमि ने यह न माना। उसने दूसरे ऋत्विजों को बुला कर अपना यज्ञ शुरू किया। बाद को जब वसिष्ठ ऋषि आये तब ये निमि पर बड़े क्रुद्ध हुए और उससे झगड़ा करने लगे। इस झगड़े में वसिष्ठ ने निमि को और निमि ने वसिष्ठ को मार डाला। पर निमि के मारे जाने पर भी अन्य ऋत्विजों ने यज्ञ जारी रक्खा और देह रहित निमि की आत्मा को ही यजमान मान कर उसे सनाथ किया। इसीसे निमि को विदेह नाम प्राप्त हुआ॥

निमि के पश्चात् ऋत्विजों ने उसके पुत्र मिथि को राजा बनाया। इसी मिथि ने मिथिला नगरी बसाई। इसी का दूसरा नाम जनक था। यह बड़ा ब्रह्मज्ञानी राजा हुआ। इस वंश के सभी राजा लोग प्रायः जनक के नाम से प्रसिद्ध थे। ये सब राजे सांसारिक विषयों से विरक्त रहते थे। इन्होंने केवल अपने ही देश पर राज्य किया, उसे बढ़ाने की कभी चेष्टा न की। इसी कारण इस कुल में चक्रवर्ती राजा एक भी न हुआ।

राजा मिथि ककुत्स्थ, अनेनस् या ययाति का समकालीन था। उससे सीरध्वज जनक तक, जो दशरथ और रामचन्द्र का समकालीन था, पुराणों में उन्नीस राजाओं के नाम मिलते हैं—उदावसु, नन्दिवर्धन, सुकेतु, देवरात, बृहद्रुक्थ, महावीर्य, सुधृति, धृष्टकेतु, हर्यश्व, मरु, प्रतीन्धक, कृतिरथ, देवमीढ़, विबुध, महाधृति, कृतिरात, महारोमा, स्वर्णरोमा और ह्रस्वरोमा। इतने ही समय में अयोध्या में कोई साठ राजे होगये। इससे स्पष्टतया ज्ञात होता है कि ये नाम बराबर क्रम से नहीं हैं। ये केवल उस समय के मुख्य मुख्य राजाओं के नाम हैं। अयोध्या तथा मिथिला के राजाओं की संख्या सीरध्वज से लेकर महाभारत के युद्ध तक एक ही है। इससे भी पिछले ही कथन की पुष्टि होती है कि उक्त काल के ये उन्नीस राजे मुख्य राजे हैं।

राजा सीरध्वज जनक की कन्या सीता श्रीरामचन्द्रजी से ब्याही थी। सीरध्वज का छोटा भाई कुशध्वज था। एक बार सांकाश्य देश का राजा सुधन्वा सीता को तथा उस शैव धनुष को जो राजा जनक के यहाँ था, छीनने के लिए आया। राजा सीरध्वज ने उससे युद्ध किया। युद्ध में सुधन्वा को मार कर अपने भाई कुशध्वज को उसने सांकाश्य का राज्य दे दिया। इसी कुशध्वज की कन्यायें भरत और शत्रुघ्न से ब्याही थीं। विदेह-कुल में सिवा इस लड़ाई के किसी और लड़ाई का पता नहीं मिलता। भागवत में लिखा है कि कुशध्वज सीरध्वज का पुत्र था, परन्तु अन्य प्रमाणों को देखते यह कथन चिन्त्य ही जान पड़ता है।

राजा सीरध्वज के पश्चात् उसका पुत्र भानुमान् राजा हुआ। भानुमान् का पुत्र शतद्युम्न, शतद्युम्न का शुचि और शुचि का ऊर्जकेतु हुआ। ऊर्जकेतु के पुत्र का नाम सनद्वाज था। सनद्वाज के पश्चात् कुनि, कुनि के अनन्तर अञ्जन और अञ्जन के बाद कुलजित् राजा हुआ। कुलजित् के ही समय में पौरव-वंशी कुरु राजा के पुत्र सुधन्वा ने मगध-राज्य संस्थापित किया। कुलजित् के पश्चात् अरिष्टनेमि मिथिलाधीश हुआ और अरिष्टनेमि के अनन्तर श्रुतायु। श्रुतायु का पुत्र सुपार्श्व, सुपार्श्व का और सृञ्जय का क्षेमारि हुआ। क्षेमारि से महाभारत के समय तक मिथिला में उन्नीस हुए। उनमें से पहले पाँच राजाओं के नाम नस्, समरथ, सत्यरथि और उपगुरु उपगुरु के पश्चात् छठा राजा उपगुप्त और सा स्वागत हुआ। स्वागत के बाद सुनर, सुन और सुभास राजे हुए। सुभास का पुत्र सु अयोध्या के राजा अग्नि-वर्ण का और दक्षिण पाञ्चाल के राजा ब्रह्मदत्त का समकालीन सुश्रुत के परवर्ती पाँच राजाओं के नाम ये थे जय, विजय, ऋत, सुनय, और वीतहव्य। वीत राजा मागध जरासन्ध का समकालीन था। वी हव्य का पुत्र धृति, धृति का बहुलाश्व और बहुला का कृति हुआ। यह कृति तथा अयोध्या का रा बृहद्बल दोनों महाभारती युद्ध में कौरवों के पक्ष थे और दोनों उसी युद्ध में मारे गये। अयोध्या राज्य महाभारत के पश्चात् भी बना रहा, जनक-वंश का अन्त कृतिराज के बाद ही समा होगया। बहुत सम्भव है, महाभारत के अनन्त मागध राजा सोमाधि ने अपने राज्य में मिथिला-दे भी मिला लिया हो।

## दिष्ट-वंश

राजा मनु के इक्ष्वाकु के सिवा एकदिष्ट नाम का एक और पुत्र था। उसका वंश भी रामचन्द्र के समय तक चला। राजा दिष्ट के नाभाग नाम का एक पुत्र था। उसने बहुत सी सम्पत्ति वाणिज्य से प्राप्त की। नाभाग का पुत्र भलन्दन हुआ। भलन्दन का पुत्र वत्सप्रीति था। इन राजाओं ने युद्ध से राज्य बढ़ाने की अपेक्षा वैश्यकर्म से ही राज्य की समृद्धि बढ़ाने की चेष्टा की। कृषि और वाणिज्य की ओर इनका ध्यान अधिक था।

वत्सप्रीति का पुत्र प्रांशु, प्रांशु का प्रजानि, और उसका खनित्र हुआ। खनित्र के बाद चाक्षुष, फिर विंश, फिर विविंश राजा हुआ। विविंश के

...नेत्र और अनीनेत्र के पश्चात् करन्धम ... हुआ। करन्धम के पुत्र का नाम अविक्षित ... अविक्षित् बड़ा प्रतापी राजा हुआ। उसने ... पुण्य कार्य किये, जिनके प्रभाव से उसे मरुत्त ... बड़ा प्रतापी और विजयी पुत्र प्राप्त हुआ। ... मरुत्त ने दिग्विजय करके चक्रवर्तित्व का पद ... किया। उसने अनेक यज्ञ किये। उसके ... यज्ञ तथा समृद्धि का वर्णन ऋग्वेदाह्मण में भी है। ...-सूक्त-सभ्य में एक मन्त्र में आविक्षित मरुत्त ... उल्लेख है। लिखा है:—

...दृष्टयेः श्लोकोऽभिगीतो—"मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्या-... यज्ञे। आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद" इति। ...र्थात् राजा मरुत्त के यहाँ मरुद्गण तो परो-... करने थे और देवता सभासद थे। इस प्रकार ... का वर्णन वेदों में है उसके विषय में इतना तो ... ही कहना पड़ेगा वह राजा असाधारण ... शिमान् तथा प्रभावशाली था। रामायण के ... अनुसार इस मरुत्त के यज्ञ में एक बार लङ्का के ... रावण ने आकर ऊधम मचाया था। पर ... की प्रार्थना से राजा मरुत्त ने उसे क्षमा ... दिया।

राजा मरुत्त का पुत्र नरिष्यन्त था। नरिष्यन्त ... दम, दम का राज्यवर्धन और राज्यवर्धन ...भूति हुआ। सुभूति के पश्चात् नर, केवल, ...न्, वेगवान्, बुध और तृणबिन्दु नामक छः ...पुर। पुराणों के अनुसार यह तृणबिन्दु त्रेता-... आरम्भ में विद्यमान था। इसी तृणबिन्दु के ...शाल ने वैशाली नगरी बसाई। राजा ...त भी बड़ा पराक्रमी राजा था। उसने कई ...यज्ञ किये। विशाल के पश्चात् हेमचन्द्र और ...र नामक राजे हुए। सुचन्द्र का पुत्र धूम्राश्व ...। राजा धूम्राश्व के अनन्तर वैशाली का राजा ...हुआ और सृञ्जय वं. पश्चात् सहदेव। सह-...देव के अनन्तर वैशाली में चार राजे हुए—कृशाश्व, ...न, अकम्पन और सुमति। रामायण के अनु-...सार सुमति राजा ने रामचन्द्र का स्वागत किया था, जब वे विश्वामित्र के साथ मिथिला जा रहे थे।

दिष्ट इक्ष्वाकु का समकालीन था और सुमति रामचन्द्र का। दिष्ट से सुमति तक इस कुल के केवल चौंतीस राजाओं के नाम पुराणों में पाये जाते हैं। रामचन्द्रजी इक्ष्वाकु से चौंसठवें राजा थे। ये सब राजे भी एक के बाद एक नहीं हुए। ये भी केवल प्रधान प्रधान राजे ही माने जा सकते हैं। सुमति के पश्चात् किसी किसी पुराण में दिष्ट-वंश का वर्णन ही नहीं है। इससे अनुमान किया जाता है कि रामचन्द्र के ही राज्यकाल में यह वंश समाप्त हो गया होगा और यह राज्य सम्भवतः अयोध्या के राज्य में मिला लिया गया होगा।

---

# दिनों का नामकरण किसने किया ?

[अनुवाद,

...ह समय हुआ, दिनों के नामकरण के ...म्बन्ध में मेरा एक लेख सरस्वती में ...पा था। उसका 'खण्डन एक महाशय ने विद्यार्थी में प्रकाशित किया है। ...से एक मित्र की कृपा से मैंने पढ़ा। ...मैं बहुत प्रसन्न हूँ कि मेरे लेखों के कारण कुछ लोग इस ...विषय में चर्चा हुई। अनुवाद में मुझे कुछ विशेष कथन ...की आवश्यकता तो नहीं प्रतीत होती, तथापि, सम्भव है, ...कुछ लोगों को विद्यार्थी के लेख से भ्रम हुआ हो। इस ...लिए मैं अपने पक्ष को और अधिक साफ़ किये देता हूँ। ...खण्डन कर्ता महाशय ने कई अनुचित आक्षेप किये हैं। ...उन्होंने 'अशक्तिप्रदर्शिनी' की दिल्लगी भी उड़ाई है। अच्छी ...इन बातों की समीक्षा करना ही मेरा काम है। ...यह काम केवल वादविवाद का हेतु है ही है। इससे और ...कुछ नहीं होता।

...मैं इस लेख में यही ...कि ...

राजा मिथि ककुत्स्थ, अनेनस् या ययाति का समकालीन था। उससे सीरध्वज जनक तक, जो दशरथ और रामचन्द्र का समकालीन था, पुराणों में उन्नीस राजाओं के नाम मिलते हैं—उदावसु, नन्दिवर्धन, सुकेतु, देवरात, बृहद्रुक्थ, महावीर्य, सुधृति, धृष्टकेतु, हर्यश्व, मरु, प्रतीन्धक, कृतिरथ, देवमाढ़, विबुध, महाधृति, कृतिरात, महारोमा, स्वर्णरोमा और ह्रस्वरोमा। इतने ही समय में अयोध्या में कोई साठ राजे होगये। इससे स्पष्टतया ज्ञात होता है कि ये नाम बराबर क्रम से नहीं हैं। ये केवल उस समय के मुख्य मुख्य राजाओं के नाम हैं। अयोध्या तथा मिथिला के राजाओं की संख्या सीरध्वज से लेकर महाभारत के युद्ध तक एक ही है। इससे भी पिछले ही कथन की पुष्टि होती है कि उक्त काल के ये उन्नीस राजे मुख्य राजे हैं।

राजा सीरध्वज जनक की कन्या सीता श्रीरामचन्द्रजी से ब्याही थी। सीरध्वज का छोटा भाई कुशध्वज था। एक बार सांकाश्य देश का राजा सुधन्वा सीता को तथा उस दिव्य धनुष को जो राजा जनक के यहाँ था, छीनने के लिए आया। राजा सीरध्वज ने उससे युद्ध किया। युद्ध में सुधन्वा को मार कर अपने भाई कुशध्वज को उसने सांकाश्य का राज्य दे दिया। इसी कुशध्वज की कन्यायें भरत और शत्रुघ्न से ब्याही थीं। विदेह-कुल में सिवा इस लड़ाई के किसी और लड़ाई का पता नहीं मिलता। भागवत में लिखा है कि कुशध्वज सीरध्वज का पुत्र था, परन्तु अन्य प्रमाणों को देखते यह कथन मिथ्या ही ज्ञात पड़ता है।

राजा सीरध्वज के पश्चात् उसका पुत्र भानुमान् राजा हुआ। भानुमान् का पुत्र शतद्युम्न, शतद्युम्न का शुचि और शुचि का ऊर्जकेतु हुआ। ऊर्जकेतु के पुत्र का नाम सनद्वाज था। सनद्वाज के पश्चात् कुति, कुति के अनला, अनल और अनल के बाद कृतिरथ राजा हुआ। कृतिरथ के ही समय में दाशरथी वृद्ध राजा के पुत्र सुधन्वा ने सांकाश्य राज्य संस्थापित किया। कृतिरथ के पश्चात् देवमीढ़ मिथिलाधीश हुआ और देवमीढ़ के पश्चात् श्रुतायु। श्रुतायु का पुत्र सुपार्श्व, सुपार्श्व का सु और सृंजय का क्षेमारि हुआ। क्षेमारि से ले महाभारत के समय तक मिथिला में उन्नीस हुए। उनमें से पहले पाँच राजाओं के नाम नस्, समरथ, सत्यरथ, सात्यरथि और उपगु उपगुरु के पश्चात् छठा राजा उपगुप्त और स स्वागत हुआ। स्वागत के बाद सुनय, सुव और सुभास राजे हुए। सुभास का पुत्र सु अयोध्या के राजा अग्नि-वर्ण का और दक्षि पाञ्चाल के राजा ब्रह्मदत्त का समकालीन सुश्रुत के परवर्ती पाँच राजाओं के नाम ये थे जय, विजय, ऋत, सुनय, और वीतहव्य। वीत राजा मागध जरासन्ध का समकालीन था। हव्य का पुत्र धृति, धृति का बहुलाश्व और बहु का कृति हुआ। यह कृति तथा अयोध्या का बृहद्बल दोनों महाभारती युद्ध में कौरवों के प थे और दोनों उसी युद्ध में मारे गये। अयोध्या राज्य महाभारत के पश्चात् भी बना रहा, जनक-वंश का अन्त कृतिराज के बाद ही हो गया। बहुत सम्भव है, महाभारत के अन मागध राजा सोमाधि ने अपने राज्य में मिथिला भी मिला लिया हो।

## दिष्ट-वंश

राजा मनु के इक्ष्वाकु के सिवा एक दिष्ट का एक और पुत्र था। उसका वंश भी रामचन्द्र समय तक चला। राजा दिष्ट के नाभाग नाम पुत्र था। उसने बहुत सी सम्पत्ति प्राप्त की। नाभाग का पुत्र अम्बरीष हुआ। अम्बरीष का पुत्र सम्भूति था। इन राजाओं ने पृथ्वी राज्य बढ़ाने की अपेक्षा धर्मकर्म से ही राज्य की समृद्धि बढ़ाने की चेष्टा की। कृति और सम्भूति की ओर इनका ध्यान अधिक था।

सम्भूति का पुत्र वसु, वसु का प्रजानि, प्रजानि का अमित्रजित् हुआ। अमित्रजित् के बाद वसु, फिर त्रिधन्वा राजा हुआ। त्रिधन्वा

पूर्वजों ने बाहर वालों को सिखलाई और बहुत सी उनसे सीखीं भी। यदि कोई सज्जन यह दिखला दे कि अमुक बात हमारे बड़ों ने विदेश से सीखी, तो इसमें कोई अनौचित्य नहीं। कोई विद्वान् यदि इसके विरुद्ध प्रमाण दे सके तो और भी अच्छा है। सत्यान्वेषी लोगों को उसके मानने में दुराग्रह न होगा। पर व्यर्थ आक्षेपों से कुछ भी लाभ नहीं।

'ज्योतिर्वित्ता' महाशय ने जो लेख मेरे नोट के खण्डन में लिखा है उसे मैंने कई बार पढ़ा। पर मुझे यही ज्ञात न हुआ कि उन्होंने सिद्ध क्या किया अथवा खण्डन किस बात का किया। जहाँ तक उनके लेख को मैं समझ सका हूँ, मेरी धारणा है कि मेरे प्रश्न वैसे के वैसे ही हैं और मेरा अनुमान भी "पुनस्त्रैवाकलम्बितो वेतालः" की तरह पूर्ववत् निश्चयात्मक ही है। उसे मैं फिर संक्षेप से यहां लिखे देता हूँ—

आपने यह तो मान लिया कि अति प्राचीन लेखों में दिनों के नाम नहीं पाये जाते। पर इतना आपने और बढ़ा दिया कि—"उस समय दिन लिखने की रीति न थी"।

मेरी दूसरी बात यह थी कि सूर्य्य-सिद्धान्त-सदृश ज्योतिष के प्रसिद्ध ग्रन्थों में दिन के स्वामी ग्रह का उल्लेख तो है, परन्तु सप्ताह के दिनों का नाम नहीं है। इसके उत्तर में आप लिखते हैं कि मैंने—"कोई भी ज्योतिष का सिद्धान्त ध्यान-पूर्वक पढ़ा ही नहीं"। अस्तु। आपने अनेक ग्रन्थ पढ़ने पर भी तो कोई स्थल ऐसा नहीं दिखलाया जहाँ सप्ताह के दिनों के नाम लिखे हों!!! मैंने तो यह स्वयं ही लिख दिया था कि उन ग्रन्थों में दिन या वार के स्वामी का नाम अवश्य है। यही बात आपने भी दुहरा डाली! यदि आप सप्ताह के दिनों के नामों का उल्लेख कहीं दिखला देते तो शायद आपके कथनानुसार यह सिद्ध होजाता कि आपने ज्योतिष के ग्रन्थ खूब ध्यान-पूर्वक पढ़े हैं। परन्तु आप दिखलाते कहाँ से, वहाँ कुछ हो भी तो!

मेरी तीसरी बात यह थी कि जिस तरह अन्यत्र 'Week' या अठवाड़ा—ऐसे पदों का प्रयोग प्रायः देखने में आता है उस तरह हमारे ग्रन्थों में नहीं देखने में आता। 'ज्योतिर्विद्' महाशय ने ऐसा एक भी उदाहरण नहीं दिया जिससे कोई बात इस कथन के प्रतिकूल सिद्ध हो।

मेरे चौथे कथन को तो आपने झट भ्रमात्मक कर डाला। यह तो वही बात हुई कि—"मुण्डमुण्डोति शतहस्ता हरीतकी"। 'ग्रह' शब्द तो नौ (९) का पर शायद आपके ग्रन्थों में ७ का ही वाचक हो! मालूम नहीं कि 'ग्रह'-पद से सात ग्रहों का ही बो है, नौ का नहीं। आपके लेख से मुझे तो यह प्रती है कि आप इस बात का ख़याल करके कि विज्ञान (व वालों ने राहु-केतु का कुछ और ही सिद्ध किया है, अ ग्रह मानते हुए डरते हैं। आपही कहिए, जब हम की मूर्त्तियां प्राचीन मन्दिरों में प्रत्यक्ष देख रहे हैं त संख्या ७ कैसे मानलें। क्या आप अपने पक्षांश की लिए अपने ही ग्रन्थों के विरुद्ध चलेंगे? आपकी क्या राहु-केतु ग्रह नहीं? देखिए कालिदास कहते हैं"—

रामस्येन्दोरिव ग्रहः। रघुवंश १२। २८

महाभारत में क्या लिखा है, सो भी देखिए—

चन्द्रः सूर्य्यः शनिः केतुर्ग्रहो ग्रहपतिर्वरः।
१३। १७। ३१

और नीचे उतर कर देखिए, विशाखदत्त लिखते हैं—

क्रूरग्रहः स केतुः इत्यादि—

मुद्राराक्षस

"सूर्यश्चन्द्रो मङ्गलश्च बुधश्चापि बृहस्पतिः।
शुक्रः शनैश्चरो राहुः केतुश्चेति ग्रहा नव"॥

इत्यादि स्मृति-वाक्यों से तो हम लोग नौ ही ग्रह म बजे आये हैं। वराहमिहिर या किसी एक आध और आ ने जो सात ही ग्रह मान लिये हों तो यह सर्वमान्य सि नहीं हो सकता। ग्रह-पूजा में क्या आप सात ही की करते हैं? नौ के ध्यान या मन्त्र नहीं पढ़ते?

ये तो हुए प्रश्नों के उत्तर। बाक़ी बातों की भी थो सी आलोचना की जाती है। साथ ही कुछ और बातों भी उल्लेख किया जायगा।

प्रतिपक्षी महाशय ने यह सिद्ध करने का साहस कि है कि हमारे प्राचीन ग्रन्थों में वार या हफ़्ते के दिनों वर्णन है। जिस प्राचीनतम आर्ष ग्रन्थ से उन्होंने अवत दिये हैं वह सूर्य-सिद्धान्त है। क्षण भर के लिए हम इस

मान लेते हैं कि सूर्य-सिद्धान्त में आदित्यवार, सोमवार दि नाम पाये जाते हैं। पर मानने से भी क्या सिद्ध ? सूर्य सिद्धान्त का निर्माणकाल कौन सा है, इसका तो निर्णय कर लीजिए। यदि उसकी रचना "यवन-संसर्ग" पहले की हो, तो आपका पक्ष अवश्यमेव स्वयंसिद्ध है; उसे काट न सकेगा। मैंने तो अपने लेख में केवल यही है कि ज्योतिष के सूर्य-सिद्धान्त-सदृश प्रसिद्ध ग्रन्थों में वार के दिनों का नाम नहीं, दिन के स्वामी का नामोल्लेख है। इस कारण, अर्थात् दिनों का प्रचार-बाहुल्य न के कारण, सम्भावना या अनुमान यही कहता है कि यहाँ उस समय सप्ताह का या उसके दिनों का नया व्यवहार हुआ होगा। अर्वाचीन ग्रन्थों का उदाहरण देना है। आर्यभट या वराहमिहिर या अन्य आचार्य यदि का परिचय देते हैं तो क्या हुआ। उनके ग्रन्थों में तो यवन-संसर्ग" का प्रभाव साफ़ ही दिखाई देता है। उनके रिभाषिक शब्द ही इस बात के साक्षी हैं कि उन्होंने ग्रीक ों (यूनानियों) अथवा मोटे तौर पर यवनों से ज्योतिष ब की बहुत सी बातें सीखीं। वराहमिहिर के होरा-शास्त्र देखिए, उसमें कितने यूनानी शब्द हैं। यथा—

(१) होरा (Greek, Hôrâ),

(२) केन्द्र (Greek, Kentron),

(३) डामित्र (Greek, Diametron) इत्यादि, कहाँ लिखें रोमक-सिद्धान्त (= Roman Manual) का नाम इस बात का प्रबल प्रमाण है। 'ज्योतिर्विद्' महाशय का कहना कि रोमक से रोम (Rome) अभीष्ट नहीं, केवल ा कथनमात्र है। इसमें मेरा मतलब यह नहीं कि हमारे ों ने ज्योतिष में सभी कुछ यवनों से सीखा या उन्हीं के ार पर अपने आविष्कार किये। नहीं, उन्होंने ज्योतिष- की बहुत सी बातें पाश्चात्य विद्वानों को सिखाईं। केवल ा उनका सम्बन्ध नहीं। इस कारण उनका उल्लेख ें पाठकों का समय नहीं लेना चाहता। पूर्वोक्त शब्द र्णीय है, इसका एक मात्र प्रमाण यह है कि उनका ाचन कल्पित है।

यह युक्ति कि जैसे आज कल २।८।१९ से लोगों न सन् १९१९ ईसवी का बोध होता है, किन्तु ाक कोई नहीं लिखता, इसी तरह पहले इस देश में दिन लिखने का रिवाज न था, कुछ भी बल नहीं रखती। यद्यपि चिट्ठियों में बहुधा हम लोग ऐसा प्रयोग करते हैं, तथापि दिनों का भी प्रयोग किया ही जाता है। जहाँ कहीं हम लोग कोई दिन नियत करेंगे वहाँ दिन का उल्लेख अवश्य ही करेंगे। विज्ञप्ति-पत्रों और निमन्त्रण की चिट्ठियों आदि में दिन का नाम प्रायः सदा ही लिखा जाता है। महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ों और काग़ज़-पत्रों में तो दिन का अवश्य ही उल्लेख किया जाता है। जहाँ निर्धारण आवश्यक होता है अथवा जहाँ तारीख़ का ठीक ठीक बोध कराना होता है वहाँ अवश्य ही दिन लिखा जाता है। दानादि के सम्बन्ध में पहले सब बातों का लिखना ज़रूरी समझा जाता था। इसीसे दान-पत्रों में साल, महीना, दिन, तिथि, नक्षत्र, करण, मुहूर्त्त आदि प्रायः सभी का उल्लेख किया जाता था। परन्तु यह सब तब से होने लगा जब से हम लोगों को इन बातों का ठीक ठीक ज्ञान हुआ। उसके पहले नहीं। अपने सङ्कल्प ही को देखिए, उसमें किस किस का उल्लेख है।

प्रसङ्गवश मैं यहाँ पर इतना और लिख देना चाहता हूँ कि कुशान-राजाओं के समकालीन लेखों की तरह सम्राट् अशोक के शासन-लेखों से भी मेरे अनुमान की पुष्टि होती है। जैसे स्तम्भ-लेख नम्बर २ में सम्राट् अशोक ने आज्ञा दी है कि अमुक अमुक दिन अमुक अमुक जीव न मारा जाय। शासन का कुछ भाग यहाँ उद्धृत किया जाता है—

[illegible]

अर्थात् पक्ष के आठवें, चौदहवें और पन्द्रहवें दिन, तिष्य और पुनर्वसु नक्षत्र में, तीन ऋतुओं की पूर्णिमा में, और उसके दिन बैल बकरी न किये जायँगे। घर बकरा, भेड़ा, सूअर तथा अन्यान्य पशु, जो बकरी किये जाते हैं, वे भी बकरी न किये जायँगे। तिष्य, पुनर्वसु और पूर्णिमाओं में बैलों और घोड़ों का बधिया किया जाना निषिद्ध है।

कैसा ही अच्छा होता यदि इस लेख में कहीं भी तिथि का दिये जाते। पर उस समय ऐसे का प्रचार ही न था।

इसी तरह यदि किसी कुशान-वंश के राजा या उसके समय के किसी लेख में कहीं का नाम लिखा जाता तो भी यह

सरस्वती



हिन्दी प्रेस, प्रयाग।

चित्रों का मोल।

(१) हमने यह लेख लिखकर सरस्वती के हिन्दू और मुसलमान पाठकों का जी दुखाया है और आपस का भेद बढ़ा दिया है।

(२) मुसलमानों ने संस्कृत शब्दों का अशुद्ध उच्चारण और वर्ण-विन्यास जान बूझकर नहीं किया है।

(३) हमने 'मुर्दे' को (आलिम जी के शब्दों में उबल के) 'मुर्दे' लिखकर वैसी ही भूल की है जैसी मुसलमानों से हुई है।

इन चार आक्षेपों के सिवा दो आक्षेप और हैं जो हमारा पत्र पढ़ कर आगरे और लाहौर तक पहुँच गये हैं। आप के अनुरोध से हम उन आक्षेपों को भी यहाँ लिखते हैं:—

(४) आपने अपने धार्मिक लिटरेचर (हिन्दी-साहित्य") में "पेट भर कर" संस्कृत-शब्द भरे हैं और हिन्दी के गले पर उलटी छुरी फेरी है।

(५) कुछ हिन्दी लेखक यावनी शब्दों को दूसरे ही ढंग से बोलते और लिखते हैं। वे उर्दू ढंग की कविता करते हैं और मुँह के बल गिरते हैं।

इन आक्षेपों का उत्तर हम क्रमशः देते हैं:—

(१) विद्वान् लोग इस बात को मानते हैं कि किसी भी भाषा में विदेशी भाषा के उच्चारण और वर्ण-विन्यास का पूरा पूरा अनुकरण नहीं हो सकता। तथापि विदेशी शब्दों का रूपान्तर इतना अधिक भी नहीं होता जिससे उनकी पहचान ही न हो सके। 'मुर्दे' को 'मुर्दे' लिखने से किसी भी न्यायी और विचार-शील मनुष्य को इस शब्द का अर्थ समझने में भ्रम होना सम्भव नहीं है, परन्तु "विषय" को "बिख", "ब्रह्मा" को "बरमा", "प्रकृति" को "परकरती" अथवा "शूद्र" को "शूदर" बोलने या लिखने से बहुत ही अनर्थ हो सकता है।

हमें इस बात की न कोई चिन्ता है और न कोई खेद है कि मुसलमान लोग संस्कृत शब्दों का अशुद्ध उच्चारण करते हैं, क्योंकि हमने अपनी भाषा के उच्चारण अथवा शब्दों की द्वार की रजिस्टरी नहीं कराई है। हाँ हमें लोग भी हम लोगों से कभी इस बात पर असमत नहीं होंगे कि हमारे उनके इतने बड़े "लाट" शब्द को "लाट" कर दिया है। हमारा आक्षेप केवल इतना ही है कि जब मुसलमानों को (आलिम जी के मतानुसार) यह मालूम होगया कि फ़ारसी लदे विज्ञापन से हिन्दुओं को कुछ भी लाभ नहीं है और जब उन्होंने हिन्दुओं के समझने योग्य भाषा में दूसरा और तीसरा विज्ञापन दिया तब व्याख्यानों में उनको ऐसी भाषा व्यवहार में लानी थी और संस्कृत-शब्दों का ऐसा उच्चारण करना था जिसे हिन्दू लोग, जो उर्दू नहीं जानते थे, समझ सकते। जिन थोड़े से शब्दों की सहायता से व्याख्यान का सार समझने की आशा थी उन्हीं का उच्चारण जब कुछ का कुछ हुआ तब श्रोताओं की मनोऽवस्था का अनुमान आप स्वयं ही कर सकते हैं। लेख का उद्देश यही था कि ऐसी दशा फिर कभी न हो।

(२) इस लेख से सरस्वती के हिन्दू पाठकों का जी दुखने का प्रमाण अभी तक नहीं मिला है, पर आपके समान विचार वाले मुसलमान सज्जनों का जी दुखने का एक विशेष कारण हो सकता है, जिसके लिए आप ही उत्तर दाता हैं। आपने भाषा के प्रश्न के साथ जाति का प्रश्न उपस्थित कर दिया है; पर भाषा के अधिकार जाति के अधिकार से भिन्न होते हैं। मुसलमानों के समान महाराष्ट्र, बङ्गाली, गुजराती और मद्रासी लोग भी हिन्दी लिखने और बोलने में भूलें करते हैं और धर्म-सुधारकों के समान भाषा-सुधारक भी समय पड़ने पर इन लोगों की भाषा की समालोचना करते हैं। अब यदि ये लोग भी पुकार मचाने लगें कि हमारी भूलें दिखा कर उपाध्याय जी हमारा दिल दुखाते हैं तो उपाध्यायजी के सरल लेखकों को लेखनी उठाने का साहस ही न हो। फिर, किसी जाति की भाषा सम्बन्धिनी अशुद्धता दिखाने से उस जाति का जी दुखने की सम्भावना नहीं है—यह बात आपके ही मत से सिद्ध होती है। आप लिखते हैं कि "उर्दू फ़ारसी, और अरबी, तीनों में कोई अक्षर नहीं जो 'ज' से लिखना हो", इस लिए हिन्दी अक्षर उर्दू भाषा के लिए अशुद्ध नहीं है। आप में यदि स्वयम्भू कामता दुबेन महाशय ने हिन्दी को "भूलों भवान" कहकर हिन्दुओं का दिल नहीं दुखाया है तो फिर यह कैसे कहा जा सकता है कि हमने "बरमा" कहने वालों को "ब्रह्मा" की भूल बता कर अपमानित किया है। आप लोगों को कामताजी की उर्दू-व्याकरण में ("बरमा" के बदले) 'बरमी की व' अच्छी है, पर हम लोगों ने अपने मत से यह कभी नहीं

सम्भावना की जा सकती कि उस समय वारों के नाम प्रचलित थे। गत वर्ष तक्ष-शिला में राजा एज़ीज़ (Azes) के समय का एक लेख सर जान मारशल साहब को मिला है। उसमें महीने का नाम तो है, साथ ही उसके दिन की संख्या भी है, परन्तु वार का नाम नहीं। इससे क्या सूचित हुआ? यही न कि उस समय वारों का नामकरण न हुआ था? एज़ीज़ के समय के इस लेख का पहला भाग इस तरह पढ़ा गया है—

स १००० २०० १०० ४० १० १० अवस अपदस
अदस दिवसे १० ४ १ इस दिवसे
प्रतिस्थपित भगवतो धातुओ०

अर्थात्—राजा एज़ीज़ (Azes) के १३६ वें वर्ष आषाढ़ महीने के १५ वें दिन और आज के या इस दिन भगवान् की धातु की प्रतिष्ठा हुई।

यदि ऐसे स्थलों में वारों का नामोल्लेख मिल जाता तो इन प्रश्नों का तुरन्त फ़ैसला हो जाता। प्रतिवादी महाशय ही अब इस अधूरे काम को पूरा करें तो उनकी बात रह जाय।

मेरा कथन केवल इतना ही है कि भारतवर्ष के प्राचीनतम लेखों में दिनों या वारों के नाम नहीं मिलते। अर्वाचीन लेखों में मिलते हैं। इससे यही अनुमित होता है कि उस समय शायद उनका ज्ञान हमें न रहा हो। 'ज्योतिर्विद्' महाशय के कहने का मतलब यह है कि इनका ज्ञान हमें था, पर, इनका व्यवहार उस समय न होता होगा। इस पर मेरी प्रार्थना यह है कि यदि मुझे कोई ऐसा प्रमाण मिल जाय जिससे इन नामों की सत्ता हमारे देश में ईसामसीह से चिरकाल पहले निश्चित हो जाय तो मैं उनकी बात मान सकता हूँ, अन्यथा नहीं। दुबारा अन्वेषण से मुझे इतना प्रतीत होता है कि ईसा मसीह की प्रथम शताब्दी में वारों का ज्ञान शायद हमें था—एथीनिया के रहने वाले फ़िलोस्ट्रेटस नाम के एक विद्वान् ने (Philostratus, the Athenian) एपोलोनियस स्याना (Apollonius Tyana) की जीवनी में किसी भारत वर्षीय महात्मा (Iarchas ?) के विषय में लिखा है कि उसने एपोलोनियस को सात अँगूठियाँ दी थीं, जिन पर भिन्न भिन्न ग्रहों का नाम खुदा था और जिन्हें वह हर एक उस नाम के दिन पहनता था। एपोलोनियस ग्रीस देश का निवासी था। उसने ईसा मसीह प्रथम शताब्दी के पूर्वार्ध में इस देश की यात्रा की थी। पर यहाँ एक और कठिनाई की बात है। वह यह कि एपोलोनि के भारतवर्ष आने का कुछ भी प्रमाण प्राप्त नहीं। इसके फ़िलोस्ट्रेटस की पुस्तक सिर्फ़ गप्पाष्टकों से भरी हुई उसकी बातें विश्वसनीय नहीं। वह बहुत पीछे लिखी गई है। उसका रचना-काल २१५-१८ ईसवी है। इस उसका कथन ग्राह्य नहीं।

महाभारत के प्रमाण से यह तो सूचित है कि हमारे पूर्वज अज्ञात समय से ग्रहों का परिचय रखते थे। फिर भी हमारे प्राचीन लेखों में वारों का व्यवहार नहीं मिलता यह बात बहुत विस्मय-जनक है।

मेरी प्रार्थना यह है कि इस सम्बन्ध में मुझे किसी प्रकार का आग्रह नहीं। यदि किसी को कोई ऐसा वाक्य या प्रमाण ज्ञात हो जिससे यह सिद्ध हो जाय कि एतद्देशीय विद्वानों ने ही वारों का नामकरण किया था दूसरों को सिखाया अथवा ईजिप्ट या बेबिलोनिआ की सभ्यता के हमें वारों का ज्ञान था तो मैं बहुत ही प्रसन्न और कृतज्ञ हूँगा। इस दशा में मैं खुले दिल से—"एतद्देशप्रसूत" इत्यादि मनु-वाक्य का फिर से उच्चारण करूँगा।

हीरानन्द शास्त्री

---

## "व्यर्थ कोप" की शान्ति।

सरस्वती की गत संख्या में श्रीयुत स जफ़र मुन्शी ज़ालिम नामक मुसलमान सज्जन का लेख प्र जिसमें गत जून की सरस्वती के "ल मानी हिन्दी" नामक लेख का खण्डन है। आनन्द की बात है कि मुन्शी ज़ालिम मा मुसलमान होकर हिन्दी पढ़ते हैं और उसमें लेख लि की चेष्टा करते हैं। आपके लेख में बहुत सा शुद्ध होने पर भी दो चार सार की बातें भी हैं। लेखक महा ने हम पर नीचे लिखे आक्षेप किये हैं:—

(1) संस्कृत-शब्दों का अशुद्ध उच्चारण और अशुद्ध विन्यास करने के कारण हम मुसलमानों से कुपित हुए

प की दृष्टि से नहीं, किन्तु हिन्दी-लेखकों की दृष्टि से "न्तीयता" का दोष है और उस शब्द का शुद्ध अपभ्रंश र निश्चित करना हिन्दी-लेखकों के विचार का विषय है।

जिस मिसरे की दुम (१) बढ़ने की बात पर आप सक को मुँह के बल गिरता हुआ बतलाते हैं वह आपकी प्यारी "तक़तीअ़" के अनुसार भी अशुद्ध नहीं है। देखिए—

| | | | |
|---|---|---|---|
| मफ़ऊल | फ़ाइलातुन | मफ़ऊल | फ़ाइलातुन |
| तुझमें है | सब तू सब में | सब तू है | तू सभी है |

आपने "ऊ" और ि के समान जो स्वर हिन्दी में लिखे हैं वे हमने केवल आपकी विचित्र वर्णमाला समझने के लिये। यदि यह भी मान लिया जाय कि आपकी तक़तीअ़ के अनुसार यह चरण शुद्ध नहीं है—क्योंकि हम तक़तीअ़ का भेद नहीं जानते—तो भी यह रचना हमारे छन्दःशास्त्र के अनुसार शुद्ध है। देखिए—

। । । । ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । । ऽ ऽ
तुझ बनके ए स्वयम्भू, सबको बनाया तूने = १२ + १२

। । ऽ । । । । । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ
तुझमें हैं सब तू सब में, सब तू है तू सभी है = १२ + १२

यह हिन्दी का दिक्पाल छन्द है, जिसमें १२ × १२ के विश्राम से प्रत्येक चरण में २४ मात्रायें होती हैं।

"सविता विराज होई, दिक्पाल छन्द सोई"।
(छन्द प्रभाकर)

हिन्दी में आपको कई छन्द ऐसे मिलेंगे जो आपको बहुत ढंग के जान पड़ेंगे, पर हिन्दी में कोई भी छन्दःशास्त्र सम्बन्धिनी पुस्तक पढ़ने से आप का यह भ्रम दूर हो जायगा।

अन्त में मेरा निवेदन है कि एक अनिश्चित हिन्दी-लेखक के विषय में "मुँह के बल गिरना" कहने में आपको कहाँ तक उचित [illegible] शान्ति!

विविध छन्दःशास्त्र

# अन्तर्जातीय क़ानून।

[लेखक—अम्बिकाप्रसाद पाण्डेय, एम० एस-सी०, एल-एल० बी०]

क़ानून शान्तिरक्षा के लिए है। कला-कौशल और व्यापार की उन्नति हो, विद्या का प्रचार हो, पारस्परिक प्रेम की उत्तरोत्तर वृद्धि हो, क़ानून का यही उद्देश है। शासित जनों की आर्थिक दशा अच्छी हो, उनके जान-माल की रक्षा हो, निर्बल पर सबल अत्याचार न कर सके, शासक की यही आकांक्षा होनी चाहिए। कोई किसी के स्वत्व और अधिकार को छीन सके, परस्पर न्याय और धर्म्म का व्यवहार हो, यही क़ानून की मनशा है।

अन्तर्जातीय क़ानून की परिभाषा यह है—

"That body of rules and principles which regulate the intercourse of states with each other and to some extent the relations of a state with the subjects of another state."

अर्थात् अन्तर्जातीय क़ानून वह है जो संसार के समस्त सभ्य राज्यों के पारस्परिक आचरण का नियमन करे। इस परिभाषा से यह साफ़ ज़ाहिर है कि इस क़ानून या नियमावली की पाबन्दी सब राज्यों पर लाज़िमी है। इस तरह के क़ानून के सम्बन्ध में बहुत सी किताबें लिखी जा चुकी हैं। यह विषय बड़े महत्व का है। वर्त्तमान समय के महामात्य में प्रत्येक राज्यों के परस्पर-व्यवहार को समझने के लिए तो इस क़ानून का पूर्ण ज्ञान होना बहुत ही आवश्यक है। अतएव इस क़ानून की उत्पत्ति, उन्नति और इसके आधुनिक रूप के सम्बन्ध में, संक्षेप से, कुछ लिखना इस लेख का मुख्य उद्देश है।

## उत्पत्ति।

[illegible] ३६६ वर्ष ईसा के पहले रोम के धर्माधिकरण [illegible] की सृष्टि [illegible] हुई थी। साथ ही इस समय [illegible] धर्म्म-सम्बन्धी [illegible] का विचार [illegible] था। यहाँ विदेश और [illegible] का अस्तित्व था। अब दूर दूर से आकर यहाँ विद्या पढ़ने और व्यवसाय-वाणिज्य में प्रवीण होने के लिए

कहा कि मुसलमान लेखक हमारा जी दुखाते हैं। यदि आपका जी दुखने का कोई साधार कारण है तो हम आपके दुख से दुखी हैं।

( ३ ) इस बात का पता लगाना कठिन है कि मुसलमान व्याख्याता लोग हिन्दी जानते थे या नहीं; पर हिन्दी के विषय में उनके तिरस्कार का प्रमाण "हिन्दी—विन्दी" समास से ही मिल जाता है। यदि हम कहें कि "तक़रीर" कोई "उर्दू—सुर्दू" का शब्द है तो श्रोताओं को उस भाषा के विषय में हमारी पूज्य बुद्धि का पता अवश्य लग जायगा। हिन्दी के "मनु" शब्द को "मनू" कहने के लिए क्या कारण है? यदि आर्यों ने अपने धार्मिक साहित्य की भाषा में उर्दू अक्षरों पर "ऐराब" नहीं लगाये हैं तो क्या, उनके अभाव में आपने अपने मन से "तशदीद" लगाली! यह तिरस्कार नहीं तो अक्षम्य उदासीनता अवश्य है।

( ४ ) आलिम जी ने अपना नाम "जफ़र" हिन्दी में लिखने के लिए हिन्दी अक्षरों के नीचे (आधार के समान) बिन्दियाँ लगा कर शुद्ध उच्चारण की पराकाष्ठा दिखा दी; पर इस बात का विचार न किया कि हिन्दी में क्या कोई ऐसा भी शब्द है जिसमें "अ" के पश्चात् फिर "अ" आता है; अथवा "अ" के पश्चात् "अ" का उच्चारण हो सकता है। न्याय तो तब था जब वे अपने "नून" के नीचे एक और बिन्दी लगा कर अपने सहधर्मियों को "ण" का उच्चारण सिखाते। यदि उर्दू, फ़ारसी और अरबी तीनों में कोई अक्षर नहीं जो "ण" से मिलता हो तो हिन्दी और संस्कृत में कौन सा ऐसा अक्षर है जो आपके गला-घोंटू "अ" से मिलता है! आप अपने एक अस्वाभाविक उच्चारण को स्थिर रखने के लिए दूसरी भाषा के अक्षरों को भी हिला देते हैं, पर अपनी भाषा में अकेले एक "ण" के न होने से आप मुसलमानों के सब अशुद्ध और ऊट-पटाँग उच्चारण सन्तव्य समझते हैं!

हमने "मुर्दे" को "मुर्दे" अपने संस्कृत-व्याकरण के अनुसार लिखा है; क्यों कि यह शब्द हमारी भाषा में अपना व्याकरण बग़ल में दाबकर नहीं आया है। संस्कृत में आचार्यों ने उच्चारण की सूक्ष्मता पर इतना ध्यान दिया है कि उन्होंने रेफ के पश्चात् कई अक्षरों को विकल्प से द्वित्व करने का नियम खोज निकाला है। यदि आप संस्कृत-ग्रन्थों पर ध्यान देवें तो आप को तुरन्त जान पड़ेगा कि "धर्म", "कर्म" आदि शब्द अपने स्वाभाविक उच्चारण के अनुसार कि गे "धर्म्म", "कर्म्म" आदि लिखे जाते हैं। यह आ दिखाया हुआ "अभ्यास का खेल" नहीं है; किन्तु शब्द की विशेषता है। इसी रीति से हमने "मुर्दे" को "द' 'द' से" लिख कर मानो उसे सजीव कर दिया है।

अब हम दो चार शब्द उन लोगों के विषय में भी देते हैं जिन्हें आलिमजी ने हमारे सङ्ग का दोष लगाय

( ५ ) यदि आर्यों ने उर्दू में "पेट भर कर" स शब्द लिखने से उर्दू के गले पर छुरी फेरी है तो आर्य ने हिन्दी में भरे पेट पर पेट भर कर फ़ारसी, अरबी भर कर और हिन्दी को "उर्दू" (अथवा लखन "वर्दू") बना कर हिन्दी के गले पर क्या तलवार नहीं है! यहाँ तो आपने पक्षपात की पराकाष्ठा दिखला दी! आर्य लोग आप की सलाह मानते तो जिन हिन्दू में नागरी अक्षरों का प्रचार मिट गया है उनके लिए "पुनः के बदले "तनासुख" लिख कर "वैदक" धर्म का करते! इस सलाह के अनुसार वे लोग अपने को "श (श्रेष्ठ) न कह कर मुसलमानों के समान "आरि (लज्जित) कहते तो अच्छा था!

( ६ ) जो लोग "परदे" को "पड़दे" लिखने भाषा के उसी सिद्धान्त का अनुसरण करते हैं कि उल्लेख ऊपर हो चुका है—अर्थात् किसी भी भा विदेशी उच्चारण और वर्ण-विन्यास का पूरा पूरा पालन हो सकता। आप लोग भी कदाचित् इसी सिद्धान्त के अ "देश" को "देस" लिखने और बोलते हैं। क्या कभी महाराष्ट्र-लोगों से भी यह पूछा है कि आप लोग सब मराठी में "पड़दा" क्यों बोलते और लिखते हैं? और आपके बताने पर वे लोग भूल स्वीकार करके "पड़दा" "परदा" लिखने और बोलने लगेंगे? वे लोग आपको उत्तर देंगे कि "पड़दा" शब्द उर्दू में भलेही "परदा" पर हमारी मराठी उर्दू नहीं है और हम लोगों में "प ही शिष्ट समझा जाता है। एक महाराष्ट्र सज्जन ने तो में "पड़दा" नामक कविता लिख कर इस शब्द को फैला दिया है। यदि "पड़दे" शब्द में कोई दोष है तो

आया करते थे। थोड़े दिनों में विदेशियों की संख्या वहाँ बहुत बढ़ गई। तब यह कठिनाई उपस्थित हुई कि उनके लिए क़ानून कैसा हो? भला, रोम-निवासी कब चाहते थे कि विदेशी उनके जातीय नियमों (Civil Laws) से लाभ उठावें। इससे उनके जातीय गौरव को बट्टा लगता था। साथ ही देशोन्नति के लिए उनका बहिष्कार करना भी युक्ति-सङ्गत न था। इस लिए रोम-साम्राज्य में जस जेन्टियम (Jus Gentium) नामक क़ानून बनाया गया। उसी के अनुसार रोम में रहने वाले विदेशियों और रोम-निवासियों के पारस्परिक झगड़ों का निपटारा होता था। जस जेन्टियम (Jus Gentium) क़ानून में उन्हीं नियमों का समावेश है जो प्रत्येक राष्ट्र में साधारणतः काम में लाये जाते हैं। इस क़ानून में उन्हीं नियमों को स्थान दिया गया था जो उस समय के निकटवर्ती समाजों में प्रचलित थे। उसमें उन नियमों को स्थान ही नहीं दिया गया—उनकी चर्चा ही नहीं की गई—जो रीति-रस्म, रिवाज, जल-वायु और भूमि की विशेषता के कारण एक ही राज्य में प्रचलित थे अथवा एक ही जाति के लिए उपयुक्त थे। यद्यपि जस जेन्टियम (Jus Gentium) को आधुनिक अन्तर्जातीय नियम कहना अयुक्ति है तथापि उसके नियम वर्तमान नियमों से कई अंशों में बहुत मिलते जुलते हैं।

## उन्नति।

लगभग २७ वर्ष ईसा के पहले रोम-साम्राज्य स्थापित हुआ। उस समय विश्वव्यापी साम्राज्य (Universal Empire) के प्रश्न ने बड़ा हलचल मचा रक्खा था। सब की यही आन्तरिक इच्छा थी कि एक ऐसा बड़ा साम्राज्य स्थापित हो जो अन्य छोटे छोटे राज्यों का अधिकार-सूत्र अपने हाथ में रक्खे, उनके पारस्परिक झगड़ों का फ़ैसला करे और उनकी रक्षा भी करे। परन्तु, दैव की इच्छा वैसी न थी। विश्वव्यापी साम्राज्य का सितारा देखते ही देखते डूब गया। कई छोटे-मोटे स्वाधीन राज्यों का विकास हो गया। इन राज्यों में परस्पर लड़ाई झगड़ा होने लगा। थोड़े ही दिनों बाद धर्म्म में भी प्रोटेस्टंट्स (Protestants) और कैथलिक्स (Catholics) ये दो दल हो गये। इनमें

आधुनिक अन्तर्जातीय नियमों का निर्माण हुआ। ये राजनैतिक स्वाधीनता और भौमि (Territorial Sovereignty) के आ सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी में नर-हत्या हुई। उस समय लोगों ने युद्धों की संख्या भीषणता कम करने के लिए कुछ और नियमों करना चाहा। उन्होंने सोचा कि ऐसे नियमों और युद्ध कम हो जायगा। इस कार्य्य की प्र प्रसिद्ध क़ानूनदाँ ह्यूगो ग्रोटियस (Hugo चुना गया। उसका जन्म सन् १५८३ में हुआ ग्रोटियस आधुनिक अन्तर्जातीय क़ानून का जन्म जाता है। वह हालैंड देश का निवासी था। बड़ी अच्छी किताब लिखी। किताब का नाम Treatise on the Law of War and ग्रोटियस ने यूनान के स्टोइक पन्थ के दार्शनि Philosophers) के प्राकृतिक नियमों (Jus N को अपने सिद्धान्तों का आधार माना। प्रोफ़ेस का कहना है—

(१) That there is a determina nature.

अर्थात्—हर देश में कुछ ऐसे नियम प जिनका पालन मनुष्य अपनी आत्मा की प्रेरण करता है। ईश्वर की कृपा से जन्म के साथ पैदा एक हृदयस्थ शक्ति हर मनुष्य को ऐसे नियमों करने के लिए बाध्य करती है। इसके लिए कि की आवश्यकता नहीं। साथ ही किसी के आ ज़रूरत नहीं। ऐसे नियम मनुष्य-मात्र को स्वीकृत उनका पालन वह अपनी रक्षा के लिए किया करता

(२) That International Law is b on states *inter se*.

अर्थात्—सारे राष्ट्र इन नियमों के पालन के लि हैं। इन्हीं नियमों के द्वारा दो या दो से अधिक पारस्परिक झगड़े का निपटारा हो सकता है।

(३) Sovereigns should be rela each other, like the members of a

अर्थात् राजाओं का परस्पर सम्बन्ध ग्राम के ज़मींदारों के सम्बन्ध के सदृश होना चाहिए। अभिप्राय यह कि उनमें भी वही रहे और एक दूसरे के स्वत्व और अधिकार को माने। कोई राज्य, चाहे वह कितना ही सम्पन्न और शक्तिशाली क्यों न हो, दूसरे और अशक्त राज्य पर बिना कारण अत्याचार न करे। इसी का नाम राजनैतिक स्वतन्त्रता है।

इसके बाद कई सन्धियाँ हुईं। उनमें कितने ही नये नियम निश्चित हुए। उदाहरण के लिए:—

(१) वेस्टफेलिया की सन्धि। इसमें यह नियम निश्चित हुआ कि प्रत्येक राज्य, चाहे बड़ा हो चाहे छोटा, अपनी सीमा के भीतर हर तरह स्वाधीन है।

(२) सन् १८४१ की सन्धि। इसमें यह निश्चित हुआ कि कृष्ण समुद्र पर प्रत्येक राज्य का पूर्ण अधिकार जैसे, इँगलैंड का इँगलिश चैनल (अँगरेज़ी खाड़ी) पर।

(३) वाशिङ्गटन की सन्धि—के अनुसार प्रत्येक तटस्थ का कर्तव्य है कि वह अपने राज्य के किसी भाग में युद्ध लिप्त राज्य (Belligerent) को युद्ध की तैयारी करने से रोके।

(४) सन् १८१२ के सेंटपीटर्सबर्ग की घोषणा एवं जेनेवा की द्वितीय जर्मन पञ्चायत इत्यादि।

इन सन्धियों में विरोधपक्ष या बद्दामीन—तटस्थ—राज्यों के कर्तव्य निश्चित किये गये हैं। इन प्रस्तावों या नियमों के सम्बन्ध में अध्यापक लीकॉक (Prof. Lekok) ने कहा है कि अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में तटस्थता-सम्बन्धी नियमों की उन्नति पर ही अधिक ध्यान दिया गया। सन्धियों में सब से उत्तम वह है जो सन् १९०७ में (The Hague) नगर में हुई थी। उसमें युद्ध-सम्बन्धी निम्न नियम निश्चित हुए—

(१) जिस शत्रु ने हथियार रख दिया हो उसे न मारना चाहिए।

(२) अचानक धावा (Surprise Assaults) निषिद्ध है।

(३) पुस्तकालयों में आग लगा देना, कला-कौशल ज्ञान की चीज़ें नष्ट करना निषिद्ध है।

(४) प्रजा का धन लूटना भी मना है।

(५) प्रजा की स्वाधीनता और कुल-मर्यादा की रक्षा राजाओं का कर्तव्य है।

(६) गोलन्दाज़ी करते समय धर्मस्थान या प्रार्थना-मन्दिर (Churches), कलाभवन, विज्ञानशाला और अजायबघर की यथा शक्ति रक्षा करनी चाहिए।

(७) ऐसे "टारपीडो" का व्यवहार निषिद्ध है जो निशाना चूकने पर भी कुछ न कुछ और हानि पहुँचावें।

(८) प्रजा का धन और माल ज़ब्त न किया जाय। इत्यादि।

## उपसंहार।

वर्त्तमान महाभारत में इन नियमों का कहाँ तक पालन हो रहा है, यह बात समाचारपत्रों के पाठक अच्छी तरह जानते हैं। इन अन्तर्जातीय नियमों के अनादर करने वाले कौन हैं, यह बात कुछ देशों की युद्ध-सम्बन्धिनी कहावतों से साफ़ ज़ाहिर हो जायगी। हम यहाँ पर पाठकों के जानने के लिए उनमें से कुछ कहावतें लिखते हैं—

## अँगरेज़ों की कहावतें।

(१) Since the foolish part of mankind will make wars from time to time, with each other, not having sense enough otherwise to settle their differences, it certainly becomes the wiser part, who cannot prevent these wars, to alleviate as much as possible the calamities attending them. (Benj. Franklin)

अर्थात्—जो मन्द-बुद्धि बिना युद्ध के अपने झगड़ों का निपटारा नहीं कर सकते, उन्हें चाहिए कि वे युद्ध की भीषणता कम करने का प्रयत्न करें। बेंजामिन फ्रैंकलिन

(२) My thoughts are turned on peace: already have our quarrels filled the world with widows and with orphans (Addison).

अर्थात्—हमें शान्ति चाहिए, युद्ध की इच्छा अब नहीं रही। हमारे पारस्परिक झगड़ों के कारण विधवाओं और अनाथों की संख्या बहुत हो गई है। एडिसन

(३) War, the needy bankrupt's last resort (Rowe)

आया करते थे। थोड़े दिनों में विदेशियों की संख्या वहाँ बहुत बढ़ गई। तब यह कठिनाई उपस्थित हुई कि उनके लिए क़ानून कैसा हो? भला, रोम-निवासी कब चाहते थे कि विदेशी उनके जातीय नियमों (Civil Laws) से लाभ उठावें। इससे उनके जातीय गौरव को बट्टा लगता था। साथ ही देशोन्नति के लिए उनका बहिष्कार करना भी युक्ति-सङ्गत न था। इस लिए रोम-साम्राज्य में जस जेन्टियम (Jus Gentium) नामक क़ानून बनाया गया। उसी के अनुसार रोम में रहने वाले विदेशियों और रोम-निवासियों के पारस्परिक झगड़ों का निपटारा होता था। जस जेन्टियम (Jus Gentium) क़ानून में उन्हीं नियमों का समावेश है जो प्रत्येक राष्ट्र में साधारणतः काम में लाये जाते हैं। इस क़ानून में उन्हीं नियमों को स्थान दिया गया था जो उस समय के निकटवर्ती समाजों में प्रचलित थे। उसमें उन नियमों को स्थान ही नहीं दिया गया—उनकी चर्चा ही नहीं की गई—जो रीति-रस्म, रिवाज, जल-वायु और भूमि की विशेषता के कारण एक ही राज्य में प्रचलित थे अथवा एक ही जाति के लिए उपयुक्त थे। यद्यपि जस जेन्टियम (Jus Gentium) को आधुनिक अन्तर्जातीय नियम कहना अयुक्ति है तथापि उसके नियम वर्त्तमान नियमों से कई अंशों में बहुत मिलते जुलते हैं।

## उन्नति।

लगभग २७ वर्ष ईसा के पहले रोम साम्राज्य स्थापित हुआ। उस समय विश्वव्यापी साम्राज्य (Universal Empire) के प्रभाव ने बड़ा हलचल मचा रखा था। सब की यही आन्तरिक इच्छा थी कि एक ऐसा बड़ा साम्राज्य स्थापित हो जो अन्य छोटे छोटे राज्यों का अधिकार-सूत्र अपने हाथ में रक्खे, उनके पारस्परिक झगड़ों का फ़ैसला करे और उनकी रक्षा भी करे। परन्तु, दैव की इच्छा वैसी न थी। विश्वव्यापी साम्राज्य का विनाश देखते ही देखते हो गया। कई छोटे मोटे स्वतन्त्र राज्यों का विकास हो गया। इन राज्यों में परस्पर बड़ी लड़ाई होने लगी। थोड़े ही दिनों बाद धर्म में भी प्रोटेस्टेन्ट (Protestants) और कैथलिक (Catholics) के दो दल हो गये। इसमें लगभग १०० वर्ष तक घोर लड़ाई होती रही।

आधुनिक अन्तर्जातीय नियमों का निर्माण इसी हुआ। वे राजनैतिक स्वाधीनता और भौमिक अ (Territorial Sovereignty) के आधार पर सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी में नर-हत्या बढ़ी हु हुई। उस समय लोगों ने युद्धों की संख्या और भीषणता कम करने के लिए कुछ और नियमों का करना चाहा। उन्होंने सोचा कि ऐसे नियमों से और युद्ध कम हो जायगा। इस कार्य्य की पूर्त्ति प्रसिद्ध क़ानूनदाँ ह्युगो ग्रोटियस (Hugo Gro चुना गया। उसका जन्म सन् १५८३ में हुआ था। ग्रोटियस आधुनिक अन्तर्जातीय क़ानून का जन्मदाता जाता है। यह हालैंड देश का निवासी था। इसने बड़ी अच्छी किताब लिखी। किताब का नाम है— Treatise on the Law of War and Pea ग्रोटियस ने यूनान के स्टोइक पन्थ के दार्शनिकों (S Philosophers) के प्राकृतिक नियमों (Jus Natur को अपने सिद्धान्तों का आधार माना। ग्रोटेसर ह्यो का कहना है—

(1) That there is a determinal law nature.

अर्थात्—हर देश में कुछ ऐसे नियम पाये ज जिनका पालन मनुष्य अपनी आत्मा की प्रेरणा से करता है। ईश्वर की कृपा से जन्म के साथ पैदा होने एक हृदयस्थ शक्ति हर मनुष्य को ऐसे नियमों का प करने के लिए बाध्य करती है। इसके लिए किसी की आवश्यकता नहीं। साथ ही किसी के आदेश की ज़रूरत नहीं। ऐसे नियम मनुष्य मात्र को स्वीकृत होने उनका पालन वह अपनी रक्षा के लिए किया करता है।

(2) That International Law is bin on state *inter se*.

अर्थात्—सारे राष्ट्र इन नियमों के पालन के लि हैं। इन्हीं नियमों के द्वारा दो या दो से पारस्परिक झगड़ों का निपटारा हो सकता है

(3) Sovereigns should each other, like the mem of Roman Proprietors.

ाचार्यजी ने ही इनको ब्रह्मसूत्र के नाम से उल्लेख
। इसके अतिरिक्त अब तो यह भी सिद्ध हो चुका है
ान वेदान्त सूत्र कोई और पुराने सूत्रों की आवृत्ति है।
ग लोग कहते हैं कि गीता में बौद्ध मत के सम्बन्ध
श्लोक हैं। अतएव गीता गौतम बुद्ध के पीछे रची
ये श्लोक गीता के सोलहवें अध्याय में ७ से १८ तक
आसुरी प्रकृति वाले मनुष्यों का वर्णन है। इस
प्रोफ़ेसर मोक्षमूलर ने कोई सम्मति नहीं प्रकाशित
तु प्रोफ़ेसर थमत्तनेरकर और प्रोफ़ेसर विल्सन
हैं कि असुरों के वर्णन का सम्बन्ध बौद्ध-मतावल-
है।

न तैलङ्ग इस सम्मति के भी सर्वथा विरुद्ध हैं। उनका
के यह वर्णन चार्वाकों का है, बौद्धों का नहीं।
सन्देह नहीं कि चार्वाक बौद्धों से बहुत पहले के
ने ग्रन्थों में इनका बहुधा वर्णन है। चार्वाकों के
निजी ने एक सूत्र-बद्ध पुस्तक लिखी थी, जो अब
ती। परन्तु और ग्रन्थों से इस पुस्तक का होना
ध है। माधवाचार्य-कृत सर्व-दर्शन संग्रह में भी
उल्लेख है।

गीता उपनिषदों के सिद्धान्तों से भरी हुई है।
स्पष्ट है कि इसकी रचना का समय उपनिषदों
ग्रों की रचना के समय के बीच का है। पर इसमें
न्त हैं उनसे सूचित होता है कि यह बौद्ध मत के
के पहले की है और यह समय ईसा के पूर्व पाँ
।

के दूसरे अध्याय के पैंतालीसवें श्लोक में त्रिगुण
इससे विदित होता है कि गीता पाणिनि से पहले
कि द्वन्द्व-समास का प्रचार पाणिनि-सूत्रों से पहले
णिनि ही इस समास के उद्भावक नहीं। वह
हले से चला आता है। इन्होंने इसे स्वीकारमात्र
है।

सी विद्वानों ने हमारे प्राचीन साहित्य की रचना
। कई भागों में बाँटा है। इनके अनुसार पहला
रचना का है। इसी समय वेद-मन्त्रों की सृष्टि
काल के ब्राह्मण ग्रंथ विभाग किये हैं। वाजसनेय
ऋग्वेद बना, इसका यह अर्थ नहीं, कि ऋग्वेद के सब मन्त्र, यजुः, और अथर्व वेद की रचना हुई। प्रोफ़ेसर मेकडोनल इस समय को ईसा के पूर्व २००० से १००० वर्ष तक बताते हैं। दत्त महाशय की भी यही सम्मति है।

दूसरा काल उपनिषदों और ब्राह्मण-ग्रन्थों की रचना का है, जो ईसा के पूर्व १००० से ५०० वर्ष तक बताया जाता है।

तीसरा काल सूत्र-ग्रन्थ-रचना का है, जो ईसा के पूर्व ५०० वर्ष से २०० वर्ष तक है।

चौथा काल धर्म-शास्त्रों की रचना का है, जो ईसा के २०० वर्ष पहले से ५०० वर्ष पीछे का है।

अब यह निश्चय करना है कि इन समय-विभागों में से किस समय-विभाग में महाभारत की रचना हुई, क्योंकि गीता उसीका अंश है। पर, इसका निर्णय करना सहज नहीं, क्योंकि महाभारत की रचना एक ही समय में नहीं हुई। उसके रचने वालों की संख्या भी एक से अधिक है। और, महाभारत किसी समय में क्यों न बना हो, वेदों से सिद्ध है कि कुरु-पाञ्चाल-युद्ध ईसा के १२ या १३ शताब्दी पहले हुआ था।

महाभारत के आदि-पर्व में लिखा है कि जब शौनकादि ऋषि नैमिषारण्य में यज्ञ कर रहे थे उस समय उग्रश्रवा ऋषि वहाँ आकर उपस्थित हुए। शौनकादिक की प्रार्थना पर उन्होंने महाभारत की कथा वर्णन की। उग्रश्रवा ने महाभारत की कथा वैशम्पायन से सुनी थी और वैशम्पायन ने व्यास से। वैशम्पायन का कथन है कि व्यास ने अपने चार शिष्यों और पुत्र शुक को यह कथा सुनाई थी। इनमें से प्रत्येक ने महाभारत को प्रकाशित किया है। इससे यह सिद्ध हुआ कि जो असली महाभारत व्यासजी ने कथन किया था वह यह नहीं है। यह इन शिष्यों में से किसी एक का कथन किया हुआ है। परन्तु है यह व्यासजी के असली महाभारत के आधार पर।

पश्चिमी विद्वानों ने इस ग्रन्थ की बड़ी खोज की है और इसे बड़े ध्यान से पढ़ा है। वे कहते हैं कि इस ग्रन्थ की चार आवृत्तियाँ हुई हैं। यथा—

(१) कहीं-कहीं में लिखा है कि महाभारत में ८८०० श्लोक हैं जिनका अर्थ व्यास और शुकदेवजी को छोड़ कर और कोई नहीं जानता। अतएव व्यास अपने को

तो जानते हैं। इससे यूरोप के विद्वानों ने यह तात्पर्य निकाला है कि पहले इस ग्रन्थ में केवल ८८०० श्लोक थे, जो ईसा के ४०० वर्ष पहले रचे गये थे। गृह्य-सूत्रों से भी इतनी ही श्लोक-संख्या का पता लगता है।

(२) आदि-पर्व में यह भी लिखा है कि जो भारत-संहिता व्यासजी ने रची थी उसमें २४००० श्लोक थे और गीता उनमें शामिल थी। इस दूसरी आवृत्ति में शिव, विष्णु, कृष्ण आदि का स्थान ब्रह्मा के समकक्ष माना गया है। प्राचीन समय में ब्रह्माजी ही सबसे बड़े देवता समझे जाते थे। इस लिए इसके रचे जाने का समय ईसा के तीन सौ वर्ष पहले का है। इस अनुमान का यह भी कारण है कि यूनान देश के विद्वानों ने, विशेष कर मेगास्थनीज़ ने, इन देवताओं के पूजे जाने का हाल लिखा है।

(३) महाभारत के दूसरे पर्व में श्लोकों की संख्या ८४, ८३७ बताई गई है। इस कारण यह तीसरी आवृत्ति हुई।

(४) इस समय हरिवंश पुराण सहित महाभारत में १,००,३१० श्लोक हैं। अतएव यह चौथी आवृत्ति हुई।

तीसरी और चौथी आवृत्तियों का समय ईसा से २०० वर्ष पहले से ४०० वर्ष पीछे तक माना गया है। ईसा के ४२०-२०० वर्ष पीछे के जो दानपत्र मिले हैं उनसे पाया जाता है कि महाभारत की चौथी, अर्थात् अन्तिम आवृत्ति, ईसा के ४०० वर्ष पीछे बनी थी।

एडन के विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर ई० डब्ल्यू० हौपकिन साहब, जिन्होंने महाभारत का सम्पादन किया है, इन आवृत्तियों का निम्न-लिखित समय बताते हैं—

पहली आवृत्ति ईसा के ४०० वर्ष पूर्व बनी। इस आवृत्ति में केवल मन्त्र थे।

दूसरी आवृत्ति में पाण्डवों के वीर-चरित्रों का वर्णन था। पर और और कथायें भी सम्मिलित थीं। उसमें कृष्ण देवता माने गये थे। यह आवृत्ति ईसा के ४००-२०० वर्ष पूर्व बनी थी।

तीसरी आवृत्ति ईसा के पूर्व २०० वर्ष से उसके बाद ४०० वर्ष पीछे तक बनी। इसमें कृष्ण पूर्ण-रीति [illegible] वर्णन किया

चौथी आवृत्ति ईसा के पूर्व २०० वर्ष से [illegible] ४०० वर्ष तक बनी। इस में वर्तमान सभी [illegible] हुए और पहले पर्व की भूमिका भी लिखी गई। साहब की सम्मति में समग्र महाभारत ईसा के पीछे बन चुका था।

इन आवृत्तियों में से सबसे पीछे की आवृत्ति का सम्मिलित होना अनुमान किया जाता है। रचना धर्म-शास्त्रों से पहले की नहीं। और रचना का समय ईसा के २०० वर्ष [illegible] हुआ है।

गीता का समय-निश्चय करने के लिए प्रमाण हैं। अभावात्मक और भावात्मक। [illegible] यह है कि पूर्वोक्त चार प्रकार के ग्रन्थ-रचना का पता नहीं लगता। अर्थात् मन्त्र, और सूत्र-ग्रन्थों के रचनाकाल में गीता न[illegible] प्रमाण यह है कि चारों काल-विभागों गीता में मिलते हैं। गीता में उन समस्त दिखाई देती है। अतएव पूर्व-निर्दिष्ट यह है कि धर्मशास्त्रों की रचना के समय से पूर्व की गीता नहीं। अर्थात् वह समय और कुछ पीछे की है। ईपिक इतिहास लेखक श्रीयुत सी० वी० वैद्य, राम० चरितात्मक ग्रन्थों की रचना ईसा से पहले की है। क्योंकि महाभारत [illegible] वर्ष पहले [illegible] था। व्यासजी महाभारत पीछे न बना होगा; पर अन्तिम आवृत्ति पहले के लगभग सूत जी के [illegible] अर्थात् यह अशोक के पूर्व और [illegible] होगी।

भगवद्गीता के रचना-काल [illegible] की यह सम्मति है कि महाभारत [illegible] समय की गीता नहीं। किन्तु [illegible] की है। प्रमाण में ये यह कहते [illegible] ग्रन्थों में गीता का उल्लेख [illegible] गीता के श्लोक भी महाभारत [illegible]

सरस्वती "श्री गोरमल-शारदा सदन" कलकत्ता

गोरा, गोरख और सिद्ध।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

के एकही समय में रचा गया है। गीता के रचने वाले व्यासजी हों अथवा वैशम्पायनजी हों, पर थे वे बड़े विद्वान्। गीता बहुत पुरानी है। बुद्ध के जन्म से शताब्दियों पहले वह बन चुकी थी। अठारहों अध्यायों का विषय-प्रवाह एक सा है। कहीं विच्छेद भाव नहीं। उसकी रचना सरल और प्रसन्न है। थोड़े में बहुत कुछ कह दिया गया है। गीता की रचना का समय उसकी भाषा से भी अनुमित हो सकता है। गीता बोल-चाल की सरल संस्कृत में है। गीता में यौद्ध मत की कोई बात नहीं।

पण्डित सीतानाथ तत्त्व-भूषण की सम्मति है कि गीता बुद्ध के जन्म के कुछ पहले या पीछे बनी थी।

जो प्रमाण ऊपर दिये गये हैं उन पर जो आक्षेप किये जा सकते हैं उनकी भी जानकारी देते लीजिए। अभावात्मक प्रमाणों द्वारा यह कहा जाता है कि गीता के सिद्धान्त मन्त्र, ब्राह्मण, उपनिषद् और सूत्र समय के रचे हुए ग्रन्थों में नहीं हैं। सूत्र ग्रन्थों का समय ईसा के पूर्व २०० से १०० वर्ष तक बताया जाता है और कहा जाता है कि गीता उस समय के पीछे बनी होगी। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या गीता में सूत्र-ग्रन्थों की बातें हैं? गीता में तो ऐसी कोई बात नहीं। अतएव इससे क्या यह सिद्ध नहीं होता कि गीता इस समय के पहले बनी थी? इसमें सन्देह नहीं कि गीता में मन्त्र, ब्राह्मण और उपनिषद्-ग्रन्थों के सिद्धान्त पाये जाते हैं। परन्तु सूत्र-ग्रन्थों की कोई बात नहीं।

गीता में छहों शास्त्रों के सिद्धान्त विद्यमान हैं। परन्तु वे सिद्धान्त वेदों और उपनिषदों के हैं। अतएव सब प्राचीन हैं। यह नहीं कि वे वर्तमान छहों शास्त्रों से लिये गये हों। गीता में शास्त्रों के नाम नहीं। अतएव यह सिद्ध नहीं कि गीता ने इन ग्रन्थों से अपने सिद्धान्त लिये हैं। उपनिषदों के बहुत से श्लोक गीता में जैसे के तैसे पाये जाते हैं।

इन्हीं कारणों से गीता का बनना ईसा के १०० वर्ष पहले सिद्ध होता है। क्योंकि ईसा के २०० वर्ष पहले से सूत्रग्रन्थों का बनना प्रारम्भ हुआ था। परन्तु गीता उससे पहले ही बन चुकी थी। यह अनुमान सेवाजनी का नहीं। भारतवर्ष के बड़े बड़े विद्वानों की सम्मति है कि गीता की रचना ईसा के ६०० वर्ष पहले हुई होगी। इस अनुमान को काटने वाले जब तक कोई और प्रबल प्रमाण न मिलें तब तक इसी को ठीक मानना उचित होगा।

हमारे सनातनी पण्डितों के विचार से गीता पूर्वोक्त समय से और भी पहले की है। वे कहते हैं कि भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्रजी ने अपने मुख से गीता का उपदेश अर्जुन को कुरुक्षेत्र में किया था। जितना समय महाभारत के युद्ध को हुए उतनाही गीता को बने हुआ।

फतोमल, एम०ए०

---

# विविध विषय।

## १—भारत में शिक्षा-प्रचार।

शिक्षित भारतवासियों को शिक्षा-प्रचार के लिए अधिक प्रयत्न-शील देख कर गवर्नमेंट आफ़ इंडिया ने अब नई नई रिपोर्टें प्रकाशित करना आरम्भ किया है। ऐसी एक रिपोर्ट निकले अभी कुछ ही समय हुआ। उसका सम्बन्ध १९१३—१४ ईसवी से है। उसका नाम है—Indian Education in 1913-14. इस रिपोर्ट से मालूम होता है कि शिक्षा प्रचार में सर्वत्र उन्नति हो रही है। गत तीन वर्षों में शिक्षा पानेवाले छात्रों की संख्या इस प्रकार थी।

| | |
|---|---|
| १९११—१२ | ६७,८०,७२१ |
| १९१२—१३ | ७१,६०,६४४ |
| १९१३—१४ | ७२,१८,१४७ |

इस हिसाब से १९१२—१३ और १९१३—१४ में, छात्रों की संख्या में, ७,२०,४२६ की वृद्धि हुई। और १९१२—१३ की अपेक्षा १९१३—१४ में १,२०,२०३ छात्र बढ़े। इसका अभिप्राय यह हुआ कि इस विशाल देश में जितने बच्चे (लड़के लड़कियाँ) स्कूल जाने योग्य हैं। उनमें से की सदी १४.६ को, १९१३—१४ में, शिक्षा मिली, बाक़ी ८०.४ शिक्षा से वंचित रहे। यदि कुल आबादी के हिसाब से हिसाब लगाया जाय तो फ़ी सदी ३ ही का औसत पड़ा। अर्थात् १९१३—१४ में सौ में केवल ३ जन स्कूल में थे! इसमें सन्देह नहीं कि शिक्षा प्रचार के सम्बन्ध में गवर्नमेंट का ध्यान पहले की अपेक्षा अब अधिक है।

तथापि देश की बढ़ी हुई निरक्षरता को देखते अभी और भी सहायता और सुभीते की ज़रूरत है।

शिक्षा-प्रचार में जो वृद्धि १९१३—१४ में हुई है उसका सूबेवार हिसाब नीचे दिया जाता है—

| सूबा | १९१२-१३ की अपेक्षा फ़ी सदी कितने छात्र बढ़े | स्कूल जाने योग्य उम्र वालों में फ़ी सदी कितने ने शिक्षा पाई |
|---|---|---|
| मदरास | ७·९ | २३·७ |
| बम्बई | ४·२ | २५·३ |
| बङ्गाल | १·७ | २१·६ |
| संयुक्त-प्रान्त | ४·० | ११·६ |
| पञ्जाब | ७·२ | १४·७ |
| ब्रह्मदेश | ९·९ | २७·८ |
| बिहार और उड़ीसा | १·७ | १५·६ |
| मध्य-प्रदेश | ८·९ | १५·६ |
| आसाम | १०·७ | २०·३ |
| पश्चिमोत्तर-सीमा-प्रान्त | १५·५ | १३·५ |
| कुर्ग | ६·५ | २१·० |
| देहली | १४·७ | २१·७ |
| टोटल | ५·० | १९·६ |

इससे साफ़ ज़ाहिर है कि हमारा प्रान्त शिक्षा में कहाँ तक पिछड़ा हुआ है। मान लीजिए, किसी गाँव में १०० बच्चे ऐसे हैं जो स्कूल जाने योग्य हैं। पर स्कूल जाते उनमें से केवल ११½ हैं! ऐसी हीन दशा इस देश के और किसी प्रान्त की नहीं। छात्रों की संख्या-वृद्धि के लिहाज़ से भी इस प्रान्त की दशा अच्छी नहीं। बङ्गाल, तथा बिहार और उड़ीसे को छोड़ कर अन्य सभी प्रान्तों में इस प्रान्त की अपेक्षा छात्रों की संख्या अधिक बढ़ी है।

× × × × ×

माध्यमिक शिक्षा देनेवाले ( Secondary ) स्कूलों की संख्या आदि का विवरण नीचे देखिए—

| | स्कूलों की संख्या | छात्रों की संख्या |
|---|---|---|
| अँगरेज़ी के हाई स्कूल | १,३४९ | ४,६६,१२९ |
| अँगरेज़ी के मिडिल स्कूल | २,६७४ | ३,१६,४६५ |
| देशी भाषाओं के मिडिल स्कूल | २,२१६ | २,२५,६६० |

१९१३-१४ में माध्यमिक शिक्षा पानेवाले छात्रों की संख्या में ६३,२७२ की वृद्धि हुई। इस वृद्धि का लाभ अँगरेज़ी स्कूलों में शिक्षा पानेवाले ही को अधिक है। रिपोर्ट में लिखा है कि इस की है। पर माँग जितनी अधिक नहीं। इसका हज़ारों लड़के इधर से फिरते हैं। उन्हें अँगरेज़ स्कूलों और कालेजों के दिया है, पर उतने से माँग की पूर्ति नहीं की भी संख्या बढ़ी है की भी। इस समय हैं और उनमें, १९१३

वर्ष में उनकी संख्या में कोई ५२ हजार की वृद्धि हुई।

× × × × +

अब जरा सारे भारत की प्रारम्भिक शिक्षा का हाल सुनिए—

| | स्कूलों की संख्या | छात्रों की संख्या |
|---|---|---|
| १२-१३ | १,१४,०२४ | ४०,६८,०४३ |
| १३-१४ | १,१६,६२० | ४६,०३,३१६ |

सन् १९१२-१३ की अपेक्षा १९१३-१४ में दो लाख से अधिक लड़कों ने प्रारम्भिक शिक्षा पाई। इसमें लड़कियों की संख्या शामिल नहीं। यह केवल लड़कों के स्कूलों का हाल है। इस संख्या-वृद्धि में हमारे प्रान्त के प्रारम्भिक स्कूलों के लड़कों की संख्या १८,६२२ थी। अर्थात् १९१३-१४ में इतने अधिक लड़कों ने यहाँ शिक्षा पाई। संयुक्त-प्रान्त के प्रारम्भिक मदरसों की संख्या, १९१३-१४ में, १४४ थी और उनमें शिक्षा पानेवाले लड़कों की संख्या ६,१२६।

इस समय सारे देश में ११,०२,२४२ लड़कियाँ शिक्षा पा रही हैं। अर्थात् स्कूल जाने योग्य उम्र की १०० लड़कियों में से ६ स्कूल जाती हैं।

शिक्षा-प्रचार में पहले से वृद्धि अवश्य हुई है। तथापि ८० वर्षों में अब तक स्कूल का मुँह नहीं देखा। अभी और अधिक खर्च करने तथा और अधिक मदरसे खोलने की ज़रूरत है। स्कूलों में काफ़ी जगह के प्रबन्ध की बड़ी ज़रूरत है। वृद्धि के अवरोधक नियमों में परिवर्तन की भी ज़रूरत है।

## २—काश्मीर में शिक्षा-प्रचार।

शिक्षा-प्रचार में काश्मीर भी आगे कदम बढ़ा रहा है। ता ६ सितंबर १९ को वहाँ के शिक्षा विभाग के अफ़सरों की नगर में एक सभा की। उसमें शिक्षा-सम्बन्धिनी अनेक बातों पर विचार हुआ। इस सभा की रिपोर्ट से मालूम होता है कि महाराजा साहब, काश्मीर, अपनी रियासत में शिक्षा-प्रचार की यथेष्ट वृद्धि करना चाहते हैं। उनकी इच्छा है कि सभी शिक्षा-प्राप्ति-योग्य लड़कों और लड़कियों के लिए शिक्षा के साधन—पाठशालायें और स्कूल—हो जायँ। महाराजा की इस सदिच्छा की [illegible] कम है।

पूर्वोक्त सभा में एक सबसे अधिक महत्त्व की बात पर विचार हुआ। वह यह कि शिक्षा किस भाषा के द्वारा दी जाय। निश्चय हुआ कि दूसरे मिडिल दरजे तक सब विषयों की शिक्षा देशी भाषा ही के द्वारा दी जाय और तीसरे मिडिल दरजे में भी इतिहास की शिक्षा अपनी ही भाषा के द्वारा दी जाय। यह बहुत अच्छा हुआ। छोटे दरजों में देशी भाषाओं के द्वारा शिक्षादान की आवश्यकता जब ब्रिटिश गवर्नमेंट ने भी स्वीकार कर ली है तब देशी रियासतों को तो इसके पहले ही अपनी भाषा को योग्य स्थान देना चाहिए था। पञ्जाब में यद्यपि काश्मीरी और पञ्जाबी भाषाओं का भी प्रचार है तथापि मिडिल तक की शिक्षा में हिन्दी और उर्दू को ही स्थान दिया गया है। श्रीनगर में श्रीप्रताप हाई स्कूल—नाम की एक संस्था है। लाला ठाकुरदास भण्डारी, बी०ए०, उसके हेड मास्टर हैं। पूर्वोक्त सभा में उपस्थित सज्जनों की संख्या १४ थी। उनमें से एक आदमी भी थे। १३ की राय हुई कि मिडिल में जिसकी इच्छा हो हिन्दी में शिक्षा-प्राप्ति करे और जिसकी इच्छा हो उर्दू में। पर लाला साहब ने इसकी मुख़ालफ़त की। आपने राय दी कि राज्य के किसी भी स्कूल में हिन्दी फटकने न पावे, उर्दू ही का अखण्ड राज्य रहे। जो काश्मीर संस्कृत भाषा और देवनागरी की सुन्दर लिपि के लिए हज़ारों वर्ष तक प्रसिद्ध हो चुका है उसी के शिक्षा-विभाग के एक हेड मास्टर की यह राय सचमुच ही आश्चर्य में डालनेवाली है। ख़ैर हुई, जो आप की राय से और कोई सभ्य सहमत न हुआ और उर्दू के साथ हिन्दी को भी स्थान मिल गया।

इस सभा में और भी कितने ही उपयोगी प्रस्ताव "पास" हुए। दो बरसों के दरजों में को ३० बच्चों के लिए एक और दूसरे दरजों में को ४० के लिए एक अध्यापक नियत करने का निश्चय किया गया। साथ ही यह भी निश्चय हुआ कि जब तक अध्यापकों की संख्या न बढ़ाई जाय तब तक यदि कहीं इससे अधिक छात्र हों तो उन्हें पूर्ववत् शिक्षा दी जाय। यह नियम उनकी शिक्षा प्राप्ति का बाधक न [illegible] ही देना भी चाहिए था। पढ़ी [illegible] रहांचा। पर [illegible] ग्राम नहीं। [illegible] अच्छा है।

इस सभा ने स्कूलों और कालेजों के छात्रों की स्वास्थ्य-परीक्षा का भी प्रबन्ध किया। लड़कियों को हिन्दी, उर्दू, पञ्जाबी और फारसी भाषाओं में आवश्यक और उपयोगिनी शिक्षा देने का भी निश्चय किया। उनके लिए सब ऐसी शिक्षा सुलभ कर दी जायगी जिससे वे गृहिणी और माता के कर्त्तव्यों का अच्छी तरह पालन कर सकें। यह खूब हुआ। लड़कियों को ऐसी ही शिक्षा मिलनी चाहिए।

## ३—बड़ौदे में शिक्षा प्रचार।

महाराजा गायकवाड़, सर सयाजी राव, बड़े ही प्रजावत्सल शासक हैं। वे सचमुच ही अपनी प्रजा का पुत्रवत् पालन करते हैं। अब वे यह चेष्टा कर रहे हैं कि उनके राज्य में एक भी आदमी बे पढ़ा न रहे। वहां कई साल से शिक्षा अनिवार्य्य है। माता-पिता को अपने लड़कों और लड़कियों को क़ानूनन मदरसे भेजना पड़ता है। न भेजने पर उन्हें सज़ा मिलती है—जुर्माना देना पड़ता है। १९१३—१४ से सम्बन्ध रखने वाली बड़ौदा-राज्य की वार्षिक रिपोर्ट से मालूम हुआ कि अनिवार्य्य शिक्षा पाने वाले लड़कों की उम्र अब बढ़ा कर १४ और लड़कियों की १२ कर दी गई है। पहले इससे कम थी। अर्थात् अब १४ वर्ष तक की उम्र के लड़कों और १२ वर्ष तक की उम्र की लड़कियों को, शिक्षा-प्राप्ति के लिए, ज़रूर ही मदरसे जाना पड़ेगा। माता पिता और अभिभावक ऐसा करने के लिए मजबूर हैं; उनका उज्र, माक़ूल होने पर भी, न सुना जायगा। कुछ भी हो, इतनी उम्र तक लड़कों और लड़कियों को शिक्षा अवश्य ही प्राप्त करनी पड़ती है। इन कारणों से बड़ौदा राज्य से निरक्षरता भाग रही है। इस राज्य की आबादी २०,२६,३२० है। उसमें से १८, ६१, १६८ के लिए शिक्षा-प्राप्ति के साधन सुलभ कर दिये गये हैं। कुछ ही मौज़े ऐसे रह गये हैं जहां मदरसा नहीं—फ़ी सदी एक से भी कम मौज़े बिना मदरसे के हैं। क्या ही अच्छा होता यदि हमारी गवर्नमेंट भी शिक्षा-प्राप्ति के साधनों की विशेष वृद्धि कर देती। अभी तो अपने यहां फ़ी सदी ७० मौज़े ऐसे होंगे जहां एक भी मदरसा, मकतब या पाठशाला नहीं।

## ४—ईसाइयों के स्कूलों में धर्म्म-शिक्षा।

माननीय वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री, गोखले महाशय के आसन पर बैठ कर काम कर रहे हैं। उन्होंने पेरी की पुस्तक बेनारेस में लिखी है। उसका मूल्य ३) रु० है। नाम है—A Non-Sectarian Claim for Indian Education in Indian Education Code. पुस्तक का विषय बड़े महत्त्व का है। भारतीय गवर्नमेंट किसी के धर्म्म में हस्तक्षेप का न पक्षपात करती है न उससे द्वेष ही करती है। वह तटस्थ रहती है। स्कूलों और कालेजों में भी वह इसी नीति का अवलम्बन करती है। वह धार्मिक बातों से दूर रहती है। पर पादरी लोगों ने इस देश में जो स्कूल और कालेज खोल रखे हैं उनमें ईसाई धर्म्म की शिक्षा अनिवार्य्य है। वहां बाइबल-क्लासों की बड़ी भरमार है। सभी छात्रों को ईसाई धर्म्म की पुस्तकों के सबक पढ़ने और सुनने पड़ते हैं। गवर्नमेंट इन संस्थाओं को रुपये-पैसे से मदद भी करती है। शास्त्रीजी ने इस पुस्तक में बड़ी दलील से दिखाया है कि ऐसी धर्म्म शिक्षा अनिवार्य्य न होनी चाहिए। गवर्नमेंट को नियम बना देना चाहिए कि जिसका जी चाहे अपने लड़कों को बाइबल-क्लासों में जाने दे, जिसका जी न चाहे न जाने दे। ईसाई धर्म्म पर विश्वास रखने वाला हो, सब को ज़बरदस्ती अपने धर्म्म के तत्त्व समझना अच्छा नहीं। बात बहुत ठीक है। शास्त्री जी ने इस सम्बन्ध में इस तक विलायत में और इस देश में भी जो कुछ किया और कहा गया है सब का सप्रमाण उल्लेख करके अपनी बात को खूब परिपुष्ट कर दिया है। आपकी सलाह मानने योग्य है।

## ५—स्कूल-लीविंग्-सर्टिफिकेट-परीक्षा।

इस नाम की एक परीक्षा है। इसकी सृष्टि कुछ ही वर्षों से हुई है। मैट्रिक्यूलेशन से इसमें कुछ अधिक और विशेष विषय पढ़ाये जाते हैं। गवर्नमेंट इस परीक्षा को प्रधानता देती है। इसकी इस साल की परीक्षा का फल गवर्नमेंट गैज़ट में निकले कुछ समय हुआ। इस साल यह परीक्षा १९१६ छात्रों ने दी। उनमें से ११४९ की दूसरी भाषा उर्दू और केवल ७२८ की दूसरी भाषा हिन्दी थी। हिन्दी छात्रों को संस्कृत या फ़ारसी में भी परीक्षा देनी पड़ती है। इन भाषाओं में परीक्षा देने वालों में से २६७ ने फ़ारसी और केवल ३६० ने संस्कृत में परीक्षा दी। फ़ारसी में परीक्षा देने वालों में से अनेक छात्र हिन्दू थे। पर संस्कृत में परीक्षा देने वाला शायद एक भी मुसलमान न होगा। "शायद"

हम इस लिए करते हैं, क्योंकि इसका विश्वसनीय लेखा कहीं हमारे देखने में नहीं आया। पर अनुमान यही कहता है कि मुसलमानों को संस्कृत से उतना भी प्रेम नहीं। हिन्दू अलबत्ते शुरू से फ़ारसी पढ़ते हैं। फ़ारसी ही क्यों वे उर्दू पढ़ना भी अधिक पसन्द करते हैं और कितने ही उर्दू को ही अपनी मातृ-भाषा बताते हैं। जिन छात्रों की दूसरी भाषा उर्दू थी उनकी संख्या-वृद्धि का कारण हिन्दुओं ही को समझना चाहिए। इस दशा में यह शोर मचाना और यह शिकायत करना कि उर्दू-फ़ारसी की शिक्षा कम हो रही है अथवा हिन्दी-प्रचार की चर्चा ने उसे हानि पहुँचाया है, बिलकुल निर्मूल मालूम होता है।

६—अमेरिका और इँगलेंड में प्रकाशित पुस्तकें।

संयुक्त राज्य, अमेरिका, और इँगलेंड में १९१४ ईसवी में जिस विषय की जितनी पुस्तकें प्रकाशित हुईं उसका लेखा नीचे दिया जाता है:—

संयुक्त-राज्य, अमेरिका

| | |
|---|---|
| १—सङ्गीत | ११२ |
| २—गृह-प्रबन्ध | १३९ |
| ३—फुटकर विषय | १४१ |
| ४—खेल कूद | १६४ |
| ५—व्यवसाय | २२६ |
| ६—शिक्षा | २६२ |
| ७—ललित कला | ३१० |
| ८—कृषि | ३७१ |
| ९—दर्शन | ४०८ |
| १०—क़ानून | ४०७ |
| ११—वैद्यक | ४४२ |
| १२—भूगोल और भ्रमण | ४४१ |
| १३—इतिहास | ४७१ |
| १४—जीवन-चरित | ६०४ |
| १५—बालोपयोगी | ६२२ |
| १६—मंजिनियरी | ६६६ |
| १७—विज्ञान | ७०० |
| १८—साधारण साहित्य | ७१२ |
| १९—कविता और नाटक | ९०२ |
| २०—धर्म्म और ईश्वर-विषयक | १०१२ |
| २१—समाज-शास्त्र और सम्पत्ति-शास्त्र | १०३८ |
| २२—उपन्यास | १०५३ |
| कुल | १२,०१० |

इँगलेंड

| | |
|---|---|
| १—सङ्गीत | ५५ |
| २—ग्रह-प्रबन्ध | ८९ |
| ३—फुटकर | १४९ |
| ४—व्यवसाय | १२५ |
| ५—दर्शन | १७९ |
| ६—तुलना-मूलक भाषा-शास्त्र | १८५ |
| ७—कृषि | १९८ |
| ८—ललित-कला | २०४ |
| ९—क़ानून | २७३ |
| १०—साधारण साहित्य | ३०० |
| ११—शिक्षा | ३७५ |
| १२—फ़ौजी और जहाज़ी | ४०२ |
| १३—विशेष साहित्य | ४३० |
| १४—वैद्यक | ४२४ |
| १५—जीवन-चरित | ४४२ |
| १६—इतिहास | ४२४ |
| १७—भूगोल | ६१३ |
| १८—बालोपयोगी | ६३१ |
| १९—कविता और नाटक | ६४२ |
| २०—कारीगरी | ६८७ |
| २१—समाज शास्त्र और सम्पत्ति शास्त्र | ६९१ |
| २२—विज्ञान | ८४० |
| २३—धर्म्म | ९६६ |
| २४—उपन्यास | २११२ |
| कुल | ११,२१० |

कुछ लोग हिन्दी में उपन्यासों की संख्या बढ़ी [illegible] पढ़ा रहे हैं। वे देखें कि और देशों की क्या दशा है इँगलेंड और अमेरिका में शिक्षा-प्रचार का यह हाल है [illegible] शायद ही कोई अन्तर वहाँ हो। परन्तु इन सुशिक्षित और सभ्य-सम्पन्न देशों में भी उपन्यासों और कथा-कहानी

"श्री गेरमल-शारदा-सदन"
बीकानेर

रूई जिन चीज़ों के योग से बनती है उनमें रूई मुख्य है। जिन देशों में पैदा होती है वे अधिकांश अंगरेज़ी-राज्य के अन्तर्गत हैं। संयुक्त-राज्य, अमेरिका ही, एक ऐसा देश है जहाँ अंगरेज़ी राज्य नहीं और जहां रूई अधिकता से होती है। जर्मनी और आस्ट्रिया में रूई नहीं; वहां कपास की खेती नहीं होती। युद्ध छिड़ने के पहले ही जर्मनी ने बहुत सी रूई एकत्र कर ली होगी। क्योंकि लड़ने के लिए वह पहले ही से तैयार हो रहा था। युद्ध छिड़ने के बाद भी, जहां तक उसे मिली होगी उसने रूई खरीदी होगी। क्योंकि युद्ध की सामग्री प्रस्तुत करने के लिए रूई सबसे अधिक ज़रूरी चीज़ है। युद्धारम्भ होने पर अंगरेज़ी राज्य से रूई का जर्मनी जाना बन्द हो गया। पर तटस्थ देशों की राह से—विशेष करके अमेरिका से—फिर भी बहुत रूई जर्मनी जाती रही। ब्रिटिश गवर्नमेंट यदि चाहती तो उसका भी जाना रोक देती—उसकी भी गिनती युद्ध वर्ज्य पदार्थों में वह कर लेती। पर अमेरिका की मित्रता के लिहाज़ से उसने ऐसा नहीं किया। रूई का चालान बन्द करने से अमेरिका की हानि थी। पर अब अमेरिका के संयुक्त राज्यों से ब्रिटिश गवर्नमेंट का सम्बन्धविच्छेद हो गया है और रूई को भी अब ब्रिटिश गवर्नमेंट ने कार्य वस्तु मान लिया है। नतीजा यह होगा कि जर्मनी को अब रूई न मिलेगी। शायद मिलेगी भी तो बहुत कम। इस दशा में, देढ़ दो हज़ार मील तक फैले हुए युद्ध क्षेत्र में, जर्मनी और आस्ट्रिया की पन्द्रह बीस हज़ार तोपें कैसे चलेंगी? अनुमान तो यही कहता है कि इस विपत्ति से जर्मनी के परित्राण की कम आशा है। और कोई देश होता तो पैसे भर भी रूई जर्मनी में न जाने देता। पर ब्रिटिश गवर्नमेंट की नीति निपुणता, सचाई और सहृदयता को देखकर कि उसने अपाय भर किसी तटस्थ देश को दुर्बल नहीं पहुँचने दी। १८६१ ईसवी में अमेरिका के संयुक्त राज्यों में गृह युद्ध वर्ज्य पदार्थ माना था। इस कारण ब्रिटिश गवर्नमेंट जब चाहती तब अमेरिका से रूई का चालान बन्द कर सकती थी। पर उसने ऐसा नहीं किया और अब तक ऐसा किये काम न चलता देखा तब इस तरह [illegible] कि अमेरिका को असन्तोष उत्पन्न करने के लिए अवसर हाथ रहा।

सुनते हैं, रूई न मिलने से जर्मनी के [illegible] पुराने से पुराने [illegible] मात्र है। इन चीज़ों से बनी हुई बारूद बहुत कमज़ोर होगी। आस्ट्रिया और जर्मनी की सारी तोपें रूई से बनी हुई के ही लिए हैं। किस तोप में कितनी बारूद भरी चाहिए और किसका गोला कितनी दूर तक निशाने सकता है, इन सब बातों का हिसाब रूई से बनी हुई के लिहाज से ही लगाया गया है और तदनुसार ही तैयार किये गये हैं। और कोई बारूद काम में लाने से सारा हिसाब रद्द हो जायगा। इसका इलाज यह है कि इस दूसरी तरह की बारूद के लिए तदनुकूल तोपें बनाई जायँ, अथवा वर्तमान तोपों की नलियों में आवश्यक परिवर्तन किया जाय। पर यह सब इतने समय में होना असम्भव सा है। इसीसे बड़े बड़े युद्ध-विद्या विशारदों की राय है कि रूई की कमी ही जर्मनी के का सबसे बड़ा कारण हुआ चाहती है। वर्तमान युद्ध तोपों ही का युद्ध है। जिसकी तोपें बन्द हुईं उसका निश्चित ही समझिए।

९—"गोरा गोरखा और सिक्ख"।

डाक्टर महेन्द्रलाल सरकार पश्चिमी रणक्षेत्र से लिखते हैं—

[illegible]

हमारे "रेजीमेंट" के बजाय यहां कोर्प "डिवीज़न" व्यवहार है। सेना [illegible] दो या तीन डिवीज़न करके लड़ते हैं। हमारे यहां कहा है कि दल में घर जाने [illegible] के व्यवहार [illegible] जाते हैं। यहां पर व्यवहार होने पर [illegible] [illegible] के ऊपर [illegible] जाता। यहां के [illegible] [illegible] के ऊपर [illegible] [illegible] [illegible]

एक सिपाही—ऐसे तीन सिपाहियों की एक टोली दिखाई गई है। तीसरा बंगाली उठा कर हुक्का पी रहा है। तीसरा एक हाथ अपने साथी सिपाही के कन्धे पर रक्खे हुए खड़ा है। ये दोनों उसी तरफ़ देख रहे हैं जिस तरफ़ बंगाली से तीसरा इशारा कर रहा है।

१०—सिपाहियों के लिए पढ़ने की सामग्री।

डाक्टर महेन्द्रलाल सर्वा अपनी एक और चिट्ठी में पश्चिमी रणक्षेत्र से लिखते हैं—

सिख महाशय, नमस्ते। ता० १६ अक्तू

जिस तरह अतिरिक्त स्थिति के लिए सेना तथार रहती है उसी तरह मन बहलाने के लिए भी इन्तज़ाम है। हमारे देश के सिपाहियों में जो पढ़ने-लिखने आदि का शौक़ है उसे भी पूरा करने की कोशिश की जाती है। परन्तु दुर्भाग्यवश सिपाही प्राय. वही साधारण किताबें पढ़ते हुए हैं। इनके लिए सादी किताबों काफ़ी दुरुस्त जाती हैं। इस ओर के सिपाहियों में बांटने के लिए पुस्तकों की आवश्यकता नहीं है। हर फ़ौज से बहुतों आता है और अपने यहां की ज़रूरतें ले जाता है। उसी के हाथ सिपाहियों में बांटने के लिए पत्र भी भेज दिये जाते हैं।

सिपाही सर्वदा ही बन्दूक लिये दुश्मन की ताक में नहीं खड़ा रहता। बहुधा तीसरे चौथे दिन उसका पहरा पड़ता है। खिचाव के तीन दिन वह बड़े आनन्द से काटता है और भूल जाता है कि वह लड़ाई पर आया हुआ है। तरह तरह के खेल-तमाशे होते रहते हैं। आज कल तो अच्छे पढ़े लिखे आदमी सिपाहियों में भरती होकर आये हुए हैं। अनेक ऐसे हैं जिनके नाम सर्वसाधारण में परम प्रसिद्ध हैं। वे यहां रहते भी हैं और अपने ख़ेलों को 'सैंडर' से 'पाव' करा कर बहुत सा रुपया भी कमाते हैं। आपने सुदिवाई कोक्रिल का नाम सुना होगा। वे ट्रेंचेज (खाइयों) में पूरे रहे हैं। एक सज्जन, जो एक मासी अख़बार से सम्बन्ध रखते हैं, ट्रेंचेज में अपना एक दैनिक पत्र निकालते हैं। यह कठिन होता है। उसे सिपाही बड़े चाव से पढ़ते, और ईसी से लोट पोट हो जाते हैं। उसके लेख सम्पादक ख़ुद लिखता है। चित्र भी वह अपने ही अङ्कित किये हुए निकालता है।

अब एक नई तजवीज़ यह हुई है कि कोई भी आदमी, जिसके पास किताब या "मेगज़ीन" फ़ालतू हो, उसे डाकख़ाने में दे आवे। डाकख़ाने वाले ऐसी किताबों और मेगज़ीनों को एकत्र करके केम्प लाइब्रेरी को भेज देंगे। फिर उस लाइब्रेरी से वे सब अस्पतालों और फ़ौजों में बांट दिये जायंगे। जिस तरह आपके भेजे हुए सब पत्र-पुस्तकें "फ्री" मिलते रहे उसी तरह इंगलैंड से भी फ्री आ जाते हैं। केम्प लाइब्रेरी का पता, ११ Horsford Road है। मैं समझता हूं कि यहां से देशी फ़ौजों में भी अख़बार आदि बांटे जा सकेंगे।

कृपापात्र

महेन्द्रलाल सर्वा

[ मा

हिन्दू धर्मशास्त्रों और सामयिक पुस्तकों के
भी यदि गवर्नमेंट की आज्ञा लेकर अपने पास रखें तो
सिपाहियों के लिए भेजा करें तो बहुत अच्छा

११—माहिष्मती नगरी।

श्रीयुत नन्दकिशोर त्रिवेदी एम० ए० लिखते हैं—

"गत सितम्बर मास की सरस्वती में 'सामयिक साहि
लेखों का समय निरूपण" नामक एक लेख छपा है। उसमें
पण्डित हरि सत्यनारायण त्रिवेदी महाशय ने यादव-संवत्
निरूपण बड़ी योग्यता से किया है। किन्तु मुझे एक
पर कुछ खटका है। आपने लिखा है कि—

"अब यह बात असन्दिग्ध रूपसे सिद्ध हो गया है कि एक
को राजधानी प्राचीन माहिष्मती नगरी थी।

परन्तु माहिष्मती नगरी ओंकारेश्वर नहीं। ओंकारेश्व
पश्चिम, कोई ४० मील के अन्तर पर, नर्मदा के किनारे
महेश्वर नामक एक प्राचीन क़स्बा है। यह होल्कर राज्य
की एक तहसील है। यही प्राचीन काल में, अर्थात्
यादव वंश के राज्य-समय में, माहिष्मती कहलाता था।
माहिष्मती का ही अपभ्रंश महेश्वर है।

आशा है, त्रिवेदीजी इस बात का निर्णय करने की
कृपा करेंगे कि माहिष्मती ओंकारेश्वर है या महेश्वर"।

१२—कुछ समाचारपत्रों का सौभाग्य।

उस दिन माननीय डाक्टर तेजबहादुर सपरू ने, प्रान्ति
कौंसिल में, गवर्नमेंट से पूछा—

"अपने या अपने अफ़सरों के लिए क्या गवर्नमें
इस प्रान्त के कोई अख़बार ख़रीदती है? यदि
ख़रीदती है तो कौन कौन! हर एक की कितनी
कापियां ख़रीदती है? और, हर एक को उसकी
कापियों की कितनी क़ीमत देती है"!

उत्तर में माननीय मिस्टर वर्न ने कहा—"हां, ख़रीदती
है"। अख़बारों के नाम, कापियों की संख्या और क़ीमत
का हिसाब, जैसा कि वर्न साहब ने बतलाया, नीचे दिया
जाता है:—

(१) ज़माना—१२० कापियां—क़ीमत ६००) रुपया
साल।

(२) फ़ौजी अख़बार—१२२५ कापियां—क़ीमत
१२२५) रुपया जुमाही।

(३) मुख़्बिरे आलम—१०० कापियां—क़ीमत ३७½) रुपया साज़।

(४) मशरिक़—१०० कापियां—क़ीमत ४००) रुपया साज़।

मालूम नहीं, फ़ौजी अख़बार उर्दू ही में निकलता है या हिन्दी में भी।

नं० (१), (३) और (४) तो उर्दू ही में निकलते हैं। इस सब को बधाई!

## १३—कालिदास और दिङ्नाग।

गत अगस्त महीने की सरस्वती में आचार्य दिङ्नाग शीर्षक एक लेख प्रकाशित हुआ है। उसमें डाक्टर सतीशचन्द्र विद्याभूषण ने कालिदास की उस उक्ति का उल्लेख किया है जिसमें दिङ्नाग के "स्थूलहस्त" की बात है। इसी उक्ति के आधार पर कालिदास के साथ दिङ्नागाचार्य्य का सम्बन्ध कल्पना किया जाता है। उक्त लेख में उनका समय ४०० ईसवी के लगभग अनुमान किया गया है, पर इस विद्वानों द्वारा वह ईसवी सन् के चतुर्थ शतक के दूसरे या तीसरे चरण में माना जाता है। अस्तु।

ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने पर कालिदास के साथ दिङ्नागाचार्य्य के सम्बन्ध की कल्पना में कुछ भी प्रमाण-मूलक आधार नहीं दिखाई देता। कालिदास की उक्त उक्ति के आधार पर ही इस कल्पना का प्रादुर्भाव हुआ है। कालिदास की यह उक्ति इस प्रकार है—

कक्षः खलु हस्ति पक्षतः किं तिरिदुपुङ्गवमीक्षसे न किम्।
दृङ्नागस्तरुचिन्नकेसरसटाभारं मृगेन्द्रायते॥
व्याख्यातारमहो विलङ्घ्य सहसा व्याकोपमुग्धा भवान्
हिङ्नागस्य कथं पुरः स्फुरति हन्तैषा वराकी कथा॥
(मेघदूत, श्लो० ११)

इस श्लोक में 'दिङ्नाग' और 'सारङ्गनिषूदन' इत्यादि पदों को मल्लिनाथ ने लिष्ट—अर्थात् दो अर्थ वाले—मान कर एक और भी अर्थ लिखा है। उसका आशय यह है—कालिदास मेघ से कहते हैं कि मेरे प्रतिद्वन्द्वी दिङ्नागाचार्य्य के शिष्य को, गिरिशिखर के सदृश हो, पकड़ कर उठा ले जाता है—इस प्रकार सिंह महाकवि कालिदास द्वारा अपमानसूचक देखा गया तू, मेरे महाव्याख्यान और विद्वान् वाचक रसिक कवि के स्थान से, हस्तिपक हाथ के कारण, ऊंचा सिर करके, बेधड़क आगे बढ़; और, मार्ग दिङ्नागाचार्य्य के स्थूलहस्तों के लेप का गर्व मिटाता हुआ विजयी होकर, प्रयाण कर।

बस, इस श्लोक में दिङ्नाग का नाम आ जाने से दिङ्नागाचार्य्य के प्रकट विद्वान् होने, तथा मल्लिनाथ की टीका में उनका उल्लेख होने से विद्वत्-समाज में कालिदास और दिङ्नागाचार्य्य के समकालीन होने की भ्रममूलक कल्पना की गई है। इस भ्रम की उत्पत्ति का प्रधान कारण मल्लिनाथ की टीका है, जिसमें दिङ्नाग के दो अर्थ किये गये हैं।

मेघदूत की सबसे प्राचीन टीका वल्लभदेव की है। वह सन् ईसवी के दशम शतक के पूर्वार्द्ध में लिखी गई है। उसमें इस श्लोक का प्रसङ्ग-सिद्ध एक ही अर्थ किया गया है। मल्लिनाथ की अपेक्षा वल्लभदेव बहुत प्राचीन हैं। वल्लभदेव के समय में कालिदास और दिङ्नागाचार्य्य के सम्बन्ध की यदि कोई कल्पना प्रचलित होती तो वल्लभदेव भी मल्लिनाथ ही की तरह उक्त श्लोक का लिष्ट अर्थ अवश्य ही लिखते। किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। इससे जान पड़ता है कि उनके समय में इस कल्पना की उत्पत्ति न हुई थी। मल्लिनाथ ने पूर्वोक्त श्लोक के श्लेषार्थ की कल्पना किस आधार पर की है, उसका पता भी लग सकता है। वह यह है कि कालिदास नाम के एक कवि ने नानार्थ शब्द रत्न नाम का एक ग्रन्थ लिखा है। उस कवि के मित्र निपुण नामक एक विद्वान् ने उसकी टीका सरल नाम की लिखी है। अनुमान से मालूम होता है कि उस ग्रन्थ की किसी प्रति को देख कर ही मल्लिनाथ ने उक्त श्लेषार्थ की कल्पना की है। किन्तु महामहोपाध्याय [illegible] पूर्वोक्त के एक सुधारक ने यह है कि मल्लिनाथ की श्लेषार्थ कल्पना [illegible] पूर्वोक्त नानार्थ शब्द रत्न के [illegible] और श्लोक का अर्थ [illegible]

(१) [illegible]

(२) [illegible]

[illegible]

यह निपुल नामक कवि महाराज भोजराज के समय में विद्यमान था। रघुवंशादि महाकाव्य-प्रणेता महाकवि कालिदास से यह भिन्न है। एतावता मल्लिनाथ की टीका के आधार पर दिङ्नागाचार्य को कालिदास का समकालीन मानना भ्रम-मूलक है।

मैंने मेघदूत का समश्लोकी भाषान्तर बोलचाल की हिन्दी में किया है। उसमें मैंने इस काव्य की टीका भी लिखी है और एक विस्तृत भूमिका भी जोड़ दी है। उसी भूमिका के आधार पर मैंने यह स्वल्प लेख लिखा है।

कन्हैयालाल पोद्दार।

## १४—बनारस का हिन्दू-विश्वविद्यालय।

बनारस के हिन्दू-विश्वविद्यालय से सम्बन्ध रखने वाला क़ानून, गत अक्टोबर की पहली तारीख़ को, "पास" हो गया। किस तारीख़ से यह जारी समझा जायगा, इसकी सूचना गैज़ट आव् इंडिया में कभी आगे प्रकाशित होगी। इस देश में इस तरह का यह पहला ही विश्वविद्यालय है। इसमें प्रायः सभी प्रकार की उपयोगिनी शिक्षा दी जा सकेगी। विज्ञान भी सिखाया जा सकेगा, धर्म्म भी सिखाया जा सकेगा, और कलायें भी सिखाई जा सकेंगी। और भी कई प्रकार की शिक्षा इसमें दी जा सकेगी। क़ानून की दृष्टि से धार्म्मिक शिक्षा अनिवार्य्य नहीं की गई। परन्तु विद्यालय के प्रबन्धकर्त्ताओं को क़ानून ने अधिकार दे दिया है कि यदि वे चाहें तो धर्म्म-शिक्षा भी दें। हिन्दू-धर्म्म ही की शिक्षा नहीं, जैन और सिख-धर्म्म की भी शिक्षा। अतएव धार्म्मिक शिक्षा के सम्बन्ध में यह विश्वविद्यालय मुसल्मानों और क्रिश्चियन लोगों के स्कूलों और कालेजों से अधिक उदारता का परिचय दे सकेगा। क्योंकि वे लोग अपने ही धर्म्म की शिक्षा देते हैं, पर यह विद्यालय जैनों और सिक्खों के धर्म्म की भी शिक्षा दे सकेगा। यह बहुत अच्छा हुआ जो क़ानून की रू से धर्म्म-शिक्षा अनिवार्य्य नहीं की गई और यह बात प्रबन्धकर्त्ताओं पर छोड़ दी गई। हिन्दू-धर्म्म बहुत व्यापक और विस्तृत है। उसकी अनेक शाखायें और प्रशाखायें हैं। उसके अन्तर्वर्ती मतों और सम्प्रदायों की गिनती नहीं। वह साम्प्रदायिक सङ्कीर्णताओं से भरा हुआ है। जिस 'कोर्ट' को धर्म्म-शिक्षा के प्रबन्ध का अधिकार दिया गया है उसे उसकी प्रणाली निश्चित करने में अनेक कठिनाइयां उपस्थित होंगी। साम्प्रदायिक भावों से रहित सार्वजनिक हिन्दू-धर्म्म की शिक्षा से ही इन कठिनाइयों से उद्धार हो सकेगा। ऐसा करने से आर्य्यसमाजी और ब्रह्मसमाजी भी शायद धर्म्म शिक्षा ग्रहण कर सकें। क्योंकि इन प्रचारों की धर्म्म-शिक्षा के विषय में क़ानून बिलकुल ही चुप है। इन झंझटों को देखते क़ानून बनाने वालों ने बड़ी दूरदर्शिता का काम किया जो यह नियम कर दिया है कि 'कोर्ट' चाहे तो धार्म्मिक शिक्षा अनिवार्य्य करदे और चाहे न करे। शैव, शाक्त, वैष्णव आदि आपस में झगड़ने लगें कि हम यह न सीखने देंगे हम यह न सीखने देंगे, तो उस झगड़े को दूर करने के लिए सब से अच्छा उपाय यही है कि उनसे कह दिया जाय कि न सीखिए। और सीखने के लिए बाध्य नहीं। आपकी इच्छा हो अपने लड़कों को धर्म्म-शिक्षा दिलाइए, न इच्छा हो न दिलाइए। हम ऐसी धर्म्म-शिक्षा का प्रबन्ध नहीं कर सकते जो सब सम्प्रदायों के अनुकूल हो।

कुछ लोगों की शिकायत है कि इस विश्वविद्यालय में देशी भाषाओं के द्वारा शिक्षा न दी जायगी। हम पूरे ऐक्ट पढ़ गये। हमें कहीं यह लिखा न मिला कि देशी भाषायें इसमें प्रवेश न पा सकेंगी। शिक्षा-विषयक सब अधिकार 'सिनेट' को दे दिया गया है। लिखा है—"The Senate × × × × shall have entire charge of the organization of instruction the courses of study and the examination and discipline of students." इस दशा में एक उचित सीमा के भीतर 'सिनेट' देश की भाषा या भाषाओं द्वारा शिक्षा अवश्य दे सकती है। देने न देने का उसे पूरा अधिकार है।

गवर्नमेंट ने कुछ अधिकार अपने हाथ में अवश्य रक्खे हैं। पर यदि काम अच्छी तरह होगा तो उन अधिकारों के रहते भी विश्वविद्यालय को कुछ भी हानि न पहुँचेगी—उनके प्रयोग की आवश्यकता ही न होगी। उन अधिकारों में काट-छांट के लिए हठ करने से विश्वविद्यालय का जन्म ही न होता जो किसी दृष्टि से अभीष्ट न था। इस दशा में जो कुछ मिला उसे ले लेना ही अच्छा हुआ—

सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्द्धं त्यजति पण्डित.

फ़रवरी १९१६ के आरम्भ में लार्ड हार्डिंग इस विश्वविद्यालय की नींव बनारस में डालेंगे।

# पुस्तक-परिचय।

१—उद्भ्रान्त प्रेम। इस नाम की पुस्तक के एक संस्करण का परिचय सरस्वती की गत संख्या में प्रकाशित हो चुका है। वह एक और ही संस्करण है। इसका आकार बड़ा, पृष्ठ-संख्या १२४ और मूल्य सात आने है। इसके लेखक पण्डित ईश्वरीप्रसाद शर्म्मा और प्रकाशक पण्डित दक्षिण मिश्र, काव्यतीर्थ, हैं। मिश्रजी जो सत्साहित्य-ग्रन्थ-माला निकाल रहे हैं उसका यह तीसरा ग्रन्थ है। आरम्भ में भूमिका है। उसमें इस गद्य-काव्य के गुण बहुत अच्छी तरह बताये गये हैं। बँगला में, चन्द्रशेखर-मुखोपाध्यायकृत इस पुस्तक के आज तक कितने ही संस्करण हो चुके हैं। आशा है इसके हिन्दी-अनुवाद का भी खूब आदर होगा। प्रबन्ध-कर्त्ता, सत्साहित्य-ग्रन्थमाला, बाँकीपुर को लिखने से यह पुस्तक मिलती है।

२—बौद्ध पर्व। यह पुस्तक मराठी भाषा में है। इसका दूसरा नाम है—बौद्ध-धर्म्मा चा साधन्त इतिहास। पुस्तक का आकार मँझोला, पृष्ठ-संख्या ३२२ और मूल्य सवा रुपया है। जिल्द बँधी हुई है। न्यायमूर्ति रानडे की सूचना के अनुसार श्रीयुत वासुदेव गोविन्द आपटे, बी० ए०, ने इसकी रचना की है। दस पन्द्रह वर्षों तक अनेक ग्रन्थों का मनन करके आपटे महाशय ने इसे लिखा है। बड़े ही काम की पुस्तक है। इसे पढ़ कर हमने बहुत ज्ञान-लाभ किया। बुद्ध और बौद्ध धर्म्म से सम्बन्ध रखनेवाली सभी ज्ञातव्य बातों का समावेश इसमें है। बौद्ध धर्म्म का इतिहास थोड़े में जानने की इच्छा रखने और मराठी पढ़ सकने वालों को इस पुस्तक का अवश्य अवलोकन करना चाहिए। पुस्तक हिन्दी में अनुवाद-योग्य है। भट आणि मण्डली, पूना, के लिखने से मिलती है।

३—योगवासिष्ठ महारामायण। आकार बड़ा, पृष्ठ-संख्या ८०० के ऊपर, जिल्द बँधी हुई, मूल्य साढ़े तीन रुपये; प्रणेता, पण्डित बदरीदास शर्म्मा, सहकारी मन्त्री, सनातनधर्म्म-प्रचारिणी सभा, जोधपुर, से प्राप्य। गत अगस्त की सरस्वती में योगवासिष्ठ के एक गुजराती संस्करण का परिचय प्रकाशित हो चुका है। उसमें इस पुस्तक के महत्त्व का संक्षिप्त उल्लेख भी है। प्रस्तुत पुस्तक हिन्दी-पद्य में है। पद्यों के छन्द अनेक प्रकार के हैं। उनमें दोहा, चौपाई, सोरठा और हरिगीतिका मुख्य हैं। इसमें मूल ग्रन्थ के प्रत्येक सर्ग का भावार्थ-मात्र हिन्दी-पद्य में लिखा गया है। नीचे, पाद-टीका में, क्लिष्ट शब्दों का अर्थ दे दिया गया है। थोड़े ही में इस महोपकारी ग्रन्थ का परिचय प्राप्त करने और वशिष्ठजी के वेदान्त-विषयक विचारों का आभास पाने की इच्छा रखनेवालों के लिए यह पुस्तक बड़े काम की है। पुस्तकस्थ पद्यों की भाषा पुराने ढंग की है।

४—पञ्चदशीसार। विद्यारण्य-स्वामी का रचा हुआ एक ग्रन्थ पञ्चदशी नाम का है। वह संस्कृत में है। विषय उसका वेदान्त है—उसमें वेदान्त का गहन विवेचन है। जय-पुर सेटल जेल के सुपरिंटेंडेंट, रायबहादुर सेठ नैनूरामजी खेतान की प्रेरणा से मुन्शी हरीरामजी भार्गव ने उसी का सार, प्रश्नोत्तर-रूप में, प्रकाशित किया है। यह ग्रन्थ-प्रकाशन हिन्दी में है। साहित्य-वेदान्ताचार्य्य पण्डित विहारीलाल दाधीच ने इसकी रचना की है। आरम्भ में इसके पन्द्रहों प्रकरणों का वर्ण्य-विषय थोड़े में लिखा गया है। अन्त में नक्शे में पञ्चदशियों का सार दिया गया है। बीच के [illegible] में पञ्चदशी का सारांश है। वेदान्त के गहन [illegible] को सरलता-पूर्वक समझाने की चेष्टा में ग्रन्थकार [illegible] हुए हैं। भाषा पुराने ढंग की है, [illegible] तरह समझ में आ जाता है। कहीं [illegible] कि लेखक ने जो कुछ लिखा है [illegible] उसके लेख से सूचित होता है कि [illegible] है। इस [illegible] पुस्तक लिखने

उपादेय हो गई है। वेदान्तियों ही को नहीं, औरों को भी इससे ज्ञान-प्राप्ति हो सकती है। पुस्तक का मूल्य आठ आने है। मिलने का पता—सुपरिंटेंडेंट जेल, जयपुर सिटी।

❋

१—दर्शन-सारसंग्रह। आकार मँझोला, पृष्ठ-संख्या ७१, मूल्य ८ आने; लेखक, पण्डित सदानन्द अवस्थी, संस्कृत-पाठशाला, अटेर, रियासत ग्वालियर, से प्राप्य। यह सर्वदर्शन-संग्रह के ढँग की पुस्तक है। इसमें जैन, बौद्ध और चार्वाक दर्शनों के सिवा न्याय, योग, सांख्य और मीमांसा दर्शनों का सार हिन्दी में लिखा गया है। यत्र-तत्र मूल ग्रन्थों के संस्कृत-वचन भी उद्धृत कर दिये गये हैं। थोड़े ही में पूर्वोक्त दर्शनों का स्थूल ज्ञान प्राप्त करने के लिए यह पुस्तक बहुत अच्छी है।

❋

६—हरिदास एंड कम्पनी की पुस्तकें। (१) चन्द्रशेखर—पृष्ठ-संख्या २८०; मूल्य १२ आने; अनुवादक, पण्डित पारसनाथ त्रिपाठी, काव्यतीर्थ। बँगला के नामी उपन्यास-लेखक बाबू बङ्किमचन्द्र चैटर्जी की पुस्तक का यह अनुवाद है। बङ्किम बाबू के इस उपन्यास को लोगों ने बहुत पसन्द किया है। हिन्दी प्रेमियों को भी इसके रस का आस्वादन करना चाहिए। (२) महात्मा बुद्ध—पृष्ठ-संख्या १२६, मूल्य ८ आने; लेखक, मुंशी सम्पत्तिराय भण्डारी। मराठी, गुजराती आदि कई अन्य भाषाओं की पुस्तकों और लेखों के आधार पर यह चरित लिखा गया है। पढ़ने लायक़ है। (३) विमला—पृष्ठ-संख्या २६; मूल्य ३ आने; अनुवादक नरोत्तम न्याय। चन्द्रशेखर चैटर्जी के बँगला-उपन्यास का यह अनुवाद है। इसके विषय में अनुवादक ने स्वयं ही लिखा है—"सच्चा पातिव्रत किसे कहते हैं, इस विषय को लेकर यह उपन्यास बड़ी योग्यतिनी भाषा में लिखा (गया) है"। (४) दीनबाला अर्थात् आदर्श वधू—पृष्ठ-संख्या १०३; मूल्य २ आने; अनुवादक, पाण्डेय मुरलीधर और पाण्डेय मुकुटधर शर्म्मा। यह उड़िया भाषा के एक उपन्यास का अनुवाद है। इसमें एक मुसलमान कुल-वधू के आदर्श चरित का चित्र है। सब पुस्तकें सुन्दर छपाई में अच्छे काग़ज़ पर छपी हैं। मिलने का पता—हरिदास एंड कम्पनी, २०१ हरिसन रोड, कलकत्ता।

७—अगेडाजी से प्राप्त पुस्तकें और कार्ड। (१) हिन्दी-मराठी शिक्षक, भाग पहला। पृष्ठ-सं ८०, मूल्य ४ आने। लेखक, गणेश बालकृष्ण सर्वटे। हि जानने वालों के लिए मराठी सीखने का यह अच्छा साधन। इसकी सहायता से व्याकरण के नित्योपयोगी नियम, वा रचना, पत्रलेखन आदि का ढँग सीख कर सीखनेवाला सा रण मराठी समझने योग्य ज्ञान सम्पादन कर सकता है (२) महाराष्ट्रनेता रामदास, भाग पहला। पृ संख्या ३६, मूल्य २½ आने, लेखक—गणेश। इसमें शिवा के गुरु साधुवर रामदास का जीवनचरित, थोड़े में, (३) सदाचार-प्रश्नोत्तरी। इस आध आने मूल्य की छोटी सी पुस्तक में सदाचार-सम्बन्धी २५ प्रश्न और उत्तर हैं। दृढ़ता क्या है? निर्भयता क्या है? न्यायप्रियत क्या है? मातृभाषा-प्रेम क्या है? ऐसे ही ऐसे प्रश्न और उनके उत्तर इसमें हैं। पुस्तक बालोपयोगी है। चिकने काग़ज़ पर छपी है। (४) सचित्राक्षर कार्ड। ये कार्ड गिनती में ४२ हैं। रङ्गीन हैं। हर कार्ड पर हिन्दी का एक एक वर्ण है। एक चित्र भी किसी पदार्थ या प्राणी का है, जिसका नामारम्भ उसी वर्ण से होता है। उसके नीचे पद्य में उसके नाम या गुण आदि है। यथा—अ—कार्ड पर अनन्नास का चित्र है। उसके नीचे छपा है—"अनन्नास फल मीठा जिस है"। उसके आगे आ-कार्ड पर आम का चित्र है। पद्य है—"आम चूस कर दूध पिया है"। इसी तरह कार्डों के पद्यों का तुक मिलता गया है। ये कार्ड छोटे बच्चों के बड़े काम के हैं। चिकने कार्डों का मूल्य ॥) और साधारण का ।)—मिलने का पता—बाबू नारायणप्रसाद अरोड़ा, बी०ए०, पटकापुर, कानपुर।

❋

८—स्वामी विवेकानन्द, भाग दूजा। भाषा गुजराती, आकार मँझोला; पृष्ठ-संख्या ४१०; जिल्द बँधी हुई; मूल्य १८ आने; प्रकाशक—सस्तु-साहित्यवर्धक कार्यालय, काजवादेवी रोड, बम्बई। उद्बोधन नामक मासिक पत्र में "स्वामी-शिष्य-संवाद" नाम से एक लेखमाला बहुत दिनों तक निकली थी। वहीं पीछे से बँगला में पुस्तकाकार प्रकाशित हुई। प्रस्तुत पुस्तक उसी का गुजराती अनुवाद है। अनुवादक हैं—भीमजी हरजीवन परीख। पुस्तक ४१ प्रश्नों

उपादेय हो गई है। वेदान्तियों ही को नहीं, औरों को भी इससे ज्ञान-प्राप्ति हो सकती है। पुस्तक का मूल्य आठ आने है। मिलने का पता—सुपरिंटेंडेंट जेल, जयपुर सिटी।

*

१—दर्शन-सारसंग्रह। आकार मँझोला, पृष्ठ-संख्या ७१, मूल्य ८ आने, लेखक, पण्डित सदानन्द अवस्थी, संस्कृत-पाठशाला, अटेर, रियासत ग्वालियर, से प्राप्य। यह सर्वदर्शन-संग्रह के ढँग की पुस्तक है। इसमें जैन, बौद्ध और चार्वाक दर्शनों के सिवा न्याय, योग, सांख्य और मीमांसा दर्शनों का सार हिन्दी में लिखा गया है। यत्र-तत्र मूल ग्रन्थों के संस्कृत-वचन भी उद्धृत कर दिये गये हैं। थोड़े ही में पूर्वोक्त दर्शनों का स्थूल ज्ञान प्राप्त करने के लिए यह पुस्तक बहुत अच्छी है।

*

६—हरिदास एंड कम्पनी की पुस्तकें। (१) चन्द्रशेखर—पृष्ठ-संख्या २८०; मूल्य १२ आने; अनुवादक, पण्डित पारसनाथ त्रिपाठी, काव्यतीर्थ। बँगला के नामी उपन्यास-लेखक बाबू बङ्किमचन्द्र चैटर्जी की पुस्तक का यह अनुवाद है। बङ्किम बाबू के इस उपन्यास को लोगों ने बहुत पसन्द किया है। हिन्दी प्रेमियों को भी इसके रस का आस्वादन करना चाहिए। (२) महात्मा बुद्ध—पृष्ठ-संख्या १२६; मूल्य ८ आने, लेखक, सुख सम्पत्तिराय भण्डारी। मराठी, गुजराती आदि कई अन्य भाषाओं की पुस्तकों और लेखों के आधार पर यह चरित लिखा गया है। पढ़ने लायक है। (३) विमला—पृष्ठ-संख्या २६; मूल्य आने; अनुवादक नरोत्तम व्यास। चन्द्रशेखर चैटर्जी के उपन्यास का यह अनुवाद है। इसके विषय में अनुने स्वयं ही लिखा है—"सच्चा पातिव्रत किसे कहते विषय को लेकर यह उपन्यास बड़ी ओजस्विनी भाषा (गया) है"। (४) शैलबाला अर्थात् आदर्श पृष्ठ संख्या १०३; मूल्य ५ आने; अनुवादक, पाण्डेय और पाण्डेय मुकुटधर शर्म्मा। यह उड़िया भाषा न्यास का अनुवाद है। इसमें एक सुशीला कुल-दर्श चरित का चित्र है। सब पुस्तकें सुन्दर टाइप गज़ पर छपी हैं। मिलने का पता—हरिदास २०१ हरिसन रोड, कलकत्ता।

७—अंगरेज़ी से प्राप्त पुस्तकें और का (१) हिन्दी-मराठी शिक्षक, भाग पहला। पृष्ठ-सं ८०, मूल्य ४ आने। लेखक, गणेश बालकृष्ण मराठे। हिन्दी जानने वालों के लिए मराठी सीखने का यह अच्छा साधन है। इसकी सहायता से व्याकरण के नित्योपयोगी नियम, वाक्य-रचना, पत्रलेखन आदि का ढँग सीख कर सीखनेवाला साधा-रण मराठी समझने योग्य ज्ञान सम्पादन कर सकता है। (२) महाराष्ट्रनेता रामदास, भाग पहला। पृष्ठ-संख्या ३६, मूल्य २½ आने, लेखक—गणेश। इसमें शिवाजी के गुरु साधुवर समर्थ रामदास का जीवनचरित, थोड़े में, है। (३) सदाचार-प्रश्नोत्तरी। इस आध आने मूल्य की छोटी सी पुस्तक में सदाचार-सम्बन्धी २५ प्रश्न और उनके उत्तर हैं। दृढ़ता क्या है? निर्भयता क्या है? न्यायप्रियता क्या है? मातृभाषा-प्रेम क्या है? ऐसे ही ऐसे प्रश्न और उनके उत्तर इसमें हैं। पुस्तक बालोपयोगी है। चिकने काग़ज़ पर छपी है। (४) सचित्राक्षर कार्ड। ये कार्ड गिनती में ४२ हैं। रङ्गीन हैं। हर कार्ड पर हिन्दी का एक एक वर्ण है। एक चित्र भी किसी पदार्थ या प्राणी का है, जिसका नामारम्भ उसी वर्ण से होता है। उसके नीचे पद्य में उसका नाम या गुण आदि है। यथा—अ—कार्ड पर अनन्नास का चित्र है। उसके नीचे छपा है—"अनन्नास फल मोल लिया है"। उसके आगे आ-कार्ड पर आम का चित्र है। पद्य है—"आम चूस कर दूध पिया है"। इसी तरह का के पद्यों का तुक मिलता गया है। ये कार्ड छोटे बच्चों के बड़े काम के हैं। चिकने कार्डों का मूल्य ॥) और साधा का ।)—मिलने का पता—बाबू नारायणप्रसाद अरोड़ा बी०ए०, पटकापुर, कानपुर।

*

८—स्वामी विवेकानन्द, भाग दूजो गुजराती; आकार मँझोला; पृष्ठ संख्या ४२०; हुई; मूल्य १८ आने; प्रकाशक—सस्तु-साहित्य लय, कालबादेवी रोड, बम्बई। उद्बोधन ना पत्र में "स्वामी-शिष्य-संवाद" नाम से एक ले दिनों तक निकली थी। वही पीछे से बँगला प्रकाशित हुई। प्रस्तुत पुस्तक उसी का गुजरा अनुवादक है—श्रीमती

में विभक्त है। प्रत्येक प्रसङ्ग के आदि में स्थान और समय का भी उल्लेख है। स्वामी विवेकानन्द और उनके शिष्यों में, समय समय पर, अध्यात्म विषयों पर जो कथोपकथन हुआ था वही इस पुस्तक में लिपिबद्ध हुआ है। पुस्तक बड़ी ही रोचक और शिक्षाप्रद है। गूढ़ से गूढ़ बातें ऐसे अच्छे ढँग से लिखी गई हैं कि बिना प्रयास के ही समझ में आ जाती हैं। जिन रहस्यों का जानना अध्यात्म विद्या के ज्ञाताओं ही के वश की बात थी वे भी, इस प्रकार, अल्पज्ञों के लिए सुलभ हो गये।

❊

९—सागार धर्म्मामृत। आकार मँझोला; पृष्ठ-संख्या ३१२; अच्छी जिल्द बँधी हुई; मूल्य डेढ़ रुपया; मिलने का पता—दिगम्बर जैन-आफ़िस, सूरत। आशाधर नाम के एक जैन विद्वान् हो गये हैं। उन्हें हुए सात आठ सौ वर्ष हुए। सागार धर्म्मामृत उन्हीं की रचना है। वह संस्कृत में है। प्रस्तुत पुस्तक उसीका पूर्वार्द्ध है। इसमें ऊपर मूल संस्कृत श्लोक और नीचे पण्डित जालाराम जैन कृत हिन्दी भावार्थ है। यह सदाचार-विषयक ग्रन्थ है। इसे जैन-धर्म्मावलम्बियों का धर्म्म शास्त्र कहना चाहिए। पुस्तकारम्भ में ग्रन्थकार आशाधर का उपलब्ध जीवन-चरित भी है, जो बड़े महत्व का है।

❊

१०—नेत्रदीपिका। पृष्ठ-संख्या ८८; मूल्य ८ आने। इसके लेखक पण्डित भूमिदत्त वैद्यराज हैं। प्रकाशक—पण्डित प्रभुदत्त वैद्यराज, महल्ला पीपल महादेव, देहली। ये किसी से मिलती हैं। टाइप बड़ा; छपाई और काग़ज़ साधारण है। इसमें नेत्र-रोगों के नाम, लक्षण और चिकित्सा-वर्णन है। पुस्तकान्त में जो ओषधियाँ लिखी गई हैं वे सुलभ हैं—सब कहीं मिल सकती हैं। आयुर्वेद-ग्रन्थों ही के आधार पर इसकी रचना हुई है। पुस्तक लाभदायक है।

❊

११—सितार-शिक्षक। लगभग डेढ़ सौ सङ्गीत इस पुस्तक का मूल्य ६ आने है। इसे आयुत युगुल कुमार मिश्र ने लिखा है। रामनेत्र, काशी, के पते पर आनरे से यह मिलता है। यों तो इसके गुण-दोष विशेषज्ञ ही कह सकते हैं, पर इसके आरम्भ ही से हमको यह भासता हुई है कि इसका कर्त्ता है। सितार बजाना सीखने वालों को इससे बहुत मदद मिल सकती है। कई चित्र भी इस पुस्तक में हैं। सितार के तार के नम्बरों के सिवा स्वरों के नाम भी इसमें हैं। जो गत जिस राग की है उसके पहले उसी राग के स्वर भी लिख दिये गये हैं। फिर प्रत्येक बोल और गत तान बता गई है। इस पुस्तक का यह प्रथम भाग है। लोगों ने इसे पसन्द किया तो शायद अगले भाग भी निकलें।

❊

१२—श्रीब्रह्मविलास। यह कोई ७० पृष्ठ की पुस्तक है। पद्य में है। मोटे टाइप में छपी है। इसमें श्री अनानन्द फ़क़ीर के वचन—ब्रह्मज्ञान की बातें—हैं। ज्ञानी साधुओं की बानी जैसी होती है वैसी ही यह भी है। परमार्थ प्रेमियों के देखने योग्य है। डाक आने का टिकट भेजने पर, राय बहादुर बाबू दलजीतसिंहजी सानका, असिस्टंट सर्जन, जयपुर, से मुफ़्त मिलती है।

❊

१३—देश की दशा। यह तीस चालीस सफ़े की छोटी सी पुस्तक है। भीतर तो मूल्य २ पैसा लिखा है, पर बाहरी बेठन पर ६ पैसे। विश्वविद्या प्रचारक महामण्डल, बन्दीमी, से यह मिल सकती है। इसमें भारत की अवनति के कुछ कारणों का उल्लेख करके व्यापार, व्यवसाय, कला-कौशल और विज्ञान आदि की वृद्धि करने का अनुरोध किया गया है, जो बहुत ठीक है।

❊

१४—आदर्श विद्यार्थी। आकार छोटा; पृष्ठ-संख्या ६०; मूल्य ४ आने; लेखक, पण्डित शिवदत्त द्विवेदी। भूमिका-लेखक पण्डित अम्बिकेश के कथनानुसार—"इसमें एक विद्यार्थी के चरित द्वारा यह बात दिखाई गई है कि [illegible] जाती है कि गृहस्थ स्थिति की अभिलाषा करनेवाली की आवश्यकता को [illegible] सकती। आवश्यकता है [illegible] और दृढ़ता की"। मिलने का पता—[illegible] द्विवेदी, इलाहाबाद, प्रयाग।

❊

[illegible] पुस्तकों के [illegible] है। [illegible] गई हैं। [illegible]—

(१) [illegible]—[illegible], [illegible]

में विभक्त है। प्रत्येक प्रसङ्ग के आदि में स्थान और समय का भी उल्लेख है। स्वामी विवेकानन्द और उनके शिष्यों में, समय समय पर, अध्यात्म विषयों पर जो कथोपकथन हुआ था वही इस पुस्तक में लिपिबद्ध हुआ है। पुस्तक बड़ी ही रोचक और शिक्षापूर्ण है। गूढ़ से गूढ़ बातें ऐसे अच्छे ढंग से लिखी गई हैं कि बिना प्रयास के ही समझ में आ जाती हैं। जिन रहस्यों का जानना अध्यात्म विद्या के ज्ञाताओं ही के लिए की बात थी वे भी, इस प्रकार, अल्पज्ञों के लिए सुगम हो गये।

❋

९—सागार धर्म्मामृत। आकार मँझोला; पृष्ठ-संख्या ११२; अच्छी जिल्द बँधी हुई; मूल्य डेढ़ रुपया; मिलने का पता—दिगम्बर जैन-आफ़िस, सूरत। आशाधर नाम के एक जैन विद्वान् हो गये हैं। उन्हें हुए सात आठ सौ वर्ष हुए। सागार धर्म्मामृत उन्हीं की रचना है। वह संस्कृत में है। प्रस्तुत पुस्तक उसीका पूर्वार्द्ध है। इसमें ऊपर मूल संस्कृत श्लोक और नीचे पण्डित लालाराम जैन कृत हिन्दी-टीकायें हैं। यह सदाचार-विषयक ग्रन्थ है। इसे जैन गृहस्थों के लिए धर्म्म शास्त्र कहना चाहिए। पुस्तकारम्भ में ग्रन्थकार आशाधर का उपलब्ध जीवन-चरित भी है, जो बड़े महत्त्व का है।

❋

१०—नेत्रदीपिका। पृष्ठ-संख्या ८८; मूल्य ८ आने। इसके लेखक पण्डित मूलिहदत्त वैद्यराज हैं। प्रकाशक—पण्डित मुकुन्द वैद्यराज, महल्ला पीपल महादेव, देहली। किस से मिलती है। टाइप बड़ा; छपाई और काग़ज़ अच्छा है। इसमें नेत्र-रोगों के नाम, लक्षण और चिकित्सा-बतलाई है। पुस्तकान्त में जो औषधियाँ लिखी गई हैं वे सुलभ हैं—सब कहीं मिल सकती हैं। आयुर्वेद-ग्रन्थों ही के आधार पर इसकी रचना हुई है। पुस्तक लाभदायक है।

❋

११—सितार-शिक्षक। लगभग डेढ़ सौ सफ़े की मूल्य ६ आने है। इसे आयुत युगलकिशोर ने है। रामगंज, कानपुर, के पते पर आपसे यह मिलती है। यों तो इसके गुण-दोष कह सकते हैं, पर इसका आरम्भिक भाग यह धारणा हुई है कि इसका क्रम अच्छा है। सितार बजाना सीखने वालों को इससे बहुत मदद सकती है। कई चित्र भी इस पुस्तक में हैं। सितार के के नम्बरों के सिवा स्वरों के नाम भी इसमें हैं। जो जिस राग की है उसके पहले उसी राग के स्वर भी दिये गये हैं। फिर प्रत्येक बोल और गत तान गई है। इस पुस्तक का यह प्रथम भाग है। लोगों ने इसे पसन्द किया तो शायद अगले भाग भी निकलें।

❋

१२—श्रीब्रह्मविलास। यह कोई ७० पृष्ठ की पुस्तक है। पद्य में है। मोटे टाइप में छपी है। इसमें श्री धनानन्द फ़क़ीर के वचन—ब्रह्मज्ञान की बातें—हैं। ज्ञानी साधुओं की बानी जैसी होती है वैसी ही यह भी है। परमार्थ प्रेमियों के देखने योग्य है। आध आने का टिकट भेजने पर, राय बहादुर ठाकुर दलजरसिंहजी खानका, असिस्टेंट सर्जन, जयपुर, से मुफ़्त मिलती है।

❋

१३—देश की दशा। यह तीस पाजीस सफ़े की छोटी सी पुस्तक है। भीतर तो मूल्य २ पैसा लिखा है, पर बाहरी वेटन पर १ पैसे। विश्वविद्या प्रचारक महामण्डल, चन्दौसी, से यह मिल सकती है। इसमें भारत की अवनति के कुछ कारणों का उल्लेख करके व्यापार, व्यवसाय, कला-कौशल और विज्ञान आदि की वृद्धि करने का सदुपदेश दिया गया है, जो बहुत ठीक है।

❋

१४—आदर्श विद्यार्थी। आकार पेजा, पृष्ठ-संख्या १४; मूल्य १ आने; लेखक, पण्डित सिद्धनाथ द्विवेदी। भूमिका-लेखक पण्डित चन्द्रशेखर के कथनानुसार—"इसमें एक विद्यार्थी के चरित द्वारा यह बात दिखाने की चेष्टा की गई है कि गृहस्थ स्थिति की प्रतिकूलता मनस्वियों को महत्त्वाकांक्षा की ओर नहीं सकती। आवश्यकता है केवल अध्यवसाय और दृढ़ता की"। मिलने का पता—त्रिवेणी और द्विवेदी, दारागंज, प्रयाग।

❋

नीचे जिन पुस्तकों के नाम दिये गये हैं वे भी पहुँच गई हैं। लेकर कुछ समालोचना की जायगी—

(१) उर्दू-उदाहरण—लेखक, बाबू [illegible]

(२) हिन्दी भक्तामर और प्राणप्रिय काव्य—लेखक, बाबू पन्नालाल, बिसाना, हाथरस।

(३) क्या ईश्वर जगत्कर्त्ता है?—लेखक, बाबू दयाचन्द जैन, बी०ए०, गढ़ी अब्दुल्लाख़ां।

(४) महेन्द्रकुमार नाटक—सम्पादक, बाबू अर्जुनलाल सेठी, बी०ए०।

(५) सार्वजनिक हित, भाग छठा—लेखक, मुनि माणिक।

(६) सामयिक देववन्दन, मूल सार्थ हिन्दी—अनुवादक, पन्नालाल जैन, देहली।

(७) मुक्ति-मार्ग—संग्रहकार, पं० नन्दकुमार मिश्र, मैकी, गया।

(८) हिन्दी की कुंजी—लेखक, पण्डित हीरालाल झा, मधीपुरा।

(९) सन्तवचनामृतसार
(१०) गयामाहात्म्यसार (भाषा)
(११) पुनः पुना-गङ्गा-माहात्म्य
(१२) ,, ,, (भाषा)
} प्रकाशक, बाबू पद्मसिंह, जमोर, गया।

(१३) प्रसूनाञ्जलि—लेखक, सीताराम जे० शर्म्मा, अहमदाबाद।

(१४) महात्मा टालस्टाय के लेख—प्रकाशक, ग्रन्थ-प्रकाशक-समिति, काशी।

(१५) शिमला-यात्रा—लेखक, कुँवर रघुवीरसिंह, सूरजपुर।

(१६) सङ्गीतबिन्दु—लेखक, श्रीबिन्दु, गोरखपुर।

(१७) उपदेशस्तवनसंग्रह—संग्रहकर्त्ता, धर्म्मचन्द जैन, आगरा।

(१८) Jainism not an Atheism—
By Herbert Warren, London.

(१९) स्वामी मोतीरामजी का जीवन-चरित्र—लेखक, जैन पण्डित ज्ञानचन्द्रजी।

(२०) के कैऽशाः संस्कृत-साहित्ये पूर्तिसापेक्षाः—लेखक, पण्डित शालग्राम शास्त्री, हरद्वार।

---

## चित्र-परिचय।

### (१)
### राजा भिक्षा।

इस संख्या का पहला रङ्गीन चित्र राजा-भिक्षा है। इसका विषय संक्षिप्त है। अतः इस पर कुछ कहने की आवश्यकता नहीं। शिवाजी की नम्र-दृष्टि और मुखचर्य्या उनकी शालीनता और कुल-मर्य्यादा की सूचक है और राजा चेहरे का भाव उसके कपट का द्योतक है।

### (२)
### कार्तिक

इस संख्या के दूसरे रङ्गीन चित्र कार्तिक की कथा उसीके नीचे प्रकाशित कविवर केशवदास के छप्पय-छन्द से जान लीजिए।

### (३)
### सिद्धार्थ का गृह-त्याग।

राजकुमार सिद्धार्थ के हृदय में जब तीव्र विराग का उदय हुआ तब उन्होंने सांसारिक सुखों को तुच्छ समझ कर गृह-त्याग करने का निश्चय किया। पूर्णिमा का पूर्ण-चन्द्र आकाश में हँस रहा था। उसकी कौमुदी से राज-प्र सुधा-सिञ्चित सा बन रहा था। सिद्धार्थ की पत्नी शिशु को हृदय से लगाये सुख-पूर्वक सो रही थी। सखियाँ भी निद्रा में निमग्न थीं। ऐसे ही समय में सिद्धा अपने नवजात पुत्र और पत्नी को एक बार देख कर निकल जाना चाहा। वे पत्नी के पलँग के पास खड़े हो सोचने लगे—हा, देखो तो यह संसार कैसा दुःख-मू है! पर अविवेक से अन्धे हुए मनुष्य इसी दुःख-जाल सुख समझ कर उसमें फँसे पड़े रहते हैं! इसी दृश्य को क कस्से के चित्रकार बाबू रामेश्वरप्रसाद वर्म्मा ने एक बड़े भाव-पूर्ण चित्र में दिखाया है। पाठक उसे अन्यत्र इसी संख्या में देखेंगे।

### (४)
### गोवर्धन का मेला।

व्रजमण्डल में गोवर्धन एक प्रसिद्ध स्थान है। वहाँ हर साल आषाढ़-पूर्णिमा को एक मेला होता है। लाखों आदमी जमा होते हैं। गोवर्धन-पर्वत (गिरिराज) की प्रदक्षिणा होती है। गत मेले के दृश्य का एक चित्र इसी संख्या में अन्यत्र प्रकाशित है। यह चित्र मानसी गङ्गा के तट का है। सामने से चित्र की दाहिनी ओर मेले का कुछ अंश साफ़ दिखाई दे रहा है। इस मेले में गज और ग्राह की लड़ाई भी दिखाई जाती है। चित्र-गत मानसी गङ्गा में वह दृश्य भी पाठक देखेंगे। एक तरफ़ से ग्राह आ रहा है। दूसरी तरफ़ सूँड़ उठाये गज उससे भिड़ने को तैयार है। यह चित्र हमें रियासत चँदवारा के कुँवर नरेन्द्रसिंहजी की कृपा से प्राप्त हुआ है।

Printed and published by Ajudhia Krishna Basu, at the Indian Press, Allahabad.

श्रीयुत महाराजा दरभङ्गा-नरेश, महाराजा अलीपुर, महाराजा मनीपुर आदि

बड़े बड़े राजाओं से प्रशंसा प्राप्त

अलीगढ़ शहर के प्रसिद्ध खानदानी वैद्य, गवर्नमेंन्ट संस्कृत-परीक्षा पास

# पं० रामचन्द्र वैद्यशास्त्री की

बालकों को हर चौथे व छठे दिन घुटी पिलाने की हिन्दुस्तान में बहुत पुरानी और बड़ी गुणकारी रिवाज है, किन्तु वैद्यकशास्त्र की आज्ञानुसार वैद्य के हाथ की बनी विश्वास-योग्य घुटी न मिलने के कारण सज्जनों को बड़ा कष्ट था क्योंकि वे पसारी और अत्तारों की मन-गढ़न्त बाज़ारू घुटी पिलाने से तो न पिलाना ही अच्छा समझ बालक को पुष्ट और नीरोग रखने में असमर्थ थे, इसलिए बड़े विचार और परिश्रम से भारतवर्ष में उत्पन्न हुए बालकों की प्रकृति के अनुकूल स्वदेशी ओषधियों द्वारा यह "बाल-रक्षा घुटी" तैयार की है। घुटी स्वादिष्ट और मीठी बनी बनाई तैयार है सिर्फ शीशी में से निकाल कर पिला देना आपका काम है। हज़ारों बार परीक्षा कर यह निश्चय हो चुका है कि "बालरक्षा घुटी" के पिलाने से बालक नीरोग मोटे ताज़े बने रहते हैं, उनका शरीर मज़बूती के साथ ख़ूब बढ़ता है, यकायक रोग नहीं घेर सकते। "बाल-रक्षा घुटी" के पिलाने से अजीर्ण, ज्वर, दस्त, पेंचिश, आँवलोहू, पेट का दर्द, अफ़रा, दस्त साफ़ न होना, पाख़ाने में कीड़े आना, पेट बढ़कर शरीर छूटना, सर्दी, कफ़, खांसी, पसली चलना, दमका, बार बार दूध पटकना, चौंक चौंक कर रोना, आदि बालरोग शान्ति या नाश होते हैं। दांत निकलते समय उत्पन्न होने वाले सब उपद्रव दूर होकर दांत सहज में निकल आते हैं। एक बार अवश्य परीक्षा कीजिये। आप प्यारे बालक का मुख देख कर निस्सन्देह प्रसन्न होंगे।

३२ ख़ुराक की शीशी का मूल्य ॥) मात्र डाकमहसूल और पैकिंग।)
पेजेन्टों की आवश्यकता है।

पता—पं० रामचन्द्र वैद्य शास्त्री—सुधावर्षक औषधालय,

अ० अलीगढ़ (यू०

हर जगह एजन्टों की ज़रूरत है

# मनमोहिनी वटिका

मनमोहनी वटिका का सेवन जो नर करेगा।
नामर्द मर्द बन कर नहीं काम से डरेगा॥
जो दिल निरास होकर बैठे थे हाथ मल कर।
खाने से एक गोली जीवन उमङ्ग भरेगा॥

या

दमी फैसा ही निर्बीर्य व सुस्त-कम-
ज़ोर क्यों न हो एक गोली दूध के
साथ खाने से आधे घन्टे बाद यह
ताक़त पैदा होती है कि युवक
जवानों को मात कर दें। अगर आपको आगे जवानी
की बहार देखना मंजूर है तो इसे ज़रूर मंगाइये।
मनमोहनी वटिका चन्द रोज़ इस्तेमाल करने से बदन
को फ़ोलाद बना देती है। फ़ीमत फ़ी बक्स १॥)
तीन बक्स एक साथ ख़रीदने से ४)

न

यनामृत सुरमा नेत्रों की हर प्रकार की
बीमारी के लिए अमृत के तुल्य है—
एक शीशी ॥)

व्यौ

पारखाकर—इसकी प्रसिद्ध २ अख़-
बारों ने प्रशंसा की है, जिसमें त्रिका-
लदर्शी अंगूठी, ताम्बूलविहार, कपूर
की माला, गन्धक का गिलास, कपूर का कटोरा
पारे का गिलास, विलायती खिजाब, चाँदी सोने का
तुलम्मा, साबुन, दाद की दवा, रबर की मोहरें,
आदि बनाने की सैकड़ों तरकीबें लिखी हैं, सच्चा
हुनर हासिल करना है तो सिर्फ़ ॥) का टिकट भेज
कर मँगा लीजिए। जल्दी कीजिए, थोड़ी जिल्दें रह
गई हैं।

के

श-कलप इस खिजाब के लगाने से
पाँच मिनट में बाल घोर काले भौंरे के
मानिन्द और मुलायम हो जाते हैं, जो
बाल एक दफ़े काले हो जायंगे वह
फिर कभी सफ़ेद नहीं होते—बराबर इस्तेमाल
करने के लायक उमदा चीज़ है। क़ीमत १॥) रु०

****राधाविहार देवर पीतल, यह अपने ग
**श्री** का चित्र गुलाबदार अनोखा ही है
***** है—दिल पीर दिमाग़ को ताक़त देत
इस नये फ़ैशन के चेहरे की ख़ूबसूरती बढ़ा
है—इसे ज़रूर मँगाकर इस्तेमाल कीजिये—सच्ची
का परिचय तो आपको लेना ही है। मूल्य एक शीशी
का ।) रु० तीन शीशी लेने से पारसल ख़र्चा माफ़

अ

मिसंदीपन चूर्ण, उदर की अनेक
धीमारियों को दूर करके भूख बढ़ाते
इस आदमी को हट्टा कट्टा पट्ठा बना
है—फ़ायदा न करे तो दाम वापस—
एक शीशी का मूल्य ॥) आना।

द

दायानल, हर तरह के दाद के दाद
को बग़ैर तकलीफ़ के नगादा का
भगाने की गारंटी रखता है एक शीशी २।
।) तीन शीशी लेने से पार्सल ख़र्च माफ़।

अ

मृत लहर, इसका परिचय देने की कोई
ज़रूरत नहीं है। क्योंकि यह दवा
सैकड़ों बीमारियों में अपना तत्काल
गुण दिखाती हुई हर जगह आदर
पा रही है और हमने भी हर एक को फ़ायदा पहुं
के लिए इसकी रियायती क़ीमत सिर्फ़ तीन मा
वास्ते ॥) आना कर दी है।

ति

लस्मी मिठाई, एक शीशी १४ सेर दू
का काम देती है, चाह, शरबत, दूध,
दही, जो चाहे जिसमें डालकर मिठाई
का काम लेकर घरखरच में बड़
किफायत कीजिए। एक शीशी का दाम ॥) आन
बारह का ५) रु०

जे

बी सफ़री हुक्के, पानी भर कर जेब में
डाल लीजिये, पानी की बूँद भी न
गिरेगी, नय और नैचा इसी के सा
हैं पीने के समय आवाज़ बड़ी कली के माफ़िक देते
हैं घर और मुसाफिरी में हर जगह काम लीजिए। बड़े
उमदा ख़ूबसूरत बने हुए हैं। पीतल का दाम १॥
जरमन सिलवर का दाम २) २॥) ३)

पता—रमेशचन्द्र एन्ड को०
(बी शाँच) स्वामीघाट, मथुरा।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## मानस—कोश ।

अर्थात्

"रामचरितमानस" के कठिन कठिन शब्दों का सरल अर्थ ।

इसने काशी की नागरी-प्रचारिणी सभा के द्वारा मुद्रित करा कर यह "मानसकोश" नामक पुस्तक प्रकाशित की है। इस "मानसकोश" को सामने रख कर रामायण के अर्थ समझने में हिन्दीप्रेमियों को बड़ी सुगमता होगी। इसमें उत्तमता यह है कि केवल एक शब्द के एक एक दो। दो नहीं, कई कई पर्यायवाचक शब्द देकर उनका अर्थ समझाया गया है। इसमें अकारादि क्रम से ६०४५ शब्द हैं। मूल्य केवल ।) रुपया रक्खा गया है, जो पुस्तक की लागत और उपयोगिता के सामने कुछ भी नहीं है। अवश्य लीजिए।

## *सचित्र हिन्दी महाभारत*

( मूल आख्यान )

से अधिक पृष्ठ बड़ी सांची १९ चित्र

एक-हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी।

महाभारत ही आर्यों का प्रधान ग्रन्थ है, यही आर्यों का सच्चा इतिहास है और यही सनातन धर्म की जड़ है। इसी के अध्ययन से हिन्दुओं में धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष पुरुषार्थ और समयानुसार काम करने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो उठती है। यदि इस बूढ़े भारतवर्ष को सहस्र वर्ष पहले का सच्चा इतिहास जानना हो, यदि भारतवर्ष में स्त्रियों को सुशिक्षित करके उन्हें धर्म का पुनरुद्धार करना अभीष्ट हो, यदि आचारी भीष्मपितामह के पावन चरित्र को और ब्रह्मचर्य रक्षा का महत्त्व देखना हो, यदि श्रीकृष्णचन्द्र के उपदेशों से अपने आत्मा को उन्नत और बलिष्ठ बनाना हो, तो इस "महाभारत" को मंगा कर अवश्य पढ़िए। इसकी भाषा सरल, बड़ी ओजस्विनी और बड़ी मनोहारिणी है। प्रत्येक पढ़ी लिखी स्त्री अथवा कन्या को यह महाभारत मँगा कर अवश्य पढ़ना और उससे लाभ उठाना चाहिए। मूल्य केवल ३) रुपये।

[ कविरत्न श्रीअयोध्यासिंहजी उपाध्याय ]

## दयानन्ददिग्विजय ।

महाकाव्य

हिन्दी-अनुवादसहित

जिसके देखने के लिए सहस्रों आर्य वर्षों से उत्कण्ठित हो रहे थे, जिसके रसास्वादन के लिए सैकड़ों संस्कृतज्ञ विद्वान् लालायित हो रहे थे, जिसकी सरल, मधुर और रसीली कविता के लिए सहस्रों आर्यों की आंखें चंचल हो रही थीं वही महाकाव्य छप कर तैयार हो गया। यह ग्रन्थ आर्य-समाज के लिए बड़े गौरव की चीज़ है। इसे आर्यों का भूषण कहें तो अत्युक्ति न होगी। स्वामीजी द्वारा ग्रन्थों को छोड़ कर आज तक आर्य-समाज में जितने छोटे बड़े ग्रन्थ बने हैं उन सबमें इसका आसन ऊँचा है। प्रत्येक वैदिकधर्मानुरागी आर्य को यह ग्रन्थ लेकर अपने घर को अवश्य पवित्र करना चाहिए। यह महाकाव्य २१ सर्गों में समाप्त हुआ है। मूल ग्रन्थ के केवल आठ सौ सोलो के ६१० पृष्ठ हैं। इसके अतिरिक्त ५७ पृष्ठों में भूमिका, ग्रन्थकार का परिचय, विषयानुक्रमणिका, आवश्यक टिप्पण, शुद्धिपत्र, ग्रन्थालय-प्रशस्ति और सहायक ग्रन्थों आदि अनेक विषयों का समावेश किया गया है।

इतने सुन्दर जिल्द बंधा हुआ इतना भारी ग्रन्थ का मूल्य आजकल अवश्य के लुभाने के लिए केवल ४) चार रुपये ही रक्खा है। अब मंगाइए।

## [illegible]

[illegible] लिखा हुआ [illegible] पुस्तक अवश्य पढ़ना चाहिए। इसके पढ़ने से [illegible] अवश्य कर सकता है। मूल्य ।)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें

## कविता-कलाप

( सम्पादक—पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

इस पुस्तक में सरस्वती से आरम्भ करके ४८ प्रकार की सचित्र कविताओं का संग्रह किया गया है। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि राय देवीप्रसाद पी० ए, बी० एल, पण्डित नाथूराम शङ्कर शर्म्मा, पण्डित कामताप्रसाद गुरु, बाबू मैथिलीशरण गुप्त और पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदीजी की मौजूदगी लेखनी से लिखी गई कविताओं का यह अपूर्व संग्रह प्रत्येक हिन्दी-भाषाभाषी को मँगाकर पढ़ना चाहिए। इसमें कई चित्र रंगीन भी हैं। ऐसी उत्तम सचित्र पुस्तक का मूल्य केवल २॥) दो रुपये।

( सचित्र )

## हिन्दी-कोविदरत्नमाला।

दो भाग

( बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए० द्वारा सम्पादित )

पहले भाग में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र और महर्षि दयानन्द सरस्वती से लेकर वर्तमान काल तक के हिन्दी के नामी नामी चालीस लेखकों और सहायकों के सचित्र संक्षिप्त जीवन-चरित दिये गये हैं। दूसरे भाग में पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी तथा पण्डित माधवराव सप्रे, बी० ए० आदि विद्वानों के तथा कई विदुषी स्त्रियों के जीवनचरित छापे गये हैं। हिन्दी में ये पुस्तकें अपने ढँग की अकेली ही हैं। स्कूलों में ऊँची कक्षाओं में पढ़नेवाले छात्रों को ये पुस्तकें पारितोषिक में देने योग्य हैं। प्रत्येक हिन्दी-भाषा-भाषी को यह 'रत्नमाला' मँगाकर अपना कण्ठ अवश्य सुभूषित करना चाहिए। प्रत्येक भाग में ४० हाफ़टोन चित्र दिये गये हैं। मूल्य प्रत्येक भाग का १॥) डेढ़ रुपया, एक साथ दोनों भागों का मूल्य २) तीन रुपये।

स्त्रीशिक्षा का एक सचित्र, नया और अनूठा ग्रन्थ

## सीता-चरित।

अभी तक ऐसी पुस्तक की बड़ी आवश्यकता थी जिसमें आरम्भ से अन्त तक मुख्यतया सीता जी की अनुकरणीय जीवन-घटनाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन हो, जिसमें सीताजी के जीवन की प्रत्येक घटना पर स्त्रियों के लिए लाभदायक उपदेश दिया गया हो। इसी अभाव को दूर करने के लिए हमने "सीता-चरित" नामक पुस्तक प्रकाशित की है। इसमें सीताजी की जीवनी तो विस्तारपूर्वक लिखी ही गई है, किन्तु साथ ही उनकी जीवन-घटनाओं का महत्त्व भी विस्तार के साथ दिखाया गया है। यह पुस्तक अपने ढंग की निराली है। भारतवर्ष की प्रत्येक नारी को यह पुस्तक अवश्य मँगा कर पढ़नी चाहिए। इस पुस्तक से स्त्रियाँ ही नहीं पुरुष भी अनेक शिक्षायें ग्रहण कर सकते हैं, क्योंकि इसमें कोरा सीताचरित ही नहीं है, पूरा रामचरित भी है। आशा है, स्त्री-शिक्षा के प्रेमी महाशय इस पुस्तक का प्रचार करके स्त्रियों को पातिव्रत धर्म की शिक्षा से अलंकृत करने में पूरा प्रयत्न करेंगे।

पृष्ठ २३५। कागज़ मोटा। सजिल्द। पर, तो भी सर्वसाधारण के सुभीते के लिए मूल्य बहुत ही कम। केवल १।) सवा रुपया।

## कविता-कुसुम-माला।

इस पुस्तक में विविध विषयों से सम्बन्ध रखने वाली भिन्न भिन्न कवियों की रची हुई अत्यन्त मनोहारिणी रसवती और चमत्कारिणी १०९ कविताओं का संग्रह है। हिन्दी-कविताओं का ऐसा उपादेय संग्रह आज तक कहीं नहीं छपा। मूल्य ॥=) दस आने।

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

(महाकवि कालिदासकृत)

## रघुवंश

का गद्यात्मक हिन्दी-अनुवाद

(श्री० पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी लिखित)

इस अनुवाद में एक दो नहीं अनेक विशेषतायें हैं। इसमें कालिदास के लिखे केवल शब्दों का ही अनुगमन नहीं किया गया है, किन्तु उन शब्दों के प्रयोग द्वारा महाकवि कालिदास ने जो अनुपम भाव दरसाये हैं उन्हीं भावों को, उन्हीं भीतरी मर्मों को, महाकवि की उन्हीं प्रतिभा प्रदीप्त कल्पनाओं तथा लोकोत्तरानन्ददायिनी उक्तियों के गूढ़ रहस्यों को, सबके समझने योग्य हिन्दी भाषा में, विशद रूप से प्रकाशित किया गया है।

जो आनन्द संस्कृतज्ञ विद्वानों को मूल रघुवंश के पढ़ने में आता है वही आनन्द हिन्दी जानने वालों को इससे प्राप्त होगा। हमारे इस कथन में अत्युक्ति का लेश मात्र भी न समझिए 'हाथ-कंगन को आरसी क्या?' जब आप इस अपूर्व ग्रन्थ को देखेंगे तभी आपको इसके जौहर मालूम होंगे।

सुन्दर चित्रों से सुभूषित। पृष्ठ कुल मिलाकर १००। सुन्दर सुनहरी जिल्द। मूल्य केवल २)

## विनयपत्रिका।

(आगरानिवासी पं० रामेश्वरभट्ट-कृत सरल टीकासहित)

गोस्वामी तुलसीदासजी के नाम को कौन नहीं जानता। जिस कवि की कविता को सुन कर हिन्दू ही नहीं, विदेशी और विधर्मी लोग भी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते हैं उसकी कविता की प्रशंसा में कुछ लिखना सूर्य को दीपक से दिखाना है। रामायण से बढ़ कर विनयपत्रिका का ही नंबर है। नहीं नहीं, प्रेम और भक्ति के वर्णन की दृष्टि से विनयपत्रिका का नंबर रामायण से भी पहले गिना जाय तो कोई आश्चर्य नहीं। विनयपत्रिका का एक एक पद भक्ति और प्रेम रस में सराबोर हो रहा है। अर्थ ऐसी सरल भाषा में है कि बालक भी समझ सकते हैं। पृ० १७८। सुन्दर जिल्द। मूल्य २)

विनयपत्रिका के विषय में सर जार्ज, ए० ग्रियर्सन, के० सी० आई० ई० के पत्र की नक़ल हम नीचे देते हैं कि जो उन्होंने विलायत से पंडित रामेश्वर भट्ट के नाम भेजी है—

*True copy of the letter received from Sir George A Grierson, K.C.I.E., Rathfarnham, England, to the address of the Commentator of* Vinaya Pattrikā.

*Dated 6th September, 1911.*

DEAR SIR,

Forgive a stranger for addressing you. I write to say how highly I appreciate your excellent edition of the तुलसीदास कृत विनयपत्रिका which I obtained from the "Indian Press" a few days ago. It is a worthy successor of your Editions of the रामचरितमानस, and really fills a want which I have long felt. The *Vinaya Pattrikā* is a difficult work but I think it is one of the best poems written by Tulsī Dāsa and should be studied by every devout man. I have already found it of great assistance in explaining difficult passages.

May I hope that you will go on with your work and bring out similar editions of the दोहावली and of the कवितावली (including the हनुमान् बाहुक), both of which are very important. The कवितावली is most important, as it throws so much light on the life of the poet.

Yours faithfully,

(Signed) GEORGE A. GRIERSON.

Pandit Rāmeswar Bhatt.

## जापान-दर्पण।

(जापानियों के हाथों लिखा गया)

जिस हिन्दुधर्मावलम्बी वीर जापान ने महाबली रूस को पछाड़ कर सारे संसार में अपनी धाक का मुख उज्ज्वल किया है, उस वीरोत्साहक जापान के भूगोल, जलवायु, शिक्षा, रहन-सहन, व्यापार, राजा, प्रजा, धर्म और इतिहास आदि सभी का, इस पुस्तक में, पूरा पूरा परिचय दिया गया है। भारत की वर्तमान दशा पर दुःख प्रकाश करने वालों को तो इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिए। २०० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य १), पर अभी कुछ दिनों तक आधे दाम पर देंगे।

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ❊ ❊ ❊ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ❊ ❊ ❊

## चरित्रगठन ।

जो नवयुवक विद्यार्थी चरित्रगठन के अभिलाषी हैं वे तो इसे अवश्य ही पढ़ें, और विशेष कर उन्हीं के लिए यह पुस्तक बनाई गई है। वे इस पुस्तक को पढ़ कर आप तो लाभ उठायेंगे ही, किन्तु अपने भाई सन्तानों को भी विशेष लाभ पहुँचा सकेंगे। इस पुस्तक के सभी विषय सुपाठ्य हैं। जिस कर्तव्य से मनुष्य अपने समाज में आदर्श बन सकता है उसका उल्लेख इस पुस्तक में विशेष रूप से किया गया है। उन्नति, उदारता, सुशीलता, दया, क्षमा, प्रेम, प्रतियोगिता आदि अनेक विषयों का वर्णन उदाहरण के साथ किया गया है। अतएव क्या बालक, क्या वृद्ध, क्या युवा, क्या स्त्री सभी इस पुस्तक को एक बार अवश्य एकाग्र मन से पढ़ें और इससे पूर्ण लाभ उठावें। २३२ पृष्ठ की ऐसी उपयोगी पुस्तक का मूल्य नाममात्र के लिए केवल ॥) बारह आना है।

## कुमारसम्भवसार ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

कवि-कुलगुरु कालिदास के "कुमार-सम्भव" काव्य का यह मनोहर सार छप कर तैयार हो गया। प्रत्येक हिन्दी-कविता-प्रेमी को द्विवेदी जी की यह मनोहारिणी कविता पढ़ कर आनन्द प्राप्त करना चाहिए। कविता बड़ी रसवती और प्रभावशालिनी है। मूल्य केवल ।) चार आने।

## भारतवर्ष में पश्चिमीय शिक्षा ।

श्रीमान् पण्डित मनोहरलाल ज़ुतशी, एम० ए० के नाम को कौन नहीं जानता। आप उर्दू और अँगरेज़ी के प्रसिद्ध लेखक हैं। आपने "पज्युकेशन इन ब्रिटिश इंडिया" नामक एक पुस्तक अँगरेज़ी में लिखी है और उसे इंडियन प्रेस, प्रयाग ने छापकर प्रकाशित किया है। पुस्तक बड़ी खोज के साथ लिखी गई है। उक्त पुस्तक का सारांश हिन्दी और उर्दू में भी छप गया है। भाषा है हिन्दी और उर्दू। पाठक इस उपयोगी पुस्तक को मँगाकर अवश्य लाभ उठायेंगे। मूल्य इस प्रकार है :—

पज्युकेशन इन ब्रिटिश इंडिया ( अँगरेज़ी में ) ॥)
भारतवर्ष में पश्चिमीय शिक्षा ( हिन्दी में ) ।=)
हिन्द में मगरबी तालीम ( उर्दू में ) ।=)

## कर्मयोग ।

स्वामी विवेकानन्दजी के कर्मयोग-सम्बन्धी व्याख्यानों का हिन्दी-अनुवाद करा कर यह "कर्मयोग" नामक पुस्तक छापी गई है। इसमें सात अध्याय हैं। उनमें क्रमशः—१—कर्म का मनुष्य चरित्र पर प्रभाव, २—निष्काम कर्म का महत्त्व, ३—धर्म क्या है ?, ४—परमार्थ में स्वार्थ, ५—अलग रहना ही सच्चा त्याग है, ६—मुक्ति और ७—कर्मयोग का आदर्श—इन विषयों का वर्णन बहुत ही ओजस्विनी भाषा में किया गया है। अध्यात्मविद्या या कर्मयोग के जिज्ञासुओं को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य केवल ।=)

## संक्षिप्त इतिहासमाला ।

लीजिए, हिन्दी में जिस चीज़ की कमी थी उसकी पूर्ति का भी प्रबन्ध हो गया। हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पण्डित श्यामविहारी मिश्र, एम० ए० और पण्डित शुकदेवविहारी मिश्र, बी० ए० के सम्पादकत्व में पृथ्वी के सभी प्रसिद्ध प्रसिद्ध देशों के हिन्दी में संक्षिप्त इतिहास तैयार होने का प्रबन्ध किया गया है। यह समस्त इतिहासमाला कोई २०, २२ संख्याओं में पूर्ण होगी। इसकी क्रमशः एक एक पुस्तक इंडियन प्रेस, प्रयाग, से प्रकाशित होती रहेगी। अब तक ये ६ पुस्तकें छप चुकी हैं :—

| | | |
|---|---|---|
| १—जर्मनी का इतिहास | ... | ।=) |
| २—फ़्रांस का इतिहास | ... | ।=) |
| ३—रूस का इतिहास | ... | ।=) |
| ४—इंगलैंड का इतिहास | ... | ।=) |
| ५—जापान का इतिहास | ... | ।=) |
| ६—स्पेन का इतिहास | ... | ।=) |

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

## ❀ ❀ ❀ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ❀ ❀ ❀

### कर्तव्य-शिक्षा ।

अर्थात्

महात्मा चेस्टर फ़ील्ड का पुत्रोपदेश ।

( अनुवादक—पं० ऋषीश्वरनाथ भट्ट, बी० ए०, प्राज़ )

हिन्दी में ऐसी पुस्तकों की बड़ी कमी है जिनको पढ़ कर हिन्दी-भाषा-भाषी बालक शिष्टाचार के सिद्धान्तों को समझ कर नैतिक और सामाजिक बातों का ज्ञान प्राप्त कर सकें। चाहे कोई कितना ही विद्वान् क्यों न हो, यदि उसको सांसारिक नियमों का ज्ञान नहीं, यदि उसको नैतिक और सामाजिक बातियों का बोध नहीं तो तण्डुलरहित तुषों के समान सकी विद्वत्ता निष्प्रयोजन है। हमारी हिन्दी का लको उपयोगी साहित्य अभी ऐसी पुस्तकों से ख़ाली ा है। इसी अभाव की पूर्ति के लिए हमने यह लक अँगरेज़ी से सरल हिन्दी में अनुवादित करा प्रकाशित की है।

जो लोग अपने बालकों को कर्तव्यशील बनाकर ति-निपुण और शिष्टाचारी बनाना चाहते हैं उनको र्तव्य-शिक्षा" की पुस्तक मँगा कर अपने बालकों हाथ में ज़रूर देनी चाहिए। बालकों को ही नहीं, पुस्तक हिन्दी जाननेवाले मनुष्यमात्र के काम की पाने तीन सौ पृष्ठ की भारी पोथी का मूल्य केवल एक रुपया।

### प्रकृति ।

यह पुस्तक पण्डित रामेन्द्रसुन्दर त्रिवेदी, एम० की बँगला 'प्रकृति' का हिन्दी-अनुवाद है। बँगला इस पुस्तक की बहुत प्रतिष्ठा है। विषय वैज्ञानिक हिन्दी में यह पुस्तक अपने ढँग की एक ही है। पुस्तक को पढ़ कर हिन्दी जाननेवालों को अनेक ानसम्बन्धी बातों से परिचय हो जायगा। इसमें जगत् की उत्पत्ति, आकाशतरंग, पृथिवी की , मृत्यु, आर्यजाति, परमाणु, प्रलय आदि, ये पर बड़ी उत्तमता से लिखे गये हैं। आशा है, हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को बड़े चाव के साथ मँगाकर पढ़ेंगे और अनेक लाभ उठावेंगे। मूल्य १) एक रुपया।

### राजर्षि ।

हिन्दी-अनुरागियों को यह सुन कर विशेष हर्ष होगा कि श्रीयुत बाबू रवीन्द्रनाथ ठाकुर के "बँगला राजर्षि" उपन्यास का अनुवाद हिन्दी में दुबारा छपकर अपने प्रेमी पाठकों की प्रतीक्षा कर रहा है। इस ऐतिहासिक उपन्यास के पढ़ने से बुरी वासना चित्त से दूर होती है, प्रेम का निश्छल भाव हृदय में उमड़ पड़ता है। हिंसा-द्वेष की बातों पर घृणा होने लगती है और ऊँचे ऊँचे ख़यालात से दिमाग़ भर जाता है। इस उपन्यास को स्त्री-पुरुष दोनों निःसङ्कोच भाव से पढ़ सकते हैं और इसके महान उद्देश्य को भलीभाँति समझ सकते हैं। उपन्यास पढ़ने पर जो हर्ष होगा, जो शिक्षा मिलेगी और जो हृदय में पवित्र भाव का संचार होगा, उसके आगे इस इतने बड़े ऐतिहासी उपन्यास का ॥=) आना मूल्य कुछ नहीं के बराबर ही समझना चाहिए।

सचित्र

### शरीर और शरीर-रक्षा ।

पण्डित चन्द्रमौलि सुकुल, एम० ए० की लिखी हुई किताबें कैसी अच्छी और लाभप्रद होती हैं यह बताने की ज़रूरत नहीं। जिन्होंने इनकी लिखी हुई किताबें पढ़ी हैं, वे ख़ुद जानते होंगे। यह पुस्तक भी उन्हीं पण्डित जी की क़लम की करामात है। इस में शरीर के भीतरी और बाहरी अङ्गों का तथा उनके काम करने के ढङ्ग का वर्णन किया गया है। इसमें ऐसी मोटी मोटी बातों का वर्णन किया गया है और ऐसी सरल भाषा में लिखा गया है, कि हर एक मनुष्य पढ़ कर समझ सकता है और अपनी बातों [illegible] सकता है। मनुष्य के [illegible] इस में [illegible] पुस्तक [illegible] [illegible] है। मूल्य [illegible]

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

नई पुस्तक ।

# वन-कुसुम

इस छोटी सी पुस्तक में छः कहानियाँ छापी गई हैं। कहानियाँ बड़ी रोचक हैं। कोई कोई कहानी तो ऐसी है कि पढ़ते समय हँसी आये बिना नहीं रहती। मूल्य केवल चार आने है।

# सदुपदेश-संग्रह

मुंशी देवीप्रसाद साहब, मुंसिफ़, जोधपुर ने उर्दू भाषा में एक पुस्तक नसीहतनामा बनाया था। उसकी क़द्र पञ्जाब और बराड़ के विद्या-विभाग में बहुत हुई। वह कई बार छापा गया। उसी नसीहतनामा का यह हिन्दी अनुवाद है। सब देशों के ऋषि-मुनि, और महात्माओं ने अपने रचित ग्रन्थों में जो उपदेश लिखे हैं उन्हीं में से छाँट छाँट कर इस छोटी सी किताब की रचना की गई है। शेख़सादी का कथन है कि 'अगर भीत पर भी कोई उपदेशात्मक वचन लिखा हो तो मनुष्य को चाहिए कि उसे अपने कान में धर ले'। यह बिलकुल ठीक है। बिना उपदेश के मनुष्य का आत्मा पवित्र और बलिष्ठ नहीं हो सकता।

इस पुस्तक में चार अध्याय हैं। उनमें २४१ उपदेश हैं। उपदेश सब तरह के मनुष्यों के लिए हैं। उनसे सभी सज्जन, धर्मात्मा, परोपकारी और चतुर बन सकते हैं। मूल्य केवल ।) चार आने।

## टाम काका की कुटिया

हमारे यहाँ से हिन्दी-भाषा में बहुत शीघ्र प्रकाशित होगी। यह बहुत रोचक उपन्यास है। अँगरेज़ी में यह पुस्तक बहुत ही विख्यात है। भारतीय भाषाओं में भी इसके अनुवादों के कई संस्करण हो चुके हैं।

नई पुस्तक ॥

# श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण—पूर्वार्द्ध

(हिन्दी-भाषानुवाद)

सरस्वती के समान ६०० पृष्ठ, सजिल्द-मूल्य केवल

आदि-कवि वाल्मीकि मुनि-प्रणीत रा संस्कृत में है। उसके हिन्दी-भाषानुवाद भी हुए हैं। पर यह अनुवाद अपने ढँग का नया है। इसमें अक्षरशः अनुवाद है। भाषा और सरस है। हिन्दू मात्र रामायण को धर्म मानते हैं। असल में यह पुस्तक ऐसी ही है। पढ़ने पढ़ाने वालों को सब तरह का ज्ञान प्राप्त है और आत्मा बलिष्ठ बनता है। इस पूर्व आदि-काण्ड से लेकर सुन्दर-काण्ड तक-काण्डों का अनुवाद है। बाक़ी काण्ड उत्तरा रहेंगे। उत्तरार्द्ध छप रहा है; वह जल्दी छप प्रकाशित होगा। जल्दी मँगाइए।

# गीताञ्जलि

डाक्टर श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर बनाई हुई "गीताञ्जलि" नामक अँगरे पुस्तक का संसार में कितना आ है; यह बतलाने की ज़रूरत नहीं उस पुस्तक की अनेक कवितायें बँगल गीताञ्जलि में तथा और भी कई बँगल की पुस्तकों में छपी हुई हैं। उन्हीं क ताओं को इकट्ठा करके हमने हिन्दी-अर्थ में 'गीताञ्जलि' छपाया है। जो महाश हिन्दी जानते हुए बँगला भाषा जानते उनके लिए यह बड़े काम की पुस्तक है मूल्य १) एक रुपया।

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ※ ※ ※

## बालसखा-पुस्तकमाला।

इंडियन प्रेस, प्रयाग से "बालसखा पुस्तकमाला" नामक सीरीज़ में जितनी किताबें आज तक निकली हैं वे सब हिन्दी-पाठकों के लिए, विशेष कर बालक-बालिकाओं और स्त्रियों के लिए, परमोपयोगी प्रमाणित हो चुकी हैं। इस 'माला' की सब किताबों की भाषा ऐसी सरल—सबके समझने योग्य—रक्खी है कि जिसे थोड़े पढ़े लिखे बालक भी बड़ी आसानी से पढ़ कर समझ लेते हैं। इस 'माला' में अब तक जितनी पुस्तकें निकल चुकी हैं उनका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जाता है:—

### बालभारत—पहला भाग।

१—इसमें महाभारत की संक्षेप से कुल कथा ऐसी सरल हिन्दी भाषा में लिखी गई है कि बालक और स्त्रियाँ तक पढ़कर समझ सकती हैं। यह पाण्डवों का चरित बालकों को अवश्य पढ़ाना चाहिए। मूल्य ॥) मूल्य आठ आने।

### बालभारत—दूसरा भाग।

२—इसमें महाभारत से छाँट कर बीसियों ऐसी कथायें लिखी गई हैं कि जिनको पढ़कर बालक अच्छी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। हर कथा के अन्त में कथानुरूप शिक्षा भी दी गई है। मूल्य वही ॥)

### बालरामायण—सातों काण्ड।

३—इसमें रामायण की कुल कथा बड़ी सीधी भाषा में लिखी गई है। इसकी भाषा की सरलता में इससे अधिक और क्या प्रमाण दें कि गवर्नमेंट ने इस पुस्तक को सिविलियन लोगों के पढ़ने के लिए नियत कर दिया है। भारतवासियों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। मूल्य ॥)

### बालमनुस्मृति।

४—आज कल आर्य-सन्तान अपनी प्राचीन धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक रीति-रस्मों को न जान कर कैसे घोर अन्धकार में धँसती चली जा रही है सो किसी भी विचारशील से छिपा नहीं। इसी दोष के दूर करने के लिए 'मनुस्मृति' के उत्तम उत्तम श्लोकों को छाँट छाँट कर उनका हिन्दी में अनुवाद लिखा गया है। मूल्य ।)

### बालनीतिमाला।

५—नीतिविद्या बड़े काम की विद्या है। हमारे चार नीतिज्ञ बड़े प्रसिद्ध हो गये हैं। शुक्र, विदुर, चाणक्य और कणिक। इन्हीं के नाम से चार पुस्तकें विख्यात हैं। शुक्रनीति, विदुरनीति, चाणक्यनीति और कणिकनीति। ये सब पुस्तक संस्कृत में हैं। हिन्दी जाननेवालों के उपकार के लिए हमने चारों पुस्तकों का संक्षिप्त हिन्दी-अनुवाद छापा। इसकी भाषा बालकों और स्त्रियों तक के समझने लायक है। मूल्य ॥)

### बालभागवत—पहला भाग।

६—लीजिए, 'श्रीमद्भागवत' की कथा भी अब सरल हिन्दी-भाषा में बन गई। जो लोग संस्कृत नहीं जानते, केवल हिन्दी-भाषा ही जानते हैं, वे भी अब श्रीमद्भागवत की भक्ति-रस-भरी कथाओं का स्वाद चख सकते हैं। इस 'बालभागवत' में 'श्रीमद्भागवत' की कथाओं का सार लिखा गया है। इसकी कथायें बड़ी रोचक, बड़ी शिक्षादायक और भक्ति रस से भरी हुई हैं। हर एक हिन्दी-प्रेमी हिन्दू को इस पुस्तक की एक एक कापी ज़रूर ख़रीदनी चाहिए। मूल्य ॥) आने

### बालभागवत—दूसरा भाग।

अर्थात्
श्रीकृष्णलीला।

७—श्रीकृष्ण के प्रेमियों को यह बालभागवत का दूसरा भाग ज़रूर पढ़ना चाहिए। इसमें, श्रीमद्भागवत में वर्णित श्रीकृष्ण भगवान् की अनेक लीलाओं की कथायें लिखी गई हैं। मूल्य केवल ॥)

---

पुस्तक मिलने का पता—**मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।**

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

## बालगीता ।

८—गीता की एक एक शिक्षा, एक एक बात मनुष्यों को मुक्ति और मुक्ति की देनेवाली है। ऐहिक और पारमार्थिक सुख चाहने वालों को गीता के उपदेशों से ज़रूर शिक्षा लेनी चाहिए। गीता में जगह जगह ऐसा अमृतमय उपदेश भराहुआ है कि जिसके पान से मनुष्य अमर-पदवी तक पा सकता है। श्रीकृष्णचन्द्र महाराज के मुखारविन्द से निकले हुए सदुपदेश को कौन हिन्दू न पढ़ना चाहेगा? अपने आत्मा को पवित्र और बलिष्ठ बनाने के लिए यह "बालगीता" ज़रूर पढ़नी चाहिए। इसमें पूरी गीता का सार बड़ी सरल भाषा में लिखा गया है। मूल्य ॥)

## बालोपदेश ।

९—यह पुस्तक बालकों को ही नहीं युवा, वृद्ध, धनिता सभी को उपयोगी तथा चतुर, धर्मात्मा और शीलसम्पन्न बनाने वाली है। राजा भर्तृहरि के विमल अन्तःकरण में जब संसार से वैराग्य उत्पन्न हुआ था तब उन्होंने एक दम भरा पूरा राज-पाट छोड़ कर संन्यास ले लिया था। उस परमानन्दमयी अवस्था में उन्होंने वैराग्य और नीति-सम्बन्धी दो शतक बनाये थे। इस 'बालोपदेश' में उन्हीं भर्तृहरि-कृत नीति-शतक का पूरा और वैराग्यशतक का संक्षिप्त हिन्दी अनुवाद छापा गया है। यह पुस्तक स्कूलों में बालकों के पढ़ने के लिए बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।)

## बालारव्योपन्यास (सचित्र) चारों भाग।

१०–१३—दिलचस्प क़िस्से कहानियों के लिए दुनिया भर के उपन्यासों में अर्ब्यिन नाइट्स का नम्बर सबसे पहला है। इसमें से कुछ अवांछनीय कहानियों को निकाल कर, यह विशुद्ध संस्करण निकाला गया है, इसलिए, अब, यह किताब क्या लड़के, क्या बूढ़े सभी के पढ़ने लायक है। इसके पढ़ने से हिन्दी-भाषा का प्रचार होगा, मनोरञ्जन होगा, घर बैठे दुनिया की सैर होगी, बुद्धि और विचार-शक्ति बढ़ेगी, चतुराई सीखने में आवेगी, साहस और हिम्मत बढ़ेगी। मूल्य तक कहें, इसके पढ़ने से अनेक लाभ होंगे। प्रत्येक भाग का ॥)

## बालपंचतंत्र ।

१४—इसके पाँचों तंत्रों में बड़ी मनोरंजक कहानियों के द्वारा सरल रीति पर नीति की शिक्षा दी गई है। बालक-बालिकायें इसकी मनोरंजक कहानियों को बड़े चाव से पढ़ कर नीति की शिक्षा ग्रहण कर सकती हैं। यह "बालपंचतंत्र" विष्णुशर्मा कृत असली पंचतंत्र का सरल हिन्दी में सार है। यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दीपाठक और विशेष कर बालकों के पढ़ने के योग्य है। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

## बालहितोपदेश ।

१५—इस पुस्तक के पढ़ने से बालकों की बढ़ती है, नीति की शिक्षा मिलती है, मित्रता लाभों का ज्ञान होता है और शत्रुओं के पंजे में फँसने और फँस जाने पर उससे निकलने के उपा और कर्त्तव्यों का बोध हो जाता है। यह पुस्तक पुरुष हो या स्त्री, बालक हो या बूढ़ा, सभी के काम की है। इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य आठ आने।

## बालहिन्दीव्याकरण ।

१६—यदि आप हिन्दी-व्याकरण के गूढ़ सि को सरल और सुगम रीति से जानना चाहते हैं, य आप हिन्दी शुद्ध रूप से लिखना और बोल जानना चाहते हैं, तो "बालहिन्दीव्याकरण" पुस्त मँगा कर पढ़िए और अपने बाल-बच्चों को पढ़ाइए। स्कूलों में लड़कों के पढ़ाने के लिए यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है। मूल्य ।) आर आने।

पुस्तक लिखने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * *

## बालविष्णुपुराण ।

१७—विष्णुपुराण में कितनी ही ऐसी विचित्र और शिक्षाप्रद कथायें हैं कि जिनके जानने की हिन्दी वालों को बड़ी ज़रूरत है। इस पुराण में कलियुगी भविष्य राजाओं की वंशावली का बड़े विस्तार से वर्णन किया गया है। जो लोग संस्कृत भाषा में विष्णुपुराण की कथाओं का आनन्द नहीं लूट सकते, उन्हें 'बालविष्णु-पुराण' पढ़ना चाहिए। इस पुस्तक को विष्णुपुराण का सार समझिए। मूल्य ।)

## बाल-स्वास्थ्य-रक्षा ।

१८—यह पुस्तक प्रत्येक हिन्दी जाननेवाले को पढ़नी चाहिए। प्रत्येक गृहस्थ को इसकी एक एक कापी अपने घर में रखनी चाहिए। बालकों को तो प्रारम्भ से ही इस पुस्तक को पढ़कर स्वास्थ्य-सुधार के उपायों का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। इसमें बतलाया गया है कि मनुष्य किस प्रकार रह कर, किस प्रकार का भोजन करके, नीरोग रह सकता है। इसमें प्रति दिन के बर्ताव में आनेवाली खाने की चीज़ों के गुण-दोष भी अच्छी तरह बताये गये हैं। कहाँ तक कहें, पुस्तक मनुष्य-मात्र के काम की है। इतनी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल ॥) आठ आना रक्खा है।

## बालगीतावलि ।

१९—महाभारत में क्या नहीं है। उसमें सभी कुछ मौजूद है। महाभारत को रत्नों का सागर कहना चाहिए, शिक्षा का भण्डार कहना चाहिए। आप जानते हैं "बालगीतावलि" में क्या है? इसमें महाभारत में से ९ गीताओं का संग्रह किया गया है। इन गीताओं में ऐसी उत्तम उत्तम शिक्षायें हैं कि जिनके अनुसार बर्ताव करने से मनुष्य का परम कल्याण हो सकता है। हमें पूरी आशा है कि समस्त हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को पढ़ कर उत्तम शिक्षा का लाभ करेंगे। मूल्य ॥) आठ आने।

## बालनिबन्धमाला ।

२०—इसमें कोई ३५ शिक्षादायक [illegible] बड़ी सुन्दर भाषा में, निबन्ध लिखे गये हैं। [illegible] के लिए तो यह पुस्तक उत्तम गुरु का काम [illegible] ज़रूर मंगाइए। मूल्य ।=)

## बालस्मृतिमाला ।

२१—हमने १८ स्मृतियों का [illegible] यह "बालस्मृतिमाला" प्रकाशित की है। सनातनधर्म के प्रेमी अपने अपने बालकों के यह धर्मशास्त्र की पुस्तक देकर उनको धर्मिष्ठ का उद्योग करेंगे। मूल्य केवल ॥) आठ आने।

## बालपुराण ।

२२—पुराणों में बहुत सी ऐसी कथायें हैं कि मनुष्यों को बहुत कुछ उपदेश मिल सकता है। पुराण इतने अधिक और बड़े हैं कि उन [illegible] प्रत्येक मनुष्य के लिए असम्भव नहीं तो साध्य अवश्य है। इसलिए सर्वसाधारण के के लिए हमने अठारह महापुराणों का सारांश 'बा पुराण' तैयार करा कर प्रकाशित किया है। इस अठारहों पुराणों की सोहिल कथाएँ दी गई हैं यह भी बतलाया गया है कि किस पुराण में [illegible] श्लोक और कितने अध्याय आदि हैं। पुस्तक बड़ी की है। इतनी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल ॥)

## बालभोजप्रबन्ध ।

२३—राजा भोज का [illegible] किसी से छिपा नहीं है। संस्कृत भाषा के "भोजप्रबन्ध" नामक ग्रन्थ में राजा भोज के संस्कृत-विद्यारम्भ सम्बन्धी अनेक आख्यान लिखे हुए हैं। ये बड़े मनोरञ्जक और शिक्षादायक हैं। उसी भोजप्रबन्ध को आधार पर "बाल-भोजप्रबन्ध" आपके सेवार हो गया। अपने हिन्दी-प्रेमी बालकों को यह पुस्तक अवश्य पढ़ने चाहिए। मूल्य बहुत ही कम केवल ॥) आठ आने।

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

# ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ※ ※ ※

## मानस-दर्पण

( लेखक—श्री० पं० चन्द्रमौलि शुक्ल, एम० ए० )

इस पुस्तक को हिन्दी-साहित्य का अलङ्कारग्रन्थ समझना चाहिए। इसमें अलङ्कारों आदि के लक्षण संस्कृत-साहित्य से और उदाहरण रामचरितमानस से दिये गये हैं। प्रत्येक हिन्दी-पाठक को यह पुस्तक अवश्य ही पढ़नी चाहिए। मूल्य ।-)

## माधवीकंकण।

मिस्टर आर० सी० दत्त की चमत्कारिणी लेखनी के चमत्कार को कौन नहीं जानता। "माधवीकङ्कण" नाम का बँगला उपन्यास उन्हीं के क़लम की करामात है। बड़ा रोचक, बड़ा शिक्षादायक और बड़ा मनोरञ्जक उपन्यास है। हृदय-हारिणी घटनाओं से भरपूर है। वीर और करुणा आदि अनेक रसों का समावेश इसमें किया गया है। उपन्यास का उद्देश पवित्र और शिक्षादायक है। मूल्य ॥।)

## हिन्दी-व्याकरण।

( बाबू माणिक्यचन्द जैनी बी० ए० कृत )

यह हिन्दी-व्याकरण अंग्रेज़ी ढंग पर बनाया गया है। इसमें व्याकरण के प्रायः सब विषय ऐसी अच्छी रीति से समझाये गये हैं कि बड़ी आसानी से समझ में आ जाते हैं। हिन्दी-व्याकरण के जानने की इच्छा रखनेवालों को यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। मूल्य ॥)

## हिन्दी-व्याकरण।

( बाबू गंगाप्रसाद एम० ए० कृत )

यह भी नये ढंग का व्याकरण है। इसमें भी व्याकरण के सब विषय अंग्रेज़ी ढंग पर लिखे गये हैं। उदाहरण देकर हर एक विषय को ऐसी अच्छी तरह से समझाया है कि बालकों की समझ में बहुत जल्द आ जाता है। मूल्य ॥)

## योगवासिष्ठ-सार।

( वैराग्य और मुमुक्षु व्यवहार प्रकरण )

योगवासिष्ठ ग्रन्थ की महिमा हिन्दू-मा से छिपी नहीं है। इस ग्रन्थ में श्रीरामचन्द्रजी और गुरु वसिष्ठजी का उपदेशमय संवाद लिखा हुआ है जो लोग संस्कृत-भाषा में इस भारी ग्रन्थ को नहीं पढ़ सकते उनके लिए हमने योगवासिष्ठ का सार-रूप यह ग्रन्थ हिन्दी में प्रकाशित किया है। अब साधारण हिन्दी जानने वाले भी इस ग्रन्थ को पढ़ कर धर्म, ज्ञान और वैराग्यविषयक उत्तम शिक्षाओं से लाभ उठा सकते हैं। मूल्य ॥=)

## हिन्दी-मेघदूत।

कविकुल-कुमुद-कलाधर कालिदास कृत मे दूत का समवृत्त और समश्लोकी हिन्दी-अनुवा मूल श्लोक सहित—मूल्य नाम मात्र के लिए ।=)

हिन्दी-साहित्य में यह ग्रन्थ अपने ढंग का अकेला है। कविता-प्रेमियों—विशेष कर के बड़ी बोली की हिन्दी-कविता के रसिकों—को यह हिन्दी-मेघदूत अवश्य देखना चाहिए। बड़ी मनो-हर पुस्तक है। पुस्तक के आरम्भ में अनुवादक पंडित लक्ष्मीधर वाजपेयी का हाफ़टोन चित्र दिया गया है। इसके अतिरिक्त विरही यक्ष और विरहि-यक्षपत्नी के दो सुन्दर रंगीन चित्र भी यथास्था दिये गये हैं। पुस्तक की शोभा देखते ही बनती है "अवसि देखिए देखन जोगू"।

## बालापत्रबोधिनी

यह पुस्तक लड़कियों के बड़े काम की है। इसमें पत्र लिखने के नियम आदि बताने के अतिरिक्त नमूने के लिए पत्र भी ऐसे ऐसे छपाये गये हैं कि जिनसे 'एक पंथ दो काज' की कहावत चरितार्थ हो जाती है। इस पुस्तक से लड़कियों को पत्र आदि लिखने का तो ज्ञान होगाही, किन्तु अनेक उपयोगी शिक्षायें भी प्राप्त हो जायँगी। मूल्य ।=)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ※ ※ ※

### सीतावनवास ।

सुप्रसिद्ध पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर लिखित "सीतार-चनवास" नामक पुस्तक का यह हिन्दी-अनुवाद "सीतावनवास" छप कर तैयार है। इस पुस्तक में श्रीरामचन्द्रजी-कृत गर्भवती सीताजी के परित्याग की विस्तारपूर्वक कथा बड़ी ही रोचक और करुणारस भरी भाषा में लिखी गई है। इसे पढ़ सुन कर आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगती है और पाषाण-हृदय भी मोम की तरह द्रवीभूत हो जाता है। मूल्य ॥)

### गारफ़ील्ड ।

इस पुस्तक में अमरीका के एक प्रसिद्ध प्रेसीडेंट "जेम्स एबरम गारफ़ील्ड" का जीवनचरित लिखा गया है। गारफ़ील्ड ने एक साधारण किसान के घर जन्म लेकर, अपने उत्साह, साहस और संकल्प के कारण, अमरीका के प्रेसीडेंट का सर्वोच्च पद प्राप्त कर लिया था। भारतवर्ष के नव युवकों को इस पुस्तक से बहुत अच्छा उपदेश मिल सकता है। मूल्य ॥)

### हिन्दीभाषा की उत्पत्ति ।

(लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी)

यह पुस्तक हर एक हिन्दी जाननेवाले को पढ़नी चाहिए। इसके पढ़ने से मालूम होगा कि हिन्दी भाषा की उत्पत्ति कहाँ से है। पुस्तक बड़ी खोज के साथ लिखी गई है। हिन्दी में ऐसी पुस्तक, हमारी राय में, अभी तक कहीं नहीं छपी। एक हिन्दी ही नहीं इसमें और भी कितनी ही हिन्दुस्तानी भाषाओं का विचार किया गया है। मूल्य ।)

### शकुन्तला नाटक ।

कविकुलगुरु कालिदास के नाम को कौन नहीं जानता! शकुन्तला नाटक, उन्हीं कविचूड़ामणि कालिदास का रचा हुआ है। इस नाटक पर देशी वाले नहीं विदेशी विद्वान् भी लट्टू हैं। संस्कृत जैसा बढ़िया यह नाटक हुआ है वैसा ही सरस यह हिन्दी में लिखा गया है। कारण यह कि हिन्दी के सच्चे कालिदास राजा लक्ष्मणसिंह ने अनुवादित किया है। लीजिए, देखिए तो इसके में कैसा अनुपम आनन्द आता है। मूल्य १)

### मुकुट ।

यह बँगला के प्रसिद्ध लेखक श्रीयुक्त बाबू बँगला उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है। भाई में परस्पर अनबन होने का परिणाम क्या होता इस छोटे से उपन्यास में यही बड़ी विलक्षणता साथ दिखलाया गया है। इसे पढ़ कर लोग अपने को वैमनस्य के दोषों से बचा सकते हैं। मूल्य

### पुगलांगुलीय ।

अर्थात्

हो अँगूठियाँ

बँगला के प्रसिद्ध उपन्यास-लेखक बंकिम बाबू के नाम से सभी शिक्षित जन परिचित हैं। उन्हीं परमोत्तम और शिक्षाप्रदायक उपन्यास का यह सरल हिन्दी-अनुवाद छपकर तैयार है। यह उपन्यास क्या स्त्री, क्या पुरुष सभी के पढ़ने और मनन करने योग्य है। मूल्य ॥)

### स्वर्णलता ।

(लेखक और विख्यात सामाजिक उपन्यास)

यह उपन्यास प्रत्येक गृहस्थ को पढ़ना चाहिए। इस उपन्यास को गृहस्थाश्रम का सच्चा समझना चाहिए। बँगला में इस उपन्यास की इतनी प्रतिष्ठा हुई है कि १९०८ तक इसके १७ संस्करण निकल चुके हैं। इस उपन्यास की शिक्षा बड़ी सरल की है। हिन्दी में यह उपन्यास अनुवाद है। २९१ पृष्ठ की डिमाई का मूल्य १)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ※ ※ ※

## धोखे की टट्टी।

इस उपन्यास में एक अनाथ लड़के की नेकनीयती और नेकचलनी और एक सनाथ और धनाढ्य लड़के की बदनीयती और बदचलनी का फोटो खींचा गया है। हमारे भारतीय नवयुवक इसके पढ़ने से बहुत कुछ सुधर सकते हैं, बहुत कुछ शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। ज़रा मँगाकर देखिए तो कैसी "धोखे की टट्टी" है। मूल्य ।=)

## पार्वती और यशोदा।

इस उपन्यास में स्त्रियों के लिए अनेक शिक्षायें दी गई हैं। इसमें दो प्रकार के स्त्री-स्वभावों का ऐसा अच्छा फ़ोटो खींचा गया है कि समझते ही बनता है। स्त्रियों के लिए ऐसे ऐसे उपन्यासों की अत्यन्त आवश्यकता है। 'सरस्वती' के प्रसिद्ध कवि पण्डित कामताप्रसाद गुरु ने ऐसा शिक्षादायक उपन्यास लिखकर हिन्दी पढ़ी लिखी स्त्रियों का बहुत उपकार किया है। हर एक स्त्री को यह उपन्यास अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य ।=)

## सुशीला-चरित।

आज कल हमारे देश के स्त्री-समाज में ऐसे ऐसे दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुराचार घुसे हुए हैं जिनके कारण स्त्री-समाज ही नहीं पुरुष-समाज भी नाना प्रकार के दुःखजालों में फँस कर घोर नरक-यातना भोग रहा है। यदि भारतवासी अपने देश, धर्म और जाति की उन्नति करना चाहते हैं तो सब से पहले, सब प्रकार की उन्नतियों के मूल स्त्री-समाज का सुधार करना चाहिए। फिर देखिए, आपकी सभी कामनायें आप से आप ही सिद्ध हो जायँगी। स्त्री-समाज के सुधार की शिक्षा देने में 'सुशीलाचरित' पुस्तक बहुत ही उपयोगी है। प्रत्येक पढ़ी लिखी स्त्री को सुशीला-चरित अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य १)

## बाला-बोधिनी।

(पाँच भाग)

लड़कियों के पढ़ने के लिए ऐसी पुस्तकों बड़ी आवश्यकता थी जिनमें भाषाशिक्षा के साथ साथ लाभदायक उपयोगी उपदेशों के पाठ हों और उनमें ऐसी शिक्षा भरी हो जिनकी, वर्तमान काल में, लड़कियों के लिए अत्यन्त आवश्यकता है। हमारी बालाबोधिनी इन्हीं आवश्यकताओं के पूर्ण करने लि प्रकाशित हुई है। क्या देशी और क्या सरकारी सभी पुत्री-पाठशालाओं की पाठ्य-पुस्तकों में बाला बोधिनी को नियत करना चाहिए। इन पुस्तकों के कवर-पेज ऐसे सुन्दर रङ्गीन छापे गये हैं कि देखते ही बनता है। मूल्य पाँचों भागों का १।) और प्रत्येक भाग का क्रमशः =), ⊐), ।), ।-), ।=), है।

## समाज।

मिष्टर आर सी. दत्त लिखित बँगला उपन्यास का हिन्दी-अनुवाद बहुत ही सरल भाषा में किया ग है। पुस्तक बड़े महत्त्व की है। यह सामाजिक उ न्यास सभी हिन्दी जाननेवालों के बड़े काम का है एक बार पढ़ कर अवश्य देखिए। मूल्य ॥।)

## सुखमार्ग।

इस पुस्तक का जैसा नाम है इसमें गुण भी वैसा ही है। इस पुस्तक के पढ़ते ही सुख का मार्ग दिखाई देने लगता है। जो लोग दुखी हैं, सुख की खोज में दिन रात सिर पटकते रहते हैं उनको यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। मूल्य केवल ।)

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## ※ ※ ※ इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें ※ ※ ※

### बालविनोद ।

प्रथम भाग ⁻) द्वितीय भाग ⁻)॥ तृतीय भाग ) चौथा भाग ।=) पांचवां भाग ।≡) ये पुस्तकें लड़के लड़कियों के लिए प्रारम्भ से शिक्षा शुरू करने के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। इसमें से पहले तीनों भागों में एक ख़ास भी विशेषता है कि रंगीन-तसवीरें भी दी गई हैं। इन पांचों भागों में सदुपदेशपूर्ण अनेक कवितायें भी हैं। बंगाल की टेक्स्ट बुक कमेटी ने इनमें से पहले तीनों भागों को अपने स्कूलों में जारी कर दिया है।

### उपदेश-कुसुम ।

यह गुलिस्तां के आठवें बाब का हिन्दी-अनुवाद है। यह पढ़ने लायक़ और शिक्षा-प्रदायक है। मूल्य =)

### मुअल्लिम नागरी ।

उर्दू जाननेवालों को नागरी सीखने के लिए सहज कल समझिए। इसमें उर्दू और नागरी दोनों लिपी गई हैं। इससे बड़ी जल्दी नागरी पढ़ना लिखना आ जाता है। मूल्य ॥)

### भाषा-पत्र-बोध ।

यह पुस्तक बालकों और स्त्रियों के ही उपयोगी नहीं सभी के काम की है। इसमें हिन्दी में पत्रव्यवहार करने की रीतियां बड़ी उत्तम रीति से लिखी गई हैं। इस किताब को पढ़ कर छोटे छोटे बालक भी अच्छी तरह पत्र-व्यवहार करना सीख जाते हैं। मूल्य ⁻)॥

### व्यवहार-पत्र-दर्पण ।

काम-काज के दस्तावेज़ और अदालती काग़ज़ों का संग्रह।

यह पुस्तक काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा के आज्ञानुसार उसी सभा के एक सभासद द्वारा लिखी गई है। इसमें एक प्रसिद्ध वकील की सलाह अदालत के सैकड़ों काम-काज के काग़ज़ों के नमूने छापे गये हैं। इसकी भाषा भी वही रक्खी गई है जो अदालतों में लिखी पढ़ी जाती है। इसकी सहाय से लोग अदालत के ज़रूरी कामों को नागरी में बड़ी सुगमता से कर सकते हैं। क़ीमत ॥)

### कादम्बरी ।

यह कविवर बाणभट्ट के सर्वोत्तम संस्कृत उपन्यास का अत्युत्तम हिन्दी-अनुवाद, प्रसिद्ध हिन्दी लेखक स्वर्गवासी बाबू गदाधरसिंह वर्मा ने किया है। कथा तो सर्वोत्तम प्रसिद्ध है ही, पर भाषा भी बड़ी शुद्ध, मधुर और सरस है। इसे सर्वथा पठन-योग्य समझ कर कलकत्ता की यूनिवर्सिटी ने एफ० ए० क्लास के कोर्स में सम्मिलित कर लिया है। यह उपन्यास हिन्दी-प्रेमियों के संग्रह योग्य है। दाम ॥), संक्षिप्त संस्करण में ।॥)

### पाकप्रकाश

इसमें रोटी, दाल, कढ़ी, भाजी, पकौड़ी, रायता, चटनी, अचार, मुरब्बा, पूरी, कचौरी, मिठाई, माल पुआ, आदि के बनाने की रीति लिखी गई है। यह पुस्तक स्त्रियों के बड़े काम की है। मूल्य ⁻)

### जल-चिकित्सा-( सचित्र )

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

इसमें, डाक्टर लुई कूने के सिद्धान्तानुसार, जल से ही सब रोगों की चिकित्सा का वर्णन किया गया है। मूल्य ।)

### वर्णशास्त्र-प्रवेशिका ।

वर्णविचार के मूल सिद्धान्तों के समझने के लिए इस पुस्तक को ज़रूर पढ़ना चाहिए। ज़रूर लीजिए, बड़े काम की पुस्तक है। मूल्य ।)

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

## ❋ ❋ ❋ इंडियन प्रेस, प्रयाग, की सर्वोत्तम पुस्तकें ❋ ❋ ❋

### पारस्योपन्यास ।

जिन्होंने "पारस्योपन्यास" अर्थात् अरेबियन नाइट्स की कहानियाँ पढ़ी हैं उनके सामने यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि पारस्योपन्यास की कहानियाँ कैसी मनोरञ्जक और अद्भुत हैं। अरबदेशीय सहस्र-रजनी-चरित्र के पढ़ने वालों को एक बार पारस्य उपन्यास भी अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य १)

### भाषाव्याकरण ।

श्रीयुत पण्डित चन्द्रमौलि शुक्ल, एम. ए. असिस्टेंट हेडमास्टर, गवर्नमेंट हाईस्कूल, प्रयाग-रचित। हिन्दी भाषा की यह व्याकरण-पुस्तक व्याकरण पढ़ानेवाले अध्यापकों के बड़े काम की चीज़ है। विद्यार्थी भी इस पुस्तक को पढ़ कर हिन्दी-व्याकरण का बोध प्राप्त कर सकते हैं। मूल्य ⅜)

### कालिदास की निरङ्कुशता ।

( लेखक—पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी )

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी जी ने "सरस्वती" पत्रिका के बारहवें भाग में "कालिदास की निरङ्कुशता" नामक जो लेख-माला प्रकाशित की थी वह, अनेक हिन्दी-प्रेमियों के आग्रह करने पर, पुस्तकाकार प्रकाशित कर दी गई। आशा है, सभी हिन्दी-प्रेमी इस पुस्तक को मँगा कर अवश्य देखेंगे। मूल्य केवल ।) चार आने।

### आरोग्य-विधान ।

नीरोग रहने के सुगम उपायों का वर्णन। मूल्य ⅝)॥

### दुर्गा सप्तशती ।

हमने यह दुर्गा की पोथी बड़ी सुन्दर छापी है। काग़ज़ भी इसका मोटा और अक्षर भी बड़े मोटे हैं। चश्मा लगानेवाले बिना चश्मा लगाये ही इसका पाठ कर सकते हैं। बड़ी शुद्ध छपी है। कीलक, कवच, अङ्गन्यास, करन्यास, ऋष्यादि विनियोग आदि सभी बातें इसमें मौजूद हैं। यह भी लिखा गया है कि किस काम के किस मंत्र का संपुट लगाना चाहिए। ऐसी उत्तम पोथी का दाम केवल ॥=)

तार्किकमोहभङ्गप्रकाश (कुतर्कियों का मुँह तोड़ जवाब)
रसरहस्य ( प्रेमियों के देखने योग्य ) ...
प्रीतमविहार ( श्रीरामचन्द्र जी के प्रेमभजन )
दृष्टान्तसमुच्चय (उपदेश भरे दृष्टान्तों का संग्रह)
महिम्नस्तोत्र ... ... ... ...
एकमुखी हनुमत्कवच ... ... ....

### नूतनचरित्र ।

( बाबू रामचन्द्र बी० ए० वकील हाईकोर्ट प्रयाग लिखित

यों तो उपन्यास-प्रेमियों ने अनेक उपन्यास पढ़े होंगे पर हमारा अनुमान है कि शायद उन्होंने ऐसा उत्तम उपन्यास आज तक कहीं नहीं देखा होगा। इसलिए हम बड़ा ज़ोर देकर कहते हैं कि 'नूतनचरित्र' को अवश्य पढ़िए। मूल्य १)

### षोडशी ।

बँगला के प्रसिद्ध आख्यायिकालेखक श्रीयुत प्रभातकुमार बाबू की प्रभावशालिनी लेखनी से लिखी गई १६ आख्यायिकाओं का यह संग्रह बँगला में बड़ा प्रसिद्ध है। उसी षोडशी का यह हिन्दी अनुवाद तैयार है। ये कहानियाँ हिन्दी में एकदम नई हैं और पढ़ने योग्य हैं। मूल्य ३२७ पृष्ठ की पोथी का १)

### विचित्रवधूरहस्य ।

बँगला के प्रसिद्ध लेखक श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर महाशय लिखित "बऊठाकुरानीर हाट" नामक बँगला उपन्यास का यह हिन्दी अनुवाद 'विचित्रवधूरहस्य' के नाम से तैयार हो गया। उपन्यास कितना रोचक है, इसकी घटनायें कितनी महत्त्वपूर्ण हैं, उपन्यास का भाव कैसा उत्तम है, पाठकों पर इसकी कथाओं का कैसा प्रभाव पड़ता है इत्यादि बात उपन्यास के पाठकों को स्वयं विदित हो जायँगी। मूल्य ॥)

मिलने का पता— **मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।**

## * * * इंडियन प्रेस, प्रयाग की सर्वोत्तम पुस्तकें * * *

मिस्टर आर० सी० दत्त-लिखित

### महाराष्ट्र-जीवन-प्रभात

का

हिन्दी अनुवाद छप कर तैयार हो गया। इसमें महाराष्ट्रवीर शिवाजी की वीरता-पूर्ण ऐतिहासिक बातें लिखी गई हैं। वीररसपूर्ण उपन्यास है। हिन्दी पढ़ने वालों को एक बार इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य ॥=)

मिस्टर आर० सी० दत्त-लिखित

### राजपूत-जीवन-सन्ध्या।

यह भी अनुवाद तैयार हो गया। इसमें राजपूतों की वीरता कूट कूट कर भरी है। पर, साथ ही राजपूतों के वीरता-पूर्ण जीवन की सन्ध्या के वर्णन को पढ़ कर आपको दो आँसू ज़रूर बहाने होंगे। उपन्यास पढ़ने योग्य है। मूल्य ॥)

### शेखचिल्ली की कहानियाँ।

इस पुस्तक की अँगरेज़ी में हज़ारों कापियाँ बिक चुकी हैं, बँगला में भी ख़ूब बिक रही हैं। लीजिए, अब हिन्दी में भी यह किताब छप कर तैयार हो गई। बड़े मज़े की किताब है। इन कहानियों की प्रशंसा में इतना ही कह देना बहुत होगा कि इन्हें शेख़चिल्ली ने लिखा है। सरस्वती में जो हीरा और लाल की कहानी छपी थी उसे इस किताब की कहानियों के सामने समझिए। मूल्य ॥)

### भारतीय विदुषी।

इस पुस्तक में भारत की कोई ४० प्राचीन विदुषी देवियों के संक्षिप्त जीवन-चरित लिखे गये हैं। इसे देखने से मालूम होगा कि पहले स्त्रियाँ कैसी कैसी विदुषी होती थीं। स्त्रियों को तो यह पुस्तक पढ़नी ही चाहिए, क्योंकि इसमें स्त्री-शिक्षा की अनेक उपयोगी बातें ऐसी लिखी गई हैं कि जिन के पढ़ने से स्त्रियों के हृदय में विद्यानुराग का बीज अङ्कुरित हो जाता है, किन्तु पुरुषों को भी इस पुस्तक में कितनी ही नई बातें मालूम होंगी। मूल्य ।=)

### रॉबिन्सन क्रूसो।

क्रूसो की कहानी बड़ी मनोरञ्जक, बड़ी चित्ताकर्षक और शिक्षादायक है। नवयुवकों के लिए तो यह पुस्तक इतनी उपयोगी है कि जिस का वर्णन नहीं हो सकता। प्रत्येक हिन्दी पढ़े लिखे को यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए। क्रूसो के अदम्य उत्साह, असीम साहस, अद्भुत पराक्रम, घोर परिश्रम और विकट वीरता के वर्णन को पढ़ कर पाठक के हृदय पर ऐसा विचित्र प्रभाव पड़ता है कि जिसका नाम नहीं। कूपमण्डूक की तरह घर पर ही पड़े पड़े सड़ने वाले आलसियों को इसे अवश्य पढ़ कर अपना सुधार करना चाहिए। पुस्तक बड़े काम की है। मूल्य १।)

### क्षय-रोग।

( जनसाधारण की बीमारी तथा उसका इलाज )

(अनुवादक, पण्डित बालकृष्ण शर्मा)

क्षयरोग की भयङ्करता जगत्प्रसिद्ध है। यह बड़ा बुरा संक्रामक रोग है। नहीं मालूम कितने प्राणी प्रतिवर्ष इस रोग-राक्षस के पेट में पड़ कर इस लोक से कूच कर जाते हैं। अमेरिका के बड़े बड़े डाक्टरों और विद्वानों ने एक सभा की थी। उसमें इस रोग से बचने के उपायों पर कितने ही निबन्ध पढ़े गये थे। एक निबन्ध सर्वोत्तम समझा गया। उसी को पारितोषिक भी मिला था। उसी पुस्तक का अनुवाद अब तक कोई २२ भाषाओं में हो चुका है। यह पुस्तक उसी निबन्ध का अनुवाद है। इसमें बताये गये उपायों के द्वारा अब तक लाखों अमेरिकनों की जान बच चुकी है। पुस्तक बड़ी अच्छी है। सब के पढ़ने लायक है। भाषा भी सरल है। मूल्य ।=)

---

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

नई पुस्तक !

# हिन्दी-शेक्सपियर

छः भाग

शेक्सपियर एक ऐसा प्रतिभाशाली कवि हुआ है जिस पर योरप देश के रहने वाली गौराङ्ग जाति को ही नहीं किन्तु संसार भर के मनुष्य मात्र को अभिमान करना चाहिए। असल में आज तक जो कीर्ति शेक्सपियर को प्राप्त हुई है और जितना प्रचार शेक्सपियर की किताबों का संसार में हुआ है उतने यश का प्राप्त करनेवाला कोई नहीं हुआ, और न वैसा किसी की किताब का ही प्रचार हुआ। उसी जगत्प्रतिष्ठित कवि के शेक्सपियर का हिन्दी में अनुवाद किया गया है। हिन्दी सरल और सरस है तथा सब के समझने योग्य है। यह पुस्तक छः भागों में विभाजित है। प्रत्येक भाग का मूल्य ॥) आने है और छःहों भाग एक साथ लेने पर ३) तीन रुपया है। जल्दी मँगाइए।

# श्रीगौरांगजीवनी

मूल्य =) दो आने

चैतन्य महाप्रभु का जन्म बङ्गाल में हुआ। उनका नाम बङ्गाल ही में नहीं किन्तु भारत के कोने कोने में फैला हुआ है। वे वैष्णव धर्म के प्रवर्तक और श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे। उनके जीवन-चरित्र अनेक भाषाओं में छपे हुए हैं। हिन्दी-भाषा में उनके जीवन-चरित की बड़ी ज़रूरत थी। इस छोटी सी पुस्तक में उन्हीं गौराङ्ग महाशय की जीवन-घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन है। पुस्तक साधारणतया मनुष्य मात्र के काम की है, किन्तु वैष्णव धर्मावलम्बियों को तो उसे अवश्य एक बार पढ़ना चाहिए।

नई पुस्तक ! नई पुस्तक

# इन्साफ़-संग्रह

दूसरा भाग।

मुंशी देवीप्रसाद जी मुंसिफ़ की बना 'इन्साफ़-संग्रह, पहला भाग' पुस्तक पाठकों ने होगी। ठीक उसी ढँग पर यह दूसरा भाग भी मुं ने लिखा है। इसमें ३७ न्यायकर्त्ताओं द्वारा गये ७० इन्साफ़ छापे गये हैं। इन्साफ़ पढ़ते तबीयत बहुत ख़ुश होती है। मूल्य केवल छः आने।

सचित्र

# हिन्दीकोविदरत्नमाला

दूसरा भाग

( सम्पादक—बाबू श्यामसुन्दर दास, बी० ए० )

इस भाग में भी पहले भाग की तरह नामी ना चालीस हिन्दी-लेखकों के संक्षिप्त जीवन-चरित छ गये हैं। हिन्दी के धुरन्धर लेखक पण्डित महावी प्रसादजी द्विवेदी और पण्डित माधवराव सप्रे बी० ए० आदि विद्वानों के जीवनचरित पढ़कर प्रत्ये हिन्दी-भाषा-भाषी को लाभ उठाना चाहिए। इ पुस्तक में भी चरितनायकों के ४० हाफ़टोन चि दिये हैं। जिल्द-बँधी हुई पुस्तक का मूल्य केव १॥) रुपया।

बाला-पत्र-कौमुदी

मूल्य =) दो आने

यह बड़े आनन्द की बात है कि भारत वर्ष के सभी प्रान्तों में कन्यापाठशालायें खुल गई हैं और उनमें हज़ारों कन्यायें शिक्षा पा रही हैं। स्त्री-शिक्षा से भारत का सौभाग्य समझना चाहिए। इस छोटी सी पुस्तक में लड़कियों के योग्य अनेक छोटे छोटे पत्र लिखने के नियम और पत्रों के नमूने दिये गये हैं। कन्यापाठशालाओं में पढ़ने वाली कन्याओं के लिए पुस्तक बड़े काम की है। अवश्य मँगाइए।

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# भारतवर्ष के धुरन्धर कवि

( बंगला, राजा कमलानन्द एम० ए० )

इस पुस्तक में आदि-कवि वाल्मीकि मुनि से लेकर माधव कवि तक संस्कृत के २६ धुरंधर कवियों का और चन्द कवि से आरम्भ करके राजा लक्ष्मणसिंह तक हिन्दी के २८ कवियों का संक्षिप्त वर्णन है। कौन कवि किस समय हुआ यह भी इसमें बतलाया गया है। अब तक कवियों के सम्बन्ध में जितनी पुस्तकें लिखी गई हैं उन से इसमें कई तरह की नवीनता है। पुस्तक छोटी होने पर भी बहुत काम की है। मूल्य केवल ।) चार आने।

# बाल-कालिदास

या

कालिदास की कहावतें

यह बालसखा पुस्तकमाला की २४ वीं पुस्तक है। इस पुस्तक में महाकवि कालिदास के सब ग्रन्थों से उनकी चुनी हुई उत्तम कहावतों का संग्रह किया गया है। ऊपर श्लोक दे कर नीचे उनका अर्थ और भावार्थ हिन्दी में किया गया है। कालिदास की कहावतें बड़ी अनमोल रत्न हैं। उन में सामाजिक, नैतिक और प्राकृतिक 'सत्यों' का बड़ी खूबी के साथ वर्णन किया गया है। कालिदास की उक्तियाँ मनुष्य मात्र के काम की हैं। इस पुस्तक की उक्तियाँ बच्चों को याद करा देने से वे चतुर बनेंगे और समय समय पर उन्हें ये काम देती रहेंगी। मूल्य केवल ।)

सचित्र

# देवनागर-वर्णमाला

आठ रङ्गों में छपी हुई—मूल्य केवल ।=)

ऐसी उत्तम किताब हिन्दी में आज तक कहीं नहीं छपी। इसमें प्रायः प्रत्येक अक्षर पर एक एक मनोहर चित्र है। देवनागरी सीखने के लिए बच्चों के बड़े काम की किताब है। बच्चा कैसा भी खिलाड़ी हो पर इस किताब को पाते ही वह खेल भूल कर किताब के सौन्दर्य्य को देखने में लग जायगा और साथ ही अक्षर भी सीखेगा। खेल का खेल और पढ़ने का पढ़ना है। एक बार मँगा कर इसे ज़रूर देखिए।

# सूचना

मेरे ग्रन्थ 'गीताय ईश्वरवाद' को हिन्दी में बाद करने का एकमात्र हक़ किसरौल, मुरादाबाद ज्वालादत्त शर्मा को है। किसी और महाशय के हुई अनुवाद की आज्ञा को मैं इस सूचना द्वारा मंसूख करता हूँ। यदि कोई और मनुष्य उक्त ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद करेगा तो वह हर्जे का देनदार होगा।

१३९ कार्नवालिस स्ट्रीट
कलकत्ता
५ अगस्त १९१० ई०

हीरेन्द्रनाथ दत्त

# संक्षिप्त वाल्मीकीय-रामायणम्

[ संपादक श्री डाक्टर सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ]

आदि-कवि वाल्मीकिमुनिप्रणीत वाल्मीकीय रामायण संस्कृत में बहुत बड़ी पुस्तक है। मूल्य भी उसका अधिक है। सर्वसाधारण उससे लाभ नहीं उठा सकते। इसी से संपादक महाशय ने असली वाल्मीकीय को संक्षिप्त किया है। ऐसा करने से पुस्तक का सिलसिला टूटने नहीं पाया है। यही इसमें बुद्धिमत्ता की गई है। पुस्तक यों तो संस्कृत जानने वाले सर्वसाधारण के काम की है ही, पर कालिज के विद्यार्थियों और संस्कृत की परीक्षा देने वाले विद्यार्थियों के बड़े काम की है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल १) रुपया।

# इन्साफ़-संग्रह—पहला भाग।

पुस्तक ऐतिहासिक है। कल्पित नहीं। श्रीयुक्त मुंशी देवीप्रसाद जी, मुंसिफ़ जोधपुर इसके लेखक हैं। इसमें प्राचीन राजाओं, बादशाहों और सरदारों के द्वारा किये गये अद्भुत न्यायों का संग्रह किया गया है। इसमें ८१ इन्साफ़ों का संग्रह है। एक एक इन्साफ़ में बड़ी बड़ी चतुराई और बुद्धिमत्ता भरी हुई है। पढ़ने लायक चीज़ है। मूल्य ।=)

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## ❊ ❊ ❊ इंडियन प्रेस, प्रयाग, की सर्वोत्तम पुस्तकें ❊ ❊ ❊

रघुनराजवंशावली ।

( [illegible] )

नाट्य-शास्त्र ।

( [illegible] )

# ❀ इंडियन प्रेस, प्रयाग, के रंगीन चित्र ❀

चित्रकला, संगीतविद्या और कविता, इनमें देखा जाय तो
बहुत ही लगाव मिलेगा। जैसे अच्छे कवि की कविता मन को मोह
है, अच्छे गवैये का संगीत हृदय को प्रफुल्लित कर देता है वैसेही च
चित्रकार का बनाया चित्र भी सहृदय को चित्र-लिखित सा बना देता
बड़े बड़े लोगों के चित्रों को भी सदा अपने सामने रखना परम उपक
होता है। ऐसे उत्तम चित्रों के संग्रह से अपने घर को, अपनी बैठक
सजाने की इच्छा किसे न होगी? अच्छे चित्रों को बनानेवाले ही एक
कम मिलते हैं, और अगर एक आध खोज करने से मिला भी तो चि
बनवाने में एक एक चित्र पर हज़ारों की लागत बैठ जाती है। इस कारण
उन को बनवाना और उनसे अपने भवन को सुसज्जित करने की अ
पूर्ण करना हर एक के लिए असंभव है। हमारे यहाँ से प्रकाशित हो
वाली सरस्वती मासिक पत्रिका में जैसे सुन्दर मनोहर चित्र निकलते हैं
सो बतलाने की ज़रूरत नहीं है। हमने उन्हीं चित्रों में से उपयोगी ७
चुने हुए कुछ चित्र (बँधा कर रखने के लायक) बड़े आकार में छपवाये हैं।
चित्र सब नयनमनोहर, आठ आठ दस दस रंगों से सफ़ाई के साथ छपे हैं।
एक बार हाथ में लेकर छोड़ने को जी नहीं चाहता। चित्रों के नाम, नाम
और परिचय नीचे लिखा जाता है। शीघ्रता कीजिए, चित्र थोड़े ही छपे हैं—

## शुक-शूद्रक-परिचय

(१५ रंगों में छपा हुआ)

आकार—२७½" × १७" दाम ३) रु०

संस्कृत कादम्बरी की कथा के आधार पर यह चित्र बना है। महा प्रतापी शूद्रक राजा की सभा सब सभा लगी हुई है। एक परम सुन्दरी चाण्डाल कन्या राजा को अर्पण करने के लिए एक तोते को पिंजरा लेकर आती है। तोते का मनुष्य की वाणी में आशीर्वाद देना देख कर सारी सभा चकित हो गई है। उसी समय का दृश्य इसमें दिखाया गया है।

## शुक-शूद्रक-संवाद

(१५ रंगों में छपा हुआ)

आकार ३१" × १७½" दाम ३) रु०

संस्कृत कादम्बरी की कथा के आधार पर यह चित्र बना है। इस चित्र में राजसभा के बीच का दृश्य बहुत अच्छा करके दिखाया गया है। राजा शूद्रक बैठा है। सभासद बैठे हैं। सभा की शोभा है। चाण्डाल कन्या के हाथ से तोते को ले राजा के आगे अर्पण करने का सुन्दर दृश्य दिखाया गया है।

चित्रों के मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# ❋ इंडियन प्रेस, प्रयाग, के रंगीन चित्र ❋

## भक्ति-पुष्पांजलि

आकार—११½" × १५½" दाम ७)

एक सुन्दरी शिवमन्दिर के द्वार पर पहुँच गई है। सामने ही शिवमूर्ति है। सुन्दरी के साथ एक बालक है और हाथ में पूजा की सामग्री है। इस चित्र में सुन्दरी के मुख पर, इष्टदेव के दर्शन और भक्ति से होने वाला आनन्द, श्रद्धा और सात्त्विकता के भाव बड़ी ख़ूबी से दिखलाये गये हैं।

## चैतन्यदेव

आकार—१०½" × १" दाम ८) मात्र

महाप्रभु चैतन्यदेव बंगाल के एक अनन्य भक्त वैष्णव हो गये हैं। वे कृष्ण का अवतार और वैष्णव धर्म के एक आचार्य माने जाते हैं। वे एक दिन घूमते फिरते जगन्नाथपुरी पहुँचे। वहाँ गरुड़स्तम्भ के नीचे खड़े होकर दर्शन करते करते वे भक्ति के आनन्द में बेसुध होगये। उसी समय के सुन्दर दर्शनीय भाव इस चित्र में बड़ी ख़ूबी के साथ दिखलाये गये हैं।

## बुद्ध-वैराग्य

आकार—१८½" × २२" दाम २) ६०

संसार में अहिंसा-धर्म का प्रचार करने वाले महात्मा बुद्ध का नाम जगत् में प्रसिद्ध है। उन्होंने राज्यसम्पत्ति को लात मार कर वैराग्य ग्रहण कर लिया था। इस चित्र में महात्मा बुद्ध ने अपने राज-चिह्नों को निर्जन में जाकर त्याग दिया है और अपने अनुचर से उन्हें उठाकर घर ले जाने के लिए कह रहे हैं। उस समय के, बुद्ध के मुख पर, वैराग्य और अनुचर के मुख पर आश्चर्य के चिह्न इस चित्र में बड़ी ख़ूबी के साथ दिखलाये गये हैं।

## अहल्या

आकार—११½" × १८½" दाम १) ६०

अहल्या अत्यन्त सुन्दरी थी। यह गौतम की स्त्री थी। इस चित्र में यह दिखाया गया अहल्या वन में फूल चुनने गई है और एक हाथ में लिये वहीं कुछ सोच रही है। सोच रहे देवराज इन्द्र के सौन्दर्य का—उन पर वह प्रकार से मोहित सी होगई है। इसी अवस्था इस चित्र में चतुर चित्रकार ने बड़ी कारीगरी साथ दिखलाया है। चित्र अद्भुत ही दर्श बना है।

## शाहजहाँ की मृत्युशय्या

आकार—१४" × १०" दाम ॥)

शाहजहाँ बादशाह को, उसके कुचक्री बे औरंगज़ेब ने धोखा देकर क़ैद कर लिया था उसकी प्यारी बेटी जहाँनारा भी बाप के पास क़ै की हालत में रहती थी। शाहजहाँ का मृत्युकाल निकट है, जहाँनारा सिर पर हाथ रक्खे हुए चिन्तित हो रही है। उसी समय का हृदय इस चित्र में दिख लाया गया है। शाहजहाँ के मुख पर मृत्युकाल की दशा बड़ी ही ख़ूबी के साथ दिखलाई गई है।

## भारतमाता

आकार—१०½" × ६" दाम ८)

इस चित्र का परिचय देने की अधिक आवश्यकता नहीं। जिसने हमको पैदा किया है, जो हमारा पालन कर रही है, जिसके हम कहलाते हैं, और जो हमारा सर्वस्व है उसी जननी जन्मभूमि भारत-माता का तपस्विनी वेष में यह दर्शनीय चित्र बनाया गया है। प्रत्येक भारतवासी को यह चित्र अपने घर में, अपनी आँखों के आगे रखना चाहिए।

चित्रों के मिलने का पता—**मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।**

# सरस्वती में विज्ञापन

यह तो आपको विदित ही है कि अब सरस्वती का प्रचार भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रान्तों में उत्तरोत्तर अधिकाधिक बढ़ता जाता है। भारतवर्ष का ऐसा कोई प्रतिष्ठित नगर नहीं जहाँ "सरस्वती" के अनेक ग्राहक न हों। यही नहीं, किन्तु लन्दन, अमरीका, अफ्रीका, फ़ीजी द्वीप आदि दूरदेशों में भी सरस्वती के उत्साही ग्राहक बढ़ते जाते हैं। यह हमारा अनुभव ठीक है कि एक एक ग्राहक के पास से सरस्वती ले लेकर पढ़ने वालों की संख्या आठ-आठ, दस-दस, तक पहुँच जाती है। ऐसी दशा में सरस्वती का प्रत्येक विज्ञापन प्रतिमास तीस चालीस हज़ार सभ्य मनुष्यों के दृष्टिगोचर हो जाता है। इसलिए सरस्वती में विज्ञापन छपाने वालों को विशेष लाभ रहता है। सन् १९१३ ईसवी से तो सरस्वती का प्रचार और भी अधिक बढ़ रहा है।

आशा है कि आप भी "सरस्वती" में विज्ञापन छपा कर उससे लाभ उठाने का शीघ्र प्रयत्न करेंगे और बहुत जल्द विज्ञापन भेज कर एक बार अवश्य परीक्षा करके देख लेंगे।

छपाने के नियम ये हैं:—

| | |
|---|---|
| १ पृष्ठ या २ कालम की छपाई | १२) प्रतिमास |
| १ ,, या १ ,, ,, | ७) ,, |
| १ ,, या ½ ,, ,, | ४) ,, |
| १ ,, या ¼ ,, ,, | २॥) ,, |

१—विज्ञापन बिना देरे छपने की सहूलियत नहीं दी जाती।

२—एक कालम या इससे अधिक विज्ञापन छपवाने वाले को सरस्वती बिना मूल्य भेजी जाती है। औरों को नहीं।

३—विज्ञापन की छपाई पेशगी देनी होती।

४—आध भर के विज्ञापन की छपाई एक बार के ४) पृष्ठ करना कम लिया जाता।

५—सरस्वती का वार्षिक मूल्य ६)
नमूने की एक कापी का मूल्य ।)

व्यवहार इस पते से कीजिए.

मैनेजर, सरस्वती,
इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# सरस्वती के नियम।

१—सरस्वती प्रतिमास प्रकाशित होती है।

२—डाकव्यय सहित इसका वार्षिक मूल्य ६) है संख्या का मूल्य ।=) है। बिना अग्रिम मूल्य के पत्रिका भेजी जाती। पुरानी प्रतियाँ सब नहीं मिलतीं। जो भी हैं उनका मूल्य ।) प्रति से कम नहीं लिया जाता।

३—अपना नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ लिख भेजना चाहिए। जिसमें पत्रिका के पहुँचने में गड़बड़ न हो।

४—जिस मास की सरस्वती किसी को न मिले तो उस की के लिए उसी मास के भीतर हमको लिखना चाहिए। अन्यथा बिना बार लिखने से वह अङ्क बिना मूल्य न मिल सकेगा।

५—यदि एक ही दो मास के लिए पता बदल दो तो डाकख़ाने से इसका प्रबन्ध करा लेना चाहिए यदि सदा अपना पत्रिका के लिए बदलवाना हो उसकी सूचना हमें अवश्य देनी चाहिए।

६—सरस्वती की रद्दी लेने वाले सब जगह हैं। हमारे कई बहुधा पत्र आया करते हैं कि अमुक मास की पत्रिका नहीं पहुँची। परन्तु, यहाँ से बार अच्छी तरह जाँच कर भेजी जाती है इससे ग्राहकों को इस विषय में सावधान रहना चाहिए।

७—लेख कविता, समालोचना के लिए पुस्तकें आदि भेजने के पते सम्पादक "सरस्वती" झूसी, इलाहाबाद, के नाम से भेजने चाहिएँ। मूल्य तथा विज्ञापनसम्बन्धी पत्र "मैनेजर सरस्वती इंडियन प्रेस, इलाहाबाद" के पते से आने चाहिएँ। ग्राहक नम्बर लिखना न भूलिएगा।

८—किसी लेख अथवा कविता के प्रकाशित करने या न करने का तथा उसे लौटाने या न लौटाने का निर्णय सम्पादक को है। अतः इस विषय में पत्रव्यवहार करना व्यर्थ है। जो लेख सम्पादक लौटाना चाहे उसे डाक का पर्याप्त मूल्य भेजने से लौटाए जाते। बिना इस प्रबन्ध के न लौटाया जाना।

९—[illegible]

१०—[illegible]

११—[illegible]

१२—[illegible]

जिस महायुद्धने संसारमें हलचल मचा दी है, जिस महायुद्धने दुनियाके सारे कारबार चौपट कर दि
महायुद्धके परिणामपर यूरोपके बड़े बड़े प्रतिभाशाली राष्ट्रोंका जीवन-मरण निर्भर करता है, जिस महायु
कोटि सेना कटने मरनेको तय्यार खड़ी है, उसी "महायुद्धका सचित्र इतिहास" हिन्दीमें छपकर तय्या
है और हाथोंहाथ धड़ाधड़ बिक रहा है। इसके पढ़नेसे आपको युद्धसम्बन्धी ऐसी ऐसी गुप्त और रहस्यम
मालूम होंगी, जो आपने कभी देखी-सुनी न होंगी। इसके प्रत्येक भागमें युद्ध-सम्बन्धी बड़े बड़े १०—४०
युद्ध-स्थानोंका पूरा हाल बतानेके लिये हिन्दीमें छपा हुआ "यूरोप"का एक बड़ा ही सुन्दर रङ्गीन मानचित्र
भी दिया है। यदि युद्धका पूरा पूरा हाल, भयङ्कर लड़ाइयोंका सचा, अनूठा और गुप्त समाचार जानने
हो, तो इसे शीघ्र मंगाइये। मूल्य पहले भागका सिर्फ ॥) और दूसरे भागका ॥), पहिले भागमें युद्धके बड़े
और दूसरे भागमें बड़े बड़े ४७ चित्र दिये गये हैं।

अर्थात्

## मिस्ट्रीज़ आफ़ दी कोर्ट आफ़ लण्डन।

जिस उपन्यासके लिये वर्षोंसे लोग लालायित थे, जिस उपन्यासका नाम सुनते ही लोग फड़क उठते
जिस उपन्यासकी विचित्रता, मधुरता और अनूठेपनकी धूम संसार भरमें मची हुई थी, जिस उपन्यासका अ
बङ्गला, गुजराती, मराठी और उर्दू आदि भारतकी भिन्न भिन्न भाषाओंमें हाथोंहाथ बिक रहा था, जिस उपन्या
हिन्दी-भाषान्तर न होनेके कारण हिन्दी-प्रेमी मात्र उसके आनन्दसे अबतक वञ्चित थे, वही उपन्यास हिन्दीकी
चुहाती हुई भाषामें नये ठाट-बाट और अनूठे रङ्गढङ्गसे चित्रों सहित छपकर तय्यार हो गया है, और धड़ाधड़ बि
रहा है। "लण्डन-रहस्य" उपन्यास नहीं, बल्कि—

## उपन्यास-सम्राट

है, क्योंकि इसमें हजारों आश्चर्य्यजनक, कौतूहलवर्धक और हृदयग्राही घटनाओंका ऐसा सुन्दर वर्णन आया है
एकबार पुस्तक उठा लेनेपर फिर छोड़नेको इच्छा ही नहीं होती। अधिक तारीफ करना व्यर्थ है, क्योंकि य
इसकी पूरी तारीफ की जाय, तो सिर्फ तारीफ होसे "अलिफ़लैला" या "फ़िसाना आज़ाद" जैसा बड़ा पोथा तय्या
हो जाय। अगर आपको उपन्यास पढ़नेका कुछ भी शोक हो, तो सब उपन्यास छोड़कर पहले इसे पढ़िये। इस
विलायती सभ्यताका ऐसा सुन्दर खाका खींचा गया है, कि एकबार सारा "यूरोप" बायस्कोप की भांति आंखों
सामने नाचने लगता है। दाम १८ भागका, जिसमें लगभग १०० चित्र हैं, ८) और १ भागका ॥) डाक खर्च अलग

पता—आर० एल० वर्म्मन एण्ड को०, ४०१।२ अपर चीतपुर रोड, कलकत्ता।

नई पुस्तकें ! नई पुस्तकें !!

# रामचरितमानस

पेपरहित असली रामायण

दुबारा छप कर तैयार होगया ।

आज तक भारतवर्ष में जितनी रामायण छपीं और आज कल छप कर बिक रही हैं वे सब नक़ली हैं, क्योंकि उनमें कितने ही दोहे-चौपाइयां लोगों ने पीछे से लिखकर मिला दिये हैं। असली रामायण केवल इंडियन प्रेस की छपी रामचरित-मानस है। क्योंकि इसका पाठ गुसाईं जी के हाथ की लिखी पोथी से मिला कर शोधा गया है। और भी कितनी ही पुरानी लिखित पुस्तकों से पाठ मिला जुला कर इसमें से कूड़ा-करकट अलग निकाल दिया गया है। यही विशुद्ध रामायण हमने बड़े सुन्दर और स्पष्ट अक्षरों में, बढ़िया काग़ज पर, छापी है। जिल्द भी बँधी हुई है। मूल्य केवल २) दो रुपये।

सचित्र

## अद्भुत कथा

यह पुस्तक बाबू श्यामाचरण दे-प्रणीत बँगला के 'बड़े २ उपकथा' नामक पुस्तक का अनुवाद है। इसमें ११ कहानियां हैं। बालक-बालिका एवं सभी मनुष्य स्वभावतः क़िस्से-कहानी सुनने और पढ़ने के अनुरागी होते हैं। इस पुस्तक में ऐसी विचित्र विचित्र हृदयाकर्षक और मनोरञ्जक कहानियां हैं जिन्हें सब लोग बड़े चाव से सुनें और पढ़ेंगे। साथ ही साथ उन्हें अनेक तरह की शिक्षा भी मिलेगी। इस में कहानियों से सम्बन्ध रखने वाले पांच चित्र भी दिये गये हैं। मूल्य ।।।) बारह आने।

## तारा

यह बहुत सामाजिक है। यह बढ़िया टाईप में छापा गया है। २५० पेज की पोथी का मूल्य केवल ।।।=)

नई पुस्तकें ! नई पुस्तकें !!

## अयोध्या-काण्ड

( सटीक )

( अनुवादक—बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए० )

यों तो रामचरितमानस को हिन्दूमात्र धर्मग्रन्थ समझते एवं उसका आदर करते हैं। उसमें से अयोध्या-काण्ड की प्रशंसा सबसे आं है। इसी से हमने इसे उसी असली रामचरित-मा से अलग करके मूल को बड़े टाईप में और उस अनुवाद छोटे टाईप में छाप कर प्रकाशित किया। अनुवाद के विषय में अधिक कहने की ज़रूरत नह क्योंकि बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए० को हिन्द ससार अच्छी तरह जानता है। पुस्तक बड़े साई में है और उसके पेज तीन सौ के क़रीब हैं; तो भ सर्व-साधारण के सुभीते के लिए मूल्य सिर्फ़ १।)

## बहराम-बहरोज़

यह पुस्तक मुंशी देवीप्रसाद जी, मुंसिफ़ क लिखी हुई है। उन्हों ने इसे तयारीख़ रोज़ेतुलसफ़ से उर्दू भाषा में लिखा था, उसी का यह हिन्दी-अनु वाद है। उर्दू पुस्तक को गू० पी० के विद्याविभाग ने पसन्द किया। इसलिए यह कई बार छापी गई। अनेक विद्याविभागों में उसका प्रचार रहा। बहराम और बहरोज दो भाई थे। उन्हीं का इसमें वर्णन किस्से रूप में है। तरह क़िस्सों में यह पूरी हुई है। पुस्तक बड़ी मनोरंजक और दिलचस्प है। लड़कों के बड़े काम की है। मूल्य ।=) तीन आने।

## तरलतरंग

इंडियन प्रेस, प्रयाग, से जो इतिहासमाला निकल रही है उसके सहायक सम्पादक पण्डित सोमेश्वरदत्त शुक्ल, बी० ए० को पाठक जानते ही होंगे। उन्हीं की लिखी हुई यह 'तरलतरंग' पुस्तक इसी रूप में है। इसमें—भूपं शिवक का प्रथम खण्ड—एक बढ़िया उपन्यास है। और—मार्कण्डेय चण्डिका नाटक तथा चन्द्रहास नाटक—ये दो नाटक हैं। यह पुस्तक विशेष मनोरंजन ही की सामग्री नहीं किन्तु शिक्षाप्रद और उपदेशप्रद भी है। मूल्य ।=) दस आने।

पुस्तक मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

जिस महायुद्धने संसारमें प्रलय मचा दी है, जिस महायुद्धने दुनियाके सारे कारबार गोपट कर दिये, महायुद्धके परिणामस्वरूप यूरोपके बड़े बड़े प्रतिभाशाली राष्ट्रोंका ओज-सत्व निर्मल करता है, जिस महायुद्ध करोड़ों प्राणी कटने मरनेको तय्यार खड़ी है, उसी "महायुद्धका संक्षिप्त इतिहास" हिन्दीमें छपकर तय्यार है और घर घर पहुंचने लग रहा है। इसके पढ़नेसे आपको युद्धसम्बन्धी ऐसी ऐसी गुप्त और रहस्यमय मालूम होंगी, जो आपने कभी ऐसी सुनी न होंगी। इसके प्रत्येक भागमें युद्ध-सम्बन्धी बड़े बड़े १०—३० चि युद्ध-प्रेमियोंका पूरा ज्ञान बढ़ानेके लिये हिन्दीमें छपा हुआ "यूरोप"का एक बड़ा ही सुन्दर रङ्गीन मानचित्र (न भी दिया है। यदि युद्धका पूरा पूरा हाल, भयङ्कर लड़ाइयोंका सचा, अनूठा और गुप्त समाचार जाननेकी हो, तो यही श्रेष्ठ संगाइये। मूल्य पहले भागका सिर्फ ॥) दूसरे भागका ॥), पहिले भागमें युद्धके बड़े और दूसरे भागमें बड़े बड़े ४७ चित्र दिये गये हैं।

अर्थात्

## मिस्ट्रीज़ आफ़ दी कोर्ट आफ़ लण्डन।

जिस उपन्यासके लिये सभी संसार आतुरतासे थे, जिस उपन्यासका नाम सुनते ही लोग फड़क उठते जिस उपन्यासकी विचित्रता, अद्भुतता और अनूठेपनकी धूम संसार भरमें मची हुई थी, जिस उपन्यासका बङ्गला, गुजराती, मराठी और उर्दू आदि भारतकी भिन्न भिन्न भाषाओंमें बराबर विक्री हो रहा था, जिस म हिन्दी-भाषान्तर न होनेके कारण हिन्दी-प्रेमी लोग उसके आनन्दसे अबतक वञ्चित थे, वही उपन्यास पुकारती हुई भाषामें नये ढङ्ग-ढाङ्ग और अनूठे रङ्गढङ्गसे चित्रों सहित छपकर तय्यार हो गया है, रहा है। "छद्म-रहस्य" उपन्यास नहीं, बल्कि—

## उपन्यास-सम्राट

है, क्योंकि इसमें बजारी आश्चर्यजनक, कौतूहलवर्धक और अद्भुताओं घटनाओंका ऐसा सुन्दर एकबार पढ़ना शुरू करने पर फिर छोड़नेको इच्छा ही नहीं होती। अधिक तारीफ करना इसकी पूरी तारीफ को जाय, तो सिर्फ तारीफ होगी "अलिफ़लैला" या "क़िस्सा आज़ाद" की जाय। अगर आपको उपन्यास पढ़नेका कुछ भी शौक है, तो सब उपन्यास छोड़कर इसी लेखनीकी सामर्थ्यका ऐसा सुन्दर खाका खींचा गया है, कि एकबार सारा "यूरोप" म सामने आने लगता है। दाम १८ भागका, जिसमें लगभग १०० चित्र हैं, ८) और

पता—आर० एस० वर्म्मन एण्ड को०, ४०।२ अपर

SARASVATI—Reg. No. A248

भाग १६, खण्ड २ ] दिसम्बर, १९१५ [ संख्या ६, पूर्ण संख्या १९२

वार्षिक मूल्य ४) सम्पादक—[illegible] [illegible]

इंडियन प्रेस, प्रयाग, में [illegible] द्वारा प्रकाशित।

## महाराजा की राय।

महाराजा दलगञ्जनसिंह देव बहादुर फ़ुरुटरी चीफ़ आफ़ पटना स्टेट बोलांगिर, ज़िला सम्बलपुर से लिखते हैं—

प्रियवर! आपकी भेजी हुई खाँसी की दवा के लिये कृतज्ञ हूँ। इस दवा से हमारी खाँसी बिलकुल जाती रही। मैंने इसके कुल सात ही ख़ुराक पीये, अधिक पीने की दरकार न रही। खाँसी मुझे कई महीने से सताती रहती थी; इसलिये पुनः आपको धन्यवाद देता हूँ।

## महाराजकुमार की राय।

महाराजकुमार एकदेश्वरसिंह, शङ्कर बोलांगिर से लिखते हैं—

यह दूसरा मोक़ा है; आपकी दाद की मलहम जादू सा असर दिखाया, जिससे मैंने हर वक़ तकलीफ़ से नजात पाई। मैं आपका दिल से मश कूर हूँ।

## कफ वो खाँसी की दवा

मोल—बड़ी शीशी १) छोटी शीशी ॥)
डा० म० ।=) वी ।-) आने।

## दाद की मलहम।

मोल—।) चार आने डिबिया १ से ६
म० ।-, १२ डिबिया तक ।=)

दवा सब जगह बिकती है। नक़ली दवा से सावधान!

जे० एल० सेन एण्ड कम्पनी केमिस्ट्स, ३२ कलूटोला स्ट्रीट, कलकत्ता।



पाँच वर्ष से बराबर स्त्री-जाति की सेवा करनेवाली हिन्दी-भाषा में स्त्री-शिक्षा की सबसे अच्छी, सस्ती और अनेक चित्रों से विभूषित मासिक पत्रिका

वार्षिक मूल्य १॥) रुपया **गृहलक्ष्मी** प्रति मास १० पृष्ठ रहते हैं

विशेष प्रशंसा न कर हम यही अनुरोध करते हैं कि मैनेजर, गृहलक्ष्मी, प्रयाग, से नमूना मँगा देखिए

गृहलक्ष्मी के ग्राहकों को नीचे लिखी स्त्री-शिक्षा-सम्बन्धी उपयोगी पुस्तकें इतनी किफ़ायत से मिलती हैं—

| पुस्तक का नाम | | मूल्य | | गृहलक्ष्मी के ग्राहकों से |
|---|---|---|---|---|
| गृहिणी | ... | ॥) | ... | ।=) |
| छोटी बहू | ... | ॥) | ... | ।=) |
| वनिता-बुद्धि-विलास | | १) | ... | ॥=) |
| लक्ष्मी बहू | ... | ।=) | .. | ।)॥ |
| प्रेमलता | ... | ।=) | ... | ।)॥ |
| आदर्श बहू और भाई-बहिन | | ।=) | ... | =)॥ |
| कन्याकौमुदी | | ।) | ... | ॥) |
| सती लक्ष्मी | | ॥) | ... | ।=) |

मैनेजर, गृहलक्ष्मी, इलाहाबाद।



नई पुस्तकें! नई पुस्तकें!

### विनोद-वैचित्र्य

इंडियन प्रेस, प्रयाग से निकलने वाली इतिहास-माला के उप-सम्पादक पण्डित सोमेश्वरदत्त शुक्ल, बी० ए० को हिन्दी-भाषा-भाषी भले प्रकार जानते हैं। यह पुस्तक उक्त पण्डित जी की लिखी हुई है। २१ विषयों पर बढ़िया बढ़िया लेख लिख कर उन्होंने इसे २४४ पेज में सजिल्द तैयार किया है। मूल्य ।) एक रुपया।

### प्रेम

यह पुस्तक कविता में है। पण्डित मदन त्रिवेदी, बी० ए० गाजीपुरी को हिन्दी-संसार अच्छी तरह जानता है। उन्होंने पाँच सौ पद्यों में एक प्रेम-कहानी लिख कर इसकी रचना की है। मूल्य ।) चार आने।

पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

SARASVATI—Reg. No. A248

भाग १६, खण्ड २ ] दिसम्बर, १९१५ [ संख्या ६, पूर्ण संख्या १९२

# चंद्रमुखीकरण

यह दवा विलायती .खुशबूदार फूलों की रूह है, इसे विलायत के एक मशहूर डाक्टर ने बनाकर अभी अभी रवाना की है। सात दिन बदन और चेहरे पर मल कर न्हाने से, स्याह रंगत भी गुलाब के फूल की भाँति सुर्ख व सफ़ेद, मक्खन की माफ़िक मुलायम हो जाती है। जिस्म से .खुशबू की प्यारी २ लहर निकलने लगती हैं, सीतला माता के दाग, आँखों और गालों के स्याह दाग, झाँई छोप झुर्रियाँ मुहासे आदि को मिटा कर ऐसी .खूबसूरती आ जाती है कि चेहरा चाँद की माफ़िक चमकने लगता है। तारीफ़ यह है कि जो रंगत और .खूबसूरती इससे पैदा होती है हमेशा क़ायम रहती है क्योंकि यह वह पौडर नहीं है जिसे बाज़ारी मैरतें लगाकर घड़ी दो घड़ी को सफ़ेद चमड़ी कर लेती हैं। अपनी प्राणप्यारी को चन्द्र-मुखी बनाना है तो इसे अवश्य मँगाइये। क़ीमत फ़ी बोतल १॥) तीन बोतल एक साथ लेने से पारसल ख़र्चा माफ़।

मिलने का पता—

रमेशचंद्र ऐण्ड को०,

स्वामीघाट ( बी मांच ) मथुरा।

सुनिए! सुनिए!!

दो रुपये में तीन रत्न

# हीरा ! मोती ! पन्ना

देर मत कीजिये झटपट पं० रमाकान्त राजवैद्य कटरा, प्रयाग के बनाये हुए र मँगा कर परीक्षा कीजिये।

१—यदि आपके सिर में दर्द हो, सिर हो, मस्तिष्क की गरमी और कमज़ोरी और जब किसी तेल से भी फ़ायदा न हो तो झिये कि सिर्फ़ व्यासजी का बनाया हुआ सागर तैल" ही इसकी अक़सीर दवा है।

यदि अधिक पढ़ने में अधिक मानसिक प से थक जाते हों और परीक्षा में पास हुआ हों तो हिमसागर तैल रोज़ लगायें इससे म ठण्ढा रहेगा। घंटों में समझनेवाली बातें मिनट समझ सकोगे। दाम ॥) शीशी।

२—पौष्टिक चूर्ण—शीत ऋतु के लिए अ योगी। दाम १) डिब्बा।

३—यदि आपको मन्दाग्नि हो, भूख न ल हो, भोजन के बाद वायु से पेट फूलता हो, मचलाता हो, कब्ज़ रहता हो तो "पीयूष व अथवा पाचक बटी मँगा कर सेवन कीजिये। डिब्बी जिस में ५० गोली रहती हैं। मूल्य ॥)

दूसरी दवाओं के लिए हमारा बड़ा सूची मँगवाकर देखिये।

दवा मंगाने का पता—

पं० रमाकान्त व्यास, राजवैद्य

कटरा—इलाहाबाद

छोटे बच्चों के लिए

# डोंगरे का

## बालामृत.

शीशी का दाम १० आना

डा० म० ४ आना

### प्रशंसा-पत्र

मि० माणकलाल भाईशंकर, सनवार के महाराजा साहेब के गार्डियन लिखते हैं कि:—

"हमारा लड़का इतना दुबला हो गया था कि उसके जीने की भी आशा हमने छोड़ दी थी लेकिन, डोंगरे का बालामृत पीने से यह लड़का पुष्ट हो गया है।"

मि० करीमभहमद, एम० ए० एल्एल० बी० हेड मास्टर जूनागढ हाई स्कूल लिखते हैं कि:—

"हमारे घर में बच्चों के वास्ते डोंगरे का बालामृत हमेशा दिया जाता है. इस बालामृत में 'बालामृत'—'बच्चे का अमृत'—यह नाम बराबर सार्थ किया है।"

पता—के० टी० डोंगरे कं०, गिरगाँव, मुम्बई।

जो साहब मफ्त लेना .खुश हो जाइये

मुफ़्त लुटाते हैं

मुफ़्त लुटाते हैं

.खुशबूदार रमेशसाबुन एक वैज्ञानिक रीति से बनाया जाता है जो सिर्फ़ ३-४ मिनट जलन या तकलाफ़ के बालों को उड़ाकर जिल्द को मुलायम और ऐसा चमकदार कर देता है मा यहाँ कभी थे ही नहीं। रमेशसाबुन दाद, खाज, और ज़हरीले जानवरों के विष को भी बात की ब देता है इसी सबब रमेशसाबुन के हज़ारों बक्स बिक रहे हैं। रमेश साबुन बड़े बड़े राजे महा साहूकारों के मकान तक आदर पा चुका है। तीन टिकिया मय .खूबसूरत बक्स ॥) बार वी० पी० खरचा ।-) लेकिन जो साहब चार बक्स क़ीमती ३) तीन रुपया एक साथ ख़रीदेंगे उ मेज पर रखने की निहायत मज़बूत .खूबसूरत पायेदार फैसनेबिल घड़ी मुफ़्त नज़र करेंगे। ख़रचा ॥-)

पता—एल० आर० गुप्ता
(बी ब्रांच) स्वामीघाट.

THE GENUINE YAKUTI

# YAKUTONE

A powerful APHRODISIAC and most valuable in NEURASTHENIA. No *Pathez* necessary.

Price—Rs. 10 for a tin of 50 pills.

The Manager, "YAKUTONE" Depot.
Kathiawar Camp RAJKOT

## सितार-शिक्षक

यदि आप सितार बजाना, स्वर व ताल सहित, सीखना चाहते हैं तो इस पुस्तक को मँगा कर अव- श्य लाभ उठाइये। इस में गतों व गानों को ताल सहित बजाना, विस्तारपूर्वक बतलाया गया है। इसके द्वारा कुछ रागों का बोध भी हो सकता है जो हारमोनियम जानते हैं वे भी लाभ उठा सकते हैं। पृष्ठ १३८ मूल्य मात्र ।-)

पता:—युगलकिशोर मिश्र कालपी यू० पी० (बिना आर्डर)

FOR GOOD PROSPECTS

# LEARN ACCOUNTAI AND SHORT HAN

## AT HOME

QUALIFICATION NO REQUIRED

APPLY FOR PROSPECTUS

## C. C. EDUCATION "S

POONA CITY

# निःसन्देह ऐसी औषधि सब को पास रखनी चाहिये

एक ही औषधि मात्रा २-४ बूंद और न केवल लगभग सब रोगों का जो घरों में बहुधा बूढ़ों, बच्चों, जवानों, स्त्री वा पुरुषों को होते रहते हैं, हरमी इलाज है, बल्कि पशु-रोगों में भी गुणकारी है ॥

हर जेब, हर घर में, हर ऋतु में मौजूद रहनी चाहिये,

## अमृतधारा

अपने प्रकार का दुनिया भर में नवीन आविष्कार है, जिसने एक बार आजमाया, सदा दास बनाया। ऐसी दुर्लभ चीज सैकड़ों के खर्च से इस को कौन न अपना सकता है।

मूल्य २॥) आधी शीशी १॥) मसूल अलग है

## २० हज़ार प्रशंसापत्र मौजूद

सविस्तर वृत्तान्त के वास्ते "अमृत" पुस्तक मुफ्त मँगावें। दो तीन नीचे पढ़िये:—

### मिसिज़ एच, पेटरसन साकिन अमेरिका से लिखती हैं:—

"अमृतधारा को मैं ने कुटुम्ब में सेवन करा कर अन्तःकरण से अनुमोदन करती हूँ कि जिन रोगों वास्ते लिखा है, यह लाभदायक प्रमाणित हुई है"

### श्रीमहात्मा मुन्शीरामजी गुरुकुल कांगड़ी से लिखते हैं:—

"प्रिय महाशय पं० ठाकुरदत्तजी, नमस्ते।

२९ नवम्बर की रात को मेरे पेट में दर्द हुआ ३० नवम्बर की दोपहर १ बजे तक होता रहा, तब से लेकर "अमृतधारा" पी, इससे कुछ दर्द अलग, दूसरी बार पीने से बिल्कुल दूर होगया"।

### श्रीस्वामी निरञ्जनदेवजी सरस्वती महोपदेशक सभा लिखते हैं:—

[illegible]

लिखते हैं—

मैनेजर—"अमृतधारा" [illegible] "अमृतधारा" [illegible], "अमृतधारा" [illegible] "अमृतधारा" डाकखाना, लाहौर।

एक ही तार के वास्ते इतना पता काफी है— अमृतधारा [illegible] लाहौर।

# विज्ञापन

भजन, साखी, उपदेश चौबीस महात्माओं के देश देशान्तर से दुर्लभ लिपियों की नक़ल करा कर अलग अलग जीवन-चरित्र और टिप्पनी सहित छापे गये हैं—कबीर साहिब, तुलसी साहिब (हाथरसवाले) दादू दयाल, पलटू साहिब, जगजीवन साहिब, चरनदासजी, गरीबदासजी, रैदासजी, दरिया साहिब, मीरा बाई, सहजो बाई, इत्यादि।

एक संग्रह साखियों का और दूसरा शब्दों का छापा गया है। जिस में ऊपर लिखे हुए महात्माओं के थोड़े थोड़े भजन और साखियों के सिवाय सूरदासजी, गुसाईं तुलसीदासजी, काष्ठजिह्वा स्वामी आदि आठ महात्माओं की चुनी हुई बानी संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित छपी है।

जो रसिक जन चाहें पूरी फ़िहरिस्त बेलवेडियर प्रेस इलाहाबाद के मैनेजर को लिख कर मँगवा लें॥

# बड़े दिन का उपहार।

और एक महीने तक आधा दाम और तबला उपहार।

हाथ और पैर से बजाने का बाजा। पसन्द न होने से दाम वापस।

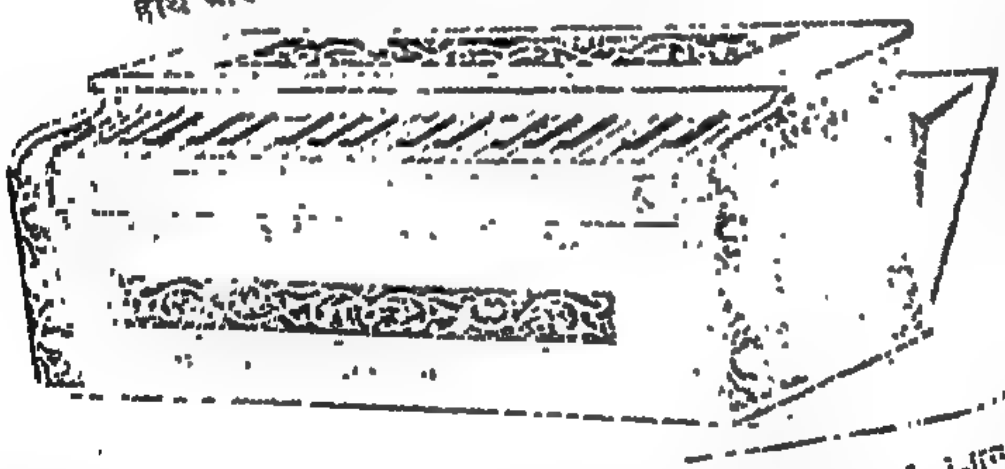

यदि सुमिष्ट सु
वाला और मज़
हारमोनियम खरी
ना चाहो, यदि
आधे दाममें उत्कृष्ट
इनामकी घड़ी सह
"हाथ और पैर से"
बजाने का बाजा
चाहो, यदि बाज़ार
की अपेक्षा सबसे

अच्छा बाजा ख़रीदना चाहो, यदि एक ही बाजा चार गुने दाम देना नापसन्द
पनों के आडम्बर को न भूल कर हमारा सुवर्णपदकप्राप्त आदि प्रशंसा
ख़रीदिए। आपका धन सफल होगा। इसे ख़रीदने से किसी प्रकार ठग जाने की सम्भावना नहीं। सिङ्गलरे
असली दाम ३८) ४०) ५०) अभी १९) २०) २५) डबल रीड असली दाम ६५) ७०) ८०) और ९
अभी ३२॥) ३५) ४०) और ४५) हिन्दी हारमोनियम शिक्षा पुस्तक मू० १) रु० आर्डर के साथ ५)
पेशगी भेजकर नाम, गाँव, पो० ज़िo रेलवे स्टेशन इत्यादि साफ़ साफ़ लिखिये। हर एक डबल बाजे
साथ एक तबला और डुग्गी और सिंगल बाजा के साथ एक घड़ी उपहार दी जायगी।

पता—नेशनल हारमोनियम कम्पनी, पो० आ० शिमला (S) कलकत्ता

नई पुस्तक !

# वन-कुसुम

इस छोटी सी पुस्तक में छः कहानियाँ छापी गई हैं। कहानियाँ बड़ी रोचक हैं। कोई कोई कहानी तो ऐसी है कि पढ़ते समय हँसी आये बिना नहीं रहती। मूल्य केवल चार आने है।

# सदुपदेश-संग्रह

मुंशी देवीप्रसाद साहब, मुंसिफ़, जोधपुर ने उर्दू भाषा में एक पुस्तक नसीहतनामा बनाया था। उसकी कुद्र पञ्जाब और बराड के विद्या-विभाग में हुई। वह कई बार छापा गया। उसी नसीहतनामा का यह हिन्दी अनुवाद है। सब देशों के ऋषियों, और महात्माओं ने अपने रचित ग्रन्थों में जो उपदेश लिखे हैं उन्हीं में से छांट छांट कर इस छोटी सी किताब की रचना की गई है। शेखसादी का कथन है कि 'अगर भीत पर भी कोई उपदेशात्मक बात लिखा हो तो मनुष्य को चाहिए कि उसे अपने ध्यान में धर ले'। यह बिलकुल ठीक है। बिना उपदेश के मनुष्य का आत्मा पवित्र और बलिष्ठ नहीं हो सकता।

इस पुस्तक में चार अध्याय हैं। उनमें २४१ उपदेश हैं। उपदेश सब तरह के मनुष्यों के लिए हैं। इसे सभी सज्जन, धर्मात्मा, परोपकारी और चतुर बना सकते हैं। मूल्य केवल ।) चार आने।

## टाम काका की कुटिया

हमारे यहां से हिन्दी-भाषा में बहुत शीघ्र प्रकाशित होगी। यह बहुत रोचक उपन्यास है। अँगरेज़ी में यह पुस्तक बहुत ही विख्यात है। भारतीय भाषाओं में भी इसके कई अनुवादों के कई संस्करण छप चुके हैं।

पते का पता—

मैनेजर,

नई पुस्तक !!

# श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण—पूर्वार्द्ध

(हिन्दी-भाषानुवाद)

सरस्वती के समान ६०० पृष्ठ, सजिल्द—मूल्य केवल २।

आदि-कवि वाल्मीकि मुनि-प्रणीत रामायण संस्कृत में है। उसके हिन्दी-भाषानुवाद भी अनेक छप चुके हैं। पर यह अनुवाद अपने ढँग का बिलकुल नया है। इसमें अक्षरशः अनुवाद है। भाषा सरल और सरस है। हिन्दू मात्र रामायण को धर्मपुस्तक मानते हैं। असल में यह पुस्तक ऐसी ही है। इसके पढ़ने पढ़ाने वालों को सब तरह का ज्ञान प्राप्त होता है और आत्मा बलिष्ठ बनता है। इस पूर्वार्द्ध में आदि-काण्ड से लेकर सुन्दर-काण्ड तक—पाँच काण्डों का अनुवाद है। बाक़ी काण्ड उत्तरार्द्ध में रहेंगे। उत्तरार्द्ध छप रहा है; वह जल्दी छप कर प्रकाशित होगा। जल्दी मँगाइए।

मिलने का पता—मैनेजर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

# बड़े दिन का उपहार

## केवल एक महीने के लिये।

पसन्द न होने से मूल्य वापस।

हमारे नये चालान की रेलवे रेगुलेटर वाच, देखने में सुन्दर, मज़बूत, और जंटिलमैनों के लिए बड़ी ही उपयुक्त है। मूल्य ७), अभी आधा ३॥); महारानी वाच, असली दाम ११) रु० अभी ५॥); कटरोज़ी वाच (इसमें एक दफ़े चाबी की) असली दाम १८) अभी ९), सोने की छोटे साइज़ की असली दा० ३२) अभी १६), कलाई में बांधने की घड़ी चमड़े सहित अ० दा० १०) अभी ५), हर एक घड़ी के साथ एक चेन और ६ घड़ी एक साथ लेने से एक घड़ी इनाम दी जाती है।

पता—कर्म्पीटीशन वाच कम्पनी

# खालिस कस्तूरी

२५) और ३५), पवित्र केसर १॥), शुद्ध शिला-जीत ॥) और १) तोला, अंगूरी हींग ४), सुगन्धित ज़ीरा २) कमलगट्टा १), मुरब्बा बादाम १) सेर, चादर पश्मीना २५) से ३५), अलवान पश्मीना ३०) से ४०), दुपट्टा पश्मीना (कामदार) २५) से ३५), (सादा) १५) से २०), लोई ७) से १२), पट्टू ८) से १२), बड़ी सूची मुफ़्त।

काश्मीर स्टोर्स, श्रीनगर नं० ४६

# शीघ्रता कीजियेगा ?

—:o:—

समय बहुत थोड़ा शेष रह गया है।

पूर्व प्रतिज्ञानुसार पांच वर्ष व्यतीत हो चुकने के कारण ( परमोपयोगी ८ पर्चे ) अष्टसिद्धि का मूल्य सन् १९१६ ई० के आरम्भ से दूना हो जायगा ता० ३१ दिसम्बर तक ही ॥=) दश आना मनी-आर्डर द्वारा अग्रिम भेजने वाले ग्राहक अष्टसिद्धि पा सकेंगे पश्चात १=) भेजने पड़ेंगे। इस सुअवसर को न चूकना चाहिये।

पता—हितैषी कार्यालय—आगरा

AGRA C.

बनारस के प्रसिद्ध डाक्टर गणेशप्रसाद भार्गव का बनाया हुआ

दाम बड़ी बोतल २) डाक महसूल ॥=) **नमक सुलेमानी** दाम फ़ी शीशी १) महसूल डाक ।)

यह नमक सुलेमानी पाचन शक्ति को बढ़ाता है और उसके सब विकारों को नाश कर देता है। इसके सेवन से भूख बढ़ती है और भोजन अच्छी तरह से पचता है, नया और साफ़ ख़ून मामूल से अधिक पैदा होता है, जिससे बल बढ़ता है।

यह नमक सुलेमानी, हैज़ा, बदहज़मी, पेट का अफ़ार, खट्टी या धुएँधी डकारों का आना, पेट का दर्द, पेचिश बादी का दर्द, बवासीर, कब्ज़, भूख की कमी में तुरंत अपना गुण दिखाता है, खांसी-दमा, गठिया, और अधिक पेशाब आने के लिये भी बड़ा गुणदायक है। इसके लगातार सेवन से स्त्रियों के मासिक के सब विकार दूर हो जाते हैं:—

बिच्छू या भिड़ के काटे हुए या जहाँ कहीं सूजन हो या फोड़ा उठता हो तो इस नमक सुलेमानी के मल देने से तकलीफ़ तुरंत जाती रहती है। जंत्री १९१६ जिस में दवा की पूरी सूची है ख़त आने पर भेजी जाती है।

**सुरती का तेल**—दाम फ़ी शीशी ॥) महसूल डाक ।)

यह तेल हर क़िस्म के दर्द, गठिया, वायु और सरदी के विकार और सूजन, फ़ालिज, लक़वा, चोट, मोच, वग़ैरः की तकलीफ़ को फ़ौरन रफ़ा करता है।

प्रशंसापत्र और दवाओं की सूची, पत्र आने पर भेजी जाती है।

मिलने का पता:—नौनिहालसिंह भार्गव मैनेजर कारख़ाना नमक सुलेमानी गायघाट, बनारस सिटी।

"श्री गिरमल-शारदा-सदन" बीकानेर

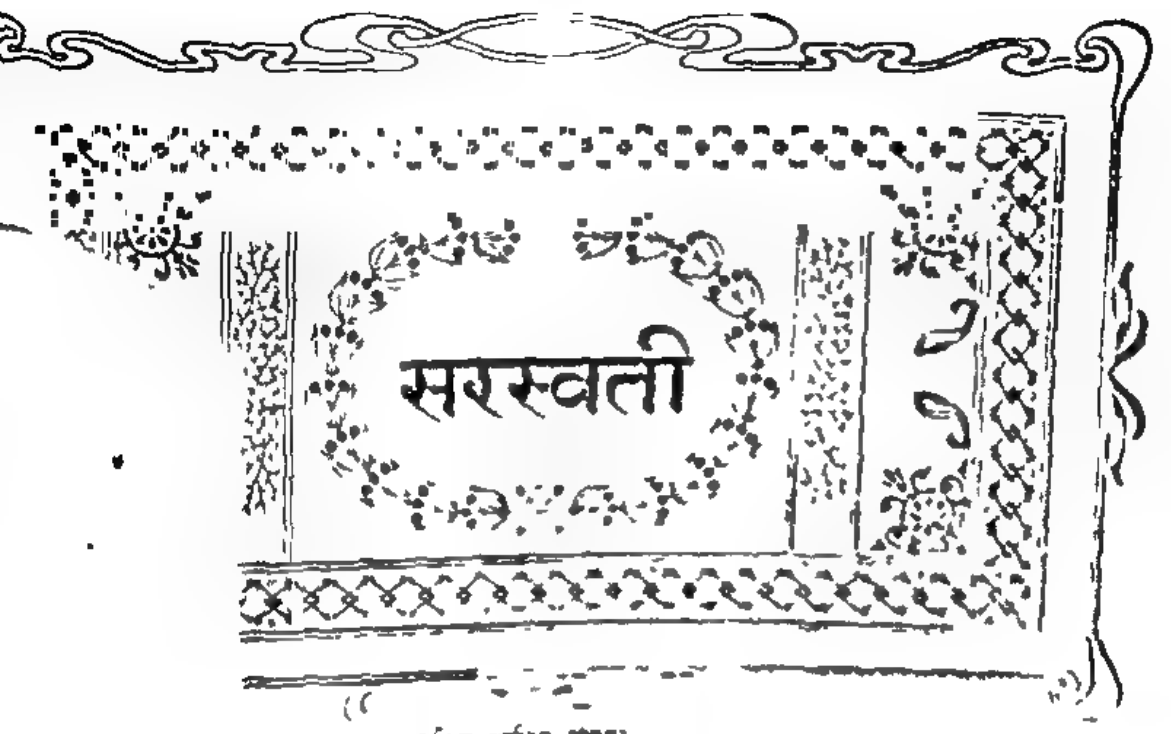

# खालिस कस्तूरी

२५) और ३५), पवित्र केसर १॥), शुद्ध शिलाजीत ॥) और १) तोला, अंगूरी हींग ४), सुगन्धित ज़ीरा २) कमलगट्टा १), मुरब्बा बादाम १) सेर, चादर पश्मीना २५) से ३५), अलवान पश्मीना ३०) से ४०), दुपट्टा पश्मीना (कामदार) २५) से ३५), (सादा) १५) से २०), लोई ७) से १२), पट्टू ८) से १२), बड़ी सूची मुफ़्त।

काश्मीर स्टोर्स, श्रीनगर नं० ४६

# शीघ्रता कीजियेगा ?

—:o:—

समय बहुत थोड़ा शेष रह गया है।

पूर्व प्रतिज्ञानुसार पांच वर्ष व्यतीत हो चुके के कारण ( परमोपयोगी ८ पर्चे ) अष्टसिद्धि का मूल्य सन् १९१६ ई० के आरम्भ से दूना हो जायगा ता० ३१ दिसम्बर तक ही ॥=) दश आना मनीआर्डर द्वारा अग्रिम भेजने वाले ग्राहक अष्टसिद्धि पा सकेंगे पश्चात १=) भेजने पड़ेंगे। इस लाभ के मौके को न चूकना चाहिये।

पता—हितैषी कार्यालय—आगरा।

AGRA CITY.

बनारस के प्रसिद्ध डाक्टर गणेशप्रसाद भार्गव का बनाया हुआ

दाम बड़ी बोतल २)
डाक महसूल ॥=)

## नमक सुलेमानी

दाम फ़ी शीशी १)
महसूल डाक ।)

यह नमक सुलेमानी पाचन शक्ति को बढ़ाता है और उसके सब विकारों को नाश कर देता है। इसके सेवन से भूख बढ़ती है और भोजन अच्छी तरह से पचता है, नया और साफ़ ख़ून मामूल से अधिक पैदा होता है, जिससे बल बढ़ता है।

यह नमक सुलेमानी, हैज़ा, बदहज़मी, पेट का अफ़ारा, खट्टी या धुएँ की डकारों का आना, पेट का दर्द, पेचिश बादी का दर्द, बवासीर, कब्ज़, भूख की कमी में तुरंत अपना गुण दिखाता है, खांसी-दमा, गठिया, और अधिक पेशाब आने के लिये भी बड़ा गुणदायक है। इसके लगातार सेवन से स्त्रियों के मासिक के सब विकार दूर हो जाते हैं:—

बिच्छू या भिड़ के काटे हुए या जहां कहीं सूजन हो या फोड़ा उठता हो तो इस नमक सुलेमानी के मल देने से तकलीफ़ तुरंत जाती रहती है। जंत्री १९१६ जिस में दवा की पूरी सूची है रुत आने पर भेजी जाती है।

## सुरती का तेल—दाम फ़ी शीशी ॥) महसूल डाक।)

यह तेल हर क़िस्म के दर्द, गठिया, वायु और सरदी के विकार और सूजन, फ़ालिज, लक़वा, चोट, मोंच, वग़ैरः की तकलीफ़ को फ़ौरन रफ़ा करता है।

प्रशंसापत्र और दवाओं की सूची, पत्र आने पर भेजी जाती है।

मिलने का पता:—नौनिहालसिंह भार्गव मैनेजर कारख़ाना नमक सुलेमानी गायघाट, बनारस सिटी।

इण्डियन प्रेस, प्रयाग।

विनोद रचना बहुत ही उचित हुआ है। हिन्दी-साहित्य के इतिहास के सम्बन्ध में दो पुस्तकें हमने और देखी हैं। एक का नाम शिवसिंहसरोज और दूसरी का Modern Vernacular Literature of Hindustan है। इनके नामों से ही पाठक समझ सकते हैं कि पहली हिन्दी में और दूसरी अँगरेज़ी में है। हिन्दी-पुस्तक के लेखक ठाकुर शिवसिंह सेंगर और अँगरेज़ी के डा० ग्रियर्सन हैं। ग्रियर्सन साहब की पुस्तक का मूल आधार भी शिवसिंह-सरोज ही है, पर यह बहुत अच्छे ढङ्ग से लिखी गई है। इसलिए नई पद्धति से पढ़े लिखे लोगों को कवियों के विषय में कुछ जानने के लिए अँगरेज़ी की पुस्तक ही देखने में सुभीता होता है। जो अँगरेज़ी नहीं जानते और किसी कवि के सम्बन्ध में कुछ जानना चाहते हैं उन्हें शिवसिंहसरोज की शरण लेनी पड़ती है। परन्तु शिवसिंहसरोज की प्राचीन शैली के कारण उससे लाभ उठाने में समय समय पर लोग असमर्थ हो जाते हैं। ऐसी दशा में नवीन शैली पर लिखी हुई पुस्तक की बड़ी आवश्यकता थी। मिश्रबन्धुओं ने उसे पूर्ण करने का जो स्तुत्य प्रयत्न किया है इससे वे हिन्दी-भाषियों के धन्यवाद के पात्र हैं। इसमें उन्हें ऐसे साधनों से भी सहायता मिली है जो ठाकुर शिवसिंह और डा० ग्रियर्सन को भी उपलब्ध न थे। इस प्रयत्न में वे कहाँ तक सफलमनोरथ हुए हैं यही विचारणीय है।

समालोच्य पुस्तक तीन प्रकरणों में विभक्त है—एक संक्षिप्त इतिहास-प्रकरण, दूसरा आदि प्रकरण और तीसरा प्रौढ़ माध्यमिक प्रकरण। किसी भाषा के साहित्य का इतिहास लिखने के पहले उसका भी संक्षिप्त इतिहास लिखना चाहिए, जिससे पाठकों को उसके विषय में कुछ मालूम हो जाय। यह सन्तोष की बात है कि इस पुस्तक में हिन्दी की उत्पत्ति के विषय में कुछ लिखा गया है, पर अत्यन्त संक्षेप में है और प्रारम्भ में नहीं, मध्य में है। हिन्दी की उत्पत्ति बताने में लेखकों ने डा० ग्रियर्सन से सहायता ली है, पर स्वयं उसके अनुसन्धान का कष्ट नहीं उठाया है। इससे जो भूलें ग्रियर्सन साहब ने की हैं वे ही विनोद-लेखक भी कर बैठे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दू और ईरानी आर्य्य किसी समय एक ही स्थान में रहते और एक ही भाषा बोलते थे। पर वह परजिक या मीडिक थी, इसका प्रमाण कुछ भी नहीं मिलता। इसके विरुद्ध ऋग्वेद की प्राचीनतम ऋचाओं पुराना ग्रन्थ न मिलने के कारण यह अनुमान कर ले अनुचित न होगा कि, ईरानी और हिन्दू आर्य्यों की भा ऋग्वेद की ऋचाओं से मिलती जुलती थी। अवस्ता क भाषा से ऋग्वेद की भाषा की और वर्तमान फ़ारसी की संस्कृत की तुलना करने से यह सिद्ध होता है कि दोनों किसी एक ही भाषा से उत्पन्न हुई हैं। भारत के आदि निवासियों की भाषा से आर्य्यों की भाषा के मिलने और फिर आर्य्यों की भाषा का संस्कार होकर व्याकरण द्वारा नियमित और संस्कृत होने और पाली के जन्म आदि की जो बातें विनोद-लेखकों ने लिखी हैं विलक्षण जान पड़ती हैं। बड़े ही खेद की बात है कि ऐसे गहन विषय पर जैसा विचार होना उचित था नहीं किया गया।

हमारी समझ से आर्य्यों की प्राचीन भाषा दो भागों में विभक्त थी—एक साहित्य की भाषा थी, दूसरी बोलचाल की जो साधारणतः वेदभाषा और लोकभाषा कहाती थी। साहित्य की भाषा का संस्कार हुआ तब वह संस्कृत कहाई। दूसरी प्राकृत नाम से प्रसिद्ध हुई, जिसे सिद्ध हेमचन्द्र ने अपनी प्राकृताष्टाध्यायी में "आर्ष प्राकृत" कहा है। "ऋषीणां भाषा आर्षं"—हेमचन्द्र के इस अर्थ से हमारे कथन की पुष्टि होती है। आर्ष-प्राकृत का रूपान्तर ही गाथा है जिसमें ललितविस्तर आदि कई बौद्ध ग्रन्थ हैं। यह बिलकुल बेतुकी बात है कि "संस्कृत पुरानी प्राकृत में घुसने लगी और इस प्रकार पुरानी प्राकृत बढ़ते बढ़ते मध्यवर्त्तिनी प्राकृत अर्थात् पाली भाषा हो गई।" वास्तव में पाली भाषा मागधी प्राकृत का रूपान्तर मात्र है। क्योंकि बौद्ध लोग मागधी के विषय में कहा करते हैं—

सा मागधी मूल भासा
नरा या आदिकप्पिका।
ब्राह्मणा चास्सुतालापा
संबुद्धा चापि भासरे।

अर्थात् मागधी ही मूल भाषा है जिसे आदिकल्पिक में ब्राह्मण और बौद्ध बोलते थे। यद्यपि उद्धृत श्लोक से यह जान पड़ता है कि मागधी ही सब भाषाओं की जननी है, पर इसे कोई बुद्धिमान् स्वीकार नहीं कर सकता। बुद्ध के समय में पाली सर्वश्रेष्ठ प्राकृत समझी जाती थी, इस का-

रुचि ने जब प्राकृतप्रकाश नामक व्याकरण बनाया तब महाराष्ट्री प्राकृत का प्राधान्य था। अनन्तर अपभ्रंश, शौरसेनी, अर्द्धमागधी और नागर प्राकृतों का समय आया और फिर इनसे पञ्जाबी, ब्रजभाषा, खड़ी बोली आदि की उत्पत्ति हुई।

बङ्गाल की भाषा बँगला कहाती है, पर लेखकों ने अंगरेज़ों की नक़ल कर उसे "बङ्गाली" कहा है, जो अंगरेज़ी पढ़े लिखों के सिवा कोई नहीं समझ सकता। एक जगह तो मिश्रबन्धुओं ने यह लिख कर कमाल कर दिया है—"यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक स्थान से अवधी भाषा समाप्त होती है और मैथिल का प्रारम्भ होता है।" मानो अवधी के बाद ही मैथिली बोली प्रारम्भ होती है। पर यह बात नहीं है; बल्कि मैथिली और अवधी के बीच में भोजपुरी और मगही बोलियाँ हैं। इसी प्रकार दूसरी बड़ी भारी भूल कुमारपालचरित्र को हिन्दी का ग्रन्थ बताने में की गई है। यदि सं० ११०० के लगभग का रचित कुमारपालचरित्र अब हिन्दी का ग्रन्थ है, तो फिर प्राकृत के सभी ग्रन्थ हिन्दी के हो जायँगे। बम्बई में यह ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है और इसी के साथ सिद्ध-हेमचन्द्र-कृत प्राकृताष्टाध्यायी है। अब पड़ता है कि किसी से सुन सुना कर लेखकों ने कुमारपालचरित्र को हिन्दी का ग्रन्थ लिख मारा है।

इस पुस्तक का नाम मिश्रबन्धुविनोद बहुत ही उचित है और इस नामकरण के लिए हम लेखकों को बधाई देते हैं। यदि इसके साथ ही "अथवा हिन्दी-साहित्य का इतिहास तथा कविकीर्त्तन" न लिखा होता तो जो कुछ ऊपर लिखा गया है और आगे लिखा जायगा वह कभी न लिखा जाता। क्योंकि यह पुस्तक मिश्रबन्धुओं ने स्वविनोदार्थ लिखी है, इसलिए परोपकार की मात्रा कम नहीं है। पहले तो १०८ पृष्ठों की हिन्दी भूमिका में १८ पृष्ठ में खाना ही वर्णन किया है। हमारा विचार है कि तीसरे भाग में जहाँ बड़े बड़े लेखकों और कवियों का उल्लेख होगा वहाँ सिर्फ़ इन्हीं का अपना वर्णन कई पृष्ठों में अवश्य लिखा होगा। ऐसी अवस्था में भूमिका में अपने सम्बन्ध के १८ पृष्ठ कम ही कहे जा सकते हैं, यह पाठक ही विचारें। परन्तु यह तो कुछ नहीं है। इनमें जो चाहे लेखक लिख सकते हैं। जैसे ग्रन्थ में "भाषा-सम्बन्धी जो विचार" इन्होंने दिये हैं उन पर हम इन्हीं के विषय में कुछ कहना चाहते हैं। क्योंकि हिन्दी की उत्पत्ति के साथ ही भाषा का होना चाहिए। जब हमने पढ़ा—"हिन्दी ग्रन्थों के कैसी होनी चाहिए यह विषय भी विचारणीय है" तब। कि इसमें भाषा पर कुछ सम्मति दी गई होगी, पृष्ठ पढ़ने पर भी हमारी समझ में यह न आया कि बन्धु कैसी भाषा अच्छी समझते हैं। जो कुछ [illegible] है, उसका अभिप्राय यही है कि, "हिन्दी को व्याकरण के फेर में डालने से लाभ अति स्वल्प हो सक[illegible] पर हानि ऐसी प्रबल और अमर होगी कि [illegible] पार नहीं है।" पर यह न मालूम हुआ कि हिन्दी को संस्कृत-व्याकरण के फेर में डाल रहा है। हम नहीं कि वे "संस्कृत के विशेष प्रेमी" कौन हैं, जिनका है कि हिन्दी में कम से कम गद्य लेखन शैली प्रायः तथा संस्कृत व्याकरण से नियमबद्ध होनी चाहिए।" तो बहुत से हिन्दी-हितैषी चाहते हैं और हमारा भी म[illegible] मत है कि हिन्दी में जो गड़बड़ मचा हुआ है उसका करने के लिए व्याकरण लिखा जाय, पर हम अपना ये नहीं भूले कि "हिन्दी स्वतन्त्र भाषा है।" "हिन्दी प्र[illegible] जनसमुदाय की सार्व भाषा है—" मिश्रबन्धुओं की इस बा[illegible] से यह आना जाता है कि वे सार्व भाषा के पक्षपाती हैं, पर 'सार्व' भाषा की परिभाषा इन्होंने कुछ नहीं बताई संस्कृत-व्याकरण का अनुशासन किये बिना ही भाषा अधिक और दुरूह हो सकती है, यह कदाचित् इनकी समझ में नहीं आया। हमारा तो यह कहना है कि व्याकरण सार्व भाषा अधिक नहीं, सरल होता है। हम मानते हैं कि जो अशुद्ध व्याकरण विरुद्ध भाषा लिखता है उसी के बनाई में अधिकता की आशा अधिक रहती है। इसलिए मिश्रबन्धुओं का यह सिद्धान्त कदापि मानने योग्य नहीं है कि, "संस्कृत तथा हिन्दी का व्याकरण अलग अलग हिन्दी और हो जाती।"

[illegible] मिश्रबन्धुओं का विनोद [illegible] है। [illegible] भाषा [illegible] [illegible] [illegible]

शब्द को यदि कोई नाइका या नायिका भी लिख दे तो उसमें कोई दोष नहीं मानते तथा उसका समर्थन करते हैं। अपने इस कथन के समर्थन में आपने सतसई शब्द के छः रूप लिखे हैं, यथा शतसई, शतसैय्या, शतसैया, सतसैया और सतसइया। सतसई शब्द संस्कृत सप्तशती का और सतसैया संस्कृत सप्तशतिका का हिन्दी-रूपान्तर है। इन दोनों शब्दों का भावार्थ है सात सौ श्लोकों वा दोहों वाली पुस्तक। दुर्गा की पोथी में सात सौ श्लोक हैं, इसलिए वह सप्तशती कहाती है। बिहारी की पुस्तक में ७०० दोहे हैं, इस लिए वह सतसई कहाती है और उसे सतसइया भी कहते हैं।

संस्कृत के श अक्षर के बदले हिन्दी में स कर दिया करते हैं। इसी से सप्तशती का रूपान्तर सतसई और सप्तशतिका सतसइया या सतसैया हो गया है। परन्तु आज तक यह सुनने में कभी नहीं आया कि स के बदले श कर देने का भी नियम है। मागधी प्राकृत में स को श उच्चारण करने का नियम है, और उससे उत्पन्न बँगला भाषा में श की तूती बोलती है सही, पर स के बदले श लिखने का नियम वहाँ भी नहीं है। इसके आविष्कार का सब श्रेय मिश्रबन्धुओं को ही है। पर हिन्दी वालों में ऐसी सुबुद्धि कहाँ जो कृतज्ञतापूर्वक आप का नेतृत्व स्वीकार करें! यदि मिश्रबन्धुओं की आज्ञा मान ली जाय तो हिन्दी में एक शब्द के दस दस बीस बीस रूप बनने में भी देर न लगेगी। आपने सूर्य्य शब्द के चार स्वरूप दिखाये हैं, सूर्य्य, सूर्य, सूर्ज और सूरज। पहले दो संस्कृत के रूप हैं और चौथा हिन्दी है। हिन्दी वाले "सूर्य" शब्द का उच्चारण "सूर्ज" करते हैं, पर लिखते "सूर्य" ही हैं। यदि शब्द-गठन्त में मिश्रबन्धुओं का अनुकरण किया जाय, तो सुरिज, सूरिज, सुरुज, सूरुज, सुर्ज और सूर्ज रूप बन जायँगे। अर्थात् एक शब्द का जितने प्रकार का उच्चारण होगा उसके उतने ही रूप मानने पड़ेंगे। जैसे लक्ष्मण, लछमन, लखन, लखन, लाखन लिछमन, लिछमिन आदि। मिश्रबन्धुओं की यह बात हम मानने को तैयार नहीं हैं और न अन्य हिन्दीहितैषी ही इसे स्वीकार करेंगे। नागरी लिपि का गुण यह है कि जो लिखा जायगा वही पढ़ा जायगा। यह नहीं कि एक ही शब्द अनेक प्रकार से लिखा जाय। मिश्रबन्धु संस्कृत शब्दों के प्रचार से बहुत चिढ़ते हैं, यद्यपि स्वयं संस्कृत-शब्दों का आ श्यकता से अधिक प्रयोग करते हैं। आप फ़ारसी अरबी शब्द तो यथासाध्य शुद्ध लिखेंगे। यहाँ तक कि अप फ़ारसीदानी दिखाने को हिन्दी के "कनौज" शब्द "क़नौज" लिखेंगे और क अक्षर के नीचे बिन्दी न छूट ज इसका विशेष ध्यान रक्खेंगे, पर संस्कृत के शुद्ध शब्द आप आँखों में खटकते हैं। आज कल हिन्दी में संस्कृत के शु शब्द लिखने की चाल चल पड़ी है और सैकड़े पीछे आ ९५ लेखक शुद्ध लिखते भी हैं। इनमें कठिनाई से एक ऐसे विद्वान् होंगे जिन्होंने "१५ वर्ष तक सिद्धान्तकौमु की फक्किका वा महाभाष्य रटा" हो। यदि थोड़े अभ्यास हम अँगरेज़ी जैसी कठिन भाषा के शब्द लिखने में भूल न कर सकते, तो संस्कृत के शुद्ध शब्द लिखने का ज्ञान प्रा करने के लिए हताश होने का कोई कारण नहीं।

मिश्रबन्धुओं ने हिन्दी के किसी वादग्रस्त विषय की उपेक्षा नहीं की है। "शब्दों के नये रूप"; "सन्धि" "विभक्ति-प्रत्यय," "लिङ्गभेद" और "हिन्दी की स्वतन्त्रता" पर भी विचार प्रकट किये गये हैं। शब्दों के रूपों के विषय में मिश्रबन्धुओं के कथन का सारांश यह है कि शुद्ध अशुद्ध चाहे जैसा शब्द कोई लिख दे, उसपर हिन्दीवाले चूँ तक न करें। यदि कोई कुछ बोले तो उसके बोलने का यह अर्थ समझा जाय कि, "दूसरों की कीर्त्ति बढ़ती देख हृदय में शूल हुआ चाहे और बिना उनकी निन्दा किए कब रहा जाय! बस ऐसे महापुरुषों को पर निन्दा से काम।" यदि दूसरा कोई भला लेखक होता तो इन शब्दों को पढ़ इस काम से विरत हो जाता, पर हिन्दी-हित की दृष्टि से ऐसा करने में हम असमर्थ हैं। बंकिम बाबू ने सौजन्य या सुजनता के बदले सौजन्यता लिख दिया तो वह अशुद्ध शब्द भी शुद्ध हो गया, यह आप के सिवा कोई स्वीकार न करेगा। बङ्गाल के तो किसी बँगला लेखक ने इसे शुद्ध नहीं माना है। आज कल जैसी भाषा लिखी जाती है उससे ३।४ सौ वर्ष के लिखे पद्य वा गद्य की तुलना करना अनुचित है। उस समय तद्भव शब्दों का विशेष प्रचलन था और संस्कृत ही नहीं, अरबी और फ़ारसी शब्दों के रूप भी विकृत करके प्रायः लिखे जाते थे। संस्कृत तथा अरबी-फ़ारसी के विद्वान् कवि भी इसका अनुकरण करते थे। इसलिए उन तीनों बोली की भाषा लिखी जाती थी।

हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि तद्भव वा देशज शब्दों का हिन्दी में बहिष्कार कर दिया जाय, पर हम कहते हैं कि इस समय संस्कृत-शब्दों के रूप विकृत न किये जायँ। इससे लाभ नहीं है। जो हो, "सेनापति कविता की कविताई बिलमति है," वाक्य में मिश्रबन्धुओं ने "कविताई" शब्द को बंकिम बाबू के "सौजन्यता" शब्द के ढंग का बताया है। पर यह उनकी भूल है। यहाँ कविताई का अर्थ "कविता" नहीं है, बल्कि कवित्व वा "कविता के गुण अथवा भाव" है। यद्यपि कविता और कवित्व का अर्थ एक ही है—पहले शब्द में "ता" प्रत्यय लगने से वह स्त्रीलिङ्ग बना रहा और दूसरा "व" लगने से पुँल्लिङ्ग बना रहा—तथापि "कवित्व" शब्द कविता के गुणों के अर्थ में प्रयुक्त होता है। यहाँ "कविताई" शब्द भी इसी अर्थ में लिखा गया है। आश्चर्य है कि मिश्रबन्धुओं की समझ में यह मोटी बात नहीं आई। मिश्रबन्धुओं का यह सिद्धान्त कि "कुछ अस्थिरता हमें हिन्दी के लिये आवश्यक प्रतीत होती है, क्योंकि नूतन विचार को व्यक्त करने के लिये भाषा का दिनों दिन विकास होना ही ठीक है" उनके और सिद्धान्तों के अनुसार ही है। हम नहीं समझते कि, "नूतन विचारों को व्यक्त करने के लिए" संस्कृत के विकृत या अशुद्ध शब्दों के प्रयोग की आवश्यकता है।

सन्धि के विषय में मिश्रबन्धुओं का कहना है कि सन्धि चाहे की जाय चाहे न की जाय। इस सम्बन्ध में भी यह बात सर्वांश में मानी नहीं जा सकती। मिश्रबन्धुओं ने कहा है कि यज्ञोपवीत लिखो चाहे यज्ञ उपवीत, पर हम ये लोगों को बोलते यज्ञोपवीत ही सुनते हैं। मूर्ख से मूर्ख भी "जगोपवीत" बोलते हैं। रामायण, रामावतार, रामाधार, गणेश, महेश, जगन्नाथ, मनोहर आदि शब्द हिन्दी में प्रचलित हैं। कोई कोई रामयण और रामअवतार भी बोलते हैं, पर गणईश, महाईश, जगन्नाथ और मन हर बोलते हमने किसी को नहीं सुना। तात्पर्य यह कि संस्कृत के जो शब्द हिन्दी में प्रचलित हैं वे सन्धि से बने हैं या नहीं, यह बहुतों को मालूम नहीं है और न वे इसके जानने की चेष्टा ही करते हैं। वे जैसे शब्द पाते हैं वैसे ही बोलते और लिखते हैं। स्वरसन्धि सहज है, इसलिए हिन्दी में यह बहुत प्रचलित है; व्यञ्जन और विसर्ग-सन्धियों की कठिनाई के कारण बहुतेरे हिन्दी-लेखक उनसे परिचित नहीं हैं।

विभक्ति-प्रत्यय के विषय में मिश्रबन्धुओं की बातें कर कोई विचारशील हँसे बिना नहीं रह सकता। मि० "ने, को, से" इत्यादि को कारक (Postposition) हैं। आप्टे के संस्कृत-अंगरेज़ी-कोष में कारक का अर्थ प्रकार बताया है—(In Gram.) The relat subsisting between a noun and a verb a sentence (or between a noun and otl words governing it) मिस्टर जे० टी० टामसन अपने हिन्दी अंगरेज़ी कोष में कारक का अर्थ Case (Gram) लिखा है। इससे सिद्ध होता है कि का Postposition नहीं है। Postposition का अंगरेज़ी कोष में लिखा है—A word or partic placed after or at the end of a word. अर्थात् एक शब्द या टुकड़ा जो पीछे या शब्द के अन्त में रक्खा जाय। इससे पाठक जान गये होंगे कि विभक्ति प्रत्यय Post position नहीं है। पादरी केलाग ने भी अपनी Grammar of the Hindi Language में विभक्ति-चिह्नों को Post-position कहा है। इनके विषय में आप १२६ वें पृष्ठ के फुटनोट में लिखते हैं:—

These are similar in character to prepositions in English, but as they follow their noun they are more accurately termed postpositions. मिस्टर बीम्स ने इन्हें Case-endings कहा है और हमारे मत से विभक्ति चिह्नों का यह अर्थ बहुत ठीक है। मिश्रबन्धुओं ने व्याकरण का ज्ञान तो दूर ही रहा है। कारक और Postposition के अर्थों में जैसी भूल की है वैसी ही विभक्ति-प्रत्यय और अव्यय के अर्थों में भी की है। अब लोगों के मत से हिन्दी में विभक्ति-प्रत्यय है ही नहीं! विभक्ति का अर्थ Case-endings या Case-terminations है और प्रत्यय का अर्थ Formative, Suffix or Affix है। पर मिश्रबन्धुओं ने "हो" क्रियापद का भी प्रत्यय लिखा है। भला हिन्दी शब्द का अन्तिम भाग प्रत्यय कहाता है? यह प्रत्यय किस शब्द का बना कहा गया है? यह स्वयं शब्द ही है।

प्रत्यय शब्दांश होता है; मूल से यह मिला कर लिखा जाता है। जैसे ता, पा, पन आदि प्रत्यय हैं। सुन्दर, बूढ़ा और लड़का शब्दों के अन्त में लगने से इनसे सुन्दरता, बुढ़ापा और लड़कपन शब्द बनते हैं।

मिश्रबन्धुओं ने कारक, प्रत्यय और Postposition शब्दों के जो विलक्षण अर्थ किये हैं उनसे तो यह आशा नहीं होती कि विभक्तियों को शब्दों से मिला कर या अलग लिखने का विचार करने के समय वे कुसंस्कार त्याग देंगे। हुआ भी ऐसा ही है। वे सदा हिन्दी पर संस्कृत के आक्रमण का स्वप्न देखा करते हैं। विभक्तियों को विकृत शब्द से मिला कर लिखने में भी उन्हें आशङ्का है कि कहीं हिन्दी संस्कृत न हो जाय। पर यह उनकी भूल है। "मुझी को" पद में "मुझ" तो "मैं" शब्द का विकृत रूप है। उसके बाद "ही" अव्यय है और अन्त में द्वितीया विभक्ति का आदेश "को" है। अब विचारना यह है कि जब "मुझ ही को" पद "मुझी को" हो गया है, तब मुझी और को में स्पेस रहना चाहिए या नहीं। जो हिन्दी भाषा की प्रकृति पहचानते हैं वे तुरत कह देंगे "नहीं।" क्योंकि जब अव्यय शब्द के विकृत रूप में मिल गया तब शब्दांश क्यों अलग लिखा जाय? "ही" अव्यय, जिसे मिश्रबन्धु प्रत्यय कहते हैं, केवल सर्वनाम और संज्ञा के विकृत रूपों और विभक्तियों के बीच में ही नहीं आता, बल्कि क्रियापदों में भी आता है, जैसे "करें ही गे" "माने ही गा" आदि। क्या इनके लिखने में "करें ही गे" "माने ही गा" लिखना उचित होगा? यदि नहीं, तो "मुझीको" लिखने में किसी को क्या आपत्ति हो सकती है? मिश्रबन्धु इन्हें Exception नहीं मानते, "क्योंकि हिन्दी में अब तक उनका शब्दांश माने जाने का नियम स्थिर ही नहीं हुआ है।" कौन स्थिर करेगा? आपने उसे अस्वीकार किया, इसलिए वह स्थिर ही नहीं हुआ! रही Inverted Commas के अन्दर शब्द लिखने की बात, सो इसका निर्णय दो प्रकार से किया जा सकता है। एक अँगरेज़ी के नियम से, जिसे देख कर इस परिपाटी का अनुसरण किया गया है और एक बँगला, गुजराती और मराठी आदि भाषाओं के अनुकरण से। अँगरेज़ी में केवल Possessive case में पद का पुराना रूप देखने में आता है। उसमें आज भी विभक्ति शब्द के साथ पाई जाती है, जैसे Robinson's Barley. यदि यह रॉबिन्सन श अँगरेज़ी में उद्धृत किया जाता है, तो वहाँ सविभक्तिक प ही उद्धृत होता है, जैसे "Englishman's" Specia Cablegram, पर यदि यह न स्वीकार हो तो बँगला "भारतमित्रे"र, मराठी के "केसरी" चा और गुजराती "प्रजाबन्धु"नी पदों के अनुसार लिख सकते हैं। जि भाषाओं में विभक्ति-चिह्न शब्दों से मिला कर लिखे जाते उनकी पद्धति का विचार करने पर मिश्रबन्धुओं की समझ में यह बात आ सकती है अन्यथा नहीं।

मिश्रबन्धुविनोद पढ़ने से बड़ा मनोविनोद होता है, क्योंकि लेखक पहले तो भूलों की कल्पना करते हैं और फिर उन्हें पछाड़ने का प्रशंसनीय पराक्रम दिखाते हैं। एक नहीं, अनेक स्थलों पर आपने समालोचकों की निन्दा की है। लिङ्गभेद का विचार करते समय आपने लिखा है कि "हमारे यहाँ के ये समालोचक, जो ईर्षाद्वेष वश आलोच्य लेख एवं लेखक का खण्डन (पीनल कोड रहते हुए!) करना ही अपना कर्तव्य समझते हैं, हिन्दी में प्रसिद्ध लेखकों तक की ऐसी ही भूलें खोज निकालने के लिए उत्सुक रहा करते हैं! (बड़ा अन्याय करते हैं।) वे इतना तक नहीं विचारते कि हमारे नामी लेखक-गण (नामी लेखकों से भूल का क्या सम्बन्ध?) भी इस लिङ्गभेद को नहीं समझ सकते तो इसमें किसका दोष है!!!" दोष छिपाने और समालोचकों को विरत करने के लिए लोग इस तरह की बातें कहा करते हैं, इस लिए हम इनकी उपेक्षा करके प्रकृत विषय की ओर ध्यान देना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। अस्तु, मिश्रबन्धुओं ने १४ लेखकों की लिङ्गभेद-सम्बन्धी जो भूलें बताई हैं उनमें हिन्दी-व्याकरणानुसार केवल एक भूल है। इस सम्बन्ध में मिश्रबन्धुओं ने जो "प्रचलित ढंग" बताया है, वही हिन्दी-व्याकरण का नियम है। परन्तु उनका यह मत सर्वथा अग्राह्य है कि, "जहाँ तक नपुंसक लिङ्ग वाला प्रयोग स्पष्ट और निर्विवाद रूप से अशुद्ध न ठहर जावे वहाँ तक उसमें लिङ्गभेद-विषयक अशुद्धियाँ स्थापित न करनी चाहिए, क्योंकि वास्तव में निर्जीव पदार्थ न पुंल्लिङ्ग है और न स्त्रीलिङ्ग, उसको किसी एक में धींगा-धींगी से मान लिया जाता है।"

पाठकों को आश्चर्य होगा कि धींगाधींगी के समर्थक मिश्रबन्धु लिङ्ग-सम्बन्धी धींगाधींगी का विरोध करते हैं,

सरस्वती ... गरमल-शारदा-सिद्धे"क ...

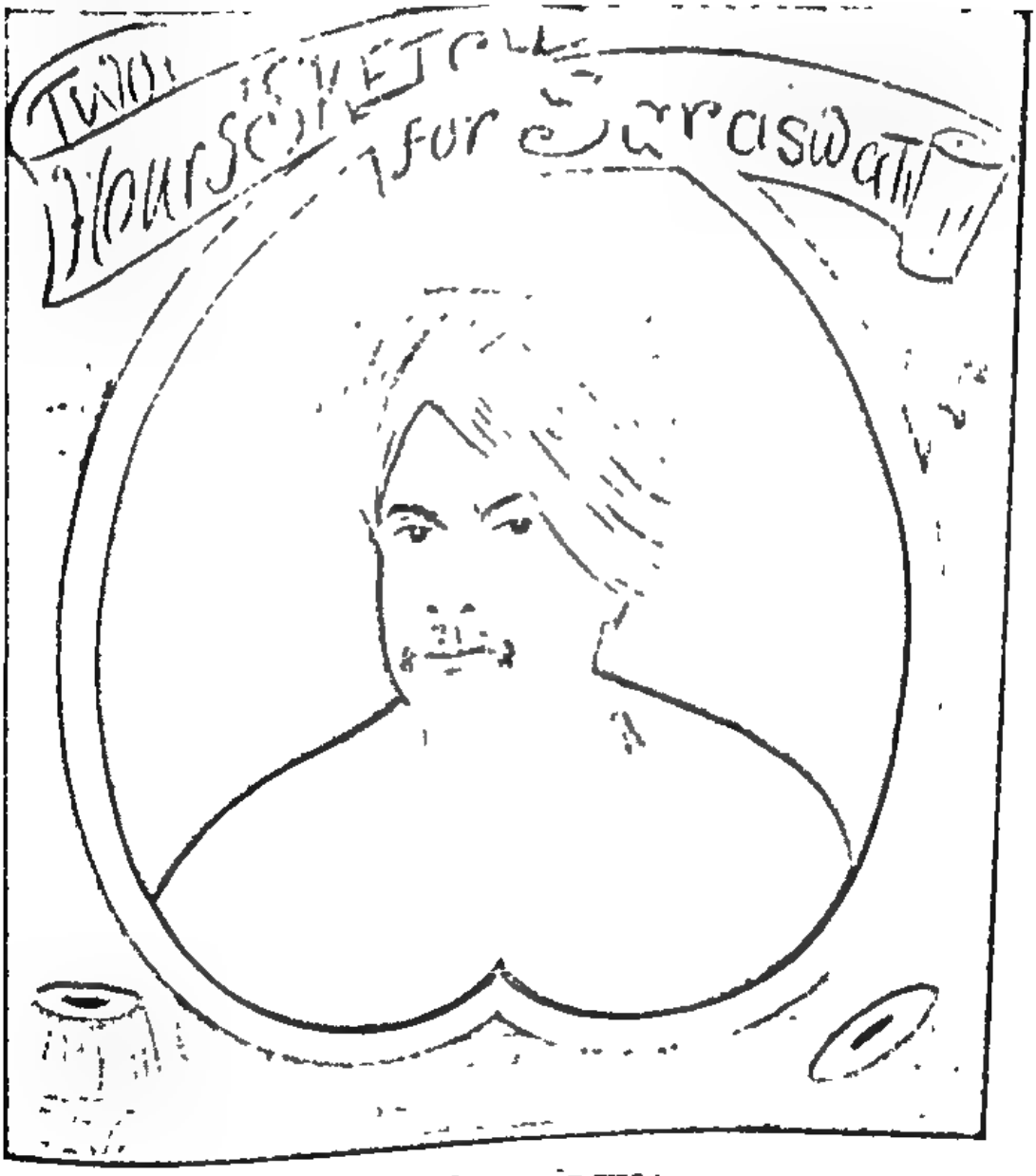


भजनानन्दी पण्डित रामनुदेव पाण्डे ।

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

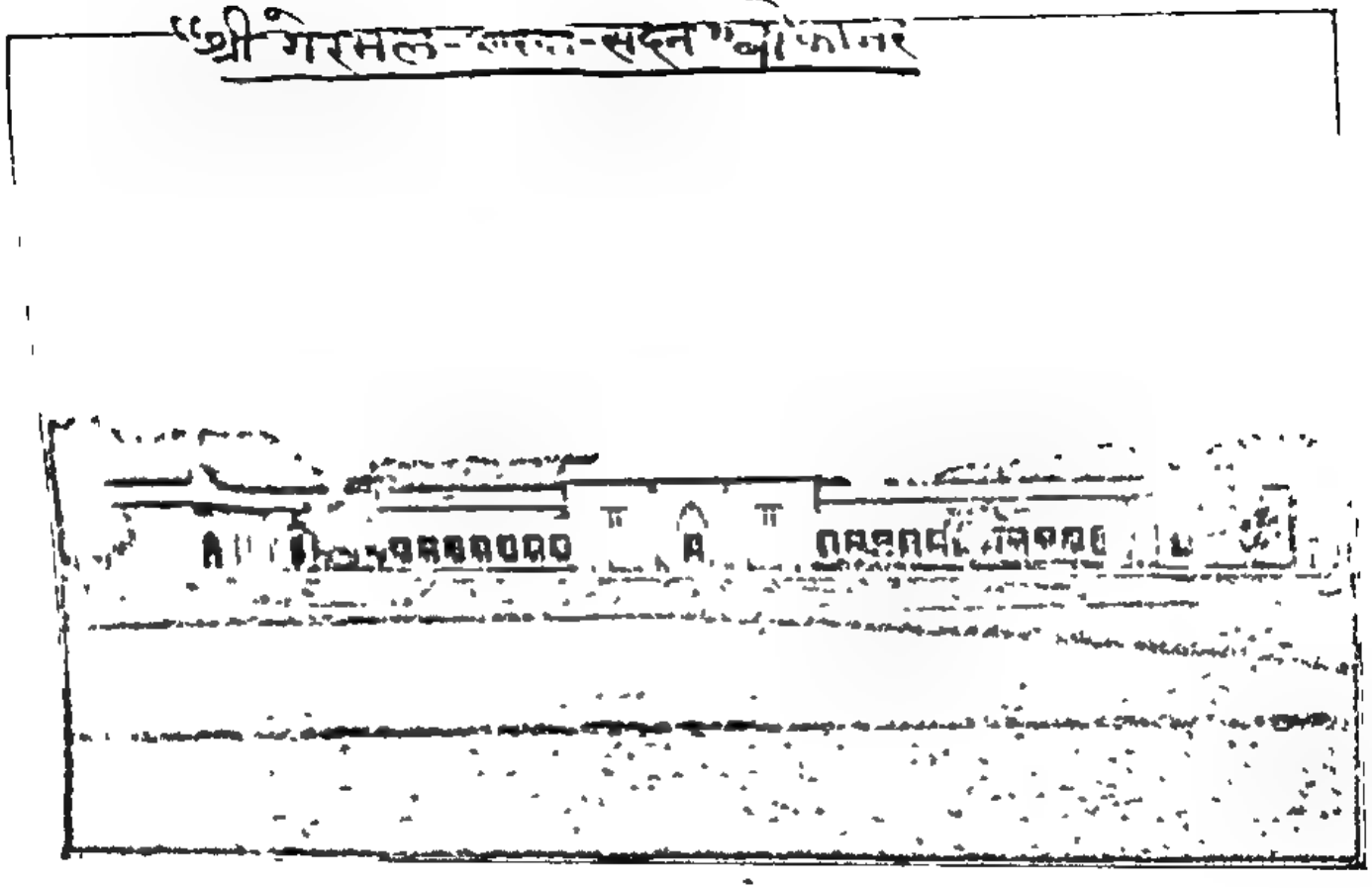


बीकानेर के प्राचीन पदार्थ-संग्रहालय ( Mu-eum ) की इमारत ।

( ? ? ?

(७) आचार्य्य दुर्जयचन्द्र।

(८) आचार्य्य कृष्णसमरवज्र।

(९) तथागतरक्षित। मन्त्र के प्रभाव से ये कई देशों की भाषायें समझ सकते थे।

(१०) बोधभद्र। ये गुह्य-मन्त्र के ज्ञाता थे।

(११) कमलरक्षित। ये प्रज्ञापारमिता, गुह्य-समय और यमारितन्त्र में विशेष पारदर्शी थे। इनके विषय में एक कौतूहलप्रद कहानी प्रसिद्ध है। कहते हैं कि इनके समय में कोई पांच सौ तुर्क अपने बादशाह के साथ कर्ण देश से मगध लूटने के लिए आये। जब ये इस विहार को भी लूटने लगे तब कमलरक्षित को बड़ा क्रोध आया। इसलिए उन्होंने तुर्कराज पर एक पूर्णकुम्भ फेंका। इसका फल यह हुआ कि तुर्क-सेना पहले खून उगलने लगी और फिर धीरे धीरे गायब हो गई।

(१२) आचार्य्य रत्नाकर-शान्ति।

(१३) वागीश्वर-कीर्त्ति। ये काशी के रहनेवाले थे।

(१४) आचार्य्य नरोप।

(१५) प्रज्ञाकर-मति।

(१६) रत्नवज्र। ये काश्मीर के निवासी थे।

(१७) ज्ञान श्रीमित्र। ये गौड़ देश के रहनेवाले थे।

(१८) दीपङ्कर श्रीज्ञान। ये बड़े विख्यात पण्डित थे।

(१९) महायज्ञासन।

(२०) कमलकुलिश।

(२१) नरेन्द्र श्रीज्ञान।

(२२) दानरक्षित।

(२३) अभयकर गुप्त।

(२४) शुभङ्कर गुप्त।

(२५) सुनायक-श्री।

(२६) धर्माकर-शान्ति।

(२७) शाक्य-श्री। ये काश्मीर से आये थे।

प्राचीन काल के विश्वविद्यालयों में एक और पद भी बड़ा प्रतिष्ठित और महत्त्वपूर्ण समझा जाता था। इस पद के अधिकारी को द्वार-रक्षक कहते थे। इस पर वही लोग नियुक्त किये जाते थे जो सर्वोत्कृष्ट विद्वान् होते थे। किसी समय विक्रमशिला-विश्वविद्यालय की ऐसी महिमा थी कि यहाँ आकर अपनी विद्वत्ता प्रमाणित न करने वाला विद्वान् न समझा जाता था। यदि कोई बाहरी पण्डित इस विश्वविद्यालय में प्रविष्ट होने के लिए आता तो उसे पहले द्वार-रक्षक के सामने अपना परिचय देना पड़ता था। द्वाररक्षक के साथ शास्त्रार्थ करने में जो हार जाते थे वे भीतर प्रवेश नहीं पा सकते थे। विक्रमशिला-विश्वविद्यालय में छः द्वार थे। एक एक पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण और दो बीच में थे। ९५० ईसवी से लेकर ११०० ईसवी तक महाराज धर्मपाल के राजत्वकाल में इस विद्यालय के निम्नलिखित प्रसिद्ध प्रसिद्ध पण्डित विक्रमशिला-विश्वविद्यालय के द्वाररक्षक का कार्य्य करते थे—

(१) पूर्वद्वार—आचार्य्य रत्नाकर-शान्ति।

(२) पश्चिम द्वार—आचार्य्य वागीश्वर-कीर्त्ति।

(३) उत्तर द्वार—आचार्य्य नरोप।

(४) दक्षिण द्वार—आचार्य्य प्रज्ञाकर-मति।

(५) प्रथम मध्य-द्वार—आचार्य्य रत्नवज्र।

(६) द्वितीय मध्य-द्वार—आचार्य्य ज्ञानश्री मित्र।

विक्रमशिला-विश्वविद्यालय में व्याकरण, दर्शन, न्याय, तन्त्र आदि कई विषय पढ़ाये जाते थे। इस विश्वविद्यालय के चारों ओर की दीवारों पर कितने ही विद्वान् और सच्चरित्र पुरुषों की मूर्त्तियाँ चित्रित थीं। इस विश्वविद्यालय से जो छात्र उत्तीर्ण होकर निकलते थे वे पण्डित की प्रतिष्ठित उपाधि से विभूषित किये जाते थे। राजशाही के विख्यात ऐतिहासिक आचार्य्य तारानाथ ने १४०० ईसवी में इस विश्वविद्यालय से राजा महापाल का स्वाक्षरित प्रशंसापत्र और पण्डित उपाधि प्राप्त की थी। ९८३ ईसवी में काश्मीर के सुप्रसिद्ध पण्डित रत्नवज्र ने इस विश्वविद्यालय से राजा चणक का स्वाक्षरित प्रशंसापत्र और पण्डित उपाधि प्राप्त की थी।

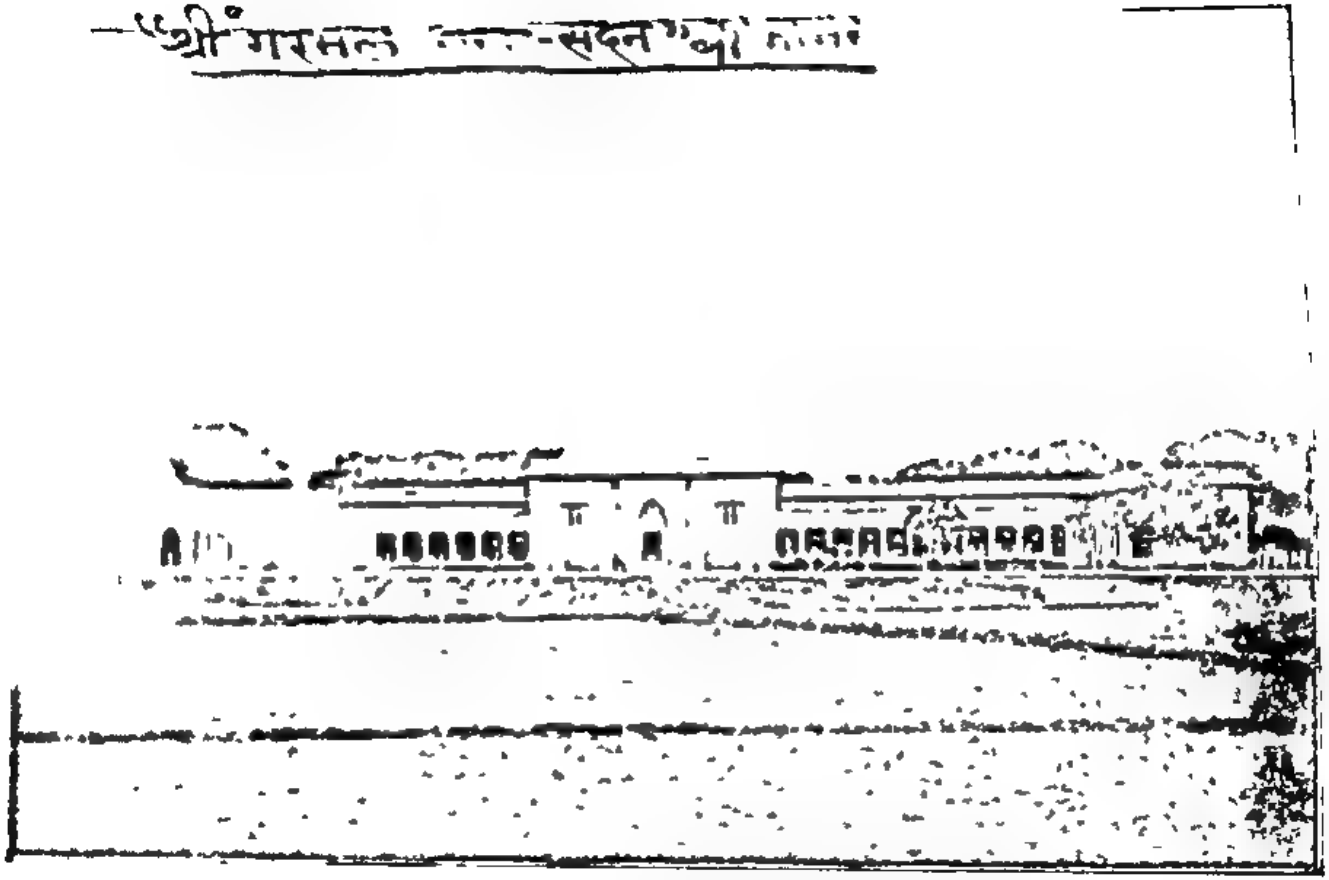

सारनाथ के प्राचीन पदार्थ-संग्रहालय ( Museum ) की इमारत ।

( ट्रेवल्स इन, इण्डिया )

तिब्बत के लामाओं ने विक्रमशिला में आकर वहाँ के पण्डितों की सहायता से अनेक संस्कृत-ग्रन्थ तिब्बती भाषा में अनुवादित किये थे।

१२०३ ईसवी में शाक्यश्री आचार्य विक्रमशिला विश्वविद्यालय के अध्यक्ष थे। इसी समय बख्तियार खिलजी ने विक्रमशिला पर आक्रमण किया और उसे नष्टभ्रष्ट कर दिया। यह हम लिख चुके हैं कि यह विश्वविद्यालय आठवीं शताब्दी के अन्त में स्थापित हुआ था। इस हिसाब से यह कोई चार सौ वर्ष तक क़ायम रहा। इसके ध्वंस होने के बाद बङ्गाल और बिहार से बौद्ध धर्म अदृश्य हो गया और हिन्दू धर्म का फिर अभ्युदय हुआ। इसी समय मिथिला और नदिया में हिन्दू-विश्वविद्यालय प्रतिष्ठित हुए।

मनोरञ्जन मिश्र।

---

## स्वर्गीय सङ्गीत।

( ४ )

भुजङ्गी

*मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है।*

१—बना लो जहाँ, हाँ, वहीं स्वर्ग है,
स्वयम्भूत थोड़ा कहीं स्वर्ग है।
बुरों को कहीं भी नहीं स्वर्ग है,
भलों के लिए तो यहीं स्वर्ग है।
सुनो, स्वर्ग क्या है, सदाचार है,
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है॥

२—नहीं स्वर्ग कोई धरा-वर्ग है,
जहाँ स्वर्ग के भाव हैं, स्वर्ग है।
सुखी नारकी जीव भी हो गये—
वहाँ धर्मराज स्वयं जो गये।
सदाचार ही रेलवागार है,
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है॥

३—यहीं स्वर्ग चाहे बना लीजिए,
यहीं नारकी सृष्टियाँ कीजिए।
नहीं कौन सी साधना है यहाँ ?
वहीं सिद्धि है साधना है जहाँ।
महा-साधना-क्षेत्र संसार है;
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है॥

४—स्वयं क्यों न संसार निःसार हो,
भले ही यहाँ मृत्यु सञ्चार हो।
नहीं किन्तु विश्वेश है क्या यहाँ ?
जहाँ इष्ट है क्या नहीं है वहाँ ?
शरीरस्थ कर्ता क्रिया उस पार है,
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है॥

५—जहाँ ज्ञान है, कर्म्म है, भक्ति है,
भरी जीव में ईश्वरी शक्ति है।
जहाँ मुक्ति में मुक्ति का धाम है,
जहाँ मृत्यु के बाद भी नाम है।
यही भव्य संसार क्या भार है ?
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है॥

६—यहीं प्रेम है, द्रोह भी है यहीं,
यहीं ज्ञान है, मोह भी है यहीं;
यहीं पुण्य है, पाप भी है यहीं;
यहीं शान्ति है, ताप भी है यहीं।
कहो, क्या तुम्हें आज स्वीकार है ?
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है॥

७—जहाँ स्वार्थ का सर्वथा त्याग है,
सभी के लिए एक सा भाग है।
जहाँ लोक-सेवा महा धर्म्म है,
जहाँ कामना तोड़ के कर्म्म है,
जहाँ प्यार ही अन्त व्यवहार है,
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है॥

८—यहाँ कल्पतरु स्वर्ग है हमें,
कहें बन्धु तो है इसे क्या कमी ?
जहाँ आदि में ही सुधासत्र है,
मनुष्यत्व ही दिव्य देवत्र है।
यहाँ स्वर्ग महान का द्वार है,
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है॥

[illegible]

---

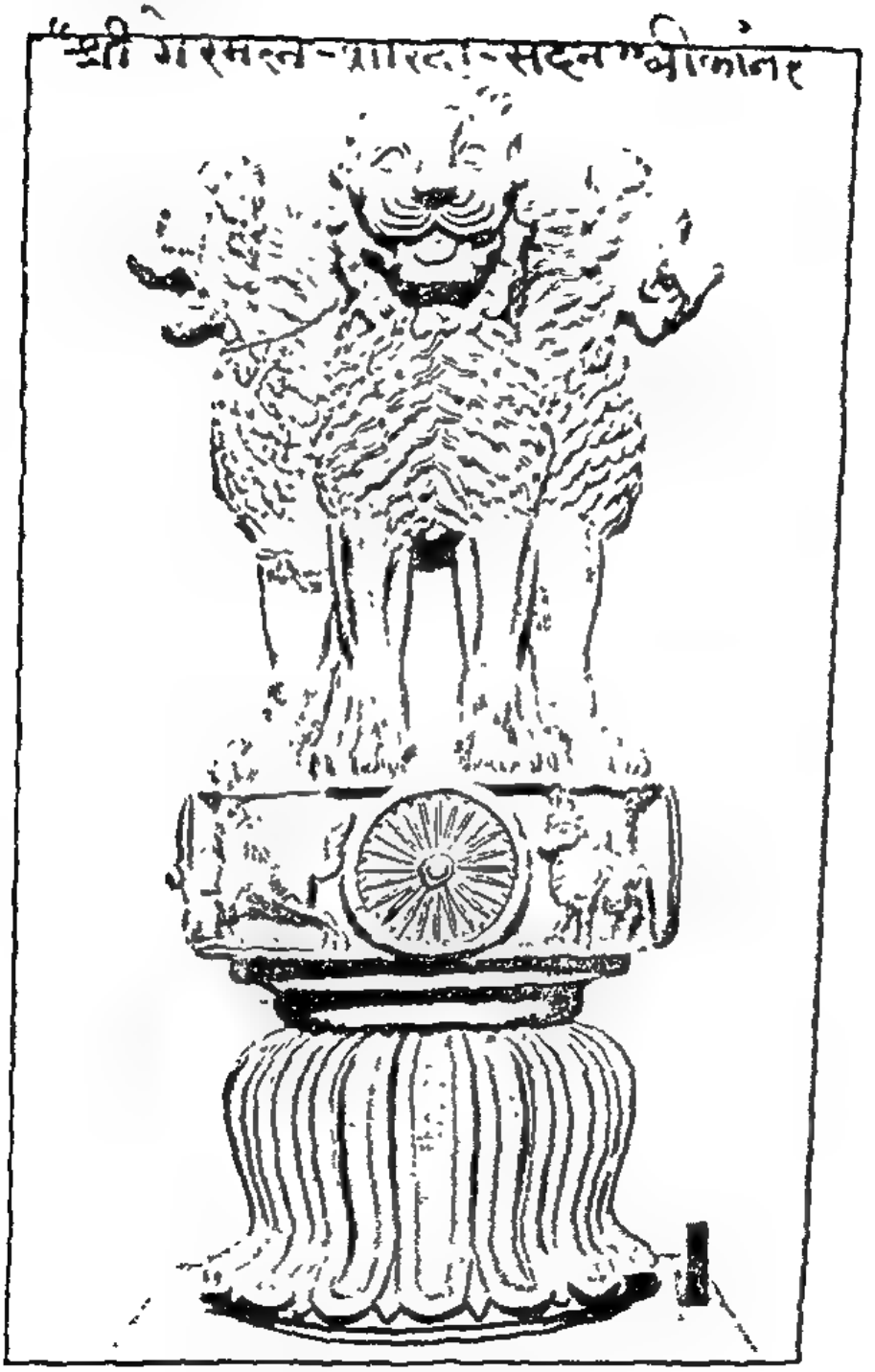


सारनाथ के अशोक-स्तम्भ का सिंह-शिखर।
( दो हज़ार वर्ष से भी अधिक पुराना )

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

के चिह्न का निदर्शक त्रिशूल है, और कहीं
क है।

न प्राचीन वस्तुओं के विषय में एक बात
में रखने योग्य है। इनमें बुद्ध की मूर्ति कहीं
है। यद्यपि बारहवीं शताब्दी के एक लेख में
क कालीन बुद्ध-मूर्ति का उल्लेख है, तथापि
त्व-विषयक बातों से जान पड़ता है कि
क के समय में बुद्ध की मूर्तियाँ न बनी थीं।
मूर्ति की उत्पत्ति प्राचीन कन्धार देश में
या के सङ्गतराशों ने की। वहाँ से उसका
र मथुरा में हुआ। फिर अन्त में गङ्गा के तट-
नगरों में। सारनाथ में प्राप्त मूर्तियों में से
ई प्राचीन बुद्ध की एक प्रचण्ड मूर्ति है। यह
क के तीसरे राज्य-वर्ष में बनाई गई थी। यह
नाथ की अन्य मूर्तियों की तरह चुनार के
र की नहीं है, मथुरा के लाल पत्थर की है।
मूर्ति का दान करने वाले बल नाम के भिक्षु
ाम मथुरा में भी एक मूर्ति पर खुदा हुआ
ाया जाता है। इन प्राचीन मूर्तियों पर पत्थर का
मिलता है। इससे पुरातत्त्वज्ञों का अनुमान
इस समय मूर्तियों के लिए मन्दिर नहीं
ये जाते थे। सारनाथ के लेखों में मन्दिर-
ी सबसे प्राचीन उल्लेख गुप्त कालीन लेखों
पाया जाता है। मूर्तियों के वस्त्र और प्रभा-
ल में ग्रीक कला की झलक दिखाई देती है।
ु गुप्त-काल की बनी हुई मूर्तियाँ सर्वोत्तम हैं।
ी पाश्चात्य कारीगरी की झलक बिलकुल नहीं।
ों से कुछ मूर्तियों का गम्भीर भाव बड़ा ही
ारी है।

र्ति बनाने की प्रथा का आरम्भ होते ही अन्य
ेवों तथा अन्य देवताओं की भी मूर्तियाँ
ने लगीं। सारनाथ में ही ऐसा अनेक
ु पाई गई हैं। इनमें अवलोकितेश्वर, मैत्रेय,
ेश्वर, धर्मचारा, वज्रपाणि इत्यादि की मूर्तियाँ
ा शामिल हैं। मूर्तियों के सिवा बुद्ध-विषयक
दृश्यों के चित्र भी खुदे हुए पाये गये हैं।

इन मूर्तियों और अन्यान्य चित्रों के सिवा
कई वस्तुयें भी मिली हैं। इनमें बड़े बड़े मट
पानी के घड़े, प्याले, सिल-लोढ़े और शोखली-मूस
आदि भी हैं। इन सब का वर्णन यहाँ नहीं
सकता।

सारनाथ का सङ्ग्रहालय सचमुच ही प्र
लोकनीय है।

हरि रामचन्द्र दिवेकर

---

# हिन्दुस्तानी सिपाहियों की वीरता ।

( २ )

आज कल हमारे हिन्दुस्तानी सिपाही मिस्र राज्य की ओर से केप्ट्रल अम्स और बेचुआलैण्ड के रणक्षेत्र में [illegible] नहीं, अन्य कई देशों तथा महाद्वीपों में भी अपनी रणशक्ति और वीरता का परिचय दे रहे हैं। इस तो सिंध देश में [illegible] के नगर की रक्षा कर रहे हैं और इस पूर्वी आफ्रिका में [illegible] के अंग्रेज राज्य पर हमला कर रहे हैं। चीन में एक अलग डिवीजन है। वहाँ अंग्रेजों ने एक सम्मिलित डिवीजन बनाया था। इस अब में हमारे कुछ सिपाहियों ने आराम से बहुत मदद दी। इस हिन्दुस्तानी फौज पूर्वी के अंग्रेजी-[illegible] अर्थात् इसके अब मालूम में पूर्वी में कई बार रक्षा [illegible] है और उन्हें अच्छी तरह रक्षा भी पूर्वी है। इस [illegible] की बड़ाई के लायक सिपाहियों ने क्या हिन्दुस्तानी सिपाही [illegible] पूर्व और अन्य के सिपाहियों ने अपनी बहादुरी [illegible] दिखाया है। इसके साथ ही साथ ने [illegible], [illegible] मुसलमान, क्या हिन्दुस्तानी सिपाही और सिपाही [illegible]। इसका कारण [illegible] है।

[illegible] हिन्दुस्तानी [illegible] को [illegible] मूर्ति से कई हैं [illegible] [illegible] और [illegible] के [illegible] [illegible] है। यहाँ से [illegible] [illegible] हिन्दुस्तानी [illegible] ( [illegible] ) [illegible] [illegible] [illegible]

# सारनाथ।

ogue of Museum of Archaeology at arnath—नामक पुस्तक के आधार पर)

भगवान् बुद्ध के चरित से चार स्थानों का विशेष सम्बन्ध है। इसी कारण बौद्धधर्मावलम्बी इन स्थानों को पवित्र मान कर इनका दर्शन करते हैं। इनमें से पहले स्थान में तो भगवान् बुद्ध का जन्म हुआ था। उन्हें ज्ञान-प्राप्ति हुई थी। तीसरे में उन्होंने पहल धर्मोपदेश किया था और चौथे में मृत्यु हुई थी। ये चारों स्थान लुम्बिनि-ग्राम, ा, सारनाथ और कुशीनगर हैं। सारनाथ न् बुद्ध ने अपने धर्म का उपदेश पहले ौण्डिन्य नामक शिष्य को दिया। इसी धर्मोपदेश को बौद्ध लोग आलङ्कारिक "धर्मचक्र-प्रवर्तन" कहते हैं। इस धर्मचक्र- का काल ईसा के पूर्व ५२८ वर्ष माना ।

रनाथ का प्राचीन नाम "मृगदाव" न) था। बुद्ध के निर्वाण के पश्चात् शीघ्र यात्रा-स्थान हो गया। परन्तु उसके लगभग क बाद तक इसके विषय में कोई ऐतिहा- ख नहीं पाया जाता। सारनाथ के प्राचीन सबसे महत्त्व का तथा सबसे पुराना चिह्न म है। उसकी स्थापना २५० वर्ष ईसा के म्राट् अशोक ने की थी। शोक का विषय ह स्तम्भ विच्छिन्न हो गया है। अपनी मूल- । स्तम्भ का केवल उतना ही भाग है जितना विच्छेद के समय भूमि में गड़ा रह गया था। ष में सुख की बात यह है कि इस स्तम्भ ै तथा इसके ऊपर का सिंह-शिखर इसके ी मिल गया है। इस स्तम्भ पर सम्राट् का एक लेख वर्तमान है। लेख में धर्मचक्र- का कोई उल्लेख नहीं है, केवल सङ्घभेद करने वाले भिक्षुगणों को श्वेत वस्त्र पहना कर विहार से निकाल देने की आज्ञा है।

अशोक-काल का नहीं तो कम से कम मौर्य-काल का एक चिह्न यहाँ पर और है। यह ईंटों का एक स्तूप है। परन्तु सन् १७९३-९४ में काशी-नरेश चेतसिंह के मन्त्री जगत्सिंह ने काशी का जगतगञ्ज बनवाते समय इसका इतना मसाला खोद लिया कि इस समय इसका अत्यल्प ही अंश बाक़ी रह गया है। इसी समय का तीसरा चिह्न पत्थर का एक कठड़ा है। इसके कुछ खम्भे कोरेल साहब को मिले थे। इनकी कारीगरी और सफ़ाई से अनुमान होता है कि कोई असाधारण वस्तु—कदाचित् धर्मचक्र-प्रवर्तन-स्थान—की रक्षा के लिए यह कठड़ा बनवाया गया होगा। शुङ्ग राजाओं के समय का भी ईसा के पूर्व १८४ से ७२ तक का, एक कठड़ा यहाँ मिला है। इसके खम्भे अशोकस्तम्भ के आस पास पाये गये हैं। इन पर बहुत से लेख हैं। उनमें खम्भे बनवाने वालों के नाम हैं। इससे जान पड़ता है कि यह काम चन्दे से किया गया होगा। इन्हीं में से दो खम्भों पर पुराने लेखों के साथ दो गुप्तकालीन लेख भी हैं। इनसे पता चलता है कि ये दोनों स्तम्भ भगवान् बुद्ध की मूलगन्धकुटी (प्रधान मन्दिर) में दीपस्तम्भ का काम देने के लिए खड़े किये गये थे। बहुत सम्भव है कि यह मूलगन्धकुटी वही प्रधान मन्दिर हो जिसका वर्णन ह्वेनसांग नामक चीनी प्रवासी ने अपनी मृगदाव यात्रा में किया है। यह प्रवासी लिखता है—"इस मन्दिर में एक पूर्णपुरुषाकृति पीतल की मूर्ति भगवान् बुद्धदेव की है। यह धर्मचक्र-प्रवर्तन का रही है। मन्दिर की नैऋत्य दिशा में पत्थर का एक स्तूप है और स्तूप के सामने ७० फ़ीट ऊँचा पत्थर का एक स्तम्भ है। वह बहुत चिकना है। उस पर प्रार्थना करने वालों के अनुकूल और प्रतिकूल चिह्न दिखाई देते हैं"।

यह ध्यान में रखने योग्य है कि यह प्रवासी न तो अशोक के लेख का ही उल्लेख करता

है और न इस स्तम्भ के सर्वोत्तम शिखर का ही। आज जो स्तम्भ विद्यमान है उसकी ऊँचाई भी ७० फ़ीट नहीं। अतः ह्वेनसांग के वर्णित मन्दिर और स्तम्भ कोई दूसरे ही होंगे। परन्तु बोगेल साहब, ओरटेल साहब के मत का अनुसरण करते हैं। वे कहते हैं कि इस चीनी-प्रवासी की दृष्टि शिल्पकला और पुरातत्त्व की ओर न थी। इस कारण उसके वर्णन में अशोक के लेख और सिंह-शिखर का न पाया जाना अस्वाभाविक नहीं। यह भी सम्भव है कि ईसा की छठी शताब्दी के आरम्भ में सारनाथ की इमारतें हूणों की चढ़ाइयों के कारण नष्ट-भ्रष्ट हो गई हों। इतने दिनों में वहाँ की इमारतों का कई बार नाश हुआ होगा। पर हर समय किसी न किसी बुद्ध-भक्त ने फिर से उन्हें दुरुस्त कराया होगा।

इस प्रकार के एक जीर्णोद्धार के विषय में एक लेख पाया भी गया है। यह लेख बुद्ध की एक मूर्ति के आसन पर खुदा हुआ है। लेख यों है—

ॐ नमो बुद्धाय। वाराणसीमास्या गुरुश्रीवामराशि पादान्वयम्। आराध्यनमितभूपति-शिरोरहं शंवत्राधामम॥ [illegible] गौडाधिपो महीपाल कार्यां श्रीमानकार(यत्)॥ सफलीकृतपाण्डित्या वाचाविनिवर्तिनी। तौ धर्मराजिकां साद्धं धर्मचक्र पुनर्नवम॥ [illegible] नर्वानामष्टमहास्थानसंलग्नमुद्दीप्तम्। एतां श्रेयिराजो वसन्तराजोऽनुज. श्रीमान्॥ संवत १०८३ [illegible] दिने ११॥

लेख का सार यह है कि गौड़ाधिपति महीपाल के राज्य में स्थिरपाल और वसन्तपाल नामक दो भाइयों ने धर्मराजिका और धर्मचक्र नाम की दो इमारतों की मरम्मत करवाई और आठ बड़े स्थानों के विषय में एक शैल-मन्दिर बनवाया।

बहुत सम्भव है कि सन् १०१७ अर्थात् संवत् १०७४ में जब महमूद गज़नवी ने काशी जीता तब इन स्थानों का नाश हुआ हो। इसके ९ वर्ष बाद इन्हीं दोनों भाइयों ने इन्हें दुरुस्त कराया।

धर्मचक्र मृगदाव के प्रधान मठ का नाम था। इस उल्लेख एक और प्रकार से भी पाया जाता है। इससे पता चलता है कि क़न्नौज के राजा गोविन्दचन्द्र की रानी कुमारदेवी से भगवान् बुद्ध की मूर्ति, जैसी वह उस समय में थी, दुरुस्त की गई और एक नया बनवा कर वह उसमें रक्खी गई। सन् १ जब मुसलमानों का राज्य उत्तरी भारत जम गया और काशी-नरेश जयचन्द [illegible] गया तब मुसलमानों की मूर्ति-भञ्जक-तृष्णा स्थान बच गया।

इसके पश्चात् यह स्थान यद्यपि स्मृतिरं रह गया तथापि मुग़ल-सम्राट् हुमायूँ एक यहाँ आकर ठहरा। उसकी मृत्यु के १५८८ में सम्राट् अकबर ने इस बात के स्म यहाँ ईंट का एक अठकोना मीनार बनवा [illegible]

## खुदाई का काम।

मुसलमानों के द्वारा नष्ट किये जाने के [illegible] इस स्थान में केवल तीन ही भवन बच रहे [illegible] धामेख (धर्मेश) स्तूप और मुख्य स्तूप। [illegible] ने जब यहाँ से अजायबघर बनवाने के लिए मसाला ले जाना चाहा तब उसने मुख्य स्तूप पर ही हमला किया। कारण यह था कि इस स्तूप पर न [illegible] मीनार था, न धामेख स्तूप जैसा बड़ा था [illegible] शिरा-खण्डों से यह भरा हुआ था। अतएव जगत्सिंह ने मुख्य स्तूप पर ही हाथ मारा और यहाँ से मसाला निकालना शुरू किया। जगत्सिंह जैसा बली था उसने इसका बहुत मसाला [illegible] गढ़ा। ऊपर का स्तूप [illegible] तक खोद डाला गया। पर, आश्चर्य यह है कि, खुदाई के समय १८ हाथ नीचे, दो पात्र—एक पत्थर का और एक संगमरमर का—मिले। इनमें एक के भीतर एक रक्खा हुआ था। दोनों पात्रों में मनुष्य की कुछ हड्डियाँ, कुछ कोयले और कुछ राख थी। [illegible] [illegible] के [illegible] में हुई। इनके पास एक [illegible] एक मूर्ति भी पाई गई। इन सब वस्तुओं के

तत्कालीन कमिश्नर मिस्टर जोनाथन डंकन ने अनुमान किया कि ये हड्डियाँ किसी बुद्ध-भक्त की हैं। उन्होंने इस बात की सूचना बङ्गाल की पशियाटिक सोसाइटी को दी। तभी से प्राचीन बौद्ध-स्थान के नाम से सारनाथ की प्रसिद्धि हुई।

इस आविष्कार से बहुत से लोगों का ध्यान सारनाथ की ओर आकृष्ट हुआ और कई लोगों ने यहाँ खुदाई शुरू की। पर इस खुदाई में स्वार्थ की मात्रा अधिक थी। कहते हैं, सन् १८१५ में, कर्नल मेकञ्ज़ी ने यहाँ कुछ खुदाई कराई, पर उसका कुछ हाल ज्ञात नहीं। पुरातत्त्व-विभाग के नियमानुसार दिसम्बर १८३४ से जनवरी १८३६ तक कनिंघम साहब ने पहले पहल यहाँ खुदाई की। धमेख-स्तूप की वायव्य दिशा में आपको, अपने खुदवाये हुए एक मन्दिर और मठ के पास, एक कोठरी में बुद्ध की कोई ६० मूर्तियाँ इकट्ठी मिलीं। साथ ही और भी कुछ प्राचीन चिह्न मिले। इनमें से कुछ पर गुप्त-लिपि में खुदे हुए दान-लेख हैं। इससे अनुमान होता है कि हूणों के आक्रमण के समय (ईसवी छठी शताब्दी के आरम्भ में) रक्षा के लिए ये मूर्तियाँ यहाँ रक्खी गई होंगी। ये मूर्तियाँ पशियाटिक सोसाइटी को दी गईं और इस समय कलकत्ते के सङ्ग्रहालय में वर्तमान हैं। इनके सिवा जो और कई मूर्तियाँ और वस्तुयें पाई गईं उनमें से बहुत सी वरुणा के पुल बाँधने में लगा दी गईं।

इसके बाद इञ्जिनियर किट्टो, जज टामस, प्रोफ़ेसर हाल, डाक्टर बटलर, मिस्टर हार्न और मिस्टर कार्नक ने यहाँ बहुत कुछ खोज की। परन्तु उनकी पाई हुई वस्तुओं में से बहुत सी लापता हैं। यद्यपि गवर्नमेंट ने सन् १८५६ में सारनाथ की ज़मीन अपने क़ब्ज़े में कर ली थी तथापि सन् १९०० तक इन प्राचीन वस्तुओं की रक्षा का कुछ भी प्रबन्ध न हो सका। इसके बाद सारनाथ तक एक नई सड़क बनाते समय मारटेल साहब इञ्जिनियर को बुद्ध की एक सुन्दर और अखण्डित मूर्ति मिली। इससे उत्साहित होकर पुरातत्त्व-विभाग की अनुज्ञा और सहायता से मारटेल साहब ने डिस्ट्रिक्ट इञ्जिनियर रायबहादुर दी० बी० चक्रवर्ती के साथ, सन् १९०४–१९०५ में, खुदाई शुरू की। जगत्सिंह के नष्ट किये हुए स्तूप के उत्तर में जो टीला था उस पर मारटेल साहब ने ध्यान दिया। किट्टो साहब का अनुमान था कि यहाँ भी एक स्तूप होगा। पर खोदने से ज्ञात हुआ कि वहाँ पर सारनाथ का पुराना मुख्य मन्दिर था। उसी के पीछे अशोक-स्तम्भ और उसका सिंह-शिखर पाया गया। इसके सिवा कई मूर्तियाँ और लेख और भी पाये गये। उस साल की खुदाई में यहाँ ४१ लेख और ४७६ अवशिष्ट चिह्न मिले।

मारटेल साहब की बदली आगरे को हो जाने से अगले साल यह काम बन्द रहा। पर सन् १९०७ में पुरातत्त्व-विभाग के डायरेक्टर जनरल मार्शल साहब ने कई और महाशयों की सहायता से फिर काम शुरू किया। इस खुदाई में कुशान और गुप्त-काल से लेकर बारहवीं शताब्दी तक के अवशेष चिह्न पाये गये और यह बात सिद्ध हो गई कि गुप्त-काल में धर्म्मचक्र अच्छी स्थिति में था और वह बारहवीं शताब्दी के मध्य तक भी वर्तमान था। जब ऐसी बहुमूल्य वस्तुएँ अधिकता से यहाँ पाई गईं तब यहाँ एक सङ्ग्रहालय की इमारत बनवाना निश्चय हुआ। तदनुसार सन् १९१० में एक इमारत बन कर तैयार हो गई। यह इमारत बौद्धविहार के नमूने पर बनाई गई है।

## प्राप्त पदार्थ।

प्राप्त हुए पदार्थों में सबसे प्रसिद्ध अशोक-स्तम्भ का सिंह-शिखर है। इस संख्या में उसका चित्र प्रकाशित किया जाता है। उसे देख कर उसकी कारीगरी का अन्दाज़ा पाठक स्वयं कर सकेंगे। मौर्य्य और शुङ्ग-काल के अन्य अवशिष्ट पदार्थों का उल्लेख आरम्भ में ही हो चुका है। इसके सिवा कुछ खम्भे भी पाये गये हैं। ये आन्ध्रकाल में बने हुए कटहरों के हैं। इन पर कहीं धर्म, सङ्घ और

बुद्ध के त्रिरत्न का निदर्शक त्रिशूल है, और कहीं धर्मचक्र है।

इन प्राचीन वस्तुओं के विषय में एक बात ध्यान में रखने योग्य है। इनमें बुद्ध की मूर्ति कहीं नहीं है। यद्यपि बारहवीं शताब्दी के एक लेख में अशोक-कालीन बुद्ध-मूर्ति का उल्लेख है, तथापि पुरातत्त्व-विषयक बातों से जान पड़ता है कि अशोक के समय में बुद्ध की मूर्तियाँ न बनी थीं। बुद्ध मूर्ति की उत्पत्ति प्राचीन कन्धार देश में क्रिया के सङ्कृतराजों ने की। वहाँ से उसका प्रचार मथुरा में हुआ। फिर अन्त में गङ्गा के तटवर्ती नगरों में। सारनाथ में प्राप्त मूर्तियों में से जिससे प्राचीन बुद्ध की एक प्रचण्ड मूर्ति है। यह कनिष्क के तीसरे राज्य-वर्ष में बनाई गई थी। यह सारनाथ की अन्य मूर्तियों की तरह चुनार के पत्थर की नहीं है, मथुरा के लाल पत्थर की है। इस मूर्ति का दान करने वाले बल नाम के भिक्षु का नाम मथुरा में भी एक मूर्ति पर खुदा हुआ पाया जाता है। इन प्राचीन मूर्तियों पर पत्थर का पालिश मिलता है। इससे पुरातत्त्वज्ञों का अनुमान है कि उस समय मूर्तियों के लिए मन्दिर नहीं बनाये जाते थे। सारनाथ के लेखों में मन्दिर-सम्बन्धी सबसे प्राचीन उल्लेख गुप्त-कालीन लेखों में पाया जाता है। मूर्तियों के वस्त्र और प्रभा-मण्डल में ग्रीक कला की झलक दिखाई देती है। परन्तु गुप्त-काल की बनी हुई मूर्तियाँ सर्वोत्तम हैं। उनमें पाश्चात्य कारीगरी की झलक बिलकुल नहीं। उनमें से कुछ मूर्तियों का गम्भीर भाव बड़ा ही हृदयहारी है।

मूर्ति बनाने की प्रथा का प्रारम्भ होते ही बोधिसत्त्वों तथा अन्य [illegible] बनाई जाने लगीं। [illegible] मूर्तियाँ पाई गई हैं। [illegible] मण्डल, धनुधारा, [illegible] देखने लायक हैं। मूर्ति [illegible] अन्य प्रसङ्गों के चित्र

इन मूर्तियों और अन्यान्य चित्रों के सिवा कई वस्तुयें भी मिली हैं। इनमें बड़े बड़े पानी के घड़े, प्याले, सिल-लोढ़े और ओखली आदि भी हैं। इन सब का वर्णन यहाँ नहीं सकता।

सारनाथ का सङ्ग्रहालय सचमुच ही लोकनीय है।

हरि रामचन्द्र दिव

---

# हिन्दुस्तानी सिपाहियों की वीरता।

( २ )

आज कल हमारे हिन्दुस्तानी सिपाही [illegible] राज्य की ओर से केवल फ्रान्स [illegible] बेलजियम के रणक्षेत्र में ही नहीं [illegible] अन्य कई देशों तथा महाद्वीपों में [illegible] अपनी राजभक्ति और वीरता का [illegible] परिचय दे रहे हैं। कुछ तो सिंध देश में [illegible] ब्लेट के बन्दर की रक्षा कर रहे हैं और कुछ पूर्वी आफ्रिका में वहाँ के जर्मन प्रान्त पर हमला कर रहे हैं। चीन में एक जगह किंगदाओ है। वहाँ जर्मनी ने एक मज़बूत किला बनाया था। उसे लेने में हमारे कुछ सिपाहियों ने जापान की बहुत मदद दी। कुछ हिन्दुस्तानी फ़ौज तुर्की के मेसोपोटेमिया अर्थात् इराक़-अरब प्रान्त में तुर्कों से कई बार टक्कर ले चुकी है और उन्हें अच्छी तरह हरा भी चुकी है। इस प्रान्त की लड़ाई में हमारे सिपाहियों ने तथा राजपूताना निवासी राजपूत गूजर और मेव आदि के बहादुरों ने अपनी बहादुरी का अच्छा परिचय दिया है। इनके साथ दो घोड़े से पठानों, [illegible] बलूची सवार सिपाही [illegible] गये हैं।

[illegible] की समर [illegible] युद्ध के [illegible] हिन्दुस्तान [illegible] भाग लिया है [illegible] हो।

तुर्कों की राजधानी कुस्तुनतुनिया ( स्तम्बोल ) जाने के लिए दरेदानियाल के मुहाने से जहाज़ पर जाना पड़ता है। मुहाना एक मील से लेकर दो तीन मील तक चौड़ा है। उसके दाहनी तरफ़ एशिया महाद्वीप है और बाईं तरफ़ योरप महाद्वीप का एक छोटा सा प्रायद्वीप। इस प्रायद्वीप को गेलीपोली कहते हैं। मुहाने के दोनों तरफ़ तुर्क लोगों का राज्य है। मुहाने से होकर जो सामुद्रिक मार्ग है उसकी रक्षा के लिए दोनों तरफ़ तट पर क़िले बने हुए हैं। जर्मन एञ्जीनियरों की सहायता से ये ऐसे मज़बूत बना दिये गये हैं कि उस रास्ते न जल-सेना जा सकती है और न कोई जहाज़। गत फाल्गुन मास में इन क़िलों को तोड़ कर अँगरेज़ी और फ़्रांसीसी बेड़ों ने भीतर घुसने का प्रयत्न किया था। परन्तु उन्हें नुक़सान उठाना पड़ा। इस कारण यह उद्योग छोड़ दिया गया। सलाह यह ठहरी कि गेलीपोली के प्रायद्वीप में अँगरेज़ी फ़ौज उतारी जावे और वह थलमार्ग से इन क़िलों को लेने का प्रयत्न करे। इसी प्रकार फ़्रांसीसी सेना पीछे से जाकर एशिया महाद्वीप की तरफ़ के समुद्र-तटवर्ती क़िलों को जा घेरे। थलसेना को समुद्र मार्ग से ले जा कर शत्रुओं की आंखों के सामने ही सुरक्षित उतार देना बड़ा कठिन, प्रायः असम्भव, कार्य समझा जाता है। पर अँगरेज़ी और फ़्रांसीसी जलसेना ने अनुपम उद्योग और युद्ध-कौशल दिखाया। साथ ही थलसेना के अफ़सरों ने ऐसी कार्य्य कुशलता और सिपाहियों ने ऐसी अतुल वीरता प्रदर्शित की कि अँगरेज़ी और फ़्रांसीसी थलसेना अपने अपने निर्दिष्ट स्थानों पर कुशलपूर्वक उतर गई।

अँगरेज़ी सेना में विशेष करके आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड से आये हुए सैनिक थे। इन्हीं के साथ एक या दो पञ्जाबी पलटनें, एक या दो गोरखा पलटनें और एक या दो पहाड़ी तोपख़ाने भी थे। काम आने वाली तथा घायलों की जो फ़ेहरिस्तें समय समय पर पेश होती हैं उनसे यह भी मालूम होता है कि इस बेड़े में संयुक्त प्रान्त के थोड़े से ब्राह्मण और क्षत्रिय भी हैं। गेलीपोली में इन्हें घोर तथा हिन्दुस्तानी सैनिकों को जैसी कठिन लड़ाई लड़नी पड़ी है वैसी कम और बेल्जियम में हो रही है। इसका एक उदाहरण सुनिए। उसका सम्बन्ध १४ नंबर की सिख पलटन से है।

इस पलटन में विशेष करके फ़ीरोज़पुर ज़िले के जाट-सिख भरती होते हैं। इन लोगों ने जो वीरता चौथी और पांचवीं जून १९१५ को 'गली' नाले की लड़ाई में दिखलाई है उससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि जिस भूमि ने भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य्य, भीम और अर्जुन के सदृश वीर कई हज़ार वर्ष पूर्व उत्पन्न किये थे, उसमें कुछ कुछ वैसे ही वीर पुरुष पैदा करने की शक्ति अब भी विद्यमान है

चौथी जून को पूर्वोक्त पलटन की खाइयां, गली नाले को काट कर, उसके आरपार पूर्व-पश्चिम की ओर निकल गई थी। इस पलटन के दाहिनी ओर ८८ नंबर बेड़े की एक गोरा पलटन थी, जिसका नाम वूस्टर पलटन है। उसके बाईं ओर एक और गोरा पलटन थी, जिसका नाम लंकाशायर फ्यूज़िलियर्स है और जो हिन्दुस्तानी बेड़े में शामिल थी। हिन्दुस्तानी बेड़ा बांईं तरफ़ और गोरों का ८८ नंबर बेड़ा दाहिनी तरफ़ था। हिन्दुस्तानी बेड़े के दाहिने बेड़े पर सिख पलटन थी; उसका स्थान नाले के पार था। उसके मोर्चे नाले के पूर्व १२० गज़ तक फैल गये थे और वहीं वूस्टर पलटन के मोर्चे शुरू हो जाते थे। इसी नाले के गर्भ में, कुछ दूर तक, सिक्खों की खाइयां थीं। तुर्क लोगों की खाइयां स

२०० से

दोनों किनारे चालीस पचास फुट ऊँचे और बहुत खड़े। कहीं कहीं तो ये दीवार के समान सीधे थे। इस कारण दोनों ओर के आदमियों को पीछे आने जाने के लिए ढका हुआ रास्ता मिल गया था। पीछे से उनका आना जाना भी उसी रास्ते होता था। जितनी सुगमता से वे पीछे जा सकते थे उतनी ही सुगमता से वे उसी रास्ते आगे भी आ सकते थे। इस कारण दुश्मन ने और सिक्ख सेना ने अपनी अपनी तरफ़ के नाले के दोनों किनारों के अन्दर सुरंगें और गड्ढे खोद कर उनके भीतर मशीन-गनों और सिपाहियों को छिपा रक्खा था। इस दशा में यदि एक सिपाही नाले के रास्ते घुस आने का प्रयत्न करे तो दोनों ओर से तथा ऊपर के कगारों से भी दोनों ओर इतना कड़ा पहरा पड़े कि उनमें से कोई भी बाहर आ जा सके आगे बढ़ने की तो बात ही न चलिए।

जहां पर हिन्दुस्तानी बेड़ा था उसके सामने का दृश्य कुछ और ढंग का होना गई थी। इस कारण उसके सामने

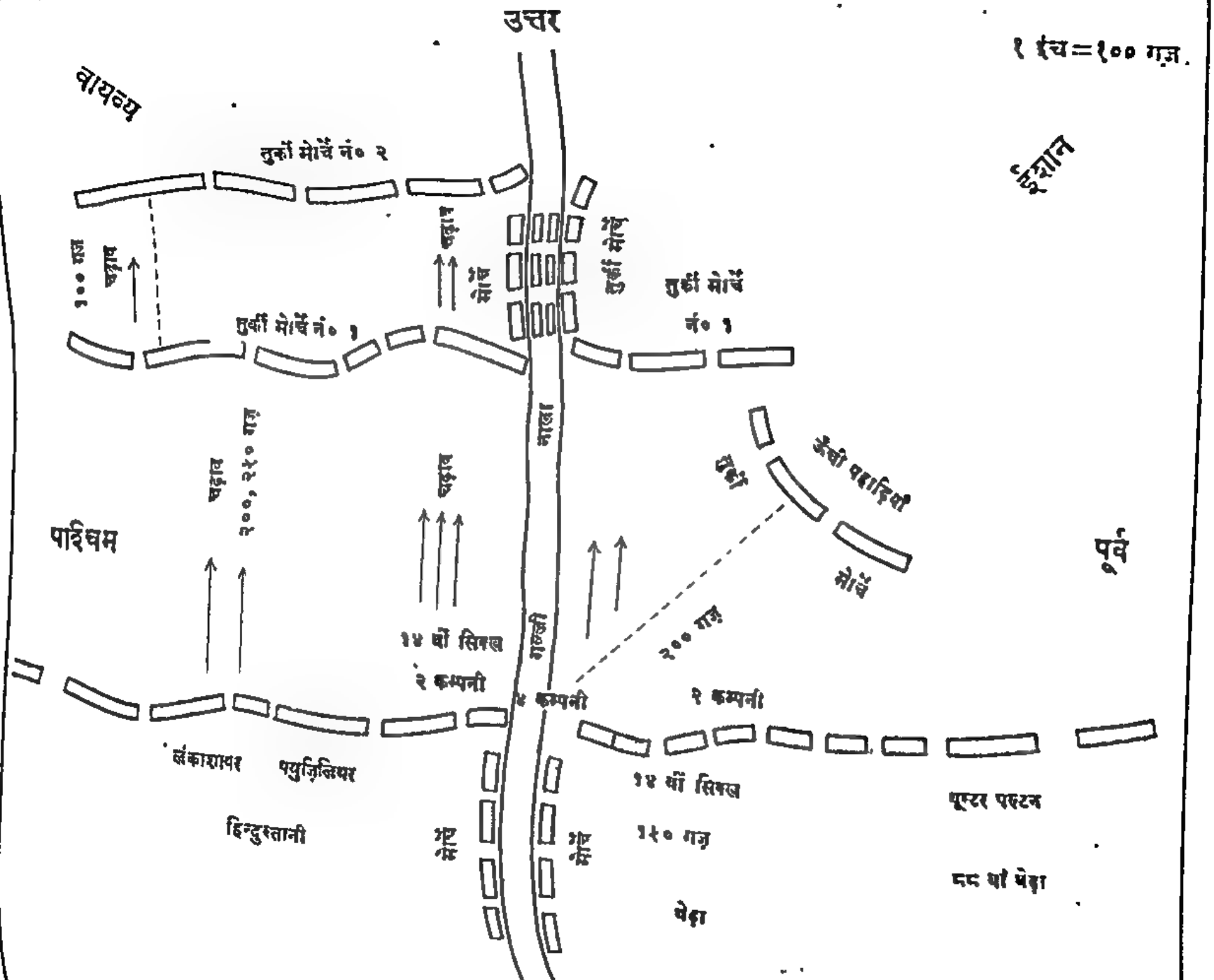
उत्तर
१ इंच=१०० गज़.
वायव्य
ईशान
तुर्की मोर्चे नं० २
तुर्की मोर्चे नं० १
तुर्की मोर्चे
नं० १
चढ़ाव
१०० गज़
चढ़ाव
१०० गज़
चढ़ाव
२००, २१० गज़
चढ़ाव
माला
गल्ली
ऊँची पहाड़ियाँ
तुर्की मोर्चे
२०० गज़
पश्चिम
पूर्व
१४ वीं सिक्ख
२ कम्पनी
२ कम्पनी
२ कम्पनी
लंकाशायर
फ्युज़िलियर
हिन्दुस्तानी
१४ वीं सिक्ख
१२० गज़
बेड़ा
पूरब पल्टन
८८ वीं बेड़ा

फ़ौज ने एक के पीछे एक, ऐसी दो क़तारें खाइयों की बनवा दी थीं। एक क़तार तो अन्दाज़न २००—२२० गज़ की दूरी पर और दूसरी ३००—३२० गज़ की दूरी पर थी। इस कारण उस पेड़े के सिपाहियों पर दुहरी मार पड़ती थी। वे पेड़े से नीची जमीन पर। इस कारण वे खाइयों की दो क़तारें न बना सकते थे।

यह हाल तो था नाले के पश्चिम ओर का। अब नाले के पूर्व ओर का हाल सुनिए। वहां मिक्स पल्टन की दो कम्पनियां थीं। उस जगह २०० गज़ की दूरी पर पूर्व से उत्तर की तरफ़ गई हुई एक पहाड़ी थी। उस पहाड़ी पर भी तुर्क लोगों ने खाइयां खोद कर मोर्चे तैयार कर लिये थे। सामने दो मोर्चे थे ही। इस दशा में नाले के पूर्व की ओर से २०० गज़ तक बढ़ने वालों पर दुतरफ़ा क्या तितरफ़ा मार पड़ती थी।

इस विषय का नक़्शा देखिए—

चौथी जून के हमले में चौदहवीं पल्टन को दो टुकड़ों में कर जाने का हुक्म मिला। पहली टुकड़ी को यह काम दिया गया कि नाले के कगारों को दबा कर ८८ नम्बर के पेड़े और हिन्दुस्तानी पेड़े से अपनी लैन मिला लें। फिर सामने के मोर्चों पर हमला करें। दूसरी टुकड़ी को यह हुक्म हुआ कि नाले के भीतर से कुछ दूर पीछे घुस जायं। फिर, उसके ऐसे किनारों पर तुर्कों की जो खाइयां हैं उन पर क़ब्ज़ा कर लें। यह करके उन लोगों के दूसरे नम्बर के मोर्चों के पीछे हो जायं।

गोलंदाज़ी की अंगरेज़ी फ़ौज के प्रधान सेनापति ने जो पर्यवेक्षक इस युद्ध का भेजा है वह एक प्रकार से कुछ अस्पष्ट है। तथापि अनुमान से मालूम होता है कि सिक्खों की दो कम्पनियां नाले की दाहनी तरफ़ से, दो बाईं तरफ़ से और एक नाले के भीतर से, कुछ दूर पीछे रही। ८८ नम्बर के पेड़े का धावा सफल हुआ। उसका काम कौशल की दृष्टि से सुगम था। उसकी बाईं तरफ़ और पीछे की हिफ़ाज़त करने वाली जो दो सिक्ख-कम्पनियां बढ़ रही थीं उनका काम अधिक कठिन था। कारण यह कि उन पर तीन तरफ़ से मार पड़ती थी। एक तो सामने से, दूसरे [illegible] से। इसके सिवा [illegible] दूसरे मोर्चे [illegible] पड़ते थे। इन [illegible] बड़ा [illegible]

छूटती थी। इस प्रकार तीनों ओर से गोलियों की मार खाते हुए आगे बढ़ना मानो सीधे सिंह के जाना था, और सिंह भी अपना जबड़ा खोले हुए खड़ा देख रहा था। परन्तु १४ नम्बर की पल्टन के "सिंह" हुए चले ही गये। उन पर तुर्कों ने गोलियों की बौछाड़ आरम्भ कर दिया। पर सिक्ख लोग डरने नहीं। वे शत्रुओं के मोर्चों तक पहुंच ही गये। जो रास्ते में गिर गये उन पर उन्होंने नज़र ही न डाली। हुए वे तुर्कों की सामनेवाली खाइयों में घुस पड़े और स हारा शत्रुओं को मार काट कर्के बाहर किया। खाइयों उन्होंने अपना क़ब्ज़ा कर लिया। रात भर वे उनकी करते रहे। तुर्कों ने भी विकट शौर्य दिखलाया। परन्तु गोविन्दसिंह के सिक्खों ने उनके दांत बेतरह खट्टे कर दि उनकी दाहनी ओर से जो गोरा पल्टन बढ़ी थी उसका भाग पहाड़ियों के पश्चिम में था। परन्तु ये लोग कगारों आड़ में थे। इस कारण उन्हें बहुत कम हानि पहुंची।

सिक्खों की ये दो कम्पनियां २ तारीख़ को या बुलाई गईं। उनकी जीती हुई खाइयों की रक्षा के लि और फ़ौज भेजी गई। हाज़िरी ली गई तो मालूम हुआ कि केवल एक अंगरेज़ और एक हिन्दुस्तानी (अर्थात् सि अफ़सर और इस १४ सिपाही बचते बचे हैं।

अब इन दो कम्पनियों की वीरता का हाल [illegible] नाले के बाईं ओर के कगारों का दबाती हुई ब बढ़ी थीं। इनका काम यह था कि हिन्दुस्तानी पेड़े के स साथ आगे बढ़ें और कगारों वाले तुर्की मोर्चों हमला करके उन्हें वहां से निकाल बाहर करें। इन के का काम भी बहुत कठिन था। उस पर सामने से तु मार पड़ती थी। २०० गज़ का मैदान पार करना भी कठिन हो रहा था। फिर उस तरफ़ खाइयां पहाड़ पर थीं। फिर हुआ कि वह बड़ा मज़बूत था। [illegible] नम्बर की खाइयों में निकाल चुका। बहुत दौड़ने से अब ये [illegible] सिक्खों को आगे [illegible] पड़ा। परन्तु सिक्ख [illegible] आगे बढ़ते गये। [illegible] सिपाही [illegible] पहुंचे थे। [illegible] [illegible] [illegible]

अब ज़रा उन लोगों का हाल सुनिए जो कुछ समय पीछे नाले के भीतर से घुसे थे। उनका आगे बढ़ना था कि दोनों किनारों के गढ़ों और गुफाओं से बन्दूकों तथा मशीन गनों की बाढ़ पर बाढ़ आने लगी। पहली ही बाढ़ से चौथाई आदमी गिर गये। पर बचे हुए सिक्ख ज़रा भी बिना हिचके झपटते हुए आगे बढ़े। परन्तु बाईं तरफ़ के बेड़े का हमला निष्फल हो जाने के कारण तुर्क लोगों को अपनी गुफायें छोड़ने की आवश्यकता न पड़ी। वे लोग सिक्खों पर बराबर वार करते ही रहे। तो भी असीम पराक्रमपूर्वक, इधर उधर कुछ ज़रा सी आड़ के सहारे, सिक्खों ने उस जगह पर क़ब्ज़ा कर ही लिया। उन्होंने अपनी दो मशीन गनें चढ़ा दीं और आस पास के शत्रुओं से लड़ते रहे। इस प्रकार लड़ते भिड़ते उन्होंने रात काटी। सुबह होते ही तुर्कों ने कगारों के ऊपर से उन पर बम्ब छोड़ना शुरू किया। इसके जवाब में सिक्खों के पास कुछ भी न था। उस समय चार कम्पनियों में से कमान्डिङ्ग अफ़सर, एक डाक्टर और केवल ४७ सिपाही रह गये थे। लाचार होकर उन्हें लौटना पड़ा।

हमले के आरम्भ में इस पल्टन में १५ अँगरेज़ अफ़सर, १४ सिक्ख अफ़सर और ५१४ सिपाही थे। दूसरे दिन सबेरे जब हाज़िरी ली गई तब केवल ३ अँगरेज़ और ३ सिक्ख अफ़सर और १३४ सिपाही जीते मिले। बाक़ी या तो मारे गये या घायल हो गये। जनरल ईयान हैमिल्टन साहब गेलीपोली में अँगरेज़ी सेना के प्रधान सेनापति थे। आपका कहना है कि इतनी भयङ्कर हानि उठाने पर भी एक भी सिपाही विचलित नहीं हुआ। जो जगह जिस टुकड़ी के हाथ आई उसे, हज़ार आपत्ति आने पर भी, उसने शत्रु के हाथ में नहीं जाने दिया।

इस पल्टन के दाहने बायें गोरा पल्टनें थीं। उनके सिपाहियों और अफ़सरों ने सिक्खों की वीरता अपनी आँखों से देखी है। वे लोग हिन्दुस्तान के इन योद्धाओं की प्रशंसा हृदय से कर रहे हैं। जिस नाले के दोनों कगारों पर और अगल बग़ल भी शत्रु मशीनगनें और बन्दूकें लिये छिपे हों उसकी घाटी में घुस जाने की हिम्मत करना ही विलक्षण शूरता है। फिर उसमें घुस कर रात भर एक स्थान पर डटे रहना वीरता की सीमा हो गई। इस प्रकार की वीरता का वर्णन करने के लिए भाषा-कोष में शब्द नहीं। सिक्ख लोग वीर-जाति के हैं। हिन्दुस्तान के इतिहास में उनकी अद्भुत वीरता के कितने ही उदाहरण पाये जाते हैं। परन्तु "गल्ली" नाले की लड़ाई में उन्होंने जो जवांमर्दी दिखलाई है उससे बढ़ कर उदाहरण सिक्ख इतिहास में भी शायद ही कहीं और मिले।

आस्ट्रेलिया तथा न्यूज़ीलैंड आदि उपनिवेशों वाले अपने देश में हिन्दुस्तानियों को नहीं आने देना चाहते। वे लोग इन्हें अपनी अपेक्षा कम दरजे के समझते हैं। यदि ऊँच-नीच होना मनुष्य के गुणों पर अवलम्बित है तो इस युद्ध में हिन्दुस्तानियों ने दिखा दिया है कि उपनिवेशों के निवासियों की अपेक्षा वे लोग यदि बढ़ कर शूर नहीं तो उनसे कम भी नहीं हैं। यह बात १४ नम्बर की डिवीज़न के सिपाहियों ने इन उपनिवेशों से आये हुए योद्धाओं को प्रत्यक्ष दिखा दिया है।

लज्जाशङ्कर झा

---

## अङ्गद और रावण।

[ रामचरित-चिन्तामणि से उद्धृत ]

अङ्गद।

मम निरवधि है कुल आप से, सुन उस उर में धर लीजिए।
महत्व है करता जिस बुद्धि से मनुज सारासार सहर्ष हो॥ १॥

जनकजा रघुनायक हाथ में सुरत जाकर अर्पण कीजिए।
पर-वधू-जन में रहते सदा अलग सन्तत मन्त नमीचर! ॥ २॥

कुशल से रहना यदि है तुम्हें, दनुज! तो फिर गर्व न कीजिए।
शरण में गिरिए रघुनाथ के; निरख के बल केवल राम हैं॥ ३॥

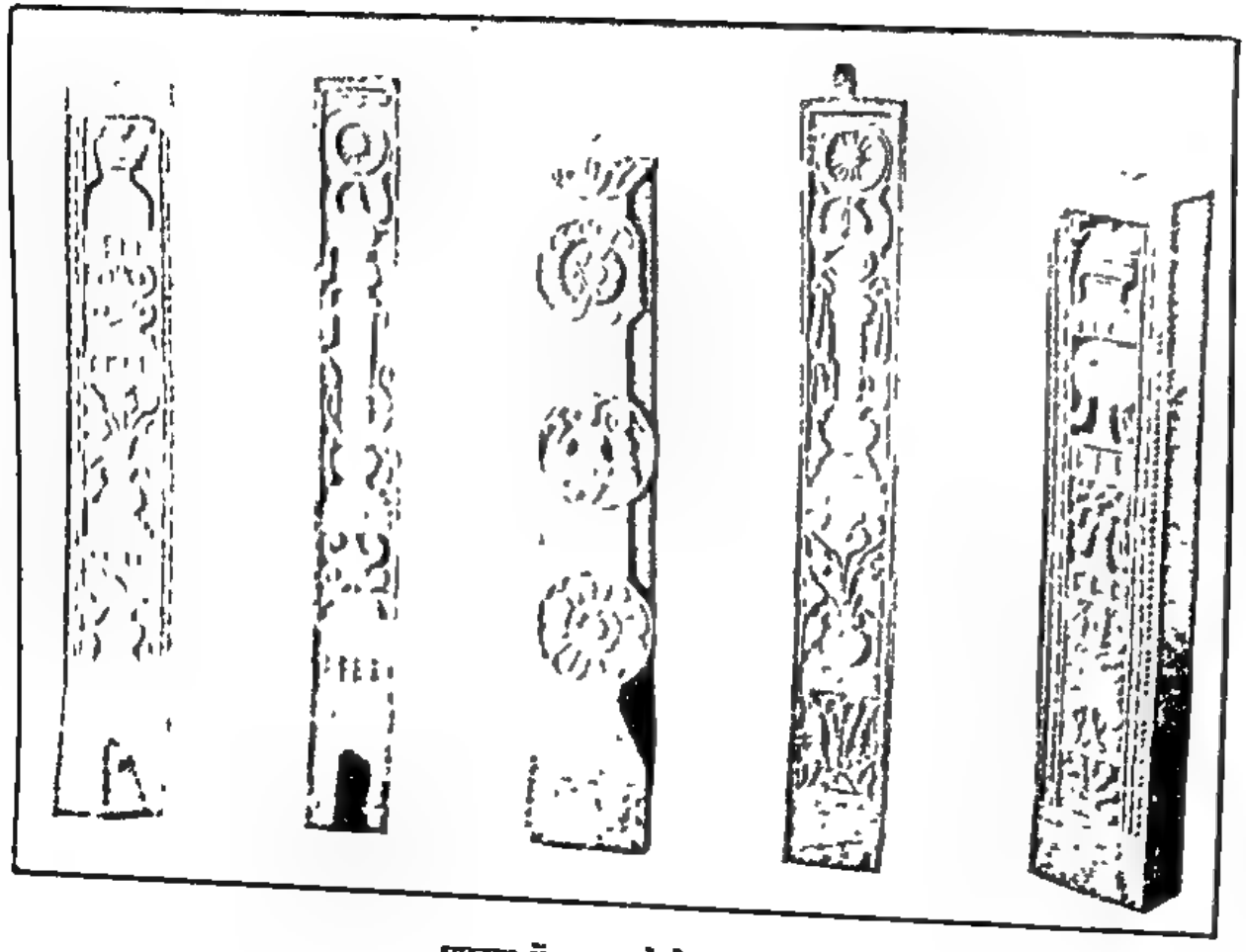

सातवाय में प्राप्त खंडहरों के 5 खम्भे।

(सिंधिया ओरिएंटल इंस्टीट्यूट, उज्जैन)

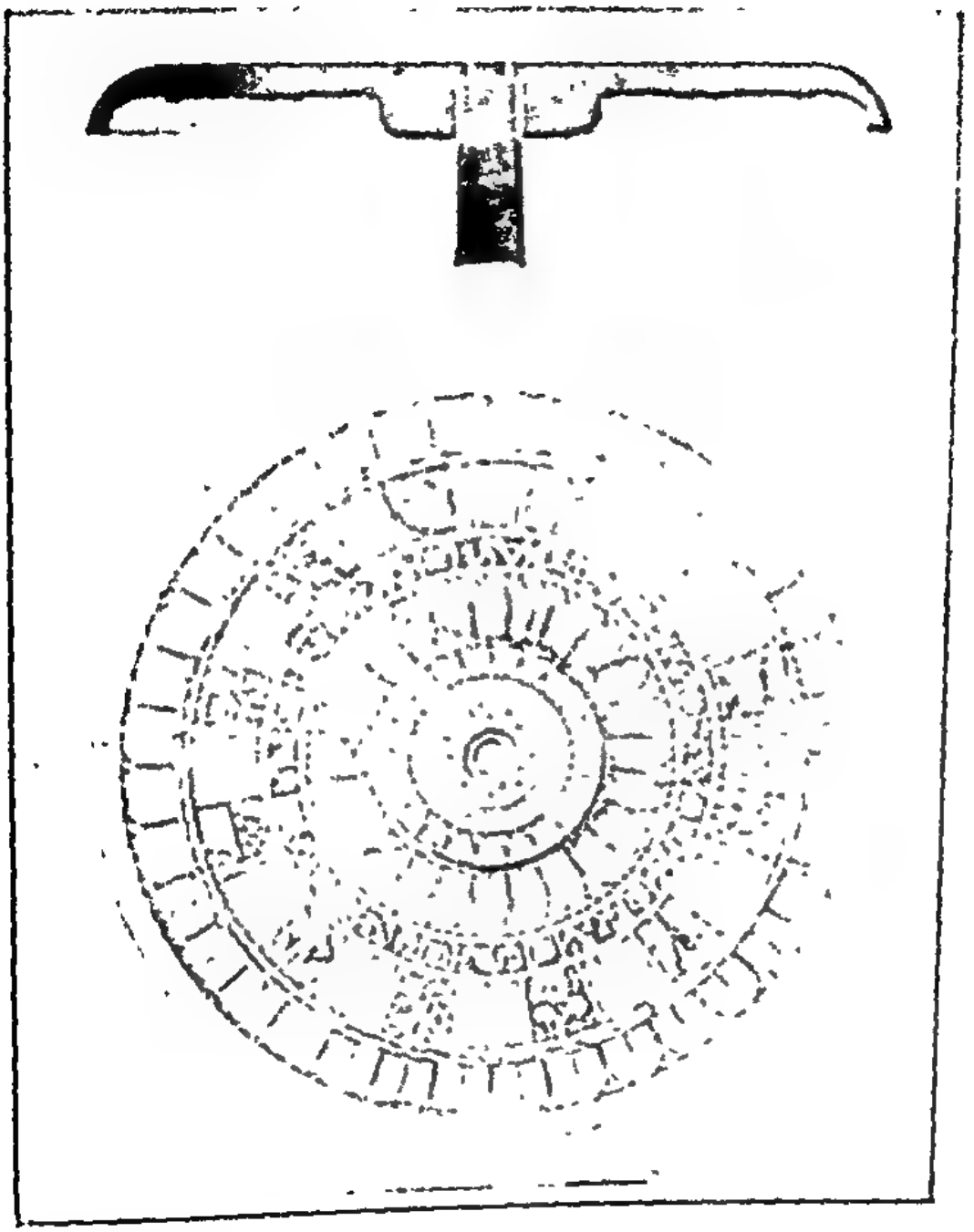

सारनाथ में प्राप्त बोधिसत्व की मूर्ति का पाता—पत्थर का। (कनिष्क-काल)

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

दुखद है तुमको जनरामजा; तुरत दूर उसे कर दीजिए।
सुखद हो सकती न उलूक को नव विशारद ! शारद चन्द्रिका ॥ ४ ॥
बहुत बार हुए विजयी सही; पर नहीं रहते दिन एक से।
सँभल के रहिए, अब आपकी महा-दशा न दशानन ! है भली ॥ ५ ॥
स्वकुल की करिए शुभ-कामना, सपदि युक्ति वही नृप ! सोचिए।
न अब भी जिसमें करना पड़े, कठिन सङ्गर सङ्ग रमेश के ॥ ६ ॥
स्वमन को वश में करिए सदा, अनय से पर-वस्तु न लीजिए।
नृप ! कभी सुख-दायक हैं नहीं —सुत, रमा, धन साधन के बिना ॥ ७ ॥
समय है अनमोल, कुकर्म में तुम विनष्ट करो उसको नहीं।
दनुज ! है जग में सुखदायिनी नियम-हीन मही न महीप को ॥ ८ ॥
परम वीर चढ़े रघुवीर हे तब पुरी पर वारिधि बांध के।
क्षितिप ! आकर के रिपु-राज्य में तनिक भीरु कभी रुकते नहीं ॥ ९ ॥
कवि, गुणी, युध, वीर, नयज्ञ भी, समझिए मन में निज को स्वयम्।
पर बिना कुल कार्य किये कभी न मन मोदक मोद-कलाप है ॥ १० ॥
सब सुरासुर हों वश आपके, करगता यदि हों सब सिद्धियां।
तदपि हे दनुजेश्वर ! जानना—निज बिना शक नाशक राम को ॥ ११ ॥
अखिल-लोक-नृपेश्वर राम को समझ के उनसे मिलिए अभी।
यह पुरी रघुनाथ-रणाग्नि में दनुज ! होम न हो, मन में डरो ॥ १२ ॥

रावण।

सुन कपे ! यम, इन्द्र, कुबेर की न हिलती रसना मम सामने।
तदपि आज मुझे करना पड़ा मनुज-सेवक से बकवाद भी ॥ १ ॥
यदि कपे ! मम राक्षसराज का स्तवन है तुझसे न किया गया।
कुछ नहीं डर है—पर क्यों वृथा निलज ! मानव मान बढ़ा रहा ॥ २ ॥
तनय होकर भी मम मित्र का शठ ! न आकर क्यों मुझसे मिला ?
डरर के वश हो किस भांति तू वर-सहायक हाथ कपे ! हुआ ॥ ३ ॥
वसन, भोजन ले मुझसे सदा; विचर तू सुख से मम राज्य में।
उस नृपात्मज के हित दे वृथा सुखद जीव न जीवन के लिए ॥ ४ ॥
तुम बिना करतूत बका करो; वचन-वीर ! सुनो हम वीर हैं।
रिपु-विनाशक यत्न किये बिना समर पावक पर बढ़ते नहीं ॥ ५ ॥
बल सुना कर तू शठ ! राम का पच मरे, पर मैं डरता नहीं।
अब भयातुर हो करके, बता, कब निशंकित रंकहित से हुआ ? ॥ ६ ॥
कवल-दायक के गुण गान में निरत तू रह वानर ! सर्वदा।
समर है सुख-दायक शूर को, कब हुआ रण चारण को भला ? ॥ ७ ॥
जनकजा हृत चित्त हुआ सही; तदपि तापस मैं कम मैं नहीं।
मधुर मोदक क्या पच जायगा—कपि ! मधा मन बालक-पेट में ॥ ८ ॥

धर नहीं सकता मुझसे कभी तनिक भी रूप-बाधक स्वप्न में।
कपि, कहाँ, कह तो किसने लगा, कपि! क्या राग पारस से भला? ॥ ९ ॥
यह असम्भव है यदि राम भी समर सम्मुख पारस से करें।
कह कपे! उड़ है सकती कभी यह रसा बज्र-बाधक-पोत से ॥ १० ॥
निलज हो यहकें, निज नाथ के गुणग्राम करो, कपि-जाति हो।
जगत में दिगजा कर पेट को, वचनवीर! न वीर बना कभी ॥ ११ ॥
मन नहीं हित-साधक जो हुआ, यह न हो सकता पर का कभी।
कपट रूप बना कर राम का कपि! विभीषण भीषण शत्रु है ॥ १२ ॥
मर मिटें रण में, पर राम को हम न दे सकते अनकामना।
सुन कपे! जग में यश वीर के सुयश का रण कारण मुख्य है ॥ १३ ॥
चतुरता दिखला मत व्यर्थ तू; रसिक हैं रण के हम जन्म से।
रुक नहीं सकते सुन के कभी, वचन-वत्सल यत्स! लड़े बिना ॥ १४ ॥

रामचरित उपाध्याय।

---

# शाकुन्तल में उपेक्षा।

[ प्रियंवदा और अनसूया। ]

संस्कृत-साहित्य के सम्राट्, कवि-कुल-चक्रवर्ती, महाकवि कालिदास शताब्दियाँ बीत जाने पर भी सहृदय जनों के हृदयों में आज तक पूर्ण आदर से अधिष्ठित हैं। कालिदास की प्रसाद-गुण-पूर्ण, सरस, सालङ्कार और सुवर्णमयी कविता-वनिता रसिक पाठक के शिरीष-कुसुम-कोमल हृदय को एक बारगी मुग्ध एवं गद्गद किये बिना नहीं रहती। यद्यपि संस्कृत के अन्यान्य कवियों ने भी गद्य और पद्य दोनों प्रकार के सरस काव्यों की रचना में वह कौशल दिखाया है कि बिना बारंबार सिर हिलाये उनको साद्यन्त पढ़ डालना सहज काम नहीं। परन्तु वीणापाणि सरस्वती के वर पुत्र कालिदास की कई बातें सबसे निराली हैं—एक दम वे जोड़ हैं। सरस और सुन्दर शब्द-विन्यास, समुचित कथा-वस्तु-वर्णन, लौकिक व्यवहारों में अलौकिक प्रवीणता आदि अनेक कारणों से कालिदास अद्वितीय महाकवि सिद्ध हो चुके हैं।

इस समय न हमें कालिदास की जीवनी के पन्नों पर मनन करना है और न उनके ग्रन्थों के गुण-दोष की आलोचना ही करनी है। हमें दिखाना है कि जहाँ वे कुसुम से भी अधिक सुकुमार हृदय रखते थे वहाँ अनाथ तापस कन्याओं को अकारण भूल भी जाते थे।

कालिदास की रसाल कृतियों में अभिज्ञान शाकुन्तल शीर्षस्थानीय है। रसिकजन प्रायः ऐसा कहा करते हैं—"नाटकेषु शाकुन्तला"। उसमें भी महर्षि कण्व के प्रशान्त आश्रम का परित्याग कर, शकुन्तला के पति-गृह जाने का हृदय-द्रावक चित्र सबसे बढ़ जाने के कारण, यह भी सुना जाता है—"तत्र च चतुर्थोऽङ्कः"। परन्तु उसी शाकुन्तल के केन्द्रीभूत चतुर्थ अङ्क में एक दुःखद दृश्य भी दिखाई देता है। इसी अङ्क में दो निरपराध तापसियों पर कवि ने अपनी निरङ्कुशता का अङ्कुश चलाया है। कण्व द्वारा परित्यक्त, संस्कृत-साहित्य की दोनों अवमानित तपस्विनियाँ—प्रियंवदा और अनसूया—आज पर्य्यन्त हमारी चित्त-भूमि में तपोवन बना कर विराज रही हैं।

पति-गृह को जाते समय शकुन्तला ने मार्ग में उनकी पूछ पाँछ की थी—"* तात, इदो पन्थ इ

*तात, इतएव किं प्रियंवदा मिश्राः सख्यो निवर्त्तिष्यन्ते

प्रियंवदा मिस्साधो सहीओ णिवत्तिस्सन्ति" ? परन्तु भगवान् काश्यप ने निष्करुण होकर यह उत्तर दे डाला—"वत्से, इमे अपि प्रदेये, न युक्तमनयोस्तत्र गन्तुम्। त्वया सह गौतमी यास्यति"। अगत्या अपनी प्यारी सहेलियों से शकुन्तला को नाता तोड़ना पड़ा। उसने कहा—"† हला, दुवे विमं समं वन्त परिस्सज्जह"। बस, इन दोनों सखियों का प्रेममय चरित्र-पट यहीं आवृत हो गया। दोनों रोती खिलखती—"‡ ताद, सउन्दला चिरहिदं सुण्ण विअ तवो वणं कहं पविसामो"?—आदि विरह-वाक्य कहती तपोवन को लौट आईं। इसके बाद भूल कर भी कवि ने उन्हें नाटक में नहीं प्रविष्ट किया। चिरकाल तक हमारे हृदय में ही वे सानन्द विश्राम कर रही हैं।

हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि काव्य में सब पात्रों का अधिकार समान नहीं होता। दारुण-हृदय कवि, अपने नायक और नायिका के लिए, न जाने कितनी अक्षय प्रतिमायें रच डालता है और निर्दय होकर चाहे जहाँ उनका विसर्जन कर बैठता है। किन्तु वह अपनी प्रमत्त बुद्धि से जहाँ जिसका होम कर देता है, क्या सचमुच वही उसका उपयुक्त स्थान होता है? इसका निर्णय करना कठिन है।

ऋषि के दोनों क्रोधान्ध शिष्य और रोती हुई दुःखिनी गौतमी ने आश्रम में लौट कर जिस समय राज-सभा का दारुण वृत्तान्त उन दोनों उत्कण्ठिता सखियों को सुनाया होगा उस समय उनकी क्या दशा हुई होगी—इसका चित्रण कवि ने मूल नाटक के लिए सर्वथा ही अनावश्यक समझा है। किन्तु क्या इतने से ही उनकी दुःखवेदना शान्त हो गई होगी? बिना लिखे और बिना अभिनय किये भी क्या उन अबलाओं के साथ हमारी सहानुभूति नहीं?

कुलिश-शकल के समान काव्य अति कठिन वस्तु है। जब हम सोचते हैं कि कण्व-दुहिता पर इसकी सहज-सखी प्रियंवदा और अनसूया का कितना स्नेह था और उनका आपस में कि सुदृढ सम्बन्ध-बन्धन था तब शकुन्तला के विप समय में उन बाल-सखियों की इस प्रकार उ होना, काव्य-दृष्टि से चाहे भले ही न्याय्य कहा परन्तु लोक-दृष्टि से न्याय्य नहीं माना जा सक

शकुन्तला के सुख, सौन्दर्य और गौरव अभिवृद्धि ही के लिए ये लावण्य-प्रतिमायें आराम-तकलीफ़ की कुछ भी परवा न करके उ साथ साथ उसमें अभिन्न रहीं। अतिथि अभ्या की अभ्यर्थना आदि का भार शकुन्तला पर कर फल लाने के लिए ऋषि वन में चले गये। त सहचरी बालिकायें सेचन-कलशों को हाथ लेकर अकाल-विकसिता नव-मालती के तले प हुईं। इसी समय हठात् दुष्यन्त के दर्शन हु परन्तु एक माननीय, पर अपरिचित, सज्जन के सह समागम से शकुन्तला, स्त्री-स्वभाव-सुलभ ल और भय के वशीभूत होकर, कर्तव्य विमूढ़ सी गई। व्यवहार-चतुर राजा के अनुरक्त प्रश्नों उत्तर मुग्धा तपस्विन्य कन्या को मौन के सिवा कुछ न सूझा। उस समय शकुन्तला के हृदय भावों को सभ्यता पूर्वक किसने प्रकट किया? त तापसी सहेलियों ने। अपनी प्रिय सहचरी के सु की लालसा से विवश होकर अनसूया ने राजा बड़ा कूट प्रश्न किया था—"* महाभाग, महिषी राजकुलेषु भूयिष्ठं श्रूयते। अतः नो प्रिय सखी अनुप संशयितहृदया न होह तदाख्यातुमर्हति"। राजा अनसूया यह वचन देना पड़ा—

परिग्रहबहुत्वेऽपि द्वे प्रतिष्ठे कुलस्य मे।
समुद्रवसना चार्वी क्षमा च गृहिणीव मे॥

किन्तु कवि ने तपस्विनी के इस कूट का इतना प्रकाश किये बिना ही विसार दिया।

शकुन्तला स्वयं अपना एक वृत्तान्त कहा है, उसमें प्रियंवदा और अनसूया हैं। वहाँ इनके कर्म हैं। उसके बिना शकुन्तला का वृत्तान्त में अधू

† हला, द्वे अपि मां समवेत परिष्वजेथाम्। ‡ तात, शकुन्तलाविरहितं शून्यमिव तपोवनं कथं प्रविशावः"।

* बहुत्व परिग्रहस्य राजन्, कुलस्य किं नु ते द्वे प्रतिष्ठे कुलस्य गृहिण्यः सपत्न्यो वा किमिति।

लड़ नहीं सकता मुझसे कभी तनिक भी नृप-बालक स्वप्न में।
कथ, कहाँ, कह तो किसने लखा, कपि! लवा रण वारण से भला? ॥ ९ ॥
यह असम्भव है यदि राम भी समर सम्मुख रावण से करे।
कह कपे! उठ है सकती कभी यह रसा वक-शावक-चोंच से ॥ १० ॥
निलज हो यहको, निज नाथ के सुयश-गान करो, कपि-जाति हो।
जगत में दिखला कर पेट को, वचनवीर! न वीर बना कभी ॥ ११ ॥
मम नहीं हित-साधक जो हुआ, वह न हो सकता पर का कभी।
कपट रूप बना कर राम का कपि! विभीषण भीषण शत्रु है ॥ १२ ॥
मर मिटें रण में, पर राम को हम न दे सकते जनकात्मजा।
सुन कपे! जग में बस वीर के सुयश का रण कारण मुख्य है ॥ १३ ॥
चतुरता दिखला मत व्यर्थ तू; रसिक हैं रण के हम जन्म से।
लख नहीं सकते सुन के कभी, वचन-कुसल कस! लड़े बिना ॥ १४ ॥

रामचरित उपाध्याय।

---

# शाकुन्तल में उपेक्षा।

[ प्रियंवदा और अनसूया। ]

संस्कृत-साहित्य के सम्राट्, कवि-कुल-चक्रवर्ती, महाकवि कालिदास शताब्दियाँ बीत जाने पर भी सहृदय जनों के हृदयों में आज तक पूर्ण आदर से अधिष्ठित हैं। कालिदास की प्रसाद-ण-पूर्ण, सरस, सालङ्कार और सुवर्णमयी कविता-नेता रसिक पाठक के शिरीष-कुसुम-कोमल हृदय एक बारगी मुग्ध एवं गद्गद किये बिना नहीं ती। यद्यपि संस्कृत के अन्यान्य कवियों ने भी और पद्य दोनों प्रकार के सरस काव्यों की ना में वह कौशल दिखाया है कि बिना बारंबार र हिलाये उनको सावन्त पढ़ डालना सहज काम हीं। परन्तु वीणापाणि सरस्वती के वर पुत्र कालि-स की कई बातें सबसे निराली हैं—एक दम ये ड़ हैं। सरस और सुन्दर शब्द-विन्यास, समुचित ा-वस्तु-वर्णन, लौकिक व्यवहारों में अलौकिक ीणता आदि अनेक कारणों से कालिदास अद्वि-य महाकवि सिद्ध हो चुके हैं।

इस समय न हमें कालिदास की जीवन-ना पर मनन करना है और न उनके कवि के गुण-दोष की आलोचना ही करनी है। हमें दिखाना है कि जहाँ वे कुसुम से भी अधिक सुकुम हृदय रखते थे वहाँ अनाथ तापस कन्याओं अकारण भूल भी जाते थे।

कालिदास की रसाल कृतियों में अभिज्ञान शाकुन्तल शीर्षस्थानीय है। रसिकजन प्रायः कह करते हैं—"नाटकेषु शाकुन्तला"। उसमें भी महर्षि कण्व के प्रशान्त आश्रम का परित्याग कर, शकु-न्तला के पति-गृह जाने का हृदय-द्रावक चित्र खींचे जाने के कारण, यह भी सुना जाता है—"तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कः"। परन्तु उसी शाकुन्तल के केन्द्रीभूत चतुर्थ अङ्क में एक दुःखद हृदय भी है। इसी अङ्क में दो निरपराध ... ने अपनी निरङ्कुशता का अङ्कुश चला परित्यक्त, संस्कृत-साहित्य की तपस्विनियाँ—प्रियंवदा हमारी चित्त-भूमि में तपोवन रही हैं।

पति गृह को जाते समय उनकी पूछ पाँछ की थी—

*जात, इतश्च किं प्रियंवदा

सरस्वती

कुंदनिका विद्वांस ।

(द्विवेदी एस, प्रयाग ।

मिल जाती है। उन्होंने भी समय समय पर शकुन्तला के प्रेमालाप की मधुरिमा बढ़ाई है। तीसरे अङ्क में जहाँ निःसहाया शकुन्तला के साथ दुष्यन्त की प्रणय-विकलता का वर्णन है वहाँ कवि आर्या गौतमी को लाकर भले ही स्वल्प दुखा है; पर रस की मात्रा में क्षति अवश्य पहुँची है; क्योंकि जिनसे घिरी रह कर शकुन्तला अपनी पूर्ति मानती थी वे वहाँ उपस्थित न थीं। वृन्त-विच्युत कुसुम पर दिनकर का प्रखर आलोक सहनीय नहीं होता। वृन्त और पल्लव का ज़रा सा अन्तर हो जाने के कारण यह आलोक कुसुम पर उतने कोमल भाव से नहीं पड़ता। नाटक के उन कतिपय पृष्ठों में सखी-विरहिता शकुन्तला आँखों में ऐसी खटकती है कि उसके अनावृत भाव को देख कर एक प्रकार के सङ्कोच का उदय होता है और आर्या गौतमी के सहसा आविर्भाव से पाठक चित्त में अपूर्व शान्ति का अनुभव करने लगते हैं।

हम यह कह सकते हैं कि प्रियंवदा और अनसूया के साथ न होने से ही राज-सभा में दुष्यन्त शकुन्तला को पहचानने में असमर्थ हुआ। दुर्वासा का शाप चाहे एक कारण हो, और अँगूठी का खोया जाना दूसरा, परन्तु अज्ञान का प्रधान और युक्ति-युक्त हेतु यही है। एक तो तपोवन से भिन्न देश, दूसरे शकुन्तला निःसहाया, तीसरे लोकापवाद-भीरु राजा। अब पहचान हो तो कैसे हो? हाँ, यदि राज-सभा में वे दोनों बाल-सखियाँ भेजी गई होतीं तो निःसंशय राजा का प्रमाद नष्ट हो जाता और शकुन्तला को यह विडम्बना न सहनी पड़ती। वे अँगूठी न थीं जो खोई जातीं; फिर दुर्वासा के अभिशाप और उसके प्रतीकार का भी उन्हें ज्ञान था। ऐसी दशा में पाँचवें ही अङ्क में कवि को अपनी कल्पना कुण्ठित करके नाटक समाप्त करना पड़ता। क्योंकि शकुन्तला के अभिज्ञान के साथ ही इस रूपक का पर्य्यवसान है। पर कवि की विचार-मन्दाकिनी पर बाँध बाँधना क्या सामान्य बात है?—"निरङ्कुशाः कवयः"!

शकुन्तला से विदा होकर शून्य तपोवन को लौट आने पर क्या तीनों सहचरों का वियोग ही उन तापसियों के सन्ताप का एक मात्र कारण हुआ होगा? चिर-वियोग के अतिरिक्त उस हतभाग्य तपोवन में क्या कोई अन्य परिवर्तन नहीं हुआ! अहो! उन्होंने वेणु-द्रुम का फूल चख लिया, जो कपोल-कल्पित पौराणिक नायिका के चरित्र पाठ से नहीं, बल्कि अपनी प्रिय सखी के सदय हृदय की खोज से! क्या इसके अनन्तर ललित बालपत्र सूखे पत्तों की खड़खड़ाहट से चौकन्नी होकर वालों में मलिल-सेचन के कृत्य को वे नहीं भूलीं! अशोक-पुञ्ज से किसी नव आगन्तुक के आगमन की आशङ्का नहीं करतीं? वे आश्रम के मृगशावक क्या फिर भी वैसे ही प्रीति-पात्र और मनोरञ्जन के हेतु बने रहे?

जो हो, पर यह सखेद कहना पड़ता है कि कविकुल-गुरु की मुखरित लेखनी ने इन अभागिनी तपस्वि-कन्याओं के प्रति उपेक्षा का भरपूर परिचय दिया है। इनका जीवन दुःख के ही विषम आवर्त में निमग्न हो गया। मधुकरिका और परभृतिका की सृष्टि करते समय भी कवि ने इन्हें सर्वथा ही भुलाये रक्खा। यदि तभी ये शकुन्तला की सेवा में लगा दी गई होतीं तो अवश्य ही इनकी विषण्ण मूर्ति इतनी मर्म-कृन्तक न होती। ये उक्त परिचारिकाओं से अधिक भाग्यशालिनी नहीं कही जा सकतीं। दुर्वल दैव ने कुमार भरत का मञ्जुल वदन इन्हें नहीं देखने दिया। और तो क्या, वियोगिनी शकुन्तला के प्रत्यभिज्ञान का सुखद संवाद भी इनके कानों तक नहीं पहुँचा! इससे अधिक निरादर और उपेक्षा और क्या होगी? व्याकरण के नियमों का उल्लङ्घन, कवि-समय का तिरस्कार, नान्दी-निर्माण में पद-विन्यास आदि की उच्छृङ्खलता किसी भाँति क्षन्तव्य हो सकती है, क्योंकि ये बातें निरङ्कुशता की सीमा के अन्तर्गत मानी जा सकती हैं; किन्तु निरपराध तपस्वि-कन्याओं के प्रति ऐसी उपेक्षा क्षमा के योग्य नहीं।

आप, उस नवोढ़ा में ही कवि-परित्यक्ता प्रियंवदा और अनसूया के दुःख-मय जीवन की एक बार फिर खोज करें। वे प्रतिबिम्ब स्वरूप नहीं हैं कि शकुन्तला के साथ ही साथ एक से दूसरी दिशा में उनका तिरोभाव हो जाय। उनका जीवन अलग है और उनकी मूर्त्ति भी अलग है। रचित काव्य के बहिर्भाग में और अभिनीत रूपक की नेपथ्य-भूमि में उनकी वृद्धि हुई है। उस समय जकड़े हुए वल्कल से भी उनका नारुख्य आबद्ध हो सकता था; परन्तु अब उनकी मधुर मुसकान पर—वर्षाकाल में अमल नभस्तल पर जल-धरमाला की भाँति—अधु गम्भीरता छाया उत्पन्न हो गई है। अब दिनोंदिन शून्य-हृदयता और अनन्य-मनस्कता बढ़ती जाती है। इसीसे उनके उत्तर प्राकृत तक पहुँच कर भी प्रायः अतिथियों का पहुन-सत्कार और अभ्यर्थित ही लौटना पड़ता है। "वयमपि कष्टं परापतिताः"।

श्रीहरिहरसुरूप शर्म्मा

---

# सौत।

पण्डित देवदत्त का विवाह हुए बहुत दिन हुए। पर, उनके कोई सन्तान न हुई। जब तक उनके माता-पिता जीवित थे तब तक वे उनसे सदा दूसरा विवाह कर लेने के लिए आग्रह किया करते थे। पर, पण्डितजी कभी इस पर राजी न हुए। उन्हें अपनी स्त्री गोदावरी से अत्यन्त प्रेम था। सन्तान से होने वाले सुख के निमित्त वे अपना वर्त्तमान पारिवारिक सुख नष्ट न करना चाहते थे। इसके अतिरिक्त वे कुछ बड़े विचार के मनुष्य थे। वे कहा करते थे कि सन्तान होने से स्त्री-पुरुष में जिम्मेदारियाँ बढ़ जाती हैं। जब तक मनुष्य में यह सामर्थ्य न हो कि वह उसका अच्छे प्रकार पालन, पोषण और शिक्षण आदि कर सके तब तक उसको सन्तान से कुछ, जाति और देश का कुछ भी कल्याण नहीं हो सकता। आपने तो कभी कभी दार्शनिकों की तरह अपने देश के बड़े दरख पर चोट भी लगाई थी। परन्तु वह बहुत बड़े देश भाइयों की तरह वे भी शारीरिक व्याधियों से लगे थे। अब किस्से कहानियों के बदले धार्मिक उनका अधिक मनोरञ्जन होता था। अब सन्तान न करते ही उन्हें भय सा लगता था।

पर, गोदावरी इतना जल्द निराश होने वाली पहले तो वह देवी-देवता, गंडे-तावीज़ और य आदि की शरण लेती रही। परन्तु, जब उसने औषधियाँ कुछ काम नहीं करतीं तब वह एक चिन्ता में लगी। यह महौषधि कार्य-रूप से कम उसने महीने, बरसों, इसी चिन्तासागर में तैरते काटे। उसने दिल को बहुत समझाया; परन्तु बात समा गई थी वह किसी तरह न निकली। भारी आत्मत्याग करना पड़ेगा। शायद पति-प्रेम अनमोल रत्न भी उसके हाथ से निकल जाय। ऐसा हो सकता है? पन्द्रह वर्ष तक लगातार के पुत्र की उसने सेवा की है क्या वह इसका भी न सह सकेगा?

गोदावरी ने अन्त में अपनी प्रबल चेष्टा को रुका ही दिया। अब सौत का शुभागमन करने वह तैयार हो गई—

( २ )

पण्डित देवदत्त गोदावरी का यह प्रस्ताव अस्वीकृत हो गये। उन्होंने अनुमान किया कि या मेरे प्रेम की परीक्षा कर रही है या मेरा मन लेना है। उन्होंने उसकी बात हँस कर टाल दी। पर, जब गो. ने सम्बोधन करके कहा—"तुम इस बात को मन में अवश्य दृढ़ करो कि सन्तान का मुँह देखने के लिए मैं तुम्हें न छोड़ूँगी पर मुझे दूसरे के लिए भी हैं"—तब तो उनका सन्देह जाता रहा। इस बार पण्डित जी की हुई गोदावरी का उन्होंने गर्म गि लिया। वे बोले—"मुझे यह न चाहिए। मुझे सन्तान की आवश्यकता नहीं।

[illegible]

पण्डितजी सरल स्वभाव के मनुष्य थे। हामी तो उन्होंने न भरी। पर, बार बार कहने से कुछ कुछ राज़ी वे अवश्य हो गये। उस तरफ़ से इसी की देर थी। पण्डितजी को कुछ भी परिश्रम न करना पड़ा। गोदावरी की कार्य्य-कुशलता ने सब काम उनके लिए सुलभ कर दिया। उसने इस काम के लिए अपने पास से केवल रुपये ही नहीं निकाले, किन्तु अपने गहने और कपड़े भी अर्पण कर दिये। लोक-निन्दा का भय इस मार्ग में सबसे बड़ा कांटा था। देवदत्त तो मन में विचार करने लगे कि जब मैं और सजा कर चलूँगा तब लोग मुझे क्या कहेंगे। मेरे दफ़्तर के मित्र मेरी हँसी उड़ायेंगे और मुसकराते हुए कटाक्षों से मेरी ओर देखेंगे। उनके ये कटाक्ष छुरी से भी ज़ियादह तेज़ होंगे। उस समय मैं क्या करूँगा। पर, गोदावरी ने अपने गांव में जाकर इस कार्य्य का आरम्भ कर दिया और इसे निर्विघ्न समाप्त भी कर डाला। नई बहू घर में आ गई। उस समय गोदावरी ऐसी प्रसन्न मालूम हुई मानो वह बेटे का ब्याह कर लाई हो। वह ख़ूब गाती बजाती रही। उसे क्या मालूम था कि शीघ्र ही उसे इस गाने के बदले रोना पड़ेगा।

( ३ )

कई मास बीत गये। गोदावरी अपनी सौत पर उसी तरह शासन करती थी मानो वह उसकी सास है। तथापि वह यह बात कभी न भूलती थी कि मैं वास्तव में उसकी सास नहीं। उधर गोमती को भी अपनी स्थिति का पूरा ख़याल रहता था। इसी कारण सास के शासन की तरह कठोर न रहने पर भी गोदावरी का शासन उसे अप्रिय प्रतीत होता था। उसे अपनी छोटी-मोटी ज़रूरतों के लिए भी गोदावरी से कहते सङ्कोच होता था।

कुछ दिनों बाद गोदावरी के स्वभाव में एक विशेष परिवर्तन दिखाई देने लगा। वह पण्डितजी को घर में आते जाते बड़ी तीव्र दृष्टि से देखने लगी। उसकी स्वाभाविक गम्भीरता अब मानो लोप सी हो गई। ज़रा सी बात भी उसके पेट में नहीं पचती। जब पण्डितजी दफ़्तर से आते हैं तब गोदावरी उनके पास घंटों बैठी गोमती का वृत्तान्त सुनाया करती है। इस वृत्तान्त-कथन में बहुधा ऐसी छोटी छोटी बातें भी होती थीं कि जब कथा समाप्त होती तब पण्डितजी के हृदय से बोझ सा उतर जाता। गोदावरी क्यों इतनी मृदुभाषिणी हो गई थी, इसका कारण समझना मुश्किल है। शायद अब वह गोमती से डरती थी। उसके सौन्दर्य्य से, उसके यौवन से, उसके लज्जायुक्त नेत्रों से शायद वह अपने को पराभूत समझती है। बांध को तोड़ कर अब वह पानी की धारा को मिट्टी के ढेलों से रोकना चाहती है!

एक दिन गोदावरी ने गोमती से मीठे चावल पकाने को कहा। शायद वह रक्षाबन्धन का दिन था। गोमती ने कहा, शक्कर नहीं है। गोदावरी यह सुनते ही विस्मित हो उठी। इतनी शक्कर इतनी जल्दी कैसे उठ गई! जिसे छाती फाड़ कर कमाना पड़ता है उसे अखरता है खाने वाले क्या जानें?

जब पण्डितजी दफ़्तर से आये तब यह ज़रा सी बात बड़ा विस्तृत रूप धारण करके उनके कानों में पहुँची। थोड़ी देर के लिए पण्डितजी के दिल में भी यह शङ्का हुई कि गोमती को शायद भस्मक रोग तो नहीं हो गया।

ऐसी ही घटना एक बार फिर हुई। पण्डितजी को बवासीर की शिकायत थी। लाल मिर्च वे बिलकुल न खाते थे। गोदावरी जब रसोई बनाती थी तब वह लाल मिर्च रसोई में लाती ही न थी। गोमती ने एक दिन दाल में मसाले के साथ लाल मिर्च भी थोड़ी सी डाल दी। पण्डितजी ने दाल कम खाई। पर, गोदावरी गोमती के पीछे पड़ गई। ऐंठ कर वह उससे बोली—"ऐसी जीभ जल क्यों नहीं जाती"!

( ४ )

पण्डितजी बड़े सीधे आदमी थे ही दफ़्तर गये, खाया, पड़ कर सो रहे। वे एक साप्ताहिक अख़बार मँगाते थे। उसे कभी कभी महीनों खोलने की नौबत न आती थी। जिस काम में ज़रा भी कष्ट या परिश्रम होता उससे वे कोसों दूर भागते थे। कभी कभी उनके दफ़्तर में थियेटर के "पास" मुफ़्त मिला करते थे। पर, पण्डितजी उनसे कभी काम न लेते। और ही लोग उनसे उन्हें मांग ले जाया करते। रामलीला या कोई और मेला तो उन्होंने शायद नौकरी करने के बाद फिर कभी देखा ही नहीं। गोदावरी उनकी प्रकृति का परिचय अच्छी तरह पा चुकी थी। पण्डितजी

भी प्रत्येक विषय में गोदावरी के ही मतानुसार चलने में अपनी कुशल समझते थे।

पर, रुई सी मुलायम वस्तु भी दब कर कठोर हो जाती है। पण्डितजी को यह आठों पहर की चहचह असह्य सी प्रतीत होती। कभी कभी वे मन में झुँझलाने भी लगते। इच्छा-शक्ति, जो इतने दिनों तक बेकार पड़े रहने से निर्बल सी हो गई थी, अब कुछ सजीव सी होने लगी थी।

पण्डितजी यह मानते थे कि गोदावरी ने सौत को घर लाने में बड़ा भारी त्याग किया है। इसका यह त्याग अलौकिक कहा जा सकता है। परन्तु उसके त्याग का भार जो कुछ है मुझ पर है। सोमती पर उसका क्या एहसान! मेरे कारण उस पर क्यों ऐसी कृतायें की जाती हैं। यहां उसे ऐसा कौन सा सुख है जिसके लिए वह फटकार पर फटकार सहे? पति मिला है वह बूढ़ा और सदा रोगी। घर मिला है, वह ऐसा [redacted] अगर आज नौकरी छूट जाय तो कल चूल्हा न जले। इस दशा में गोदावरी का यह स्नेहरहित बर्ताव उन्हें बहुत अनुचित मालूम होता।

गोदावरी की दृष्टि इतनी स्थूल न थी कि उसे पण्डितजी के मन के भाव नज़र न आयें। उनके मन में जो विचार पैदा होते वे सब गोदावरी को उनके मुख पर अङ्कित से दिखाई पड़ते। यह जानकारी उसके हृदय में एक घोर ग्लानि के प्रति ईर्षा की प्रचण्ड अग्नि दहका देती, दूसरी ओर पण्डित देवदत्त पर निष्ठुरता और स्वार्थप्रियता का दोषारोपण कराती। फल यह हुआ कि मनोमालिन्य दिन दिन बढ़ता ही गया।

( ५ )

गोदावरी ने धीरे धीरे पण्डितजी से सोमती की बात-चीत करनी छोड़ दी। मानो उसके निकट सोमती पर मैं थी ही नहीं। न उसके खाने पीने की वह सुधि लेती है, न कपड़े लत्ते की। एक बार कई दिनों तक उसे उजाड़ के लिए भी कुछ न मिला। पण्डितजी आजकल जाड़ों से रो रहे थे। वे इन सब अत्याचारों को देख करते, पर घर में शान्ति-भङ्ग के और उपद्रव मच जाने के भय से स्त्री से कुछ भी न कहते। तथापि, इस विचारे उलाहने ने उनकी सहनशक्ति को भी मथ डाला। एक दिन उन्होंने गोदावरी से डरते डरते कहा—"क्या आज कल तुम उजाड़ के लिए मिट्टी विट्टी नहीं लाती"?

गोदावरी ने क्रुद्ध होकर जवाब दिया—"तुम नहीं तो आये कहां से? मेरे कोई नौकर बैठा है"

देवदत्त को गोदावरी के ये कठोर वचन तीर से लगे। इतने दिनों तक गोदावरी ने उनसे ऐसी रोषपूर्ण बात कभी न की थी। वे बोले—"धीरे बोलो; झुँझलाने की तो मैंने कोई बात ही नहीं की"।

गोदावरी ने आंखें नीची करके कहा—"मुझे जैसे आता है वैसे बोलती हूँ। दूसरों की बोली कहां से लाऊं"?

देवदत्त ने ज़रा गरम होकर कहा—"आज कल मुझे तुम्हारे मिज़ाज का कुछ रङ्ग ही नहीं मालूम होता। किस बात पर तुम उलझती हो"।

गोदावरी का चेहरा क्रोधाग्नि से लाल हो गया। आंखें चढ़ी हो गईं। होंठ उसके फड़कने लगे। वह बोली—"मेरी कोई बात अब तुमको क्यों लगेगी? अब तो मैं सिर से पैर तक दोषों की हूँ। अब और लोग तुम्हारे मन का काम कर सकते हैं। मुझसे नहीं हो सकता। यह लो, मैं जाती हूँ। अपने घर-बार को सँभाल लो। मुझे रोज़ की झकझक नहीं सहन की जाती। जब तक निभाया। अब नहीं निभ सकता"।

पण्डित देवदत्त मानो मूर्छा से हो गये। जिस [redacted] भङ्ग का उन्हें भय था उसने अनायास भयङ्कर रूप धारण करके उनके घर में प्रवेश किया। वे कुछ भी न बोल सके। इस समय उनके अधिक बोलने से बात बढ़ जाती थी। वे बाहर चले आये और सोचने लगे कि मैंने सोमती के साथ कौन सा अनुचित व्यवहार किया है। उनकी समझ में न आया कि गोदावरी के हाथ से निकल जाने पर उनका कौन सा नुकसान हो सकता है। इस बेतुकी बातचीत में उसने किस प्रकार बात बनाई थी। क्या क्या बातें करता था। कैसे उसने अपनी बात बनाई। उसे मनाना पड़ेगा। पर वह [redacted] क्या मनाना है? मनाना क्या कहलाता है? मनाना कैसे भी किसी को मनाना हो, पर मुश्किल है।

परन्तु पण्डितजी को यह मुश्किल [redacted] कठिन कार्य का यह कुछ [redacted] कारण था।

में ज्यों की त्यों, तीन दिन तक, पड़ी रही। किसी को उसके निकट जाने का साहस न हुआ।

चौथे दिन पण्डितजी ने मानो जान पर खेल कर उस कुञ्जी को उठा लिया। उस समय उन्हें ऐसा मालूम हुआ मानो किसी ने उनके सिर पर पहाड़ उठा कर रख दिया। आलसी लोगों को अपने नियमित मार्ग से तिल भर भी हटना बड़ा कठिन मालूम होता है।

यद्यपि पण्डितजी जानते थे कि मैं अपने दफ़्तर के कारण इस कार्य्य को सँभालने में असमर्थ हूँ, तथापि उनसे इतनी ढिठाई न हो सकी कि वह कुञ्जी वे गोमती को दे दें। पर, यह केवल दिखावा ही भर था। कुञ्जी उन्हीं के पास रहती थी; काम सब गोमती को करना पड़ता था। इस प्रकार गृहस्थी के शासन का अन्तिम साधन भी गोदावरी के हाथ से निकल गया। गृहिणी के नाम के साथ जो मर्य्यादा और जो सम्मान है वह भी गोदावरी के पास से उसी कुञ्जी के साथ चला गया। देखते देखते घर की महरी और पड़ोस की स्त्रियों के बरताव में भी बहुत अन्तर पड़ गया। गोदावरी अब पदच्युत रानी की तरह थी। उसका अधिकार अब केवल दूसरों की सहानुभूति पर ही रह गया था।

( ६ )

गृहस्थी के काम-काज में परिवर्तन होते ही गोदावरी के स्वभाव में भी शोकजनक परिवर्तन हो गया। ईर्षा मन में रहने वाली वस्तु नहीं। आठों पहर पास-पड़ोस के घरों में यही चर्चा होने लगी—देखो तो दुनिया कैसी मतलब की है। बेचारी ने लड़-झगड़ कर ब्याह कराया; जान-बूझ कर अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारी। यहाँ तक कि अपने गहने कपड़े तक उतार दिये। पर अब रोते रोते आँचल भीगता है। सौत तो सौत ही है, पति ने भी उसे आँखों से गिरा दिया। बस, अब लौंडी की तरह घर में पड़ी पड़ी पेट जिलाया करे। यह भी कोई जीना है!

गोदावरी ये करुणासूचक बातें सुनती। इससे उसकी ईर्षाग्नि और भी प्रबल होती जाती। उसे इतना न सूझता था कि यह मौखिक समवेदनायें अधिकांश उस मनोविकार से पैदा हुई हैं जिससे मनुष्य को दूसरों की हानि और दुःख पर हँसने में विशेष आनन्द आता है।

गोदावरी को जिस बात का पूर्ण विश्वास और पण्डितजी को जिसका बड़ा भय था वह न हुई। घर के काम-काज में कोई विघ्न-बाधा, कोई रुकावट, न पड़ी। हाँ, अनुभव न होने के कारण पण्डितजी का प्रबन्ध गोदावरी के प्रबन्ध जैसा अच्छा न था। कुछ रुपये ज़ियादह पड़ जाता था। पर, काम भले प्रकार चला जाता था। हाँ, गोदावरी को गोमती के सभी काम दोषपूर्ण दिखाई देते थे। ईर्षा में अग्नि है। परन्तु अग्नि का गुण उसमें नहीं। वह हृदय को फैलाने के बदले उसे और भी संकीर्ण कर देती है। अब घर में कुछ हानि हो जाने से गोदावरी को दुःख के बदले आनन्द होता है। बरसात के दिन थे। कई दिन तक सूर्य्य-नारायण के दर्शन न हुए। सन्दूक़ में रक्खे हुए कपड़ों में फफूँदी लग गई। तेल के अचार बिगड़ गये। गोमती को उन्हें धूप में रखने की सुधि न रही। गोदावरी को यह सब देख कर रत्ती भर भी दुःख न हुआ। हाँ, दो चार जली-कटी सुनाने का अवसर उसे अवश्य मिल गया—"मालकिन बनना ही आता है कि मालकिन का काम करना भी।"

पण्डित देवदत्त की प्रकृति में भी अब एक नया रङ्ग नज़र आने लगा। जब तक गोदावरी अपनी कार्य्य-पारायणता से घर का सारा बोझ सँभाले थी तब तक उनको कभी किसी चीज़ की कमी नहीं खली। यहाँ तक कि शाक-भाजी के लिए भी उन्हें बाज़ार नहीं जाना पड़ा। पर, अब गोदावरी उन्हें दिन में कई बार बाज़ार दौड़ते देखती है। गृहस्थी का प्रबन्ध ठीक न रहने से बहुधा ज़रूरी चीज़ों के लिए उन्हें बाज़ार ऐन वक़्त पर जाना पड़ता है। गोदावरी यह कौतुक देखती और सुना सुना कर कहती—"यही महाराज हैं कि एक तिनका उठाने के लिए भी न उठते थे। अब देखती हूँ दिन में दस दफ़े बाज़ार में खड़े रहते हैं। कभी यह कहते अब मैं इन्हें नहीं सुनती कि मेरे लिखने-पढ़ने में हर्ज होगा'।

गोदावरी को इस बात का एक बार परिचय मिल चुका था कि पण्डितजी बाज़ार-हाट के काम में कुशल नहीं हैं। इसी लिए जब उसे कपड़ों की ज़रूरत होती तब वह अपने पड़ोस के एक बूढ़े लाला साहब से मँगवाया करती थी। पण्डितजी को यह बात भूल सी गई थी कि गोदावरी को साड़ियों की भी ज़रूरत पड़ती है। उनके सिर से तो जितना बोझ कोई हटा दे उतना ही अच्छा था। सुई भी

सरस्वती

[illegible]

[illegible]

में ज्यों की त्यों, तीन दिन तक, पड़ी रही। किसी को उसके निकट जाने का साहस न हुआ।

चौथे दिन पण्डितजी ने मानो जान पर खेल कर उस कुञ्जी को उठा लिया। उस समय उन्हें ऐसा मालूम हुआ मानो किसी ने उनके सिर पर पहाड़ उठा कर रख दिया। आलसी लोगों को अपने नियमित मार्ग से तिल भर भी हटना बड़ा कठिन मालूम होता है।

यद्यपि पण्डितजी जानते थे कि मैं अपने दफ़्तर के कारण इस कार्य्य को सँभालने में असमर्थ हूँ, तथापि उनसे इतनी ढिठाई न हो सकी कि वह कुञ्जी वे गोमती को दे दें। पर, यह केवल दिखावा ही भर था। कुञ्जी उन्हीं के पास रहती थी; काम सब गोमती को करना पड़ता था। इस प्रकार गृहस्थी के शासन का अन्तिम साधन भी गोदावरी के हाथ से निकल गया। गृहिणी के नाम के साथ जो मर्य्यादा और जो सम्मान है वह भी गोदावरी के पास से उसी कुञ्जी के साथ चला गया। देखते देखते घर की महरी और पड़ोस की स्त्रियों के बरताव में भी बहुत अन्तर पड़ गया। गोदावरी अब पदच्युत रानी की तरह थी। उसका अधिकार अब केवल दूसरों की सहानुभूति पर ही रह गया था।

( ६ )

गृहस्थी के काम काज में परिवर्तन होते ही गोदावरी के स्वभाव में भी शोकजनक परिवर्तन हो गया। ईर्षा मन में रहने वाली वस्तु नहीं। आठों पहर पास-पड़ोस के घरों में यही चर्चा होने लगी—देखो तो दुनिया कैसी मतलब की है। बेचारी ने लड़-झगड़ कर ब्याह कराया; जान-बूझ कर अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारी। यहाँ तक कि अपने गहने कपड़े तक उतार दिये। अब रोते रोते आँचल भीगता है। सौत तो सौत ही है, पति ने भी उसे आँखों से गिरा दिया। बस, अब लौंडी की तरह घर में पड़ी पड़ी पेट जिलाया करे। यह भी कोई जीना है!

गोदावरी ये करुणासूचक बातें सुनती। इससे उसकी ईर्षाग्नि और भी प्रबल होती जाती। उसे इतना न सूझता था कि यह मौखिक समवेदनायें अधिकांश उस मनोविकार से पैदा हुई हैं जिससे मनुष्य को दूसरों की हानि और दुःख पर हँसने में विशेष आनन्द आता है।

गोदावरी को जिस बात का पूर्ण विश्वास और पण्डितजी को जिसका पूरा भय था वह न हुई। घर के काम-काज में कोई विघ्न-बाधा, कोई रुकावट, न पड़ी। हाँ, अनुभव न होने के कारण पण्डितजी का प्रबन्ध गोदावरी के प्रबन्ध जैसा अच्छा न था। कुछ ख़र्च ज़ियादह पड़ जाता था। पर, काम भले प्रकार चला जाता था। हाँ, गोदावरी को गोमती के सभी काम दोषपूर्ण दिखाई देते थे। ईर्षा में अग्नि है। परन्तु अग्नि का गुण जलाने, नहीं। वह हृदय को फैलाने के बदले उसे और भी सङ्कुचित कर देती है। अब घर में कुछ हानि हो जाने से गोदावरी को दुःख के बदले आनन्द होता है। बरसात के दिन थे। कई दिन तक सूर्य्य-नारायण के दर्शन न हुए। सन्दूक़ में रक्खे हुए कपड़ों में फफूँदी लग गई। तेल के अचार बिगड़ गये। गोमती को उन्हें धूप में रखने की सुधि न रही। गोदावरी को यह सब देख कर रत्ती भर भी दुःख न हुआ। हाँ, दो चार जली-कटी सुनाने का अवसर उसे अवश्य मिल गया—"मालकिन बनना ही आता है कि मालकिन का काम करना भी।"

पण्डित देवदत्त की प्रकृति में भी अब एक नया रङ्ग नज़र आने लगा। जब तक गोदावरी अपनी कार्य्य-परायणता से घर का सारा बोझ सँभाले थी तब तक उनको कभी किसी चीज़ की कमी नहीं खली। यहाँ तक कि शाक-भाजी के लिए भी उन्हें बाज़ार नहीं जाना पड़ा। पर, अब गोदावरी उन्हें दिन में कई बार बाज़ार दौड़ते देखती है। गृहस्थी का प्रबन्ध ठीक न रहने से बहुधा ज़रूरी चीज़ों के लिए उन्हें बाज़ार ऐन वक़्त पर जाना पड़ता है। गोदावरी यह कौतुक देखती और सुना सुना कर कहती—"यही महाराज हैं कि एक तिनका उठाने के लिए भी न उठते थे। अब देखती हूँ दिन में दस दफ़े बाज़ार में खड़े रहते हैं। कभी यह कहते अब मैं इन्हें नहीं सुनती कि मेरे लिखने-पढ़ने में हर्ज होगा"।

गोदावरी को इस बात का एक बार परिचय मिल चुका था कि पण्डितजी बाज़ार-हाट के काम में कुशल नहीं हैं। इसी लिए जब उसे कपड़ों की ज़रूरत होती अपने पड़ोस के एक बूढ़े लाला साहब थी। पण्डितजी को यह बात भूल सी को साड़ियों की भी ज़रूरत पड़ती है जितना बोझ कोई हटा दे उतना ही

ये वही कपड़े पहनते थे जो गोदावरी माँगा कर उन्हें दे देती थी। पण्डितजी को नये फ़ैशन और नये नमूनों से कोई प्रयोजन न था। पर, अब कपड़ों के लिए भी उन्हीं को बाज़ार जाना पड़ता है। एक बार गोमती के पास साड़ियाँ न थीं। पण्डितजी बाज़ार गये तो एक बहुत अच्छा सा जोड़ा उसके लिए ले आये। बज़ाज़ ने मनमाने दाम लिये। उधार सौदा लेने में पण्डितजी ज़रा भी आगा-पीछा न करते थे। गोमती ने वह जोड़ा गोदावरी को दिखाया। गोदावरी ने ईर्ष्या और मुँह फेर कर रुखाई से बोली—"भला, तुमने उन्हें कपड़े लाना तो सिखा दिया। मुझे तो सोलह वर्ष बीत गये। उनके हाथ का लाया हुआ कपड़ा मुझे स्वप्न में भी पहनना नसीब नहीं हुआ"।

ऐसी घटनायें गोदावरी की ईर्ष्याग्नि को और भी प्रज्वलित कर देती थीं। जब तक उसे यह विश्वास था कि पण्डितजी स्वभाव ही से रूखे हैं तब तक उसे सन्तोष था। परन्तु, अब उनकी ये नई नई तारीफ़ें देख कर उसे मालूम हुआ कि जिस प्रीति को मैं सैकड़ों यत्न करके भी न पा सकी उसे सौत ने केवल अपने यौवन से जीत लिया। उसे अब निश्चय हुआ कि मैं जिसे सच्चा प्रेम समझ रही थी वह वास्तव में कपटपूर्ण था। वह निरा स्वार्थ था।

( ७ )

दैवयोग से इन्हीं दिनों गोमती बीमार पड़ी। उसे उठने-बैठने की भी शक्ति न रही। गोदावरी रसोई बनाने लगी। पर, उसे इसका निश्चय नहीं कि गोमती वास्तव में बीमार है। उसे यही ख़याल था कि मुझ से खाना पकवाने के लिए ही दोनों प्राणियों ने यह स्वाँग रचा है। पड़ोस की स्त्रियों से भी वह कहती कि छौंकी बनने में इतनी ही कसर थी। वह भी पूरी हो गई।

पण्डितजी को आज कल खाना खाते वक़्त आगा-पीछा सोचना पड़ जाता है। वे न जाने क्यों गोदावरी से कुछ खिंचे से रहने लगे हैं। न मालूम कैसा कठोर और हृदय-विदारक बात वह सुनाने लगे। इसी लिए खाना खाते वक़्त वे डरते रहते थे कि कहीं उस भयङ्कर स्वप्न का फिर न हो जाय! गोदावरी अपने ताज़े बेरों से उनके मन का भाव ताड़ जाती थी। पर, अब हो भी क्या सकता था।

एक दिन उससे न रहा गया। वह बोली—"क्या मुझसे बोलने की भी मनाई कर दी गई है? कहीं तो रात रात भर बातों का तार नहीं टूटता। सामने मुँह न खोलने की भी क़सम सी खाई है। रङ्ग-ढङ्ग तो देखते हो न? अब तो सब काम तुम्हारे मुताबिक़ चल रहा है न"?

पण्डितजी ने सिर नीचा किये हुए उत्तर दिया—"जैसे चलना है वैसे चलता है। अब उस ज़िक्र में क्या जान दे दूँ? जब तुम यही चाहती हो कि घर मिट्टी में जाय तब फिर मेरा क्या बस है।"

इस पर गोदावरी ने बड़े कठोर वचन कहे। गई। पण्डितजी भोजन पर से उठ आये। गोदावरी ने मना कर उन्हें बिठाना चाहा। पर ये बहुत देर तक भूखे रहे। तब उसने भी रसोई उठा दी। सारे घर को उपवास करना पड़ा।

गोमती में एक विचित्रता यह थी कि वह कड़ी से कड़ी बात सहन कर सकती थी। पर, भूख सहन करना उसके लिए बड़ा कठिन था। इसी लिए वह कोई प्रण न करती थी। हाँ, कहने सुनने से जन्माष्टमी रख लेती थी। पर, आज कल बीमारी के कारण उसे और भी लालसा थी। जब उसने देखा कि दोपहर होने आई भोजन मिलने के कोई लक्षण नहीं तब विवश होकर उसने मिठाई माँगी। सम्भव है, उसने गोदावरी को अपमान के लिए यह सेंध लगाई हो। क्योंकि कोई भी एक बात न सह सकने पर यही जाता। गोदावरी के लिए तो यह बात बन गई। उसने भी तुरन्त मिठाई माँगी। कहे वर्ष के बाद आज उसने यह मिठाई माँगी। यह हर्ष के आँसू थे।

जो गोदावरी दोपहर के पहले मुँह में पानी डालती थी वही अब प्रातःकाल ही कुछ जलपान किये बिना नहीं रह सकती। फिर भी वह उसका भोजन तक बनाती थी पर, अब उसे वह भी उसके लिए पीड़ा दायक जान पड़ी। उसे अब यह असह्य जान पड़ा। ईर्ष्या ने उसे और कौनसा बहु रूप दिया।

अन्धेरा था। दीपक जल चुका। पण्डितजी का आसन बिछ चुका था। थाल उनके लिए परोसा जा चुका था।

वे वही कपड़े पहनते थे जो गोदावरी माँग कर उन्हें दे देती थी। पण्डितजी को नये फ़ैशन और नये नमूनों से कोई प्रयोजन न था। पर, अब कपड़ों के लिए भी उन्हीं को बाज़ार जाना पड़ता है। एक बार गोमती के पास साड़ियाँ न थीं। पण्डितजी बाज़ार गये तो एक बहुत अच्छा सा जोड़ा उसके लिए ले आये। बज़ाज़ ने मनमाने दाम लिये। उधार सौदा लेने में पण्डितजी ज़रा भी आगा-पीछा न करते थे। गोमती ने वह जोड़ा गोदावरी को दिखाया। गोदावरी ने ईर्षा और मुँह फेर कर रुखाई से बोली—"भला, तुमने उन्हें कपड़े लाना तो सिखा दिया। मुझे तो सोलह वर्ष बीत गये। उनके हाथ का लाया हुआ कपड़ा मुझे स्वप्न में भी पहनना नसीब नहीं हुआ"।

ऐसी घटनायें गोदावरी की ईर्षाग्नि को और भी प्रज्वलित कर देती थीं। जब तक उसे यह विश्वास था कि

एक दिन उससे न रहा गया। वह बोली—"[illegible] से बोलने की भी मनाई कर दी गई है! [illegible] कहीं तो रात रात भर बातों का तार नहीं टूटता। [illegible] सामने मुँह न खोलने की भी क़सम सी खाई है। [illegible] टक-टक तो देखने हो न? अब तो सब काम तुम्हारे [illegible] नुसार चल रहा है न"?

पण्डितजी ने सिर नीचा किये हुए उत्तर दिया—"मैं जैसे चलता हूँ वैसे चलता हूँ। अब इस चिन्ता में स्वयं [illegible] जान दे दूँ? जब तुम यही चाहती हो कि [illegible] जाय तब फिर मेरा क्या वश है।"

इस पर गोदावरी ने बड़े ज़ोर रक्त [illegible] गई। पण्डितजी चौके पर से उठ आये। [illegible] दिखा कर उन्हें चिढ़ाना चाहा। पर वे वहाँ [illegible] कड़े। तब उसने भी रसोई त्याग दी। [illegible]

था। वे बड़े उत्साह से झाँकी बनाने में लग जाते थे। गोदावरी यह व्रत बिना जल के रखती थी और पण्डितजी तो कृष्ण के उपासक ही थे। अब के उनके अनुरोध से गोमती ने भी निर्जल व्रत रखने का साहस किया। पर, उसे बड़ा आश्चर्य्य आया जब महरी ने आकर उससे कहा—"बड़ी बहू निर्जल न रहेंगी, उनके लिए फलाहार मँगा दो।"

सन्ध्या-समय गोदावरी ने मान मन्दिर जाने के लिए इक्के की फ़रमाइश की। गोमती को यह फ़रमाइश बुरी मालूम हुई। आज के दिन इक्कों का किराया बहुत बढ़ जाता था। मान-मन्दिर कुछ दूर भी नहीं था। इससे वह चिढ़ कर बोली—"व्यर्थ रुपया क्यों फेंका जाय? मन्दिर कौन बड़ी दूर है। पांव पांव क्यो नहीं चली जातीं? हुक्म चला देना तो सहज है। अखरता तो उसे है जो बैल की तरह कमाता है!"

तीन साल पहले गोमती ने इसी तरह की बातें गोदावरी के मुँह से सुनी थीं। आज गोदावरी को ही गोमती के मुँह से वैसी ही बातें सुननी पड़ीं। समय की गति!

इन दिनों गोदावरी बड़े उदासीन भाव से खाना बनाती थी। पण्डितजी के पथ्यापथ्य के विषय में भी अब उसे पहले की सी चिन्ता न थी। एक दिन उसने महरी से कहा कि अन्दाज़ से मसाले निकाल कर पीस ले। मसाले दाल में पड़े तो दाल ज़रा अधिक तेज़ हो गई। मारे भय के पण्डितजी से वह न खाई गई। अन्य आलसी मनुष्यों के सदृश चटपटी वस्तुयें उन्हें भी बहुत प्रिय थीं। परन्तु वे रोग से हारे हुए थे। गोमती ने जब यह सुना तब भौंह चढ़ा कर बोली—"क्या बुढ़ापे में ज़बान गज़ भर की हो गई है!"

कुछ इसी तरह के कटु वाक्य एक बार गोदावरी ने भी कहे थे। आज उसकी बारी सुनने की थी।

( ८ )

आज गोदावरी गङ्गा से गले मिलने आई है। तीन साल हुए वह वर और बधू को लेकर गङ्गाजी को पुष्प और दूध चढ़ाने गई थी। आज वह अपने प्राण समर्पण करने आई है। आज वह गङ्गाजी की आनन्दमय लहरों में विश्राम करना चाहती है।

गोदावरी को अब इस घर में एक एक पल रहना दुस्सह हो गया था। जिस घर में रानी बन कर रही उसी में चेरी बन कर रहना उस जैसी सगर्वा स्त्री के लिए असम्भव था।

अब इस घर से गोदावरी का स्नेह उस पुरानी रस्सी की तरह था जो बार बार गाँठें देने पर भी कहीं न कहीं से टूट ही जाती है। उसे गङ्गाजी की शरण लेने के सिवा और कोई उपाय न सूझता था।

कई दिन हुए, उसके मुँह से बार बार जान दे देने की धमकी सुन पण्डितजी खिझला कर बोल उठे थे—"तुम किसी तरह मर भी तो जातीं।" गोदावरी उन विष-भरे शब्दों को अब तक न भूली थी। चुभने वाली बातें उसके कभी न भूलती थीं। आज गोमती ने भी वही बातें कहीं यद्यपि उसने बहुत कुछ सहन करने के पीछे ये कठोर बातें कही थीं। तथापि गोदावरी को अपनी बातें तो भूल सी गई थीं। केवल गोमती और पण्डितजी के वाक्य ही उसके कानों में गूँज रहे थे। पण्डितजी ने उसे डांटा तक नहीं। मुझ पर ऐसा घोर अन्याय और वे मुँह तक न खोलें!

आज सब लोगों के सो जाने पर गोदावरी घर से बाहर निकली। आकाश में काली घटायें छाई हुई थीं। वर्षा की झड़ी लग रही थी। उसके नेत्रों से भी आंसू की धारा बह रही थी।

प्रेम का बन्धन कितना कोमल है और कितना दृढ़ भी है! कोमल है अपमान के सामने; दृढ़ है वियोग के सामने। गोदावरी चौखट पर खड़ी खड़ी घंटा रोती रही; कितनी ही पिछली बातें उसे याद आती थीं। हा! कभी यहां उसके लिए प्रेम भी था, मान भी था, जीवन का सुख भी था। शीघ्र ही पण्डितजी के वे कठोर शब्द भी उसे याद आ गये। आंखों से फिर पानी की धारा बहने लगी। गोदावरी घर से चल खड़ी हुई।

इस समय यदि पण्डित देवदत्त नङ्गे सिर, नङ्गे पांव, पानी में भीगते, दौड़ते आते और गोदावरी के कम्पित हाथों को पकड़ कर अपने धड़कते हुए हृदय से उसे लगा कर कहते—"प्रिये!" इससे अधिक और उनके मुँह से कुछ भी न निकलता, तो भी क्या गोदावरी अपने विचारों पर स्थिर रह सकती!

भर का महीना था। रात को गङ्गा की लहरों की गति बड़ी भयानक मालूम होती थी। साथ ही जब बिजली तड़प

था तब उसकी महत्ता नष्ट हो जाती थी और वह विश्व के प्रेम में डूब कर, प्रकृति के साथ एकीभूत हो जाता था। नित्शे वास्तव में प्राचीन यूनानी सभ्यता का बड़ा पक्षपाती था। वह आधुनिक सभ्यता को बड़ी ही तुच्छ दृष्टि से देखता था। उसका मत था कि प्राचीन यूनानियों ने कविता, संगीत, नाटकाभिनय, चित्रण, तक्षण इत्यादि कलाओं की सृष्टि इस उद्देश से की थी कि जीवन के अन्धकारमय देश पर ऐसा पर्दा गिर जाय जिसमें हमें सर्वत्र प्रकाश ही प्रकाश दिखाई दे और हम संसार की भयङ्करता को सदा के लिए नहीं तो कुछ काल के लिए अवश्य ही भूल जायँ।

१८७६ में नित्शे का स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया। इससे वह अध्यापन का कार्य्य छोड़ कर अपने मित्र—प्रसिद्ध सङ्गीताचार्य्य—वागनर से मिलने के लिए, १८७६ में, बेलेउथ नामक नगर को चला गया। उसी साल उसने वागनर की कला-कुशलता के सम्बन्ध में एक पुस्तक भी प्रकाशित की। इसके बाद उसने शापनहार की शिक्षाओं पर भी एक पुस्तक लिखी थी। पर इसी नित्शे ने, १८८८ में, वागनर को साँप (A clever rattlesnake, a typical decadent) कह कर उसका परिचय दिया। शापनहार में भी उसकी श्रद्धा अधिक काल तक नहीं रही। धीरे धीरे उसके विचारों में बड़ा परिवर्तन उपस्थित होते गये। "Naturally a [illegible] upper, he lost, in the [illegible] his thinking, all his early [illegible] it is becoming more and more [illegible] the strongly-worded [illegible] modern men and things."

१८७९ ईसवी में उसके स्वास्थ्य की ओर से हताश हो कर उसने विश्वविद्यालय के प्रोफेसर के पद से इस्तीफ़ा दे दिया। इसके बाद उसने मानवीय भाव नाम की एक पुस्तक लिखी। उसमें उसने अपने विचारों के परिवर्तन होने के आधार पर ही सभी सम्बन्धित बातें कही हैं। १८८२ में [illegible]

ज्ञान—नाम की पुस्तक लिखी। उसकी [illegible] पुस्तक—ज़रथुष्ट्र की वचनावली—भी इसी निकली। शक्ति की कामना—नाम की एक बड़ी पुस्तक लिखने की उसकी बड़ी इच्छा थी उसने वह पूरी न कर सका। उसके लिए उसने 'नोट' इकट्ठे किये थे वे सब ८०० पृष्ठों में, पुस्तकाकार, प्रकाशित हुए हैं। यह पुस्तक [illegible] विचारों की विचित्रताओं की खान है।

नित्शे की समझ में यह कहना कि [illegible] के बीच अपना अपना अस्तित्व बना रखने के संघर्ष चल रहा है, भूल के सिवा और नहीं। अपनी शक्ति—अपनी प्रभुता—बढ़ाना हम लोगों के जीवन का एकमात्र उद्देश है। [illegible] ने अपने पक्ष के समर्थन में जो प्रमाण पेश किये वे इस ढङ्ग से पेश में नहीं दिये जा सकते। समाज में सबके अधिकार बराबर हैं, इस विचार से वह बड़ा ही चिढ़ता था। वह समाज में सबके बराबर अधिकार देना पसन्द न करता था। उसकी शिक्षा है कि समाज एक [illegible] हो सकता है। उसका उत्थान के लिए [illegible] मनुष्यों का होना आवश्यक है। समाज को हमारे मनुष्यों की आवश्यकता के अनुसार [illegible] करना चाहता था। इसने ऐसा लोगों के [illegible] बताये हैं वे [illegible] हैं—

"[illegible]

पुस्तक का एक पृष्ठ पढ़ कर उसे बिना समाप्त किये नहीं रह सकते और जो उस महात्मा के मुख से निकलने वाले प्रत्येक शब्द को बड़े ध्यान से सुनने के लिए लालायित रहते हैं। ज्यों ज्यों समय बीतता है, मेरा विश्वास उसके वचनों पर बढ़ता ही जाता है। ऐसे ज्ञानी संसार में शायद ही कहीं खोजने से मिलेंगे"। यह बहुत कुछ शोपनहार की ही शिक्षाओं का फल था कि निट्शे ईसाई धर्म्म का परित्याग करके सदा के लिए कट्टर नास्तिक बन गया। शोपनहार के ही दुःखमय जीवन को लक्ष्य करके उसने लिखा है—"संसार में सुखमय जीवन असम्भव है। मनुष्य-जन्म लेकर—कभी अच्छे या बुरे फल के मिलने की परवा न करके—प्रत्येक कार्य्यक्षेत्र में वीरत्व दिखाना ही सब से अधिक प्रशंसनीय काम है। ऐसे मनुष्य का हृदय अन्त में वज्रवत् कठोर हो जाता है, पर उसकी महत्ता में रत्ती भर भी कमी नहीं होती। उसकी कामनायें नष्ट सी हो जाती हैं। वह कर्त्तव्यपरीक्षाओं में अवश्य ही उत्तीर्ण होता है। संसार की कृतघ्नता का अनुभव करता हुआ वह अन्त में निर्वाण प्राप्त करता है। संसार में उसकी स्मृति रह जाती है। और लोग उसे वीर कह कर उसकी पूजा करते हैं"।

थोड़े ही समय बाद निट्शे बेल-विश्वविद्यालय में ग्रीक-भाषा-शास्त्र का अध्यापक नियत हो गया। लिपज़िक के विश्वविद्यालय ने बिना उसकी परीक्षा लिये ही, उसे 'डिगरी' देदी। बेल में पूरे दस वर्ष वह अध्यापन का कार्य्य करता रहा। जब १८७० में जर्मनी और फ्रान्स के बीच युद्ध छिड़ा, निट्शे रोगियों की सेवा-शुश्रूषा करने के लिए जर्मन सेना के साथ फ्रान्स गया। वहाँ से, कुछ काल बाद, बीमार होकर वह घर लौट आया। १८७२ में उसने "वियोगान्त या दुःखान्त नाटकों की उत्पत्ति" नाम की अपनी सब से पहली पुस्तक प्रकाशित की।

निट्शे ईश्वर या परलोक का अस्तित्व न मानता था। शोपनहार के सदृश उसका भी यही ख़याल था कि संसार में सुख की अपेक्षा दुःख अधिक है और हमारे दुःखों का एक मात्र कारण हमारी इच्छायें, हमारी भिन्न भिन्न प्रवृत्तियाँ, हैं अतएव जहाँ तक हो सके हमें उनसे रहित होने का प्रयत्न करना चाहिए। पर शोपनहार का मत यह था कि संसार की यातनाओं से छुटकारा पाने का उपाय, संसार में जन्म-ग्रहण करने की इच्छा का नाश करना—निर्वाण पद की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना—है। और, निट्शे के अनुसार इस उपाय का अवलम्बन करना मनुष्योचित व्यवहार नहीं। वह कहता है—"अगर दुनिया तकलीफ़ों से भरी है तो भरी रहे। तुम्हें इस कारण जीवन से निराश होना उचित नहीं। अनन्त जीवन का जो स्रोत तुम्हारे चारों ओर प्रवाहित हो रहा है उसमें तुम्हारा जीवन एक तरङ्ग के समान है। इस लिए संसार के दुःख को अपना दुःख समझना—अपने हृदय में सहानुभूति का भाव उत्पन्न करना—तुम्हारा धर्म्म है; जीवन के बन्धन से मुक्त होने की कोशिश करना तुम्हारा धर्म्म नहीं। आदर्श पुरुष वही है जो जानता है कि संसार में सच्चा सुख कभी नहीं मिल सकता, जो हमारे और तुम्हारे लक्ष्य-पदार्थ—बाहरी चमक-दमक और शोभा-समृद्धि—को घृणा की दृष्टि से देखता है, जो नाश करने योग्य पदार्थों का नाश करने में कभी सङ्कोच नहीं करता, जो स्वयं दुःख पाकर अथवा दूसरों को दुःख पहुँचा कर मुख से कभी 'आह' नहीं निकालता और जो अपनी जीवन यात्रा में कभी सत्य के मार्ग से विचलित नहीं होता"। हमें अपना स्वभाव कुछ ऐसा बना लेना चाहिए जिसकी बदौलत हमें संसार सदा आनन्द-परिपूर्ण दिखाई दे और जीवन-संग्राम में हमें कभी निराशा से भेंट न हो।

निट्शे ने अपनी नव-प्रकाशित पुस्तकों में यही सिद्ध किया है कि इसी भारी जीवनसमस्या का हल करने के उद्देश से, पुराने समय में, यूनानी विद्वानों ने वियोगान्त अथवा दुःखान्त नाटक लिखे थे, क्योंकि अब कभी कोई पुरुष ऐसा अभिनय देखता

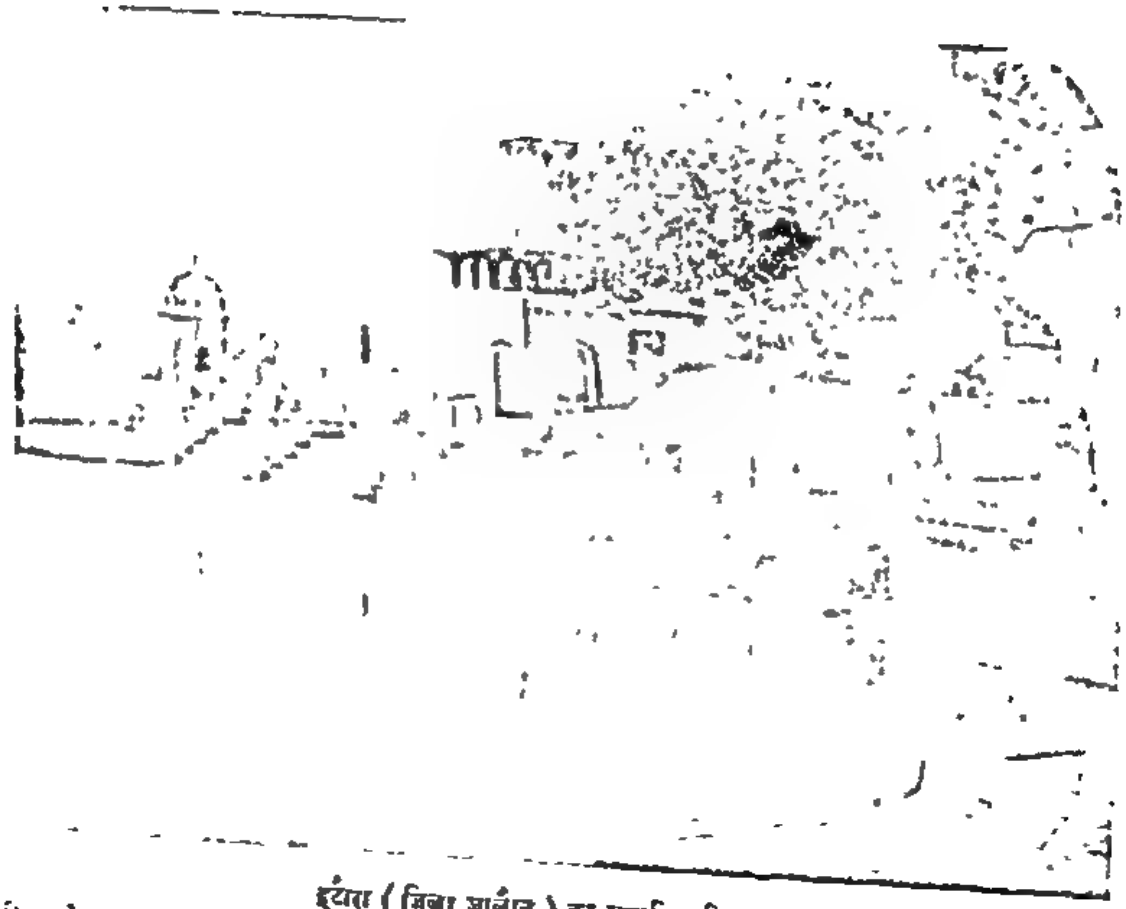

इंचरा ( जिला आर्काट ) का समाधि-मन्दिर ।

इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

in moral philosophy" इत्यादि। और, उसी पत्र की दूसरी संख्या में एक प्रसिद्ध विद्वान् अपनी सम्मति देता है—Nietzsche was a highly spiritual teacher, a prophet in the real sense of the term, being in the direct line of those Great teachers who have come from time to time to encourage men to fight against sin, the world and the Devil.

१८८८ में निट्शे का दिमाग़ बिगड़ गया। बहुत कोशिश करने पर भी वह अच्छा न हो सका। १९०० के जनवरी मास में वह इस संसार से चल बसा। तब से उसके भक्तों की संख्या दिन पर दिन बढ़ती ही गई। यूरोप की प्रायः प्रत्येक भाषा में उसके ग्रन्थों के अनुवाद निकले। उनकी कितनी ही अनुकूल और प्रतिकूल समालोचनायें हुईं। किसी ने सरस्वतीसदन में उसे बहुत ही ऊँचे आसन पर बिठाना चाहा; किसी ने उसकी बातों को पागल की बकवास मात्र समझा। इसी बीच में यूरोप में महाभारत शुरू हो गया। लोगों को निट्शे की ओर भी अधिक याद आने लगी। तब से बराबर उसके ऊपर सैकड़ों लेख निकल रहे हैं। लोग अपनी अपनी क़लम लड़ा रहे हैं। पर अभी तक सत्यासत्य का निर्णय नहीं हो सका। शायद इसके लिए और भी अधिक समय लगे। "तस्मात्प्रयतध्वं सखे सततं परीक्षाम्"।

पारसनाथसिंह

---

## कौशल्या का विलाप।

तन मन जिस पै मैं वारती थी सदैव,
वह गहन वनों में जायगा हाय दैव!
सरसिज-नयन हा! हा! कण्टकों में खिँचेगा;
घृत, मधु, पय-पाला स्वेद ही से सिँचेगा ॥१॥
यह हृदय-विदारी दृश्य मैं देखती हूँ;
नयन-सलिल-धारासार से भीगती हूँ।
खल, पतित, अभागे प्राण जाते नहीं क्यों!
रह कर तन में ये हैं लजाते नहीं क्यों ॥२॥
मणि-महल-निवासी कन्दरा में रहेगा;
तज सुमन-बिछौने भूमि पै ही रहेगा।
मृदु-पद-तल वाला कङ्करों में चलेगा;
तज मखमल आला कङ्करों में चलेगा ॥३॥
नित पट-रस-भोजी खायगा कन्द मूल;
जल तरु न मिलेगा नित्य इच्छानुकूल।
वर वसन ज़री के धारता जो सदा था;
वह अजिन बिछावे भाग्य में यों बदा था ॥४॥
नरपति-सुत होके यों उदासी बनेगा;
यह स्वप्न किसे थी दैव ऐसा करेगा।
पल पल भर में मैं देख लेती उसे थी;
मुख मलिन न होवे प्राण देती उसे थी ॥५॥
वह मुझ दुखिनी के नेत्र की ज्योति ही था;
बस अधिक कहूँ क्या जान था और जी था।
वन वन फिरने को जायगा लाल मेरा;
विधि कुटिल करेगा हाय क्या हाल मेरा ॥६॥
विधु-मुख न विलोके चैन कैसे पड़ेगी;
निज सब कुछ खोके चैन कैसे पड़ेगी।
वह घन-छवि-वाला सामने जो न होगा;
वह मम पय-प्याला सामने जो न होगा ॥७॥
वह मृग-दृग वाला दृष्टि से जो हटेगा;
यह कठिन कलेजा क्यों न मेरा फटेगा।
वह मृदु मुसकाता जो न माता कहेगा;
फिर सुख मुझको क्या प्राण रक्खे रहेगा ॥८॥
फिर मधुर मलाई मैं किसे हाय दूँगी;
वर विविध मिठाई मैं किसे हाय दूँगी।
मन मृदु वचनों से कौन मेरा हरेगा;
यह हृदय दुखी हो धैर्य्य कैसे धरेगा ॥९॥
प्रति पल किस पै मैं प्राण वारा करूँगी;
मुख लख किसका मैं धीर धारा करूँगी।
विधि यदि जगती में जन्म मेरा न होता,
कुछ रुक रहता क्या कार्य्य तेरा न होता ॥१०॥
दुख विषम सहन के लिए था बनाया;
यह दिन दिखलाने के लिए था बनाया।

गुण-गण जिसके है गा रहा आज लोक ;
वह सुत बिछुड़ेगा शोक ! हा हन्त शोक ॥११॥
वह नृप-पद पाने मैं नहीं चाहती थी ;
दुख भरत उठाने मैं नहीं चाहती थी।
सुरति पदवी भी तुच्छ मैं मानती थी ;
वह कर सब से मैं लाल को जानती थी ॥१२॥
किरीट बिना ही क्या न शोभा सना था !
वह गुण-गरिमा से क्या न राजा बना था ?
गुण-बल समता को लोक में था न वीर ;
रण सुभट यथा था, था तथा धर्म-धीर ॥१३॥
रतिपति-मद-हारी रूप भी था सलोना ;
वह सुरभि सना था और था मन्जु सोना।
निज सुत वह मेरा वेश धारे यती का ,
निज नयन निहारूँ, दोष है भाग्य ही का ॥१४॥
वह दृश्य धरूँगी धीर क्या मैं करूँगी ;
विधि-वश दुख ऐसे देख के ही मरूँगी।
विधि ! सहृदय हो तो प्रार्थना मान जाओ ;
अब तुम मुझको ही मेदिनी से उठाओ ॥१५॥
मम प्रिय सुत छूटा साथ ही देह छूटे ;
पल भर जननी का स्नेह-नाता न टूटे।
पल दुर्गति किये का हाय ! मैं पा रही हूँ ;
पर, विधि पर सारा दोष मैं ला रही हूँ ॥१६॥
इस विषम विपद् में ज्ञान जाता रहा है ;
सदय विधि क्षमा दें, ज्ञान आता रहा है।
पर, विनय न मेरी हे विधाता ! भुलाना ;
मम सुत वन में भी तू न भूख सुलाना ॥१७॥
दुख इस पर कोई और आने न पावे ;
वह कुँवर कन्हैया कष्ट पावे न पावे।
युग युग चिर जीवे लोक में नाम होवे ,
फिर पर फिर आवे राम ही राम होवे ॥१८॥
किस विध दुख रोकूँ, आर्ति कैसे घटेगा !
यह अवधि बड़ी है, हाय ! कैसे कटेगा।
पल पल युग होगा याम तो कल्प होवे ;
दिन दिन दुख दूना, कह क्या कल्प होवे ? ॥१९॥
फिर यह अति होना धैर्य कैसे धरेगा ,
सुख कर कर प्यारे का दुखा हा करेगा।
वह सुघर सलोना, अम्ब का प्राण-प्यारा ;
वह सुरभित सोना, अम्ब का प्राण प्यारा ॥२०॥
वह दृढ़-प्रण-पाली नीतिशाली कहां है ?
वह हृदय-लता का मन्जु माली कहां है !
वह प्रबल प्रतारी हंस-वंशी कहां है ?
वह खल-गण-तारी विष्णु-अंशी कहां है ? ॥२१॥
तन सजल घटा सा श्याम प्यारा कहां है ?
वह अवधपुरी का राम प्यारा कहां है !
वह मुझ जननी का चक्षु तारा कहां है ?
वह तन मन मेरा प्राण प्यारा कहां है ॥२२॥
वह कलरव-केकी बोलता क्यों नहीं है ?
अब मधु अवधों में घोलता क्यों नहीं है ?
वन क्षण भर में ही क्या गया हाय प्यारा !
अब मुझ दुखिनी को क्या रहा है सहारा ? ॥२३॥
फिर मम सुत कोई पास मेरे बुला दे ,
शशि-मुख बन जाने देख लूँ आ दिखा दे।
निज हृदय लगा लूँ, ताप सारी मिटा लूँ ;
फिर अब इसको मैं चित्त में चैन पा लूँ ॥२४॥
घर घर घर सारा जो कि था मोद-धाम ,
मम प्रिय सुत हा ! हा ! राम ! हा राम ! राम
यह कह कर रानी हो गई चेत-हीन—
अब तब कर जैसे सिन्धु हो मीन दीन ॥२५॥

"सनेही"

---

## किन्नर-जाति।

[illegible] नगरी से कोई एक सौ मील दूर पश्चिम, उत्तराखण्ड में, रामपुर के हरे दिखाई देने वाले, एक सुन्दर पार्वत्य प्रदेश है। लोग "कनौर" नाम से पुकारते। कनौर और रामपुर-बुशहर की तहसीलों, अर्थात् सतलुज की घाटी तक फैला हुआ है। यहाँ के लोग हिन्दू हैं और बहुधा [illegible] हैं। [illegible] पर कई हिन्दू जातियाँ और हैं जिनमें से

मालूम होता है, मानों गिरिराज हिमालय हरे वस्त्र धारण किये हुए भगवद्भक्ति में निमग्न है। वनों में नाना प्रकार के कुसुमों से लदी हुई तरुलतायें और झरझर बहनेवाले शीतल और मधुर जल के झरने कनौर की शोभा बढ़ा रहे हैं। पुष्प-सुगन्ध के परमाणुओं से परिपूर्ण समीर अपनी मन्द मन्द गति से प्राणिमात्र में नव जीवन का सञ्चार कर रहा है। बीचों बीच सतलज नदी की निर्मल सलिल-राशि पर्वतों के साथ खेलती हुई, कलकल नाद के साथ, बह रही है। ऐसे ही सुहावने प्रदेश में एक जाति निवास करती है जिसे सर्व-साधारण कनौरा कहते हैं। यह वही जाति मालूम होती है जिसका उल्लेख हमारे प्राचीन ग्रन्थों में "किन्नर" नाम से हुआ है। रूप-लावण्य और आकृति से ये लोग आर्य्य-वंशीय प्रतीत होते हैं। हलका शरीर, लम्बा ललाट, बड़े बड़े नेत्र और गौर वर्ण—ये सब बातें आर्य्य-जाति के ही चिह्न हैं। किन्नर-स्त्रियाँ बड़ी चतुर और सुन्दरी होती हैं। निर्धनता के कारण मैले कुचैले वस्त्र पहनने पर भी उनका प्राकृतिक सौन्दर्य्य ऐसा चमकता है जैसे गुदड़ी के भीतर मणि। हिमालय के स्वच्छ वायु और निर्मल जल के सेवन से जो कान्ति इनके मुखमण्डल पर दिखाई देती है वह नगरों के विषैले और दुर्गन्धयुक्त वायुमण्डल में रह कर सहस्रों प्रकार के उबटन लगाने से भी नहीं प्राप्त हो सकती।

किन्नर-पुरुष ऊनी कपड़े का कोट, पायजामा और टोपी पहनते हैं। स्त्रियाँ गाऊन की तरह का एक ऊनी वस्त्र पहनती हैं। उसे पहाड़ी भाषा में "दोड" कहते हैं। दूर से देखने पर गाऊन और दोड में बहुत कम भेद प्रतीत होता है। दोड को अटका रखने के लिए एक प्रकार की सूई या बकसुआ सा होता है। उसे पीन्नू बोलते हैं। स्त्रियाँ सिर पर टोपी रखती हैं। टोपी के आगे अँगरेज़ों की टोपी के सदृश कपड़े का एक छज्जा सा बाहर निकला होता है। उससे सूर्य्य के प्रकाश से नेत्रों की रक्षा होती है। स्त्रियाँ प्रायः गले में मूँगे की माला और तुरयो-चवन्नी आदि के हार, कानों में बालियाँ, हाथों में कङ्कन और नाक में नुकरा, जिसे किन्नर-भाषा में कुण्डो कहते हैं, पहनती हैं। सुन्दर और भड़कीले वस्त्र प्रायः इन्हें बहुत कम प्राप्त होते हैं। इसलिए ऊनी कपड़ों को ही धो धा कर ये प्रायः साफ़ करती रहती हैं।

कनौर में शीत अधिक पड़ता है। इसलिए खेती बहुत कम होती है। हिमाच्छादित स्थानों के समीप तो वर्ष भर में केवल एक ही बार गेहूँ की फ़सल होती है। वह भी थोड़ी सी। इसलिए खाद्य वस्तुओं की यहाँ बहुत कमी है। परन्तु इस देश में शफ़तालू बहुत होता है। लोग उसे इकट्ठा करके सुखा लेते हैं। उसके छिलके को वे आटे की तरह पीस कर उससे एक प्रकार का भोजन बनाते हैं। इस भोजन को वे अपनी भाषा में "लपफो" कहते हैं। शफ़तालू की गुठली तोड़ कर उसका बीज निकाल लेते हैं। वह खाने में बड़ा स्वादिष्ट होता है। पेरने पर उससे तेल निकलता है। ये लोग इस तेल को खाते हैं।

गेहूँ के अतिरिक्त यहाँ फाफरा और ओगला नाम के दो और निकृष्ट धान्य भी होते हैं। मांस, मदिरा और चाय का भी यहाँ बहुत प्रचार है। परन्तु स्त्रियाँ मदिरा-पान नहीं करतीं। यहाँ के आदमी बड़े मृदु-प्रकृति और सुशील हैं। परन्तु कई कारणों से ये दरपोक हो गये हैं। पर्यटकों और अन्य लोगों के अत्याचार इन्हें बहुत सहने पड़ते हैं। इनसे बेगार ली जाती है। श्वेत-वस्त्रधारी को देखते ही ये बेचारे काँपने लगते हैं। ग़रीब-अमीर, स्त्री-पुरुष सभी बेगार में पकड़े जाते हैं। फिर भी ये लोग बड़े मौजी और ज़िन्दा-दिल हैं। दरिद्रता में भी प्रसन्न रहना कोई इनसे सीखे। स्त्रियों में पर्दे का नाम नहीं। गाने-बजाने और खाने-पीने का सबको शौक़ है। स्त्री-पुरुष, लड़के-लड़कियाँ सब मिल कर गाते और नाचते हैं। उत्सवों और मेलों में समस्त नर-नारी कपड़े साफ़ करते और स्नान करते हैं। फिर सायङ्काल देव-मन्दिर में जाकर, एक दूसरे

का हाथ पकड़ कर और पंक्ति बाँध कर नाचते तथा गाते हैं। पंक्ति के अगले भाग में प्रायः पुरुष होते हैं और पिछले में स्त्रियाँ। परन्तु इसका कोई विशेष नियम नहीं। कहीं कहीं स्त्री-पुरुष परस्पर मिल कर भी खड़े हो जाते हैं। इनका नाच देख कर और इनके गीत सुन कर चित्त बहुत प्रसन्न होता है। जिन्होंने स्वयं अपनी आँख से यह नाच देखा है वे इसे कभी निन्द्य नहीं कह सकते। इसमें किसी प्रकार का अनौचित्य नहीं दिखाई देता। यह नाच पवित्र प्रेम और प्राकृतिक आमोद का सूचक है। यह एक जातीय उत्सव है। संसार की कितनी ही सभ्य जातियों में इस तरह का नाच प्रचलित है।

दिन भर के भारी परिश्रम के पश्चात्, विशेषतः सायङ्काल, बेगार करके लौटते समय, जब सब स्त्री-पुरुष, एक दूसरे का हाथ पकड़े, दो दो की पंक्ति में, ऊँचे स्वर से गाते हुए चलते हैं तब बड़ा मनोहर दृश्य दिखाई देता है। इनका गीत-गान दो दो चार चार घण्टे बराबर होता रहता है। खेत में बैठी हुई एक दो युवतियाँ जब मिल कर गाती हैं तब पर्वतों की टक्कर से प्रतिध्वनित होकर उनकी आवाज़ एक विशेष प्रकार का आनन्द देती है। इन लोगों का पुष्पों से बड़ा प्रेम है। जहाँ कहीं फूल मिले, झट तोड़ कर टोपी में लटका लिये।

आचार की दृष्टि से भी ये लोग अपने पड़ोसी अन्य पहाड़ी लोगों से बहुत अच्छे हैं। शिमले के समीपवर्ती प्रदेश में पिछली सदी ८० स्त्रियाँ आचारहीना हैं। पर किन्नर नारियों में इनकी संख्या बहुत ही कम है। सुनते हैं, पहले, पति या प्रेमी के विश्वास-घात करने पर छोड़ कर भाग जाने पर, अथवा किसी के व्यर्थ लाञ्छन लगाने पर, किन्नर-नारियाँ सतलज में कूद कर प्राण परित्याग कर दिया करती थीं। अब भी कहीं कहीं ऐसी घटना हो जाती है।

कनौरी-भाषा एक जुदा ही भाषा है। परन्तु जिन लोगों को बाहरवालों से काम पड़ता है वे कामचलाऊ हिन्दी अच्छी तरह समझ सकते और बोल भी सकते हैं। इनकी भाषा तिब्बती और हिन्दी के मिश्रण से बनी प्रतीत होती है। उदाहरण "तुम्हारा नाम क्या है"। किन्नर भाषा में अनुवाद होगा—"किं नामं छिद"? इस नाम भी, भाषा की दृष्टि से, तीन प्रकार के विशुद्ध संस्कृत, विशुद्ध तिब्बती और किञ्चित् संस्कृत-मिश्रित। नीचे हम तीनों प्रकार के उदाहरण देते हैं। पाठक देखेंगे कि इनमें से कौन कैसे मनोहर हैं—

(१) विशुद्ध संस्कृत-नाम।

[पुरुषों के नाम]

पद्मवीर, इन्द्रवीर, इन्द्रियजित, नरेन्द्र, नरपाल, धर्म्मराय, पद्मदास, ज्ञानवीर, सुखानन्द।

[स्त्रियों के नाम]

चन्द्रमणि, इन्द्रमणि, हीरामणि, देवकली, कली, कुन्ती, द्रौपदी, हिरण्य, गङ्गादासी, धन्नदासी, जीवदासी, भद्रा।

(२) विशुद्ध तिब्बती-नाम।

[पुरुषों के नाम]

डरुप पुपल, टाशी ठरिङ्, ठरिंग पुप, शालछेदने।

(स्त्रियों के नाम)

टाशी पुती, शालत्रिन, मिस्वा, ठरिंग टार

(३) मिश्रित नाम।

[पुरुषों के नाम]

नरनन ठरिङ्, टाशाराम, गनमगुरु, सुखाराम।

(स्त्रियों के नाम)

सनमनमो, पोतेआ, तुलपुती, धनम ठरिङ्गुर्दन।

इन लोगों का अपने पड़ोसियों से, परन्तु अन्य का भी बहुत सा अंश इनसे मिल गया है इन लोगों में इन्द्रदेवताओं की पूजा का प्रचार है। आज आज पर देवताओं की पूजा

सरस्वती

निचार नामक स्थान में उषा देवी का एक विशाल मन्दिर है। शिक्षा का प्रचार न होने के कारण ये लोग प्रायः मूढ-विश्वासी हैं। परन्तु अब कहीं कहीं प्रारम्भिक स्कूल खुल गये हैं, जिससे इन लोगों के ज्ञान-चक्षु खुलने लगे हैं और अविद्यान्धकार दूर हो रहा है।

इनके विवाह की रीति बड़ी विचित्र है। घर के छोटे बड़े सब भाई मिल कर एक स्त्री रख लेते हैं। इस विवाह को ये लोग पाण्डव-विवाह कहते हैं। बड़े भाई की स्त्री सब भाइयों की स्त्री समझी जाती है। इस रीति का यह परिणाम हुआ है कि बहुत सी स्त्रियाँ अविवाहिता हैं। यदि इनसे इस रीति का कारण पूछा जाता है तो ये कहते हैं, हमारा देश ठण्डा है। यहाँ अन्न बहुत कम उपजता है। सब भाइयों के अलग अलग स्त्री करने से सन्तान-संख्या बहुत बढ़ जाय और उसके पालन-पोषण के लिए इस प्रान्त में अन्न वस्त्र मिलना कठिन हो जाय। कुटुम्बियों में से एक भाई नमक ख़रीदने जाता है, दूसरा भेड़-बकरी चराता है, तीसरा अनाज लाता है, चौथा सरकारी बेगार देता है। तब कहीं जाकर कुटुम्ब का निर्वाह होता है। यदि एक एक मनुष्य अलग अलग विवाह करके गृहस्थी चलावे तो इतने काम कैसे कर सके? अतः उसका जीना असम्भव हो जाय। इस सम्मिलित विवाह से दूसरा लाभ यह है कि घर में बहुत सी स्त्रियों के आने से परस्पर ईर्ष्या-द्वेष और फूट की अग्नि प्रज्वलित नहीं होती और कुल नष्ट होने से बच जाता है।

इन लोगों में एक और प्रकार का भी विवाह होता है। उसे किन्नर-भाषा में "हवडब" कहते हैं। इसकी विधि यह है—यदि लड़की किसी के साथ विवाह करना स्वीकार कर ले, परन्तु उसके माता-पिता राज़ी न हों, तो लड़की को अकेली पाकर वर अपने एक दो मित्रों की सहायता से ज़बरदस्ती उठा ले जाता है। ले जाने के समय यदि लड़की के पास उसकी सहेलियाँ हों और वे उसे छुड़ाने लिए दौड़ें तो वर के मित्र उन्हें एक एक दो दो रु देकर उनसे पिण्ड छुड़ा लेते हैं। लड़की को घर जाकर उसके साथ नियमपूर्वक विवाह किया जा है। यदि वह लड़के के घर जाकर विवाह कर पसन्द न करे तो वह अपने पिता के घर वापस भे दी जाती है।

सब जायदाद बड़े भाई को मिलती है। वह अपने सिर पर लम्बी चोटी रखता है। बाक़ी के सब भाई सिर मुँडाते हैं।

इस प्रान्त की स्त्रियाँ हमारी स्त्रियों के सदृश परावलम्बिनी नहीं, वे पुरुषों से बढ़ कर काम करती हैं। पुरुष केवल हल जोतते हैं। शेष काम—बीज डालना, निकाई करना, काटना, माँडना इत्यादि—स्त्रियाँ ही करती हैं। सरकारी आज्ञा से प्रत्येक पुरुष को अपनी बारी पर बेगार भुगतनी पड़ती है। कभी कभी पुरुष की बारी आने पर स्त्रियाँ ही बेगार कर आती हैं। स्त्रियाँ यहाँ की स्वतन्त्र कमाई करती हैं। इसलिए, विवाह हो जाने पर भी, पुरुष स्त्री पर अत्याचार नहीं कर सकता। यदि पति पतित हो जाय, व्यभिचारी हो जाय, अथवा स्त्री पर अत्याचार करे तो पत्नी उसका परित्याग कर देती है। ऐसे अवसर पर एक विशेष संस्कार किया जाता है, जिसे किन्नर भाषा में "शिङ्ग टकाशमें" कहते हैं। पहले प्रतिष्ठित लोगों की एक पञ्चायत जोड़ी जाती है। उसमें पति और पत्नी अपनी अपनी शिकायतें पेश करते हैं। तब पञ्च लोग शिकायतों को दूर करके दोनों को पुनः प्रीतिपूर्वक रहने का उपदेश करते हैं। यदि दोनों मान गये तो अच्छा नहीं तो एक लकड़ी का एक सिरा स्त्री के और दूसरा पुरुष के हाथ में पकड़ा दिया जाता। तब वह लकड़ी बीच से तोड़ दी जाती है। यह अर्थ होता है कि जाव तुम्हारा विवाह टूट गया; अब तुम दोनों स्वतन्त्र हो। चाहो पुनः विवाह कर सकते हो।

इन लोगों का गृह-जीवन बड़ा आनन्दमय है। चाय पीने और भोजन करने समय गृहिणी नमकीन चाय की देगची सामने रख लेती है। सारा परिवार पंक्ति बांध कर उसके चारों ओर बैठ जाता है वह प्यालियों में चाय डालती जाती है और वे पीते जाते हैं। एक घूँट पी लेते हैं, फिर प्याली को भूमि पर रख कर बातें करने लग जाते हैं। प्याली में चाय न रह जाने पर किसी को मांगने की आवश्यकता नहीं होती; गृहदेवी स्वयं सब का खयाल रखती है। प्याली ख़ाली नहीं होने पाती कि उसमें वह और चाय डाल देती है। इस समय ये लोग, कङ्गाल होकर भी, चक्रवर्ती से प्रतीत होते हैं।

प्रत्येक कुलीन घर में एक लड़की और एक लड़का प्रायः उम्र भर ब्रह्मचारी रहता है और अपने जीवन को धर्म्म-सेवा में लगाता है। किन्नर-भाषा में ब्रह्मचारिणी लड़की को "जोमो" और ब्रह्मचारी लड़के को "लामा" कहते हैं। सब प्रकार के विषय-विकारों से बचे रहना इनके लिए आवश्यक है।

भाद्रपद में कनौर में एक भारी जातीय उत्सव होता है, जिसे "फुलायच" कहते हैं। इस मेले में खूब राग-रङ्ग और नृत्य होता है। इस उत्सव के साथ वर्ष भर के सारे शोक और आत्मीय जनों की मृत्यु के कारण पैदा हुए सब दुःख दूर कर दिये जाते हैं। सारी जाति शोक के वस्त्र उतार कर प्रमोद की पोशाक पहन लेती है। साल में इनके जो भिन्न भिन्न अवसरों पर कोई दस मेले होते हैं, उनमें ये लोग ख़ूब खाते-पीते और गाते-बजाते हैं। उत्सव के दिन खान-पान की सामग्री लेकर स्त्री-पुरुष सब जङ्गल में चले जाते हैं। सारा दिन वहीं हँस-कूद में व्यतीत करके सायङ्काल घर लौट आते हैं।

सन्तराम, बी० ए०

# भारतीय आदेश ।

( अपने पुत्रों के प्रति )

सुराज्य प्रभा है अहा छागई;
तुम्हारे सुखों की घड़ी आगई।
नहीं दीखता है अंधेरा कहीं;
न है राक्षसों का बसेरा कहीं।
सवेरा हुआ नींद को तोड़ दो,
सुतो! शीघ्र आलस्य को छोड़ दो।
तुम्हें चाहिए व्यर्थ सोना नहीं;
सदा ख़्वाब में काल खोना नहीं।
हुआ सो हुआ, व्यग्र होना नहीं;
तुम्हें योग्य है आज रोना नहीं।
वृथा वाद से चित्त को मोड़ दो;
सुतो! शीघ्र आलस्य को छोड़ दो॥
नहीं विघ्न-बाधा कहीं आज है,
पुराना ज़माना नहीं आज है।
सुखों के समे ये सभी साज हैं,
प्रतापी हमारे महाराज हैं।
फुर्तीली अभी शूर को छोड़ दो;
सुतो! शीघ्र आलस्य को छोड़ दो॥
वृथा बैठने का नहीं काज है,
महा हानिकारी विद्या आज है।
ज़रा देख तो जो कि क्या हाल है,
अनर्थों में देखो कङ्गाल है।
सभी को, उठो, ऐक्य से जोड़ दो,
सुतो! शीघ्र आलस्य को छोड़ दो॥
सदा ही सदाचार को थाम दो,
शुभादर्श को ज्ञान से मान दो।
दयाधाम सर्वेश का ध्यान दो,
उन्हीं के गुणग्राम का गान दो।
अविद्यानि के पैर दो तोड़ दो,
सुतो! शीघ्र आलस्य को छोड़ दो॥

वैकुण्ठनाथ शर्म्मा ( काव्यतीर्थ

# इटौरा का समाधि-मन्दिर।

कुछ समय हुआ, मुझे एक बारात में जाना पड़ा। बारात गई थी ज़िला जालौन। बारात में मैंने सुना कि यहाँ से इटौरा नाम का मौज़ा दो कोस है। वहाँ एक प्रसिद्ध मन्दिर है। उसे देखने की बड़ी इच्छा हुई। मैं वहाँ गया। मन्दिर को देख कर चित्त प्रसन्न हुआ। इटौरे में वहाँ के ज़मींदार पण्डित बालाजी माधव लघाटे, बी० ए०, के दर्शन हुए। आपसे मन्दिर-सम्बन्धिनी अनेक बातें ज्ञात हुईं। मन्दिर का चित्र भी आपसे प्राप्त हुआ। मन्दिर के महन्त तथा लघाटे महाशय से मन्दिर का जो हाल मालूम हुआ है वह संक्षेप में नीचे लिखा जाता है।

क़सबा कालपी से इटौरा ३ मील दक्षिण है। सन् ईसवी के सोलहवें शतक में रोपण गुरु नाम के एक प्रसिद्ध योगी थे। सुनते हैं वे डौंडियाखेरा, ज़िला उनाव, के रहनेवाले थे। यह वही डौंडिया-खेरा नाम की राजधानी है जो सरस्वती-सम्पादक के जन्मग्राम के पास है और जहाँ कनकप्रकाश के कर्त्ता रामकृष्ण राजवैद्य हो गये हैं। इस कनक-प्रकाश की समालोचना पाठकों ने सरस्वती में पढ़ी ही होगी। रोपण गुरु डौंडियाखेरा छोड़ कर कालपी के पास एक निर्जन स्थान में रहने लगे। जहाँ इस समय इटौरा गाँव है वहाँ, ३०० वर्ष पूर्व, गाँव के आस पास, घना जङ्गल था। इसी जङ्गल में वे तपःसाधन में निरत हो गये। एक दिन वे यमुना-स्नान करने कालपी गये। वहाँ श्रीकृष्ण चैतन्य (गौराङ्ग देव) से उनकी भेंट हुई। चैतन्य प्रभु गुरु रोपण की सात्त्विक मूर्त्ति देख कर उन पर बहुत प्रसन्न हुए और उन्हें अपना शिष्य बना लिया। चैतन्य महाप्रभु ने शिष्य रोपण को प्रसादस्वरूप एक कमण्डलु दिया। वह कमण्डलु अब तक गुरु रोपण के वंशजों के पास है। उसे वे बड़ी श्रद्धा से रखते हैं। भविष्य पुराण में इस बात का उल्लेख इस प्रकार किया गया है—

इत्युक्त्वा भगवाञ्छीवो देवमाहात्म्यमुत्तमम्।
स्वमुखात्स्वांशमुत्पाद्य ब्रह्मयोनौ बभूव ह ॥ १ ॥
इष्टिका नगरी रम्या गुरुदत्तस्य वै सुतः।
रोपणो नाम विख्यातो ब्रह्ममार्गप्रदर्शकः ॥ २ ॥
सूत्रग्रन्थिमतीं मालां तिलकं जलनिर्म्मितम्।
वासुदेवेति तन्मन्त्रं कलौ कृत्वा जने जने ॥ ३ ॥
कृष्णचैतन्यमागम्य कम्बलं च तदाज्ञया।
गृहीत्वा स्वपुरीं प्राप्य कृष्णध्यानपरोऽभवत् ॥ ४ ॥
(इति श्रीभविष्यपुराणे प्रतिसर्गपर्वणि चतुर्युग-खण्डापरपर्य्याये कलियुगेतिहाससमुच्चये कृष्णचैतन्यादि-वर्णने एकोनविंशोऽध्यायः)

भविष्यपुराण कब बना अथवा ये चारों श्लोक उसमें कब मिलाये गये, इस विषय पर हम यहाँ बहस नहीं करना चाहते। हमें सिर्फ़ इतना ही कहना है कि कृष्णचैतन्य के समय में गुरु रोपण हो गये थे। किंवदन्ती तो यह कहती है कि गुरु रोपण डौंडियाखेरे के रहने वाले थे, पर भवि-ष्यपुराण के अनुसार उनकी निवास-भूमि इष्टिका नगरी थी। सम्भव है डौंडियाखेरे की रियासत में इस नाम का कोई नगर या ग्राम उस समय रहा हो। वह प्रसिद्ध न रहा हो, अतएव रियासत की राजधानी को ही गुरु रोपण अथवा उनके वंशजों ने अपना पूर्व-स्थान बताया हो। यह भी सम्भव है कि उस समय इटौरा के ही आस पास इस नाम का कोई गाँव रहा हो, या इष्टिका ही का अपभ्रंश इटौरा हो गया हो। अधिक सम्भावना तो इसी पिछली बात की है। भविष्य-पुराण के पूर्वोल्लिखित श्लोकों से यह भी सूचित है कि रोपण गुरु के पिता का नाम दत्त या गुरुदत्त था।

अपने समय में गुरु रोपण बड़े नामी महात्मा थे। उनकी कीर्त्ति धीरे धीरे दूर दूर तक फैल गई। उनके हज़ारों शिष्य हो गये। गुरुजी ने अपने मत का नाम निम्बुन सम्प्रदाय या निम्बुन मत रक्खा। दुःख की बात है, इस सम्प्रदाय अथवा गुरुजी का बहुत ही कम ऐतिहासिक वृत्तान्त प्राप्य है। इनके विषय में जो कुछ बात है उसका संग्रहार्थ कनौजकिशोर ही को करना पड़ता है।

राजा वीरबल कालपी के रहनेवाले थे। इटोरा कालपी के पास ही है। लोग कहते हैं कि वीरबल ने अकबर बादशाह से गुरु रोपण की तपस्या और सिद्धियों का वर्णन किया। अकबर में धर्म्म-द्वेष बिलकुल ही न था। वह सब धर्म्मों के महात्माओं और विद्वानों का आदर करता था। उसने अपना एक नया ही धर्म्म चलाया था। उसका नाम था दीने इलाही। वीरबल से गुरु रोपण की प्रशंसा सुन कर अकबर ने उन्हें अपने दरबार में बुला भेजा। पर इस समय गुरु रोपण ब्रह्मलीन हो चुके थे। इस कारण बादशाह की आज्ञा का पालन गुरु रोपण के पुत्र जानराय ने किया। वे मण्डनराय के नाम से भी प्रसिद्ध थे। अकबर ने महात्मा राय की परीक्षा लेने का निश्चय किया। उसने एक दिन एक बर्तन के भीतर एक काला साँप बन्द कराया। फिर उस बर्तन को दरबार में रख कर रायजी से पूछा—इसमें क्या है? रायजी ने उत्तर दिया—गुरु का प्रसाद है। बादशाह ने कहा—तो इसे बाँट दो। निरञ्जनी महात्मा ने बर्तन का ढक्कन खोल कर दो दो पेड़े सबको बाँट दिये। फिर उसे उन्होंने पूर्ववत् ढक दिया। अकबर ने उसे फिर ढक देने का कारण पूछा तो उत्तर मिला कि प्रसाद बँट गया, अब जो था वह रह गया है। इसीसे इसे फिर ढक देने की ज़रूरत हुई है। यह देख कर अकबर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने कहा, जिस महात्मा के प्रभाव से इसके शिष्यों को ऐसी सिद्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं उसकी यादगार बननी चाहिए। उसने आज्ञा दी कि मेरे ख़र्च से गुरु रोपण का स्मारक एक सुन्दर समाधि-मन्दिर इटोरे में बनवाया जाय और उसी के पास एक अच्छा तालाब भी खुदाया जाय, तथा अकबर-पुर नाम का एक गाँव भी बसाया जाय। गाँव, मन्दिर और तालाब तीनों अब तक विद्यमान हैं।

मन्दिर अकबर की मृत्यु के बाद, जहाँगीर के राज्यकाल में, बना। मन्दिर में जो शिलालेख हैं उनके अनुसार यह फाल्गुन शुक्ल १३, सोमवार, संवत् १६७२ (सन् १६१५ ईसवी) में बन कर तैयार हुआ। इस मन्दिर में तीन शिलालेख संस्कृत में हैं, एक उस समय की बुँ हिन्दी में। इनमें से पहले की नक़ल जाती है—

(१)

निरञ्जनसपर्य्येण दर्शेन मुनिवृत्तिना।
भूपालवृन्दवन्द्येन रामेणात्र समाहितम्॥ १॥
नयनमुनिनृपेन्दे क्रोधने मासि माघे (?)।
सदनमकृत रामः पुण्यभेन्दौ च वारे।
यवन-अवनदवे श्रीमहांगीरसंज्ञे।
जगति विशदकीर्त्तिं कुर्व्वतीशे सुराज्यम्॥ २॥
गङ्गाकूलसमूलमूर्व्वसतिग्रामेत्विटाराभिधे।
राजन्योऽजनि रोपणिः पुनरतः श्रीजानरायिप्रभुः
तत्सोपीह सुतो नुतोऽखिलजनैः श्रीपरशरामो गुरुः
चैत्यं चारु चकार चोपलमयं वैरेण वदाम्यो भुवि
रामश्चारुचकोरकोविदमनोमानं ददद्देहिनाम्।
सन्तापं विनुदन्निनोदमनघसरकरराया कुलम्॥
पात्रापात्रविवेकदाननिरतः पीयूषपूर्णः सदा।
श्रीमद्रोपणिपंशसन्नजभेजांतोद्भुतश्चन्द्रमाः॥
समीपे धोकरीपुर्या ग्रामः सिंहावलीति च।
ततः शिलाः समानीताः श्रीमता रतिभानुना॥

इस शिलालेख की भाषा कई जगह दोषपूर्ण सम्भव है, इन भाषा-सम्बन्धिनी त्रुटियों में नक़ल करने में हो गई हों—भ्रम से कुछ का लिख गया हो। पर कुछ त्रुटियाँ शिलालेख पद्यरचयिता ही की हैं। जान पड़ता है, संस्कृत व्याकरण और छन्दः-शास्त्र में लेखक की यथेष्ट गति न थी। तथापि लेख का मतलब अच्छी तरह समझ में आ जाता है। यह इस प्रकार है—जहाँगीर के राज्यकाल में, संवत् १६७२ के फाल्गुन में यह मन्दिर बना। उस दिन पुष्य नक्षत्र और सोमवार था। भूपाल-वृन्द-वन्दित निरञ्जनमतानुयायी मुनिवृत्तिधारी राम या रोपण इसमें समाहित हैं। ये नटवर्त्ती इटोरा ग्राम में रोपणि नामक राजन्य (क्षत्रिय) हुए। उनके जानराय नामक पुत्र हुए। जानराय के परशुराम पुत्र हुए।

# इटौरा का समाधि-मन्दिर।

कुछ समय हुआ, मुझे एक बारात में जाना पड़ा। बारात गई थी ज़िला जालौन। बारात में मैंने सुना कि वहाँ से इटौरा नाम का मौज़ा देा कोस है। वहाँ एक प्रसिद्ध मन्दिर है। उसे देखने की बड़ी इच्छा हुई। मैं वहाँ गया। मन्दिर को देख कर चित्त प्रसन्न हुआ। इटौरे में वहाँ के ज़मींदार पण्डित बालाजी माधव लघाटे, बी० ए०, के दर्शन हुए। आपसे मन्दिर-सम्बन्धिनी अनेक बातें ज्ञात हुईं। मन्दिर का चित्र भी आपसे प्राप्त हुआ। मन्दिर के महन्त तथा लघाटे महाशय से मन्दिर का जो हाल मालूम हुआ है वह संक्षेप में नीचे लिखा जाता है।

क़सबा कालपी से इटौरा ३ मील दक्षिण है। सन् ईसवी के सोलहवें शतक में रोपण गुरु नाम के एक प्रसिद्ध योगी थे। सुनते हैं वे डौंडियाखेरा, ज़िला उनाव, के रहनेवाले थे। यह वही डौंडियाखेरा नाम की राजधानी है जो सरस्वती-सम्पादक के जन्मग्राम के पास है और जहाँ कनकप्रकाश के कर्त्ता रामकृष्ण राजवैद्य हो गये हैं। इस कनकप्रकाश की समालोचना पाठकों ने सरस्वती में पढ़ी ही होगी। रोपण गुरु डौंडियाखेरा छोड़ कर कालपी के पास एक निर्जन स्थान में रहने लगे। जहाँ इस समय इटौरा गाँव है वहाँ, ३०० वर्ष पूर्व, गाँव के आस पास, घना जङ्गल था। इसी जङ्गल में वे तपःसाधन में निरत हो गये। एक दिन वे यमुना-स्नान करने कालपी गये। वहाँ श्रीकृष्ण चैतन्य (गौराङ्ग देव) से उनकी भेंट हुई। चैतन्य प्रभु गुरु रोपण की सात्विक वृत्ति देख कर उन पर बहुत प्रसन्न हुए और उन्हें अपना शिष्य बना लिया। चैतन्य महाप्रभु ने शिष्य रोपण को प्रसादस्वरूप एक कम्बल दिया। यह कम्बल अब तक गुरु रोपण के वंशजों के पास है। उसे वे गद्दी कहते हैं। भविष्य-पुराण में यह बात इस प्रकार वर्णन की गई है—

इत्युक्त्वा भगवाञ्छीवो देवमाहात्म्यमुत्तमम्।
स्वमुखात्स्वांशमुत्पाद्य ब्रह्मयोनौ बभूव ह ॥ १ ॥
इष्टिका नगरी रम्या गुरुदत्तस्य वै सुतः।
रोपणो नाम विख्यातो ब्रह्ममार्गप्रदर्शकः ॥ २ ॥
सूत्रग्रन्थिमतीं मालां तिलकं जलनिर्म्मितम्।
वासुदेवेति तन्मन्त्रं कलौ कृत्वा जने जने ॥ ३ ॥
कृष्णचैतन्यमागम्य कम्बलं च तदाज्ञया।
गृहीत्वा स्वपुरीं प्राप्य कृष्णध्यानपरोऽभवत् ॥ ४ ॥
(इति श्रीभविष्यपुराणे प्रतिसर्गपर्वणि चतुर्युग-खण्डापरपर्य्याये कलियुगेतिहाससमुच्चये कृष्णचैतन्यादि-वर्णने एकोनविंशोऽध्यायः)

भविष्यपुराण कब बना अथवा ये चारों श्लोक उसमें कब मिलाये गये, इस विषय पर हम यहाँ बहस नहीं करना चाहते। हमें सिर्फ़ इतना ही कहना है कि कृष्णचैतन्य के समय में गुरु रोपण हो अवश्य गये हैं। किंवदन्ती तो यह कहती है कि गुरु रोपण डौंडियाखेरे के रहने वाले थे, पर भविष्यपुराण के अनुसार उनकी निवास-भूमि इष्टिका नगरी थी। सम्भव है डौंडियाखेरे की रियासत में इस नाम का कोई नगर या ग्राम उस समय रहा हो। वह प्रसिद्ध न रहा हो, अतएव रियासत की राजधानी को ही गुरु रोपण अथवा उनके वंशजों ने अपना पूर्व-स्थान बताया हो। यह भी सम्भव है कि उस समय इटौरा के ही आस पास इस नाम का कोई गाँव रहा हो, या इष्टिका ही का अपभ्रंश इटौरा हो गया हो। अधिक सम्भावना तो इसी पिछली बात की है। भविष्य-पुराण के पूर्वोल्लिखित श्लोकों से यह भी सूचित है कि रोपण गुरु के पिता का नाम दत्त या गुरुदत्त था।

अपने समय में गुरु रोपण बड़े नामी महात्मा थे। उनकी कीर्त्ति धीरे धीरे दूर दूर तक फैल गई। उनके हज़ारों शिष्य हो गये। गुरुजी ने अपने मत का नाम निरञ्जन-सम्प्रदाय या निरञ्जन-मत रक्खा। दुःख की बात है, इस सम्प्रदाय अथवा गुरु रोपण का बहुत ही कम ऐतिहासिक वृत्तान्त प्राप्य है। इनके विषय में जो कुछ बात है उसका अधिकांश किंवदन्तियों ही जान पड़ता है।

वदान्य ( बड़े दाता ) वैद्य ने इस चैत्य का निर्माण किया। सीकर-नगरी के पास सिंहावली नाम का एक गाँव है। वहाँ से श्रीमान् रतिभानु के द्वारा लाये गये पत्थर से यह निर्मित हुआ।

गुरु रोपण के वंशज अपने को "वैस (वैश्य) ठाकुर" कहते हैं। इसीसे शायद "राजन्य" के साथ ही "वैश्य" पद का भी प्रयोग इस लेख में किया गया है। चैत्य उसे कहते हैं जिसमें किसी की चिता का कुछ अंश स्थापित किया जाय। इस मन्दिर में गुरु रोपण के "फूल" अर्थात् उनकी अस्थियों का कुछ अंश अवश्य रक्खा गया होगा। क्योंकि ऐसा होने ही से इसका नाम चैत्य या समाधि सार्थक हो सकता है। इस लेख में अकबर या जहाँगीर से प्राप्त साहाय्य का कुछ भी उल्लेख नहीं। यह आश्चर्य्य की बात है। एक बात और भी है। वर्तमान इटौरा के पास गङ्गा नहीं। पर शिलालेख में इटौरा गङ्गा-तटवर्ती बताया गया है। हाँ, डोंडियाखेरा में गङ्गा अवश्य हैं। सम्भव है, वहाँ इस नाम का कोई गाँव रहा हो। रोपण या उनके वंशजों ने उसी के नामानुसार कालपी के पास वाले इटौरा गाँव को बसाया हो। आशा है, लघाटे महाशय इस विषय का विवेचन करेंगे।

इटौरा में गुरु रोपण की गद्दी के वर्तमान महन्त का नाम बलदेवप्रसाद है। आपसे मालूम हुआ कि आपके पूर्व इतने महन्त इस गद्दी के हो गये हैं—(१) गुरु रोपण (२) जानराय (३) परशुराम (४) रतिभान (५) जनार्दन (६) भीमसेन (७) असकरन (८) इन्द्रजीत (९) चतुरदास (१०) कृष्णदास (११) भावनाथ (१२) जयलाल (१३) शिवप्रसाद। इस हिसाब से चैत्य-निर्माता परशुराम गुरु रोपण के पौत्र और सीकरी से पत्थर लानेवाले रतिभानु प्रपौत्र थे। अकबर की मृत्यु १६०५ ईसवी में हुई और मन्दिर बना १६१५ ईसवी में। मालूम नहीं किस सन् में जानराय देहली गये थे। यदि वे अकबर की मृत्यु के ५ वर्ष भी पहले गये हों तो मन्दिर बनने तक, अर्थात् पन्द्रह ही वर्ष में, मण्डनराय भी परलोकगामी हो गये और परशुराम को महन्त की गद्दी मिल गई साथ ही परशुराम के पुत्र रतिभानु भी इतने वयस्क हो गये कि पत्थर लाने का काम उन्हीं ने किया। तीन सौ वर्ष में तो १४ महन्त हुए, अर्थात् हर महन्त के लिए बीस इक्कीस वर्ष का औसत पड़ा, पर यहाँ के पन्द्रह ही वर्ष में दे डाले गये! सम्भव है, इसमें कुछ ग़लती हो। अथवा जानराय अल्पायु हो गये हों।

इस शिलालेख की वंश-क्रम-सूचना में "सुत" शब्द का प्रयोग हुआ है। शायद ये मुनिवृत्तिधारी निरञ्जनी साधु विवाह कर के प्रजोत्पादन भी करते हैं।

दूसरे शिलालेख का मज़मून नीचे दिया जाता है:—

( २ )

अस्ति हि आज्ञा गुरोर्देयं दानं दीनेषु नित्यशः।
ज्ञानं सर्वगं ब्रह्म नामैकं तु निरञ्जनम् ॥ १ ॥
दयां सत्यं तपः शौचं प्रतापं पुण्य-लोपनम्।
कलिमागत विज्ञाय रोपणिः कोपनोऽभवत् ॥ २ ॥
दीयतां दीयतां दानं प्रातरारभ्य नित्यशः।
आनिशीथमिहातिष्ठन् परशुरामेऽवदद् वचः ॥ ३ ॥

इसका तात्पर्य्य यह है—नामों में निरञ्जन का नाम और ज्ञानों में सर्वव्यापक ब्रह्म का ज्ञान ही श्रेष्ठ है। दया, सत्य, तप, शौच और पुण्य आदि का लोप करनेवाले कलि को आ गया देख गुरु रोपणि को क्रोध आया। उन्होंने (शायद स्वप्न में) परशुराम से कहा कि यहाँ रह कर प्रातःकाल से आधीरात तक अनवरत दान देते रहो। इसीसे गुरु की यह आज्ञा इस मन्दिर में अङ्कित की जाती है। इस लेख की भी संस्कृत-भाषा में गड़बड़ है। पर मतलब समझ में आ जाता है।

तीसरा शिलालेख पुरानी बुँदेलखण्डी हिन्दी में है। वह ९ पंक्तियों में है। पहली ६ पंक्तियों की अक्षरशः नक़ल इस प्रकार है—

( ३ )

श्रीरोपनि गुर जग उधरन
संवत् १६७२ साक १५३७
फागुन सदि १३ सेमरु पल
नक्षत्र चौपड़ पायन को

वदान्य ( बड़े दाता ) वैश्य ने इस चैत्य का निर्माण किया। सीकर-नगरी के पास सिंहावली नाम का एक गाँव है। वहाँ से श्रीमान् रतिभानु के द्वारा लाये गये पत्थर से यह निर्मित हुआ।

गुरु रोपण के वंशज अपने को "बैस (वैश्य) ठाकुर" कहते हैं। इसीसे शायद "राजन्य" के साथ ही "वैश्य" पद का भी प्रयोग इस लेख में किया गया है। चैत्य उसे कहते हैं जिसमें किसी की चिता का कुछ अंश स्थापित किया जाय। इस मन्दिर में गुरु रोपण के "फूल" अर्थात् उनकी अस्थियों का कुछ अंश अवश्य रक्खा गया होगा। क्योंकि ऐसा होने ही से इसका नाम चैत्य या समाधि सार्थक हो सकता है। इस लेख में अकबर या जहाँगीर से प्राप्त साहाय्य का कुछ भी उल्लेख नहीं। यह आश्चर्य की बात है। एक बात और भी है। वर्तमान इटौरा के पास गङ्गा नहीं। पर शिलालेख में इटौरा गङ्गा-तटवर्ती बताया गया है। हाँ, डौंडियाखेरा में गङ्गा अवश्य हैं। सम्भव है, यहाँ इस नाम का कोई गाँव रहा हो। रोपण या उनके वंशजों ने उसी के नामानुसार कालपी के पास वाले इटौरा गाँव को बसाया हो। आशा है, लघाटे महाशय इस विषय का विवेचन करेंगे।

इटौरा में गुरु रोपण की गद्दी के वर्तमान महन्त का नाम बलदेवप्रसाद है। आपसे मालूम हुआ कि आपके पूर्व इतने महन्त इस गद्दी के हो गये हैं—(१) गुरु रोपण (२) जानराय (३) परशुराम (४) रतिभान (५) जनार्दन (६) भीमसेन (७) जसकरन (८) इन्द्रजीत (९) चतुर्दास (१०) कृष्णदास (११) माधवनाथ (१२) जयलाल (१३) शिवप्रसाद। इस हिसाब से चैत्य-निर्माता परशुराम गुरु रोपण के पौत्र और सीकरी से पत्थर लानेवाले रतिभानु प्रपौत्र थे। अकबर की मृत्यु १६०५ ईसवी में हुई और मन्दिर बना १६१५ ईसवी में। मालूम नहीं किस सन् में जानराय देहली गये थे। यदि वे अकबर की मृत्यु के ५ वर्ष भी पहले गये हों तो मन्दिर बनने तक, अर्थात् पन्द्रह ही वर्ष में, मण्डनराय भी परलोकगामी हो गये और परशुराम को महन्त की गद्दी मिल गई। साथ ही परशुराम के पुत्र रतिभानु भी इतने वयस्क हो गये कि पत्थर लाने का काम उन्हीं ने किया। तीन सौ वर्ष में नौ १४ महन्त हुए, अर्थात् हर महन्त के लिए बीस इक्कीस वर्ष का औसत पड़ा, पर आरम्भ के पन्द्रह ही वर्ष में दो हो गये। सम्भव है, इसमें कुछ ग़लती हो। अथवा जानराय अल्पायु हो गये हों।

इस शिलालेख की वंश-क्रम-सूचना में "[illegible]" शब्द का प्रयोग हुआ है। शायद ये मुनिवृत्ति निरञ्जनी साधु विवाह करके प्रजोत्पादन भी करते

दूसरे शिलालेख का मज़मून नीचे दिया जाता है

( २ )

अस्ति हि आज्ञा गुरोर्देयं दानं दीनेषु नित्यशः।
ज्ञानं सर्वत्रगं ब्रह्म नामैकं तु निरञ्जनम् ॥ १ ॥
दया सत्यं तपः शौचं प्रतापं पुण्य-लोपनम्।
कलिमागतं विज्ञाय रोपणिः कोपनोऽभवत् ॥ २ ॥
दीयतां दीयतां दानं प्रातरारभ्य नित्यशः।
आनिशीथमिहातिष्ठत् परशुरामेऽवदद् वचः ॥ ३ ॥

इसका तात्पर्य्य यह है—नामों में निरञ्जन नाम और ज्ञानों में सर्वव्यापक ब्रह्म का ज्ञान ही है। दया, सत्य, तप, शौच और पुण्य आदि का लोप करनेवाले कलि को आ गया देख गुरु रोपणि को क्रोध आया। उन्होंने ( शायद स्वप्न में ) परशुराम से कहा कि यहाँ रह कर प्रातःकाल से आधी रात तक अनवरत दान देते रहो। इसीसे गुरु की यह आज्ञा इस मन्दिर में अङ्कित की जाती है। इस लेख की भी संस्कृत-भाषा में गड़बड़ है। पर मतलब समझ में आ जाता है।

तीसरा शिलालेख पुरानी बुँदेलखण्डी हिन्दी में है। यह ९ पंक्तियों में है। पहली ६ पंक्तियों का अक्षरशः नक़ल इस प्रकार है—

( ३ )

श्रीरोपनि गुर जग उधरन
संवत् १६७२ साक १५३७
फागुन सदि १३ सेमर पत्र
नवमु चौपट पावन को

बनवयो पथर कै श्रीप—
रसरम गुसाइ इस

इसके आगे ढाई पंक्तियों में शायद लेख खोदने-वाले या मन्दिर के मुख्य मिस्त्री का नाम है। पर वह ठीक ठीक नहीं पढ़ा जाता। अन्त में है—"सभ वस्तु"। इसमें भी मन्दिर बनने का संवत् इत्यादि और बनवानेवाले परशुराम गुसाईं का नाम है।

यह मन्दिर सीकरी से लाये गये लाल पत्थर का है। मन्दिर बड़ा विशाल है। बनवाने में बहुत रुपया खर्च हुआ होगा। इसमें पत्थर पर अच्छा काम है। मन्दिर के भीतर पत्थर पर खुदी हुई बेलें बहुत ही सुन्दर हैं। गुरु रोपण के चलाये हुए निरञ्जनी लोगों का एक मन्दिर ज़िला जालौन के पिया निरञ्जनपुर गाँव में भी है। पर वह इतना पुराना और अच्छा नहीं। असली और नामी मन्दिर इटौरे ही का है। यहाँ हर साल कार्त्तिकी पूर्णिमा को बहुत बड़ा मेला होता है। हज़ारों आदमी गुरु की समाधि का दर्शन करने आते हैं। बच्चों का चूड़ा-कर्म भी मन्दिर में होता है।

समाधि के पट सदा बन्द रहते हैं। दर्शनार्थी लोग १) देकर एक बार २॥) देकर दोनों द्वार खुलवा सकते हैं। समाधि में मूर्त्ति नहीं चार-पाँच सीढ़ियाँ उतरने पर नीचे एक छोटी सी कोठरी है। यहीं फूल आदि चढ़ाये जाते हैं। शायद यहीं पर गुरु का देहावशेष भूमिस्थ है।

इस मन्दिर के खर्च के लिए पहले इटौरा और अकबरपुर गाँव लगे हुए थे। ये गुरु के वंशजों के अधिकार में थे। परन्तु इन लोगों ने १८५७ ईसवी के ग़दर के समय गवर्नमेंट की प्रतिकूलता का बहुत उत्पात मचाया। इससे यह ज़मींदारी ज़ब्त होकर गई और झाँसी के सरकारी मुक़द्दिमे बख़्शी राजबहादुर पण्डित गणेशराव लक्ष्मण उर्फ़ बाबासाहब के उपलक्ष्य में, दे दी गई। तबसे इटौरा गाँव लक्ष्मण महाराव के ही वंशजों के अधिकार में है।

इटौरे के इस मन्दिर को निरञ्जनी सं के अनुयायियों से पूजा-भेंट या भेंट में मिल जाता है उसमें इसका ख़र्च चल आमदनी का और कोई द्वार नहीं। बुंदेल-इस मत का विशेष प्रचार है। विशेष कर बनया इसी मत के अनुयायी हैं।

नन्दकिशोर त्रिवेदी
(केनिंग् कालेज, ल

---

## भारत की उन्नति का उपाय

[स्वामी विवेकानन्द और उनके एक शिष्य में परस्पर का

शिष्य—स्वामीजी, आप इस देश में क्यों नहीं रहते? पश्चिम ही के में तो आपने घोड़ा, अमेरिक देशों को गुरु कर दिया है। पा में औरों के प्रभाव इस और अनुराग न मालूम क्यों हो गया है। इसका कारण क्या? मेरी समझ पाश्चात्य देशों की अपेक्षा भारत में धर्म की विशेष रक्षा की आवश्यकता है।

स्वामीजी—इस देश में [illegible]

कथा समझते और कार्य्यतः धर्म्मानुष्ठान करते हैं उतना अन्य देश वाले नहीं। तब आप की ज्वलन्त यागिता के प्रभाव से यह देश क्यों न जागृत होगा और फल भी क्यों न प्राप्त होगा?

स्वामीजी—क्या तुमने यह नहीं सुना—"भूखे भगति न होय गोपाला"। पहले पेट की पूजा करनी होगी। इसे दंडा किये बिना तुम्हारी धर्म्म कर्म्म की बातों पर कोई ध्यान न देगा। क्या तुम नहीं जानते कि इस समय भारत पेट की चिन्ता से विह्वल हो रहा है? अनेक कारणों से वह अस्थिचर्म्मावशिष्ट हो रहा है। धर्म्म-कथा सुनाने के पहले मनुष्यों के मन से पेट की चिन्ता दूर करनी होगी। अन्यथा केवल लेक्चरों से कोई फल न होगा।

शिष्य—तो हमें अब क्या करना चाहिए?

स्वामीजी—पहले तो कुछ ऐसे त्यागी मनुष्यों की आवश्यकता है जो स्वार्थ का त्याग कर के दूसरों के लिए जीवन उत्सर्ग करने को प्रस्तुत हों। इसी लिए मठस्थापना करके मैं कुछ बाल-संन्यासी तैयार कर रहा हूँ। शिक्षा समाप्त होने पर वे द्वार द्वार भ्रमण करके सब को देश की वर्तमान शोचनीय दशा का ज्ञान करावेंगे। वर्तमान हीनावस्था से किस तरह उद्धार हो, इसका वे उपदेश करेंगे। साथ ही धर्म्म की महत्ता को भी लोगों के हृदय पर अङ्कित करेंगे। तुम्हारे देश की जनता कुम्भकर्णी निद्रा में निमग्न है। एक तो यहाँ यों ही शिक्षा की कमी है। जिन्हें वह प्राप्त भी होती है वे भी देश-हित के लिए कुछ नहीं कर सकते। करें भी तो किस तरह। कालेज से निकलते न निकलते हमारे युवक कई बच्चों के बाप हो जाते हैं। मुश्किलों में कहीं उन्हें कोई छोटी मोटी नौकरी मिलती है। उनकी शिक्षा का यही फल होता है। गृहस्थी के भार के कारण उच्च कर्म्म तथा उच्च विचार करने का उन्हें अवकाश ही नहीं मिलता। वे अपने ही स्वार्थ की सिद्धि नहीं कर सकते, दूसरों के लिए वे भला क्या करेंगे?

शिष्य—तो अब क्या कोई उपाय नहीं?

स्वामीजी—है अवश्य। यह देश सनातन-धर्म्म की जन्म भूमि है। गिर अवश्य गया है। पर इसका उत्थान हो सकता है। यह उठेगा और खूब उठेगा। समुद्र अथवा नदी का पानी जितना ही कम हो जाता है, लहरें उतनी ही प्रबलता से उठती हैं। भगवान् भुवन-भास्कर के थोड़ी देर उदय में विलम्ब नहीं। काम में लग जाओ, आलस्य से अब काम न चलेगा। धर्म्म और शिक्षा सम्बन्धिनी अधोगति का सँदेशा सुना कर कहो, भाई! उठो और कब तक सोओगे। शास्त्रों की महत्ता सरलता-पूर्वक उनको समझा दो। अभी तक इस देश के ब्राह्मणों ने धर्म्म को एकाङ्गी बना रक्खा था। काल के प्रभाव से अब वे बातें नहीं रहीं। अतएव ऐसी व्यवस्था करो जिससे सर्व-साधारण उस महान् धर्म्म के रहस्यों को समझ सकें। सब को समझा दो कि ब्राह्मणों की भाँति तुम्हारा भी धर्म्म पर समान अधिकार है। चाण्डाल से लेकर ब्राह्मण तक सभी को [illegible] महा मन्त्र से दीक्षित करो। मीठी मीठी बातों से उन लोगों का ध्यान व्यापार, वाणिज्य, कृषि आदि गृहस्थ-जीवनोपयोगी विषयों की ओर खींचो। नहीं तो तुम्हारी शिक्षा और तुम्हारा वेद-वेदान्त-ज्ञान ही व्यर्थ है।

शिष्य—गुरुदेव! हम लोगों में ऐसी शक्ति कहाँ? आप के शतांश का एकांश भी हममें होता तो हम अपने को धन्य मानते और दूसरों का भी उपकार करने में समर्थ होते।

स्वामीजी—अरे मूर्ख! क्या शक्ति किसी के देने से मिलती है? वह तेरे ही भीतर है। समय आते ही वह स्वयं ही विकसित हो जायगी। तू कार्य्य में लग तो जा। देखना, ऐसी शक्ति प्राप्त होगी कि सँभालना मुश्किल हो जायगा। थोड़ा भी परोपकार करते ही आन्तरिक शक्ति जागृत हो उठती है। दूसरे की भलाई के लिए थोड़ी भी चिन्ता करते ही हृदय में सिंह-बल का सञ्चार हो जाता

है। यद्यपि मैं तुम लोगों का इतना प्यार करता हूँ तथापि इच्छा यही होती है कि तुम लोग दूसरों के लिए अपना शरीर अर्पण कर दो और मैं देखकर सुखी होऊँ।

शिष्य—पर स्वामीजी, जो लोग हमारे ही ऊपर अवलम्बित हैं उनकी क्या दशा होगी?

स्वामीजी—यदि तू परार्थ-सम्पादन में लग जायगा तो परमात्मा तेरे आश्रितों का अवश्य ही कुछ न कुछ कर देगा। क्या तूने गीता में नहीं पढ़ा—

नहि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति।

शिष्य—हाँ, पढ़ा अवश्य है।

स्वामीजी—वास्तव में त्याग ही सब कुछ है। बिना त्यागी बने कोई भी बड़ा कार्य्य नहीं हो सकता। त्यागी ही सब को सम दृष्टि से देखता है और सब की सेवा करने में समर्थ होता है। वेदान्त में तूने पढ़ा ही है कि सब को समदृष्टि से देखना चाहिए। फिर तू अपनी स्त्री और पुत्रों ही को दूसरों की अपेक्षा क्यों विशेषता देता है? तेरे द्वार पर स्वयं नारायण कङ्गाल-वेश में अनाहारी होकर मृतप्राय पड़े हुए हैं। उन्हें कुछ न देकर केवल अपनी स्त्री और पुत्रों के उदर की पूर्ति करना पशुओं का काम है।

शिष्य—स्वामीजी, परोपकार करने के लिए विशेष धन की भी तो आवश्यकता होती है। वह कहाँ से आवे?

स्वामीजी—अच्छा, जितनी शक्ति है, पहले उसका ही क्यों नहीं करते। यदि अभाव से कुछ नहीं दे सकते तो क्या दो एक माठी माठी रूखी रूखी पोड़ा सा सदुपदेश भी नहीं दे सकते? क्या इसमें भी धन की आवश्यकता है?

शिष्य—हाँ, यह तो कर सकता हूँ।

स्वामीजी—कर सकते हो, यह केवल मुँह से कह देने ही से काम न चलेगा। जिसका कर सकते हो उतना कर दिखाओ। तब हम समझेंगे कि तुम्हारा हमारे पास आना सार्थक हुआ। कर्म में अटपट लग जाओ। यह अवसर विलम्ब दिन के लिए है। संसार से आये हो या इसी लिए आओ। यहाँ तो [illegible]

होने और मरने हैं। "मनुष्य" क्या व जीने की इच्छा कर सकता है? कार इसे यह दिखा दो कि तुम्हारा [illegible] सार्थक हुआ। सब के कानों में यह [illegible] तुम्हारे भीतर अनन्त शक्ति व उसे उद्घोष करो। केवल अपनी मुक्ति से क्या होगा! मुक्ति की कामना तो महती स्वार्थपरता है। तिलाञ्जलि दे दो। परित्याग कर दो मुक्ति की कामना और उस कार्य्य में जिसमें लगा

शिष्य अवाक् सुनने लगा। स्वामीजी फिर

स्वामीजी—तुम लोग जाकर योग तैयार करो। हमारे हजारों विवेकानन्द इस देश में जन्मना लिए शरीर धारण करेंगे। इसकी कोई [illegible] करो। देखो, हम लोगों के सामियों [illegible] पहले यह सोचते थे कि हम में शक्ति नहीं, कितने ही अनर्थाभाव, [illegible] रखते थे। क्या तुम नहीं देखते कि [illegible] और [illegible] होकर भी तुम्हारी [illegible] है? तो क्या तुम लोग [illegible] ही की [illegible] न [illegible] यहाँ पर महाभारी, [illegible] [illegible] [illegible]

कथा समझते और कार्य्यतः धर्म्मानुष्ठान करते हैं उतना अन्य देश वाले नहीं। तब आप की ज्वलन्त वाग्मिता के प्रभाव से यह देश क्यों न जागृत होगा और फल भी क्यों न प्राप्त होगा?

स्वामीजी—क्या तुमने यह नहीं सुना—"भूखे भगति न होय गोपाला"। पहले पेट की पूजा करनी होगी। उसे ठंडा किये बिना तुम्हारी धर्म्म कर्म्म की बातों पर कोई ध्यान न देगा। क्या तुम नहीं जानते कि इस समय भारत पेट की चिन्ता से विह्वल हो रहा है? अनेक कारणों से वह अस्थिचर्म्मावशिष्ट हो रहा है। धर्म्म-कथा सुनाने के पहले मनुष्यों के मन से पेट की चिन्ता दूर करनी होगी। अन्यथा केवल लेक्चरों से कोई फल न होगा।

शिष्य—तो हमें अब क्या करना चाहिए?

स्वामीजी—पहले तो कुछ ऐसे त्यागी मनुष्यों की आवश्यकता है जो स्वार्थ का त्याग कर के दूसरों के लिए जीवन उत्सर्ग करने को प्रस्तुत हों। इसी लिए मठस्थापना करके मैं कुछ बाल-संन्यासी तैयार कर रहा हूँ। शिक्षा समाप्त होने पर वे द्वार द्वार भ्रमण करके सब को देश की वर्तमान शोचनीय दशा का ज्ञान करावेंगे। वर्तमान हीनावस्था से किस तरह उद्धार हो, इसका वे उपदेश करेंगे। साथ ही धर्म्म की महत्ता को भी लोगों के हृदय पर अङ्कित करेंगे। तुम्हारे देश की जनता कुम्भकर्णी निद्रा में निमग्न है। एक तो यहां यों ही शिक्षा की कमी है। जिन्हें वह प्राप्त भी होती है वे भी देश-हित के लिए कुछ नहीं कर सकते। करें भी तो किस तरह। कालेज से निकलते न निकलते हमारे युवक कई बच्चों के बाप हो जाते हैं। मुश्किलों में कहीं उन्हें कोई छोटी मोटी नौकरी मिलती है। उनकी शिक्षा का यही फल होता है। गृहस्थी के भार के कारण उच्च कर्म्म तथा उच्च विचार करने का उन्हें अवकाश ही नहीं मिलता। वे अपने ही स्वार्थ की सिद्धि नहीं कर सकते, दूसरों के लिए वे भला क्या करेंगे?

शिष्य—तो अब क्या कोई उपाय नहीं?

स्वामीजी—है अवश्य। यह देश सनातन-धर्म्म की जन्म भूमि है। गिर अवश्य गया है। पर इसका उत्थान हो सकता है। यह उठेगा और ख़ूब उठेगा। समुद्र अथवा नदी का पानी जितना ही कम हो जाता है, लहरें उतनी ही प्रबलता से उठती हैं। भगवान् भुवन-भास्कर के धार्मिक उदय में विलम्ब नहीं। काम में लग जाओ, आलस्य से अब काम न चलेगा। धर्म्म और शिक्षा-सम्बन्धिनी अधोगति का सँदेशा सुना कर कहो, भाई! उठो और कब तक सोओगे। शास्त्रों की महत्ता सरलता-पूर्वक उनको समझा दो। अभी तक इस देश के ब्राह्मणों ने धर्म्म को एकाङ्गी बना रक्खा था। काल के प्रभाव से अब वे बातें नहीं रहीं। अतएव ऐसी व्यवस्था करो जिसमें सर्व-साधारण उस महान् धर्म्म के रहस्यों को समझ सकें। सब को समझा दो कि ब्राह्मणों की भांति तुम्हारा भी धर्म्म पर समान अधिकार है। चाण्डाल से लेकर ब्राह्मण तक सभी को इस महा मन्त्र से दीक्षित करो। मीठी मीठी बातों से उन लोगों का ध्यान व्यापार, वाणिज्य, कृषि आदि गृहस्थ-जीवनोपयोगी विषयों की ओर खींचो। नहीं तो तुम्हारी शिक्षा और तुम्हारा वेद-वेदान्त-ज्ञान ही व्यर्थ है।

शिष्य—गुरुदेव! हम लोगों में ऐसी शक्ति कहां? आप के बताए का एकांश भी हममें होता तो हम अपने को धन्य मानते और दूसरों का भी उपकार करने में समर्थ होते।

स्वामीजी—अरे मूर्ख! क्या शक्ति किसी के देने से मिलती है? वह तेरे ही भीतर है। समय आने ही वह स्वयं ही विकसित हो जायगी। तू कार्य्य में लग तो जा। देखना, ऐसी शक्ति प्राप्त होगी कि सँभाले न सँभलेगी। थोड़ा भी परोपकार करते ही आध्यात्मिक शक्ति जागृत हो उठती है। दूसरे की भलाई के लिए थोड़ा भी चिन्ता करते ही हृदय में सिंह-बल का सञ्चार हो जाता

है। यद्यपि मैं तुम लोगों का इतना प्यार करता हूँ तथापि इच्छा यही होती है कि तुम लोग दूसरों के लिए अपना शरीर अर्पण कर दो और मैं देखकर सुखी होऊँ।

शिष्य—पर स्वामीजी, जो लोग हमारे ही ऊपर अवलम्बित हैं उनकी क्या दशा होगी?

स्वामीजी—यदि तू परार्थ-सम्पादन में लग जायगा तो परमात्मा तेरे आश्रितों का अवश्य ही कुछ न कुछ कर देगा। क्या तूने गीता में नहीं पढ़ा—

नहि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति।

शिष्य—हाँ, पढ़ा अवश्य है।

स्वामीजी—वास्तव में त्याग ही सब कुछ है। बिना त्यागी बने कोई भी बड़ा कार्य्य नहीं हो सकता। त्यागी ही सब को समदृष्टि से देखता है और सब की सेवा करने में समर्थ होता है। वेदान्त में तूने पढ़ा ही है कि सब को समदृष्टि से देखना चाहिए। फिर तू अपनी स्त्री और पुत्रों ही को दूसरों की अपेक्षा क्यों विशेषता देता है? तेरे द्वार पर स्वयं नारायण कङ्गाल-वेश में अनाहारी होकर मृतप्राय पड़े हुए हैं। उन्हें कुछ न देकर केवल अपनी स्त्री और पुत्रों के उदर की पूर्ति करना पशुओं का काम है।

शिष्य—स्वामीजी, परोपकार करने के लिए विशेष धन की भी तो आवश्यकता होती है। वह कहाँ से लावें?

स्वामीजी—अच्छा, जितनी शक्ति है, पहले उसका ही क्यों नहीं करते। यदि भगवान से हम यहीं दे सकते तो क्या वे एक मात्र मोटा कपड़ा थोड़ा सा सदुपदेश भी नहीं दे सकते? क्या इसमें भी धन की आवश्यकता है?

शिष्य—हाँ, यह तो कर सकता हूँ।

स्वामीजी—कर सकते हो, यह केवल मुँह से कह देने ही से काम न चलेगा। जिसका कर सकते हो उतना कर दिखाओ। तब हम समझेंगे कि तुम्हारा हमारे पास आना सार्थक हुआ। कार्य्य में भटपट लग जाओ। यह जीवन किस दिन के लिए है। संसार में आये हो तो कुछ चिह्न छोड़ जाओ। वहाँ तक सदुपदेश का संबंध है वह तो हम होते और मरते हैं। 'मनुष्य' क्या न जीने की इच्छा कर सकता है? कार हमें यह दिखा दो कि तुम्हारा देहा सार्थक हुआ। सब के कानों में यह कि तुम्हारे भीतर अनन्त शक्ति वर्त उसे महसूस करो। केवल अपनी मुक्ति प्र मे क्या होगा! मुक्ति की कामना व तो महती स्वार्थपरता है। तिलाञ्जलि दे दो। परित्याग कर दो मुक्ति की कामना को जाओ इस कार्य्य में जिसमें मैं लगा हुआ

शिष्य अवाक् सुनने लगा। स्वामीजी फिर कहने

स्वामीजी—तुम लोग जाकर खेत तैयार करो। हमारे हजारों विवेकानन्द इस देश में पैदा लिए शरीर धारण करेंगे। इसकी कोई चि करो। देखो, हम लोगों के साथियों ही पहले यह सोचते थे कि हम में शक्ति नहीं, किसी ही अवतारपुरुष, दुर्भिक्ष आदि संसार रक्खे हैं। क्या तुम नहीं देखते कि दिया पाश्चात्य जाति होकर भी हमारी करना चाहते हैं? तो क्या तुम लोग देशवासियों ही की सेवा करना न चाहते यहाँ पर महामारी, दुर्भिक्ष आदि कभी भी पीड़ित हो वह है वहाँ जाना। बहुत हाल आजकल। हमारे तुम्हारे जैसे किसी ही दो-चार होते हैं। अच्छा संसार का क्या व विचार है? एक दिन अवश्य ही है तो फि महान् दुख के कारण ही से अच्छा भी आवेगा, इस महामन्त्र को घर घर में प्र करो। इसके पश्चात् और तुम्हारे इस का, ए हो जो, कल्याण होगा। तुम्हारे जीवन इस कठिन कार्य्य हो। तुम्हें कल्याण इस तुम्हें कह रहा है। कल्याण हो! कल्याण हो! कल्याण तुम्हारे सिवा किसी का नहीं है। कल्याण, क्या वह कर सकता है। ...

---

# सोने के गुण।

सोना सब धातुओं में बढ़िया गिना जाता है। शुद्ध सोना रङ्ग में साफ़ और वायु तथा जल में रहने से भी मैला नहीं होता। यह धातु व्यापार में बहुत काम आती है। इसके सिक्के और अनेक प्रकार के आभूषण आदि बनाये जाते हैं। सोने के परमाणु बहुत सघन होते हैं। इस कारण उसमें गुरुत्व भी विशेष होता है। और धातुओं की अपेक्षा सोना अधिक तेज़ अग्नि में गलता है और बढ़ाने से अधिक बढ़ाया भी जा सकता है। जो यह तार की सूरत में खींचा जाय तो इसका तार बहुत पतला खिँच सकता है। यह नरम तो होता है, पर चीमड़ा भी होता है—अर्थात् तोड़ने से यह नहीं टूटता और खींचने से नहीं कटता। अधिक नरम होने के कारण शुद्ध अवस्था में सोने का विशेष उपयोग नहीं होता।

धातुओं की गुरुता, अर्थात् भारीपन, की जाँच से जाना गया है कि मामूली धातुओं में सोना सबसे भारी है। कौन धातु कितनी भारी है, यह जानने की स्थूल रीति इस प्रकार है। धातुओं के गुरुत्व की जाँच के लिए पानी का परिमाण मुख्य माना जाता है। पानी सुगमता से [illegible]च्छ किया जा सकता है और विना कष्ट सब कहीं मिल भी सकता है। वर्षा का जल धरती पर गिरने के पूर्व ही, यदि स्वच्छ पात्र में इकट्ठा कर लिया जाय तो वह शुद्ध और स्वच्छ होता है। जल का भपका में भर कर उसकी वाष्प यदि एकत्र कर ली जाय तो उससे भी निर्मल जल प्राप्त हो सकता है। इस तरह प्राप्त किया गया जल धातुओं की गुरुता की माप का परिमाण माना जाता है। ऐसे शुद्ध जल की तोल जाँच की इकाई गई है। कल्पना कीजिए कि एक प्याले में स्वच्छ जल भरा है। [illegible] प्याले की ताल घटा[illegible] जल की तोल समझिए। अब खूब पोंछ कर प्याले में सोना आदि धातु खूब ठाँस कर दीजिए, जिस में वायु के सञ्चार के लिए भी [illegible] न रहे। तब उसे फिर तोलिए। जो तोल आवे [illegible] से प्याले की तोल का घटा दीजिए। जो बाक़ी बचे वही सोने आदि धातु की असल तोल होगी। तोल या वज़न में शुद्ध जल की तोल से भ[illegible] दीजिए तो प्राप्त हुई लब्धि ही धातु का गुरुत्व होगा अर्थात् उससे यह सिद्ध होगा कि जल की अपे[illegible] धातु में इतना अधिक भारीपन है। इस त[illegible] परीक्षा करने से ज्ञात हुआ है कि सुनारों [illegible] सर्राफों के उपयोगी धातुओं का गुरुत्व जल [illegible] अपेक्ष इस भाँति है—

| धातु | गुरुत्व |
|---|---|
| जल | १ |
| जस्ता | ७·२ |
| ताँबा | ८·९६ |
| चाँदी | १०·५ |
| सोना | १९·२ |

पीटने से धातु के परमाणु और भी सघन हो जाते हैं और उसका गुरुत्व भी बढ़ जाता है। इस कारण गढ़े जाने पर सोने का गुरुत्व १९·५ हो जाता है। सब धातुयें अग्नि संयोग से पिघल जाती हैं। जुदी जुदी धातु के पिघलने के लिए जुदी जुदी उष्णता दरकार होती है—

| धातु | कितने दर्जे की गरमी से गलती है |
|---|---|
| शुद्ध सोना | २०१६ दर्जे |
| " ताँबा | १९९४ " |
| " चाँदी | १८७३ " |
| शुद्ध जस्ता | ७७३ दर्जे |
| " सीसा | ६१२ " |
| [illegible]ँगा | ४४२ " |

[illegible] है कि सोना बहुत तेज़ आग [illegible] गुरुत्व और सघन [illegible] इन दो विशेष गुण

के सिवा, सोने में यह भी विशेष गुण है कि पीटने से वह सब धातुओं की अपेक्षा अधिक फैल सकता है। एक विज्ञानवेत्ता महाशय का कथन है कि एक तोले सोना पीट कर उसका पत्तर चार एकड़ भूमि के बराबर बढ़ाया जा सकता है; और यदि उसका अत्यन्त महीन तार खींचा जाय तो एक इंच के दो लाखवें भाग की बराबर पतला खींचा जा सकता है। बाज़ार में सोने के वरक बिकते हैं। वे औषधि के काम आते हैं। ये सोने की अत्यधिक वर्द्धनशीलता के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। एक तोले सोने का तार ९२,३२० फुट लम्बा खींचा जा सकता है।

बढ़ाव और खिँचाव में तो सोना सब धातुओं से श्रेष्ठ है, पर चीमड़पन में नहीं। सोने का जितना मोटा तार ७५ सेर बोझ सँभाल सकता है, चाँदी और लोहे का उतना ही मोटा तार क्रम से ९४ और ३५ सेर बोझ सँभाल सकेगा। इससे स्पष्ट है कि बोझ सँभालने में सोना और धातुओं की बराबरी नहीं कर सकता।

और धातुओं के मुक़ाबिले में सोना अधिक नरम है। इस कारण यदि वह शुद्ध रूप में व्यवहृत होता है तो शीघ्र घिस जाता है।

गङ्गाशङ्कर पञ्चोली

---

## सर फ़ीरोज़शाह मेहता।

लगभग एक ही वर्ष में भारतवर्ष को बड़ी हानि उठानी पड़ी। राष्ट्रनेताओं की इस हानि का यथेष्ट परिमाण बताना शक्ति के बाहर है। भारत के अनेक नेता उसे छोड़ गये। इसी वर्ष के फ़रवरी महीने में माननीय गोखले देवलोक हो गया। उस शोक से उत्पन्न आँसू न सूखने पाये थे कि भारत के हितैषी सर फ़ीरोज़शाह का देहान्त हो गया। उनकी मृत्यु को एक पक्ष भी न व्यतीत होने पाया था कि सर फ़ीरोज़शाह मेहता का परलोकवास से भारतवासियों के शोक का भला कहाँ ठि

सर फ़ीरोज़शाह मेहता की मृत्यु का सुन कर हम लोगों के हृदय पर अचानक क लगी है। सर फ़ीरोज़शाह मेहता भारत नेता थे। बम्बई-प्रान्त में उनका बहुत उनके गुणों की प्रशंसा गोखले, रानडे आदि पुरुषों ने की है। मृत्युशय्या में उनके होने के समाचार से ही सब चिन्तित हो सब लोग हृदय से उनके आरोग्य होने की करते थे। ५ नवंबर को उनके देहान्त का पाकर सबको शोक-ग्रस्त हो जाना पड़ा।

फ़ीरोजशाह मेहता का जन्म ४ १८४५ को हुआ था। उनके पिता कामा एंड के एक हिस्सेदार थे। उनकी आर्थिक दशा दशतः अच्छी थी। इस कारण विद्याध्ययन का अच्छा अवसर मिला। सन् ईसवी में एम० ए० की परीक्षा पास करके बैरि की शिक्षा प्राप्त करने वे विलायत गये। वह उस समय दादाभाई नौरोजी अकेले ही भार सियों के लिए इस प्रयत्न में लगे थे कि उन्हें राजकीय स्वत्व मिल जायँ। फ़ीरोजशाह मेहत उनसे मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। वे ई इंडियन सोसाइटी और ईस्ट इंडिया असोसि में भी सम्मिलित हुए। यहाँ पर इण्ड० वेनर्जी से उनकी मित्रता हो गई। ईस्ट इंडिया स सियेशन में फ़ीरोजशाह मेहता ने उदार विषय पर एक महत्त्व पूर्ण लेख पढ़ा। इस वे शिक्षा सम्बन्धी विषयों की ओर विशेष ध्यान लगे।

सन् १८७८ ईसवी में बैरिस्टर होकर व लौट आये। बम्बई में वे म्युनिसिपालिटी के मेम्बर गये। म्युनिसिपालिटी के ही काम में उनक का श्रीगणेश आरम्भ हुआ। वहाँ ४० वर्ष बम्बई की म्युनिसिपालिटी के मेम्बर रह कर उन्हों ने बड़े महत्त्व के सुधार किये। बम्बई

# सोने के गुण।

सब धातुओं में बढ़िया गिना जाता है। शुद्ध सोना रङ्ग में साफ़ और वायु तथा जल में रहने से भी मैला नहीं होता। यह धातु व्यापार में बहुत काम आती है। इसके सिक्के और अनेक प्रकार के आभूषण आदि बनाये जाते हैं। सोने के परमाणु बहुत सघन होते हैं। इस कारण उसमें गुरुत्व भी विशेष होता है। और धातुओं की अपेक्षा सोना अधिक तेज़ अग्नि में गलता है और बढ़ाने से अधिक बढ़ाया भी जा सकता है। जो यह तार की सूरत में खींचा जाय तो इसका तार बहुत पतला खिंच सकता है। यह नरम तो होता है, पर चीमड़ा भी होता है—अर्थात् तोड़ने से यह नहीं टूटता और खींचने से नहीं कटता। अधिक नरम होने के कारण शुद्ध अवस्था में सोने का विशेष उपयोग नहीं होता।

धातुओं की गुरुता, अर्थात् भारीपन, की जाँच से जाना गया है कि मामूली धातुओं में सोना सबसे भारी है। कौन धातु कितनी भारी है, यह जानने की स्थूल रीति इस प्रकार है। धातुओं के गुरुत्व की जाँच के लिए पानी का परिमाण मुख्य माना जाता है। पानी सुगमता से शुद्ध किया जा सकता है और बिना कष्ट सब कहीं मिल भी सकता है। वर्षा का जल धरती पर गिरने के पूर्व ही, यदि स्वच्छ पात्र में इकट्ठा कर लिया जाय तो वह शुद्ध और स्वच्छ होता है। जल का भपका में भर कर उसकी बाष्प यदि एकत्र कर ली जाय तो उससे भी निर्मल जल प्राप्त हो सकता है। इस तरह प्राप्त किया गया जल धातुओं की गुरुता की माप का परिमाण माना जाता है। ऐसे शुद्ध जल की तोल जाँच की इकाई मानी गई है। कल्पना कीजिए कि एक प्याले में शुद्ध और स्वच्छ जल भरा है। उसे तोलिए। उसकी तौल से प्याले की तौल घटा दीजिए। जो बचे वही शुद्ध जल की तौल समझिए। अब खूब पोंछ कर उसी प्याले में सोना आदि धातु खूब ठाँस कर भर दीजिए, जिस में वायु के सञ्चार के लिए भी स्थान न रहे। तब उसे फिर तोलिए। जो तौल आवे उस से प्याले की तौल को घटा दीजिए। जो बाक़ी बचेगा वही सोने आदि धातु की असल तौल होगी। इस तौल या वज़न में शुद्ध जल की तौल से भाग दीजिए तो प्राप्त हुई लब्धि ही धातु का गुरुत्व होगा। अर्थात् उससे यह सिद्ध होगा कि जल की अपेक्षा धातु में इतना अधिक भारीपन है। इस तरह परीक्षा करने से ज्ञात हुआ है कि सुनारों और सर्राफों के उपयोगी धातुओं का गुरुत्व जल की अपेक्षा इस भाँति है—

| धातु | गुरुत्व |
|---|---|
| जल | १ |
| जस्ता | ७·२ |
| ताँबा | ८·९६ |
| चाँदी | १०·५ |
| सोना | १९·२ |

पीटने से धातु के परमाणु और भी सघन हो जाते हैं और उसका गुरुत्व भी बढ़ जाता है। इस कारण गढ़े जाने पर सोने का गुरुत्व १९·५ हो जाता है। सब धातुयें अग्नि संयोग से पिघल जाती हैं। जुदी जुदी धातु के पिघलने के लिए जुदी जुदी उष्णता दरकार होती है—

| धातु | कितने दर्जे की गर्मी से गलती है |
|---|---|
| शुद्ध सोना | २०१६ दर्जे |
| ,, ताँबा | १९९४ ,, |
| ,, चाँदी | १८७३ ,, |
| शुद्ध जस्ता | ७७३ दर्जे |
| ,, सीसा | ६१२ ,, |
| ,, राँगा | ४४२ ,, |

इससे स्पष्ट है कि सोना बहुत तेज़ आग में पिघलता है। सबसे अधिक गुरुत्व और सबसे अधिक तेज़ आग से पिघलना, इन दो विशेष गुणों

के सिवा, सोने में यह भी विशेष गुण है कि पीटने से यह सब धातुओं की अपेक्षा अधिक फैल सकता है। एक विज्ञानवेत्ता महाशय का कथन है कि एक तोले सोना पीट कर उसका पत्तर चार एकड़ भूमि के बराबर बढ़ाया जा सकता है; और यदि उसका अत्यन्त महीन तार खींचा जाय तो एक इंच के दो लाखवें भाग की बराबर पतला खींचा जा सकता है। बाज़ार में सोने के वरक बिकते हैं। वे औषधि के काम आते हैं। वे सोने की अत्यधिक वर्द्धनशीलता के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। एक तोले सोने का तार ९२,३२० फुट लम्बा खींचा जा सकता है।

बढ़ाव और खिँचाव में तो सोना सब धातुओं से श्रेष्ठ है, पर चीमड़पन में नहीं। सोने का जितना मोटा तार ७५ सेर बोझ सँभाल सकता है, चाँदी और लोहे का उतना ही मोटा तार क्रम से ९४ और ७५ सेर बोझ सँभाल सकेगा। इससे स्पष्ट है कि बोझ सँभालने में सोना और धातुओं की बराबरी नहीं कर सकता।

और धातुओं के मुक़ाबिले में सोना अधिक नरम है। इस कारण यदि वह शुद्ध रूप में व्यवहृत होता तो शीघ्र घिस जाता है।

गङ्गाशङ्कर पञ्चोली

---

## सर फ़ीरोज़शाह मेहता।

गभग एक ही वर्ष में भारतवर्ष को बड़ी हानि उठानी पड़ी। राष्ट्रनेताओं की इस हानि का यथेष्ट परिमाण बताना शक्ति के बाहर है। भारत के अनेक नेता उसे छोड़ गये। इसी वर्ष के फ़रवरी महीने में माननीय गोखले ने देवलोक को गया। उस शोक से उत्पन्न आँसू न सूखने पाये थे कि भारत के हितेच्छु सर जॉर्ज वाटन का देहान्त हो गया। उनकी मृत्यु को एक पक्ष भी न व्यतीत होने पाया था कि सर फ़ीरोज़शाह मेहता का परलोकवास हो भारतवासियों के शोक का भला कहीं ठिक

सर फ़ीरोज़शाह मेहता की मृत्यु का सुन कर हम लोगों के हृदय पर अचानक क लगी है। सर फ़ीरोज़शाह मेहता भारत नेता थे। बम्बई-प्रान्त में उनका बहुत मा उनके गुणों की प्रशंसा गोखले, रानडे आदि पुरुषों ने की है। वृद्धावस्था में उनके होने के समाचार से सब चिन्तित हो सब लोग हृदय से उनके आरोग्य होने की करते थे। ५ नवंबर को उनके देहान्त का स पाकर सबको शोक-ग्रस्त हो जाना पड़ा।

फ़ीरोज़शाह मेहता का जन्म ४ अगस्त १८४५ को हुआ था। उनके पिता कामा एंड के एक हिस्सेदार थे। उनकी आर्थिक दशा रणतः अच्छी थी। इस कारण फ़ीरोज़शा विद्याध्ययन का अच्छा अवसर मिला। सन् ईसवी में एम० ए० की परीक्षा पास करके बैरि की शिक्षा प्राप्त करने वे विलायत गये। यह उस समय दादाभाई नौरोजी अकेले ही भार सियों के लिए इस प्रयत्न में लगे थे कि उन्हें राजकीय स्वत्व मिल जायँ। फ़ीरोज़शाह मेहता उनसे मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। वे ई इंडियन सोसाइटी और ईस्ट इंडिया एसोसिएशन में भी सम्मिलित हुए। वहाँ पर इण्ल्० बैनर्जी से उनकी मित्रता हो गई। ईस्ट इंडिया एसोसियेशन में फ़ीरोज़शाह मेहता ने उदार शिक्षा विषय पर एक महत्त्व पूर्ण लेख पढ़ा। इसके पश्च वे शिक्षा सम्बन्धी विषयों की ओर विशेष ध्यान लगे।

सन् १८६८ ईसवी में बैरिस्टर होकर वे बम्बई लौट आये। बम्बई में वे म्युनिसिपालिटी के मेम्बर गये। म्युनिसिपालिटी के ही काम में उनका प्रथम का सार्वजनिक सम्मान हुआ। वहाँ ४२ वर्ष त बम्बई की म्युनिसिपालिटी के मेम्बर रह कर उन्हों उसने कई बड़े महत्त्व के सुधार किये। बम्बई

म्युनिसिपलिटी की आधुनिक उन्नति अधिकतर उन्हीं के प्रयत्नों का फल है। यह स्वराज्य-सभा का एक छोटा सा नमूना है। बहत्तर मेम्बरों में से केवल सोलह को गवर्नमेंट चुनती है। शेष बम्बई के निवासियों ही द्वारा चुने जाते हैं।

इसके बाद सर फ़ीरोज़शाह भारतवर्ष के प्रत्येक राजनैतिक कार्य्य की ओर ध्यान देने और उसकी चर्चा में सम्मिलित होने लगे। लार्ड लिटन के शासनकाल में वर्नाक्युलर-प्रेस-एक्ट का सबसे अधिक विरोध सर फ़ीरोज़शाह मेहता ने ही किया था। इस एक्ट के विरोध में जो बातें उन्होंने उस समय कहीं वे विशेष महत्त्व की हैं।

सन् १८८५ ईसवी में बम्बई के प्रान्तीय सम्मेलन ( Bombay Presidency Association ) की पहली बैठक हुई। इस समिति से उनका बराबर सम्बन्ध बना रहा। कुछ काल तक वे उसके सभापति भी रहे। उनके राजनैतिक विचारों का बहुत कुछ प्रसार इस सम्मेलन में दिये हुए व्याख्यानों द्वारा ही हुआ। वे सदा नरम दल के पक्षपाती रहे। भारत गवर्नमेंट और प्रजा में मित्रता बढ़ा कर प्रजा के लिए राजकीय अधिकार प्राप्त करना ही उनका उद्देश था। उन्होंने सरकारी कार्यों की सदा निर्भीकता से आलोचना की। उस समय से उनकी राजनीतिज्ञता की प्रशंसा बम्बई प्रान्त क्या, सारे भारतवर्ष में होने लगी।

सन् १८८६ में वे बम्बई की लेजिस्लेटिव कौन्सिल के मेम्बर चुने गये। इस कौन्सिल में गवर्नर तथा अन्य मेम्बरों ने भी उनके काम की बड़ी प्रशंसा की। ऐसा कोई भी क़ानूनी मसविदा "पास" नहीं हुआ जिसकी उन्होंने ख़ूब विचार-पूर्वक उचित समालोचना न की हो। जब उन्होंने किसी क़ानूनी मसविदे को प्रजा के लिए हानिकारक समझा तब उसका विरोध करने में कभी सङ्कोच न किया। सभा में वाद-विवाद करने की उनमें विशेष योग्यता थी। उनके उत्तर बहुत ही उचित होते थे। वे कूट और कटाक्ष-पूर्ण होते थे। भूमि-कर के सम्बन्ध में जो मसविदा पेश किया गया था उसका उन्होंने बहुत विरोध किया, परन्तु विपक्षी दल की प्रबलता के कारण वे सफल न हुए। बम्बई की कौन्सिल में वे लगातार २२ वर्ष तक मेम्बर रहे।

वाइसराय की कौन्सिल के लिए भी वे तीन बार मेम्बर चुने गये। वहाँ पर भी उनके का बम्बई की कौन्सिल के समान ही, महत्त्व-पूर्ण हु कहते हैं कि सर फ़ीरोज़शाह मेहता ने कौन्सिल प्रवेश करके वहाँ, उचित मामलों में, शासक द का विरोध करने की नई प्रथा चलाई। उनके ज से शासक दल को यह बात विदित हो गई कि प्र के नियत किये हुए मेम्बरों द्वारा भी अब गवर्नमें के क़ानूनी मसविदों की कड़ी समालोचना आरम्भ हो गया है। पहले वर्ष सर फ़ीरोज़शा मेहता ने सर एन्टोनी मेकडानल के पुलिस-विभाग सम्बन्धी मसविदे का विरोध किया। बजट (आयव्य के लेखे) के ऊपर उन्होंने जो पहली वक्तृता दी वह समुचित समालोचना और गवेषणा-पूर्ण विचारों से भरी हुई थी। सन् १९०१ में उन्होंने माननीय गोखले को वाइसराय के कौंसिल में पहुँचाने के लिए अपनी मेम्बरी से इस्तेफ़ा दे दिया।

सर फ़ीरोज़शाह मेहता नेशनल कांग्रेस के मुख्य मेम्बरों में से थे। १८९० ईसवी में कलकत्ते में जो कांग्रेस हुई थी उसके वे सभापति थे। दो वर्ष वे कांग्रेस की स्वागतकारिणी सभा के प्रधान हुए थे। सन् १९०९ में वे फिर कांग्रेस के सभापति चुने गये थे, परन्तु उस साल उन्होंने वह आसन सुशोभित न किया। इस वर्ष भी वे कांग्रेस की स्वागतकारिणी सभा के प्रधान चुने गये थे। परन्तु दुर्भाग्यवश मृत्यु उन्हें पहले ही उठा ले गई।

मेहता महाशय का राजनैतिक मत यह था कि भारतवर्ष अँगरेज़ों के अधीन रह कर ही अपनी उन्नति कर सकता है। राज-भक्त रह कर प्रजा के अधिकारों की रक्षा करना और उचित अधिकार प्राप्त करना उनका उद्देश था। उनके राजनैतिक विचारों

से माननीय गोखले पूर्णतया सहमत थे। माननीय गोखले ने तो एक बार यहाँ तक कह डाला था कि उन्हें सर फ़ीरोज़शाह के साथ रह कर किसी काम में भूल करना स्वीकार है, किन्तु बिना फ़ीरोज़शाह के बिना भूल का काम करना भी स्वीकार नहीं। पार्लियामेंट के एक अँगरेज़-मेम्बर की यह राय है कि फ़ीरोज़शाह मेहता अपने गुणों के कारण किसी भी देश के राजनीतिज्ञों में सबसे ऊँचा स्थान पाने योग्य थे। श्रद्धास्पद दादाभाई नौरोजी ने सर फ़ीरोज़शाह की राजनीतिज्ञता की बड़ी प्रशंसा की है। राजे सदा उनकी सलाह लिया करते थे। मिस्टर हैलड्न ने एक समय यहाँ तक कहा था कि वे सर फ़ीरोज़शाह मेहता को अपना नेता मानते हैं। गवर्नमेंट ने भी मेहता महाशय के गुणों के उपलक्ष्य में उन्हें, सन् १८९४ ईसवी में, सी० आई० ई० की और, सन् १९०४ में, के० सी० आई० ई० की उपाधि से विभूषित किया।

सर फ़ीरोज़शाह शिक्षा-सम्बन्धी विषयों की ओर भी विशेष ध्यान देते थे। तीस वर्ष तक वे बम्बई के विश्वविद्यालय के सदस्य (फ़ेलो) रहे। मृत्यु के समय वे उस विद्यालय के पास चान्सलर थे।

परन्तु काल की गति पर किसी का वश नहीं। भारतवर्ष की वर्तमान राजनैतिक दशा में सर फ़ीरोज़शाह के सदृश राष्ट्रनेताओं की मृत्यु बहुत ही दुःखजनक है। इस समय यद्यपि वे संसार में नहीं हैं, पर जो कुछ वे अपने देशवासियों के लिए कर गये हैं वह अवश्य स्थायी रहेगा। जो राजनैतिक पाठ उन्होंने अपने आचरण तथा शिक्षा द्वारा हमें पढ़ाये हैं उन्हें हम अपने हृदय से कभी दूर न कर सकेंगे।

इतिहासरत्न शर्मा।

---

# मौर्य्य-साम्राज्य का लोप

ईसा के कोई तीन सौ चन्द्रगुप्त ने मगध साम्राज्य की प्रतिष्ठा की वंश के राजाओं की पाटलिपुत्र (वर्त्तमान पटना इस वंश में अशोक नामक एक बड़ा ही प्रसिद्ध हो गया है। उसने बहुत दूर तक अपने विस्तार किया था। अनेकानेक लोकोपकारी भी उसने किये थे। परन्तु अशोक की मृत्यु थोड़े ही दिनों में मौर्य्य-साम्राज्य नष्ट हो गया बड़े साम्राज्य के इस तरह नष्ट हो जाने कारण आज तक विद्वान् इतिहास-लेखक नहीं कर सके हैं। कुछ समय हुआ, महामहोपाध्याय पण्डित हरप्रसाद शास्त्री का लिखा हुआ, हिस्टारिकल-सोसाइटी की पत्रिका में, इस विषय लेख निकला था। उसमें उन्होंने मौर्य्य-साम्राज्य लोप होने का बहुत ही युक्तिसङ्गत कारण बताया है। उसी लेख का सारांश पाठकों के अवलोकनार्थ यहाँ प्रकाशित किया जाता है।

[illegible] इसका कोई कारण नहीं कर सका कि अशोक का इतना बड़ा साम्राज्य क्यों नष्ट हो गया। हिन्दुस्तान का प्राचीन इतिहास नामक अपने ग्रन्थ में इन्होंने लिखा है कि [illegible] साम्राज्य [illegible] इसके बाद [illegible] राजाओं ने भी [illegible] अनुकरण किया। प्रायः सभी ने पड़ोसी पर चढ़ाई कर दी, [illegible] इनमें यह भी इस साम्राज्य के नष्ट हो जाने का [illegible] कारण है। परन्तु [illegible] विचार करने की बात है कि अशोक के [illegible] उसके बाद [illegible] साम्राज्य, इस [illegible] मृत्यु के बाद ही [illegible] नष्ट हो गया, इसका कारण क्या है।

[illegible] कारण ढूँढ़ने के लिए [illegible] नहीं। [illegible] अशोक के [illegible] में [illegible]

म्युनिसिपलिटी की आधुनिक उन्नति अधिकतर उन्हीं के प्रयत्नों का फल है। वह स्वराज्य-सभा का एक छोटा सा नमूना है। बहत्तर मेम्बरों में से केवल सोलह को गवर्नमेंट चुनती है। शेष बम्बई के निवासियों ही द्वारा चुने जाते हैं।

इसके बाद सर फ़ीरोज़शाह भारतवर्ष के प्रत्येक राजनैतिक कार्य्य की ओर ध्यान देने और उसकी चर्चा में सम्मिलित होने लगे। लार्ड लिटन के शासनकाल में वर्नाक्युलर-प्रेस-एक्ट का सबसे अधिक विरोध सर फ़ीरोज़शाह मेहता ने ही किया था। इस एक्ट के विरोध में जो बातें उन्होंने उस समय कहीं वे विशेष महत्त्व की हैं।

सन् १८८५ ईसवी में बम्बई के प्रान्तीय सम्मेलन ( Bombay Presidency Association ) की पहली बैठक हुई। इस समिति से उनका बराबर सम्बन्ध बना रहा। कुछ काल तक वे उसके सभापति भी रहे। उनके राजनैतिक विचारों का बहुत कुछ प्रसार इस सम्मेलन में दिये हुए व्याख्यानों द्वारा ही हुआ। वे सदा नरम दल के पक्षपाती रहे। भारत गवर्नमेंट और प्रजा में मित्रता बढ़ा कर प्रजा के लिए राजकीय अधिकार प्राप्त करना ही उनका उद्देश था। उन्होंने सरकारी कार्यों की सदा निर्भीकता से आलोचना की। उस समय से उनकी राजनीतिज्ञता की प्रशंसा बम्बई प्रान्त क्या, सारे भारतवर्ष में होने लगी।

सन् १८८६ में वे बम्बई की लेजिस्लेटिव कौन्सिल के मेम्बर चुने गये। इस कौन्सिल में गवर्नर तथा अन्य मेम्बरों ने भी उनके काम की बड़ी प्रशंसा की। ऐसा कोई भी क़ानूनी मसविदा "पास" नहीं हुआ जिसकी उन्होंने ख़ूब विचार-पूर्वक उचित समालोचना न की हो। जब उन्होंने किसी क़ानूनी मसविदे को प्रजा के लिए हानिकारक समझा तब उसका विरोध करने में कभी सङ्कोच न किया। सभा में वाद-विवाद करने की उनमें विशेष योग्यता थी। उनके उत्तर बहुत ही उचित होते थे। वे चूट और कटाक्ष-पूर्ण होते थे। भूमि-कर के सम्बन्ध में जो मसविदा पेश किया गया था उसका उन्होंने बहुत विरोध किया, परन्तु विपक्षी दल की प्रबलता के कारण वे सफल न हुए। बम्बई की कौन्सिल में वे लगातार २२ वर्ष तक मेम्बर रहे।

वाइसराय की कौन्सिल के लिए भी वे तीन बार मेम्बर चुने गये। वहाँ पर भी उनके कार्य्य, बम्बई की कौन्सिल के समान ही, महत्त्व-पूर्ण हुए। कहते हैं कि सर फ़ीरोज़शाह मेहता ने कौन्सिल में प्रवेश करके वहाँ, उचित मामलों में, शासक दल का विरोध करने की नई प्रथा चलाई। उनके जाने से शासक दल को यह बात विदित हो गई कि प्रजा के नियत किये हुए मेम्बरों द्वारा भी अब गवर्नमेंट के क़ानूनी मसविदों की कड़ी समालोचना का आरम्भ हो गया है। पहले वर्ष सर फ़ीरोज़शाह मेहता ने सर एन्टोनी मेकडानल के पुलिस-विभाग-सम्बन्धी मसविदे का विरोध किया। बजट (आयव्यय के लेखे) के ऊपर उन्होंने जो पहली वक्तृता दी वह समुचित समालोचना और गवेषणा-पूर्ण विचारों से भरी हुई थी। सन् १९०१ में उन्होंने माननीय गोखले को वाइसराय के कौंसिल में पहुँचाने के लिए अपनी मेम्बरी से इस्तीफ़ा दे दिया।

सर फ़ीरोज़शाह मेहता नेशनल कांग्रेस के मुख्य मेम्बरों में से थे। १८९० ईसवी में कलकत्ते में जो कांग्रेस हुई थी उसके वे सभापति थे। दो वर्ष वे कांग्रेस की स्वागतकारिणी सभा के प्रधान हुए थे। सन् १९०९ में वे फिर कांग्रेस के सभापति चुने गये थे, परन्तु उस साल उन्होंने वह आसन सुशोभित न किया। इस वर्ष भी वे कांग्रेस की स्वागतकारिणी सभा के प्रधान चुने गये थे। परन्तु दुर्भाग्यवश मृत्यु उन्हें पहले ही उठा ले गई।

मेहता महाशय का राजनैतिक मत यह था कि भारतवर्ष अँगरेज़ों के अधीन रह कर ही अपनी उन्नति कर सकता है। राज-भक्त रह कर प्रजा के अधिकारों की रक्षा करना और उचित अधिकार प्राप्त करना उनका उद्देश था। उनके राजनैतिक विचारों

से माननीय गोखले पूर्णतया सहमत थे। माननीय गोखले ने तो एक बार यहाँ तक कह डाला था कि उन्हें सर फ़ीरोज़शाह के साथ रह कर किसी काम में भूल करना स्वीकार है, किन्तु बिना फ़ीरोज़शाह के बिना भूल का काम करना भी स्वीकार नहीं। पार-लियामेंट के एक अँगरेज़ मेम्बर की यह राय है कि फ़ीरोज़शाह मेहता अपने गुणों के कारण किसी भी देश के राजनीतिज्ञों में सबसे ऊँचा स्थान पाने योग्य थे। श्रद्धास्पद दादाभाई नौरोजी ने सर फ़ीरोज़-शाह की राजनीतिज्ञता की बड़ी प्रशंसा की है। रानडे सदा उनकी सलाह लिया करते थे। मिस्टर तैलङ्ग ने एक समय यहाँ तक कहा था कि वे सर फ़ीरोज़शाह मेहता को अपना नेता मानते हैं। गव-र्नमेंट ने भी मेहता महाशय के गुणों के उपलक्ष्य में उन्हें, सन् १८९४ ईसवी में, सी० आई० ई० की और, सन् १९०४ में, के० सी० आई० ई० की उपाधि से विभूषित किया।

सर फ़ीरोज़शाह शिक्षा-सम्बन्धी विषयों की ओर भी विशेष ध्यान देते थे। तीस वर्ष तक वे बम्बई के विश्वविद्यालय के सदस्य (फेलो) रहे। मृत्यु के समय वे उस विद्यालय के वाइस चान्सलर थे।

परन्तु काल की गति पर किसी का वश नहीं। भारतवर्ष की वर्तमान राजनैतिक दशा में सर फ़ीरोज़शाह के सदृश राजनेताओं की ही दुःखजनक है। हैं, पर जो कुछ गये हैं वह उन्होंने पढ़ाये कर

# मौर्य्य-साम्राज्य का लोप

ईसा के कोई तीन सौ चन्द्रगुप्त ने मगध साम्राज्य की प्रतिष्ठा की वंश के राजाओं की पाटलिपुत्र (वर्त्तमान पट इस वंश में अशोक नामक एक बड़ा ही प्रत हो गया है। उसने बहुत दूर तक अपने विस्तार किया था। अनेकानेक लोकोपका भी उसने किये थे। परन्तु अशोक की मृत्यु थोड़े ही दिनों में मौर्य्य-साम्राज्य नष्ट हो गय बड़े साम्राज्य के इस तरह नष्ट हो जाने कारण आज तक विद्वान् इतिहास-लेखक नहीं कर सके हैं। कुछ समय हुआ, महामहो पण्डित हरप्रसाद शास्त्री का लिखा हुआ, टिक-सोसाइटी की पत्रिका में, इस विषय लेख निकला था। उसमें उन्होंने मौर्य्य-सा लोप होने का बहुत ही युक्तिसङ्गत कारण ब है। उसी लेख का सारांश पाठकों के अपने यहाँ प्रकाशित किया जाता है।

विन्सेंट स्मिथ साहब इसका कोई कारण नहीं कर सके कि अशोक का इतना बड़ा सा क्यों नष्ट हो गया। हिन्दुस्तान का प्राचीन इ नामक अपने ग्रन्थ में उन्होंने लिखा है कि पहले कलिङ्ग देश इस साम्राज्य से निकल गया बाद विदर्भ, आन्ध्र आदि प्रदेशों ने भी किया। प्रोफ़ेसर लोगों ने पञ्जाब [illegible] इससे यह भी [illegible] से [illegible] जाते हैं, तथापि यह [illegible] के सब साम्राज्य [illegible] बाद [illegible] बाधा

नहीं देता था—उसके राज्य में सभी धर्मों के अनुयायी निर्विघ्नता-पूर्वक अपना अपना धर्मानुष्ठान करते थे—तथापि उसके कितने ही अनुशासनों से उसके हृदय का विपरीत भाव कुछ कुछ प्रकट होता है। स्मिथ साहब लिखते हैं कि अशोक ने केवल पाटलिपुत्र में पशुबलि बन्द कर दी थी। किन्तु उसके राज्य के दूसरे कई स्थानों में भी पशुबलि-निषेध-सूचक अनुशासन पाये जाते हैं। इससे मालूम होता है कि उसके साम्राज्य में प्रायः सब कहीं पशुहत्या बन्द हो गई थी। उस समय के ब्राह्मण बलिप्रदान करना बहुत पसन्द करते थे। यह अनुशासन उन लोगों के ही विरुद्ध प्रचारित हुआ था। एक शूद्र राजा की आज्ञा से उन लोगों की चिरप्रचलित प्रथा बन्द हो गई। इससे ब्राह्मण लोग अवश्य ही असन्तुष्ट थे। बहुत प्राचीन समय से भारतवर्ष में धर्म्म-सम्बन्धी बातों में ब्राह्मणों का ही अनुशासन माना जाता था। यदि कोई समाज या धर्म्म-सम्बन्धी नियमों का उल्लंघन करता तो उसे प्रायश्चित्त करना पड़ता और ब्रह्म-भोज कराने पर उसका अपराध क्षमा किया जाता। अशोक ने एक धर्म्म-व्यवस्थापक सभा बना कर ब्राह्मणों के इस चिरकाल-प्राप्त अधिकार पर हस्तक्षेप किया था। ब्राह्मण अपनी इस अधिकार-हानि को चुपचाप सहने वाले न थे। अशोक ने अपने राज्य में दण्ड-समता और व्यवहार-समता का नियम चलाया था—अर्थात् उसके राज्य में दण्ड और विचार के सम्बन्ध में उच्च और नीच वर्ण का कुछ भी ख़याल नहीं किया जाता था। यह बात भी ब्राह्मणों को बहुत नागवार थी। अब तक जिन लोगों ने अशोक की शासनलिपियों की आलोचना की है उनमें किसी ने भी दण्डसमता और व्यवहारसमता, इन दोनों शब्दों का अर्थ अच्छी तरह नहीं समझा। ब्राह्मण चाहे कैसा ही भारी अपराध क्यों न करें उसे शारीरिक दण्ड या फाँसी की सज़ा अशोक के पहले कभी नहीं दी जाती थी। ब्राह्मणों को देश से निकाल देना बहुत कठिन दण्ड समझा जाता था और उनकी शिखा कटवा देना तो घोरतम अपमानसूचक दण्ड माना जाता था। मुक़द्दमों में ब्राह्मणों के लिए बहुत सुभीता था। उनको कभी गवाही न देनी पड़ती थी। यदि कोई ब्राह्मण अपने मन से गवाही देने आता तो न्यायाधीश केवल उसका बयान लिख लेता। उससे जिरह करने का न्यायाधीश को कोई अधिकार न था। ऐसी अवस्था में अनार्य्य लोगों के साथ जेल जाने और वहाँ रहने का ख़याल ही ब्राह्मणों को बहुत दुःखदायक था। जब तक अशोक का दृढ़ शासन रहा तब तक ब्राह्मण इन सब अवमाननाओं को चुपचाप सहते रहे। किन्तु मन ही मन वे अत्यन्त असन्तुष्ट थे। उसकी मृत्यु के बाद ब्राह्मणों ने दलबद्ध होकर अशोक के वंशधरों के साथ विरोध आरम्भ किया। परन्तु वे ख़ुद लड़ न सकते थे, और जिन क्षत्रिय-राजाओं से उन्हें सहायता मिलने की आशा थी वे भी सब पहले ही नन्दवंश के द्वारा परास्त हो चुके थे। परन्तु, अन्त में, उन्हें इस काम के योग्य एक आदमी मिल गया। यह मौर्य्य-वंश का सेनापति पुष्यमित्र था। पुष्यमित्र किस जाति का था, इसका कुछ पता नहीं। सम्भव है, जिन लड़ाकू लोगों को ग्रीसवालों ने फ़ारिस से निकाल दिया था उन्हीं में से यह भी कोई हो। उसके नाम से भी मालूम होता है कि यह फ़ारिस ही का रहनेवाला होगा। यह ब्राह्मण-धर्म्म का पक्षपाती था और बौद्ध-धर्म्म से बहुत घृणा करता था। ग्रीक लोग मौर्य्य-साम्राज्य में घुसते चले आते थे। पुष्यमित्र ने पहले इन आक्रमणकारियों का सामना किया। युद्ध में उन्हें परास्त करके यह विजयी सेना के साथ पाटलिपुत्र आया। अशोक के वंशधरों ने उसका बड़ा आदर-सत्कार किया। विजय के उपलक्ष्य में नगर के बाहर सनातनधर्म्म में उत्सव मनाया जाने लगा। जिस समय यह उत्सव हो रहा था उसी समय कहीं से एक तीर छूटा और अशोक के वंशधर राजा के कलेजे में घुस गया। उसी समय उसकी मृत्यु हुई। इस प्रकार मौर्य्य साम्राज

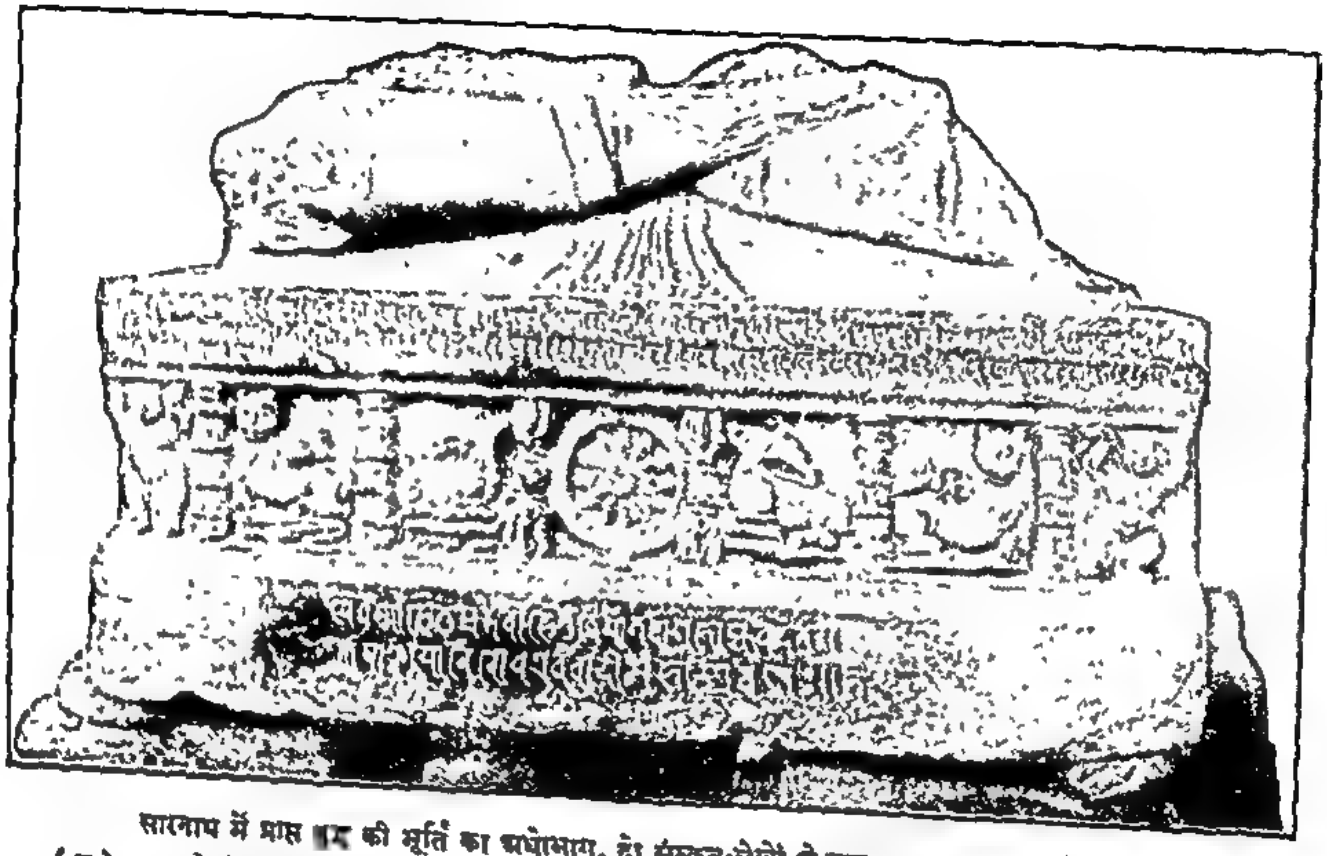

सारनाथ में प्राप्त [illegible] की मूर्ति का अधोभाग, दो संस्कृत-लेखों से युक्त—समय १०२६ ईसवी।
(क) ऊपर के लेख में जीर्णोद्धार का उल्लेख है। लेख की नक़ल सारनाथ-विषयक लेख में देखिए।
(ख) नीचे के लेख में बौद्ध-धर्म के तत्त्वार्थसूचक वचन हैं।

[illegible] लेख, सारनाथ।

का अन्त हो गया और पुष्यमित्र ने उस पर अपना अधिकार जमा लिया। मालविकाग्निमित्र नाटक से पता लगता है कि पुष्यमित्र अपनी सेना के साथ पाटलिपुत्र ही में रहा और अपने पुत्र को उसने विदिशा (भिलसा) के सिंहासन पर बिठाया। इस विप्लव में ब्राह्मणों की साज़िश साफ़ साफ़ दिखाई देती है। इसका कारण, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह था कि अशोक ने अपने साम्राज्य में पशुबलि को बन्द कर दिया था। पुष्यमित्र ने सम्राट् होकर अशोक ही की राजधानी पाटलिपुत्र में अश्व-मेध-यज्ञ किया। क्या इससे कथित कारण की पुष्टि नहीं होती? किसी किसी बौद्ध-ग्रन्थ में लिखा है कि पुष्यमित्र बौद्धों का विरोधी था। यह बात मिथ्या मालूम होती। पुष्यमित्र के राजा होने पर थोड़े ही दिनों में ब्राह्मणों का माहात्म्य बढ़ गया। मौर्य्य-साम्राज्य के सिवा और भी दूर दूर तक उनका प्रभाव फैला। ब्राह्मणों ने बौद्ध और जैन धर्म्म का प्रचार रोक दिया। देश की सारी विद्याओं को उन्होंने लिपिबद्ध किया और ब्राह्मण-धर्म्म को ऐसे साँचे में ढाला कि आज तक वह बना हुआ है। पुष्यमित्र के यज्ञ में पतञ्जलि ऋषि ने पुरोहित का काम किया था। पुष्यमित्र के आश्रय में रह कर ही पतञ्जलि ने महाभाष्य की रचना की थी। कण्वयंशीय राजाओं ने मनुसंहिता का संकलन कराया और उन्हीं ने रामायण और महाभारत को आधुनिक रूप में परिणत किया। ब्राह्मण-राजवंश जिस समय राजसिंहासन पर न था उस समय भी ब्राह्मण लोग शुङ्गवंशीय राजाओं के गुरु थे। राज्यसञ्चालन में उनका भी हाथ रहता था। राज्यशासन-सम्बन्धी प्रभुता का लोप होने पर भी बहुत दिनों तक वे समाज के मुखिया थे और सारी विधि-व्यवस्था उन्हीं के द्वारा होती थी। मनुसंहिता से मालूम होता है कि अशोक ने ब्राह्मणों के जो अधिकार छीन लिये थे उनको ब्राह्मणों ने फिर से प्राप्त करके समाज में अपनी श्रेष्ठता पुनर्वार स्थापित कर दी। अशोक ने ब्राह्मणों की भूदेव-उपाधि को मिथ्या बतलाया था। परन्तु ब्राह्मणों ने अशोक के बाद भी अधिक सम्मान प्राप्त कर लिया।

अशोक ने जाति-पाँति का विचार विचार-समता का नियम चलाया था। उ परिणाम हुआ यह मृच्छकटिक नामक मालूम होता है। जान पड़ता है कि इस न राजा पालक अशोक का अनुगामी था राज्य में ब्राह्मणों की बड़ी दुर्दशा थी। नामक ब्राह्मण और उसके अनुचर बहुत हो गये थे। शार्वलिक नामक एक ब्राह जीविका के लिए चोरी करनी पड़ी थी। न्या ने जिस समय चारुदत्त को स्त्री-हत्या का ठहराया उस समय वह चारुदत्त को ब्राह्मण कर उसे प्राणदण्ड देने के विषय में पशोपे लगा। परन्तु राजा ने उसकी एक न सुनी चारुदत्त को फाँसी पर चढ़ा देने ही की आ उसकी आज्ञा का पालन भी नहीं किया गया दक्षा उठ खड़ा हुआ। राजा सिंहासन से दिया गया। चारुदत्त ने प्रधान मन्त्री का प किया और शार्व्वलिक भी एक उच्च पदा बनाया गया। इस साहित्य से यह प्रमाणित है कि अशोक ने ब्राह्मणों को जो अन्य वर्णों बराबर करने की चेष्टा की थी उसीसे साम्राज्य अधिक दिनों तक न ठहर सका।

---

## फ़ा-हियान की भारत-यात्रा।

प्राचीन भारत के इतिहास का बहुत पता जो हमें लगता अशोक और चीनी यात्रियों यात्रा-वृत्तान्त से लगता है। वाले इस देश में भिक्षक, या अथवा राजदूत बन कर आते थे। इसी से लेखों में अधिकतर भारतीय राजनीति, पद्धति और भौगोलिक बातों ही का उल्लेख उन्होंने भारतीय धर्म और शास्त्रों की ओर

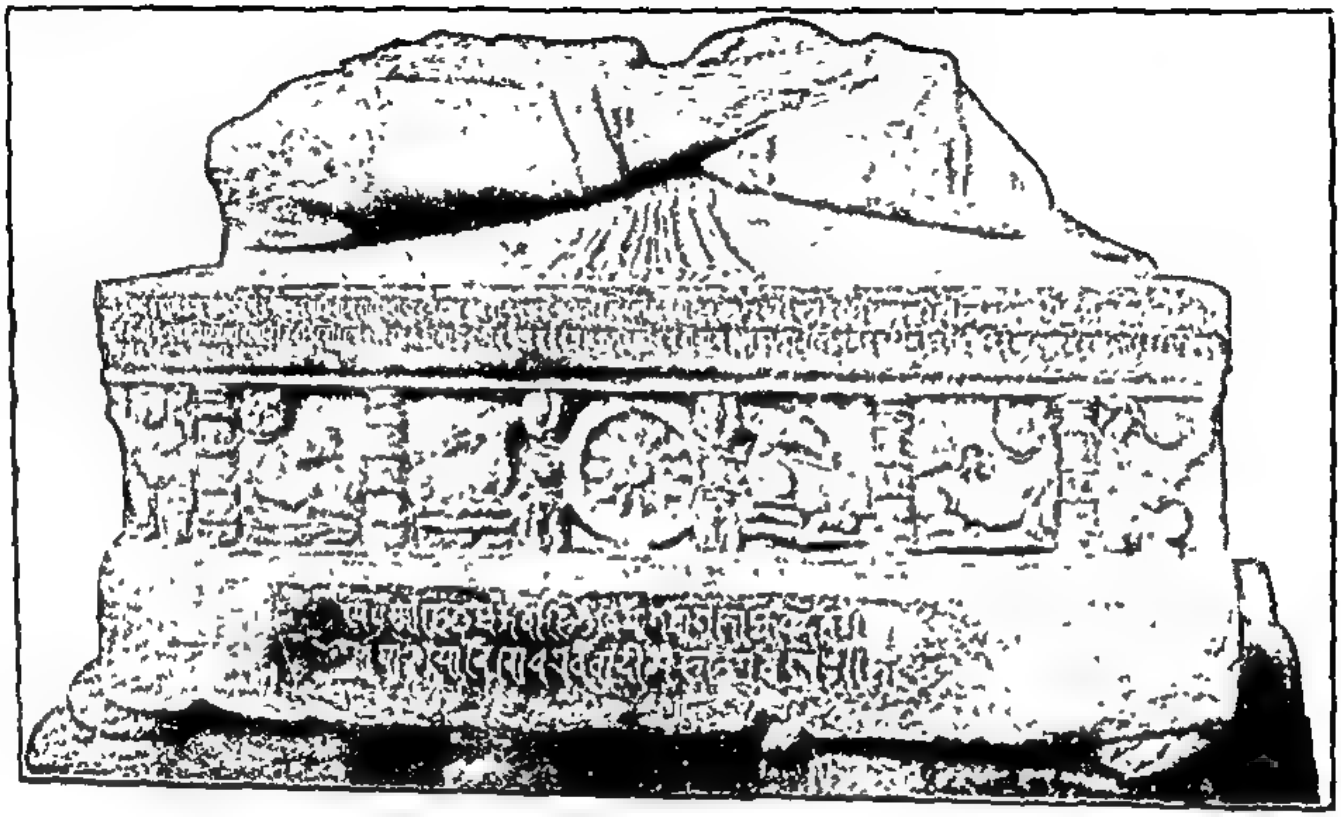

सारनाथ में प्राप्त बुद्ध की मूर्ति का अधोभाग, दो संस्कृत-लेखों से युक्त—समय १०२६ ईसवी।
(क) ऊपर के लेख में जीर्णोद्धार का उल्लेख है। लेख की नक़ल सारनाथ-विषयक लेख में देखिए।
(ख) नीचे के लेख में बौद्ध-धर्म के तत्त्वार्थसूचक वचन हैं।
इंडियन प्रेस, प्रयाग।

का अन्त हो गया और पुष्यमित्र ने उस पर अपना अधिकार जमा लिया। मालविकाग्निमित्र नाटक से पता लगता है कि पुष्यमित्र अपनी सेना के साथ पाटलिपुत्र ही में रहा और अपने पुत्र को उसने विदिशा (भिलसा) के सिंहासन पर बिठाया। इस विषय में ब्राह्मणों की साज़िश साफ़ साफ़ दिखाई देती है। इसका कारण, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह था कि अशोक ने अपने साम्राज्य में पशुबलि को बन्द कर दिया था। पुष्यमित्र ने सम्राट् होकर अशोक ही की राजधानी पाटलिपुत्र में अश्वमेध-यज्ञ किया। क्या इससे कथित कारण की पुष्टि नहीं होती? किसी किसी बौद्ध-ग्रन्थ में लिखा है कि पुष्यमित्र बौद्धों का विरोधी था। यह बात मिथ्या मालूम होती। पुष्यमित्र के राजा होने पर थोड़े ही दिनों में ब्राह्मणों का माहात्म्य बढ़ गया। मौर्य-साम्राज्य के विषय और भी दूर दूर तक उनका प्रभाव फैला। ब्राह्मणों ने बौद्ध और जैन धर्म का प्रचार रोक दिया। देश की सारी विद्याओं को उन्होंने लिपिबद्ध किया और ब्राह्मण-धर्म को ऐसे साँचे में ढाला कि आज तक वह बना हुआ है। पुष्यमित्र के यज्ञ में पतञ्जलि ऋषि ने पुरोहित का काम किया था। पुष्यमित्र के आश्रय में रह कर पतञ्जलि ने महाभाष्य की रचना की थी। कण्ववंशीय राजाओं ने मनुसंहिता का संकलन कराया और उन्हीं ने रामायण और महाभारत को आधुनिक रूप में परिणत किया। ब्राह्मण-राजवंश जिस समय राजसिंहासन पर न था उस समय भी ब्राह्मण लोग कण्ववंशीय राजाओं के गुरु थे। राज्यसञ्चालन में उनका भी हाथ रहता था। राज्यशासन-सम्बन्धी क्रान्ति का लोप होने पर भी बहुत दिनों तक वे समाज के मुखिया थे और सारी विधि व्यवस्था उन्हीं द्वारा होती थी। मनुसंहिता से मालूम होता है कि अशोक ने ब्राह्मणों के जो अधिकार छीन लिये थे उनको ब्राह्मणों ने फिर से प्राप्त करके समाज में अपनी श्रेष्ठता पुनर्वार स्थापित कर दी। अशोक ने ब्राह्मणों की भूदेव-उपाधि को मिथ्या बतलाया था। परन्तु ब्राह्मणों ने अशोक के बाद भी अधिक सम्मान प्राप्त कर लिया।

अशोक ने जाति-पाँति का विचार न करके विचार-समता का नियम चलाया था। उसका परिणाम हुआ यह मृच्छकटिक नामक नाटक से मालूम होता है। जान पड़ता है कि इस नाटक के राजा पालक अशोक का अनुगामी था। उसके राज्य में ब्राह्मणों की बड़ी दुर्दशा थी। चारुदत्त नामक ब्राह्मण और उसके अनुचर बहुत ग़रीब हो गये थे। शार्विलक नामक एक ब्राह्मण को जीविका के लिए चोरी करनी पड़ी थी। पालक ने जिस समय चारुदत्त को स्त्री-हत्या का अपराधी ठहराया उस समय वह चारुदत्त को गिरफ़्तार कर उसे प्राणदण्ड देने के विषय में सलाह करने लगा। परन्तु राजा ने उसकी एक न सुनी और चारुदत्त को फाँसी पर चढ़ा देने ही की आज्ञा दी। उसकी आज्ञा का पालन भी नहीं किया गया। इतने में फाँसी का तख़्ता उठ खड़ा हुआ। राजा सिंहासन से उतार दिया गया। चारुदत्त ने प्रधान मन्त्री का पद पाया और शार्विलक भी एक उच्च पद पर नियत बनाया गया। इस साहित्य से यह मालूम होता है कि अशोक ने ब्राह्मणों को जो अन्य लोगों के बराबर करने की चेष्टा की थी उससे साम्राज्य अधिक दिनों तक न ठहर सका।

---

## फ़ा-हियान की भारत-यात्रा।

चीन भारत के इतिहास का बहुत पता जो हमें लगता है और और चीनी यात्रियों के यात्रा-वृत्तान्त से लगता है। चीनी लोग इस देश में भिक्षक, या अथवा राजदूत बन कर आते थे। इन लोगों में अधिकतर भारतीय राजनीति, पद्धति और सामाजिक बातों ही का उल्लेख उन्होंने भारतीय धर्म और शास्त्रों का ज्ञान

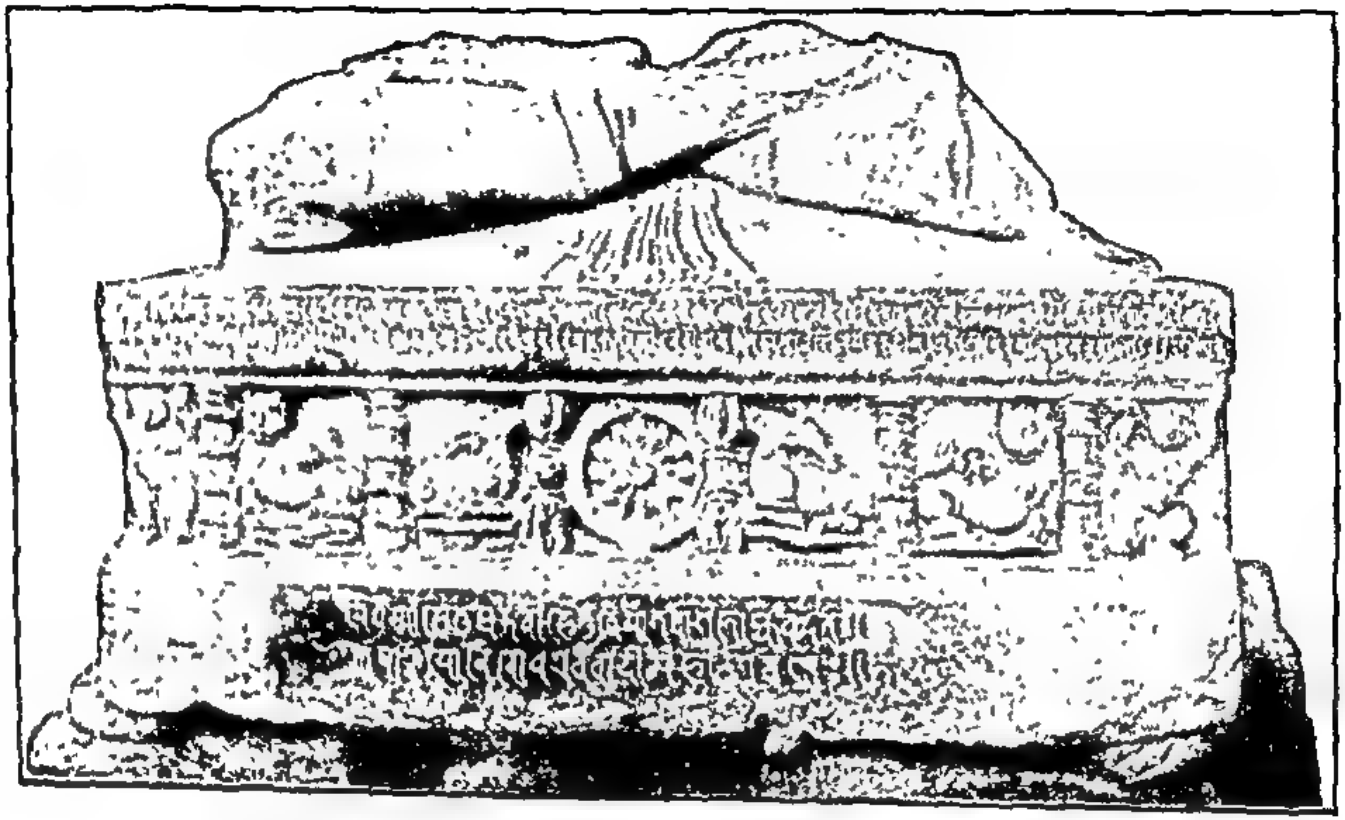

सारनाथ में प्राप्त बुद्ध की मूर्ति का अधोभाग, दो संस्कृत-लेखों से युक्त—समय १०२६ ईसवी।
(क) ऊपर के लेख में जीर्णोद्धार का उल्लेख है। लेख की नक़ल सारनाथ-विषयक लेख में देखिए।
(ख) नीचे के लेख में बौद्ध-धर्म के तत्त्वार्थसूचक वचन हैं।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

का अन्त हो गया और पुष्यमित्र ने उस पर अपना अधिकार जमा लिया। मालविकाग्निमित्र नाटक से पता लगता है कि पुष्यमित्र अपनी सेना के साथ पाटलिपुत्र ही में रहा और अपने पुत्र को उसने विदिशा (भिलसा) के सिंहासन पर बिठाया। इस विषय में ब्राह्मणों की साज़िश साफ़ साफ़ दिखाई देती है। इसका कारण, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह था कि अशोक ने अपने साम्राज्य में पशुबलि को बन्द कर दिया था। पुष्यमित्र ने सम्राट् होकर अशोक ही की राजधानी पाटलिपुत्र में अश्वमेध-यज्ञ किया। क्या इससे कथित कारण की पुष्टि नहीं होती? किसी किसी बौद्ध-ग्रन्थ में लिखा है कि पुष्यमित्र बौद्धों का विरोधी था। यह बात मिथ्या मालूम होती। पुष्यमित्र के राजा होने पर थोड़े ही दिनों में ब्राह्मणों का माहात्म्य बढ़ गया। मौर्य-साम्राज्य के सिवा और भी दूर दूर तक उनका प्रभाव फैला। ब्राह्मणों ने बौद्ध और जैन धर्म का प्रचार रोक दिया। देश की सारी विद्याओं को उन्होंने लिपिबद्ध किया और ब्राह्मण-धर्म को ऐसे साँचे में ढाला कि आज तक वह बना हुआ है। पुष्यमित्र के यज्ञ में पतञ्जलि ऋषि ने पुरोहित का काम किया था। पुष्यमित्र के आश्रय में रह कर ही पतञ्जलि ने महाभाष्य की रचना की थी। कण्ववंशीय राजाओं ने मनुसंहिता का संकलन कराया और उन्हीं ने रामायण और महाभारत को आधुनिक रूप में परिणत किया। ब्राह्मण-राजवंश जिस समय राजसिंहासन पर न था उस समय भी ब्राह्मण लोग क्षत्रियवंशीय राजाओं के गुरु थे। राज्यसञ्चालन में उनका भी हाथ रहता था। राज्यशासन-सम्बन्धी क्षमता का लोप होने पर भी बहुत दिनों तक वे समाज के मुखिया थे और सारी विधि-व्यवस्था उन्हीं द्वारा होती थी। मनुसंहिता से मालूम होता है कि अशोक ने ब्राह्मणों के जो अधिकार छीन लिये उनको ब्राह्मणों ने फिर से प्राप्त करके समाज में अपनी श्रेष्ठता पुनर्वार स्थापित कर दी। अशोक ब्राह्मणों की भूदेव-उपाधि को मिथ्या बतलाया था। परन्तु ब्राह्मणों ने अशोक के बाद भी अधिक सम्मान प्राप्त कर लिया।

अशोक ने जाति-पाँति का विचार विचार-समता का नियम चलाया था। उ परिणाम हुआ यह मृच्छकटिक नामक मालूम होता है। जान पड़ता है कि इस ना राजा पालक अशोक का अनुगामी था राज्य में ब्राह्मणों की बड़ी दुर्दशा थी। नामक ब्राह्मण और उसके अनुचर बहुत ह हो गये थे। शार्विलक नामक एक ब्राह्म जीविका के लिए चोरी करनी पड़ी थी। न्या ने जिस समय चारुदत्त को स्त्री-हत्या का ठहराया उस समय वह चारुदत्त कर उसे प्राणदण्ड देने के विषय में लगा। परन्तु राजा ने उसकी एक न सुनी चारुदत्त को फाँसी पर चढ़ा देने ही की उसकी आज्ञा का पालन भी नहीं किया गया दण्ड उठ खड़ा हुआ। राजा सिंहासन दिया गया। चारुदत्त ने प्रधान मन्त्री का किया और शार्विलक भी एक उच्च बनाया गया। इस साहित्य से यह है कि अशोक ने ब्राह्मणों को जो अन्य बराबर करने की चेष्टा की थी उससे साम्राज्य अधिक दिनों तक न ठहर सका।

---

## फ़ा-हियान की भारत-यात्रा।

प्राचीन भारत के इतिहास का बहुत पता जो हमें लगता है और चीनी यात्रा-वृत्तान्त से लगता है। वाले इस देश में तीसरी, चौ अथवा राजदूत बन कर आये थे। इन ने लेखों में अधिकतर भारतीय राजनीति, शा पद्धति और सामाजिक बातों ही का उल्लेख उन्होंने भारतीय धर्म और शास्त्रों का ज्ञान

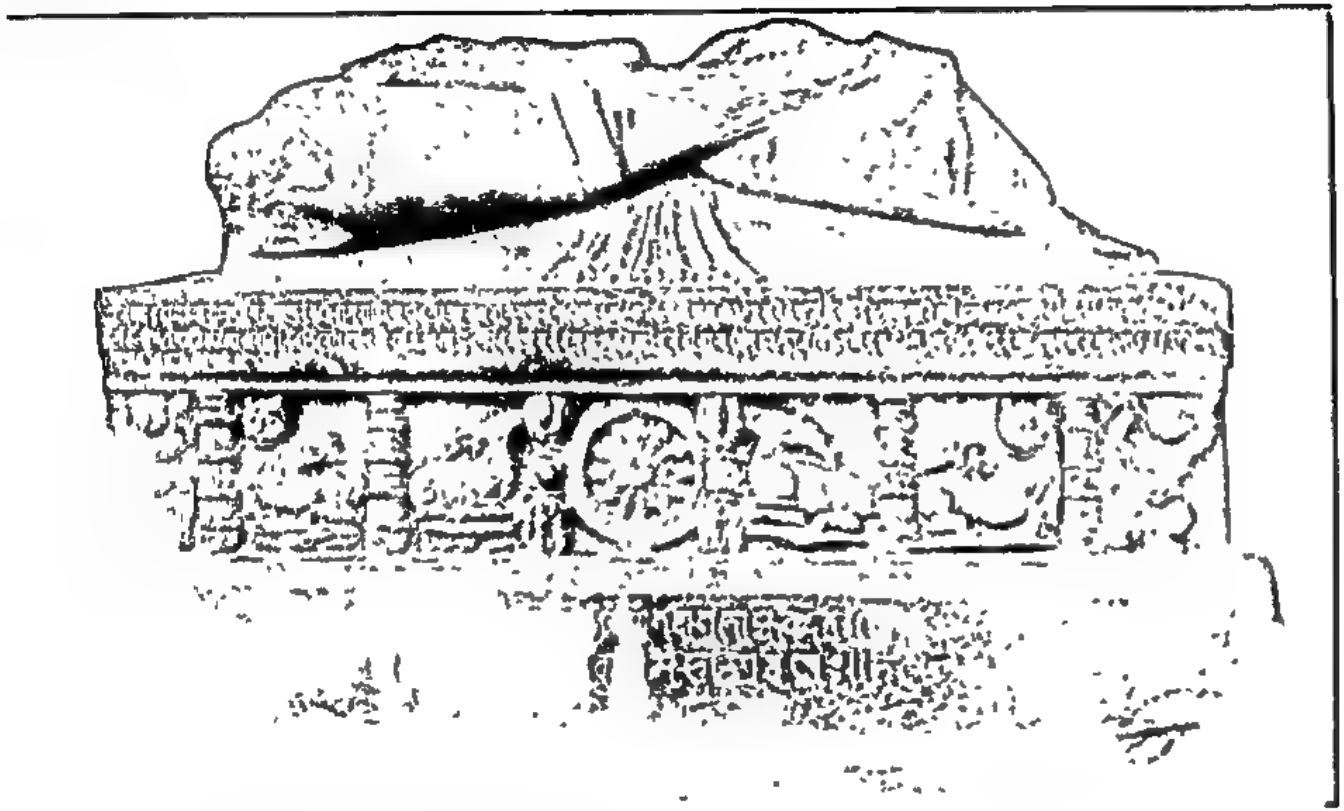

में प्राप्त बुद्ध की मूर्ति का अधोभाग, दो संस्कृत-लेखों से युक्त—समय १०२६ ईसवी। लेख में जीर्णोद्धार का उल्लेख है। लेख की नक़ल सारनाथ-विषयक लेख में देखिए। लेख में बौद्ध-धर्म्म के तत्त्वार्थसूचक वचन हैं।

लोग भूमि जोतते और बोते हैं उन्हें अपनी पैदावार का एक निश्चित भाग राजा को देना पड़ता है। लोग अपनी इच्छा के अनुसार चाहे जहाँ आ जा सकते हैं। अपराधी को उसके अपराध के गौरव-लाघव के अनुसार भारी अथवा हलका दण्ड दिया जाता है। शारीरिक दण्ड बहुत कम दिया जाता है। बार बार विद्रोह करने पर कहीं दाहिना हाथ काटे जाने का दण्ड दिया जाता है। राजा के शरीर-रक्षकों को नियत वेतन मिलता है। देश भर में जीव हत्या नहीं होती। चाण्डालों के अतिरिक्त कोई मद्यपान नहीं करता और न कोई लहसुन और प्याज़ ही खाता है। इस देश में कोई न तो मुर्ग़ी ही पालता है और न बनस्पति ही। पालतू पशु भी कोई नहीं बेचता। बाजारों में पशु-वध-शालायें अथवा मांस बेंचने की दुकानें नहीं। सौदा-सुलफ़ में कौड़ियों का व्यवहार होता है। केवल चाण्डाल ही पशु-वध करते और मांस बेंचते हैं। बुद्ध भगवान् के समय से यहाँ की यह प्रथा है कि राजा, महाराजा, अमीर, उमराव और बड़े आदमी विहार-निर्माण करते हैं और उनके खर्च के लिए भूमि इत्यादि का दान-पत्र लिख देते हैं। पीढ़ियाँ गुज़र जाती हैं ये विहार ज्यों के त्यों विद्यमान रहते हैं। उनका खर्च दान दी हुई भूमि की आमदनी से चलता रहता है। उस भूमि को कोई नहीं छीनता। विहारों में रहने वाले साधुओं को वस्त्र, भोजन और बिछौना मुफ़्त मिलता है।

मथुरा से फ़ा-हियान कन्यकुब्ज आया। यह नगर, उस समय, गुप्त-राजाओं की राजधानी था। उसने कन्यकुब्ज के विषय में इसके सिवा और कुछ नहीं लिखा कि यहाँ दो सङ्घाराम थे। कनौज राज्य की प्राचीन राजधानी श्रावस्ती उजाड़ पड़ी थी। उसमें केवल दो सौ कुटुम्ब निवास करते थे। उसके, जहाँ भगवान् बुद्ध ने धर्मोपदेश किया था, अच्छी दशा में था। यहाँ एक सुन्दर विहार था। विहार के पास एक तालाब था, जिसका जल बड़ा निर्मल था। कई साधु भी थे, जिनसे विहार की शोभा बहुत बढ़ गई थी। विहार में रहने वाले साधुओं ने फ़ा-हियान का हर्ष-पूर्वक स्व और उस की इस कारण बड़ी बड़ाई की ने यात्रा धर्मप्रेम के वशीभूत हो कर की थी

भगवान् बुद्ध के जन्म-स्थान कपिलव दशा, फ़ा-हियान के समय में, बुरी थी। वह राजा था, न प्रजा। नगर प्रायः उजाड़ था थोड़े से साधु और दस-बीस अन्य जन कुशी-नगर भी, जहाँ भगवान् बुद्ध की मृत्यु बुरी दशा में था। उस वैसाली नगरी को, ज धर्म की पुस्तकों का संग्रह करने के लिए पै दूसरा सम्मेलन हुआ था, फ़ा-हियान ने दशा में पाया। प्रसिद्ध पाटलिपुत्र नगर के में फ़ा-हियान ने लिखा है कि उस का पुरान महल बड़ा विचित्र है। उस के बनाने में प पत्थरों से काम लिया गया है। मनुष्यों के से यह न बना होगा। दिव्य आसुरी शक्ति इतने बड़े बड़े पत्थर ऊपर चढ़ा सका अवश्य ही अशोक ने उसे असुरों द्वारा व होगा। फ़ा-हियान का कथन है कि अशोक व के समीप ही एक सुन्दर सङ्घाराम बना हुआ है, में लगभग छः सात सौ साधु रहते हैं। प्रति दूसरे महीने के आठवें दिन यहाँ एक उत्सव है। उस अवसर पर चार पहिये का एक बनाया जाता है। उस रथ के ऊपर पाँच का एक मन्दिर रक्खा जाता है। मन्दिर का बनना है। उस के बीच में चार बड़े गज, एक ओर रहता है। यही उस साथ रहता मन्दिर इस प्रकार से सजा दिया जाता है उसका सिर्फ़ा भाग बहुत ऊँचा रहता है। सुन्दर रेशम के झालरों के साथ इस भू रत्नों से सजा कर रक्खी जाती है। रथ चार दलों में चार बाँस रहते हैं। इन चार बुद्ध भगवान् की बड़ी सुन्दर मूर्त्तियाँ आसन पर है। इस प्रकार के बड़े बड़े रथ तैयार किये है। इनके ऊपर बड़ी बड़ी छतरियाँ लगी हैं। रथ सजाये हुए हैं और मूर्त्तियों पर बहुमूल्य

करने की विशेष परवा नहीं की। चीनी यात्रियों का कुछ और ही उद्देश था। ये विद्वान् थे। उन्होंने हज़ारों मील की यात्रा इस लिए की थी कि ये बौद्धों के पवित्र स्थानों का दर्शन करें, बौद्ध धर्म की पुस्तकें एकत्र करें और उस भाषा को पढ़ें जिसमें ये पुस्तकें लिखी गई थीं। इन यात्राओं में उनको नाना प्रकार के शारीरिक क्लेश सहने पड़े, कभी ये लूटे गये, कभी ये रास्ता भूल कर भयङ्कर स्थानों में भटकते फिरे और कभी उन्हें जंगली जानवरों का सामना करना पड़ा। परन्तु इतना सब होने पर भी ये केवल विद्या और धर्म-प्रेम के कारण भारत-वर्ष में घूमते रहे। चीनी यात्रियों में तीन के नाम बहुत प्रसिद्ध हैं—पहला फा-हियान, दूसरा संग-यान और तीसरा ह्वेनसांग। इन तीनों ने अपनी अपनी यात्रा का वृत्तान्त लिखा है। उसका अनुवाद अँगरेज़ी, फ्रेंच आदि यूरप की भाषाओं में हो गया है। उनसे भारतीय सभ्यता का बहुत कुछ पता चलता है। प्रसिद्ध चीनी यात्रियों में फा-हियान सब से पहले भारत में आया। उसी की यात्रा का संक्षिप्त हाल नीचे लिखा जाता है—

फ़ा-हियान मध्य-चीन का निवासी था। ४०० ईसवी में वह अपने देश से भारत-यात्रा के लिए निकला। इस यात्रा से उसका मतलब बौद्ध तीर्थों के दर्शन और बौद्ध धर्म की पुस्तकों का सङ्ग्रह करना था। उन दिनों चीन से भारत-वर्ष आने के दो रास्ते थे। एक रास्ता ख़ुतन नगर के पश्चिम से होता हुआ भारतीय सीमा पर पहुँचता था। यह रास्ता कुछ चक्कर का था। इसी से भारत और चीन के मध्य व्यापार होता था। दूसरा रास्ता जलद्वारा जावा और लङ्का के टापुओं से होकर था। यह रास्ता पहले से सीधा तो था; परन्तु पीत-समुद्र के तूफ़ानों ने इस सुगम जल-मार्ग को बड़ा भयानक बना रक्खा था। फ़ा-हियान निडर मनुष्य था। वह भारत आया तो ख़ुतन के रास्ते ही से, परन्तु स्वदेश को लौटा लङ्का और जावा के रास्ते।

फ़ा-हियान के साथ और भी कितने ही मुसाफ़िर थे। ख़ुतन पहुँचने के लिए लाप नामक जङ्गल से हो कर जाना पड़ता था। इस जङ्गल में यात्रियों को बड़ा कष्ट सहना पड़ा। कहीं पानी न मिला। सूर्य की गरमी ने और भी ग़ज़ब ढाया। प्यास के मारे यात्रियों का बुरा हाल हुआ। समय समय पर रास्ता भूल जाने के कारण भी उन पर बड़ी विपत्ति पड़ी। जब ये सब किसी तरह लाप नामक झील के किनारे पहुँचे तब उनकी बड़ी बुरी दशा थी। कितने ही यात्रियों के छक्के छूट गये और उन्होंने आगे बढ़ने का विचार छोड़ दिया। पर फ़ा-हियान ने हिम्मत न हारी। वह दो चार मित्रों सहित आगे बढ़ा और नाना प्रकार के कष्टों को सहता हुआ, तीन मास में, ख़ुतन पहुँचा। लोगों ने ख़ुतन में उनका अच्छा आदर-सत्कार किया। उस समय ख़ुतन एक हरा भरा बौद्ध राज्य था। इस समय ख़ुतन उजड़ पड़ा है। परन्तु, हाल ही में, डाक्टर स्टीन ने उसकी पूर्व समृद्धि के बहुत से चिह्न पाये हैं। प्राचीन महलों, स्तूपों, विहारों और बाग़ों के न मालूम कितने चिह्न उन्हें मिले हैं। उन्होंने इस सम्बन्ध में एक पुस्तक लिखी है, जो बड़े महत्त्व की है।

ख़ुतन से फा-हियान काबुल आया। उस समय काबुल उत्तरीय भारत के अन्तर्गत था। काबुल से वह स्वात, गान्धार और तक्षशिला होता हुआ पेशावर पहुँचा। पेशावर में उसने एक बड़ा ऊँचा, सुन्दर और मज़बूत बौद्ध स्तूप देखा। सिन्धु नदी पार करके वह मथुरा आया। मथुरा का हाल वह इस प्रकार वर्णन करता है—

मथुरा में यमुना के दोनों किनारों पर बीस संघाराम हैं, जिनमें लगभग ३००० साधु रहते हैं। बौद्ध धर्म का ख़ूब प्रचार है। राजपूताना के राजा बौद्ध हैं। दक्षिण की ओर जो देश है वह मध्य-देश कहलाता है। इस देश का जल-वायु न बहुत उष्ण है, न बहुत शीतल। बर्फ़ अथवा कुहरे की अधिकता नहीं है। प्रजा सुखी है। उन्हें अधिक कर नहीं देना पड़ता। शासक लोग कठोरता नहीं करते। जो

लोग भूमि जोतते और बोते हैं उन्हें अपनी पैदावार का एक निश्चित भाग राजा को देना पड़ता है। लोग अपनी इच्छा के अनुसार चाहे जहाँ आ जा सकते हैं। अपराधी को उसके अपराध के गौरव-लाघव के अनुसार भारी अथवा हलका दण्ड दिया जाता है। शारीरिक दण्ड बहुत कम दिया जाता है। बार बार विद्रोह करने पर कहीं दाहिना हाथ काटे जाने का दण्ड दिया जाता है। राजा के शरीर-रक्षकों को नियत वेतन मिलता है। देश भर में जीव-हत्या नहीं होती। चाण्डालों के अतिरिक्त कोई मद्यपान नहीं करता और न कोई लहसुन और प्याज़ ही खाता है। इस देश में कोई न तो मुर्ग़ी ही पालता है और न बतख़ ही। पालतू पशु भी कोई नहीं बेचता। बाज़ारों में पशु-वध-शालायें अथवा मांस बेचने की दुकानें नहीं। सौदा-सुलफ़ में कौड़ियों का व्यवहार होता है। केवल चाण्डाल ही पशु-वध करते और मांस बेचते हैं। बुद्ध भगवान् के समय से यहाँ की यह प्रथा है कि राजा, महाराजा, अमीर, उमराव और बड़े आदमी विहार-निर्माण करते हैं और उनके ख़र्च के लिए भूमि इत्यादि का दान-पत्र लिख देते हैं। पीढ़ियाँ गुज़र जाती हैं वे विहार ज्यों के त्यों विद्यमान रहते हैं। उनका ख़र्च दान दी हुई भूमि की आमदनी से चलता रहता है। उस भूमि को कोई नहीं छीनता। विहारों में रहने वाले साधुओं को वस्त्र, भोजन और बिछौना मुफ़्त मिलता है।

मथुरा से फ़ा-हियान कन्नौज आया। यह नगर, उस समय, गुप्त-राजाओं की राजधानी था। उसने कन्नौज के विषय में इसके सिवा और कुछ नहीं लिखा कि यहाँ दो संघाराम थे। कोशल-राज्य की प्राचीन राजधानी श्रावस्ती उजाड़ पड़ी थी। उसमें केवल दो सौ कुटुम्ब निवास करते थे। जेतवन, जहाँ भगवान् बुद्ध ने धर्मोपदेश किया था, अच्छी दशा में था। यहाँ एक सुन्दर विहार था। विहार के पास एक तालाब था, जिसका जल बड़ा निर्मल था। कई बाग़ भी थे, जिनसे विहार की शोभा बहुत बढ़ गई थी। विहार में रहने वाले साधुओं ने फ़ा-हियान का हर्ष-पूर्वक स्व और उस की इस कारण बड़ी बड़ाई की ने यात्रा धर्मप्रेम के वशीभूत हो कर की थी

भगवान् बुद्ध के जन्म-स्थान कपिल दशा, फ़ा-हियान के समय में, बुरी थी। यह राजा था, न प्रजा। नगर प्रायः उजाड़ था थोड़े से साधु और दस-बीस अन्य जन कुशी-नगर भी, जहाँ भगवान् बुद्ध की मृत्यु बुरी दशा में था। उस वैसाली नगरी को, जा धर्म की पुस्तकों का संग्रह करने के लिए पा दूसरा सम्मेलन हुआ था, फ़ा-हियान ने दशा में पाया। प्रसिद्ध पाटलिपुत्र नगर के में फ़ा-हियान ने लिखा है कि उस का पुरान महल बड़ा विचित्र है। उस के बनाने में व पत्थरों से काम लिया गया है। मनुष्यों के से वह न बना होगा। बिना आसुरी शक्ति इतने बड़े बड़े पत्थर ऊपर चढ़ा सका। अवश्य ही अशोक ने उसे असुरों द्वारा प होगा। फ़ा-हियान का कथन है कि अशोक के के समीप ही एक सुन्दर सङ्घाराम बना हुआ है, में लगभग छः सात सौ साधु रहते हैं। प्रति दूसरे महीने के आठवें दिन यहाँ एक उत्सव है। उस अवसर पर चार पहिये का एक बनाया जाता है। उस रथ के ऊपर पाँच का एक मन्दिर रक्खा जाता है। मन्दिर का बनता है। उस के बीच में सात आठ गज़ ऊ एक बाँस रहता है। यही उसे साधे रहता मन्दिर देवल वस्त्र से मँढ़ दिया जाता है। उसका निचला भाग षट्कोण रङ्गों से रँगा ह है। सुन्दर देवल के चारों कोनों के नीचे देव मू पताका-वृक्षों से सजा कर रक्खी जाती है। एक चारों कोनों में चार साधु रहते हैं। इन साधु बुद्ध भगवान् की वेदी हुई मूर्ति आगे की ओ है। इस प्रकार के कोई बीस रथ तैयार किये जा हैं। उत्सव के दिन बड़ी भीड़ होती है। सब तय्यारी होने पर मूर्तियों पर पुष्प और ध

करने की विशेष परवा नहीं की। चीनी यात्रियों का कुछ और ही उद्देश था। ये विद्वान् थे। उन्होंने हज़ारों मील की यात्रा इस लिए की थी कि ये बौद्धों के पवित्र स्थानों का दर्शन करें, बौद्ध धर्म की पुस्तकें एकत्र करें और उस भाषा को पढ़ें जिसमें ये पुस्तकें लिखी गई थीं। इन यात्राओं में उनको नाना प्रकार के शारीरिक क्लेश सहने पड़े; कभी ये लूटे गये, कभी ये रास्ता भूल कर भयङ्कर स्थानों में भटकते फिरे और कभी उन्हें जंगली जानवरों का सामना करना पड़ा। परन्तु इतना सब होने पर भी ये केवल विद्या और धर्म-प्रेम के कारण भारत-वर्ष में घूमते रहे। चीनी यात्रियों में तीन के नाम बहुत प्रसिद्ध हैं—पहला फा-हियान, दूसरा संग-यान और तीसरा ह्वेनसांग। इन तीनों ने अपनी अपनी यात्रा का वृत्तान्त लिखा है। उसका अनुवाद अँगरेज़ी, फ्रेंच आदि यूरप की भाषाओं में हो गया है। उनसे भारतीय सभ्यता का बहुत कुछ पता चलता है। प्रसिद्ध चीनी यात्रियों में फा-हियान सब से पहले भारत में आया। उसी की यात्रा का संक्षिप्त हाल नीचे लिखा जाता है—

फ़ा-हियान मध्य-चीन का निवासी था। ४०० ईसवी में वह अपने देश से भारत-यात्रा के लिए निकला। इस यात्रा से उसका मतलब बौद्ध तीर्थों के दर्शन और बौद्ध धर्म की पुस्तकों का सङ्ग्रह करना था। उन दिनों चीन से भारत-वर्ष आने के दो रास्ते थे। एक रास्ता ख़ुतन नगर के पश्चिम से होता हुआ भारतीय सीमा पर पहुँचता था। यह रास्ता कुछ चक्कर का था। इसी से भारत और चीन के मध्य व्यापार होता था। दूसरा रास्ता जलद्वारा जावा और लङ्का के टापुओं से होकर था। यह रास्ता पहले से सीधा तो था; परन्तु पीत-समुद्र के तूफ़ानों ने इस सुगम जल-मार्ग को बड़ा भयानक बना रक्खा था। फ़ा-हियान निडर मनुष्य था। वह भारत आया तो ख़ुतन के रास्ते ही से, परन्तु स्वदेश को लौटा लङ्का और जावा के रास्ते।

फ़ा-हियान के साथ और भी कितने ही मुसाफ़िर थे। ख़ुतन पहुँचने के लिए लाप नामक जङ्गल से हो कर जाना पड़ता था। इस जङ्गल में यात्रियों को बड़ा कष्ट सहना पड़ा। कहीं पानी न मिला। सूर्य की गरमी ने और भी गज़ब ढाया। प्यास के मारे यात्रियों का बुरा हाल हुआ। समय समय पर रास्ता भूल जाने के कारण भी उन पर बड़ी विपत्ति पड़ी। जब ये सब किसी तरह लाप नामक झील के किनारे पहुँचे तब उनकी बड़ी बुरी दशा थी। कितने ही यात्रियों के छक्के छूट गये और उन्होंने आगे बढ़ने का विचार छोड़ दिया। पर फ़ा-हियान ने हिम्मत न हारी। वह दो चार मित्रों सहित आगे बढ़ा और नाना प्रकार के कष्टों को सहता हुआ, दो मास में, ख़ुतन पहुँचा। लोगों ने ख़ुतन में उनका अच्छा आदर-सत्कार किया। उस समय ख़ुतन एक हरा भरा बौद्ध राज्य था। इस समय ख़ुतन उजड़ा पड़ा है। परन्तु, हाल ही में, डाक्टर स्टीन ने उसकी पूर्व समृद्धि के बहुत से चिह्न पाये हैं। प्राचीन महलों, स्तूपों, विहारों और बागों के न मालूम कितने चिह्न उन्हें मिले हैं। उन्होंने इस सम्बन्ध में एक पुस्तक लिखी है, जो बड़े महत्त्व की है।

ख़ुतन से फा-हियान काबुल आया। उस समय काबुल उत्तरीय भारत के अन्तर्गत था। काबुल से वह स्वात, गान्धार और तक्षशिला होता हुआ पेशावर पहुँचा। पेशावर में उसने एक बड़ा ऊँचा, सुन्दर और मज़बूत बौद्ध स्तूप देखा। सिन्धु नदी पार करके वह मथुरा आया। मथुरा का हाल वह इस प्रकार वर्णन करता है—

मथुरा में यमुना के दोनों किनारों पर बीस संघाराम हैं, जिनमें लगभग ३००० साधु रहते हैं। बौद्ध धर्म्म का ख़ूब प्रचार है। राजपूताना के राजा बौद्ध हैं। दक्षिण की ओर जो देश है वह मध्य-देश कहलाता है। इस देश का जल-वायु न बहुत उष्ण है, न बहुत शीतल। बर्फ़ अथवा कुहरे की नहीं है। प्रजा सुखी है। उन्हें अधिक कर नहीं पड़ता। शासक लोग कठोरता नहीं करते

जाते हैं। उस दिन बौद्ध लोग नगर में प्रवेश करते हैं। वहाँ वे ठहरते हैं और सारी रात हर्ष मनाते हैं। इस अवसर पर दूर दूर से लोग आते हैं और उत्सव में सम्मिलित होते हैं। धनवान् लोगों ने नगर में कितने ही ऐसे औषधालय खोल रक्खे हैं जहाँ दीन-दुखिया, लँगड़े-लूले और अन्य असमर्थ जनों का इलाज होता है। उनको हर प्रकार की सहायता दी जाती है। वैद्य उनके रोगों की परीक्षा कर के औषधि-सेवन कराते हैं। वे वहीं रहते हैं और पथ्य भी उन्हें वहीं मिलता है। नीरोग हो जाने पर वे अपने घर चले जाते हैं।

राजगृह में पहला बौद्ध-सम्मेलन हुआ था। इसलिए उसे देखता हुआ फ़ा-हियान गया पहुँचा। गया में उसने बुद्ध-वृक्ष और अन्य पवित्र स्थानों के दर्शन किये। वह काशी और कौशाम्बी भी गया। काशी में उस स्थान पर, जहाँ भगवान् बुद्ध ने पहली बार सत्य का उपदेश दिया था, दो सङ्घाराम थे। काशी से वह फिर पाटलिपुत्र लौट गया। फ़ा-हियान चीन से धार्मिक पुस्तकों की खोज में चला था। पाटलिपुत्र में विनयपीठक की एक प्रति उसके हाथ लग गई। पुस्तक लेकर वह अङ्ग-देश की राजधानी चम्पा होता हुआ ताम्रलिप्ति (तमलुक) पहुँचा। वहाँ उसने बौद्ध धर्म का अच्छा प्रचार देखा। उस नगर में २४ संघाराम थे। फ़ा-हियान वहाँ दो वर्ष तक रहा। यह समय उसने धर्म-पुस्तकों की नक़ल करने में ख़र्च किया। तत्पश्चात् जहाज़ पर सवार होकर लगातार १४ दिन और रात यात्रा करके वह सिंहल-द्वीप पहुँचा। वहाँ वह अनिरुद्धपुर गया। बौद्ध-स्तूप और बुद्ध-वृक्ष के भी उसने दर्शन किये। लङ्का में उसने कुछ और भी धर्म-पुस्तकों का सङ्ग्रह किया। लङ्का का वर्णन वह इस तरह करता है—

"लङ्का में पहले बहुत कम मनुष्य रहते थे। धीरे धीरे व्यापारी लोग यहाँ आने लगे। अन्त में वही यहाँ बस गये। इस प्रकार यहाँ की आबादी बढ़ी और राज्य की नींव पड़ी। यहाँ भगवान् बुद्ध आये*। उन्होंने यहाँ के निवासियों को बनाया। लङ्का का जल-वायु अच्छा है। सब्ज़ी होती है। राजधानी के उत्तर में बड़ा ऊँचा है। समीप ही एक सङ्घाराम भी है, जिसमें साधु रहते हैं"।

फ़ा-हियान लङ्का में दो वर्ष रहा। उसे छोड़े बहुत वर्ष हो गये थे। इससे उसने चीन जाना विचारा। इसी समय एक व्यापारी ने चीन का बना हुआ एक पङ्खा भेंट किया। देश की बनी हुई वस्तु देख कर फ़ा-हियान भर आया। उसके नेत्रों से अश्रु-धारा बह निक अन्त में उसे स्वदेश लौट जाने का एक साध प्राप्त हो गया। एक जहाज़ दो सौ यात्रियों उस ओर जाना था। वह भी उसी पर बैठ रास्ते में तूफ़ान उठा और जहाज़ में छेद हो जहाज़ को हलका करने के लिए ख़लासी ज पर लदी हुई चीज़ों को समुद्र में फेंकने लगे।

बहुत सा माल-असबाब फेंक दिया फ़ा-हियान ने अपने सारे बर्तन तक समुद्र में डर के मारे फेंक दिये कि कहीं इनके मोह में के कारण लोग उसकी अमूल्य पुस्तकें और मू समुद्र के हवाले न कर दें। तेरह दिन की क तपस्या के बाद एक छोटा सा टापू मिला। जहाज़ की मरम्मत हुई। सैकड़ों कष्ट सहने ९० दिन बाद जहाज़ जावा-द्वीप में पहुँचा। ज में उस समय बौद्ध और ब्राह्मण-धर्म, दोनों, प्रचार था।

फ़ा-हियान जावा में पाँच महीने रहा। तत्पश्च वह एक और जहाज़ पर सवार हुआ। चलने के महीना बाद इस जहाज़ का भी कील-काँटा बिगड़ यह देख कर मल्लाहों ने सलाह की कि जहाज़ श्रमण फ़ाहियान के होने ही के कारण हम पर विपत्ति आई है। अतएव कोई टापू मिले तो इसे व उतार दें, जिसमें जहाज़ की यात्रा निर्विघ्न समाप्त हो यह वहाँ चाहे मरे चाहे बचे। इस जहाज़

* भगवान् बुद्ध लङ्का कभी नहीं गये।

जाते हैं । उस दिन बौद्ध लोग नगर में प्रवेश करते हैं । वहाँ वे ठहरते हैं और सारी रात हर्ष मनाते हैं । इस अवसर पर दूर दूर से लोग आते हैं और उत्सव में सम्मिलित होते हैं । धनवान् लोगों ने नगर में कितने ही ऐसे औषधालय खोल रक्खे हैं जहाँ दीन-दुखिया, लँगड़े-लूले और अन्य असमर्थ जनों का इलाज होता है । उनको हर प्रकार की सहायता दी जाती है । वैद्य उनके रोगों की परीक्षा कर के औषधि-सेवन कराते हैं । वे वहीं रहते हैं और पथ्य भी उन्हें वहीं मिलता है । नीरोग हो जाने पर वे अपने घर चले जाते हैं ।

राजगृह में पहला बौद्ध-सम्मेलन हुआ था । इसलिए उसे देखता हुआ फ़ा-हियान गया पहुँचा । गया में उसने बुद्ध-वृक्ष और अन्य पवित्र स्थानों के दर्शन किये । वह काशी और कौशाम्बी भी गया । काशी में उस स्थान पर, जहाँ भगवान् बुद्ध ने पहली बार सत्य का उपदेश दिया था, दो सङ्घाराम थे । काशी से वह फिर पाटलिपुत्र लौट गया । फ़ा-हियान चीन से धार्मिक पुस्तकों की खोज में चला था । पाटलिपुत्र में विनयपीठक की एक प्रति उसके हाथ लग गई । पुस्तक लेकर वह अङ्ग-देश की राजधानी चम्पा होता हुआ ताम्रलिप्ति (तमलुक) पहुँचा । वहाँ उसने बौद्ध धर्म का अच्छा प्रचार देखा । उस नगर में २४ संघाराम थे । फ़ा-हियान वहाँ दो वर्ष तक रहा । यह समय उसने धर्म-पुस्तकों की नक़ल करने में ख़र्च किया । तत्पश्चात् जहाज़ पर सवार होकर लगातार १४ दिन और रात यात्रा करके वह सिंहल-द्वीप पहुँचा । वहाँ वह अनिरुद्धपुर गया । बौद्ध-स्तूप और बुद्ध-मूर्ति के भी उसने दर्शन किये । लङ्का में उसने कुछ और भी धर्म-पुस्तकों का सङ्ग्रह किया । लङ्का का वर्णन वह इस तरह करता है—

"लङ्का में पहले बहुत कम मनुष्य रहते थे । धीरे धीरे व्यापारी लोग यहाँ आने लगे । अन्त में यहीं यहाँ बस गये । इस प्रकार यहाँ की आबादी बढ़ी और राज्य की नींव पड़ी । यहाँ भगवान् बुद्ध आये* । उन्होंने यहाँ के निवासियों को बौद्ध बनाया । लङ्का का जल-वायु अच्छा है । सब्ज़ी बहुत होती है । राजधानी के उत्तर में बड़ा ऊँचा स्तूप है । समीप ही एक सङ्घाराम भी है, जिसमें ५००० साधु रहते हैं" ।

फ़ा-हियान लङ्का में दो वर्ष रहा । उसे स्वदेश छोड़े बहुत वर्ष हो गये थे । इससे उसने चीन लौट जाना विचारा । इसी समय एक व्यापारी ने उसे चीन का बना हुआ एक पङ्खा भेंट किया । अपने देश की बनी हुई वस्तु देख कर फ़ा-हियान का जी भर आया । उसके नेत्रों से अश्रु-धारा बह निकली । अन्त में उसे स्वदेश लौट जाने का एक साधन भी प्राप्त हो गया । एक जहाज़ दो सौ यात्रियों सहित उस ओर जाता था । वह भी उसी पर बैठ गया । रास्ते में तूफ़ान उठा और जहाज़ में छेद हो गया । जहाज़ को हलका करने के लिए ख़लासी जहाज़ पर लदी हुई चीज़ों को समुद्र में फेंकने लगे ।

बहुत सा माल-असबाब फेंक दिया गया । फ़ा-हियान ने अपने सारे बर्तन तक समुद्र में इस डर के मारे फेंक दिये कि कहीं इनके मोह में पड़ने के कारण लोग उसको अमूल्य पुस्तकें और मूर्तियाँ समुद्र के हवाले न कर दें । तेरह दिन की कठिन तपस्या के बाद एक छोटा सा टापू मिला । वहाँ जहाज़ की मरम्मत हुई । सैकड़ों कष्ट सहने के ९० दिन बाद जहाज़ जावा-द्वीप में पहुँचा । जावा में उस समय बौद्ध और ब्राह्मण-धर्म, दोनों, का प्रचार था ।

फ़ा-हियान जावा में पाँच महीने रहा । तत्पश्चात् वह एक और जहाज़ पर सवार हुआ । चलने के पाँच महीना बाद इस जहाज़ का भी कील-काँटा ढीला हो गया । यह देख कर मल्लाहों ने सलाह की कि शायद फ़ाहियान के होने ही के कारण यह विपत्ति आई है । अतएव कोई टापू मिलने पर उतार दें, जिसमें जहाज़ की यात्रा निर्विघ्न हो । यह यहाँ चाहे मरे चाहे बचे

* भगवान् बुद्ध कभी

यात्रियों में एक व्यापारी बड़ा सज्जन था। वह फ़ा-हियान से प्रेम करने लगा था। महाजनों की इस सलाह का उसने घोर प्रतिवाद किया। उसी के कारण बेचारा फ़ा-हियान किसी निर्जन टापू में छोड़ दिये जाने से बच गया। ८२ दिन की यात्रा के बाद दक्षिणी चीन के समुद्रतट पर वह सकुशल उतर गया और अपनी जन्मभूमि के पुनर्वार दर्शनों से उसने अपने को कृतकृत्य माना।

---

# विविध विषय।

## १—पुरातत्त्व-विभाग।

इस महकमे के डाइरेक्टर जनरल ने गवर्नमेंट आव् इंडिया को एक रिपोर्ट भेजी है। उसमें उन्होंने गत ५ वर्षों के काम का संक्षिप्त उल्लेख किया है। २३ अक्टोबर के गैज़ट आव् इंडिया में गवर्नमेंट ने उसे, अपने वक्तव्य के साथ, प्रकाशित कर दिया है। गवर्नमेंट ने इस महकमे के चार उद्देश बताये हैं:—

(१) हिन्दुस्तानियों को अधिक भर्ती करना
(२) अजायब-घरों की उन्नति करना
(३) पुरातत्त्व सम्बन्धिनी खोज का काम बढ़ाना और खोज करने वालों को उत्साहित करना।
(४) पुरातत्त्व-विषयक पुस्तकों का प्रचार बढ़ाना और महकमे के बाहर के विद्वानों को पुरातत्त्व-सम्बन्धी काम करने के लिए उत्साह-प्रदान करना।

गवर्नमेंट की राय है कि इस महकमे में और भी अधिक भारतवासियों का लिया जाना बहुत ज़रूरी है। जो लोग अब तक लिये गये हैं वे बहुत अच्छा काम कर रहे हैं। पर शायद यहां भी, खर्च की कमी के कारण, अब तक अधिक संख्या में भारतवासी नहीं लिये जा सके। संस्कृत जानने वाले दो एक एम० ए० 'पास' पण्डितों ने प्रवेश पाने की इस साल प्रार्थना की थी। परन्तु वे मनोरथ नहीं हुए।

१८६० ईसवी में इस महकमे की नींव पड़ी थी। ४० वर्ष तक तो इसने कुछ सटपट ही काम किया। ईसवी में लार्ड कर्ज़न की कृपा से इसका जीर्णोद्धार अफ़सरों की संख्या बढ़ाई गई। खर्च के लिए ६ अधिक मंजूर हुआ। काम का ढर्रा भी निर्दिष्ट प्राचीन इमारतों की रक्षा का काम भी इसी को सौंपा तब से इस महकमे में जान सी आ गई है। अ बड़प्पे के साथ काम कर रहा है। १९१०—११ में सात लाख से भी अधिक रुपया खर्च किया। ६ पुरातत्त्व की खोज, पुरानी वस्तुओं की ख़रीद और इमारतों की रक्षा में किया गया। खोज और ही इसके प्रधान काम हैं। अजायबघरों की रक्षा और उन्नति का काम भी यही करता है। आ पुरातत्त्व-विषयक अजायबघरों की संख्या १६ तक चुकी है।

इस रिपोर्ट के लेखक, डाइरेक्टर जनरल आ क्रियोलोजी, ने गत पांच वर्ष के मुख्य मुख्य कामों संक्षिप्त वर्णन किया है उसमें पाटलिपुत्र की खुदा भी उल्लेख है। डाक्टर स्पूनर की तरह आपको भी कि मौर्य्य नरेशों के प्रासाद अनेक अंशों में फ़ारिस के शीय महलों की नक़ल पर ही बने थे।

इस महकमे में एक दोष है। यदि कहीं कोई शिलालेख मिलता है या कोई नया आविष्कार होता उसके प्रकाशन में बरसों लग जाते हैं। पहले तो यह इस महकमे की पुस्तकों और रिपोर्टों में छपे। यदि ग चाहता है कि बाहर भारतवासी भी इस काम में यो तो उनके लिए यह तरह का सुभीता भी कर देना चा लेखों पर रिपोर्टों की राह नहीं मिलना चाहिए और विलम्ब से या हो ही नहीं सकता अच्छा यह बताना भी चाहिए। महकमे की रिपोर्टें और सालाना पुस्तकें इसी आ सम्बन्धकर्ताओं को भी दी जाया चाहिए। जिस मुख महकमे के काम का करना चाहें वहां वहां मंगा के

बौद्ध काल की एक स्त्री।

बौद्ध काल का एक मनुष्य।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

यात्रियों में एक व्यापारी बड़ा सज्जन था। वह फ़ा-हियान से प्रेम करने लगा था। मल्लाहों की इस सलाह का उसने घोर प्रतिवाद किया। उसी के कारण बेचारा फ़ा-हियान किसी निर्जन टापू में छोड़ दिये जाने से बच गया। ८२ दिन की यात्रा के बाद दक्षिणी चीन के समुद्रतट पर वह सकुशल उतर गया और अपनी जन्मभूमि के पुनर्वार दर्शनों से उसने अपने को कृतकृत्य माना।

---

# विविध विषय।

## १—पुरातत्त्व-विभाग।

इस महकमे के डाइरेक्टर जनरल ने गवर्नमेंट आव् इंडिया को एक रिपोर्ट भेजी है। उसमें उन्होंने गत ५ वर्षों के काम का संक्षिप्त उल्लेख किया है। २३ अक्टोबर के गैज़ट आव् इंडिया में गवर्नमेंट ने उसे, अपने वक्तव्य के साथ, प्रकाशित कर दिया है। गवर्नमेंट ने इस महकमे के चार उद्देश बताये हैं.—

(१) हिन्दुस्तानियों को अधिक भर्ती करना
(२) अजायबघरों की उन्नति करना
(३) पुरातत्त्व सम्बन्धिनी खोज का काम बढ़ाना और खोज करने वालों को उत्साहित करना।
(४) पुरातत्त्व-विषयक पुस्तकों का प्रचार बढ़ाना और महकमे के बाहर के विद्वानों को पुरातत्त्व-सम्बन्धी काम करने के लिए उत्साह प्रदान करना।

गवर्नमेंट की राय है कि इस महकमे में [illegible] अधिक भारतवासियों का लिया जाना बहुत हितकर है। [illegible] अब तक जिन्हें लिये गये हैं वे बहुत [illegible] हैं। पर खेद यही है, इनकी संख्या के कारण, [illegible] अधिक संख्या में भारतवासी नहीं [illegible] जानने वाले दो एक एम० ए० 'पास' पण्डितों प्रवेश पाने की इस साल प्रार्थना की थी। परन्तु मनोरथ नहीं हुए।

१८६० ईसवी में इस महकमे की नींव पड़ी ४० वर्ष तक तो इसने कुछ खटपट ही काम किया ईसवी में लार्ड कर्ज़न की कृपा से इसका [illegible] अफ़सरों की संख्या बढ़ाई गई। खर्च के लिए अधिक मञ्जूर हुआ। काम का ढर्रा भी निर्दिष्ट प्राचीन इमारतों की रक्षा का काम भी इसी को तब से इस महकमे में जान सी आ गई है। बढ़ते के साथ काम कर रहा है। १९१४—१५ साल लाख से भी अधिक रुपया खर्च किया। पुरातत्त्व की खोज, पुरानी वस्तुओं की खरीद इमारतों की रक्षा में किया गया। खोज और ही इसके प्रधान काम हैं। अजायबघरों की रक्षा और उन्नति का काम भी यही करता है। पुरातत्त्व-विषयक अजायबघरों की संख्या १६ तक पुहुची है।

इस रिपोर्ट के लेखक, डाइरेक्टर जनरल आ[illegible] किताबों, ने गत पाँच वर्षों के मुख्य मुख्य कामों संक्षिप्त वर्णन किया है उसमें पाठकों को खूब [illegible] है। डाइरेक्टर जनरल की राय है कि [illegible] वर्षों के भीतर अनेक खोजों में [illegible] [illegible] महत्त्व की [illegible] पर ही [illegible]।

इस महकमे में एक दोष है। यदि कहीं कोई [illegible] मिलता है या कोई नया आविष्कार होता [illegible] उसकी खबर भी बाहर नहीं [illegible]। [illegible] इसी महकमे को पुरातत्त्व और [illegible] में [illegible]। कोई [illegible] है कि [illegible] इस काम में [illegible] [illegible] [illegible]

पढ़े लिखे कुछ ही विद्वानों को छोड़ कर औरों को इससे लाभ उठाने का मौक़ा भी न मिलेगा।

## २—कूच नामक एक प्राचीन राज्य।

एस० लीवाइ नाम के एक विद्वान् नामी पुरातत्त्ववेत्ता हैं। आपने रायल एशियाटिक सोसायटी के जरनल में एक लेख प्रकाशित कराया है। लेख बड़ा मनोरञ्जक है। उसमें आपने लिखा है कि किसी समय चीनी तुर्किस्तान (Chinese Turkestan) मे भारतवासियों ही का आधिपत्य था। उनके तत्कालीन प्रभुत्व, विद्वत्त्व और कलाकौशल के चिह्न अब तक पाये जाते है। इस राज्य का नाम कूच (कुत्स ?) था। यह उस भूमि-भाग में था जो काशगर की राह चीन जाने वालों को बीच मे पड़ता है। इस प्रान्त के वर्तमान निवासियों का धर्म्म, रहन सहन और भाषा यद्यपि अब और की और हो गई है तथापि इनमें अब भी ऐसी अनेक बातें पाई जाती हैं जो इनके आर्य्यवंशीय होने की सूचना दे रही है। कूचियों की प्राचीन भाषा में पिता के लिए पातर, माता के लिए मातर, है के लिए स्ते, आठ के लिए आक्ट आदि शब्द थे। सन् ईसवी के सौ दो सौ वर्ष बीत जाने पर कूचियों ने बौद्ध धर्म्म स्वीकार कर लिया। धीरे धीरे वही उनका प्रधान धर्म्म हो गया। कूच-राज्य का सम्बन्ध खोटान या ख़ुतन से बहुत समय तक रहा। खोटान किसी समय प्रसिद्ध राज्य था और बड़ी उन्नत दशा में था। उसके साथ व्यापार-व्यवसाय करके कूच राज्य ने भी बड़ी उन्नति की। उस समय के बड़े बड़े बाज़ारों, पाठशालाओं, मन्दिरों, महलों और मठों के ध्वंसावशेष इस राज्य की पुरानी उन्नति की अब तक घोषणा दे रहे हैं। उन्हें देख कर यही कहना पड़ता है कि यह राज्य किसी समय धनसम्पन्नता और विद्या, इन दोनों बातों में बहुत बढ़ा चढ़ा था। वहां संस्कृत भाषा का ख़ूब अध्ययन-अध्यापन होता था। मठों में सैकड़ों-हज़ारों बौद्ध संस्कृत पढ़ते और संस्कृत ही में शास्त्रों की चर्चा करते थे। वहां के प्राचीन निवासियों ने अनेक संस्कृत-ग्रन्थों का अनुवाद अपनी, अर्थात् कूची, भाषा में किया। पीछे से इन लोगों ने कितने ही नये नये ग्रन्थ भी अपनी भाषा में लिखे। बौद्धों के विनयपिटक और अवदानों के आधार पर तथा उनके अनुकरण में इस प्राचीन राज्य के पण्डितों ने बहुत ग्रन्थरचना की। वहां वाले हीन सम्प्रदाय के बौद्ध थे। इन लोगों ने बौद्धों के अनेक सदृश तान्त्रिक ग्रन्थ भी लिख डाले। अनेक ग्रन्थों की रचना तो इन्होंने संस्कृत ही में की। वैद्यविद्या की पुस्तकें इन्होंने लिखीं। कूचियों की भाषा में लिखी गई—वि नामक पुस्तक लन्दन के ब्रिटिश म्यूज़ियम में सुरक्षित। प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान् कुमारजीव कूच नगर में बहुत स तक रहे थे। यह वही कुमारजीव हैं जिनके लिखे अनेक संस्कृत-ग्रन्थों के अनुवाद चीनी भाषा में प जाते हैं।

## ३—शहरे-बहलोल में प्राप्त प्राचीन मूर्त्तियां।

पेशावर के ज़िले में होती-मरदान नाम की एक छोटी सी रियासत है। उसके पश्चिम, कोई आठ मील दूर, शहरे बहलोल नाम का एक गांव है। उसके पास कितने ही बहुत पुराने पुराने धुस्स और डीह हैं। कोई दो हज़ार वर्ष पहले वह पर एक नगर था और क़िला भी था। बौद्धों की वहां विशेष बस्ती थी। अनेक विहार, स्तूप और चैत्य थे। यह कुशानवंश के राजाओं के राज्य-काल की बात है। ईसा की पांचवीं छठी सदी में यह जगह उजड़ गई जान पड़ती है। क्योंकि ह्वेनसांग आदि चीनी परिव्राजकों ने इस स्थान का उल्लेख अपनी यात्रा-पुस्तक में नहीं किया। यहां ज़मीन के भीतर से सैकड़ों सुन्दर सुन्दर मूर्त्तियां, बहुत समय से, निकलती रही हैं। कुछ तो ऊपर ही पड़ी हुई मिली हैं। वहां वाले इन मूर्त्तियों को अद्भुत वस्तु समझ कर अंगरेज़ों के हाथ बेचते रहे हैं। इस स्थान की प्राचीनता को देख कर पुरातत्त्व-विभाग के स्टीन साहब ने फ़रवरी-एप्रिल १९१२ में ६ डीहों की खुदाई की। इस काम में गवर्नमेंट का चार हज़ार से ऊपर रुपया खर्च हुआ। १९११—१२ की आरकियोलाजिकल सर्वे रिपोर्ट में इस खुदाई का फल प्रकाशित हुआ है। उसमें प्राप्त हुई वस्तुओं के अनेक चित्र भी दिये गये हैं।

स्टीन साहब को इस खुदाई में आशातीत सफलता हुई। १२०० मूर्त्तियां, बर्तन और खुदे हुए पत्थर के टुकड़े इत्यादि यहां पर उन्हें मिले। कितनी ही बौद्धमूर्त्तियां तो अखण्डित दशा में प्राप्त हुईं। जो चीज़ें यहां पर भू-गर्भ से खोद निकाली गईं उनमें से दो मूर्त्तियां बड़े महत्त्व की हैं। एक मूर्त्ति तो किसी मनुष्य की है और दूसरी

केसी स्त्री की। जिनकी ये मूर्त्तियां हैं उन्होंने शायद
स शाद-नीर्थ में कोई धार्म्मिक काम किया होगा,
अथवा कुछ पुण्यदान दिया होगा, अथवा कोई इमारत
बनवा दी होगी। पुरुष की मूर्त्ति की कारीगरी बहुत अच्छी
। पर, मूर्त्ति का बायां हाथ टूटा हुआ है। उसके दाहने
थ में कोई चीज़ है। वह शायद कोई फल है। पर क्या
, ठीक नहीं कहा जा सकता। स्त्री की मूर्त्ति में भी दोनों
थों में कोई चीज़ है। दो हज़ार वर्ष पहले गान्धार देश में
पुरुष कैसे कपड़े पहनते थे, यह बात इन मूर्त्तियों से
च्छी तरह प्रकट होती है। इस दृष्टि से ये मूर्त्तियां बड़े
व की हैं। इनका चित्र पाठक इसी संख्या में देखेंगे।

## ४—विश्वविद्यालय में शिक्षा पाने वाले छात्रों की संख्या।

स देश में पहले की अपेक्षा शिक्षा का अधिक प्रचार
वश्य है। प्रारम्भिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षालयों की
ख्या भी बढ़ गई है और उनमें शिक्षा पाने वाले छात्रों
भी। इस विषय पर कई नोट सरस्वती में निकल चुके
। एक अभी गत संख्या में ही निकला है। सब प्रकार
शिक्षा के प्रचार में वृद्धि होने पर भी और देशों की
पेक्षा यह देश अभी बहुत पिछड़ा हुआ है। एस० एम०
हित नाम के एक महाशय ने लन्दन से एक पत्र लिखा
वह वहां के कई समाचारपत्रों में प्रकाशित हुआ है।
में उन्होंने यह दिखाया है कि अन्यान्य देशों में कितने
त्र विश्वविद्यालयों में शिक्षा पा रहे हैं, और भारतवर्ष में
नने। यह हिसाब उन्होंने एक विश्वसनीय पुस्तक के
धार पर दिया है। उसका कुछ अंश नीचे नक़ल किया
ता है। पाठक देखेंगे कि आबादी के लिहाज़ से फ़ी एक
ख मनुष्यों में कितने छात्र भिन्न भिन्न देशों के विश्व-
ालयों में शिक्षा पाते हैं—

| | |
|---|---|
| (१) अमेरिका के संयुक्त राज्य | २८० |
| (२) स्विट्ज़रलैंड | २०१ |
| (३) फ्रांस | १०६ |
| (४) स्पेन | ८६ |
| (५) आस्ट्रिया | ८३ |
| (६) जर्मनी | ७० |
| (७) इँगलैंड | ६ |
| (८) नारवे | ६ |
| (९) इटली | ६ |
| (१०) जापान | ६ |
| (११) रूस | २ |
| (१२) हिन्दुस्तान | १ |

अमेरिका में एक लाख आदमियों में से २८० विश्वविद्यालयों में पढ़ते हैं और छोटे से स्विट्ज़र २०१। इँगलैंड में केवल ७४ छात्र इस प्रकार के लयों में अध्ययन करते हैं। पर भारत में केवल १ विश्वविद्यालयों तक पहुँच पाते हैं। अतएव कहना है कि यहां अन्न-धन का ही दुर्भिक्ष नहीं, उच्च शि भी दुर्भिक्ष है।

## ५—लड़कियों के लिए सामयिक पत्र।

स्त्री-शिक्षा का प्रचार वृद्धि पर है। देहात तक ं लोग लड़कियों को मदरसे भेजने लगे हैं। जो नहीं और पढ़े लिखे हैं वे घर पर ही बहुधा अपनी लड़कियों कुटुम्ब की स्त्रियों को पढ़ाते हैं। कुछ समय हुआ एक पे गांव की एक दस वर्ष की लड़की के मुँह से हमने गो विषयक एक उत्तम कविता सुनी थी। वह लड़की ति गोखले और सुरेन्द्रनाथ आदि के नामों से भी परिचित स्त्रियों और लड़कियों के लिए जो पत्र और पत्रिकायें नि में निकलती हैं उनकी भी बड़ी अच्छी मांग है। हमारे जो इस तरह की दो एक सामयिक पुस्तकें आती हैं उ साह पास-पड़ोस की लड़कियां बड़ा हर्ष प्रकट करती हैं और बड़े चाव से पढ़ती हैं। इनमें से प्रयाग के कन्या मासिक पत्र को बहुत चाहती हैं। इस पत्र को निकलते दो वर्ष हु इसका एक विशेषांक अभी अभी निकला है। वह आकार में बड़ा है। उसमें कोई १०० पृष्ठ हैं। कई चित्र भी हैं। पत्र अधिक है, सम्पादक कम। लिखने और सहायता के लिए भी सम्पादक को सलाहकार भी रक्खे हैं। पत्र लड़कियों और स्त्रियों के हर्षवर्धक लेख रहते हैं। लड़कियां बहुत उत्साह दिखाती हैं। सहयोगिनी और पत्र-सम्पादिका बनने की भी कुछ लड़कियां से निकलती हैं। ये सब शिक्षा और लड़कियों के लिए ही हैं।

पढ़े लिखे कुछ ही विद्वानों को छोड़ कर औरों को इससे लाभ उठाने का मौक़ा भी न मिलेगा।

## २—कूच नामक एक प्राचीन राज्य।

एस० लीवाइ नाम के एक विद्वान् नामी पुरातत्त्ववेत्ता हैं। आपने रायल एशियाटिक सोसायटी के जरनल में एक लेख प्रकाशित कराया है। लेख बड़ा मनोरञ्जक है। उसमें आपने लिखा है कि किसी समय चीनी तुर्किस्तान (Chinese Turkestan) में भारतवासियों ही का आधिपत्य था। उनके तत्कालीन प्रभुत्व, विद्वत्त्व और कलाकौशल के चिह्न अब तक पाये जाते हैं। इस राज्य का नाम कूच (कुस्स ?) था। यह उस भूमि-भाग में था जो काशगर की राह चीन जाने वालों को बीच में पड़ता है। इस प्रान्त के वर्तमान निवासियों का धर्म्म, रहन सहन और भाषा यद्यपि अब और की और हो गई है तथापि इनमें अब भी ऐसी अनेक बातें पाई जाती हैं जो इनके आर्य्यवंशीय होने की सूचना दे रही हैं। कूचियों की प्राचीन भाषा में पिता के लिए पातर, माता के लिए मातर, है के लिए स्ते, आठ के लिए अश्ट आदि शब्द थे। सन् ईसवी के सौ दो सौ वर्ष बीत जाने पर कूचियों ने बौद्ध धर्म्म स्वीकार कर लिया। धीरे धीरे वही उनका प्रधान धर्म्म हो गया। कूच-राज्य का सम्बन्ध खोतान या खुतन से बहुत समय तक रहा। खोतान किसी समय प्रसिद्ध राज्य था और बड़ी उन्नत दशा में था। उसके साथ व्यापार-व्यवसाय करके कूच राज्य ने भी बड़ी उन्नति की। उस समय के बड़े बड़े बाज़ारों, पाठशालाओं, मन्दिरों, महलों और मठों के ध्वंसावशेष इस राज्य की पुरानी उन्नति की अब तक घोषणा दे रहे हैं। उन्हें देख कर यही कहना पड़ता है कि वह राज्य किसी समय धनसम्पन्नता और विद्या, इन दोनों बातों में बहुत बढ़ा चढ़ा था। वहां संस्कृत भाषा का बहुत अधिक प्रचार होता था। मठों में सैकड़ों-हज़ारों बौद्ध संस्कृत पढ़ते और संस्कृत ही में शास्त्रों का चर्चा करते थे। वहां के प्रायः सभी निवासियों ने अनेक संस्कृत-ग्रन्थों का अनुवाद चीनी, तिब्बती, भाषा में किया। चौथे से दसवें शतक के बीच इन लोगों ने किस तरह की और कितने ग्रन्थ चीनी भाषा में लिखे। इनके विद्वत्ताभरे ग्रंथ चीनी के पण्डितों के भी बहुत काम आये। इन लोगों ने बौद्धों के महायान सदृश तान्त्रिक ग्रन्थ भी लिख डाले। अनेक ग्रन्थों की रचना तो इन्होंने संस्कृत ही में की। वैद्यविद्या की पुस्तकें भी इन्होंने लिखीं। कूचियों की भाषा में लिखी गई—विरोचन नामक पुस्तक लन्दन के ब्रिटिश म्यूज़ियम में सुरक्षित है। प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान् कुमारजीव कूच नगर में बहुत समय तक रहे थे। यह वही कुमारजीव हैं जिनके लिखे हुए अनेक संस्कृत-ग्रन्थों के अनुवाद चीनी भाषा में पाये जाते हैं।

## ३—शहरे-बहलोल में प्राप्त प्राचीन मूर्त्तियां।

पेशावर के ज़िले में होती-मरदान नाम की एक छोटी सी रियासत है। उसके पश्चिम, कोई आठ मील दूर, शहरे-बहलोल नाम का एक गांव है। उसके पास कितने ही बहुत पुराने पुराने खण्डहर और टीले हैं। कोई दो हज़ार वर्ष पहले यहां पर एक नगर था और क़िला भी था। बौद्धों की यहां विशेष बस्ती थी। अनेक विहार, स्तूप और चैत्य थे। यह कुशानवंश के राजाओं के राज्य-काल की बात है। ईसा की पांचवीं या सातवीं शताब्दी में यह जगह उजड़ गई जान पड़ती है। क्योंकि ह्वेनसांग आदि चीनी परिव्राजकों ने इस स्थान का उल्लेख अपनी यात्रा-पुस्तक में नहीं किया। यहां ज़मीन के भीतर से सैकड़ों सुन्दर सुन्दर मूर्त्तियां, बहुत समय से, निकलती रही हैं। कुछ तो ऊपर ही पड़ी हुई मिलती हैं। वहां वाले इन मूर्त्तियों को बहुत धन्य समझ कर अंगरेज़ों के हाथ बेचते रहे हैं। इस स्थान की प्राचीनता को देख कर पुरातत्त्व-विभाग के स्टीन साहब ने फ़रवरी-मार्च १९१२ में ६ सप्ताह की खुदाई की। इस काम में गवर्नमेंट का चार हज़ार से ऊपर व्यय हुआ। १९११—१२ की आर्कियालाजिकल सर्वे रिपोर्ट में इस खुदाई का फल प्रकाशित हुआ है। उसमें प्राप्त हुई वस्तुओं के अनेक चित्र भी दिये गये हैं।

स्टीन साहब को इस खुदाई में प्रायः सौ मूर्त्तियां मिलीं। १२०० मूर्त्तियां, बर्तन और खुदे हुए पत्थर के टुकड़े इत्यादि वहां पर उन्हें मिले। जितने ही बौद्धमूर्त्तियों के अवशेष दशा में प्राप्त हुए। जो चीज़ें वहां पर मूर्त्तियों के साथ मिलीं उनमें से दो मूर्त्तियां यहां भेजी गई हैं। एक मूर्त्ति तो किसी बुद्ध की है और दूसरी

किसी स्त्री की। जिनकी ये मूर्त्तियां हैं उन्होंने शायद इस बौद्ध-तीर्थ में कोई धार्मिक काम किया होगा, अथवा कुछ पुण्यदान दिया होगा, अथवा कोई इमारत बनवा दी होगी। पुरुष की मूर्त्ति की कारीगरी बहुत अच्छी है। पर, मूर्त्ति का बायां हाथ टूटा हुआ है। उसके दाहने हाथ में कोई चीज़ है। वह शायद कोई फल है। पर क्या है, ठीक नहीं कहा जा सकता। स्त्री की मूर्त्ति में भी दोनों हाथों में कोई चीज़ है। दो हज़ार वर्ष पहले गान्धार देश में स्त्री पुरुष कैसे कपड़े पहनते थे, यह बात इन मूर्त्तियों से अच्छी तरह प्रकट होती है। इस दृष्टि से ये मूर्त्तियां बड़े मोल की हैं। इनका चित्र पाठक इसी संख्या में देखेंगे।

## ४—विश्वविद्यालय में शिक्षा पाने वाले छात्रों की संख्या।

इस देश में पहले की अपेक्षा शिक्षा का अधिक प्रचार अवश्य है। प्रारम्भिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षालयों की संख्या भी बढ़ गई है और उनमें शिक्षा पाने वाले छात्रों की भी। इस विषय पर कई नोट सरस्वती में निकल चुके हैं। एक अभी गत संख्या में ही निकला है। सब प्रकार की शिक्षा के प्रचार में वृद्धि होने पर भी और देशों की अपेक्षा यह देश अभी बहुत पिछड़ा हुआ है। एस० एम० शिक्षित नाम के एक महाशय ने लन्दन से एक पत्र लिखा है। वह वहां के कई समाचारपत्रों में प्रकाशित हुआ है। उसमें उन्होंने यह दिखाया है कि अन्यान्य देशों में कितने छात्र विश्वविद्यालयों में शिक्षा पा रहे हैं, और भारतवर्ष में कितने। यह हिसाब उन्होंने एक विश्वसनीय पुस्तक के आधार पर दिया है। उसका कुछ अंश नीचे नक़ल किया जाता है। पाठक देखेंगे कि आबादी के लिहाज़ से पूरी एक लाख मनुष्यों में कितने छात्र भिन्न भिन्न देशों के विश्वविद्यालयों में शिक्षा

(७) इँगलेंड
(८) नारवे
(९) इटली
(१०) जापान
(११) रूस
(१२) हिन्दुस्तान

अमेरिका में एक लाख आदमियों में से २ विश्वविद्यालयों में पढ़ते हैं और छोटे से २०१। इँगलेंड में केवल ७४ छात्र इस प्रकार लयों में अध्ययन करते हैं। पर भारत में केवल १ विश्वविद्यालयों तक पहुँच पाते हैं। अतएव कहना है कि यहां अन्न-धन का ही दुर्भिक्ष नहीं, उच्च भी दुर्भिक्ष है।

## ५—लड़कियों के लिए सामयिक पत्र।

स्त्री-शिक्षा का प्रचार वृद्धि पर है। देहात तक लोग लड़कियों को मदरसे भेजने लगे हैं। जो नहीं और पढ़े लिखे हैं वे घर पर ही बहुधा अपनी लड़कियों कुटुम्ब की स्त्रियों को पढ़ाते हैं। कुछ समय हुआ एक गांव की एक दस वर्ष की लड़की के मुँह से हमने गो विषयक एक उत्तम कविता सुनी थी। यह लड़की गोखले और सुरेन्द्रनाथ आदि के नामों से भी परिचित स्त्रियों और लड़कियों के लिए जो पत्र और पत्रिकायें में निकलती हैं उनकी भी बड़ी अच्छी मांग है। हमारे इस तरह की दो एक सामयिक पुस्तकें आती हैं। राह पास-पड़ोस की लड़कियां गरा देखा करती हैं और बड़े चाव से पढ़ती हैं। इनमें से प्रयाग के कन्या मा[illegible] बहुत चाहती हैं। इस पत्र को निकलते दो वर्ष हु[illegible] इसका एक विशेष अङ्क अभी निकला है। वह चालिस अङ्क है। इसमें कोई १०० पृष्ठ हैं। कई चित्र भी हैं। [illegible] अधिक है, मगर कम। शिक्षा और स्वास्थ्य के विषय में [illegible] की सम्मतियां भी इसमें हैं। इस पत्रिका और [illegible] इसके लेख पढ़ कर लड़कियां बहुत प्रसन्न होती [illegible], लड़कियां और अध्यापिकायें बड़े चाव से [illegible] में निकलता है। इसमें स्त्रियों और लड़कियों [illegible] की है।

## ६—पनामा-प्रदर्शिनी में हिन्दुस्तानी विद्या-रसिकों की सभा।

अमेरिका में जो हिन्दुस्तानी हैं उन्हों ने एक सभा बना ली है। उसका नाम है—Hindustan Association of America. यह सभा एक मासिक पत्र भी निकालती है। उसके सितम्बर १९१५ के अङ्क से मालूम हुआ कि जिस सम्मेलन का उल्लेख गत अगस्त की सरस्वती में हुआ था वह हो गया। सम्मेलन १४, १५ और १६ अगस्त को तीन दिन तक बराबर होता रहा। कई बैठकें हुईं। अनेक लेख पढ़े गये, अनेक व्याख्यान भी हुए। अन्तिम दिन की छठी बैठक में सब कारवाई हिन्दी में हुई। हिन्दी का सौभाग्य! मदरासी, बङ्गाली, पञ्जाबी, महाराष्ट्र, गुजराती और संयुक्त-प्रान्तीय लोग हिन्दी के सिवा और किस प्रान्तीय भाषा का आश्रय लेते? १५ अगस्त को इस सम्मेलन की पाँचवीं बैठक पनामा-प्रदर्शनी की सीमा के भीतर कैलीफ़ोर्निया-बिलडिंग नाम की इमारत में हुई। प्रदर्शिनी के अध्यक्ष मूर साहब के प्रतिनिधि भी इस बैठक में पधारे थे। आपने एक छोटी सी वक्तृता की और हिन्दुस्तान असोसियेशन के मन्त्री आइयर महाशय को एक पदक दिया। प्रदर्शिनी के सम्मेलनों के सहायक अध्यक्ष, काय्यल साहब, और कैलीफ़ोर्निया-विश्वविद्यालय के अध्यापक पोप साहब भी कुछ देर तक बोले। ग्रीस के राजदूत ने सब का स्वागत किया। विविध व्याख्यान हुए। खूब चहल-पहल रही। अन्त को जलपान हुआ। हलुवा, पकौड़ी और कचौड़ी आदि का प्रबन्ध था। परोसनेवाली श्रीमतियों ने हिन्दुस्तानी साड़ियाँ धारण की थीं। उपस्थिति कोई ६०० के लगभग थी। इस सम्मेलन के अधिवेशन के वर्णन से प्रकट होता है कि इसका अधिकांश श्रेय श्रीयुत केशवदेव शास्त्री को है। इस सम्बन्ध में एक बात मार्के की हुई। बिना सरकारी सहायता के ही पनामा-प्रदर्शिनी में हिन्दुस्तानी चीज़ों की भी एक प्रदर्शिनी हुई। उसके लिए एक अलग स्थान तैयार किया गया था। मानिक जे० भूमगारा नाम के महाशय के प्रबन्ध से यह काम हुआ।

किसी तरह इन प्रवासी भारतवासियों ने अपने देश की थोड़ी बहुत चर्चा कर दी और उसकी कुछ चीज़ों के दर्शन भी करा दिये। एतदर्थ ये हमारे धन्यवाद-पात्र हैं।

## ७—कुमारी हेलन केलर (Miss Helen Keller)

योरप और अमेरिका में प्रति दिन विस्मयजनक आविष्कार हुआ करते हैं। अभी बहुत समय नहीं हुआ जब हम लोगों का ख़याल था कि अन्धों, बहरों तथा गूँगों को शिक्षा देना असम्भव है। किन्तु शिक्षा का गौरव समझने वाले पूर्वोक्त देशों ने इन लोगों को पढ़ाने के लिए भी स्कूल खोल कर यह दिखा दिया कि वैसा समझना हमारा भ्रम था। यही नहीं, हाल में एक अमेरिकन अबला ने, अन्धी, बहरी तथा गूँगी होकर भी, कई प्रसिद्ध भाषाओं में उच्च शिक्षा प्राप्त करके संसार को विस्मित कर दिया है। आपका नाम कुमारी हेलन केलर है।

कुमारी हेलन केलर का जन्म उत्तरी अलबामा (Alabama) के टस्कम्बिया (Tuscumbia) नामी गाँव में, २७ जून सन् १८८० ईसवी, को हुआ था। अपने माता-पिता की पहली सन्तान होने के कारण वह उनको बहुत प्यारी थी। परन्तु दुर्भाग्यवश डेढ़ वर्ष की अवस्था में ही इस होनहार लड़की को एक भयङ्कर रोग ने आ दबाया। उसी व्याधि ने उसे आँखों और कानों के उपयोग से वञ्चित कर दिया। वह गूँगी भी हो गई। जिस प्रकार गूँगे सङ्केतों द्वारा अपने विचार दूसरों पर प्रकट करते हैं उसी प्रकार यह लड़की भी अपना काम चलाती थी। परन्तु अभी तक वह यह न समझती थी कि संसार में प्रत्येक वस्तु के लिए भिन्न भिन्न चिह्न या नाम हैं।

हेलन केलर के माता-पिता की यह हार्दिक इच्छा थी कि हम अपनी लड़की को पढ़ावें। परन्तु बहुत दिन तक कोई ऐसा शिक्षक न मिला जो इस अन्धी, बहरी तथा गूँगी कन्या को पढ़ाने का साहस करता। बहुत खोज करने पर कुमारी सलीवान (Sullivan) नाम की एक विदुषी ने यह कार्य्य स्वीकार किया। यह उसी के निरन्तर परिश्रम का फल है कि हेलन केलर कई भाषाओं में उच्च शिक्षा प्राप्त करने में सफल हुई। केलर की उम्र ७ वर्ष की थी जब कुमारी सलीवान ने उसे पढ़ाना आरम्भ किया। बाल्यावस्था में ही प्रत्येक वस्तु को छूकर उसके सम्बन्ध की सब बातें जानने के लिए केलर बड़ी उत्सुक रहा करती थी। अपने खिलौनों में एक गुड़िया को यह बहुत पसन्द करती

सर हेनरी कॉटन, सी० आई० ई०।

इंडियन प्रेस, प्रयाग।

## ६—पनामा-प्रदर्शिनी में हिन्दुस्तानी विद्या-रसिकों की सभा।

अमेरिका में जो हिन्दुस्तानी हैं उन्हों ने एक सभा बना ली है। उसका नाम है—Hindustan Association of America. यह सभा एक मासिक पत्र भी निकालती है। उसके सितम्बर १९१२ के अङ्क से मालूम हुआ कि जिस सम्मेलन का उल्लेख गत अगस्त की सरस्वती में हुआ था वह हो गया। सम्मेलन १४, १५ और १६ अगस्त को तीन दिन तक बराबर होता रहा। कई बैठकें हुईं। अनेक लेख पढ़े गये, अनेक व्याख्यान भी हुए। अन्तिम दिन की छठी बैठक में सब कारवाई हिन्दी में हुई। हिन्दी का सौभाग्य! मदरासी, बङ्गाली, पञ्जाबी, महाराष्ट्र, गुजराती और संयुक्त-प्रान्तीय लोग हिन्दी के सिवा और किस प्रान्तीय भाषा का आश्रय लेते? १५ अगस्त को इस सम्मेलन की पाँचवीं बैठक पनामा-प्रदर्शनी की सीमा के भीतर कैलीफ़ोर्निया-बिलडिंग नाम की इमारत में हुई। प्रदर्शिनी के अध्यक्ष मूर साहब के प्रतिनिधि भी इस बैठक में पधारे थे। आपने एक छोटी सी वक्तृता की और हिन्दुस्तान असोसियेशन के मन्त्री आइयर महाशय को एक पदक दिया। प्रदर्शिनी के सम्मेलनों के सहायक अध्यक्ष, काग्यल साहब, और कैलीफ़ोर्निया-विश्वविद्यालय के अध्यापक पोप साहब भी कुछ देर तक बोले। प्रीस के राजदूत ने सब का स्वागत किया। विविध व्याख्यान हुए। ख़ूब चहल-पहल रही। अन्त को जलपान हुआ। हलुवा, पकौड़ी और कचौड़ी आदि का प्रबन्ध था। परोसनेवाली श्रीमतियों ने हिन्दुस्तानी साड़ियाँ धारण की थीं। उपस्थिति कोई ६०० के लगभग थी। इस सम्मेलन के अधिवेशन के वर्णन से प्रकट होता है कि इसका अधिकांश श्रेय श्रीयुत केशवदेव शास्त्री को है। इस सम्बन्ध में एक बात मार्के की हुई। बिना सरकारी सहायता के ही पनामा-प्रदर्शिनी में हिन्दुस्तानी चीज़ों की भी एक प्रदर्शिनी हुई। उसके लिए एक अलग स्थान तैयार किया गया था। मानिक जे० भूमगारा नाम के महाशय के प्रबन्ध से यह काम हुआ।

किसी तरह इन प्रवासी भारतवासियों ने अपने देश की थोड़ी बहुत चर्चा कर दी और उसकी कुछ चीज़ों के दर्शन भी करा दिये। एतदर्थ वे हमारे धन्यवाद-पात्र हैं।

## ७—कुमारी हेलन केलर (Miss Helen Keller)

योरप और अमेरिका में प्रति दिन विस्मयजनक आविष्कार हुआ करते हैं। अभी बहुत समय नहीं हुआ जब हम लोगों का ख़याल था कि अन्धों, बहरों तथा गूँगों को शिक्षा देना असम्भव है। किन्तु शिक्षा का गौरव समझने वाले पूर्वोक्त देशों ने इन लोगों को पढ़ाने के लिए भी स्कूल खोल कर यह दिखा दिया कि वैसा समझना हमारा भ्रम था। यही नहीं, हाल में एक अमेरिकन अबला ने, अन्धी, बहरी तथा गूँगी होकर भी, कई प्रसिद्ध भाषाओं में उच्च शिक्षा प्राप्त करके संसार को विस्मित कर दिया है। आपका नाम कुमारी हेलन केलर है।

कुमारी हेलन केलर का जन्म उत्तरी अलबामा (Alabama) के टस्कम्बिया (Tuscumbia) नामी गांव में, २७ जून सन् १८८० ईसवी, को हुआ था। अपने माता-पिता की पहली सन्तान होने के कारण वह उनको बहुत प्यारी थी। परन्तु दुर्भाग्यवश डेढ़ वर्ष की अवस्था में ही इस होनहार लड़की को एक भयङ्कर रोग ने आ दबाया। उसी व्याधि ने उसे आँखों और कानों के उपयोग से वञ्चित कर दिया। वह गूँगी भी हो गई। जिस प्रकार गूँगे सङ्केतों द्वारा अपने विचार दूसरों पर प्रकट करते हैं उसी प्रकार यह लड़की भी अपना काम चलाती थी। परन्तु अभी तक वह यह न समझती थी कि संसार में प्रत्येक वस्तु के लिए भिन्न भिन्न चिह्न या नाम हैं।

हेलन केलर के माता-पिता की यह हार्दिक इच्छा थी कि हम अपनी लड़की को पढ़ावें। परन्तु बहुत दिन तक कोई ऐसा शिक्षक न मिला जो इस अन्धी, बहरी तथा गूँगी कन्या को पढ़ाने का
पर कुमारी सलीवान (
यह कार्य्य स्वीकार
का फल है कि
प्राप्त करने में स
कुमारी सलीवान
में ही प्रत्येक
जानने के
खिलौनों

कुमारी सलीवान ने एक दिन वह गुड़िया उससे ली। जब वह रोने लगी तब उसके हाथ पर उँगली कुमारी सलीवान ने Doll. अर्थात् "गुड़िया" लिख । इसी प्रकार दो चार बार करने पर लड़की को यह ूम हो गया कि वह चिह्न गुड़िया ही का है। अतः जब वह गुड़िया खेलना चाहती तब अपनी माँ या कुमारी ीवान के हाथ पर Doll लिख कर सुगमता से गुड़िया जाती। इसी प्रकार कुमारी सलीवान ने घर की सब ुओं के नामाक्षर उसे सिखा दिये। प्रति दिन इस प्रकार नामाक्षरों की संख्या बढ़ने लगी।

इस प्रकार संज्ञा-शब्दों के अक्षर सीख जाने पर कुमारी ीवान ने उसका ध्यान क्रियाओं की ओर खींचा। Doll ड़िया) Table (मेज़) इत्यादि के चिह्न या संकेत वह ती ही थी। इस कारण गुड़िया मांगने पर कुमारी ीवान ने उसके हाथ पर—Doll is on the table र्थात्—गुड़िया मेज़ पर है—इत्यादि इत्यादि वाक्य लिखना रम्भ किया। धीरे धीरे इस तरह के अनेक वाक्य भी हेलन ा समझने लगी। अतः अब पढ़ाने का कार्य्य आरम्भ हुआ।

अन्धों को पढ़ाने के लिए उभड़े हुए अक्षरों की किताबें पी जाती हैं। उनको उँगलियों से टटोल कर वे लोग पढ़ ते हैं। ऐसी ही एक किताब हेलन को भी दी गई। न जिन शब्दों के अक्षर वह सीख चुकी थी उनकी किताब पाकर वह बहुत प्रसन्न हुई। अब उसे एक नया मनो र वह दिन भर में जो जो वस्तु पाती उसके अक्षर उँ ई कुमारी सलीवान या अपनी माँ को दिखाती। अन्ध ए उभड़े हुए अक्षरों और वाक्यों के अर्थ समझने में समर्थ गई। साथ ही साथ अक्षरों का लिखना भी अच्छा सीख लिया।

१० वर्ष की अवस्था में वह हाथ का लिख लिख कर ातें लिखने लगी। परन्तु कभी कभी अक्षर ठीक न लिख के लिखते हुए कोरे के ऊपर वह यह देखती कि मैं ने इसी प्रकार [illegible] इस लिए वह कोरे के लिए बहुत — [illegible] इस कुलता करने पड़ते हाथ अक्षर पर [illegible] (रास्ता) का अनुभव किया। [illegible] के एक पृष्ठ में अक्षर

चाल अपनी उँगलियों से ध्यानपूर्वक देखी होकर उसका अनुकरण करने लगी। अभ्यास सकता? थोड़े ही दिनों में ओंठ छू छू कर उसने उच्चारण सीख लिया। यहाँ तक कि अब वह है। इसका उच्चारण हम लोगों के उच्चारण से

इस प्रकार लिखना पढ़ना एवं बोलना अंगरेज़ी, फ्रेंच, जर्मन तथा लैटिन जैसी इन परीक्षायें पास कीं। इनके अतिरिक्त भाषायें जाननी हैं। देखने और सुनने की उँगलियों में आ गई है। अपने मित्रों को, समय के पश्चात् वे क्यों न मिलें, वह केवल कर पहचान लेती है। जब कोई नवीन मनुष्य आता है तब वह उसके मुँह पर हाथ फेर कर उसे पहचान लेती है। पढ़ने लिखने के अ तिरिक्त भी अच्छी तरह खेल सकती है।

सियाराम

## ८—एक नामी कोशकार की मृत्यु।

अंगरेज़ी भाषा का साहित्य बहुत उन्नत एवं उसमें कितने ही कोश—और बहुत बड़े बड़े विद्यमान हैं। जानसन, वरसेस्टर, वेब्स्टर आदि हुए कोश-ग्रन्थों को देख कर उनकी महत्ता पर होता है। अनन्त परिश्रम करके और इस इस काम में निरन्तर लगे रहने पर कहीं ऐसा कोश लिख पाये। लिख पर भी वे काम विद्वन्मण्डली में समाप्त नहीं। एक विद्वान् कोश के संकलन लिए भी बना ही रहा। यह सब भी काम के इस आवश्यकता की मात्रा पूर्ण करते, एक वर्ष में. २० जुलाई १८३८ को, परलोकवासी हो। का बात है—डॉ इंगलिश डिक्शनरी, अर्थात् भाषा का बना कर। इस कोश का काम, पूरा न सन् १८८० ईसवी में शुरू किया था। उस के कोशकार को इस के लिए बीस वर्ष तक लगे रहना पड़ा। शब्द के लिखने को इसी में अंग्रेज़ी में उच्चारण करने में, यह आदमी के लिए काम करने पड़ते हैं। इस काम को ३१ वर्ष लगे।

मन हुआ! १८७८ ईसवी में यह काम डाक्टर मरे को सिपुर्द किया गया। उन्होंने ग्रेट-ब्रिटन और अमेरिका के शिक्षित जन-समुदाय से सहायता मांगी। हज़ारों आदमियों ने उनकी प्रार्थना पर कोई दस ग्यारह लाख काग़ज़ के टुकड़ों पर शब्दों की उत्पत्ति, इतिहास और अर्थ लिख लिख कर भेजा। १५०० ईसवी के पहले की प्रत्येक पुस्तक और उसके बाद की प्रत्येक महत्त्वपूर्ण पुस्तक पढ़ कर शब्दों का संग्रह किया गया। यह सब सामग्री प्रस्तुत हो जाने पर कोश-रचना का काम शुरू हुआ। प्रधान सम्पादक सर जान मरे की सहायता के लिए कोई २० उपसम्पादक नियत हुए। तब कहीं, ३६ वर्ष में, यह काम पूरा हो सका; सो भी अभी कुछ बाक़ी है। इससे यह सहज ही अनुमान किया जा ... है कि विश्वसनीय और पूरा शब्द-कोश बनाना कितने ... कितने धैर्य्य, कितने व्यय और कितनी विद्वत्ता का काम है।

## १—युद्ध का पहला वर्ष—धन और जन-नाश।

गत अगस्त के आरम्भ में एक वर्ष हो गया, युद्ध बरा... जारी है। इन १२ महीनों में कितने आदमी काम आये, कि... घायल हुए और कितने क़ैद हो गये, इसका अन्दाज़ा यहु... लोगों ने लगाया है। संयुक्त-राज्य, अमेरिका, के न्यूयार्क नग... से इंडिपेंडेंट नाम का एक पत्र निकलता है। उसने भी इस जन... नाश की एक तालिका प्रकाशित की है। यह तालिका इस देश के भी पत्रों में छपी है। इसकी नक़ल नीचे दी जाती है—

| देश | मारे गये | घायल हुए | क़ैद हुए या लापता | टोटल |
|---|---|---|---|---|
| रूस | ८,००,००० | २०,००,००० | ८,००,००० | ३६,००,० |
| फ्रांस | ४,५०,००० | ८,००,००० | ३,१०,००० | १५,६०,० |
| ग्रेट-ब्रिटन | १,२५,००० | २,५०,००० | ६०,००० | ४,६५,० |
| बेलजियम | ५०,००० | १,६५,००० | ४५,००० | २,६०,०० |
| सरविया | ६५,००० | १,१३,००० | ५०,००० | २,२८,०० |
| मांटिनिगरो | ८,००० | १५,००० | ५,००० | २८,०० |
| इटली | ५,००० | १२,००० | २,००० | १८,००० |
| मित्र-राज्यों का टोटल | १५,०३,००० | ३३,५५,००० | १३,०२,००० | ६१,६०,००० |
| जर्मनी | ५,००,००० | ६,००,००० | २,५०,००० | १६,५०,००० |
| आस्ट्रिया-हंगरी | ३,५५,००० | ८,००,००० | २,००,००० | १३,५५,००० |
| टर्की | ५०,००० | १,००,००० | ५०,००० | २,००,००० |
| शत्रु-राज्यों का टोटल | ९,०५,००० | १८,००,००० | ५,००,००० | ३२,०५,००० |
| कुल टोटल | २४,०८,००० | ५१,५५,००० | १८,०२,००० | ९३,६५,००० |

पर इस हिसाब में भूल मालूम होती है। ख़बर भेजने वाली जितनी कम्पनियाँ हैं उनमें रूटर कम्पनी की बड़ी प्रतिष्ठा है। उसकी भेजी हुई ख़बरें बहुत विश्वसनीय समझी जाती हैं। उसका कहना है कि शत्रु-राज्यों की हानि मित्र-राज्यों की हानि से बहुत अधिक है। एक नामी पत्र के आधार पर उसने ख़बर दी है कि जर्मनी, आस्ट्रिया-हंगरी और टर्की को ८२ लाख आदमियों की हानि उठानी पड़ी है, जिसमें से ६० लाख मरे या सदा के लिए बेकार हो गये हैं।

कुछ भी हो, ऊपर के खेले में जो हानि ग्रेट-ब्रिटन को उठानी पड़ी है उसमें अवश्य ही भूल है। क्योंकि ब्रिटिश साम्राज्य के प्रधान मन्त्री एसक्विथ साहब ने २६ अक्टोबर को पारलियामेंट में जो हिसाब पेश किया वह नीचे दिया जाता है—

| | |
|---|---|
| मारे गये | १,०३,६१२ |
| घायल हुए | ३,१७,४६१ |
| ला-पता | ७४,१७० |
| | ४,६१,२६४ |

इसमें से पश्चिमी रणक्षेत्र में हुई जन-हानि की संख्या ३,६३,०४३ है। अवशिष्ट १,३२,२२१ की हानि अन्यान्य रणक्षेत्रों में हुई। अमेरिका के पूर्वोक्त पत्र ने ग्रेट-ब्रिटन की हानि का जो हिसाब दिया है वह, सम्भव है, बहुत पहले का हो। एसक्विथ साहब की बताई हुई हानि का हिसाब २ अक्टोबर १६१५ तक का है।

इसमें सन्देह नहीं कि इस प्रलयङ्कर युद्ध की अग्नि में दोनों पक्षों के लाखों मनुष्य स्वाहा हो गये। अब तो इसने और भी विकराल रूप धारण किया है। भगवान् करे शीघ्र ही इसकी समाप्ति हो!

इस महायुद्ध में कितना रुपया ख़र्च हो रहा है। यह सुन कर तो आश्चर्य्य की सीमा ही नहीं रहती। १२ सितम्बर १६१५ को ब्रिटिश-साम्राज्य के प्रधान अमात्य, एसक्विथ साहब, ने हाउस आव् कामन्स (पार्लियामेंट) में कहा कि युद्ध के पहले १२ महीनों में कुल मिला कर ११ अरब रुपया ख़र्च हुआ है! जुलाई १५ के आरम्भ में युद्ध के ख़र्च का औसत ४½ करोड़ रुपया रोज़ था। पर सितम्बर में बढ़ कर वह २½ करोड़ रोज़ हो गया था! इस ख़र्च के दिन पर दिन बढ़ने ही के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। फ्रांस के ख़र्च का भी यही हाल है। कुछ समय पहले फ्रांस का दैनिक युद्ध-ख़र्च भी कुछ कम ४½ करोड़ था। जर्मनी और आस्ट्रिया के युद्ध-ख़र्च का ठीक हिसाब मालूम नहीं। परन्तु इन देशों का भी ख़र्च बहुत होगा। ग्रेट-ब्रिटन को जो इतना अधिक ख़र्च पड़ा है उसका कारण है। उसने अपने मित्र उपनिवेशों को बहुत सा रुपया क़र्ज़ भी दिया है। वह भी इसी युद्ध-ख़र्च में शामिल है।

## १०—सर हेनरी फाटन।

हिन्दुस्तान के बहुत बड़े हितैषी सर हेनरी फाटन परलोकवासी हो गये। २३ अक्टोबर को उनकी यात्रा समाप्त हो गई। जब तक इस देश में रहे भारतवासियों की हर तरह मङ्गलकामना ही नहीं हक़ों की यथाशक्ति रक्षा भी की। जब पेन्शन लेकर विलायत गये तब भी आप इस देश को नहीं भूले। कभी लेखों द्वारा, कभी वक्तृताओं द्वारा, पुस्तकों द्वारा, पार्लियामेंट द्वारा आप लगातार चेष्टा करते ही रहे। भारत की उन्नति के मार्ग में जो बाधायें हैं उन्हें दूर करने में सदा ही तत्पर रहे। उनकी पुस्तकों में लिखित भारत को किसी दृष्टि से देखने से किस दृष्टि से कि एक स्वदेशभक्त भारतवासी देख सकता है। उनकी भारतवासियों के साथ प्रेम, उदारता और समानता होना चाहिए; उन्हें बड़े से बड़े पद मिलने चाहिए; विचार-स्वातन्त्र्य का पूर्ण अधिकार होना चाहिए। कभी तो बात ही नहीं, कुर्सियों तक के वे विरोधी थे। वे न चाहते थे कि थोड़े से भी योग्य भारतवासी के मौलिक अधिकार में बाधा उपस्थित की जाय। समय के आभाव के कारण कमिश्नरी के उस समय जो लोग भारतीयों में काम करते थे भारतीय कुर्सियों के साथ अच्छा व्यवहार न किया जाता था। जब इस के लिए क़ानून बनने लगा तब भारत कुर्सियों का पक्ष इस उच्च न्यायालय के कारण इस पृथ्वि और महात्माओं के मुख से भारतीय अनेक सभी सभा बातें सुनीं। भारतीय हानियों नहीं, वे भारत पर भी पर

विलायत में भी भारत का पक्ष लेने के कारण आपको न मालूम कितना त्रास सहना पड़ा। परन्तु मरते दम तक आप अपने निश्चित मार्ग से नहीं डिगे।

सर हेनरी काटन के प्रपितामह पहले पहल भारत आये। यह बात कोई डेढ़ सौ वर्ष पहले की है। इसके बाद उनके पितामह और पिता भी इस देश में बड़े बड़े ओहदों पर रहे। उनके एक पुत्र भी इस समय यहाँ सिविलियन हैं। इस तरह पाँच पुश्तों से आपके कुटुम्बीय भारत की सेवा करते आ रहे हैं। १८४५ ईसवी में मदरास प्रान्त के कुम्भकोणम् नगर में सर हेनरी काटन का जन्म हुआ। बचपनही में वे विद्याध्ययन के लिए विलायत भेजे गये। १८६७ ईसवी में वे वहाँ से सिविलियन हो कर लौटे। पहले पहल उन्हें मिदनापुर में जगह मिली। अनेक पदों पर उन्होंने काम किया। अन्त को वे आसाम के चीफ़ कमिश्नर नियत हुए। सुनते हैं, आप बङ्गाल की लफ़्टिनेंट गवर्नरी के हक़दार थे। पर वह उन्हें नहीं मिली। इस कारण खिन्न होकर उन्होंने पेन्शन ले ली।

१९०४ ईसवी में सर हेनरी काटन फिर भारत आये और बम्बई में, उस साल, नेशनल कांग्रेस के सभापति हुए। लन्दन में जो कांग्रेस कमिटी है उसमें शामिल होकर आपने बहुत कुछ काम किया। "इंडिया" नाम का पत्र जो विलायत से निकलता है वह इसी कमिटी के प्रबन्ध से निकलता है। सर हेनरी के पुत्र ही उसका सम्पादन करते हैं। चार पाँच वर्ष तक सर हेनरी काटन पारलियामेंट के मेम्बर थे। इस मेम्बरी के समय में आपने भारत-सम्बन्धिनी अनेक चर्चायें पारलियामेंट में कीं। आपकी इन सब सेवाओं के उपलक्ष्य में भारत आपका बहुत ऋणी है। आपकी मृत्युवार्ता सुन कर सभी को खेद हुआ है।

सर हेनरी काटन की पुस्तकों में न्यू इंडिया नाम की पुस्तक बहुत अच्छी है। उसका हिन्दी-अनुवाद भी हो चुका है।

---

# पुस्तक-परिचय।

१—वेणीसंहार की आलोचना। आकार पृष्ठ-संख्या ८०; मूल्य ४ आने; प्राप्ति-स्थान—[illegible] प्रेस, आगरा। भट्टनारायण का लिखा हुआ वेणीसंह का एक नाटक संस्कृत में है। उसकी बड़ी प्रसि नाटक वीररसात्मक है। इस देश की कितनी ही भ में उसके अनुवाद हो चुके हैं। पण्डित बदरीनाथ बी० ए०, ने उसी के आधार पर अपने "कुरुवनद नाटक की रचना की है। प्रस्तुत "आलोचना" भी अ की लिखी हुई है। आलोचना का ढँग बहुत अच्छा कवित्व-दृष्टि से भी आलोचना की गई है, नाट्य-दृ भी। किस पात्र की कौन बात प्रासङ्गिक और कौन अप्र ङ्गिक है, इस पर यथेष्ट विचार किया गया है। पात्रों स्वभावादि के गुण-दोष भी बताये गये हैं। जो बातें सम चित, अनुकूल भावों की द्योतक और पात्रों की दशा और स्वभाव के अनुरूप हैं, उनका रहस्य भी प्रकट किया गया है कवि की रचना का जो अंश सदोष समझा गया है उसक स्पष्ट उल्लेख कर दिया गया है—ज़रा भी मुलाहिज़ा नहीं किया गया। उदाहरण—

(१) कवि ने यहाँ भीमसेन का जो बालूनीपन दिखाया है वह और जगहों से बढ़ गया है और बुरा मालूम होता है।

(२) यह—'अमूल्यिम' पद लाकर कवि ने श्लोक के महत्व को तो कम किया ही, युधिष्ठिर के चरित्र पर भी भारी और गरल पानी फेर दिया।

आलोचना की भाषा कहीं कहीं बड़ी सरस और हँसाने वाली है। नाटक के कर्त्ता भी भट्ट और आलोचक भी भट्ट। दो भट्टों का यह कृतिकौशल देखने योग्य है।

२—श्रीमद्भगवती-भागवत। बम्बई के सस्ते साहित्य-वर्द्धक कार्य्यालय ने कुछ बड़े बड़े ग्रन्थों के प्रकाशन का भी बीड़ा उठाया है। ऐसे दो तीन ग्रन्थों का परिचय सरस्वती की पिछली संख्याओं में दिया जा चुका है। आज एक और ग्रन्थ का परिचय देना है। यह भगवती-भागवत का गुजराती-अनुवाद है। इस ग्रन्थ का दूसरा नाम देवी-भागवत है। इसमें भी श्रीमद्भागवत की तरह १२ स्कन्ध।

हैं। इस मूल-ग्रन्थ के टीकाकार नीलकण्ठ ने इसे श्रीमद्-भागवत की भी अपेक्षा अधिक महत्त्व का माना है। इसका गुजराती-अनुवाद प्रकाशित हुए बहुत वर्ष हुए। बम्बई की वेद-धर्म्म सभा ने इसे पहले पहल प्रकाशित किया था। मूल्य रक्खा था ८॥) फ़ी कापी। यह अनुवाद कालिदास गोविन्द शास्त्री से कराया गया था। इसकी पहली आवृत्ति की कापियाँ अब नहीं मिलतीं। इसी से सस्तु साहित्य-वर्द्धक कार्य्यालय ने पूर्वोक्त वेद-धर्म्म-सभा की अनुमति से इसका दूसरा संस्करण निकाला है और मूल्य केवल २॥) रक्खा है। इस संस्करण की पृष्ठ-संख्या एक हज़ार से कुछ ही कम है। अच्छे काग़ज़ पर मोटे और स्पष्ट टाइप में यह ग्रन्थ छपा है। प्रत्येक अध्याय के आरम्भ के मूल संस्कृत-श्लोक भी देवनागरी टाइप में दे दिये गये हैं। इस संस्करण में एक और भी विशेषता है। मूल श्लोकों के संख्या-सूचक अङ्क भी लगा दिये गये हैं। इससे अनुवाद का मिलान मूल से करने के लिए श्लोक ढूँढ़ने में व्यर्थ परिश्रम नहीं करना पड़ता। मनोहर जिल्द बँधी हुई है। इस दिव्य ग्रन्थ को इतना सुलभ कर देने वाले पुण्य-पुरुषों को अनेक साधुवाद।

❋

३—गर्भिणी तथा गर्भ-चिकित्सा। आकार मँझोला; पृष्ठ-संख्या ६८; जिल्दबंदी, छपाई और काग़ज़ साधारण; मूल्य १ रुपया; लेखक, श्रीविश्वम्भर सेन, बी० ए०, भागलपुर, से प्राप्य। इसके दो भाग हैं। पहले में गर्भस्वरूप, सूतिकागृह और शिशुपालन आदि का वर्णन है। दूसरे में चिकित्सा-वर्णन है। चिकित्सा तीन अवस्थाओं की है—गर्भावस्था की, प्रसवावस्था की और प्रसूतावस्था की। और भी कितनी ही ज्ञातव्य बातें इसमें हैं। आत्रिषयों जो बताई गई हैं, सब होमियोपैथी चिकित्सा से सम्बन्ध रखती हैं। वे सर्वत्र नहीं मिलतीं। होमियोपैथ डाक्टर प्रायः बड़े बड़े शहरों ही में रहते हैं। इस पुस्तक में बताई गई चिकित्सा यदि न भी की जा सके तो भी इसके पढ़ने से बहुत सी आवश्यक बातें मालूम हो सकती हैं। पुस्तक की भाषा कहीं कहीं दोषपूर्ण है। मूल्य बहुत है।

❋

४—रघुनाथ-शिकार। पण्डित कालीप्रसाद अवधेश अवध में एक अच्छे कवि हो गये हैं। पण्डित काली-रामजी मिश्र, बी० ए०, का लिखा हुआ उन जून १९१३ की सरस्वती में निकल चुका [illegible] ने उनके काव्यों के प्रकाशन का काम भी है। रघुनाथ शिकार से ही आपने श्रीगणेश पुस्तक में पहले तो वाजपेयीजी का [illegible] चन्द का शिकार-वर्णन। इस वर्णन में कवि की बाल्यावस्था पर बड़ी अच्छी कविता की अधिकांश भाषा तो पुरानी हो है, पर [illegible] कहीं कहीं बड़ी अनोखी है। छन्द कई हुए हैं। इस पुस्तक में एक विशेषता है कि भी कुछ कविता की है। नमूना देखिए—

[illegible]

पुस्तक का मूल्य —) है। छपाई और [illegible] है। मिलने का पता, पाँडे गुरुदीपर, कोट, प्रतापगढ़ ( अवध )

❋

५—फ़ौजी ग्रोप में मेरे २१ वर्ष। — मूल्य ६ आने। पण्डित लोकनाथ मिश्र की इस [illegible] पहले संस्करण की समालोचना हो चुकी है। [illegible] संस्करण है। मुन्शीजी सम्राट महाराज ने जिन [illegible] का वर्णन इसमें किया है उन्होंने भारत के [illegible] जनों के हृदय कैसा हिला दिये हैं। इसी प्रथा का विरोध [illegible] पहले किया जाता था अब इसमें कई गुना अधिक [illegible] हो गया है। पुस्तक और चित्रों सहित इस पुस्तक का [illegible] साथ भेजा जाता है। भारतीय [illegible] के दूसरे भाग में हमारी [illegible] इस [illegible] में भारत की सीमा [illegible] पुस्तक मिलने का पता—[illegible], प्रतापगढ़, अव

❋

६—[illegible] । इस [illegible] पुस्तक में कई [illegible] है। मूल्य [illegible] है। [illegible] कई [illegible] [illegible] हिन्दी, [illegible]

श्रम, गढ़वाल को लिखने से मिलती है। बदरीनाथ की यात्रा करने वालों के सुभीते के लिए इसमें रास्ते के सभी स्थानों और चट्टियों आदि का वर्णन है। बदरीनाथ का माहात्म्य तथा और भी कितनी ही बातें हैं। यात्रियों के लिए यह पुस्तिका अवश्य ही लाभदायक है।

❋

७—महात्मा गोखले। आकार मध्यम; पृष्ठ-संख्या १००; मूल्य ४ आने; लेखक—पण्डित नन्दकुमार देव शर्म्मा; प्रकाशक—ओंकार-प्रेस, इलाहाबाद, से प्राप्य। इसमें गोखले का चरित विशेष विस्तार के साथ, अच्छी भाषा में, लिखा गया है और पढ़ने लायक है। आरम्भ में गोखले का चित्र भी है।

❋

८—गुणस्थान-दर्पण। आकार मध्यम; पृष्ठ-संख्या ३१; "अमूल्य"; लेखक—रतलाम-निवासी रावत शेरसिंह गौडवंशी, जैन-पाठशाला, बीकानेर को लिखने से प्राप्य। इसमें जैन-धर्म्म के अनुसार १४ गुण-स्थानों का विवेचन और उनके अवान्तर भेदों आदि का वर्णन है। इसकी भाषा लेखक महाशय की अपनी निज की हिन्दी है। उदाहरण—

"यह निर्जरा किसी पञ्चेन्द्रि के कोई नहीं कर सकता है। इस निर्जरा को बारह प्रकार के तप करके आदर की जाती है"।

जैन धर्म्म में दीक्षित लोग ही इस पुस्तक से कुछ लाभ उठा सकते हैं।

❋

९—गाने की चन्द चीज़ें। यह पुस्तक चार भागों में है। कुल पृष्ठ-संख्या ८० के लगभग है। मूल्य सब का, एकही जिल्द में, ४½ आने है। बाबू मांगीलाल बज़ाज़, छावनी नीमच, को लिखने से ये चारों भाग मिल सकते हैं। आप ही इनके रचयिता हैं। गीतों के विषय प्रायः सामयिक हैं। छावनी, ग़ज़ल, ठुमरी, दादरा आदि में लेखक महाशय ने अच्छे विचारों के प्रचार की चेष्टा की है।

❋

१०—प्रैक्टिकल फोटोग्राफी। आकार मँझोला; पृष्ठ-संख्या १६४; मूल्य लिखा नहीं। इसे बाबू हरिगुलाम ठाकुर ने लिखा है। पाइन आर्ट फोटोग्राफिक स्टूडियो, गोरखपुर, के पते पर आपही को लिखने से यह मिलती है। हिन्दी में इस विषय की कई पुस्तकें आज तक निकल चुकी हैं। हमारे देखने में जो पुस्तकें आई हैं उन सब से यह अच्छी है। फोटोग्राफी से सम्बन्ध रखने वाली प्रायः सभी मुख्य मुख्य बातें इसमें हैं। यह कला सीखने की इच्छा रखने वाले इससे बहुत लाभ उठा सकते हैं। जो सीखना नहीं चाहते, किन्तु इस कला की प्रारम्भिक बातें जा चाहते हैं, वे भी इससे अपनी कुतूहल-निवृत्ति कर सकते पुस्तक की भाषा सरल—सब के समझने योग्य—है।

❋

११—हिन्दी-साङ्गीत-संग्रह। इस ६४ पृष्ठों पुस्तक में कई आधुनिक कवियों के रचे हुए पदों का सं है। पदों का सम्बन्ध हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि है। कुछ पद अच्छे हैं; शेष साधारण। मूल्य ५ आने मिलने का पता—दामोदर प्रेस, लखनऊ।

❋

१२—आदर्श शिक्षक। पृष्ठ-संख्या ७१, मूल्य ॥ आने, लेखक—पण्डित जगदीश झा, हेड पण्डित, स्कूल, चम्पानगर। भाषा, साहित्य, व्याकरण, भूगोल, इतिहास, गणित, विज्ञान आदि किस तरह पढ़ाना चाहिए, इसकी शिक्षा इस छोटी सी पुस्तक में है। यह अध्यापकों के काम की मालूम होती है। "हड़बड़ाहट" के कारण इसमें इतनी अशुद्धियाँ रह गई हैं कि पूरे ८ सफ़े का अशुद्धि-संशोधन-पत्र लगाना पड़ा है।

❋

१३—नीति-पुष्पावली। आकार मध्यम; पृष्ठ-संख्या २२३; मूल्य ६ आने; लेखक, लाला शङ्करदास साहब वर्म्मा। इसमें नैतिक, सामाजिक और शारीरिक विषयों पर निबन्ध और शिक्षायें हैं। विषय और उनके विवेचन सब उपयोगी पर भाषा, काग़ज़ और छपाई अच्छी नहीं। रामनगर (पञ्जा के पते पर लेखक को लिखने से यह पुस्तक मिलती है।

❋

१४—धार्विका-सुबोध। आकार मध्यम, पृष्ठ संख्य १२०; मूल्य ६ आने; अनुवादक, आशालाल अमुलखराय